UG13Y-01

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
विज्ञान विद्यापीठ

एल. एस. ई. – 12
पादप विविधता – 1

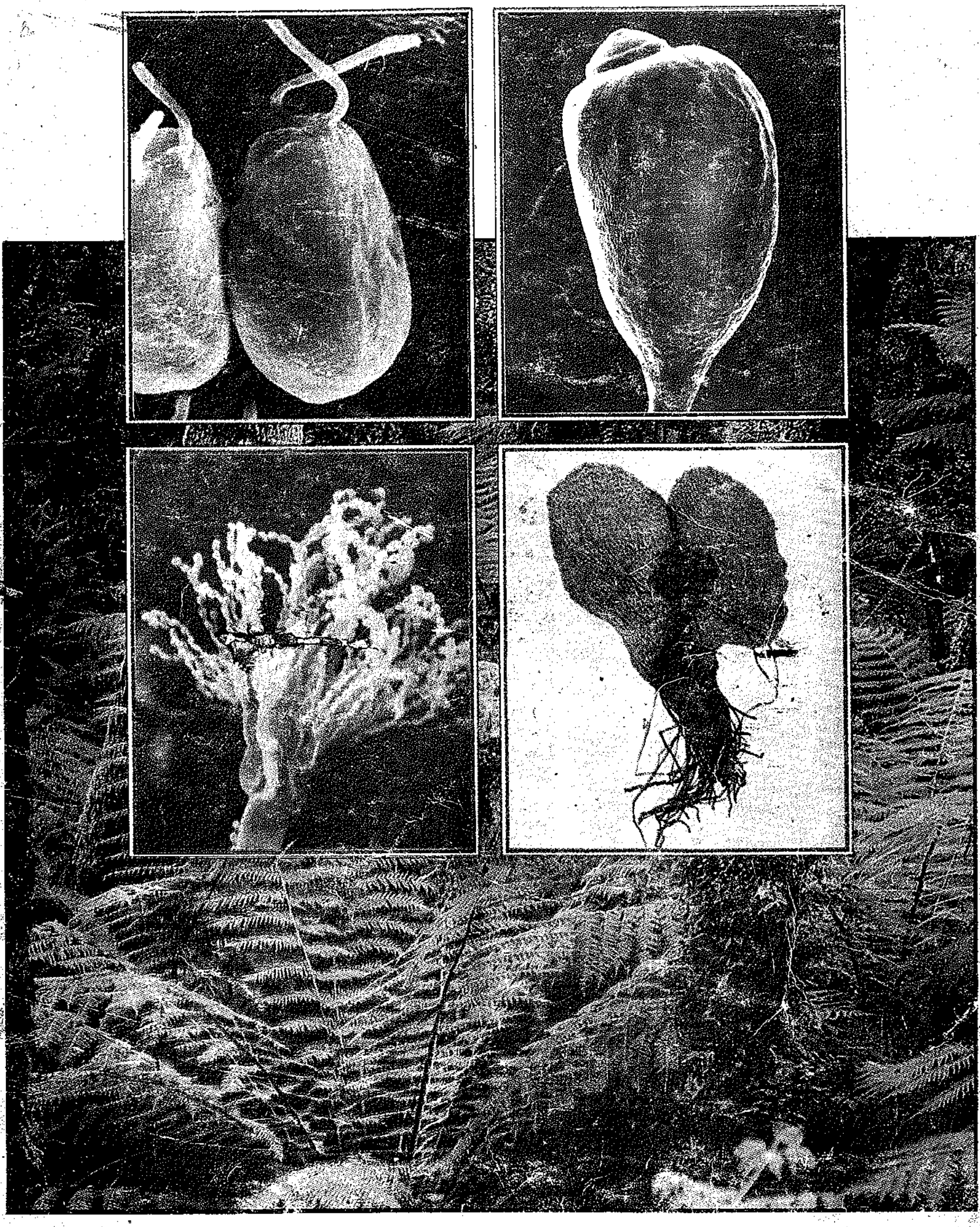

पादप और संबंधित जीवों में विविधता 1अ

9, 10, 51, 52.

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGBY -01
पादप विविधता-1

खंड

1अ

पादप और संबंधित जीवों में विविधता

इकाई 1
पादप और संबंधित जीव तथा उनका वर्गीकरण 6

इकाई 2
सायनोबैक्टीरिया, कवक, शैवाल तथा निम्नतर पादपों का परिचय 33

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

प्रो. आर. एन. चोपड़ा
प्रोफेसर (सेवा निवृत)
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. आलोक मोइत्रा
भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी
दिल्ली

डा. (कु.) सरला
देशबन्धु कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. सुश्री गुणवन्त सोखी
दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रो. एच. एन. वर्मा
लखनऊ विश्वविद्यालय

डा. बी. डी. वशिष्ठ
कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय

स्व. डा. सुश्री तोशा भान
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

स्व. डा. कैलाश मंधान
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री अमृता निगम
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री जसवन्त सोखी
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

खंड निर्माण समिति

प्रो. इ.आर.एस. तलपासाई (विषय सम्पादक)
भूतपूर्व अध्यक्ष वनस्पति विज्ञान
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय

प्रो. पी. दयानन्दन
मद्रास क्रिश्चियन कॉलेज,
तामबरम

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

अनुवाद

डा. कुमकुम चतुर्वेदी

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
इं.गां.रा.मु.वि.

पाठ्यक्रम संयोजक : डा.(सुश्री) स्वदेश तनेजा

जुलाई, 2002 (पुर्नमुद्रित)

© इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 1999

ISBN - 81-7605-665-0

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुन: प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय मैदान गढ़ी, नई दिल्ली-68 से प्राप्त की जा सकती है।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के अनुमति से पुनः मुद्रित। उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से डॉ0 ए0 के0 सिंह, कुलसचिव द्वारा पुनः मुद्रित एवं प्रकाशित, दिसम्बर 2011
मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

पादप विविधता-1

आप पादप जगत के बारे में दो ऐच्छिक पाठ्यक्रमों पादप विविधता-1 और पादप विविधता-2 में पढ़ेंगे। प्रत्येक पाठ्यक्रम छः क्रेडिट का है इन पाठ्यक्रमों से आपको पता लगेगा कि पौधे कितने विविध प्रकार के हैं, उनकी किस प्रकार की संरचना है तथा वे किस प्रकार प्रजनन करते हैं। आप विभिन्न पादप समूहों की विकास द्वारा उत्पत्ति, विभिन्न समूहों में परस्पर संबद्ध, पादपों की पारिस्थितिक तंत्र में भूमिका तथा मानव कल्याण के लिए पादपों की महत्ता के बारे में पढ़ेंगे।

निसंदेह नीम का पेड़ एक पादप है। यह एक पुष्पी पादप है। अन्य प्रकार के पादप भी हैं। जैसे अनावृतबीजी जिनमें बीज तो बनते हैं लेकिन उन पर पुष्प नहीं लगते। फर्न्स तथा उसके संबंधी पादपों के बीज नहीं होते, वे बीजाणुओं द्वारा प्रजनन करते हैं लेकिन यह भी वास्तविक पादप है। इसके अतिरिक्त मॉसे, लिवरवर्ट्स और हार्नवर्ट्स जो संरचना में काफी सरल होते हैं, वे भी वास्तविक पौधे हैं। तथापि, कुछ समूह जिनका अध्ययन वनस्पति विज्ञानियों द्वारा किया गया है वे समूह अब वास्तव में पादप नहीं माने जाते। ऐसे समूहों के अंतर्गत कवक, नील-हरित शैवाल और हरे शैवाल शामिल हैं। वास्तव में नील हरित शैवाल एक बैक्टीरिया का समूह है जो अब सायनोबैक्टीरिया के रूप में जाना जाता है। पादपों और अपादपों में इस मौलिक भेद के बावजूद भी हम सायनोबैक्टीरिया और कवकों को इस अध्ययन में शामिल कर रहे हैं। यह परम्परागत दृष्टिकोण आंशिक रूप से सही भी है क्योंकि सायनोबैक्टीरिया और कवक में कुछ ऐसी समानताएं हैं जो शैवाल समूह की पारिस्थितिकी, फिज़ियोलॉजी, आकारकी या प्रजनन की विधियों से मिलती जुलती हैं।

पादप, जीवों का व्यापक संयोजन बनाते हैं। केवल पुष्पी पौधों की लगभग 260, 000 जातियां हैं। विभिन्न समूहों में यहां तक की एक समूह में आकार तथा प्रकार्यों में भिन्नता पायी जाती है। जीवों के व्यापक संयोजन को ध्यान में रखते हुए जिनको इस अध्ययन में शामिल करना अनिवार्य है, दो अलग-अलग पाठ्यक्रम तैयार किए हैं। पादप विविधता - 1 में आप सायनोबैक्टीरिया, विभिन्न प्रकार के शैवाल, कवक, मॉसे, लिवरवर्ट्स और हार्नवर्ट्स, फर्न्स और इनके संबंधियों के बारे में जानेंगे। पादप विविधता-2 में प्रमुख पादप समूहों, बीजधारी अनावृतबीजी और बीजधारी तथा साथ ही साथ पुष्पधारी आवृतबीजी के अध्ययन को शामिल किया गया है। पादप विविधता - 1 में चार खंड और 18 इकाइयां हैं। खंड -1, दो खंडों अ और ब में विभाजित है।

इस प्रकार कुल मिलाकर पादप विविधता - 1 के अध्ययन का संगठन निम्नलिखित है

पाठ्यक्रम एल.एस. ई.- 12 : पादप विविधता - 1 (छः क्रेडिट)

खंड- 1 अ : पादप विविधता व संबंधित जीव (2 इकाइयां)

खंड- 1 ब : शैवाल (5 इकाइयां)

खंड- 2 : कवक (5 इकाइयां)

खंड- 3 : ब्रायोफाइटा (3 इकाइयां)

खंड- 4 : टेरिडोफाइटा (3 इकाइयां)

इन पाठ्यक्रमों को समझने के लिए एल.एस.ई. - 07 का पहले अध्ययन करना भी अपेक्षित है।

उद्देश्य

पादप विविधता- 1 का अध्ययन करने के पश्चात आप :

- सजीव वस्तुओं की विशेषताओं की सूची बना सकेंगे,
- जीवन रूपों की संरचना, संख्याओं और वितरण में विविधता से अवगत हो सकेंगे,
- विभिन्न समूहों में विकासीय उद्‌गमों और अंत:संबंधों का विवेचन कर सकेंगे;

- सजीव वस्तुओं का वर्गीकरण प्रमुख व्यापक श्रेणियों में कर सकेंगे,
- पादप और अपादपों की विशेषताओं के अध्ययन द्वारा उनको पहचान सकेंगे,
- पादप किस प्रकार प्रजनन करते हैं इसका वर्णन कर सकेंगे, और
- पारिस्थितिक तंत्र और मानव कल्याण में पादपों की भूमिका का विवेचन कर सकेंगे।

खंड 1अ पादप और संबंधित जीवों में विविधता

छः क्रेडिट वाले ऐच्छिक पाठ्यक्रम "पादप-विविधता - 1" के चार खंडों में 18 इकाइयां है। खंड- 1 को, खंड-1 अ और खंड-1 ब में विभक्त किया गया है। खंड-1 अ में आपको आगे की इकाइयों में प्रस्तुत विभिन्न समूहों के विस्तारपूर्वक अध्ययन के लिए अनिवार्य आधारभूत जानकारी दी गई है। पादप क्या है ? क्या वनस्पति विज्ञानी केवल पादपों का ही अध्ययन करते हैं या उनसे संबंधित जीवों का भी अध्ययन करते हैं? पौधों के भिन्न-भिन्न समूह कौन से हैं ? पादपों की कितनी जातियां हैं ? विभिन्न प्रकार के जीव विकासीय इतिहास से किस प्रकार संबंधित हैं ? संरचना के संगठन और प्रजनन के तरीकों में पादप जगत में कितनी विविधता है ? पर्यावरण के निम्नीकरण से पौधे किस प्रकार प्रभावित होते हैं ?

उपरोक्त सभी, प्रश्नों का उत्तर आपको खंड-1 अ में मिलेगा। पादप विविधता में प्रयुक्त संकल्पनाओं को समझने के लिए आप इन इकाइयों को जितनी बार पढ़ सकें उतना ही आपके लिए अच्छा व महत्वपूर्ण होगा। इन इकाइयों में दिये गये आरेखों और वर्गीकरण पर विशेष रूप से ध्यान दें। जब आप विविध पादप समूहों को विस्तार पूर्वक आगे के खंडों में पढ़ेंगे तब आपको खंड-1 अ में दी गई वर्गीकरण योजना को फिर से देखना उपयोगी लगेगा। अन्य सभी जीवों की तरह, पादप भी विकास की दृष्टि से एक दूसरे से संबद्ध हैं। हमने वर्गीकरण की आधुनिक योजनाओं के माध्यम से विकासीय संबंधों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। जीवों को वर्गीकृत करने की विधियां और संकल्पनाएं, उन्हें पहचानना और नाम देना ये वर्गिकी के अंतर्गत आते हैं। हम यह मानकर चलते हैं कि आपने "वर्गिकी और विकास" पाठ्यक्रम भी लिए होंगे। वर्गिकी और विकास पर अतिरिक्त जानकारी के लिए इस पाठ्य सामग्री को पढ़ना आपके लिए लाभदायक होगा।

खंड- 1 अ, पादप और संबंधित जीवों में विविधता को निम्नलिखित दो इकाइयों में बांटा गया है।

इकाई- 1 : पादप और संबंधित जीव तथा उनका वर्गीकरण

इकाई- 2 : सायनोबैक्टीरिया, कवक, शैवाल तथा निम्नतर पादपों का परिचय

सजीव वस्तुओं की विशेषताओं, प्रोकैरियोटों और जीवन की उत्पत्ति, कोशिकाओं का संगठन और यूकैरियोटों का विकास और जीवों का पांच जगत में वर्गीकरण इन सब बातों की पहले एल.एस.ई. - 07 पाठ्यक्रम में आंशिक रूप से चर्चा की गई थी। इकाई- 1 में इन सभी पर आज तक हुए अध्ययनों के आधार पर समीक्षा की गई है तथा समीक्षा को बोधगम्य रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह जीवन रूपों में विविधता के क्रमवार उद्गमों का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करेगा।

आप मुख्य पादप समूहों और अन्य जीवों जैसे कि सायनोबैक्टीरिया और कवक के बीच संबंधों को भी जानेंगे और समझेंगे, जो इस पाठ्यक्रम में शामिल हैं। जीवों को वर्गीकृत कैसे किया जाना चाहिए इससे संबंधित वर्तमान विचारधारा पर भी चर्चा की गई है।

इकाई- 2 में जीवों के विभिन्न समूहों शैवाल, फन्जाई ब्रायोफाइटा और टेरिडोफाइटा के वर्गीकरण पर व्यापक रूप से चर्चा की गई है। प्रत्येक समूह की प्रमुख विशेषताओं से परिचय के बाद आप यह जान सकेंगे कि पादपों को कैसे और क्यों विभिन्न समूहों में विभक्त किया जाता है। आपको यह जल्दी ही अहसास हो जाएगा कि पादपों के दृश्यमान जटिल संसार को वास्तव में समूहों में इस प्रकार व्यवस्थित किया जा सकता है कि आप न केवल विविधता को समझ सकेंगे बल्कि पादपों की सुन्दरता और महत्ता की भी प्रशंसा कर सकेंगे।

उद्देश्य

इस खंड को पढ़ने के बाद आप :

- जीवन के उद्गम की विवेचना कर सकेंगे,
- प्रोकैरियोटों और यूकैरियोटों में भेद कर सकेंगे,
- सजीव वस्तुओं की विशेषताओं की सूची बना सकेंगे,
- सजीव वस्तुओं की विविधता का वर्णन कर सकेंगे,
- सजीव वस्तुओं को वर्गीकृत करने की वर्तमान संकल्पनाओं की विवेचना कर सकेंगे,
- पादपों, बैक्टीरिया और कवकों में भेद करने वाली विशेषताएं जो विभिन्न समूहों में उन्हें वर्गीकृत करने में सहायक होती हैं, की सूची बना सकेंगे।

इकाई 1 पादप और संबंधित जीव तथा उनका वर्गीकरण

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
1.2 पृथ्वी पर जीवन की विविधता
1.3 सजीवों की विशेषताएँ
1.4 जीवन की उत्पत्ति
1.5 कोशिकाओं का संगठन-पूर्व केंद्रकी तथा वास्तविक केंद्रकी
1.6 अंत:सहजीवन के द्वारा विकास
1.7 जीवों का वर्गीकरण
1.8 पाँच जगत
1.9 कौन से जीव पादप हैं ?
1.10 पर्यावरणीय अवकर्षण तथा पादप विविधता
1.11 सारांश
1.12 अंत में कुछ प्रश्न
1.13 उत्तर

1.1 प्रस्तावना

मनुष्य स्वभाव से ही अपने इर्द-गिर्द के संसार के बारे में जिज्ञासु होते हैं। जीवित वस्तुओं का संसार संख्या में बहुत विशाल है, इतिहास में पुराना है तथा विविधता में जटिल है। जीव विज्ञान की बहुत सारी शाखाएँ हैं, सभी हमें जीवित वस्तुओं के स्वभाव की वास्तविक तस्वीर देने के लिये प्रयासशील हैं। हम भी इसी जीवित जगत के भाग हैं। जब हम अपने आस पास के जीव जगत को अगर एक जीव विज्ञानी की विवेकी आँखों से देखते हैं तो हम स्वयं अपने ही इतिहास को देखने लगते हैं। हम सीखते हैं कि कैसे हम भी विकास के माध्यम से सभी अन्य जीवित वस्तुओं से संबंधित है। हम यह भी समझते हैं कि सभी जीवित वस्तुएं किस प्रकार अन्योन्याश्रित (interdependent) हैं। जीव विज्ञान के अध्ययन का अंतिम उद्देश्य है हम मानवों की विशेषाधिकृत स्थिति सभी जीवित वस्तुओं में ज्ञात करना जो आज पाई जाती है तथा जो कभी पहले इस पृथ्वी पर रहीं थी।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- पृथ्वी पर जीवन की विविधता से अवगत हो सकेंगे,
- सजीव व निर्जीव वस्तुओं में अंतर कर सकेंगे,
- वह प्रमाण बता सकेंगे जो यह सुझाव देते हैं कि जीवन का उद्भव किस प्रकार हुआ,
- दो मुख्य प्रकार के कोशिका संगठन-. पूर्व केन्द्रकी तथा वास्तविक केंद्रकी में भेद कर सकेंगे,
- उस वर्तमान संकल्पना की चर्चा कर सकेंगे, जिससे यह पता चलता है कि किस प्रकार कोशिका अंगक विकसित हुए,
- वर्गीकरण के सिद्धांतों को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- सजीव वस्तुओं को पांच जगतों में वर्गीकृत करने के आधार की चर्चा कर सकेंगे,
- पेड़-पौधों की मुख्य विशेषताएं जो उन्हें अपादपों से पृथक कराती हैं उनके बारे में बता सकेंगे,

- भारत में पाई जाने वाली - जीव विविधता के बारे में जान सकेंगे और पर्यावरणीय अवकर्षण वाले संकटों से परिचित हो सकेंगे।

1.2 पृथ्वी पर जीवन की विविधता

हमारे इर्द-गिर्द सभी ओर जीवन है। मिट्टी में, जमीन की सतह पर, हवा में, ऊंचे पहाड़ों पर, ताजे पानी में तथा समुद्रों में असंख्य जीव पाये जाते हैं। हाल ही में कुछ प्रकार के जीव समुद्र में 4-10 किलोमीटर की गहराई में खोजे गये हैं जहां पर स्थाई रूप से अंधकार रहता है तथा दबाब इतना अधिक है कि वह हमें दबा कर चपटा कर दें। एक आवर्धक लैन्स (magnifying glass) तथा एक सूक्ष्मदर्शी की सहायता से हम व्यक्त कर सकते हैं कि सजीव वस्तुएं किसी भी स्थान अथवा पदार्थ पर बहुलता में पाई जाती है, जिसका भी हम निरीक्षण करना चाहे। हजारों सूक्ष्मजीव पत्तियों की सतह पर, तालाब के जल की एक बूंद में अथवा मुँह की लार तथा हमारी त्वचा की संपूर्ण सतह पर होते हैं। वास्तव में, पृथ्वी की सतह पर किसी भी जगह को ढूंढना मुश्किल है जहां पर जीवन न हो। हमारा यह ग्रह जीवन से परिपूर्ण है। हम नहीं जानते कि दस खरब तारों के विशाल जगत में किसी और जगह जीवन है या नहीं। किसी तरह से, पृथ्वी ग्रह ने सही प्रकार की दशाओं-ताप, रसायनों, ऊर्जा आदि को विकसित किया जिसने जीवन की उत्पत्ति उसका विकास तथा पृथ्वी की सतह को रूपांतरित करने तक में सहायता की।

जीव विज्ञानी क्रमबद्ध रूप से विभिन्न प्रकार के जीवन रूपों का वर्णन तथा प्रलेख (document) करते हैं, तथा उनकी उत्पत्तियों, विकासीय इतिहास, कार्यप्रणाली तथा प्रजनन को समझने का प्रयास करते हैं। यह एक भारी तथा चिरस्थायी कार्य है। पृथ्वी पर पाई जाने वाली विभिन्न जातियों (स्पीशीज़) की संख्या का सिर्फ प्रलेखीकरण भी पूरा नहीं हुआ है। कुछ दशक पूर्व जीव विज्ञानियों ने अनुमान लगाया था कि लगभग 60 लाख से एक करोड़ प्रकार के जीव पृथ्वी पर रह रहे हैं। फिर भी उनमें से सिर्फ 17 लाख ही पहचाने तथा संक्षिप्त रूप से वर्णित किये जा सके हैं। अब कुछ जीव विज्ञानी सोचते हैं कि हमारे ग्रह पर शायद 1 से 3 करोड़ तक जीव हैं। यह बढ़ा हुआ आकलन हाल ही में बहुत से सूक्ष्मजीवों तथा कीड़ों के, विशेषकर कम अन्वेषित उष्णकटिबंधीय वर्षा वनों (tropical rain forests) में पाये गये जीवों के परिणामस्वरूप प्राप्त हुआ है। जीव जो आज पृथ्वी पर रह रहे हैं वे उन जातियों के वंशज हैं जो भूतकाल में रहीं थीं। पृथ्वी पर जीवन का इतिहास कम से कम 3.5 अरब (3,500,000, 000) साल पुराना है। इस लंबे काल के दौरान बहुत प्रकार के जीव विकसित हुए तथा अधिकांश विलुप्त हो गयें, बचे हुए जीवों के साथ हम आज इस ग्रह में रह रहे हैं। हम, मानव भी समान रूप से पृथ्वी पर जीवन के इस विकास के नाटक के भाग हैं। मानव जाति, *होमोसेपिएन्स*, हाल ही में, मात्र लगभग 300, 000 साल पहले ही विकसित हुई है। सभी जातियां जो आज जीवित हैं वे जीवन की उत्पत्ति के बाद से पृथ्वी द्वारा पोषित कुल जातियों की संख्या के सिर्फ एक अंश को प्रदर्शित करती हैं। वैज्ञानिक आंकलित करते हैं कि लगभग 99% जातियां विलुप्त हो गई हैं। लगभग 5 बड़ी तथा कई छोटी विलुप्तीकरण की घटनाएं हुई थीं जिससे लाखों प्रकार के जीव नष्ट हो गये थे। उनमें से सभी नहीं, पर बहुत से आज जीवाश्मों (fossils) के रूप में पाये जाते हैं। आखिरी बड़ा विलुप्तीकरण कुछ 6.5 करोड़ वर्ष पूर्व हुआ था जब डायनोसोर तथा कई प्रकार के पेड़-पौधे विलुप्त हो गये थे।

यहां जीवों के विभिन्न प्रकारों तथा एक प्रकार के जीवों की संख्या के बीच में अंतर कर लेना आवश्यक है। जब हम जीव के प्रकार की बात करते हैं तब हम उस संदर्भ में चर्चा करते हैं जिसे जीव विज्ञानी जाति के रूप में वर्णित करते हैं। नीम का पेड़ एक प्रकार की जाति है। *एजेडिरेक्टा इंडिका (Azadirachta indica)* एक तकनीकी शब्द है, जिसका प्रयोग इस जाति के नाम के रूप में तथा इसकी पहचान के लिये किया जाता है। हालांकि, भारत में शायद लगभग कुल नीम के पेड़ों की संख्या 2 करोड़ है। इसी प्रकार आंकलित 1-3 करोड़ जीवों की जातियों में से प्रत्येक जाति की व्यष्टियां भिन्न-भिन्न संख्या द्वारा प्रदर्शित होती हैं। कुछ ऐसी जातियां जो संकटापन्न (endangered) हैं, उसमें

कुल जीवों की संख्या सौ से अधिक नहीं है। मानव जाति को इस तरह के विलुप्तीकरण का खतरा नही है। कुल व्यक्तियों की संख्या लगभग 5.3 अरब है, तथा यह संख्या और तेजी से बढ़ती जा रही है। एक चम्मच दही में जीवाणु की संख्या करोड़ों में होती है जो दूध को जमाते हैं।

पृथ्वी पर जीवों की विविधता जातियों की बहुत अधिक संख्या अथवा व्यक्तिगत जाति की बहुलता तक ही सीमित नहीं है। जीवों के आकार तथा आकृति में भी बहुत अधिक विविधता पाई जाती है। एक रोगाणु लम्बाई में महज एक मिलीमीटर का हजारवां हिस्सा हो सकता है जबकि 30 मीटर लंबा ताड़ का एक पेड़ जीवाणु से 3 करोड़ गुना लंबा होता है। जीवित पदार्थ अपनी संरचना में एक कोशिकीय जीव से लेकर उन जीवों तक विविधता दिखाते हैं जो करोड़ों (trillion) कोशिकाओं से बने होते हैं। कुछ बहुकोशिकीय जीव संरचना में सरल होते हैं। जबकि अन्य उच्च श्रेणी का विभेदन दिखलाते हैं। एक हरा शैवाल उदाहरण के तौर पर *अल्वा (Ulva)* जो समुद्रों में पाया जाता है एक पतली तथा चपटी हरी संरचना से अधिक नहीं दिखाई पड़ता है। इसके विपरीत, एक प्रारुपिक पुष्पीय पौधा, जड़, तना, शाखाओं, पत्तियों, पुष्पों तथा अन्य अंगों में, विभेदित होता है।

जीवों द्वारा भोजन ग्रहण करने के तरीकों में भी विविधता पाई जाती है। जीवित पदार्थों के लिए कार्बन एक संपूर्ण प्रमुख तत्व है। कार्बनिक यौगिक उपापचय, वृद्धि और प्रजनन के लिये ऊर्जा तथा सामग्री प्रदान करते हैं। हरे पेड़-पौधे स्वपोषी होते हैं। स्वपोषी अपने लिये कार्बन, प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा अकार्बनिक कार्बन-डाइऑक्साइड से प्राप्त करते हैं। परपोषी अन्य सभी जीव होते हैं, जो अपने लिये कार्बन, पूर्व संश्लेषित कार्बनिक यौगिकों से लेते हैं। जन्तु परपोषित होते हैं क्योंकि उनका कार्बन स्रोत उनके द्वारा खाये गये पौधों अथवा जानवरों से आता है। परजीवी वे परपोषित हैं जो जीवित परपोषी पर आक्रमण कर कार्बन यौगिकों का अवशोषण करते हैं। बहुत से जीवाणु तथा कवक परजीवी हैं। मृतपोषित भी परपोषित होते हैं क्योंकि वे अपना कार्बन स्रोत अपने आसपास के बचे हुए कार्बनिक पदार्थों से प्राप्त करते हैं। बहुत से जीवाणु तथा कवक मृतपोषित होते हैं। कार्बन को प्राप्त करने का स्रोत चाहे कुछ भी हो फिर भी प्रत्येक जाति सरल कार्बन यौगिकों को हजारों विभिन्न यौगिकों में विस्तारित करने में सक्षम होती है। रासायनिक संयोजन में विविधता का उपयोग कई पादप समूहों को पहचानने में किया जा सकता है। कई कीड़े कुछ चुने हुए पौधों से ही भोजन लेते हैं क्योंकि उनमें पौधों में उपस्थित रसायनों को अपने भोजन, रक्षा तथा प्रजनन के लिये उपयोग करने की क्षमता होती है। हम भी पेड़-पौधे चुनते समय इस रासायनिक विविधता को देखते हैं, जब हम पेड़-पौधों को तेल निकालने, मसालों, सुगंधित रसायनों, औषधियों, रंजकों तथा अन्य उत्पादों के लिये छांटते हैं।

सजीव वस्तुओं के आयुकाल में भी विविधता होती है। कुछ एक सप्ताह से भी कम जीवित रहते हैं जबकि कुछ पादप 5000 सालों से भी अधिक समय तक जीवित रहते हैं। जीवन उन तरीकों में भी विविध है जिसके द्वारा सजीव वस्तुएं अपने प्रकार की संतानों को उत्पन्न करती हैं यानि जनन के तरीके। सरल विखंडन से लेकर विभिन्न प्रकार के अलैंगिक तरीके तथा लैंगिक तरीके जिसमें जटिल लैंगिक अंगों की आवश्यकता होती है। प्राणि जगत में जीव विभिन्न प्रकार के प्रतिरूपों को दिखाते हैं। अंत में, जीवों के पारिस्थितिक आवासों में भी बहुत विविधता पाई जाती है। जीवन, बर्फ में, सूखे रेगिस्तानों में, नम वर्षा वनों में तथा ताजे व खारे पानी में भी पाया जा सकता है। कुछ जीवाणु बहुत अधिक अम्लीय तथा गर्म तरल पदार्थों में भी रहते हैं जिनका तापमान 100°C से भी अधिक होता है।

यह सारी विविधता शुरू में हमें अचंभित कर सकती है। एक बार जब हम उसमें निहित क्रम को तथा उन सिद्धांतों तथा कारकों को समझने लगते हैं जो विविधता को परिचालित करते हैं, तब जीवित जगत विशाल पुरावशेष तथा सौंदर्य के अर्थपूर्ण दृश्य में बदल जाता है। संख्याओं में बहुत अधिक विविधता होने के कारण कोई एक व्यक्ति अपने जीवनकाल में सभी जीवित जातियों का अध्ययन अथवा उन्हें देख भी नहीं पाता है। इस कारण जीव विज्ञानिकों ने जीवों के चुने हुये समूहों के अध्ययन में विशिष्टता प्राप्त करने की कोशिश की है। इसलिए , जन्तु विज्ञानी जंतुओं का अध्ययन करते हैं, वनस्पति विज्ञानी पेड़-पौधों का अध्ययन करते हैं तथा सूक्ष्म जीव विज्ञानी जीवाणुओं का अध्ययन करते हैं। जो ब्रायोफाइटा का अध्ययन करते हैं वे ब्रायोविज्ञ कहलाते हैं और कवकों के अध्ययन में जो विशिष्टता हासिल करते हैं वे कवक विज्ञानी कहलाते हैं। पारिस्थितिक विज्ञानी यह समझने और वर्णित

करने का प्रयास करते हैं कि किस प्रकार जीवित वस्तुएं एक दूसरे के साथ तथा अपने आस पास के वातावरण के साथ पारस्परिक क्रियाएं करती हैं। जीव विज्ञान में इस प्रकार के बहुत से विशिष्टीकरण के क्षेत्र हैं।

इस पाठ्यक्रम में हमारा उद्देश्य पादप जीवन को समझना है। चूंकि सभी जीवन सामान्य विकास के इतिहास द्वारा एक दूसरे से संबद्ध हैं। हमें समझना है कि कैसे और कहां पादप जीवन पृथ्वी पर जीवन के विशाल जगत में स्थित है। जीवन के और कौन से समूह हमारे पास हैं ? जीवन की उत्पत्ति कब हुई ? वे कौन सी सामान्य विशेषताएं हैं जो सभी जीवों को एक साथ बांधती हैं ? किस प्रकार और सबसे सही तरीके से हम जीवित पदार्थों को वर्गीकृत कर सकते हैं ? ये तथा संबंधित प्रश्न निम्नलिखित खंडों में संबोधित किये गये हैं।

1.3 सजीवों की विशेषताएं

विज्ञान में हम उन शब्दों के परिशुद्ध अर्थ देने का प्रयत्न करते हैं जिनका हम प्रयोग करते हैं। यह परिभाषा कहलाती है। अतः "वनस्पति शास्त्र'' को पेड़-पौधों के वैज्ञानिक अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह स्वभाविक ही है कि हम "जीवन'' अथवा "जीवित पदार्थों'' की परिभाषा को जाने। दुर्भाग्यवश इस प्रकार की कोई परिभाषा नहीं है। फिर भी हम में से अधिकांश सजीव पदार्थों और निर्जीव पदार्थों में अन्तर कर लेते हैं। यह भी पहचान सकते हैं कि सजीव वस्तु मर गयी है तथा निर्जीव बन गयी है। जीवन की परिभाषा के साथ समस्या यह है कि प्रत्येक वक्तव्य जो हम देते हैं उसके कुछ अपवाद हमें मिल जाते हैं। यदि "वृद्धि'' सजीव पदार्थों की विशेषता है तो निर्जीव क्रिस्टल भी वृद्धि करते हैं। अगर जीवन की पुर्नउत्पादन जनन विशेषता है तो जंगल की आग भी अपने आप को पुर्नउत्पादित करती है। फिर भी, ऐसे कुछ लक्षण अवश्य हैं जो सभी सजीव पदार्थों में सामान्य रूप से हैं, जो लाखों जीवों को निर्जीव जगत से विभेदित करते हैं।

जीवों की सामान्य विशेषताओं का वर्णन करने से पहले यह भी जानना जरूरी है कि भौतिकी तथा रसायन विज्ञान के नियम सजीवों तथा निर्जीवों पर एक समान रूप से लागू होते हैं। एक दृष्ट अपवाद असाधारण प्रकार का यह है कि सजीव पदार्थ सभी स्तरों पर संगठित हैं- रासायनिक, उपकोशिकीय, कोशिकीय, अंग तथा जीव स्तर। यह संगठन भौतिकी के उस नियम के विरुद्ध दिखाई पड़ता है जिसके अनुसार यादृच्छिकता (randomness) अथवा क्षय ब्रह्मांड की विशेषता है न कि संगठन ! बारीकी से छानबीन करने पर यह पाया गया है कि सजीव वस्तुओं की बहुत अधिक क्रमबद्ध संरचनाएं सिर्फ सूर्य के द्वारा प्राप्त ऊर्जा के द्वारा ही संभव हैं। सूर्य स्वयं बढ़ती हुई "एन्ट्रॉपी'' अथवा यादृच्छिकता को दिखाता है। यदि सूर्य तथा सभी जीवित पदार्थों को एक साथ लिया जाये तो, एन्टॉपी वास्तव में जगत में बढ़ती जा रही है।

निम्नलिखित विशेषताएं अधिकांश जीवों में समान रूप से पाई जाती हैं। ये सामान्य लक्षण मिल कर सजीव पदार्थों को निर्जीव पदार्थों से अलग करने में सहायता प्रदान करते हैं।

1. जीवन की प्रक्रियाएं कार्बनिक रसायनों पर आधारित है जिनमें कार्बन अणु प्रमुख भूमिका निभाता है। अन्य अणु, खासतौर से हाइड्रोजन, ऑक्सीजन तथा नाइट्रोजन सामान्य कार्बनिक रसायनों जैसे कार्बोहाइड्रेटों, प्रोटीनों, लिपिडों तथा न्यूक्लिक अम्लों को बनाने के लिये कार्बन से मिल जाते हैं।

2. उपापचय जीवन की विशेषता है। जीव भोजन से ऊर्जा प्राप्त करते हैं तथा इस ऊर्जा का प्रयोग आवश्यक पदार्थों को निर्मित करने के लिये करते हैं जो वृद्धि, जनन तथा अन्य कार्यों के लिये जरूरी है।

3. सजीव कोशिकाओं के बने होते हैं।

4. सजीव वर्धित होते हैं। वृद्धि कई प्रकार से हो सकती है जैसे विवर्धन, दीर्घीकरण, ईंधन विहीन भार (dry weight) में वृद्धि अथवा कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि।

5. अधिकांश बहुकोशिकीय जीवों में वृद्धि के साथ-साथ विकास तथा विभेदन होता है।

6. जीव अपने ही प्रकार के अन्य जीव उत्पन्न करते हैं। आनुवंशिक तंत्र महत्वपूर्ण सूचना अणुओं, – डी.एन.ए. तथा आर.एन.ए. द्वारा संचालित होता है।

7. सजीव बहुत अधिक संगठित होते हैं। जैव रासायनिक क्रियाएं, कोशिकीय अंगक, ऊतक तथा अंग इत्यादि सभी बहुत अधिक जटिल तथा संगठित तंत्र के रूप में होते हैं।

8. सजीव विभिन्न पर्यावरणीय उद्दीपनों पर प्रतिक्रिया दर्शाते हैं। यह प्रतिक्रिया, जो "उत्तेजनशीलता" कहलाती है आश्वस्त करती है कि जीव इच्छित पर्यावरणीय निवेशों का उपयोग करते हैं अथवा उनसे बचते हैं जो उन्हें प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हैं।

9. अधिकांश जंतु तथा एक कोशिकीय जीव गति कर सकते हैं। सामान्य तौर पर पेड़-पौधे गति नहीं करते हैं। हालांकि अधिकांश पेड़-पौधों के विभिन्न अंग प्रकाश, गुरुत्वाकर्षण तथा अन्य उद्दीपनों की प्रतिक्रिया स्वरूप गति दर्शाते हैं।

10. जीव बदलते और विकसित होते हैं। समय के लंबे अंतराल के बाद आनुवंशिक पदार्थों में आये बदलावों के फलस्वरूप संरचना अथवा कार्यों में बदलाव आते हैं जो वरणात्मक (selective) बलों द्वारा संपादित होते हैं जिसके फलस्वरूप नये प्रकार के जीव उत्पन्न होते हैं।

11. मृत्यु सजीवों की विशेषता है। मृत्यु ऊपर सूचीबद्ध किये गये जीवन के सभी गुणों का अंत कर देती है।

बोध प्रश्न 1.1

निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत बताइये। कथनों के आगे दिये गये कोष्ठकों में **सही** के लिए **स** तथा **गलत** के लिए **ग** लिखिए।

i) वैज्ञानिकों ने ब्रह्माण्ड में कई ग्रहों पर जीवन की खोज की है। ☐

ii) यह आंकलन किया गया है कि पृथ्वी पर 1 से 3 करोड़ तक सजीवों की जातियां विद्यमान हैं। ☐

iii) पांच खरब वर्ष पहले जीवन की उत्पत्ति हुई। ☐

iv) परपोषी सूर्य के प्रकाश में कार्बन-डाइऑक्साइड तथा पानी से कार्बनिक यौगिक संश्लेषित करते हैं। ☐

v) जो नियम जैव प्रक्रियाओं पर लागू होते हैं वह भौतिकी और रसायन के नियमों से भिन्न हैं। ☐

vi) सजीव पदार्थ कोशिकाओं से बने होते हैं। ☐

1.4 जीवन की उत्पत्ति

जीव विज्ञान में एक सबसे दिलचस्प शायद एकमात्र सबसे दिलचस्प-प्रश्न है कि "कब और किस प्रकार जीवन की उत्पत्ति हुई ?" खगोलज्ञ अब विश्वास करते हैं कि ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति लगभग 15 अरब (15,000, 000, 000) वर्षों पूर्व हुई थी। हमारा सौर परिवार लगभग 5 अरब वर्ष पुराना माना जाता है तथा पृथ्वी 4.5 अरब वर्षों पूर्व ठीक प्रकार से बन गई थी। आदि जीवों के जीवाश्मों के अवशेषों को प्राचीनतम पत्थरों में तलाश करके जीवन की उत्पत्ति के काल को उत्तरित किया जा सकता है। प्राचीनतम पत्थर कितने पुराने हैं यह अन्य भौतिक तरीकों द्वारा निर्धारित किया जाता है। जीवन प्रक्रियाओं के सूचक कार्बनिक रसायनों के अवशेष ग्रीनलैण्ड में 3.8 अरब वर्ष पुराने पत्थरों में पाये

गये हैं। हालांकि, प्रामाणिक सूक्ष्म जीवाश्म तथा शैवाल निक्षेपाश्म (stromatolites) ज्यादातर उन्हीं पत्थरों से ज्ञात है जो 3.1 अरब वर्ष पुराने हैं। शैवाल निक्षेपाश्म स्तरित जीवाश्म पत्थर हैं जो सायनोबैक्टीरिया की सक्रियता के द्वारा बने हैं। दिलचस्प तौर पर, शैवाल निक्षेपाश्प उड़ीसा में 3.2 अरब वर्ष पुराने पत्थरों में तथा कर्नाटक में 2.6 अरब वर्ष पुराने पत्थरों में भी पाये गये हैं, जो प्राय द्वीपीय भारत में जीवों के विशाल पुरावशेषों को दर्शाते हैं।

वैज्ञानिक सहमत हैं कि जीवन 3–3.5 खरब वर्षों पूर्व के बीच में विद्यमान था इस कारण हम कल्पना कर सकते हैं कि जीवन की उत्पत्ति अवश्य इस काल के पहले कभी हुई होगी। प्राचीनतम जीव, संरचना में आधुनिक जीवाणुओं के समान थे।

जीवन की उत्पत्ति कैसे हुई ? हालांकि इस पर बहस संभव है कि जीवन पृथ्वी पर किसी अन्य खगोलीय पिंड से लाया गया था अथवा यह किसी ईश्वरीय हस्तक्षेप द्वारा निर्मित हुआ था, एक मात्र गंभीर परिकल्पना जो वैज्ञानिकों द्वारा मानी जाती है वह ये है कि जीवनस्वत: ही रासायनिक संश्लेषण की प्रक्रिया द्वारा विकसित हुआ है। अजीवित पदार्थ से स्वत: जनन का यह विचार सबसे पहले रूसी वैज्ञानिक ए.जे. ओपेरिन (A. J. Oparin) तथा अंग्रेज वैज्ञानिक जे.बी.एस. हाल्डेन (J.B.S. Haldane) के द्वारा अभिगृहीत किया गया था। इस परिकल्पना के अनुसार समय के दीर्घकाल के पश्चात् पृथ्वी की सतह पर विद्यमान अकार्बनिक पदार्थ जल के छिछले जलाशयों के अंदर सरल कार्बनिक पदार्थों में रूपांतरित हो गये। ये कार्बनिक रसायन इसके बाद अधिक जटिल इकाइयों में पुंजित हो गये। ऐमीनों अम्ल तथा न्यूक्लीओटाइड के लंबे बहुलक इन्हीं जटिल सूक्ष्मदर्शीय संरचनाओं के भाग रहे होंगे। अपने आप को प्रतिकृत करने तथा विभिन्न रासायनिक क्रियाओं को उत्प्रेरित करने की क्षमता ने इन संरचनाओं को सबसे आदिम जीवित पदार्थ बनाया होगा। चूंकि आर.एन.ए. आनुवंशिक सूचनाओं को संग्रहीत तथा प्रसारित कर सकता है तथा कुछ रासायनिक क्रियाओं को उत्प्रेरित भी करता है वैज्ञानिकों का मानना है कि डी.एन.ए. के बजाय आर.एन.ए. संभवत: प्राचीनतम जीवों का आनुवंशिक पदार्थ होगा।

इसके प्रमाण हैं कि सरल कार्बनिक पदार्थ, सजीव पदार्थों की क्रियाशीलता के बिना ही अकार्बनिक पदार्थों से उत्पन्न हुये होंगे। उल्का पिंडों के अंदरूनी भागों से एल्कोहॉल, शर्करा, ऐमीनों अम्ल तथा नाइट्रोजन के बेस निष्कर्षित किये गये हैं। कार्बनिक यौगिक चंद्रमा से लाये गये पत्थरों के नमूनों में भी पाये गये हैं। अकार्बनिक पदार्थों से कार्बनिक यौगिकों की उत्पत्ति का प्रायोगिक प्रमाण 1953 में एस.मिलर (S. Miller) द्वारा प्रदर्शित किया गया था। उन्होंने एक बंद बर्तन में अपचायी रसायनों जैसे कि मेथैन, हाइड्रोजन तथा अमोनिया की उबलते हुए पानी की भाप से पारस्परिक क्रिया करवाई। ऊर्जा, वैद्युत चिनगारी के द्वारा, बिजली की कौंध का अनुकरण करते हुए दी गई थी, जोकि प्राचीन पृथ्वी के वायुमंडल के समान थी। इस प्रकार के परीक्षण अन्य वैज्ञानिकों के द्वारा भी दोहराये गये, जिन्होंने ऊर्जा एक्सरे अथवा पराबैंगनी किरणों के द्वारा दी। इन परीक्षणों ने निर्णायक रूप से ये सिद्ध कर दिया कि विभिन्न प्रकार के कार्बनिक रसायन जैसे कि ऐमीनों अम्ल, यूरिया, लेक्टिक अम्ल, शर्करा तथा न्यूक्लीओटाइड अकार्बनिक पदार्थों से उत्पन्न किये जा सकते हैं।

जब जीवन की उत्पत्ति हुई तब पृथ्वी की स्थिति क्या थी ? जीव आज पृथ्वी पर ऑक्सीजन से भरपूर तथा ऊर्जा के चरम तथा बहुधा होने वाले सहसोद्भेद (outburst) से मुक्त वातावरण में फल-फूल रहे हैं। वर्तमान प्रकार के सभी जीव नष्ट हो गये होते यदि उन्हें उन परिस्थितियों में रहना पड़ता जो 4 खरब वर्षों पूर्व पृथ्वी पर थीं। तब मुक्त आणविक ऑक्सीजन बिल्कुल नहीं थी तथा वातावरण अवायवीय था। पृथ्वी की सतह अपचायी पदार्थों जैसे हाइड्रोजन, सल्फ़ाइड, मेथैन तथा अमोनिया की उपस्थिति के कारण अपचायी थी। पूर्व जैविक वातावरण में ताप बहुत अधिक, शायद लगभग 500°C था। तब जल वाष्प बहुतायत थी और उच्च दाब था। ऊर्जा बहुत अधिक मात्रा में पराबैंगनी किरणों, एक्सरे तथा गामा-किरणों के रूप में सूर्य से उपलब्ध थी। निरंतर बिजली की कौंध ने वैद्युत ऊर्जा प्रदान की होगी तथा विघटनाभिकता (radioactivity), ज्वालामुखी उद्गारों तथा उल्काओं के प्रभाव आदि सभी ने ताप ऊर्जा दी होगी। इस प्रकार, हम देख सकते हैं कि वे सभी परिस्थितियां जो आज पृथ्वी के अधिकांश जीवन को नष्ट कर सकती हैं जीवन की उत्पत्ति के लिये अनुकूल तथा अनिवार्य थीं।

प्राचीन जीव किस प्रकार के थे ? यह जानना कठिन है। साथ ही उन घटनाओं के बारे में निश्चित

तौर पर कुछ कहना मुश्किल है जो इतने अधिक पहले घटित हुई थीं। हालांकि, हाल ही में अब ये अनुमान लगाया गया है कि जीवन की उत्पत्ति तब हुई होगी जब तापमान 100°C से अधिक रहा होगा तथा शुरू शुरू के जीव संभवत: कुछ आधुनिक जीवाणुओं से मिलते जुलते होंगे जो उच्चताप के पर्यावरण में रह सकते थे। एर्किया जीवाणु (archaebacteria) समूह के कुछ जीवाणु 100° तथा 140° के बीच में जीवित रहते हैं। वे ऊर्जा के स्रोत के रूप में सूर्य पर निर्भर नहीं रहते हैं। इसकी बजाय वे आणविक हाइड्रोजन तथा सल्फर के यौगिकों से ऊर्जा का उपयोग करते हैं तथा कार्बन-डाइआक्साइड का कार्बनिक यौगिकों में यौगिकीकरण कर देते हैं। वे अवायवीय परिस्थितियों में जीते हैं। इनमे से कुछ जीवाणु समुद्र के तल में गर्म निकासों में रहते हैं जहां पिघले हुये लावे से भू-पर्पटी बनती है तथा समुद्र के तल का प्रसार होता रहता है जिससे महाद्वीप पृथक हो जाते हैं। हालांकि इन जीवाणुओं में क्लोरोफिल नहीं होता तथा ये सूर्य के प्रकाश पर निर्भर नहीं रहते हैं फिर भी अपने लिए पोषण बना सकते हैं चूंकि ये अकार्बनिक कार्बन-डाइआक्साइड से अपने लिये कार्बन यौगिक बना लेते हैं।

जीवन के विकास के क्रम के दौरान क्लोरोफिल कुछ जीवों में विकसित हो गया था। इस चरण में ही सूर्य से प्राप्त प्रकाश ऊर्जा का उपयोग जल को विभक्त करने तथा मुक्त ऑक्सीजन को व्यर्थ पदार्थ की भांति निर्मुक्त करने के लिये हुआ था। दीर्घ काल में जाकर ऑक्सीजन एकत्रित हो गई तथा उसने वातावरण को ऑक्सीकृत रूप में रूपांतरित कर दिया। ऑक्सीजन का फिर श्वसन में अधिक ऊर्जा को निर्मुक्त करने के लिये उपयोग किया जाने लगा होगा तथा यह संरचनात्मक रूप से अधिक जटिल जीवों के विकास के लिये आंशिक तौर पर उत्तरदायी है।

बोध प्रश्न 1.2

निम्नलिखित प्रश्नों में उस एक उत्तर पर चिन्ह लगायें जो **गलत** हैं।

i) सजीवों द्वारा संश्लेषित कार्बनिक रसायन हैं
- क) प्रोटीन
- ख) पॉलिविनाइल क्लोराइड
- ग) लिपिड
- घ) कार्बोहाइड्रेट

ii) सभी सजीव वस्तुएं की विशेषताएं हैं
- क) उपापचय
- ख) वृद्धि
- ग) प्रकाश संश्लेषण
- घ) प्रजनन
- ङ) विकास

iii) जब जीवन की उत्पत्ति हुई तो निम्न परिस्थितियां विद्यमान थीं।
- क) उच्च तापक्रम
- ख) अपचायी वातावरण
- ग) आक्सीजन विहीन
- घ) तेज एक्सरे तथा पराबैंगनी विकिरण
- ङ) बहुतायत क्लोरोफिल के अणु

iv) एस. मिलर द्वारा किये गये प्रयोगों से यह दर्शाया गया कि निम्न कार्बनिक रसायन अकार्बनिक रसायनों द्वारा संश्लेषित किये जा सकते हैं।
- क) ऐमीनो अम्ल
- ख) कैरोटिन
- ग) यूरिया
- घ) शर्करा
- ङ) लैक्टिक अम्ल

1.5 कोशिकाओं का संगठन – पूर्व केंद्रकी तथा वास्तविक केंद्रकी

सभी जीवित पदार्थ अपनी कोशिकाओं की संरचना तथा जैव-रसायन के आधार पर दो प्रमुख श्रेणियों में समूहित किये गये हैं, विशेष कर अपने आनुवंशिक पदार्थ के संगठन के आधार पर। जीवाणु तथा संबंधित जीव पूर्व केंद्रकी यानि प्रोकैरियोट (pro = before, karyon = nucleus) है। अन्य सभी वास्तविक केंद्रकी यानि यूकैरियोट (eu = true) है। पूर्व केंद्रकी में प्राचीन प्रकार का संगठन होता है जिसमें केन्द्रकीय पदार्थ तथा DNA, केंद्रक आवरण द्वारा घिरा नहीं रहता है। इसकी बजाय, DNA एक वृत्ताकार तंतु गुच्छ के रूप में कोशिका के मध्य में उपस्थित रहता है। वास्तविक केंद्रकी जीवों में DNA छड़नुमा गुणसूत्रों में संगठित रहता है तथा कई गुणसूत्र केंद्रकी झिल्ली से परिबद्ध रहते हैं। गुणसूत्र, केंद्रकीय आवरण तथा अन्य अवयव जैसे केंद्रिक (nucleolus) मिलकर केंद्रक की रचना करते हैं। केंद्रक की उपस्थिति शैवाल, कवक, प्रोटोज़ोआ, पेड़-पौधों तथा जंतुओं की विशेषता है। ये सभी वास्तविक केंद्रकी हैं। सिर्फ जीवाणु की कुछ हजार जातियां तथा सायनोबैक्टीरिया पूर्व केंद्रकी हैं। शेष सभी 1-3 करोड़ जीव, वास्तविक केंद्रकी हैं।

पूर्व केंद्रकी तथा वास्तविक केंद्रकी कोशिकाओं के संगठन के बीच में बहुत सारे अंतर हैं तथा तालिका 1.1 और चित्र 1.1 में उनका सारांश दिया गया है। वास्तविक केंद्रकी कोशिकाओं में विस्तृत झिल्लियों का तंत्र होता है। कोशिका प्लैज़्मा झिल्ली द्वारा घिरी रहती है। केंद्रक दोहरी झिल्ली द्वारा सीमित रहता है जिसमें छिद्र तथा कोशिका द्रव्य तक विस्तार होते हैं। झिल्लीनुमा विस्तार अंतर्द्रव्यी जालिका निर्मित करते हैं। प्रोटीन संश्लेषण में संबद्ध राइबोसोम अक्सर अंतर्द्रव्यी जालिका से जुड़े रहते हैं। जालिकाय

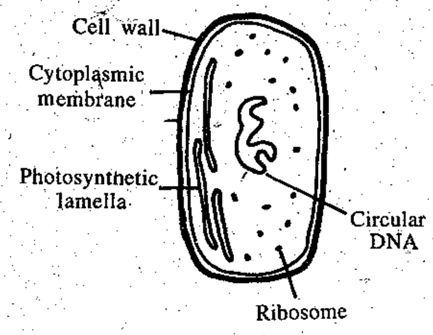

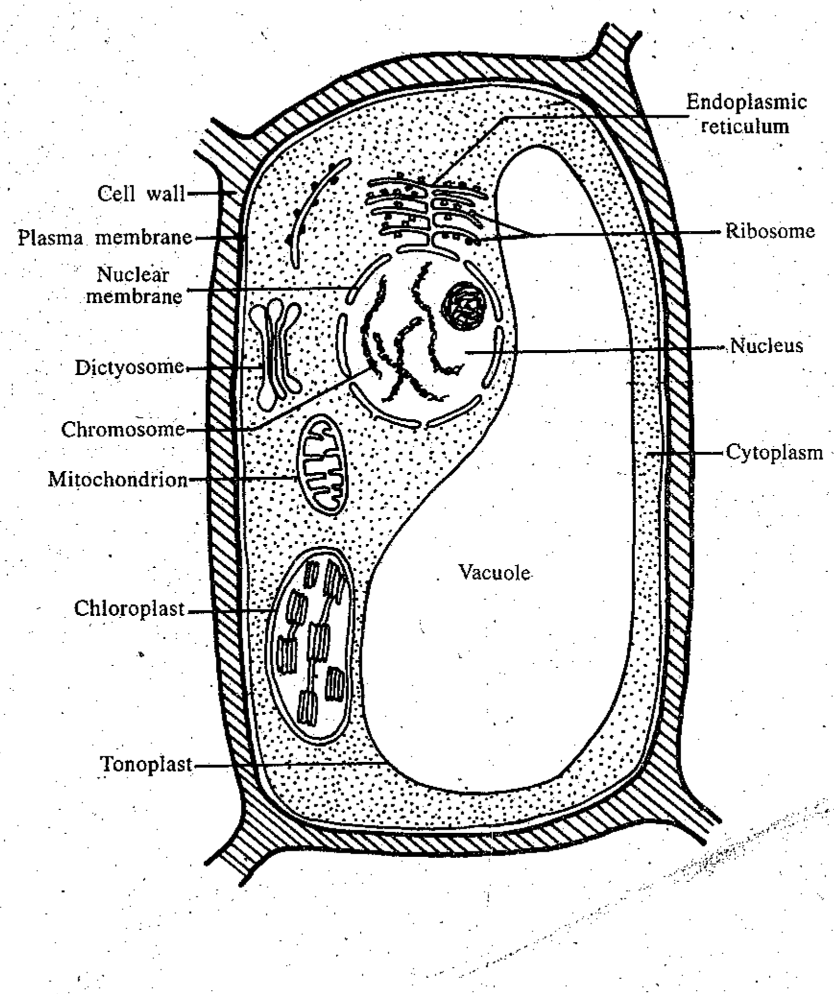

चित्र 1.1 : पूर्व केन्द्रकी तथा वास्तविक केन्द्रकी की तुलना।

तालिका 1.1: पूर्व केंद्रकी तथा वास्तविक केंद्रकी जीवों की तुलना

गुण	पूर्व केंद्रकी	वास्तविक केंद्रकी
जीव	जीवाणु	कवक, शैवाल, प्रोटोज़ोआ, पेड़-पौधे तथा प्राणि
जातियों की संख्या	लगभग 4,000	1-3 करोड़
कोशिका का आकार	छोटा, 1-5 μm	बड़ा, 5-100 μm
केंद्रक DNA	झिल्ली-बद्ध नहीं वृत्तों के रूप में उपस्थित	झिल्ली-बद्ध गुणसूत्रों में संगठित
हिस्टोन्स	DNA से संबद्ध नहीं	हिस्टोन DNA के साथ संबद्ध
इन्ट्रोन्स	अनुपस्थित	उपस्थित
समसूत्री विभाजन	अनुपस्थित	उपस्थित
अर्धसूत्री विभाजन	अनुपस्थित	उपस्थित, अधिकांश जीवों में
झिल्ली बद्ध कोशिकांग	नहीं	केंद्रक, माइटोकॉड्रिया अंर्तद्रव्यी जालिका (ER) जालिकाय (dictyosome)
राइबोसोम	70S	80S 70S प्रकार, माइटोकॉन्ड्रिया तथा प्लैस्टिड्स में
कशाभ	सरल फ्लेज़िलिन	9 + 2 ट्यूब्लिन

(dictyosome) अथवा गॉलजीआशय (golgi body) झिल्लीनुमा संरचनाएं होती हैं जिनका कार्य स्त्रवण होता है। एक बड़ी धानी (vacuole) भी झिल्ली से घिरी रहती है। इस झिल्ली को टोनोप्लास्ट कहते हैं। माइटोकॉन्ड्रिया तथा प्लैस्टिड्स भी झिल्ली बद्ध कोशिकांग (organelles) हैं।

पूर्व केंद्रकी जीवों में झिल्ली बद्ध कोशिकांग नहीं होते हैं। उनमें भिन्न रासायनिक संयोजन की प्लैज़्मा झिल्लियां होती हैं। प्रकाश संश्लेषक जीवाणु असामान्य होते हैं क्योंकि उनमें आंतरिक पटलिकाएं (membrane) होती हैं जो झिल्ली के समान होती हैं। एक कोशकांग जो वास्तविक केंद्रकी तथा पूर्व केंद्रकी जीवों में समान होता है वह राइबोसोम है। हालांकि, राइबोसोम झिल्लीबद्ध नहीं होते हैं। राइबोसोमों का घनत्व अवसादन गुणांक (sedimentation coefficient) के रूप में मापा जाता है तथा स्वेडबर्ग मात्रकों (S) के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है। पूर्व केंद्रकी राइबोसोम 70S तथा वास्तविक केंद्रकी राइबोसोम 80S के होते हैं। यह तथ्य बहुत महत्व का है कि वास्तविक केंद्रकी जीवों में राइबोसोम कोशिकाद्रव्य तथा कोशिकांगों–माइटोकॉन्ड्रिया तथा प्लैस्टिड्स दोनों में उपस्थिति रहते हैं। कोशिकाद्रव्यी राइबोसोम 80S प्रकार के होते हैं जबकि कोशिकांगों के 70S प्रकार के होते हैं, जैसे कि पूर्व केंद्रकी जीवों में होते हैं। ऐसा लगता है जैसे कि माइटोकॉन्ड्रिया तथा प्लैस्टिड्स कुछ पूर्व केंद्रकी जीवों के समान हैं। कोशिकांगों के अंदर, जीवाणुओं की तरह वृत्ताकार DNA की उपस्थिति के द्वारा भी इस तथ्य को मान्यता मिलती है। हम इन निरीक्षणों के अर्थों की व्याख्या अगले खण्ड में करेंगे।

बहुत सी पूर्व केंद्रकी तथा वास्तविक केंद्रकी कोशिकाएं कशाभिकाओं (flagella) की मदद से चलती हैं।

पूर्व केंद्रकी कशाभ, संरचना में अपेक्षाकृत सरल होता है तथा प्रोटीन का बना होता है जिसे फ्लेजिलिन कहते हैं। वास्तविक केंद्रकी कशाभ, समानांतर सूक्ष्मनलिकाओं का बना होता है। अनुप्रस्थ काट में कशाभ में सूक्ष्मनलिकाओं की 9 + 2 व्यवस्था दिखाई पड़ती है। दो मध्य की सूक्ष्मनलिकाएं 9 जोड़ों सूक्ष्मनलिकाओं से घिरी रहती हैं। सूक्ष्म नलिकाएं टयूब्लिन प्रोटीन की बनी होती हैं। वास्तविक केंद्रकी कशाभी संरचना, जब उपस्थित होती है, वह विलक्षण रूप से शैवाल, कवक, प्रोटोज़ोआ तथा पेड़-पौधों व जंतुओं में समान होती है। यह इस बात का सूचक है कि कशाभ की उत्पत्ति अवश्य ही विकास के क्रम के दौरान बहुत पहले हुई होगी तथा यह अवश्य ही सभी आधुनिक वास्तविक केंद्रकी जीवों के सामान्य पूर्वज में उपस्थित रहा होगा।

जीवों के वर्गीकरण की पांच जगत पद्धति में, जिसकी हम विस्तार से व्याख्या करेंगे, सभी पूर्व केंद्रकी जीवों को संघ मोनेरा (Monera) जगत में रखा गया है। वास्तविक केंद्रकी जीवों को चार भिन्न-भिन्न जगत संघों – प्रोटिस्टा (Protista), कवक वर्ग (Fungi), पादप वर्ग (Plantae) तथा प्राणि वर्ग (Animalia) में समूहित किया गया है। सभी जीव पूर्व केंद्रकी तथा वास्तविक केंद्रकी, समान पूर्वज परंपरा द्वारा संबंधित है वर्तमान विभेद, विकास के कम से कम 3.5 खरब वर्षों का परिणाम है। जब पहली बार पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति हुई थी। सबसे पहले जीव पूर्व केंद्रकी थे। वास्तविक केंद्रकी किस प्रकार से उत्पन्न हुए ? विभिन्न वास्तविक केंद्रकी जीवों के समूहों के विविध रुपण क्यों उत्पन्न हुए है ? इन प्रश्नों का उत्तर देने की कोशिश एक अदभुत सिद्धांत द्वारा की गई है - उन सहजीवी घटनाओं की कड़ियों के माध्यम से जो 2 खरब वर्षों पूर्व घटित हुई थी, जिनके फलस्वरूप कोशिकाओं का जो पेड़-पौधों, जंतुओं तथा अन्य वास्तविक केंद्रकी जीवों की पूर्वज है का निर्माण हुआ था। यह "क्रमिक अंत: सहजीवन सिद्धांत" (Serial endosymbiont theory) है।

बोध प्रश्न 1.3

दिये गये कथनों में रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरिये।

i) सभी सजीव पूर्व केंद्रकी या.................... में समूहित किये जा सकते हैं।

ii) पूर्व केंद्रकों में झिल्लीबद्ध.................... विद्यमान नहीं होते हैं।

iii) वास्तविक केंद्रकी की विशेषता.................... राइबोसोम है।

iv) वास्तविक केंद्रकी के कशाभों में सूक्ष्मनलिकाओं की व्यवस्था.................... होती है।

v) वास्तविक केंद्रकी के DNA प्रोटीनों के साथ जटिल रूप से जुड़े होते हैं जिन्हें.................... कहते हैं।

1.6 अंत:सहजीवन के द्वारा विकास

प्राचीनतम जीव प्रोकैरियोटी थे तथा उनमें केंद्रक, माइटोकॉन्ड्रिया, कशाभ अथवा प्लैस्टिड्स जैसे कोशिकांग नहीं होते थे। ये कोशिकांग किस प्रकार विकसित हुए ? उत्परिवर्तन तथा आनुवंशिक पुनर्योग दो प्रक्रियाएं हैं जो जीवों में विभिन्नताएं विकसित करती हैं। प्राकृतिक चयन इन विभिन्नताओं पर कार्य करता है जिसके फलस्वरूप अधिक जटिल संरचनाओं तथा जीवों का विकास होता है। कभी यह माना जाता था कि उत्परिवर्तन तथा पुनर्योग पूर्व केंद्रकी पूर्वज कोशिकाओं के अंदर उपर्युक्त कोशिकांगों के आंतरिक विभेदन के लिये जिम्मेदार हो सकते हैं। अधिकांश जीव विज्ञानी आज यह मानते हैं कि विभिन्न क्रियाओं जैसे सहजीवन ने संभवत: कोशिकांगों तथा जीवों के अधिक विकसित समूहों के विकास में प्रमुख भूमिका निभाई होगी।

सहजीवन दो अथवा अधिक असमान जीवों का, एक दूसरे के निकट सहवास में एक साथ रहना है। यह सहवास परजीविता, जिसमें एक जीव दूसरे जीव से पोषण लेकर लाभान्वित होता है, से लेकर सहोपकारिता, जिसमें दोनों भागीदार एक दूसरे से लाभान्वित होते हैं तक हो सकता है।

नाइट्रोजन-यौगिकीकरण जीवाणु तथा फलीदार पौधों के बीच का संगठन, सहोपकारिता का एक अच्छा उदाहरण है।

अंत:सहजीवन (endosymbiosis) सिद्धांत यह सिद्ध करता है कि माइटोकॉण्ड्रिया तथा प्लैस्टिड्स कभी स्वतंत्र रूप से जीने वाले पूर्व केंद्रकी के वंशज हैं। अंत:सहजीवन का सिद्धांत चित्र 1.2 में समझाया गया है। पूर्व केंद्रकी पूर्वजों में बिना संलग्न प्रोटीन तथा बिना केंद्रक झिल्ली वाला नग्न DNA रहा होगा। केंद्रकीय द्रव्यों (nuclear material) के संघनन तथा केंद्रकीय झिल्ली के आंतरिक विभेदन ने पूर्व केंद्रकों को वास्तविक केंद्रकों में रूपांतरित कर दिया होगा। राइबोसोम में भी जैव रासायनिक परिवर्तन हुये होंगे जिसके फलस्वरूप 80S प्रकार के राइबोसोम बने होंगे जो वास्तविक केंद्रकी जीवों में हैं।

अंत:सहजीवन का सिद्धांत बताता है कि पूर्वज वास्तविक केंद्रकी जीवों ने अपनी आहार संबंधी जरूरतों को संभवत: अन्य पूर्व केंद्रकी जीवों का परिग्रहण तथा पाचन करके पूरा किया होगा। वे जीव जो अपना पोषण इस प्रकार से लेते हैं वे भक्षपोषी (phagotrophs) कहलाते हैं। यह भी संभव है कि पूर्व केंद्रकी जीवों ने भी संभवत: वास्तविक केंद्रकी कोशिकाओं को आक्रांत किया हो।

माइटोकॉण्ड्रिया भी पूर्व केन्द्रकों की तरह, पूर्वज वास्तविक केंद्रकी कोशिकाओं में आक्रामक के तौर पर अथवा पूर्व केंद्रकी जीवों के परभक्षण द्वारा घुसी होगी। पूर्व केंद्रकी को वास्तविक केंद्रकी नहीं पचा सके होंगे। ना ही पूर्व केंद्रकी ने मेजबान वास्तविक केंद्रकी कोशिका को नुकसान पहुंचाया होगा। इसके विपरीत वह वास्तविक केंद्रकी कोशिका के अंदर ही स्थायीकृत हो गये। जिसके फलस्वरूप दोनों के बीच में सहजीवी रिश्ता बन गया होगा। पूर्व केंद्रकी ऊर्जा-संपन्न यौगिकों जैसे कि ATP का उत्पादन करने के लिये संभवत: पोषक तत्वों का अधिक प्रभावशाली ढंग से श्वसनी विखंडन कर सकते थे। ये संभवत: वास्तविक केंद्रकी कोशिकाओं द्वारा उपयोग कर ली गई होंगी। बदले में फिर पूर्व केंद्रकी जीवों को जीविता के लिये आवश्यक पोषक तत्व मिलें होंगे। समय के काल में पूर्व केंद्रकी जीवों ने अपनी कोशिका भित्ती को खो दिया होगा तथा आंतरिक झिल्लियों को विभेदित किया होगा, इस प्रकार पूर्ण माइटोकॉण्ड्रिया विकसित हुई होगी। इसलिये यह आश्चर्यजनक नहीं है कि आज सभी जीवों की माइटोकॉण्ड्रिया के लक्षण पूर्व केंद्रकी जीवाणुओं के साथ मिलते जुलते हैं। माइटोकॉण्ड्रिया, जीवाणुओं की ही भांति आकार में छोटी, लगभग 0.2 से 0.5μ होती है। उनमें वृत्ताकार DNA तथा 70S राइबोसोम होते हैं। यह एक दिलचस्प ध्यान देने योग्य बात है कि कुछ मुक्त रहने वाले जीवाणु माइटोकॉण्ड्रिया में संश्लेषित होने वाले श्वसनी ATP की प्रक्रिया के समान ही ATP संश्लेषित कर सकते हैं।

वास्तविक केंद्रकी कोशिकाओं ने कशाभ अपने विकास के दौरान संभवत: बहुत पहले ही अर्जित कर लिये होंगे। माइटोकॉण्ड्रिया का सहजीवी अभिग्रहण (acquisition) पहले अथवा बाद में हुआ होगा। यह स्पष्ट नहीं है कि कशाभ किस प्रकार से उत्पन्न हुए। एक संभावना यह है कि कशाभ भी सहजीवी घटनाक्रम में उत्पन्न हुए जहां एक गतिशील पूर्व केंद्रकी, जो शायद आधुनिक सर्पिल जीवाणु के समान था, एक वास्तविक केंद्रकी कोशिका के भाग के रूप में स्थायीकृत हो गया। यह वास्तविक केंद्रकियों के लिये एक लाभ रहा होगा क्योंकि यह भोजन की तलाश में इधर उधर गति कर सके होंगे। कशाभ के अर्जन के बाद किसी समय सूक्ष्म नलिकाओं की 9+2 व्यवस्था तथा तारककेंद्र (centriole) विकसित हुये होंगे। तारककेंद्र तथा संबंधित तर्कु तंतु (spindle fibre) समसूत्री विभाजन तथा अर्धसूत्री विभाजन के विकसित होने के पहले आवश्यक थे। एक अन्य महत्वपूर्ण अंत: सहजीवी घटना थी, क्लोरोप्लास्ट का अभिग्रहण। माइटोकॉन्ड्रिया, कशाभ, समसूत्री तथा अर्ध सूत्री विभाजन वास्तविक केंद्रकी कोशिकाओं में पहले से ही उपस्थित थे। यह जन्तु, कवक तथा पादप शाखाओं के बीच में अपसरण (divergence) का भी काल था।

प्राचीन वास्तविक केंद्रकी अप्रकाश संश्लेषी थे। इन रंगहीन जीवों में से कुछ अपने आसपास के कार्बनिक पदार्थों से भोजन ले लेने के लिए अनुकूलित थे और इस प्रकार से मृतपोषी कवक में विकसित हुये। अन्य भक्षपोषी थे जो ठोस भोजन अंतर्ग्रहीत करने में माहिर थे तथा ये प्रोटोज़ोआ एवम् उच्च जंतुओं में विकसित हुये।

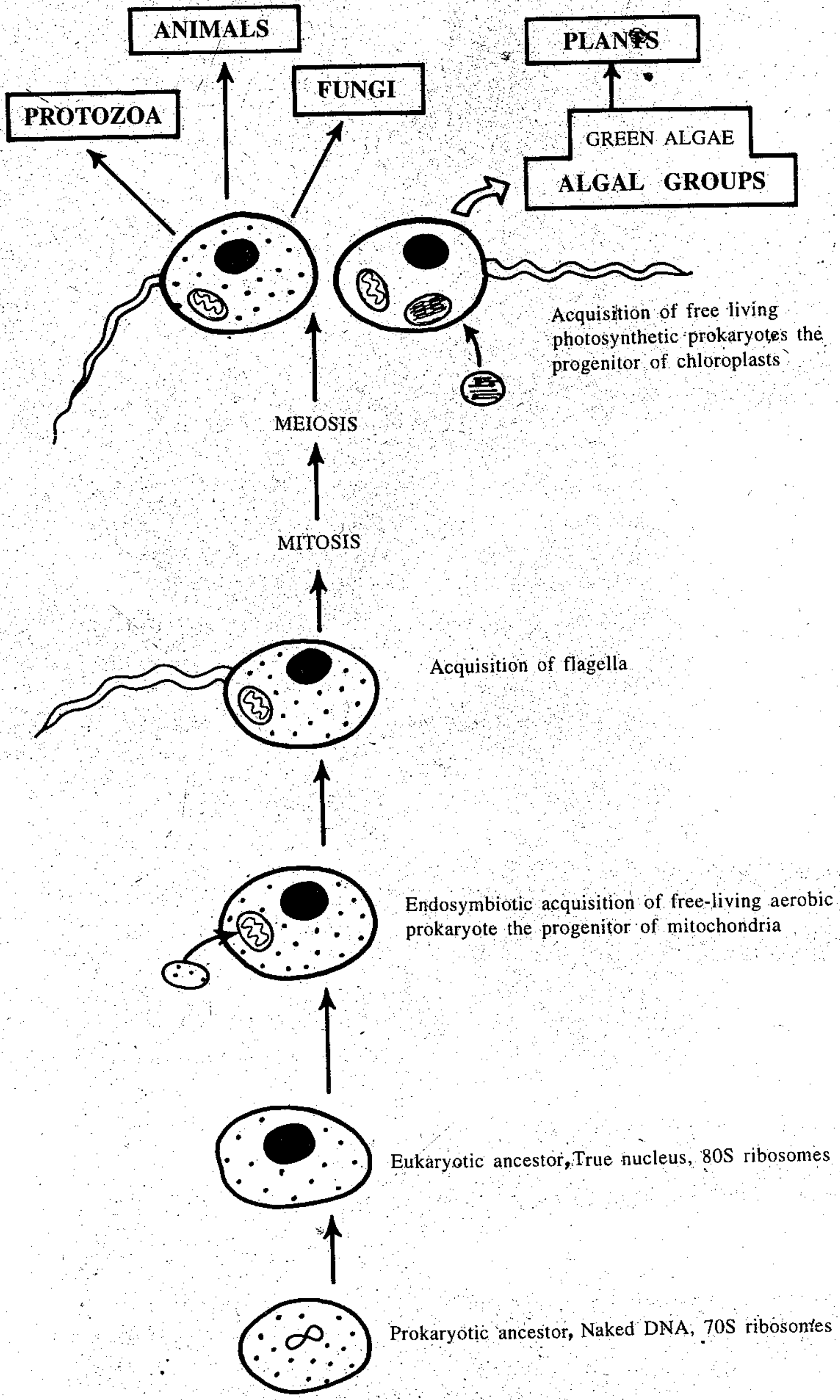

चित्र 1.2 : अंत: सहजीवन द्वारा विकास।

हालांकि प्राचीन वास्तविक केंद्रकी अप्रकाश संश्लेषी थे, वहीं उनके आस पास प्रकाश संश्लेषी पूर्व केंद्रकी भी थे। सायनोबैक्टीरिया में क्लोरोफिल होता है तथा वे प्रकाश संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन निकालते हैं। अंत:सहजीवी सिद्धांत बताता है कि कुछ पूर्वज वास्तविक केंद्रकी जीवों के द्वारा प्रकाश संश्लेषी पूर्व केंद्रकी जीवों के सहजीवी अभिग्रहण से, क्लोरोप्लास्ट का विकास परिणत हुआ। यह बाद में विभिन्न शैवाल समूहों तथा उच्च पादपों के विकास में परिणत हुआ, जिन सभी में क्लोरोफिल *a* होता है। क्लोरोप्लास्ट लगभग 1-6μ लंबे, बहुत कुछ सायनोबैक्टीरिया कोशिकाओं के समान होते हैं तथा उनमें DNA तथा राइबोसोम का पूर्व केंद्रकी संगठन होता है। आधुनिक शैवाल समूहों के प्लैस्टिड्स में क्लोरोफिल *a* तथा साथ ही कुछ अन्य प्रकार के क्लोरोफिल तथा अन्य सहायक वर्णक होते हैं। लाल शैवालों के क्लोरोप्लास्टों की सूक्ष्म संरचना तथा जैव रासायनिक संगठन आधुनिक सायनोबैक्टीरिया के बहुत कुछ समान होती हैं। हरे शैवाल तथा उच्च पादपों के क्लोरोप्लास्ट, क्लोरोफिल *a* तथा साथ ही साथ क्लोरोफिल *b* की उपस्थिति के द्वारा अभिलक्षित होते हैं। हाल ही के वर्षों में हुई एक सबसे दिलचस्प खोज पूर्व केंद्रकी जीवों के कम से कम तीन वंशों (genera) के अस्तित्व को बताती हैं जिनमें क्लोरोफिल *a* तथा क्लोरोफिल *b* दोनों होते हैं। अब इन जीवों के अध्ययन पर उचित शोध हो रहा है। इन्हें प्रोक्लोरोफाइट्स (Prochlorophytes) कहा जाता है। प्रोक्लोरोफाइट्स या तो एक अलग प्रभाग (division) में रखे जाते हैं या सायनोबैक्टीरिया प्रभाग के अंदर एक छोटे समूह के रूप में रखे जाते हैं। यह संभव है कि पूर्वज प्रोक्लोरोफाइट्स, हरे पादपों के क्लोरोप्लास्टों का प्रजनक हो।

अंत:सहजीवी सिद्धांत क्रांतिकारी है, उन तरीकों में जिनमें हम जीवन तथा अपने आपको समझते हैं दूरगामी है। यह सिद्धांत ना सिर्फ कुशलता से जीवों के विभिन्न समूहों तथा उनके कोशिकांगों की उत्पत्ति को समझाता है बल्कि यह भी सुझाव देता है कि प्रत्येक जाति की समानता के पीछे सहजीवी सह-विकास का इतिहास है। आपकी सभी कोशिकाओं की माइटोकॉण्ड्रिया, नीम के पेड़ की माइटोकॉण्ड्रिया से, उन माइटोकॉण्ड्रिया से जो विलुप्त डायनोसोर का भाग थी, तथा अंत में कुछ पूर्व केंद्रकी जीवों से, संबंधित है। एक समय के मुक्त जीवी प्रकाश संश्लेषी जीवाणु के वंशज आज क्लोरोप्लास्ट है जो चावल की पत्ती में हमारे लिये भोजन संश्लेषित करते हैं।

बोध प्रश्न 1.4

कालम क के शब्दों का कालम ख के शब्दों से उचित मिलान कीजिए।

क	ख
i) सहजीवन	पूर्व केंद्रकी
ii) भक्षपोषी	प्रोक्लोरोफाइट्स
iii) माइटोकॉण्ड्रिया	वास्तविक केंद्रकी
iv) क्लोरोफिल *a* और *b*	भोजन का परिग्रहण
v) समसूत्री विभाजन	ATP
vi) मोनेरा	सहोपकारिता

1.7 जीवों का वर्गीकरण

अपने आस पास के सजीव तथा निर्जीव पदार्थों का वर्गीकरण हमें अपने आस पास के जगत के क्रम का ज्ञान कराता है। दुनिया में सभी जगह के लोग अति प्राचीन काल से पेड़-पौधों और जंतुओं का वर्गीकरण करते चले आ रहे हैं। सामान्यतः इस प्रकार के वर्गीकरण उपयोगितावादी हैं। अतः पेड़-पौधों को वर्गीकृत किया गया है जो अनाज, कन्दमूल, फल, दवाइयां, रेशा तथा अन्य बहुत से उत्पाद देते हैं। पेड़-पौधे, शाक, झाड़ी और पेड़ के रूप में भी वर्गीकृत किए गये हैं। वर्गीकरण का एक उद्देश्य किसी

विशेष जीव को पहचानना है। यदि हमसे कुछ करी पत्ते, एकत्रित करने को कहा जाये तो हम स्वतः ही बिना किसी प्रयास के वर्गीकरण की प्रक्रिया से गुजरेंगे। हम शाक को ना देख कर छोटे पेड़ को तलाशेंगे। पत्तियों का विशिष्ट आकार, आकृति रंग तथा गंध करी पत्ते के पेड़ की पहचान की पुष्टि कर देंगी। इस प्रक्रिया में हमने पेड़ को एक अलग नाम देकर "करी पत्ता का पेड़" पहचान लिया।

आधुनिक जीव विज्ञानी भी जीवों को वर्गीकृत करके उन्हें नाम देते हैं। यह वर्गिकी (Taxonomy) का विज्ञान है। सामान्य आदमी अपने आसपास के जीवों की सीमित संख्या से ही वास्ता रखते हैं परन्तु जीव वैज्ञानिकों को लाखों जीवों का नाम और वर्गीकरण करना होता है। अभी तक जीव वैज्ञानिकों द्वारा 17 लाख जीवों से भी अधिक जीवों का नामकरण, वर्णन और वर्गीकरण किया जा चुका है। प्रतिदिन नये जीवों का वर्णन और नामकरण होता रहता है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि लगभग 3 करोड़ जीव ऐसे हैं जिनकी पहचान करना अभी बाकी है।

वर्गिकी विज्ञानी के लिये प्रत्येक जाति समान रूप से महत्वपूर्ण है तथा उसका अध्ययन उतना ही मूल्यवान है जितना किसी और जाति का हो सकता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि अभी बहुत बड़ी संख्या में जीवों का वर्गीकरण करना बाकी रह गया है यह आश्चर्यजनक नहीं है कि वर्गिकी जीव विज्ञान का एक बहुत ही विशिष्ट तथा उपयोगी क्षेत्र है। चूंकि सभी जीव सामान्य पूर्वजों द्वारा एक दूसरे से संबंधित हैं आज वर्गिकी विज्ञानी उन जीवों के विकास के इतिहास के बारे में भी दिलचस्पी रखते हैं जिनका वो अध्ययन करते हैं। जीवों में विविधता का व्यापक अध्ययन तथा उन जीवों में संबंध स्थापित करने तथा उनका नामकरण करने और उनके वर्गीकरण करने को वर्गीकरण विज्ञान (systematics) कहते हैं। वर्गिकी, तब वर्गीकरण विज्ञान का एक हिस्सा बन जाती है, जो सिर्फ जीवों का नामकरण करने और वर्गीकरण करने से ही वास्ता रखती है। हालांकि इस प्रकार का विभेदन सामान्यता कम किया जाता है, तथा अधिकांश जीव विज्ञानी, वर्गीकरण विज्ञान तथा वर्गिकी, दोनों शब्दों का प्रयोग विनियमित रूप से प्रस्तुत करते हैं।

वर्गिकी विज्ञानी प्रत्येक जाति को एक अलग नाम देकर उसे पहचानते हैं। किसी भी जाति के नाम के दो भाग होते हैं, वंश (genera) के नाम के बाद जातीय (species) नाम होता है। जेनेरा तथा स्पीशीज़ दोनों ही शब्द लेटिन में है इसमें मध्यकालीन शाक विज्ञानियों (herbalists) के पुराने अभ्यास का अनुसरण किया गया है जिन्होंने चिकित्सकीय पौधों को लेटिन में वर्णित किया था। पेड़-पौधों के नामों का लेटिनीकरण अब अनिवार्य है उन नियमों के लिये जिनका वर्गिकी विज्ञानी अनुसरण करते हैं। पेड़-पौधों का नामकरण, **नाम पद्धति (nonmenclature)** कहलाता है। पेड़-पौधों का वंशीय तथा जातीय शब्दों द्वारा नामकरण करना **द्विपद-नाम पद्धति (binomial nomenclature)** कहलाता है। यह द्विपद-नाम पद्धति का चलन **कैरोलस लिनियस (Carolus Linnaeus)** के द्वारा 1753 में आरंभ किया गया था। सामान्य काली मिर्च वैज्ञानिक नाम *पाइपर निर्गम (Piper nigrum)* द्वारा जानी जाती है, जो नाम लिनियस ने स्वयं इस पौधे को दिया था। पान का पौधा इससे संबंधित है परंतु अलग जाति का है तथा द्विपद नाम *पाइपर बीटल (Piper betel)* द्वारा जाना जाता है। काली मिर्च तथा पान के पत्ते के पौधों में निकट संबंध उनके समान वंशीय नाम, *पाइपर (Piper)* द्वारा पता चलता है। रीति के अनुसार, पौधों के वंशीय तथा जातीय नाम इटेलिक्स में लिखे जाते हैं अथवा उनके नीचे रेखा खींच दी जाती है।

पाइपर की दो जातियां, तथा इस वंश की अन्य जातियां, साथ ही अन्य संबंधित वंशों को एक साथ कुल (family) पाइपरेसी (Piperaceae) में समूहित किया गया है। संबंधित कुलों को फिर एक ही गण (order) में तथा संबंधित गणों को एक ही **संवर्ग (Classes)** में समूहित किया गया है। संवर्गों को फिर **प्रभाग (Division)** में तथा अंतिम रूप से **जगत (Kingdom) पादप-वर्ग (Plantae)** में रखा गया है। काली मिर्च और पान के पत्ते के पौधे जगत **पादप-वर्ग (Plantae)** प्रभाग एन्थोफाइटा (Anthophyta) (पुष्पीय पौधे) के संवर्ग डाइकोटिलीडनी (Dicotyledons) के सदस्य हैं। वानस्पतिक द्विपद नाम पद्धति का अंतर्राष्ट्रीय कोड ICBN (International Code of Botanical Nomenclature), वर्गिकी विज्ञानियों को वर्गकों (TAXON, plural taxa) को छांटने और

उन्हें नाम देने में सहायता के लिए कुछ नियम तथा निर्देश देता है। वर्गक कोई भी वर्गिकीय श्रेणी हो सकती है जैसे कि जाति, वंश, कुल आदि।

प्रत्येक पौधा जिसका उचित प्रकार से वर्णन, पहचान तथा नामकरण हो चुका है वह सूखे हुये हर्बेरियम नमूने के रूप में विश्व के बहुत से सम्मानीय पादप संग्रहालय (herbaria) में से किसी एक में प्रदर्शित है। यह पूर्ण महत्वपूर्ण नमूना **प्रदर्श नमूने (type specimen)** के रूप में जाना जाता है तथा जातियों की पहचान से संबंधित मतभेदों में अंतिम संदर्भ बिंदु माना जाता है।

वर्गीकरण के प्राचीनतम तरीके कृत्रिम (artificial) थे। कृत्रिम तंत्र में ऐसे गुण जैसे कि फूल का रंग, पौधे की प्रकृति अथवा पत्तियों की आकृति का उपयोग वर्गीकरण करने में हो सकता है। हालांकि इस प्रकार के वर्गीकरण पौधे की सही पहचान में सहायक हो सकते हैं, वे पौधों के मध्य विकासात्मक संबंधों को स्पष्ट रूप से नहीं बता सकते हैं। जब लीनियस ने ज्ञात पेड़-पौधों को 24 संवर्गों में समूहित किया था, उन्होंने बहुत ही कृत्रिम वर्गीकरण की पद्धति का अनुसरण किया था उन्होंने पेड़ पौधों को उनके पुष्पों की संख्या, पुंकेसरों के सामंजस्य तथा लम्बाई के आधार पर वर्गीकृत किया था। अधिकांश आधुनिक वर्गीकरण के तरीके प्राकृतिक (natural) हैं। वर्गीकरण का प्राकृतिक तरीका, जातिवृत्तीय तरीका (phylogenetic) भी कहलाता है। वर्गीकरण का जातिवृत्तीय तरीका जीवों को उनकी विकासात्मक बंधुताओं के अनुसार समूहित करता है। इस तरह के वर्गीकरण तक पहुंचने के लिये विभिन्न लक्षणों का उपयोग किया जाता है। ये आकारकीय, कायकीय, जैव-रासायनिक, तथा आणविक हो सकते हैं। हाल ही के वर्षों में विविधताएं जो आणविक स्तर पर DNA, RNA राइबोसोम तथा प्रोटीनों के संगठन में होती है उनका उपयोग विकासात्मक संबंधों को निर्धारित करने में किया जाने लगा है।

बोध प्रश्न 1.5

निम्नलिखित कथनों के साथ दिये गये कोष्ठकों में **सही** के लिए **स** तथा **गलत** के लिए **ग** लिखिए।

i) वर्गिकी जीवों के वर्गीकरण और नामकरण का विज्ञान है ☐

ii) द्विपद नाम पद्धति में प्रत्येक जीव के लिए दो विकल्पी नाम दिये गये हैं। ☐

iii) वर्गीकरण का जातिवृत्तीय तरीका जीवों में विकासीय संबंधों को दर्शाता है। ☐

iv) वर्गीकरण के कृत्रिम तरीके जीवों की सही पहचान करने में सहायक नहीं होते हैं। ☐

v) द्विपद नाम पद्धति में कुल के नाम के बाद विशिष्ट नाम आता है। ☐

1.8 पाँच जगत

सामान्य तौर पर हम अपने आस पास की किसी वस्तु को निर्जीव अथवा सजीव के रूप में वर्गीकृत करते हैं तथा बाद में सजीव वस्तुओं को पेड़-पौधों तथा जंतुओं में बांटते हैं। जीवों को उच्चतम स्तर के रूप में समूहित करने के लिए शब्द "जगत" (Kingdom) का उपयोग एक आम चलन है। अतः लीनियस ने तीन जगत की पहचान की थी - खनिज, वनस्पति तथा प्राणि जगत। उन्होंने लगभग 36,000 जीवों को या तो वनस्पति अथवा प्राणि जगत में रखा था। अब जैसा कि हम जानते हैं लाखों जीव हैं क्या उन सबको एक अथवा दो जगत में रखा जा सकता है ? क्या ऐसे जीव हैं जो पेड़-पौधों तथा जंतुओं से इतने अधिक भिन्न गुणों वाले हैं कि उन्हें अलग जगत के अंदर वर्गीकृत किया जाना चाहिये ?

सूक्ष्मदर्शी के आविष्कार से पहले सभी हरे तथा प्रकाश संश्लेषी जीवों को वनस्पति जगत में तथा परपोषी जीवों को प्राणि जगत में रख देना आसान था। मशरूम तथा पफबाल (puffball) जैसे कवक

तालिका 1.2 : पांच जगत के जीवों के चुने हुये समूहों का वर्गीकरण

जगत	प्रभाग	सामान्य नाम
1) मोनेरा (प्रोकैरीयोटी)	आर्कीबैक्टीरिया	आर्कीबैक्टीरिया (आद्यजीवाणु)
	यूबैक्टीरिया	वास्तविक बैक्टीरिया
	सायनोबैक्टीरिया	नील-हरित शैवाल, प्रोक्लोरोफाइट्स
2) प्रोटिस्टा	डाइनोफाइटा	डाइनोफ्लैजिलेट (घूर्णीकशाभ)
	जेन्थोफाइटा	पीत-हरित शैवाल
	क्राइसोफाइटा	डायटम तथा सुनहरे भूरे शैवाल
	फियोफाइटा	भूरे शैवाल
	क्रिप्टोफाइटा	क्रिप्टोमोनाड्स
	रोडोफाइटा	लाल शैवाल
	यूग्लीनोफाइटा	यूग्लीनोइड्स
	क्लोरोफाइटा	हरित-शैवाल
3) कवक (Mycetae)	मिक्सोमाइकोटा	अवपंक फफूंदी
	ऊमाइकोटा	जलफफूंदी
	काइट्रिडियोमाइकोटा	काइट्रिड्स
	ज़ाइगोमाइकोटा	रोटी की फफूंदी
	एस्कोमाइकोटा	कोष कवक
	बेसीडियोमाइकोटा	मृदुगर कवक
	डयूटिरोमाइकोटा	अपूर्ण कवक
	(लाइकेन कवक)	शैक (lichens)
4) प्लान्टी (Plantae)		
ब्रायोफाइट्स	ब्रायोफाइटा	लिवरवर्ट्स, होर्नवर्ट्स तथा मॉसेस (mosses)
टेरिडोफाइट्स	साइलोफाइटा	व्हिस्क फर्न्स (whisk ferns)
	लाइकोपोडियोफाइटा	क्लब मॉसेस (club mosses)
	इक्वीसिटोफाइटा	हॉर्सटेल्स (Horsetails)
	टेरोफाइटा	फर्न्स (Ferns)
जिम्नोस्पर्म्स	साइकैडोफाइटा	साइकैड्स (Cycads)
	जिंगोफाइटा	जिंगो (Ginkgo)
	कोनीफेरोफाइटा	कोनीफर्स (Conifers)
	नीटोफाइटा	नीटम आदि
एन्जियोस्पर्मस	एन्थोफाइटा	पुष्पीय पादप

नोट : एकनिष्ठ रूप से जीवाश्मी पौधों के संवहनी पादप प्रभागों को इस वर्गीकरण में नहीं रखा गया है तथा जगत प्रोटिस्टा में सिर्फ शैवालीय सदस्यों को दिखाया गया है।

को ऐसे पौधे समझा जाता था जिन्होंने अपना पर्णहरित खो दिया हो तथा इसलिये उन्हें पौधों के समान ही माना जाता था। सूक्ष्मदर्शी से हजारों एक कोशिकीय जीवों (जिनमें जीवाणु भी शामिल हैं) के अस्तित्व की खोज हुई जो आसानी से वनस्पति तथा प्राणि जगत में नहीं रखे जा सकते। सौ वर्षों से भी अधिक समय पूर्व एक तीसरा जगत प्रोटिस्टा (Protista) उन सभी जीवों को शामिल करने के लिये प्रस्तावित किया गया जो अपने संपूर्ण जीवनकाल में एक कोशिकीय रहते हैं। फिर भी, जीव विज्ञानियों ने इन एक कोशिकीय जीवों को भी वनस्पति अथवा प्राणि जगत में रखना जारी रखा और इस प्रकार

कुछ कृत्रिम समुच्चयों को जन्म दिया। इस स्थिति के लिये एक कारण यह था कि जीव विज्ञानी या तो वनस्पति विज्ञानी थे अथवा प्राणि विज्ञानी तथा सभी जीवों को उनके वैज्ञानिक अध्ययन के लिये, इन दो क्षेत्रों में से किसी एक में रखना आवश्यक था।

जीव विज्ञानी अब सहमत हैं कि जीवित जगत को इतने स्पष्ट रूप से सिर्फ दो जगत में नहीं बांटा जा सकता। पूर्व केन्द्रकी जीव, वास्तविक केन्द्रकी जीवों, कवक, पेड़-पौधों तथा जंतुओं से इतने भिन्न हैं कि उन्हें एक अलग जगत में रखा गया है। कवक भी बहुत पहले ही परपोषी वास्तविक केंद्रकी जीवियों से विकसित हुये दिखाई पड़ते हैं। यह हरे पेड़-पौधों से इतने अधिक तरीकों में भिन्न हैं कि वे एक अलग जगत में व्यवस्थित किये गये हैं। बहुत से एक कोशिकीय जीवों की बंधुताएं जो सम्मिलित शब्द प्रोटिस्ट (**protist**) द्वारा जाने जाते हैं, वे किसी विशिष्ट जगत में रखे जाने के लिये बहुत ही अल्पतौर पर समझे गये हैं।

एक सबसे अधिक माना जाने वाला जीवों का वर्गीकरण **पांच-ज़गत (Five Kingdom)** योजना है जो मूलरूप से अमरीकी वैज्ञानिक आर.एच.विटेकर (R.H. Whittaker) द्वारा प्रस्तावित की गई थी। पांच जगत योजना का सरलीकृत स्वरूप चित्र 1.3 में प्रस्तुत किया गया है।

इस योजना के अनुसार सभी पूर्व केंद्रकी जीव, जगत मोनेरा (Monera) में शामिल किये गये हैं। कुछ वैज्ञानिकों ने बैक्टीरिया जगत के लिए मोनेरा नाम की जगह प्रोकैरियोट नाम रखने का सुझाव दिया है। अधिकांश एक कोशिकीय वास्तविक केंद्रकी जीव साथ ही बहुकोशिकीय शैवाल जगत प्रोटिस्टा

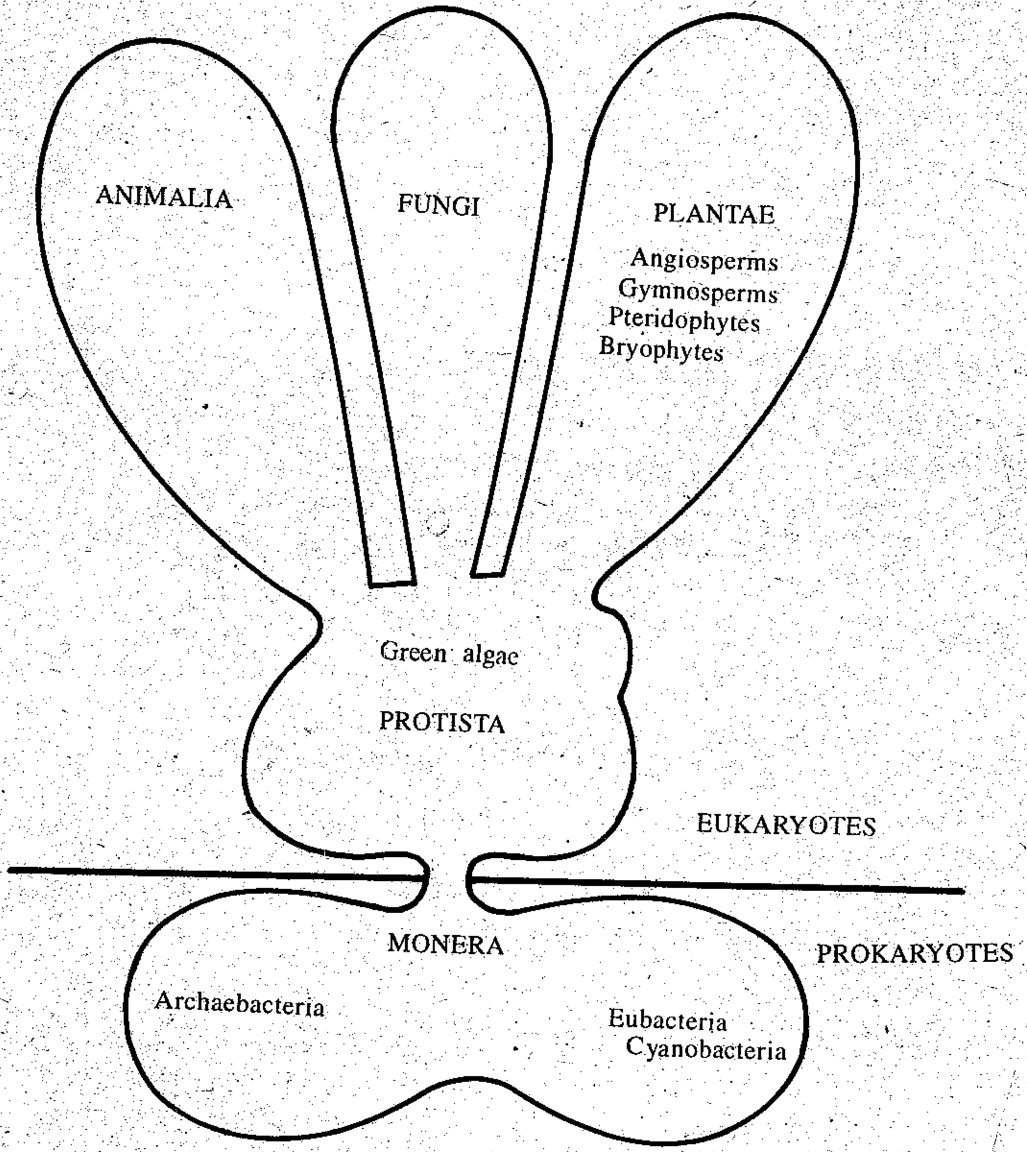

चित्र 1.3 : पांच जगत वर्गीकरण।

(protista) के सदस्य हैं। यह बता देना चाहिये कि जगत प्रोटिस्टा मूलरूप से सिर्फ उन्हीं जीवों को शामिल करने के लिये प्रस्तावित किया गया था जो अपने पूरे जीवन चक्र के दौरान एक कोशिकीय रहते हैं। शब्द प्रोटोक्टिस्टा (protoctista) उस जगत के लिये नाम सुझाया गया था जिसमें बहुकोशिकीय शैवाल भी शामिल हैं।

हालांकि, हम शब्द प्रोटिस्टा का प्रयोग करेंगे बजाय प्रोटोक्टिस्टा के, क्योंकि पहले वाला शब्द अधिक प्रचलित है। बाकी बहुकोशिकीय वास्तविक केंद्रकी जीव तीन जगत में बंटे हुये हैं, प्लांटी (Plantae) फन्जाई (Fungi) तथा एनीमेलिया (Animalia)। यह योजना, संगठन के तीन स्तरों की पहचान तथा तीन प्रमुख पोषण के तरीकों पर आधारित है। जगत मोनेरा (Monera) में जीवाणु पूर्व केंद्रकी है। प्रोटिस्ट वास्तविक केंद्रकी है तथा एक कोशिकीय अथवा बहुकोशिकीय हो सकते हैं। पेड़-पौधे, कवक तथा जंतु वास्तविक केंद्रकी है। पेड़-पौधे तथा जंतु बहुकोशिकीय हैं लेकिन कवक जगत में एक कोशिकीय तथा बहुकोशिकीय दोनों प्रकार के जीवों को शामिल किया गया है। पोषण के आधार पर पेड़-पौधे प्रकाश संश्लेषी हैं तथा इस कारण स्वपोषी हैं। कवक पोषण अवचूषण (absorption) द्वारा लेते हैं जबकि जंतु अपने भोजन को अंर्तग्रहित करते हैं।

विषाणु (viruses) सरल संरचनायें हैं जो अन्य जीवों को संक्रमित कर सकते हैं तथा अपने आपको मेज़बान कोशिकाओं में पुर्न उत्पादित करते हैं। सभी विषाणु परजीवी हैं। हालांकि, विषाणु, कोशिकीय नहीं होते हैं तथा उन्हें जीवों के पांच जगत के अंदर शामिल नहीं किया गया है, विषाणु ना तो पूर्व केंद्रकी हैं ना ही वास्तविक केंद्रकी हैं। जीव विज्ञानी अब ये मानते हैं कि विषाणु संभवत जीवों का संबद्ध समूह नहीं है। वे सम्भवतः उस मेजबान के आनुवंशिक द्रव्य से अधिक संबंधित होते हैं जिनको वे संक्रमित करते हैं बजाय अन्य विषाणुओं के अथवा किसी अन्य जीवों के समूह से।

पांच जगत वर्गीकरण जीवों को समूहित करने के लिये अंतिम शब्द नहीं है, जिन्हें हम पृथ्वी पर पाते हैं। हम आगे पढ़ेंगे कि वनस्पति विज्ञानी इस बात पर एकमत नहीं है कि कौन-कौन से जीव वनस्पति जगत में शामिल किये जाने चाहिए। प्रोटिस्टा जगत उन जीवों का कृत्रिम समुच्चय माना जाता है जिनकी वास्तविक बंधुतायें अपूर्ण रूप से समझी गई हैं। वर्गीकरण की कोई भी पद्धति पूर्ण आदर्श नहीं है। जैसे-जैसे अतिरिक्त जानकारियां मिलती जाती हैं हमारी धारणाएँ बदलती जाती हैं तथा वर्गीकरण योजनाएं भी रूपांतरित हो जाती हैं।

1.9 कौन से जीव पादप हैं ?

पेड़-पौधों की विविधताओं के इस पाठ्यक्रम में आप सायनोबैक्टीरिया, कवक कुछ शैवाल समूहों तथा थलीय पेड़ पौधों के बारे में अध्ययन करेंगे। सायनोबैक्टीरिया पूर्व केंद्रकी होते हैं। इसलिये ये जगत मोनेरा के वास्तविक सदस्य हैं। कवक भी वनस्पति जगत के ना होकर फन्जाई जगत के सदस्य हैं। परन्तु पादप विविधता के इस अध्ययन में ये जीव कुछ कारणों से शामिल किये जाते हैं। सायनोबैक्टीरिया, जो नील-हरित शैवाल भी कहलाते हैं का रीति अनुसार शैवाल वैज्ञानिकों के द्वारा अध्ययन किया जाता है। जो अन्य शैवाल समूहों का भी अध्ययन करते हैं, हालांकि ये पूर्व-केंद्रकी हैं, सायनोबैक्टीरिया में क्लोरोफिल *a* होता है तथा वे प्रकाश संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन निष्कासित करते हैं ठीक उसी प्रकार से जैसे वास्तविक केंद्रकी शैवाल तथा पेड़-पौधे करते हैं। सायनोबैक्टीरिया अन्य शैवाल समूहों के समान ताजे तथा लवणीय जल तथा स्थलीय आवासों को अध्यासित करते हैं। अतः सहजीवन का सिद्धांत यह सुझाव देता है कि संभवतः पूर्वजी सायनोबैक्टीरिया का प्लैस्टिड के रूप में प्रोटोज़ोआ के साथ सहजीवी अर्जन के फलस्वरूप विभिन्न शैवाल समूहों का विकास हुआ। सायनोबैक्टीरिया से संबंधित कम से कम दो सदस्यों में दोनों क्लोरोफिल *a* तथा *b* वर्णक होते हैं जो सभी हरी शैवालों में तथा पेड़-पौधों में पाये जाते हैं।

कवकों का भी रीति अनुसार वनस्पति विज्ञानियों द्वारा ही अध्ययन किया जाता है। कवकीय थैलस (thallus) सामान्य रचना में शैवालों के थैलस से मिलते जुलते हैं। कवकों में बीजाणुओं द्वारा प्रजनन होता है जैसा कि बहुत से शैवालों में होता है। कम से कम कुछ कवक संभवतः शैवालीय पूर्वजों से द्वितीयक तौर पर प्रकाश संश्लेषी वर्णकों को खो देने के बाद विकसित हुये होंगे। रोगजनकों के रूप में बहुत से कवक पेड़-पौधों से बहुत नजदीकी से जुड़े होते हैं। लगभग 80% संवहनी पेड़-पौधों की जड़ों

में कवकीय सहवास होता है। यह कवक-मूल सहवास उच्चतर पेड़-पौधों को भूमि से पोषक तत्व प्राप्त करने में सहायक होता है। कवक मृत पेड़-पौधे के तत्वों के पुनः चक्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार, सायनोबैक्टीरिया तथा कवकों का ज्ञान हमें पेड़-पौधों के जीवन में उनकी भूमिका तथा उनके पेड़-पौधों से संबंधों को समझने में सहायता करता है।

क्या शैवाल वनस्पति जगत के सद्स्य हैं ? शैवाल जीवों का एक विविध समूह हैं जिनकी उत्पत्ति तब हुई थी जब शुरू शुरू के वास्तविक केंद्रकी जीवों ने सहजीवन के द्वारा विभिन्न प्रकार के प्लैस्टिड्स को उपार्जित कर लिया था। कुछ एक कोशिकीय शैवाल संभवतः इतने दूरस्थ रूप से पेड़-पौधों से संबंधित हैं कि उन्हें वनस्पति जगत में नहीं रखा जाना चाहिये। इसके विपरीत, हरे शैवाल थलीय पादपों से निकट रूप से संबंधित है। यह अब माना जाने लगा है कि थलीय पेड़-पौधे हरे शैवाल समूह से विकसित हुये हैं। अतः वनस्पति जगत के किसी भी परिमितिकरण से समस्यायें उत्पन्न होने की संभावना है। यदि हम सिर्फ ब्रायोफाइट्स, टेरिडोफाइट्स, जिम्नोस्पर्मस तथा एन्जियोस्पर्मस को ही वनस्पति जगत में शामिल करते हैं, जैसा कि चित्र 1.3 में दिखाया गया है, तब उनका तात्कालिक पूर्वज समूह, हरित शैवाल, वनस्पति जगत से निष्कासित हो जाता है। यदि हम सभी हरे शैवालों को वनस्पति जगत में शामिल करते हैं तब हम बहुत से एक कोशिकीय शैवालों को भी इस जगत में शामिल कर रहे हैं जो अन्य तौर पर दृढ़ रूप से बहुकोशिकीय है। जैसा कि पांच जगत वर्गीकरण के एक रूप में, ऊपर बताया गया है, विटेकर (Whittaker) और मार्गुलिस (Margulis) ने वनस्पति जगत को सिर्फ बहुकोशिकीय जीवों तक ही सीमित किया है। हरे शैवाल सहित सभी शैवाल समूह जगत प्रोटिस्टा (Protista) में शामिल किये गये हैं जिसमें एक कोशिकीय प्रोटिस्टा भी सम्मिलित किये गये हैं।

वनस्पति विज्ञानियों के बीच में अब एकमत विकसित हो रहा है कि शब्द "पादप" को सिर्फ बहुकोशिकीय थलीय पेड़-पौधों के संदर्भ में प्रयोग किया जाये। थलीय पेड़-पौधों में ब्रायोफाइट्स, टेरिडोफाइट्स, जिम्नोस्पर्मस, तथा एन्जियोस्पर्मस शामिल है।

चित्र 1.4 विभिन्न समूहों के जीवों की आपेक्षित बहुलता का संक्षिप्तीकरण करता है जिन्हें पेड़-पौधों की

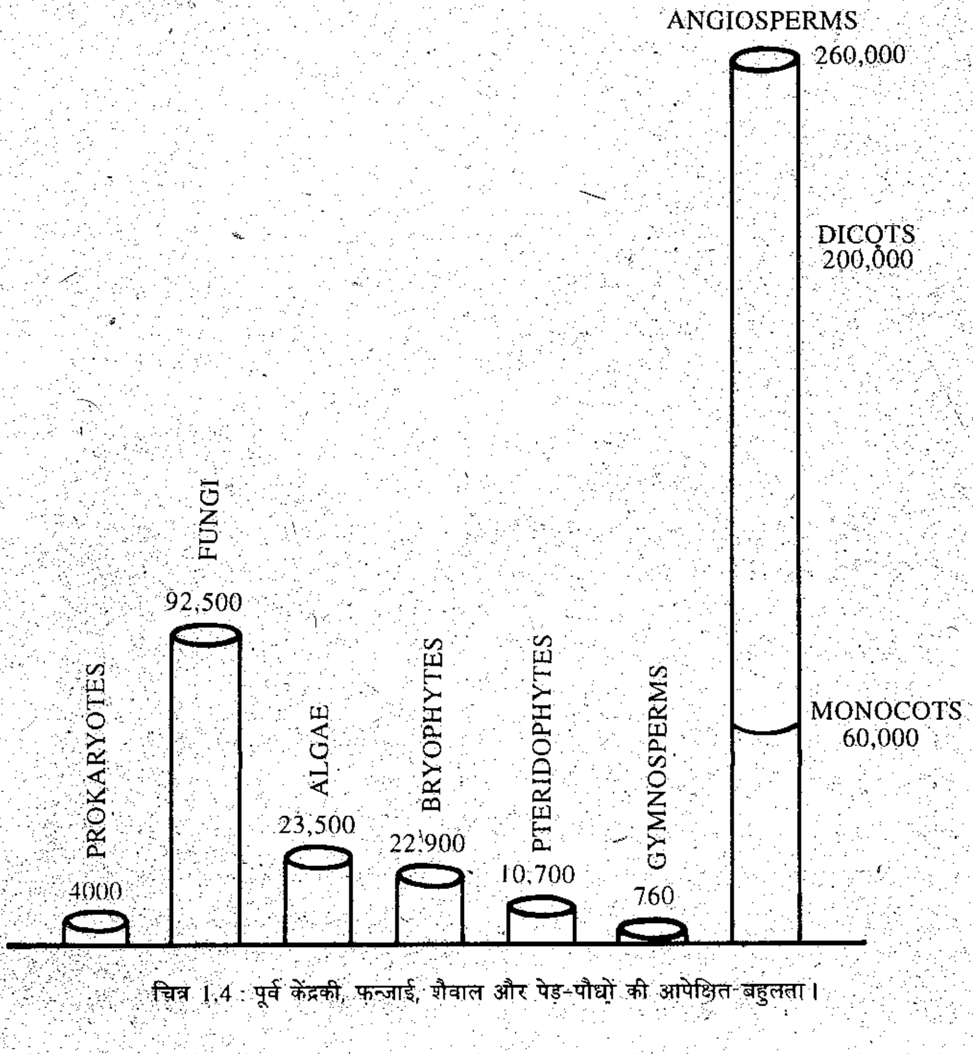

चित्र 1.4 : पूर्व केंद्रकी, फन्जाई, शैवाल और पेड़-पौधों की आपेक्षित बहुलता।

विविधता के अध्ययन में शामिल किया गया है। जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है यह तालिका चार विभिन्न जगतों के जीवों को सम्मिलित किये हैं : मोनेरा, फन्जाई, प्रोटिस्टा तथा प्लान्टी।

बोध प्रश्न 1.6

1) पांच जगत वर्गीकरण में निम्न जीवों के समूह में से कौन सा पादप जगत में शामिल किया गया है ?
   क) मशरूम
   ख) फर्न्स
   ग) हरे शैवाल
   घ) सायनोबैक्टीरिया
   च) लाइकेन

2) निम्न में से किस जगत में बैक्टीरिया शामिल किये जाने चाहिए ?
   क) प्रोटिस्टा
   ख) प्लांटी
   ग) मोनेरा
   घ) प्राणि जगत
   च) फन्जाई

3) निम्न में से कौन से वैज्ञानिक फन्जाई का अध्ययन करते हैं ?
   क) प्राणि वैज्ञानिक
   ख) शैवाल वैज्ञानिक
   ग) ब्रायोविज्ञ
   घ) वनस्पतिविद
   च) विषाणुविद

4) निम्न में से कौन से क्लोरोफिलों से पादप वर्ग पहचाने जाते हैं ?
   क) a और d
   ख) a और c
   ग) a और b
   घ) सिर्फ a
   च) a और e

1.10 पर्यावरणीय अवकर्षण तथा पादप विविधता

जीवन विज्ञान के विद्यार्थी होने के नाते हमें सिर्फ जीवों की विविधता, विकास तथा वर्गीकरण के अलावा जीव विविधता की सुरक्षा व संरक्षण में भी दिलचस्पी होनी चाहिए। हाल ही में जैवविविधता शब्द बहुत महत्वपूर्ण हो गया है क्योंकि सभी राष्ट्रों के लोग जैविक धन का प्रलेख कर रहे हैं तथा उसके संरक्षण के तरीके निकाल रहे हैं। 170 से भी अधिक देशों ने जीव विविधता की सभा में एक महत्वपूर्ण समझौते पर हस्ताक्षर किये। यह सभा ब्राजील में हुई थी। अब यह जानना आवश्यक है कि आखिर लोग जीव विविधता के लिए क्यों चिन्तित हैं ?

कई प्रकार के पर्यावरणीय अवकर्षणों से बहुत संख्या में जीवों की अतिजीविता को अब खतरा है। मनुष्यों ने जंगलों को साफ कर दिया, बहुत से जानवरों का शिकार किया, मिट्टी, जल तथा वायु को प्रदूषित कर दिया तथा उन संतुलनों को बदल दिया जिसने पारिस्थितिक तंत्रों को लाखों वर्षों से

संभालकर रखा था। कुछ वैज्ञानिक आंकलित करते हैं कि प्रतिदिन 100 से भी अधिक जातियां विलुप्त होती जा रही हैं। इतनी ऊँची दर पर विलुप्तीकरण पहले कभी भी पृथ्वी पर नहीं हुआ था। समक्ष रूप से बहुत से जीवों की अतिजीविता के खतरे के लिए पूर्णरूप से मनुष्य ही जिम्मेदार है।

आवास का खो जाना जीवों के लिए खतरे का एक प्रमुख कारण है। विश्व में सिर्फ लगभग 7% क्षेत्र नम उष्णकटिबंधीय वनों द्वारा आच्छादित है फिर भी ये वन सभी प्रकार के पेड़ पौधों के 50% तथा सभी प्रकार के जानवरों के लगभग 20% का निवास स्थान है जो पृथ्वी पर रहते हैं। एक समय भारत में आच्छादित वन और घनी जैवविविधता थी। अब घने वनों से आच्छादित क्षेत्र अपने पहले के स्वरूप का 19.44% रह गये हैं और सिर्फ 11.7% भू का भाग घने वनों से ढका है। इसके बावजूद भी स्पीशीज़ विविधता में भारत विश्व में 8-10 तक के दर्जे पर है।

विश्व तथा भारत में वैज्ञानिकों द्वारा वर्णित जीवों के प्रमुख समूहों की सूची तालिका 1.3 में दी गई है। यह वरित: सूची है और सब प्रकार के जीव समूहों को शामिल नहीं करती है। पूर्ण विश्व में करीब 17 लाख स्पीशीज़ का वर्णन किया गया है जिसमें 1.14 लाख भारत में से है।

भारत में लगभग 15,000 पुष्पीय पादपों की स्पीशीज़ है जो 315 कुलों में वितरित हैं। इनमें से लगभग 5000 जातियां स्थानिक है, यानि कि वे भारत में ही सीमित हैं। चित्र 1.5 से ज्ञात होता है कि भारत पुष्पीय पादपों की विविधता में विश्व में दसवें स्थान पर है। ब्राजील पुष्पीय पादपों की विविधता में विश्व में सबसे धनी है, वहाँ पर 55,000 स्पीशीज़ हैं। पुष्पीय पादपों के साथ ही साथ उभयचर (Amphibians), सरीसृप (Reptile), पक्षी तथा स्तनधारी (Mammals) जीवों में धनी होने के कारण भारत विश्व के 12 महाविविधता (megadiversity) वाले देशों में से एक है।

तालिका 1.3 : भारत में जैव विविधता

जीव	स्पीशीज़ की संख्या	
	विश्व में	भारत में
पूर्वकेन्द्रकी (Prokaryotes)	4,000	1,000
कवक (Fungi)	95,000	20,000
शैवाल (Algae)	24,000	2,000
ब्रायोफाइट्स (Bryophytes)	23,000	2,800
टेरिडोफाइट्स (Pteridophytes)	11,000	1,000
अनावृतबीजी (Gymnosperms)	8,00	65
पुष्पीय पादप (flowering plants)	260,000	15,000
कीट (Insects)	750,000	50,000
मत्स्य (Fishes)	21,700	2,500
उभयचर (Amphibians)	5,000	200
सरीसृप (Reptiles)	6,000	430
पक्षी (Birds)	9,000	1,300
स्तनधारी (Mammals)	4,200	350

वैज्ञानिकों ने विश्व में 18 "तप्त बिंदु" (hot spots) भी पहचाने हैं जो जैवविविधता में धनी हैं। इनमें से दो तप्त बिंदु भारत में पाए जाते हैं। पहला पश्चिमी घाट है तथा दूसरा पूर्वी हिमालयी क्षेत्र है।

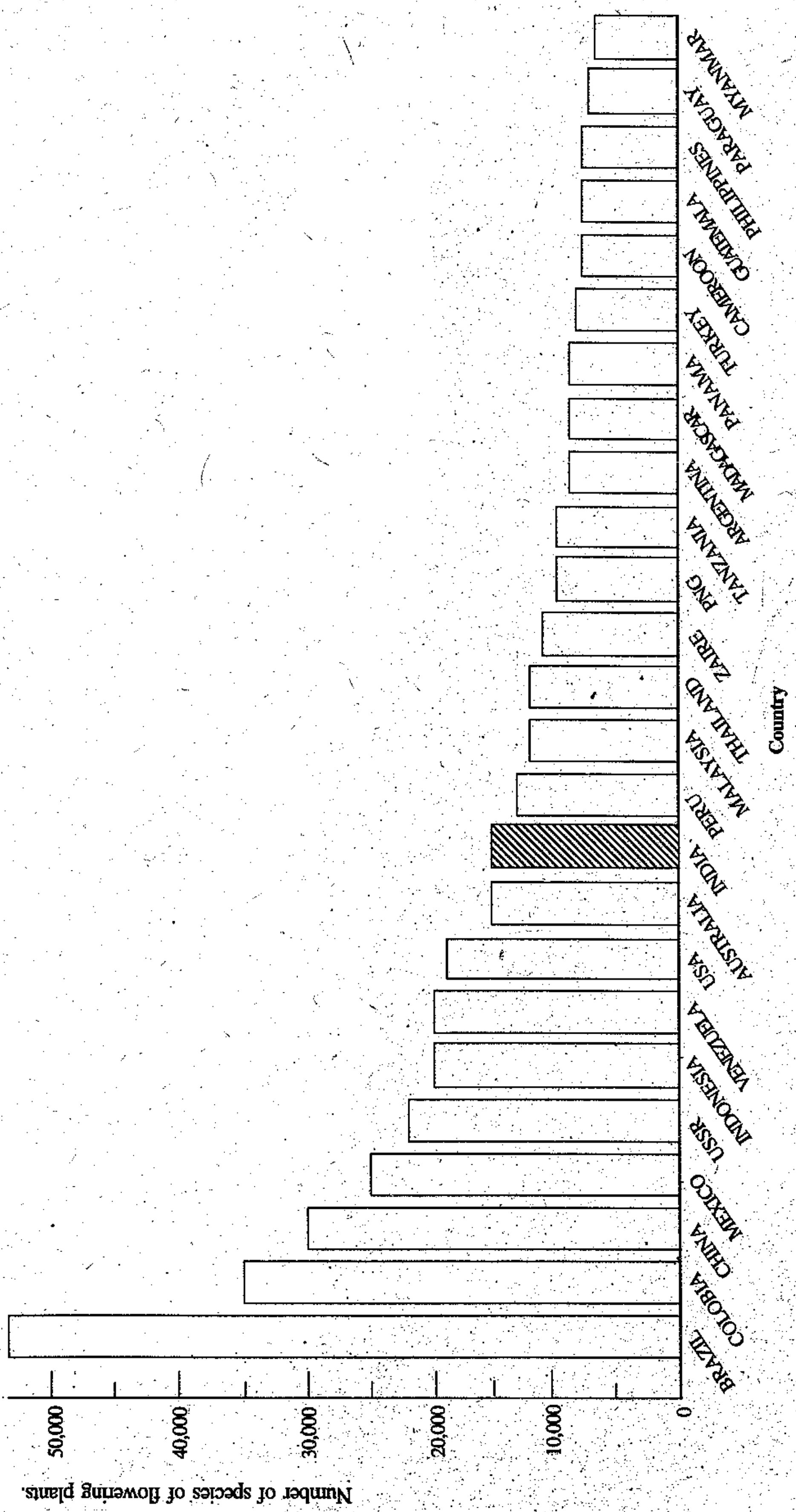

चित्र 1.5 पुष्पीपादपों में बहुतायत 25 देशों में भारत की स्थिति (from Global biodiversity: status of the earth's living resources, chapman and hall, 1992)

इनमें पादपों, जंतुओं तथा सूक्ष्मजीवों की विशाल जनसंख्या पाई जाती है। पुष्पीय पादपों की लगभग 1,600 स्थानीय स्पीशीज़ पश्चिमी घाटों पर पाई जाती है। लगभग 3,500 ऐसी ही स्थानीय आवृतबीजी पादपों (Angiosperms) की स्पीशीज़ पूर्वी हिमालयी क्षेत्रों में भी है।

विश्व में कृषि जैव विविधता (agrobiodiversity) के 12 केन्द्रों में से भारत एक है। आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण पादपों की लगभग 3000-5000 स्पीशीज़ यहाँ पाई जाती हैं। इनमें लगभग 1,000 स्पीशीज़ जंगली खाद्य पादपों की तथा लगभग 1,500 स्पीशीज़ औषधिय पादपों की है। लगभग 165 स्पीशीज़ कृषि पादपों की हैं जो कृषि या कृषि उद्यान (horticulture) पादपों के रूप में उगाई जाती हैं। कृषि पादप जैसे कि चावल/धान (rice), काला चना (black gram), अरहर दाल (pigeon pea) बैंगन (egg plant), आम, कटहल, इलायची तथा काली मिर्च सबसे पहले भारतीय क्षेत्र में उगाई गई थीं। वैज्ञानिकों ने रिकार्ड किया है कि वन्य पादपों की लगभग 320 स्पीशीज़ हमारे कृषि पादपों से संबंधित है और इसलिए इनमें सघन जीनकोश (gene pool) पाया जाता है जिसे आगे कृषि पादपों को उन्नत करने में इस्तेमाल किया जा सकता है।

जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ती है और मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों से अधिक मांग करने लगता है तथा पर्यावरण का अवकर्षण करता है तो कई हजार जीव विलुप्त हो जातें हैं। यह आंकलित किया गया है भारत के लगभग 10% पुष्पीय पादप खतरे की श्रेणी में हैं। पादपों की लगभग 90 स्पीशीज़ जो कि पहले वर्णित थी वे पिछले 50 वर्षों से नहीं देखी गई हैं। जीवित वस्तुओं को हमारे संरक्षण की आवश्यकता है। वैयक्तिक जंतुओं तथा पादपों को लाकर संरक्षित करना तथा वनस्पति उद्यानों तथा अजायबघरों में उन्हें संवर्धित करना संभव है। बीज तथा कुछ जीवों को संभवतः लंबे समय तक शीत गृहों में रखा जा सकता है। संरक्षण के ये तरीके अवस्थानिक (ex situ) संरक्षण कहलाते हैं। हालांकि स्पीशीज़ को संरक्षित करने का बेहतर उपाय उन्हें उनके प्राकृतिक आवास में ही स्वस्थानिक संरक्षण करना है। इसमें समूचे पारिस्थितिक तंत्र (ecosystem) को संरक्षित करने की आवश्यकता होती है जिससे सभी घटक जीव पारस्परिक क्रिया कर सकें तथा विकसित हो सके।

भारत में अब इन स्वस्थानिक संरक्षण क्षेत्रों का आकर्षक जाल (नेटवर्क) है जो संरक्षित क्षेत्र कहलाता है। वैधानिक रूप से संरक्षित क्षेत्रों के दो प्रमुख प्रकार हैं, जिनके नाम हैं, राष्ट्रीय उद्यान (National parks) तथा वन्य जीव उद्यान (Sanctuaries)। यहाँ 80 से भी अधिक राष्ट्रीय उद्यान तथा 440 वन्य जीव उद्यान हैं तथा और अधिक क्षेत्रों को संरक्षित क्षेत्र घोषित करने की योजना है। इसके अतिरिक्त, अनेकों नमक्षेत्रों, गरान वनों (mangrove forest) प्रवाल भित्तियों (coral reefs) तथा वरित क्षेत्रों को जीवमंडल (biosphere) आरक्षित क्षेत्रों के रूप में घोषित किया गया है। यहाँ हजारों छोटे-छोटे क्षेत्र भी हैं जो धार्मिक रूप से ग्रामीण जनों द्वारा पवित्र उपवनों (sacred groves) के रूप में संरक्षित हैं।

जब आप पादपों तथा अन्य जीवों के बारे में पढ़ते हैं तो आपको जैवविविधता के महत्व के बारे में भी पढ़ना चाहिए कि ये कैसे विकसित हुई तथा किस प्रकार प्रकृति में इसका रखरखाव होता है। मनुष्य के लिए इसका क्या उपयोग है और किस प्रकार अब मनुष्य के क्रियाकलापों के द्वारा इसको खतरा है। ये आपको वर्तमान पारिस्थितिकीय संकट को अर्थपूर्ण ढंग से समझने के लिए आवश्यक ज्ञान प्रदान करेगा।

बोध प्रश्न 1.7

निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थान पूर्ण कीजिए।

i) भारत का सिर्फ लगभग .... भू क्षेत्र घने जंगलों से ढका है।

ii) लगभग .... पुष्पी पौधों की जातियां भारत में पायी जाती हैं।

iii) जातियों के विलुप्तीकरण का मुख्य कारण .... है।

iv) भारत विश्व के .... वाले देशों में से एक है।

v) .... वर्तमान पर्यावरणीय संकट के लिए जिम्मेदार है।

vi) भारत में लगभग .... पुष्पी पादप (threatened category) के हैं।

vii) वह जातियां जो किसी देश या स्थान तक सीमित होती हैं वें .... जातियां कहलाती हैं।

viii) भारत में जैवविविधता के दो "उत्कृष्ट स्थल" .... तथा .... हैं।

ix) भारत के दो प्रमुख प्रकार के संरक्षित क्षेत्र .... तथा .... हैं।

x) जीवों का उनके प्राकृतिक आवास में संरक्षण .... संरक्षण कहलाता है।

xi) पुष्पी पादपों की विविधता वाले देशों में भारत को लगभग .... श्रेणी में रखा गया है।

1.11 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि

- जीवन की उत्पत्ति लगभग 3.5 अरबों वर्ष पहले हुई।
- जीवन की उत्पत्ति ऑक्सीजन से मुक्त वातावरण में, अपचायी तत्वों से भरपूर तथा उच्च तापमान में अजीवित पदार्थों से हुई। तब कई उच्च ऊर्जा के स्रोत थे।
- प्राचीनतम जीव पूर्व केंद्रकी थे। जब पूर्व केंद्रकी वास्तविक केंद्रकियों में विकसित हुये कुछ अंतः सहजीवी घटनायें माइटोकॉंड्रिया तथा प्लैस्टिड्स जैसे कोशिकांग के विकास में परिणत हुई।
- जीवाणु तथा सायनोबैक्टीरिया पूर्व केंद्रकी हैं। अन्य सभी वास्तविक केंद्रकी हैं।
- वैज्ञानिकों ने आकलित किया है कि संभवतः 1-3 करोड़ जीवों की जातियां अब पृथ्वी पर रह रही हैं।
- पेड़-पौधे तथा अन्य प्रकाश संश्लेषी तथा रसायन संश्लेषी जीव जो अपनी कार्बन की जरूरतों को अकार्बनिक CO_2 से प्राप्त करते हैं वे स्वपोषित हैं। अन्य सभी जीव परपोषित हैं।
- जीवन को परिभाषित करना मुश्किल है। हालांकि कुछ खास विशेषताओं तथा गुणों का सेट हमें जीवित को अजीवित से विभेदित करने में सहायता करता है।
- जीवों के वर्गीकरण का उद्देश्य विकास के द्वारा संबंधित जीवों को प्राकृतिक अथवा जातिवृत्तीय तंत्रों में समूहित करना है।
- सभी जीवों को निम्नलिखित पांच में से किसी एक जगत में वर्गीकृत किया जा सकता है: मोनेरा, प्रोटिस्टा, फन्जाई, पादप तथा प्राणी।
- विषाणु कोशिकीय नहीं है तथा वास्तविक जीव नहीं समझे जाते हैं।
- प्रत्येक जीव को एक अलग नाम दिया गया है जो वंशीय तथा विशेष शब्दों से बना होता है।
- वर्गिकी विज्ञान जीवों को नाम देने तथा उनका वर्गीकरण करने का विज्ञान है।
- अधिकतर जैव विज्ञानी ब्रायोफाइट्स, टेरिडोफाइट्स, जिम्नोस्पर्म्स तथा एन्जियोस्पर्म्स को ही वनस्पति जगत में शामिल करते हैं।
- थलीय पेड़-पौधों की उत्पत्ति कुछ हरे शैवालीय पूर्वजों से हुई है।
- भारत विश्व के बारह अतिजैवविविधता वाले देशों में से एक है। भारत कृषि जैवविविधता में भी धनी है।
- भारत में लगभग 15,000 पुष्पीय पेड़-पौधों की जातियां हैं, जिनमें से 10% पर्यावरणीय अवकर्षण के कारण खतरे में है।

1.12 अंत में कुछ प्रश्न

1. सजीव जगत में विविधता से आप क्या समझते हैं ?

....

....

....

....

....

2. जीवन को एक कथन द्वारा परिभाषित क्यों नहीं किया जा सकता है ?

....

....

....

....

....

3. जीवन की उत्पत्ति के समय आदि पृथ्वी की स्थिति की चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

4. पूर्व केंद्रकी और वास्तविक केंद्रकी की कोशिकाओं में क्या अंतर है ?

....

....

....

....

....

5. चित्र की सहायता से अंतःसहजीवन की संकल्पना का वर्णन कीजिए।

6. निम्नलिखित जीवों को उनके सही प्रभाग व जगत में रखिये।

   साइकेड

   क्लब मॉसेस

   फर्न्स

   लाइकेन्स

   भूरे शैवाल

   लिवरवर्ट्स

   सायनोबैक्टीरिया

   ब्रैड की फफूंद

   हरे शैवाल

   पुष्पी पौधे

7. कौन से जीव पादप-जगत में शामिल किये गये हैं ? कारण बताइये।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

8. लोग जैवविविधता के लिए क्यों चिन्तित हैं ? भारत विश्व के जैवविविधता धनी देशों में से एक क्यों माना जाता है ?

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

1.13 उत्तर

बोध प्रश्न

1.1 (i) ग (ii) स (iii) ग (iv) ग

(v) ग (vi) स

1.2 (i) ख (ii) ग (iii) ङ (iv) ख

1.3 i) वास्तविक केंद्रकी

ii) कोशिकांग

iii) 80S

iv) 9+2

v) हिस्टोन्स

1.4 i) सहोपकारिता

ii) भोजन का परिग्रहण

iii) ATP

iv) प्रोक्लोरोफ़ाइट्स

v) वास्तविक केंद्रकी

vi) पूर्व केंद्रकी

1.5 (i) स (ii) ग (iii) स (iv) ग (v) ग

1.6 (i) ख (ii) ग (iii) घ (iv) ग

1.7 i) 11%

ii) 15,000

iii) आवास में क्षति

iv) अतिजैवविविधता

v) मानव

vi) 10%

vii) स्थानिक

viii) पूर्वी हिमालयी क्षेत्र और पश्चिमी घाट

ix) राष्ट्रीय उद्यान और सैन्कचूरी

x) स्वस्थाने

xi) दसवीं

अंत में कुछ प्रश्न

1. सेक्शन 1.2 को देखिये।
2. सेक्शन 1.3 को देखिये।
3. सेक्शन 1.4 को देखिये।
4. तालिका-1.1 देखिये।
5. चित्र-1.2 देखिये।
6. तालिका-1.2 को देखिये।
7. सेक्शन-1.8 तथा 1.9 तथा तालिका 1.2 को देखिये।
7. सेक्शन-1.10 को देखिये।

इकाई 2 सायनोबैक्टीरिया, कवक, शैवाल तथा निम्नतर पादपों का परिचय

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

2.2 सायनोबैक्टीरिया

2.3 कवक

2.4 शैवाल

2.5 ब्रायोफ़ाइट्स

2.6 टेरिडोफ़ाइट्स

2.7 सारांश

2.8 अंत में कुछ प्रश्न

2.9 उत्तर

2.1 प्रस्तावना

इकाई -1 में आपने जीवन की उत्पत्ति, सजीव पदार्थों की विविधता, जीवों का वर्गीकरण तथा विभिन्न जीवों के समूह के बारे में पढ़ा जिनका वनस्पति विज्ञानियों द्वारा अध्ययन किया जाता है। इस पाठ्यक्रम का शेष भाग वैयक्तिक समूहों के बारे में है जैसे कि सायनोबैक्टीरिया, कवक, शैवाल, ब्रायोफ़ाइट्स तथा टेरिडोफ़ाइट्स। जिम्नोस्पर्म्स (अनावृतबीजी) तथा एन्जियोस्पर्म्स (आवृतबीजी) का विवेचन पाठ्यक्रम पादप विविधता-2 में किया गया है।

इस इकाई में आपका संक्षिप्त परिचय, सायनोबैक्टीरिया से लेकर टेरिडोफ़ाइट्स तक विभिन्न समूहों की विशेषताओं से कराया जायेगा। तालिका 1.2 में दी गई वर्गीकरण योजना, जगत तथा प्रभाग में वर्गीकृत जीवों की मोटे तौर पर रूपरेखा को दर्शाती है। इस इकाई में हमने विभिन्न समूहों का आगे वर्गीकरण बताया है तथा इससे संबंधित वर्तमान दृष्टिकोणों और मतों का संक्षिप्तीकरण किया है। आप नोट करेंगे कि आधुनिक वर्गीकरण की योजनायें बहुत अधिक जातिवृत्तीय हैं। यह विकास के इतिहास को तथा प्रत्येक समूह में विभिन्न टैक्सा के मध्य संबंधों को खोज निकालने का प्रयास करती है।

इस इकाई का उद्देश्य जीवों के विभिन्न समूहों पर दृष्टिपात करना है जिनका आप अध्ययन करेंगे। ये समूह हैं : 1) सायनोबैक्टीरिया जो पूर्व केंद्रकी हैं, तथा जीवाणुओं के साथ जगत मोनेरा के सदस्य हैं। 2) कवक (फ़न्जाई) जो वास्तविक केंद्रकी, अप्रकाशसंश्लेषी हैं तथा कवक जगत के सदस्य हैं। 3) शैवाल, जो सभी वास्तविक केंद्रकी हैं, प्रकाश संश्लेषी हैं तथा संगठन में एक कोशिकीय अथवा बहुकोशिकीय हो सकते हैं। ये सभी जगत प्रोटिस्टा के सदस्य हैं। 4) ब्रायोफ़ाइट्स जो कि वास्तविक थलीय पौधे हैं जो भ्रूण उत्पन्न करते हैं परंतु जिनमें भोजन तथा जल के संवहन (conduction) के लिये बहुत अधिक विकसित संवहनी ऊतक नहीं होते हैं तथा 5) टेरिडोफ़ाइट्स जिनमें भ्रूण, पर्ण तथा विकसित संवहनी ऊतक होते हैं इनमें परिचित फर्नस तथा बहुत से प्राचीन वंशों से संबंधित पेड़-पौधे हैं। ब्रायोफ़ाइट्स तथा टेरिडोफ़ाइट्स वनस्पति जगत के वास्तविक सदस्य हैं।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- विभिन्न समूह के जीवों की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे,

- उन विशेषताओं की तुलना कर सकेंगे जो जीवों को विभिन्न समूहों में रखने का आधार है,
- एक समूह में पायी जाने वाली विविधताओं की चर्चा कर सकेंगे,
- यह समझा सकेंगे कि जीव विज्ञानी किस प्रकार विभिन्न समूहों को वर्गीकृत करते हैं तथा
- प्रत्येक समूह के विकास के इतिहास की चर्चा कर सकेंगे।

2.2 सायनोबैक्टीरिया

सायनोबैक्टीरिया वास्तविक जीवाणु (Eubacteria) हैं। ये पूर्व केंद्रकी है तथा इनमें केंद्रक अथवा झिल्ली बद्ध कोशिकांग जैसे कि माइटोकॉण्ड्रिया अथवा प्लैस्टिड्स नहीं होते हैं। अन्य पूर्व केंद्रकियों की भांति ही इनमें 70 S राइबोसोम होते हैं। हालांकि ऐसे और भी पूर्व केंद्रकी हैं जो "प्रकाश संश्लेषण" कर सकते हैं, पर सायनोबैक्टीरिया विशिष्ट है क्योंकि उनमें क्लोरोफिल *a* वर्णक होता है। यही वर्णक शैवाल तथा पेड़-पौधों में भी उपस्थित रहता है जो प्रकाश संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन को निष्कासित करता है। प्रकाश संश्लेषी जीवाणुओं में भिन्न प्रकार का वर्णक होता है, जिसे बैक्टीरियोक्लोरोफिल कहते हैं, जो जीवाणुवीय प्रकाश संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन को निष्कासित नहीं करता है।

सायनोबैक्टीरिया में शब्द साइन (cyan) नीले रंग का द्योतक है। सायनोबैक्टीरिया में कुछ अतिरिक्त वर्णक जैसे कि फाइकोसायनिन (phycocyanin) तथा फाइकोइरिथ्रिन (phycoerythrin) होते हैं। यह वर्णक तथा क्लोरोफिल मिलकर इन जीवों को विशिष्ट रंग देते हैं। यही कारण है कि सायनोबैक्टीरिया सामान्य तौर पर नील-हरित शैवाल के नाम से जाने जाते हैं। वास्तविक शैवालों की भांति ही ये भी प्रकाश संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन निष्कासित करते हैं तथा उन्हीं आवास स्थानों में अक्सर पाये जाते हैं, जहां शैवाल होते हैं जैसे ताजे, समुद्री तथा खारे पानी में, तथा नम मिट्टी की सतह पर। हालांकि, वास्तविक शैवाल वास्तविक केंद्रकी समूह के हैं तथा दोनों निकट संबंधी (immediately related) भी नहीं है।

चूंकि सायनोबैक्टीरिया की बंधुताएं अन्य जीवाणुओं के साथ हैं। हमें सजीव जगत में सायनोबैक्टीरिया की स्थिति की अधिक पूर्ण तस्वीर के लिये इन जीवों का संक्षिप्त रूप से प्रीक्षण अवश्य करना चाहिये। जीवाणुओं की लगभग 4,000 जातियों का अब तक वर्णन किया जा चुका है। इनमें लगभग 1,700 सायनोबैक्टीरिया की जातियां सम्मिलित हैं। जातियों की संख्या कम होने के बावजूद भी सभी जीवों में जीवाणु सबसे अधिक बहुलता में है। वे सबसे अधिक प्राचीन भी है। (अमीबा उतना प्राचीन नहीं है, ये बाद की उत्पत्ति का एक वास्तविक केंद्रकी है)। जीवाणु जीवाश्म अभिलेखों में 3.5 खरब वर्ष पूर्व के माने जाते हैं। जीवाणु आकारिकी तथा संरचना में जीवों में सबसे सरल है। फिर भी, उपापचय की दृष्टि से वे बहुत विविध है। बहुत से जीवाणु अपनी वैयक्तिक आकारिकी के द्वारा नहीं अपितु संवर्द्धन में अपनी विशेषताओं के द्वारा पहचाने जाते हैं।

जीवाणु बहुत ही छोटे होते हैं, व आकार में 1 से कुछ μm तक ही परिसीमित होते हैं। सबसे असामान्य खोज 1993 में हुई। सर्जनफिश की आँत नाल में रहने वाले जीवाणु की लम्बाई 600 μm पायी गई। जीवाणु आकृति में भिन्न-भिन्न होते हैं। कुछ छड़ की आकृति के, अन्य गोलाकार तथा कुछ अन्य सर्पिलाकार अथवा कोमा-की आकृति के भी होते हैं। चाहे जितने भी छोटे हों, जीवाणु उन गतिविधियों के लिए जिम्मेदार है जो हमारे जीवन को बहुत अधिक प्रभावित करती है। बहुत से जीवाणु मनुष्यों, जानवरों तथा पेड़-पौधों के गंभीर रोगों के अभिकर्ता (agent) हैं। अन्य भोजन को किण्वित करते हैं और इस प्रकार विभिन्न उत्पादों जैसे दही और इडली साथ ही बहुत से औद्योगिक रसायनों को बनाने के लिए उपयोग में लाये जाते हैं। कुछ जीवन-रक्षक प्रतिजैविकों (antibiotics) के स्रोत हैं।

बर्गी का निर्धारक जीवाणु विज्ञान मैनुअल (Bergey's Manual of Determinative Bacteriology), जीवाणुओं के वर्गीकरण का मानक निर्देशक (standard reference) है। चूंकि जीवाणुओं को वर्गीकरण के पदानुक्रमिक तरीके से समूहित करने के लिये पर्याप्त जानकारी उपलब्ध नहीं है, बर्गी का मैनुअल जीवाणुओं के 19 प्रमुख भाग मानता है। जैसे कि स्पाइरोकीट्स (spirochaetes), ग्रैम-ग्राही (Gram-positive), कोकाई (cocci), विसर्पी (gliding) जीवाणु, माइकोप्लैज़्मा (mycoplasma) तथा एक्टीनोमाइसिटीज़ (actinomycetes)। सायनोबैक्टीरिया ऐसे ही एक समूह में शामिल है। जीवाणुओं का वर्गीकरण,अनुसंधान का एक क्रियाशील क्षेत्र है। हाल ही के वर्षों में आणविक जीव विज्ञानियों ने जीवाणुओं तथा अन्य जीवों में राइबोसोम के RNA की संरचना तथा राइबोसोम के RNA के न्यूक्लिओटाइडों के क्रम का विश्लेषण किया है। इस प्रकार के विश्लेषण से जीवाणुओं के दो प्रमुख समूहों, आद्यजीवाणु (ARCHEBACTERIA) तथा वास्तविक जीवाणु (EUBACTERIA) के बीच में महत्वपूर्ण विभेदों का पता लगाया गया है। जीवाणुओं के इन दो समूहों की कोशिका झिल्लियों तथा वास्तविक केंद्रकी जीवों की कोशिका झिल्लियों के रासायनिक संयोजन में भी विभेद देखे गये हैं।

अमरीकी वैज्ञानिक कार्ल वूइस (Carl Woese) मानते थे कि आद्यजीवाणु तथा वास्तविक जीवाणु के बीच के विभेद उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने इन समूहों तथा वास्तविक केंद्रकी जीवों के बीच के हैं। इस प्रकार, इस ग्रह पर जीवन तीन प्राचीन तथा प्राथमिक वंश परम्पराओं से बना हुआ माना जाता है। तीन प्राचीन वंश चित्र 2.1 में दिखाये गये हैं। सायनोबैक्टीरिया वास्तविक जीवाणुवीय वंश परम्परा के सदस्य हैं। आद्यजीवाणु में वे सदस्य सम्मिलित हैं जो सर्वाधिक अवास्तविक वातावरणों जैसे कि बहुत गर्म तथा अम्लीय तालों अथवा बहुत अधिक लवण वाले जल में रहते हैं। इस समूह के कुछ सदस्य समुद्र की सतह से कुछ किलोमीटर नीचे गहरे समुद्र के निकासों में रहते हैं। मीथेनोजन्स (methanogens) मीथेन गैस उत्पन्न करते हैं।

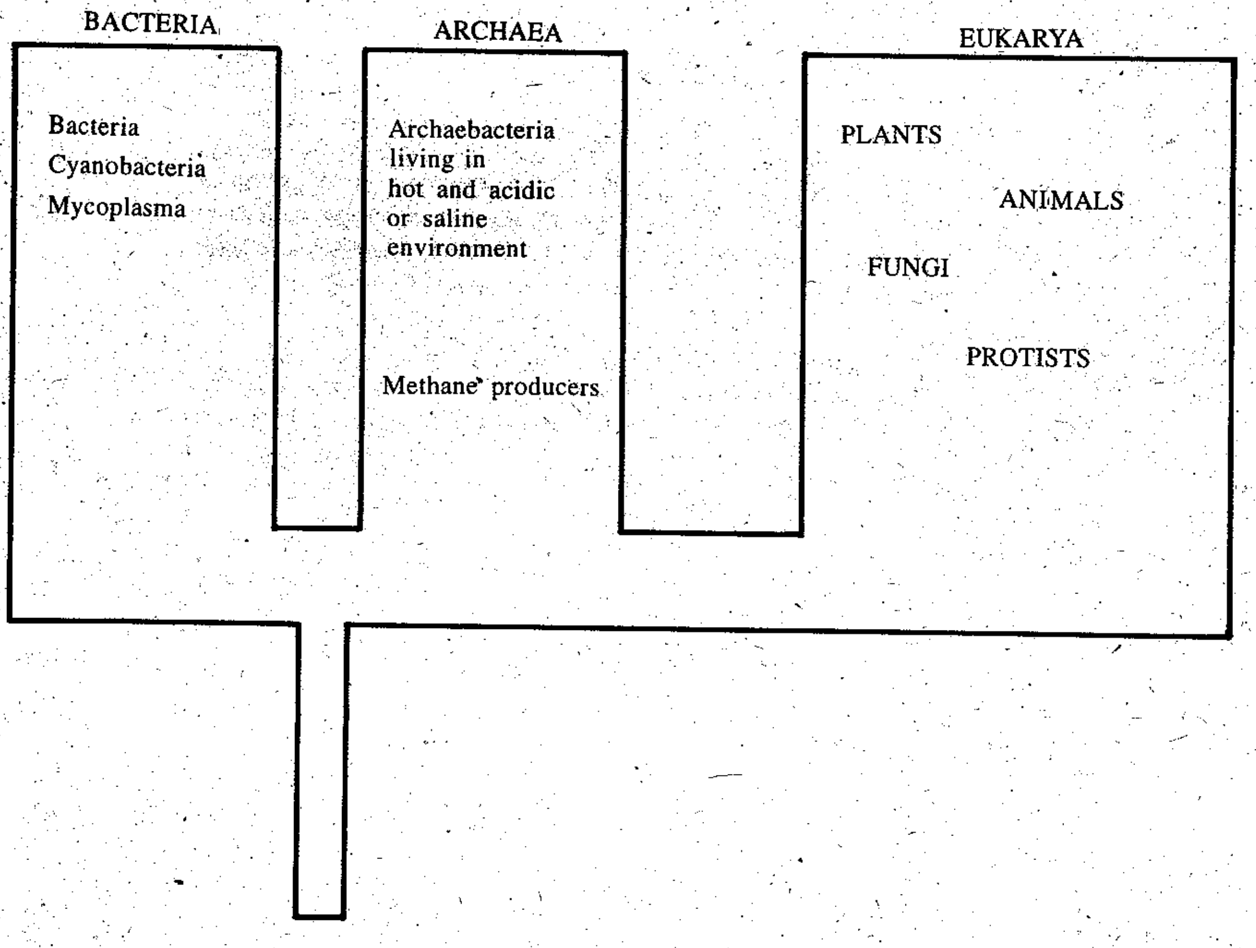

चित्र 2.1: प्राचीन तथा प्राथमिक वंश को दर्शाने वाले जीवों के तीन वंश।

सायनोबैक्टीरिया विकास की दृष्टि से अत्यधिक दिलचस्प है। अंतःसहजीवी सिद्धांत के अनुसार कुछ पूर्वजीय सायनोबैक्टीरिया की कोशिकायें विभिन्न शैवाल समूहों की प्लैस्टिड्स बन गई। लाल शैवाल के प्लैस्टिड्स सायनोबैक्टीरिया से मिलते हैं तथा दोनों में क्लोरोफिल *a* तथा बिलीप्रोटीनें (billiproteins) होती हैं। हरे शैवालों तथा पेड़-पौधों में क्लोरोफिल *a* तथा *b* दोनों होते हैं। हालांकि अधिकांश सायनोबैक्टीरिया में सिर्फ क्लोरोफिल *a* होता है, कम से कम तीन जीव ऐसे ज्ञात हैं जिनमें क्लोरोफिल *a* व *b* दोनों हैं। *प्रोक्लोरोन डिडेम्नी (Prochloron didemni)* सहजीवी की भांति समुद्री स्क्वर्ट्स (sea squirts) की आंत्र भित्ति में रहते हैं। *प्रोक्लोरोथ्रिक्स हौलेन्डिका (Prochlorothrix hollandica)* कुछ समय पहले हॉलैण्ड के तालों में पाया गया था। हाल ही में *प्रोक्लोरोकोकस (Prochlorococcus)* मुक्त तैरता हुआ खुले समुद्र में पाया गया है। इन दोनों जीवों में क्लोरोफिल *a* तथा *b* दोनों होते हैं, तथा इनकी कोशिकायें हरे शैवाल तथा पेड़-पौधों के क्लोरोप्लास्टों से मिलती हैं। इसी कारण से कुछ लेखकों ने उन्हें प्रोक्लोरोफाइट्स के रूप में वर्णित किया है तथा दोनों वंशों (जेनेरा) को अलग प्रभाग अथवा वर्ग में सम्मिलित किया है। कुछ पूर्वजी प्रोक्लोरोफाइट्स संभवतः अंतःसहजीवी थे जो हरे पेड़-पौधों के क्लोरोप्लास्ट में विकसित हुये।

बोध प्रश्न 2.1

निम्नलिखित वक्तव्यों में सही के लिए स तथा गलत के लिए ग दिये गये बक्सों में लिखिए।

i) नील-हरित शैवाल जीवाणुओं की बजाय हरित शैवालों से निकट रूप से संबंधित हैं। ☐

ii) सायनोबैक्टीरिया में क्लोरोफिल *a* पाया जाता है तथा वे प्रकाश संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन निष्कासित करते हैं। ☐

iii) आद्यजीवाणु पूर्व केंद्रकी हैं तथा अन्य जीवाणु वास्तविक केंद्रकी हैं। ☐

iv) *प्रोक्लोरोन (Prochloron)* एक अद्भुत पूर्व केंद्रकी है जिसमें क्लोरोफिल *a* तथा *b* दोनों पाये जाते हैं। ☐

v) संरचनात्मक संगठन की दृष्टि से जीवाणु सरलतम जीवों में से है। ☐

2.3 कवक

कवक 95,000 जीवों का विशाल समुच्चय है। उनमें से सभी में पूर्णतः प्रकाश संश्लेषण नहीं होता है। वे परपोषी हैं जो अन्य जीवित अथवा मृत पदार्थों पर पोषण के लिये निर्भर रहते हैं। परजीवी के रूप में बहुत से कवक अन्य पेड़-पौधों के लिए गंभीर रूप से रोगजनक हैं। मृतपोषित के रूप में वे जीवाणुओं के साथ, मृत जीवों को निम्नीकृत करते हैं तथा कार्बनिक रसायनों और पोषक तत्वों को मुक्त करते हैं जिससे कि उन्हें पुर्नचक्रित किया जा सके। लगभग 3,500 कवकीय जातियों का कुछ शैवालीय भागीदारों के साथ विशिष्ट सहवास होता है जिसके फलस्वरूप सहजीवी संरचनायें जो कि लाइकेन्स (शैक) कहलाती हैं, का निर्माण होता है। अधिकांश उच्चपादपों में कवक-मूल सहवास (mycorrhizal association) होता है जहां कवकों की कुछ जातियां सहजीवी के रूप में जड़ों के अंदर अथवा आसपास रहती हैं।

कवक वास्तविक केंद्रकी होते हैं ये एक प्राचीन समूह हैं। जीवाश्म प्रमाण दिखाते हैं कि सभी प्रमुख कवकीय समूह जो आज ज्ञात हैं वे पहले ही पुराजीवी युग (Paleozoic era) में, लगभग 28 करोड़ वर्ष पूर्व ही विकसित हो गये थे। एक समय जब सभी सजीव पदार्थ या तो जन्तु अथवा वनस्पति जगत के अंदर समूहित किये गये थे, तब कवकों को पादप समझा गया था। अब हम सभी कवकों को जगत फन्जाई में रखते हैं। इस जगत के सदस्यों में प्लैस्टिड्स नहीं होते हैं। वे अधिकांशतः रचना में तंतुल (filamentous) होते हैं। एक समूह की फन्जाई के अलावा बाकी सभी की भित्तियों में सेलुलोस की

जगह काइटिन होता है। कवक स्टार्च को संचित नहीं कर सकते जैसा कि पेड़-पौधे करते हैं। तंतुल संरचनायें जो कवकीय काया को बनाती हैं वे माइसीलिया (mycelia, singular, mycelium) कहलाती हैं। हालांकि तंतु सूक्ष्मदर्शीय होते हैं परन्तु कवकीय माइसीलियम की घनी वृद्धि को अस्पष्ट ढेर (fuzzy mass) के रूप में देखा जा सकता है। कुछ कवकों जैसे की मशरूम की जनन कायायें स्पष्ट माइसीलियां के समुच्चयों की बनी होती है। जटिल ऊतक तथा अंग जो पेड़-पौधों की विशेषताएं हैं कवकों में नहीं पाये जाते हैं। कवक बीजाणुओं द्वारा प्रजनन करते हैं।

बहुत से ऐसे लक्षणों के बावजूद भी, जो कवक जगत के सदस्यों को जोड़े रहते हैं, कवक एक विषमजातीय समूह है। कवक 7 प्रभागों में वर्गीकृत किये गये हैं। तालिका 1.2 में दिये गये इन समूहों के बीच में संबंधों को चित्र 2.2 में दिखाया गया है। अवपंक फफूंदी (slime moulds) मिक्सोमाइकोटा (Myxomycota) वास्तविक कवक नहीं है। ऐसा लगता है कि वे स्वतंत्र रूप से किसी प्रोटोज़ोआ पूर्वज से विकसित हुये हैं। अपने वर्धी काल (vegetative phase) में अवपंक फफूंदियों में कोशिका भित्ति नहीं होती है। भित्ति रहित कोशिकायें पुंजित होकर अमीबा-जैसी बन जाती हैं। इस अवस्था में कवक चारों ओर घूमती फिरती हैं तथा जीवाणु और अन्य कार्बनिक पदार्थों का परिग्रहण करती है। अवपंक फफूंदी के दो समूह ज्ञात हैं : बहुकेन्द्रकीय वास्तविक प्लैज़्मोडियम वाली प्लैज़्मोडियमी अवपंक फफूंद (plasmodial slime mould) तथा कोशिकीय अवपंक फफूंद (cellular slime mould), कोशिकीय अवपंक फफूंद का वर्धी काल (vegetative phase) कूट प्लैज़्मोडियम (pseudoplasmodium) होता है जिनमें पुंजित कोशिकायें अपनी कोशिका झिल्लियों तथा स्वयं की व्यष्टिगतता (individuality) को करार रखती है। अवपंक फफूंद गतिशील (motile) बीजाणुओं को उत्पन्न करते हैं।

ऊमाइसिटीज़ (Oomycetes) अथवा जलीय फफूंद अपनी कोशिका भित्तियों में सेलुलोस की उपस्थिति के कारण अन्य कवकों से भिन्न होती हैं। कवकीय काया अगुणित (haploid) ना होकर द्विगुणित (diploid) होती है जैसे कि अन्य वास्तविक कवकों (true fungi) में होता है। यह लक्षण तथा जनन व उपापचयन (metabolism) के अन्य लक्षण सुझाते हैं कि ऊमाइसिटीज़ अन्य कवकीय समूहों से संबंधित नहीं है। वे संभवतः कुछ हरित अथवा पीत-हरित शैवालीय पूर्वजों से उनके प्लैस्टिड्स खो देने के बाद विकसित हुई हैं।

काइट्रिड्स (chytrids) सामान्य जलीय फफूंद हैं जो परजीवी अथवा मृतपोषित के रूप में जीते हैं। चूंकि उनमें गतिशील बीजाणु होते हैं वे अक्सर ऊमाइसिटीज़ के साथ ही वर्गीकृत किये जाते हैं। जबकि, काइट्रिड्स में काइटिन होता है तथा उनके तंतु अगुणित होते हैं। संभवतः ये रोटी की फफूंद तथा अन्य वास्तविक कवकों से दूरस्थ रूप से संबंधित हैं।

जाइगोमाइसिटीज़ (Zygomycetes, रोटी की फफूंद, bread mold) एस्कोमाइसिटीज़ (Ascomycetes), बेसीडियोमाइसिटीज़ (Basidiomycetes, e.g. club fungi) विकासात्मक रूप से संबंधित हैं जैसा कि चित्र 2.2 में दिखाया गया है। इनमें से कोई भी अपने जीवन चक्र की किसी भी अवस्था में गतिशील कोशिकायें नहीं उत्पन्न करते हैं। जाइगोमाइसिटीज़ में कवकीय तंतुओं में पट (septa) यानि (विभाजक भित्तियाँ) नहीं होती हैं। अन्य दोनों समूहों में माइसीलियम पटयुक्त होता है।

कवक अलैंगिक तथा लैंगिक दोनों प्रकार से प्रजनन करते हैं। लैंगिक जनन में एस्कोमाइसिटीज़ विशिष्ट संरचना बनाते हैं जो एसाई (asci, *singular,* ascus) कहलाती है। बेसीडियोमाइसिटीज़ में समतुल्य संरचनायें-बेसीडिया हैं। किसी कवकीय जाति को इनमें से किस समूह में रखा जाये इसका आधार एस्कस अथवा बेसिडियम बनाने पर ही निर्भर करता है। कवकों की विशाल संख्या, लगभग 22,000 जातियां सिर्फ अलैंगिक रूप से प्रजनन करती हैं अथवा उनके लैंगिक चक्र अभी ज्ञात नहीं है। चूंकि उनके जीवन चक्र अपूर्ण रूप से ज्ञात हैं तथा उन्हें विश्वास के साथ किसी एक समूह में भी नहीं रखा जा सकता वे फन्जाई इम्परफैक्टाई (fungi imperfecti) के रूप में जाने जाते हैं। प्रभागीय नाम ड्यूटेरोमाइकोटा (Deuteromycota) अक्सर इस अपूर्ण कवकों के समूह के लिये प्रयोग किया जाता है। जब लैंगिक जीवन चक्र ज्ञात हो जाता है तो वह जाति स्वतः ही एस्कोमाइसिटीज़ अथवा बेसीड़ियोमाइसिटीज़ में रख दी जाती है।

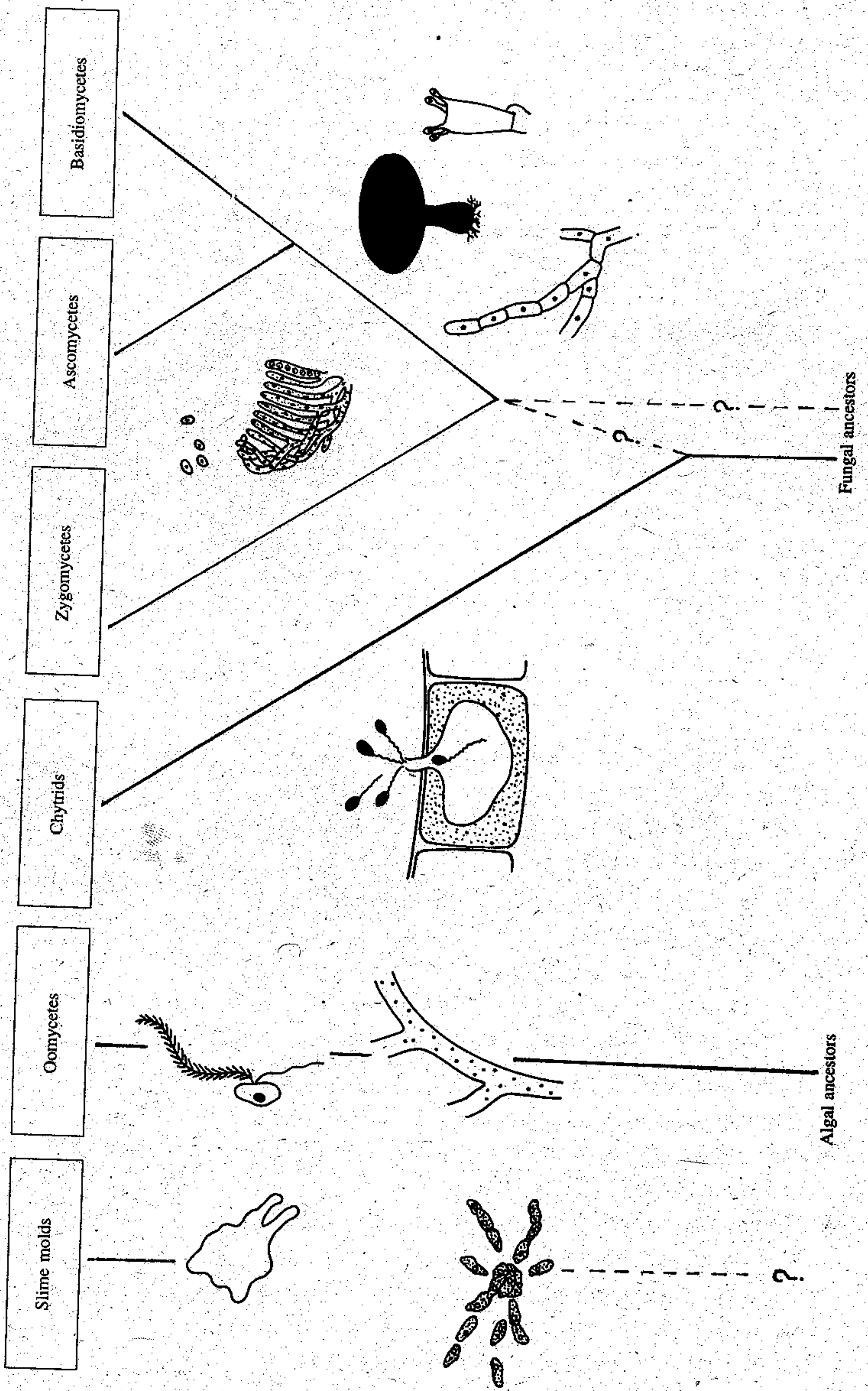

चित्र 2.2 : फन्जाई समूहों के बीच संबंध।

लाइकेन्स विशिष्ट जीव हैं जिसमें कवकीय तथा शैवालीय भागीदार होते हैं। 40 से भी कम शैवालीय अथवा सायनोबैक्टीरिया की जातियां इस सहवास में हिस्सा लेती हैं। फिर भी, लगभग 13,500 लाइकेन्स की जातियां हैं ! ऐसा लगता है कि प्रत्येक लाइकेन का विशिष्ट प्रकार कवकीय घटक के द्वारा निर्धारित होता है। लगभग 2% जातियों में या तो बेसिडियोमाइसिटीज़ अथवा इम्परफेक्टाई कवक, कवकीय भागीदार के रूप में होते हैं। बचे हुये 99% लाइकेन्स एस्कोमाइसिटीज़ जाति द्वारा निर्मित होते हैं। लाइकेन्स अलग वर्गिकीय श्रेणी नहीं समझे जाते हैं। बल्कि वे अपने कवकीय भागीदार के प्रभाग के सदस्य समझे जाते हैं तथा लाइकेन का नाम उसके कवकीय भागीदार के नाम पर आधारित होता है।

तालिका 2.2 में कवक 7 औपचारिक प्रभागों में बंटे हुये हैं। अन्य वर्गीकरणों में सिर्फ दो प्रभाग ही जाने जाते हैं, मिक्सीमाइकोटा – अवपंक फंफूदी तथा यूमाइकोटा वास्तविक कवक, जो उपप्रभागों तथा वर्गों आदि में बांटी गई है।

बोध प्रश्न 2.2

रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरिये।

i) अधिकांश कवकों की कोशिका भित्ति में सेलुलोस की बजाय .... होता है।

ii) कवक परपोषित हैं इसलिए अपने कार्बन के यौगिक .... व .... के रूप में प्राप्त करते हैं।

iii) कवकों का पेड़-पौधों की जड़ों के साथ सहवास .... कहलाता है, जबकि उनका शैवालों के साथ सहवास जीवों के रूप में परिणत होता है जो .... कहलाते हैं।

iv) .... समूह की कवकों की भित्तियों में सेलुलोस पाया जाता है तथा वे संभवत: शैवालीय पूर्वजों से विकसित हुये हैं।

v) कशाभिकीय कोशिकाओं का निम्न तीन कवकों समूहों में ...., ... और .... में पूर्णत अभाव होता है।

2.4 शैवाल

शैवाल वास्तविक केंद्रकी है। अधिकांश शैवाल समुद्री तथा ताजे पानी वाले आवास स्थानों में रहते हैं। चित्र 1.3 में वर्णित किये गये पांच-जगत वर्गीकरण में सभी शैवाल जगत प्रोटिस्टा में सम्मिलित किये गये हैं। ये स्पष्ट रूप से कृत्रिम समूहीकरण है, क्योंकि कुछ हरे शैवाल अन्य शैवालों की अपेक्षा वास्तविक पेड़-पौधों से अधिक संबंधित है। कुछ शैवालीय सदस्य जैसे कि एककोशिकीय यूग्लिनोइड्स (euglenoids) तथा क्रिप्टोमोनाड्स (cryptomonads) संभवत: प्रोटोजोआ थे जिन्होंने अंत:सहजीवन के द्वारा प्लैस्टिडों को प्राप्त कर लिया। वास्तव में यूग्लिनोइड्स के 36 वंशों में से 25 वंशों में क्लोरोप्लास्ट नहीं होता है तथा वे परपोषित की भांति जीते हैं।

शैवाल की लगभग 24,000 जातियां हैं जो अब तक वर्णित की जा चुकी हैं। शैवाल एक समूह के रूप में स्वपोषित हैं, जो प्रकाश संश्लेषण के द्वारा भोजन निर्मित करते हैं। प्रकाश संश्लेषण के दौरान वे ऑक्सीजन निष्कासित करते हैं जैसा कि पेड़-पौधे करते हैं। पेड़-पौधे तथा शैवाल बहुत सी बातों में भिन्न होते हैं। दोनों समूहों के बीच में एक प्रमुख अंतर जनन अंगों के व्यवस्थित होने का तरीका है। शैवाल की जनन संरचनायें संरक्षण प्रदान करने वाले शीलबंध्य ऊतकों द्वारा आच्छादित नहीं रहती हैं। बल्कि सभी कोशिकायें बीजाणुओं अथवा युग्मकों (gametes) में परिवर्तित हो जाती हैं। पेड़-पौधों में बंध्य जैकेट जनन संरचनाओं के एक आवश्यक भाग के रूप में उपस्थित रहती है।

किस प्रकार हम शैवालों के इस विशाल समुच्चय को वर्गीकृत कर सकते हैं ? शैवाल विज्ञानी (phycologist) विभिन्न शैवालीय समूहों को परिसीमित करने में सहायता के लिये बहुत सी विशेषताओं का प्रयोग करते हैं। इनका संक्षिप्तीकरण नीचे किया गया है।

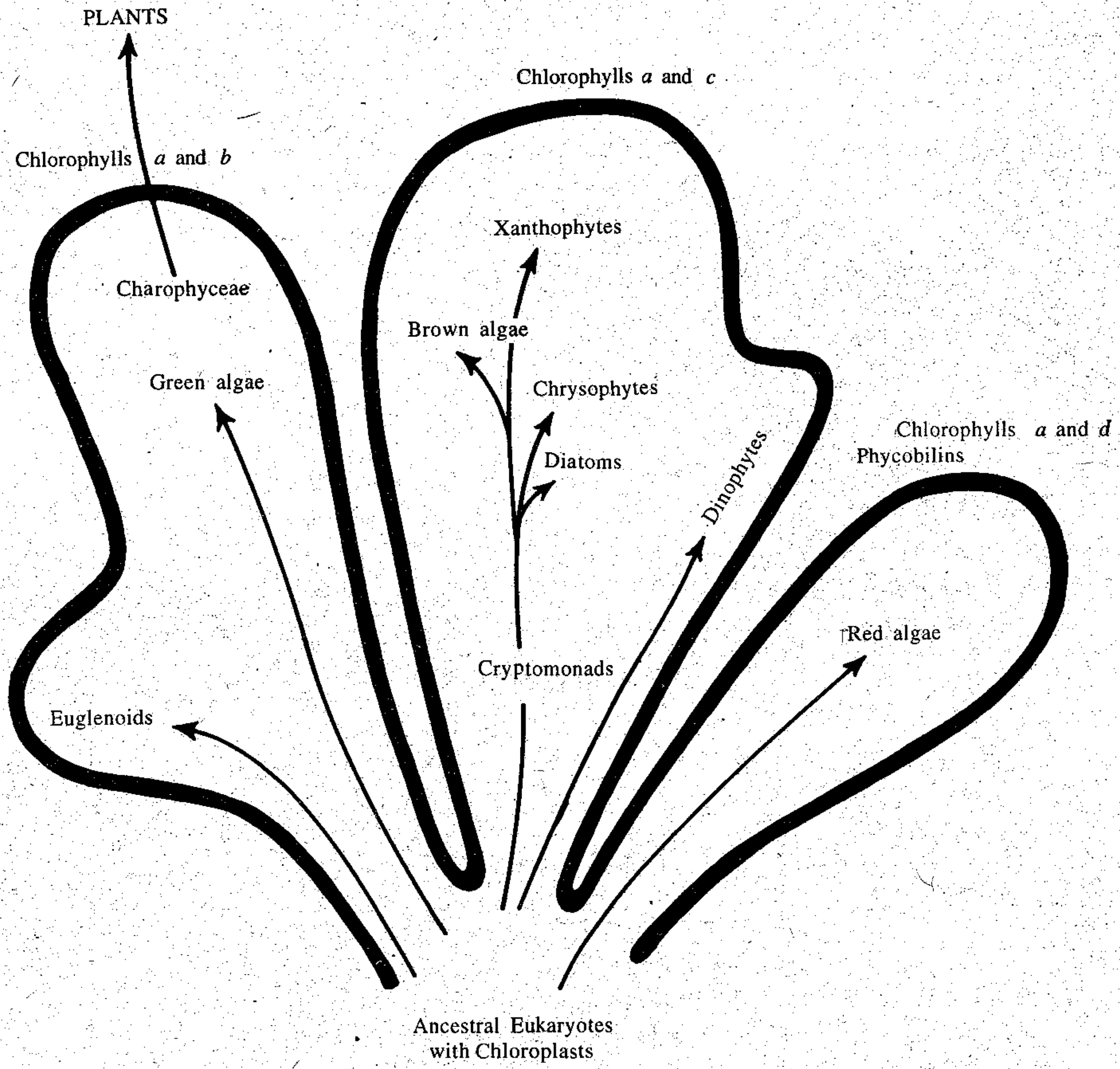

चित्र 2.3 : विभिन्न शैवाल समूहों में संबंध।

प्लैस्टिडों में वर्णक: विभिन्न क्लोरोफिल वर्णकों तथा प्रकाश संश्लेषी सहायक वर्णकों की उपस्थिति (चित्र 2.3)।

संचित भोजन : विभिन्न शैवाल समूह स्टार्च, तेल आदि के रूप में खाद्य संचित करते हैं।

कोशिका भित्ति : कोशिका भित्तियों में सेलुलोस अथवा अन्य पॉलिसैकेराइड्स हो सकते हैं। कुछ शैवालों में नग्न कोशिकायें होती है। कोशिका भित्तियों पर सिलिका, कैल्शियम कार्बोनेट तथा शल्की संरचनाओं की पपड़ी हो सकती है।

कशाभ : कशाभों की संख्या तथा प्रकार साथ ही उनकी स्थिति शैवालों में विभेद करने में सहायक होती है। प्रतोद (**whiplash**) कशाभ की सतह चिकनी होती है जबकि कूर्च (**tinsel**) कशाभ में बारीक रोम होते हैं। लाल शैवालों में कशाभ पूर्णत अनुपस्थित होते हैं (चित्र 2.4)।

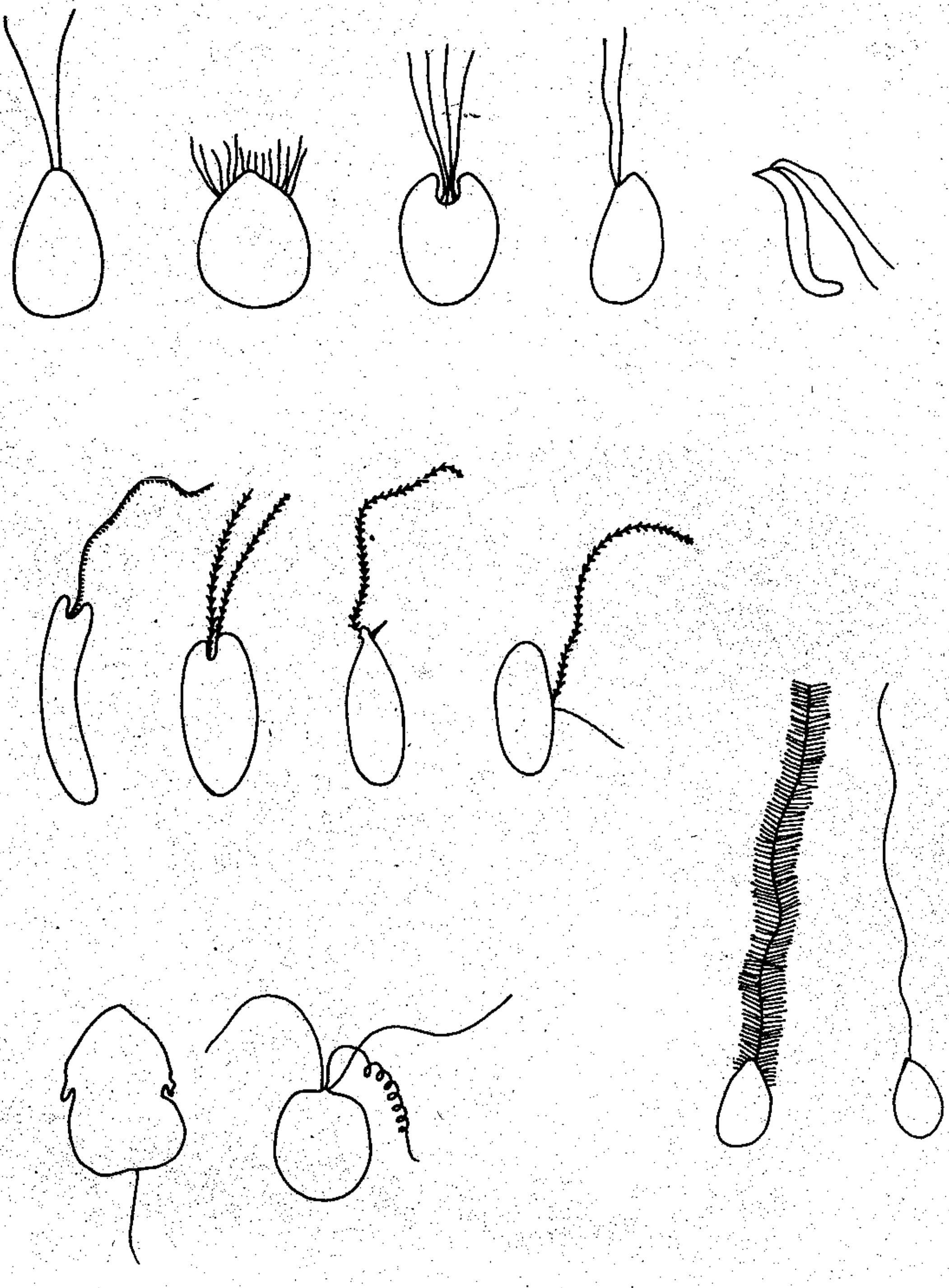

चित्र 2.4: विभिन्न शैवालीय समूहों में कशाभों की संरचना तथा उनकी व्यवस्था। नोट कीजिए कि कशाभ चिकना अथवा पंखीय (feathery) हो सकता है। कशाभ अंत में अथवा पार्श्व में धंसे हुए होते हैं तथा प्रति कोशिका एक अथवा अधिक होते हैं।

कोशिका विभाजन: चार विभिन्न प्रकार के कोशिका द्रव्य विभाजन शैवालीय समूहों में ज्ञात है। खांच द्वारा (furrowing), फ़ाइकोप्लास्ट (phycoplast) द्वारा तथा दो प्रकार के फ्रेग्मोप्लास्टों (phragmoplasts) द्वारा कोशिका विभाजन (चित्र 2.5)।

क्लोरोप्लास्टों का संगठन : क्लोरोप्लास्टों की परासूक्ष्म संरचना, प्रकाश संश्लेषी झिल्लियों तथा उनको आस पास घेरे हुए झिल्लियों के संगठन में विभेदों को दिखाती है।

आकारिकीय संगठन : शैवालीय थैलस एक कोशिकीय, गतिशील, अवृत (sessile), निवही (colonial), तंतुल, शाखित, संकोशिकीय (coenocytic), अथवा मृदूतकीय (parenchymatous) संगठन के साथ बहुकोशिकीय हो सकते हैं।

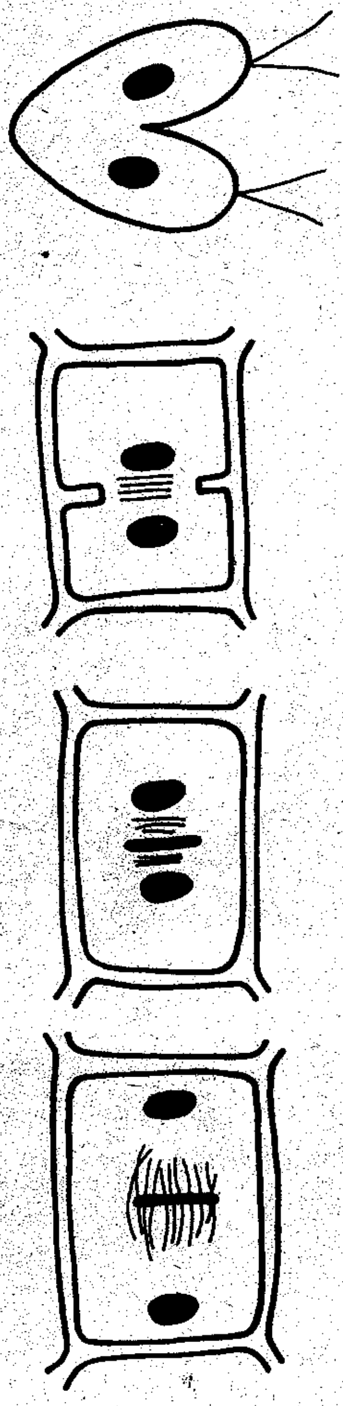

चित्र 2.5: शैवालों में कोशिका द्रव्य विभाजन।

जीवन चक्र: अगुणित तथा द्विगुणित पीढ़ी की आकारिकी भी विभिन्न शैवालीय समूहों की पहचान करने में सहायक होती है। खंड 1B, इकाई 4, में शैवालों में प्रजनन विस्तार से दिया गया है।

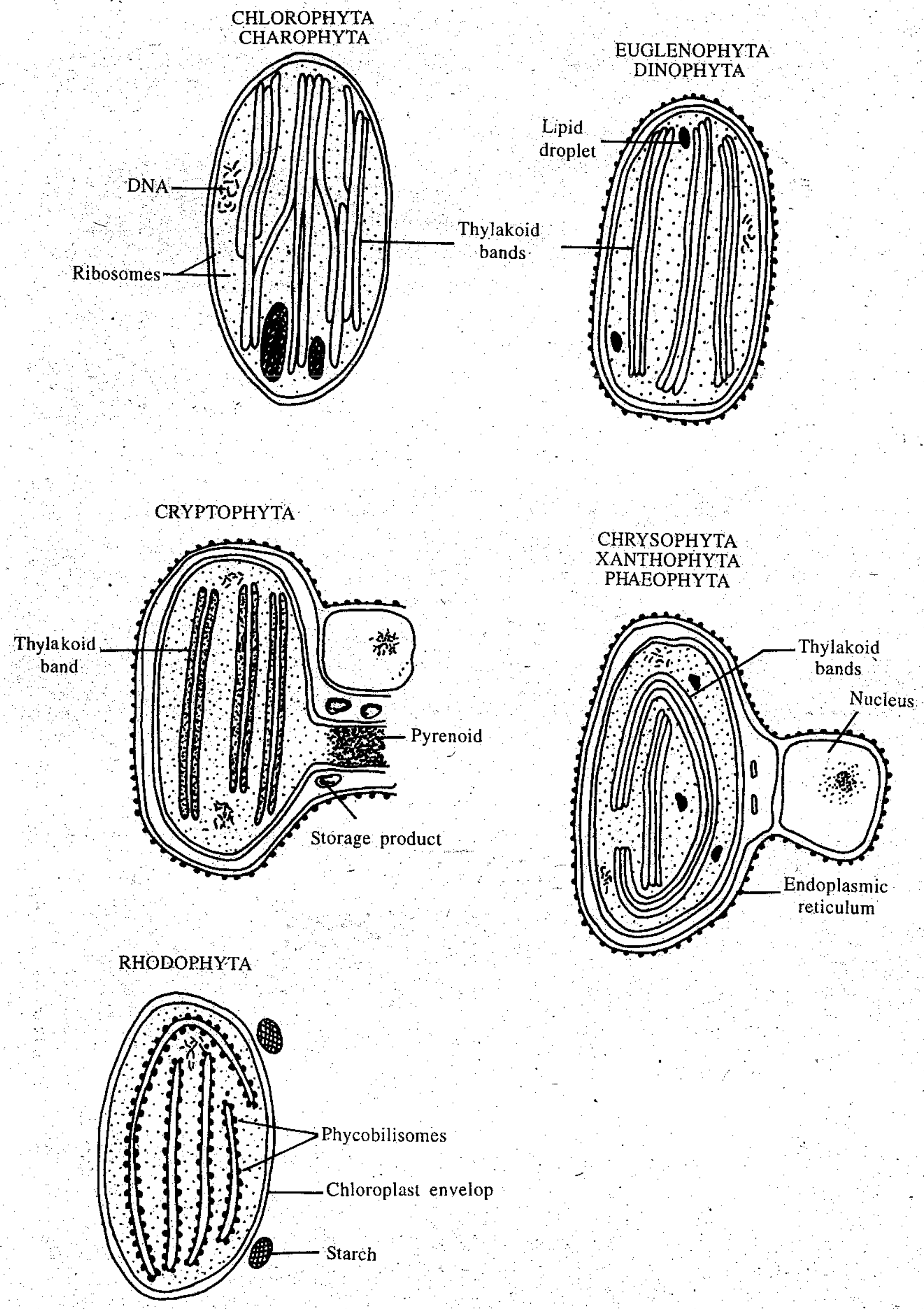

चित्र 2.6 : विभिन्न शैवाल समूहों के क्लोरोप्लास्टों की परासंरचना।

चित्र 2.6 में विभिन्न शैवालीय समूहों के बीच में संबंधों की एक संभव योजना का संक्षिप्तीकरण किया गया है। लाल शैवाल (Rhodophyta) संभवतः किसी पूर्वजी वास्तविक केंद्रकीयों से, अंतःसहजीवन द्वारा विकसित हुए जिन्होंने सायनोबैक्टीरिया की कोशिका का क्लोरोप्लास्ट के रूप में अभिग्रहण किया। लाल शैवालों के क्लोरोप्लास्ट, परासूक्ष्म सरंचना (ultrastructure) में तथा रासायनिक संयोजन में सायनोबैक्टीरिया की कोशिकाओं से बहुत अधिक मिलते जुलते हैं। सायनोबैक्टीरिया की ही भांति, लाल शैवालों में क्लोरोफिल *a* तथा बिलीप्रोटीन होते हैं। इसके अतिरिक्त लाल शैवालों में क्लोरोफिल *d* भी होता है।

कुछ शैवाल समूह जो तालिका 1.2 में प्रभागों के तौर पर दिये गये हैं कभी-कभी सम्मिलित रूप से क्रोमोफाइट्स (Chromophytes) के नाम से जाने जाते हैं। क्रोमोफाइट्स क्लोरोफिल *a* तथा *c* की उपस्थिति के द्वारा अभिलक्षित किये जाते हैं। इस समूह में क्रिप्टोमोनाड्स (Cryptophyta) डाइनोफ्लैजेलेट्स (Dinophyta), डायटम्स तथा सुनहरे-भूरे शैवाल (Chrysophyta) पीत-हरित शैवाल (Xanthophyta) तथा भूरे शैवाल (Phaeophyta) सम्मिलित हैं। लाल शैवालों के असमान सभी क्रोमोफाइट्स में उनके जीवन चक्र की किसी न किसी अवस्था में गतिशील कोशिकायें होती हैं। डाइनोफ्लैजेलेट्स में हिस्टोन्स (histones) नहीं पायी जाती है जोकि अन्य वास्तविक केंद्रकियों की विशेषता है तथा इनमें गुणसूत्र स्थाई रूप से संघनित रहते हैं। इन तथा अन्य गुणों से लगता है कि डाइनोफ्लैजेलेट्स यह प्रदर्शित करते हैं कि संभवतः उनका विकास स्वतंत्र रूप से हुआ है।

हरे शैवाल (Chlorophyta) तथा यूग्लीनोइड्स (Euglenophyta) में क्लोरोफिल *a* तथा *b* दोनों ही पाये जाते हैं। इस लिहाज से वे उच्च पादपों से मिलते हैं। हालांकि, यूग्लीनोइड्स संभवतः प्रोटोज़ोआ जीवों से अधिक संबंधित है। हरे शैवालों में एक महत्वपूर्ण उपसमूह है कैरोफाइट्स (Charophytes) जोकि वास्तविक पेड़-पौधों के पूर्वज समझे जाते हैं। जैसे कि पहले चर्चा की गई थी हरे शैवालों के क्लोरोप्लास्ट संभवतः *प्रोक्लोरोन (Prochloron)* से मिलती जुलती कोशिकाओं से अंतःसहजीवन के द्वारा उत्पन्न हुये थे। यह पूर्व केंद्रकी पर्णहरित *a* तथा *b* दोनों के उपस्थित होने के कारण भिन्न है। बहुत से हरे शैवाल जिनमें कैरोफाइट्स एवम लाल शैवाल भी सम्मिलित हैं 40 करोड़ वर्ष पुराने जीवाश्मों द्वारा ज्ञात हुए हैं।

तालिका 1.2 में हमने शैवालों को 8 विभिन्न प्रभागों में समूहित किया है। कुछ लेखक सिर्फ 4 प्रभागों को ही मानते हैं: क्रोमोफाइटा, रोडोफाइटा, यूग्लीनोफाइटा तथा क्लोरोफाइटा तथा अन्य को क्रोमोफाइटा में वर्गों के रूप में सम्मिलित करते हैं। इस बात पर जोर देना है कि चाहे शैवाल विज्ञानी अन्य शैवाल समूहों के साथ नील-हरित शैवालों (सायनोबैक्टीरिया) का अध्ययन भले ही कर लें, परंतु सायनोबैक्टीरिया वास्तव में पूर्व केंद्रकी हैं जो जीवाणुओं से संबंधित हैं तथा इस प्रकार जगत मोनेरा के सदस्य हैं।

बोध प्रश्न 2.3

कालम क के शब्दों को कालम ख में सबसे उपयुक्त शब्दों में मिलाइये।

क	ख
i) लाल शैवाल	क) डाइनोफ्लैजेलेट्स (घूर्णीकशाभ)
ii) डायटम्स (diatoms)	ख) क्राइसोफाइसी (Chrysophyceae)
iii) हरित शैवाल	ग) पर्णहरित *a* तथा *b*
iv) संघनित गुणसूत्र (condensed chromosomes)	घ) पर्णहरित *a* तथा *c*
v) क्रोमोफाइट्स (Chromophytes)	च) पर्णहरित *a* तथा *d*

2.5 ब्रायोफ़ाइट्स

ब्रायोफ़ाइट्स वास्तविक रूप से पेड़-पौधे हैं। तीन अन्य समूहों के जीव जो वनस्पति जगत के सदस्य हैं वे हैं- टेरिडोफ़ाइट्स (Pteridophytes) अनावृतबीजी (Gymnosperms) तथा आवृतबीजी (Angiosperms)। ये सब थलीय पेड़-पौधें (land plants) तथा भ्रूणी पादप (Embryophytes) भी कहलाते हैं। उपर्युक्त चारों समूहों के पेड़-पौधों के सभी सदस्य बहुकोशिकीय भ्रूण उत्पन्न करते हैं जोकि पोषण के लिये मातृ ऊतक पर आश्रित होते हैं तथा अगली बीजाणुउद्भिदी पीढ़ी (sporophytic generation) को प्रदर्शित करते हैं। पुष्पीय पादपों के बीजों के अंदर भ्रूण होता है। यह तो आप जानते ही हैं।

ब्रायोफ़ाइट्स विशिष्ट संवहनी ऊतकों (vascular tissues) की अनुपस्थिति के कारण अन्य भ्रूणीय पौधों से भिन्न होते हैं जो कि टेरिडोफ़ाइट्स, अनावृतबीजी तथा आवृतबीजियों की विशेषता है। इन अधिक विकसित समूहों में दारू (xylem) तथा पोषवाह (phloem) होते हैं। दारू मृत चालक कोशिकाओं (dead conductive cells) से निर्मित होता है जिसकी कोशिका भित्तियां अत्यधिक प्रतिरोधी पॉलिफ़ीनॉलिक यौगिक, लिग्निन द्वारा मजबूत (reinforced) होती हैं। ब्रायोफ़ाइट्स के अतिरिक्त सभी थलीय पेड़-पौधे संवहनी पादप (vascular plants) भी कहलाते हैं। ब्रायोफ़ाइट्स असंहवनी (non-vascular) थलीय पौधे हैं। ब्रायोफ़ाइट्स के कुछ सदस्य, जैसे कि मॉसे (mosses) में संवहन ऊतक होते हैं, जो जल संवहन करते हैं लेकिन इनकी संवहनी कोशिकाओं में लिग्नन युक्त स्थूलन नहीं होता है, जो कि संवहनी पादपों की विशेषता होती है।

कुछ वनस्पतिज्ञ शब्द "थलीय पादपों" को संवहनी थलीय पादपों तक ही सीमित रखते हैं। हालांकि, ब्रायोफ़ाइट्स को भी थलीय पादपों के रूप में सम्मिलित करना अधिक उपयुक्त है। थलीय पादपों को हाल ही में परिभाषित किया गया है- वह प्रकाश संश्लेषी जीव जो आमतौर पर थल पर निवास करते हैं तथा थल पर निवास करने वाले अन्य पादपों के साथ संबंधित होते हैं। थलीय पादपों में कुछ अनुकूलन होते हैं जो उन्हें थलीय आवासों में जीवनयापन करने में समर्थ बनाते हैं। इनमें संभावित हैं पादपों की काया के ऊपर रक्षक आवरण (protective covering) तथा छिद्र जिन्हें रंध्र कहते हैं। थलीय पादपों को मृदा से जल प्राप्त करना जरूरी होता है। वाष्पन तथा शुष्कन को रोकने के लिये थलीय पादपों की बाह्य त्वचा बहुत अधिक जल अपारगम्य क्यूटिकल से ढकी रहती है। प्रजनन के लिए बीजाणु तथा परागकण होते हैं जो कि बहुत ही सूक्ष्म कोशिकाएं हैं यह हवा में निर्मुक्त हो जाती हैं। इनकी भित्तियां भी बहुत ही अधिक प्रतिरोधक कार्बनिक रसायन स्पोरोपोलेनिन (sporopollenin) से निर्मित होती हैं। कार्बन डाइऑक्साइड के अंदर आने तथा जल वाष्प के बाहर निकलने को नियमित करने के लिये बाह्यत्वचा में भी रंध्र पाये जाते हैं। रंध्री उपकरण (stomatal apparatus) दो वृक्काकार कोशिकाओं का बना होता है जो रंध्र को घेरे रहती हैं। अधिकांश थलीय पादपों में रंध्र पाये जाते हैं इनमें बहुत से ब्रायोफ़ाइट्स भी सम्मिलित हैं।

पादप जीव विज्ञान का एक सबसे दिलचस्प अध्ययन क्षेत्र है थलीय पादपों की उत्पत्ति है। जीवाश्म प्रमाण दर्शाते हैं कि प्रामाणिक थलीय पादप लगभग 40-43 करोड़ (400-430 million) वर्ष पूर्व रहे होगें। इस काल के दौरान, जो कि सिल्यूरियन कहलाता है छोटे, द्विभाजी शाखित (dichotomously branched) पौधे पाये जाते थे जो ***कुकसोनिया (cooksonia)*** कहलाते हैं। *कुकसोनिया* संवहनी थलीय पादप था। बीजाणुओं, क्यूटिकल तथा संवहनी नलिकाओं के सूक्ष्मजीवाश्म (microfossils) 45-47 करोड़ (450-470 million) वर्ष पुराने तलछटो (sediments) से प्राप्त किये गये हैं। ये सुझाते हैं कि *कुकसोनिया (cooksonia)* से लाखों वर्ष पूर्व थलीय पादप उपस्थित रहे होंगे। इतने प्राचीन काल के ब्रायोफ़ाइट्स नहीं ज्ञात हुए हैं। इसका कारण यह भी हो सकता है कि ब्रायोफ़ाइट्स का नाजुक थैलस संभवत् जीवाश्मों के रूप में भलीभांति संरक्षित नहीं हो पाया होगा।

वैज्ञानिक अब मानते हैं कि थलीय पादपों का उद्भव संभवत: किसी ताजे पानी में रहने वाले शैवालीय सदस्य से लगभग 47 करोड़ (470 million) वर्ष पूर्व हुआ होगा। वे संभवत: हरित शैवालों के पूर्वजों के ऐसे समूह से उत्पन्न हुये होंगे जो कि आधुनिक हरित शैवाल जैसे कि स्टोनवर्ट्स-*कारा (Chara)*

तथा नाइटेला (*Nitella*) तथा कोलयोकीट (*Coleochaete*) से संबंधित हो। ये केरोफ़ाइसी के सदस्य थलीय पादपों के साथ कुछ संरचनात्मक तथा जैव रासायनिक समानतायें दर्शाते हैं। थलीय पादपों के पूर्वज संभवतः कुछ आधुनिक कोलियोकीटियों से मिलते जुलते होंगे। प्राचीनतम थलीय पादप कुछ असंवहनीय भ्रूणीय पादप (nonvascular embryophytes) रहे होंगे कुछ लिवरवर्ट्स की तरह। यह संभव है कि विकास की दो परवर्ती (subsequent) धारायें ब्रायोफ़ाइट्स तथा संवहनी थलीय पादप समूहों के रूप में परिणत हो गई होंगी।

अब तक ब्रायोफ़ाइट्स की लगभग 23,000 जातियां वर्णित की जा चुकी हैं। ये सभी छोटे हरे पादप हैं, जो सेन्टीमीटरों में मापे जा सकते हैं तथा जिनमें जड़े नहीं होती हैं। ये विभिन्न प्रकार के नम थलीय आवास स्थानों में पाये जाते हैं। अन्य थलीय पादपों की भांति ये भी बहुकोशिकीय तथा मृदूतकीय (parenchymatous) होते हैं। जीवनचक्र में अधिक सुस्पष्ट युग्मकोद्भिदी (gametophytic) तथा कम स्पष्ट बीजाणुउद्भिदी (sporophytic) पीढ़ियों एकान्तरण (alternation of generations) होता है। ब्रायोफ़ाइट्स में परिचित मॉसेस (mosses) कम परिचित लिवरवर्ट्स (liverworts) तथा हार्नवर्ट्स (hornworts) सम्मिलित हैं। ब्रायोविज्ञ इन तीनों समूहों को निकट रूप से संबंधित मानते हैं तथा उन्हें तीन वर्गों (Classes) के रूप में प्रभाग ब्रायोफ़ाइटा (Division Bryophyta) में वर्गीकृत करते हैं।

प्रभाग : ब्रायोफ़ाइटा

वर्ग : हिपेटिकोप्सिडा (लिवरवर्ट्स)
Hepaticopsida (liverworts)

एन्थोसिरोटोप्सिडा (हार्नवर्ट्स)
Anthocerotopsida (hornworts)

ब्रायोप्सिडा (मॉसेस)
Bryopsida (mosses)

कुछ ब्रायोविज्ञ जो तीनों वर्गों के सदस्यों को एक दूसरे के साथ कम संबंधित मानते हैं उन्हें प्रभागों के स्तर पर बंटा हुआ मानते हैं: 1. हिपेटोफ़ाइटा (Hepatophyta) 2. एन्थोसिरोटोफ़ाइटा (Anthocerotophyta) तथा 3. ब्रायोफ़ाइटा (Bryophyta)। जातियों की बहुलता में ब्रायोफ़ाइटा में सर्वाधिक प्रमुखता मॉसेस (14,000) की है उसके बाद लिवरवर्ट्स (8,599) तथा हार्नवर्ट्स (350) हैं।

2.6 टेरिडोफ़ाइट्स

टेरिडोफ़ाइट्स संवहनी थलीय पादप हैं। ब्रायोफ़ाइट्स के विपरीत इनमें प्रारूपिक दारू तथा पोषवाह ऊतक पाये जाते हैं जो कि संवहनी पादपों की विशेषताएं है। ब्रायोफ़ाइट्स की भांति ये भी भ्रूणीय पादप हैं। टेरिडोफ़ाइट्स सिर्फ बीजाणुओं द्वारा प्रजनन करते हैं परन्तु वे कभी भी बीजों के द्वारा प्रजनन नहीं करते हैं। इस प्रकार संवहनी पादपों को आगे दो भागो में आसानी से बांटा जा सकता है। अनावृतबीजी यानि कि बीज न उत्पन्न करने वाले जिम्नोस्पर्म्स तथा आवृतबीजी यानि के बीज बनाने वाले एन्जियोस्पर्म्स इन दो समूहों को पादप विविधता-2 पाठ्यक्रम में चर्चित किया गया है। टेरिडोफ़ाइट्स में फर्न्स (ferns) तथा उनके संबंधी सम्मिलित हैं। तालिका 1. 2 में फर्न्स के संबंधी तीन प्रभागों में वर्गीकृत किये गये हैं :

साइलोटोफ़ाइटा (Psilotophyta), लाइकोपोडियोफ़ाइटा (Lycopodiophyta) तथा इक्वीसिटोफ़ाइटा (Equisetophyta)। फर्न के लगभग 1,000 संबंधी मौजूद हैं। वे बहुत ही प्राचीन संवहनी पादपों के समूहों की संतति हैं तथा इस कारण पादप विकास के विद्यार्थियों के लिये बहुत ही महत्व के हैं (चित्र 2.7) लगभग 10,000 फर्न प्रभाग टेरोफ़ाइटा (Pterophyta) में सम्मिलित किये गये हैं। हमारे पास

जीवाश्मों का विशाल संग्रह है जो टेरिडोफ़ाइट्स के बहुत से विलुप्त सदस्यों को दर्शाता है जिनमें ऐसे प्रमुख समूह सम्मिलित हैं जिनके बारे में सिर्फ जीवाश्मों से ही जाना जा सकता है। हाल ही के वर्षों में वैज्ञानिकों ने इन समूहों का विस्तार से अध्ययन किया है तथा प्राचीन संवहनी पादपों के बीच में संभव विकासात्मक संबंध स्थापित किये हैं (चित्र 2.11)। हालांकि आप इन सभी समूहों के प्रतिनिधियों का अध्ययन ना भी करें फिर भी ये आवश्यक है कि हम जीवित तथा विलुप्त टेरिडोफ़ाइट्स के प्रमुख प्रभागों को सूचीबद्ध कर दें जिससे प्राचीन संवहनी पादपों की विविधता तथा महत्व को पूर्णरूप से समझ सकें।

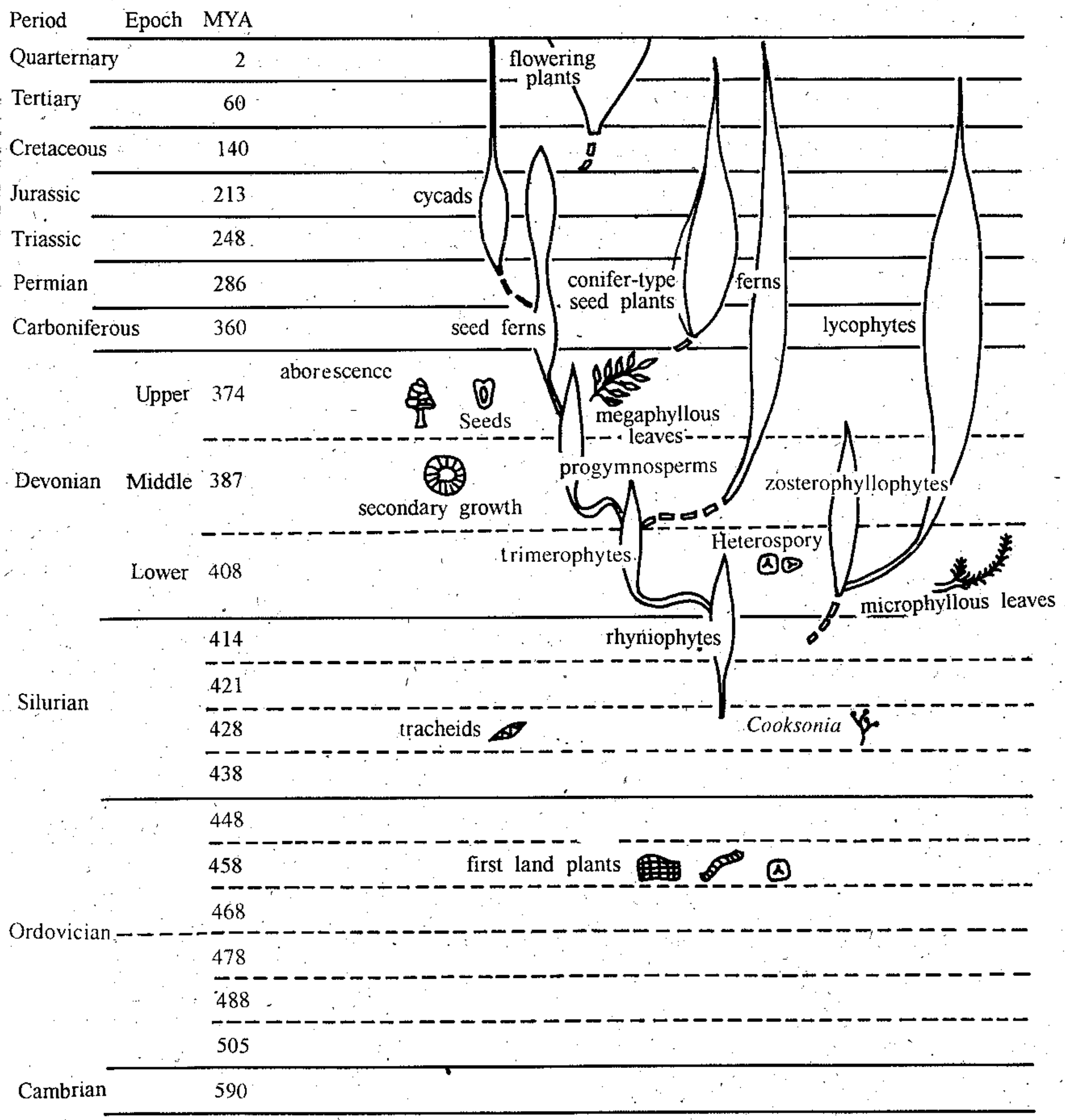

चित्र 2.7 : भूवैज्ञानिक समय चार्ट। यह चार्ट थलीय पादपों तथा विभिन्न संवहनी पादपों के समूहों के प्रगट होने के समय को दर्शाता है। समय दस लाख वर्ष पूर्व (MYA) के आधार पर दिया गया है। (Gensel तथा Andrews पर आधारित)।

विलुप्त टेरिडोफ़ाइट्स जो सिर्फ जीवाश्म अभिलेख से ज्ञात हुए

राइनियोफ़ाइटा (Rhyniophyta)

जोस्टेरोफिलोफ़ाइटा (Zosterophyllophyta)

ट्राइमेरोफ़ाइटा (Trimerophyta)

जीवित टेरिडोफ़ाइट्स (Living Pteridophytes)

साइलोटोफ़ाइटा (Psilotophyta)

लाइकोपोडियोफ़ाइटा (Lycopodiophyta)

इक्वीसिटोफ़ाइटा (Equisetophyta)

टेरोफ़ाइटा (Pterophyta)

जीवाश्म टेरिडोफ़ाइट्स के कुछ सदस्यों के चित्र 2.8- 2.10 में दर्शाये गये हैं। भूवैज्ञानिक समय चार्ट (चित्र 2.7) पादप जीवन के इतिहास को समझने के लिये एक महत्वपूर्ण सहायक है। यह चार्ट ना सिर्फ उस काल को दर्शाता है जब विभिन्न पादप समूह विकसित हुए अथवा विलुप्त हुए थे बल्कि विभिन्न पादप समूहों में आपसी संबंधों तथा प्रत्येक समूह में उसके इतिहास के क्रम के दौरान, जाति की बहुलता, को भी बताता है। आप चित्र 2.12 को भी देखे जिसमें विलुप्त तथा जीवित थलीय पादपों के बीच में संभव विकासात्मक संबंधों को सरलीकृत रूप में प्रस्तुत किया गया है।

संवहनी पादपों का प्राचीनतम समूह राइनियोफ़ाइट्स (Rhyniophytes) का है, जो लगभग 42 करोड़ (420 million) वर्ष पूर्व की अवसादी चट्टानों से ज्ञात है। इस समूह का प्राचीनतम तथा सबसे अच्छी तरह से ज्ञात वंश (genus) *कुकसोनिया (Cooksonia)* है (चित्र 2.9)। *वंश राइनिया (Rhynia)* इसके पश्चात शीघ्र ही विकसित हुआ। इन प्राचीन संवहनी पादपों में थल पर रहने के लिये उपयुक्त अनुकूलन (adaptations) थे। क्यूटिकल, रंध्र, स्पोरोपोलेनिन तथा बहुकोशिकीय काया के अलावा इन पादपों में वास्तविक दारू ऊतक भी थे जिनमें काष्ठीय वाहिनिकीयां (lignified trachieds) भी पाई जाती थीं। राइनियोफ़ाइट्स संभवत: अधिक प्राचीन संवहनी पादपों से विकसित हुये होंगे जो स्वयं किसी पूर्वजी, ब्रायोफ़ाइट से विकसित हुए होंगे अथवा सीधे ही किसी पूर्वजी हरित शैवाल से विकसित हुये होंगे। राइनी चर्ट (Rhynie Chert) से प्राप्त बहुत से भली भांति संरक्षित जीवाश्म इंगित करते हैं कि उनमें से कुछ बीजाणुउद्भिदी की बजाय युग्मकोद्भिदी है (चित्र 2.9)। ये भी हो सकता है कि सतही तौर पर एक दूसरे से मिलते जुलते पौधे संभवत: एक ही जाति की अगुणित (haploid) तथा द्विगुणित (diploid) पीढ़ियों को प्रदर्शित करते हों।

अन्य प्रमुख डिवोनी संवहनी पादप समूह जोस्टेरोफिलोफ़ाइट्स (Zosterophyllophytes) था। यह हो सकता है कि इस समूह की एक शाख लाइकोपोडियोफ़ाइट्स (Lycopodiphytes) लाइकोपोड्स Lycopods) में विकसित हो गई हो। लाइकोपोड्स एक सफल समूह थे, जिनकी कार्बनी कल्प (carboniferous period) में पृथ्वी की वनस्पति पर प्रमुखता थी (चित्र 2.10)। अब लाइकोपोड्स की सिर्फ लगभग 200 जातियां है। *सिलेजिनैला (Selaginella)* की लगभग 700 जातियों तथा *आइसोइटीज़ (Isoetes)* की 60 से अधिक जातियों का अक्सर *लाइकोपोडियम (Lycopodium)* के साथ अध्ययन किया जाता है। परन्तु अधिक सीधे तौर पर यह जोस्टेरोफिलोफ़ाइट्स की बजाय राइनियोफ़ाइट्स से संबंधित हैं।

ट्राइमेरोफ़ाइट्स (Trimerophytes) भी राइनियोफ़ाइटस से ही विकसित हुये थे। (चित्र 2.11)। यह एक महत्वपूर्ण समूह है जिससे तीन प्रमुख संवहनी पादप समूह इक्वीसिटोफ़ाइट्स, फर्नस तथा बीजयुक्त पादप-विकसित हुये थे। इक्वीसिटोफ़ाइट्स अब सिर्फ एक ही वंश *इक्वीसीटम (Equisetum)* द्वारा जाने जाते हैं जिसमें लगभग 15 जातियां है। *कैलामाइटीज़ (Calamites)* इस समूह का एक विशाल सदस्य था जो कार्बनी कल्प में पाया जाता था (चित्र 2.10)।

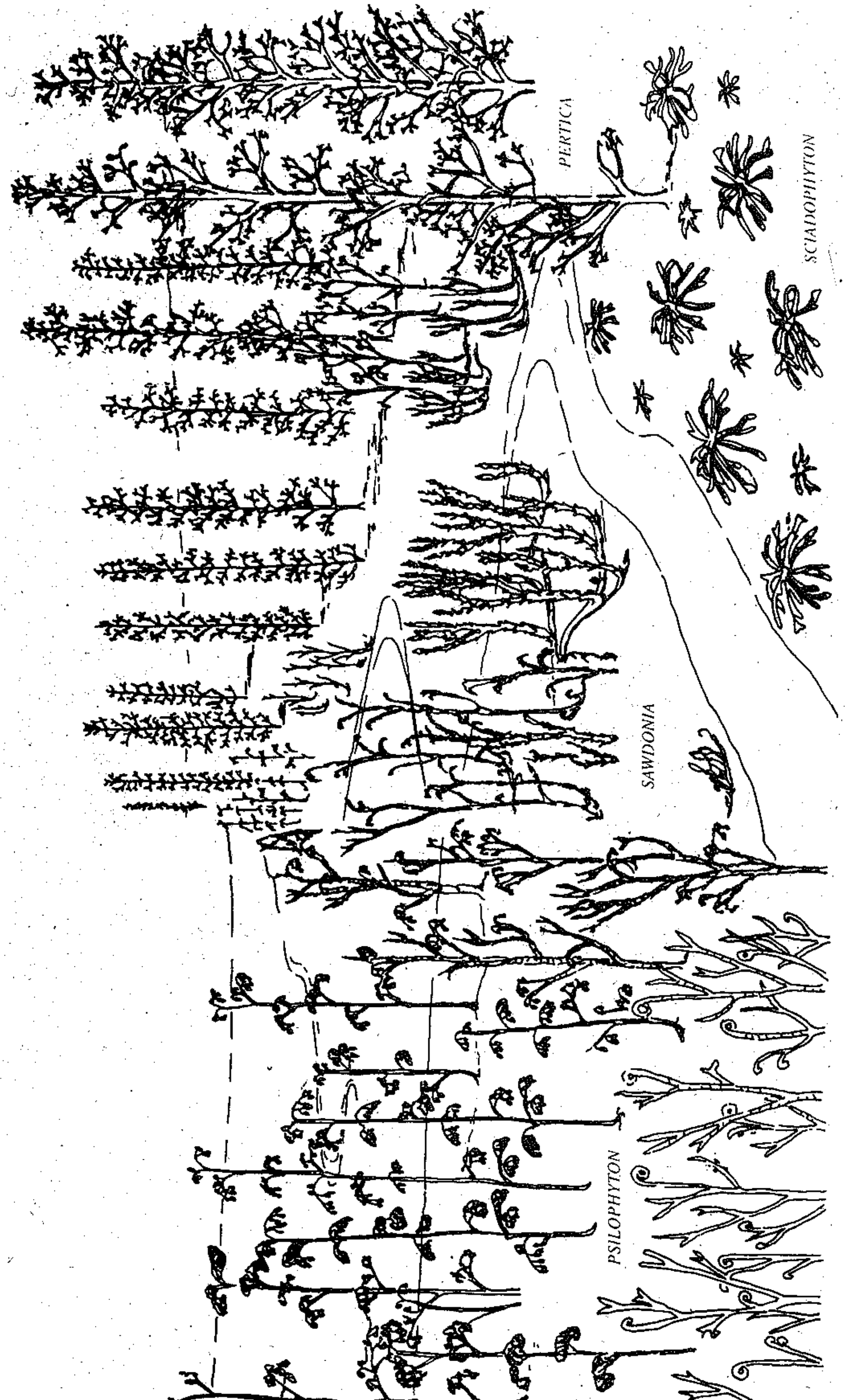

चित्र 2.8 : डिवोनी दृश्य भूमि का पुनर्निर्माण। लगभग 40 करोड़ (400 मिलियन) वर्ष पूर्व के कुछ प्राचीन संवहनी पादपों को दर्शाते हुए जो उस समय जीवित थे। (**Gensel** और **Andrews** पर आधारित)।

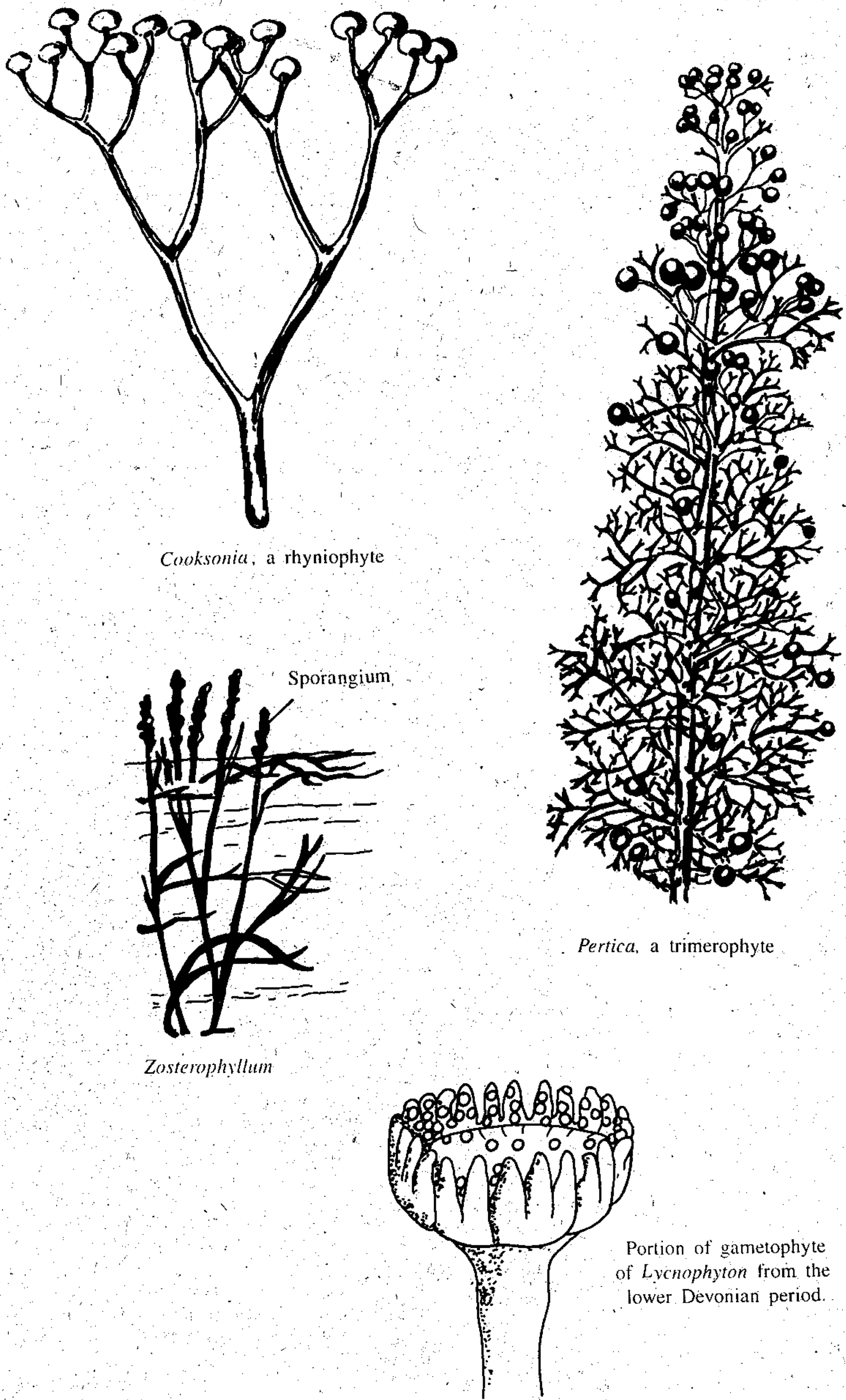

चित्र 2.9: विकासात्मक महत्व के तीन महत्वपूर्ण समूहों को दर्शाते हुये प्राचीन संवहनी पादपों के तीन सदस्यों का पुनर्निर्माण।

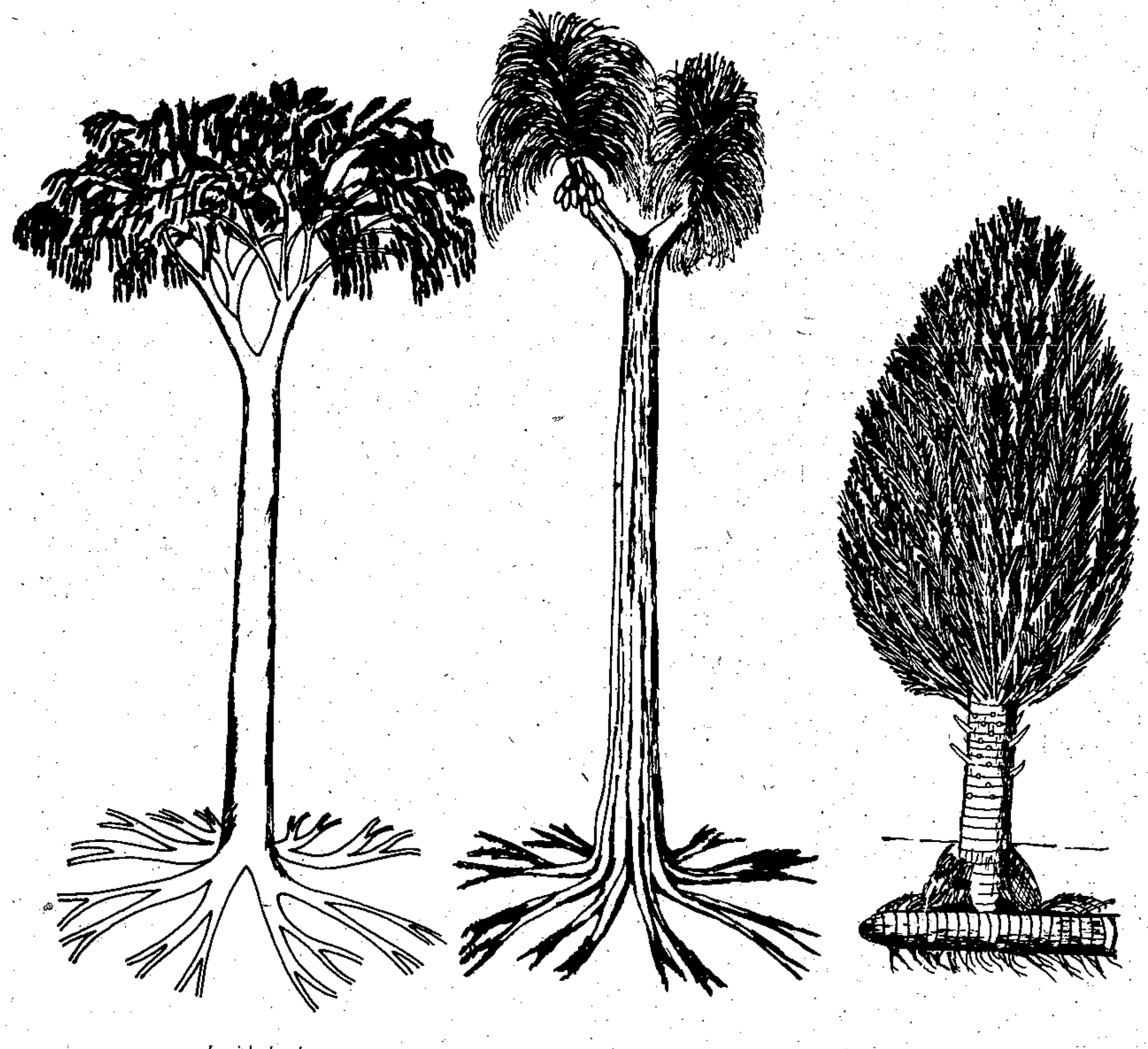

चित्र 2.10 : कार्बनी लाइकोपोड्स और इक्वीसिटोफाइट्स का पुनर्निर्माण। ये सभी बहुत ही बड़े पादप थे।

प्रभाग *साइलोटोफ़ाइटा (Psilotophyta)* में दो जीवित वंश *साइलोटम (Psilotum)* तथा *मेसीप्टेरिस (Tmesipteris)* सम्मिलित हैं। संरचनात्मक रूप से ये सरलतम ज्ञात जीवित संवहनी पादप हैं। दुर्भाग्यवश इनके जीवाश्म इतिहास के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है। जिससे इन्हें विलुप्त समूहों से संबंधित किया जा सके। कुछ टेरिडोविज्ञ इन दिलचस्प पादपों को फर्न्स के किसी संबंधियों की बजाय फर्न्स के ही बहुत अधिक लघुरूप (reduced) सदस्य मानते हैं।

चित्र 2.11 : *कैलामाइटीज* प्रमुख कार्बोनिफेरस दृश्यभूमि का पुनर्निर्माण (यूनिवर्सिटी आफ मिशिगन के राष्ट्रीय इतिहास म्यूजियम में)।

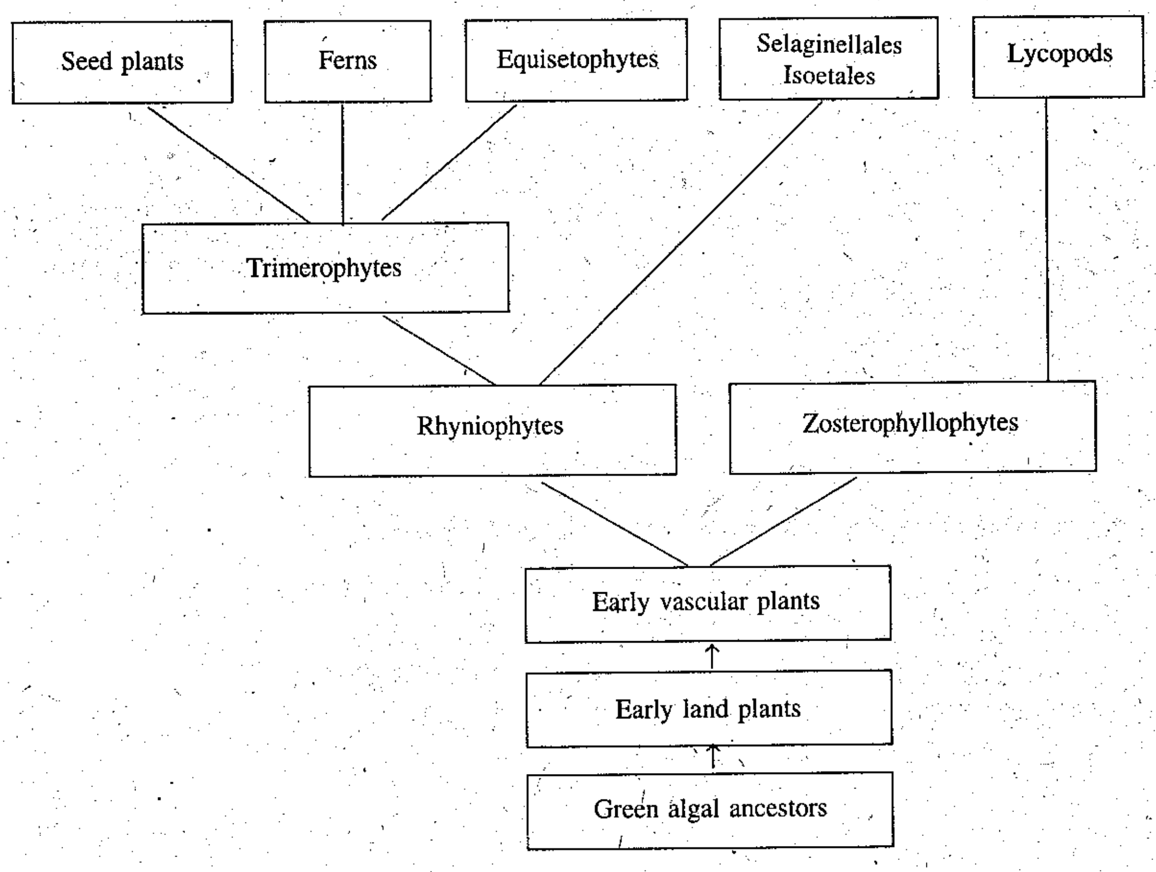

चित्र 2.12 : संवहनी थल पादपों के मध्य संबंध तथा विकास।

बोध प्रश्न 2.4

सबसे उपयुक्त एक उत्तर चुनिये।

i) थलीय पादप निम्न में से क्या कहलाते हैं ?

- क) अनावृतबीजी (gymnosperms)
- ख) भ्रूणी पादप (embryophytes)
- ग) वास्तविक केंद्रकी (eukaryotes)
- घ) बीजाणुउद्भिद (sporophytes)
- च) युग्मकोद्भिद (gametophytes)

ii) थलीय पादपों का उद्भव हुआ लगभग

- क) 47 करोड़ (470 million) वर्ष पूर्व
- ख) 20 करोड़ (200 million) वर्ष पूर्व
- ग) 3.5 अरब वर्ष पूर्व
- घ) 2,50,000 वर्ष पूर्व

iii) ब्रायोफ़ाइट्स में निम्न में से क्या नहीं पाया जाता है ?

- क) क्लोरोफिल
- ख) क्यूटिकल
- ग) संवहनी ऊतक
- घ) भ्रूण
- च) स्पोरोपोलेनिन

iv) वह पादप समूह जो टेरिडोफ़ाइट्स में सम्मिलित नहीं है

- क) फर्न्स (ferns)
- ख) राइनियोफ़ाइट्स (Rhyniophytes)
- ग) हार्नवर्ट्स (hornworts)
- घ) लाइकोपोड्स (lycopods)
- च) वहिस्क फर्नस (whisk ferns)

v) *कुकसोनिया*

- क) लिवरवर्ट (liverwort)
- ख) ट्राइमेरोफ़ाइट (Trimerophyte)
- ग) इक्वीसिटोफ़ाइट (Equisetophyte)
- घ) राइनियोफ़ाइट (Rhyniophyte)
- च) ब्रायोफ़ाइट (Bryophyte)

2.7 सारांश

इस इकाई में

- पूर्व केंद्रकी, कवक, शैवाल, ब्रायोफ़ाइट्स तथा टेरिडोफ़ाइट्स की स्थिति तथा वर्गीकरण की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है।
- सायनोबैक्टीरिया पूर्व केंद्रकी है जो अन्य जीवाणुओं से संबंधित है। उनमें क्लोरोफिल a पाया जाता है तथा वे बहुत कुछ वास्तविक केंद्रकी उच्च पादपों की भांति ही प्रकाश संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन निष्कासित करते हैं।
- सायनोबैक्टीरिया की जैसी कोशिकाएं ही संभवत: आधुनिक शैवाल में पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के क्लोरोप्लास्टो की पूर्वज है।
- कवक वास्तविक केंद्रकी है तथा अप्रकाशसंश्लेषी है।
- अवपंक फफूंदियों तथा ऊमाइसिटीज (Oomycetes) को हालांकि कवक जगत में शामिल किया गया है ऐसा माना जाता है कि ये विकास की अलग-अलग धाराओं से, अवपंक फफूंदियां प्रोटोज़ोआ से तथा ऊमाइसीटीज़ शैवालीय समूह से विकसित हुये हैं।
- उच्चतर कवक, ज़ाइगोमाइसिटीज़, एस्कोमाइसिटीज़ तथा बेसीडियोमाइसिटीज़ में कशाभिकीय कोशिकायें नहीं पाई जाती हैं तथा ये विकासात्मक रूप से एक दूसरे से संबंधित प्रतीत होते हैं।
- लाइकेन्स कवकीय तथा शैवालीय साझेदारी से निर्मित है। अधिकांश लाइकेन्स में कवकीय भागीदार एस्कोमाइसिटीज़ समूह का होता है कवकीय भागीदार लाइकेन की आकृति को निर्धारित करने वाले प्रतीत होते हैं।
- कवकों की एक बहुत अधिक संख्या जो लैंगिक प्रजनन नहीं करती है अथवा जिनके लैंगिक चक्र अभी तक ज्ञात नहीं हुये हैं, उन्हें समूह ड्यूटेरोमाइसिटीज़ में रखा गया है।
- शैवाल वास्तविक केंद्रकी, प्रकाश संश्लेषी जीव है। शैवाल समूहों के बीच में विभेदों को उनके द्वारा सहजीवी रूप से अधिगृहीत की गई विभिन्न प्रकार की क्लोरोफिल वाली पूर्व केंद्रकी कोशिकाओं के द्वारा ज्ञात किया जा सकता है।
- क्रोमोफ़ाइट्स, रोडोफ़ाइट्स तथा क्लोरोफ़ाइट्स को क्रमश: क्लोरोफिल a तथा c, a तथा d और a तथा b की उपस्थिति के द्वारा विभेदित किया जा सकता है।
- पूर्व केंद्रकी *प्रोक्लोरोन (Prochloron)* जिसमें पर्णहरित a तथा b होता है ऐसी पूर्वजी कोशिकाओं को प्रदर्शित करता है जो हरित शैवाल तथा थलीय पादपों के क्लोरोप्लास्ट के रूप में विकसित हुई हो।
- हरित शैवालों की कैरोफाइसीयन (charophycean) शाखा थलीय पादपों के विकास में परिणत हुई है।
- ब्रायोफ़ाइट्स तथा टेरिडोफ़ाइट्स थलीय पादप हैं। दोनों में बहुकोशिकीय भ्रूण पाया जाता है और इसी कारण ये भ्रूणीय पादप कहलाते हैं। ब्रायोफ़ाइट्स असंवहनी पादप है।
- थलीय पादप लगभग 45 करोड़ वर्ष पूर्व विकसित हुये। विभिन्न अनुकूलनों में थल को आबाद करने में सहायता करने वाले अनुकूलन थे बहुकोशिकीय पादप काया, संरक्षक क्यूटिकल, गैसों के आदान-प्रदान के लिये रंध्र तथा स्पोरोपोलेनिन युक्त प्रतिरोधी बीजाणु भित्ति। संवहनी थलीय पादपों में बाद में संवहनी ऊतक विकसित हो गये थे।
- फर्न्स तथा उनके संबंधी प्राचीन संवहनी बीज न धारण करने वाले पौधों के वंशज है। डिवोनी कल्प बहुत से राइनियोफ़ाइट्स के उद्भव का गवाह है जिनसे कई संवहनी पादप समूह विकसित हुये जिनसे अंत में संवहनी बीज युक्त पौधों, अनावृतबीजी तथा आवृतबीजी का विकास हुआ।

2.8 अंत में कुछ प्रश्न

1. सायनोबैक्टीरिया को शैवाल की बजाय जीवाणुओं के साथ क्यों समूहित किया गया है ?

....

....

....

....

2. चित्र की सहायता से विभिन्न कवक समूहों के बीच में संभव विकासात्मक संबंधों को दिखाइए।

3. कौन से गुण विभिन्न शैवाल समूहों के वर्गीकरण में सहायक हैं ? तथा कौन से पर्णहरित वर्णक विभिन्न शैवाल प्रभागों की विशिष्टतायें हैं ?

....

....

....

....

....

....

4. थलीय पादप कौन से हैं ? कौन से अनुकूलनों ने प्राचीन पादपों को भूमि के उपनिवेश में सहायता की ?

....

....

....

....

....

....

5. संवहनी पादप समूहों के बीच में प्रमुख विकास के क्रम का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

2.9 उत्तर

बोध प्रश्न

2.1 (i) ग (ii) स (iii) ग (iv) स (v) स

2.2 (i) काइटिन (ii) मृतपोषी, परजीवी

(iii) कवक-मूल सहवास, लाइकेन्स (iv) ऊमाइसिटीज़

(v) जाइगोमाइसिटीज़, एस्कोमाइसिटीज़, बेसीडियोमाइसिटीज़

2.3 (i) च (ii) ख (iii) ग (iv) क (v) घ

2.4 (i) ख (ii) क (iii) ग (iv) ग (v) घ

अंत में कुछ प्रश्न

1. खंड 2.2 में देखिये
2. खंड 2.3 में देखिये
3. खंड 2.3 में देखिये
4. खंड 2.5 तथा 2.6 में देखिये।
5. खंड 2.6 में देखिये।

शब्दावली

एक्टिनोमाइसीट : मिट्टी में रहने वाला ग्राम-धनात्मक जीवाणु जिसकी कोशिकाएं तंतुओं (filaments) में व्यवस्थित रहती हैं।

एस्कस : एस्कोमाइसिटीज़ कवक में एक थैली जैसी कोशिका जिसमें एस्कोस्पोर उत्पन्न होते हैं।

कवक-मूल सहवास : एक सहजीवी संबंध जो कवक तथा कुछ उच्च पादपों की जड़ों के बीच पाया जाता है विशेषतौर पर वृक्षों तथा कवक के बीच।

कूर्च : तंतुकी उपांगों युक्त कशाभ

कोलियोकीटि : एक उन्नत हरा शैवाल जिसमें एक स्तर तंत्र तथा एक शयान विसर्पी तंत्र होता है जो पादप को आधार से जकड़े रखता है।

ग्राम-धनात्मक जीवाणु : वह जीवाणु जो ग्राम रंजक में बैंगनी रंग लेता है तथा जिसकी कोशिका भित्ति में सामान्य: बाहरी आवरण नहीं होता है जबकि ग्राम-ऋणात्मक जीवाणु ग्राम रंजक में गुलाबी रंग लेता है तथा इसकी कोशिका भित्ति में सामान्यत: बाह्य आवरण होता है।

ग्राम रंजक : जीवाणु के अध्ययन में इस्तेमाल होने वाला रंजक। वे जीवाणु जो बैंगनी रंग लेते हैं वे ग्राम धनात्मक होते हैं तथा अन्य जो नहीं रंगते हैं वे ग्राम ऋणात्मक कहलाते हैं। ग्राम-धनात्मक जीवाणुओं को जीवाणुरोधी के द्वारा आसानी से मारा जा सकता है।

ट्यूब्लिन : वह प्रोटीन जो सूक्ष्मनलिकाओं का प्रमुख भाग बनाता है।

प्रतोद : चिकनी सतह वाला कशाभ

बीजाणुउद्भिद : अधिकांश पादपों में पाई जाने वाली पीढ़ियों के एकांतरण की एक अवस्था, जिसमें द्विगुणित (2n) पादप अर्धसूत्रीविभाजन के द्वारा बीजाणु उत्पन्न करता है जो अंकुरित होकर युग्मकोद्भिद को उत्पन्न करते हैं।

बेसीडियम : बेसीडियोमाइसिटीज कवक में दीर्घीकृत लैंगिक प्रजनन कोशिका जिसमें अर्धसूत्री विभाजन संपन्न होता है जिससे बेसीडियोस्पोर्स बनते हैं।

माइकोप्लैज़्मा : सरलतम पूर्वकेन्द्रकी कोशिका।

स्पोरोपोलेनिन : कैरोटिनॉइड वर्णकों तथा कैरोटिनॉइड एस्टर्स का आक्सीकृत बहुलक जो बीजाणुओं तथा परागकणों की भित्तियों में पाया जाता है तथा ये अधिकांश अम्लों के आक्रमण का रोधी होता है और 300° सेन्टीग्रेड तापमान पर भी स्थिर रहता है।

संकोशिकी : वह कवक तंतु जो अनेकों केन्द्रकों वाले जीवद्रव्य के नलिकाकार पिंड का बना होता है।

सहायक वर्णक : वह वर्णक जो प्रकाश की ऊर्जा को अवशोषित करके उसे क्लोरोफिल में स्थानांतरित कर देता है जैसे उच्च पादपों में कैरोटिनॉइड्स तथा ज़ैन्थोफिल।

युग्मकोद्भिद : अधिकांश पादपों में पाई जाने वाली पीढ़ियों के एकांतरण की अवस्था, जिसमें अगुणित पादप समसूत्री विभाजन के द्वारा युग्मक उत्पन्न करता है जो युग्मित होकर युग्मनज बनाते हैं जो बीजाणुउद्भिद में विकसित हो जाता है।

शैवाल निक्षेपाश्म : कैल्शियमी नील हरित शैवाल की परतों द्वारा निर्मित जीवाश्म।

NOTES

NOTES

NOTES

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGBY -01

पादप विविधता-1

खंड

1ब

शैवाल

इकाई 3
शैवालों की तुलनात्मक आकारिकी तथा कोशिका संरचना 5

इकाई 4
शैवालों में प्रजनन 30

इकाई 5
शैवालों का वर्गीकरण 53

इकाई 6
शैवाली आवास तथा वितरण 75

इकाई 7
शैवाल तथा मानव कल्याण 87

Cover : From left to right, top-scanning electron micrograph of *Chlamydomonas reinhardii* and moss capsule, bottom-*Penicillium* and fern prothallus (Courtesy of P. Dayanandan).

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

प्रो. आर. एन. चोपड़ा
प्रोफेसर (सेवा निवृत)
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. आलोक मोइत्रा
भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी
दिल्ली

डा. (कु.) सरला
देशबन्धु कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. सुश्री गुणवन्त सोखी
दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रो. एच. एन. वर्मा
लखनऊ विश्वविद्यालय

डा. बी. डी. वशिष्ठ
कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय

स्व. डा. सुश्री तोशा भान
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

स्व. डा. कैलाश मंधान
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री अमृता निगम
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री जसवन्त सोखी
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

खंड निर्माण समिति

प्रो. इ.आर.एस. तलपासाई (विषय सम्पादक)
भूतपूर्व अध्यक्ष वनस्पति विज्ञान
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय

डा. तसनीम फतमा (इकाई 7)
जैवविज्ञान विभाग
जामिया मीलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा (इकाई 3 से 7 तक)
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

प्रो. इ.आर.एस. तलपासाई (इकाई 3 से 6 तक)
भूतपूर्व अध्यक्ष वनस्पति विज्ञान
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय

अनुवाद

डा. कुमकुम चतुर्वेदी

डा. बी. डी. वशिष्ठ

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
इं.गां.रा.मु.वि.

पाठ्यक्रम संयोजक : डा. (सुश्री) स्वदेश तनेजा

जुलाई, 2002 (पुर्नमुद्रित)

© इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2000

ISBN-81- 7605-775-4

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय मैदान गढ़ी, नई दिल्ली-68 से प्राप्त की जा सकती है।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से निदेशक, विज्ञान विद्यापीठ द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के अनुमति से पुनः मुद्रित। उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त । इलाहाबाद की ओर से श्री एम. एल. कनौजिया, कुलसचिव द्वारा पुनः मुद्रित एवं प्रकाशित, नवम्बर 2 मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

खंड 1ब शैवाल

आगामी पांच इकाइयों में आप प्रकाशसंश्लेषी जीवों के एक समूह, शैवालों के बारे में पढ़ेंगे जो कि उच्च पादपों की तुलना में अपेक्षाकृत सरल होते हैं। वे अपने संरचनात्मक संरचना तथा सामान्य जीव विज्ञान में बहुत अधिक विविधता दर्शाते हैं। इस विविधता ने जीवविज्ञानियों को शैवालों को उच्च पादपों में पाई जाने वाली जीव वैज्ञानिक प्रक्रियाओं को समझने के लिये एक प्रारूप के रूप में अनुसंधान के लिये चुनने की ओर आकर्षित किया। वारबर्ग (Warburg) ने एक कोशिकीय हरे शैवाल *क्लोरेला* (*Chlorella*) को प्रकाश संश्लेषण के लिये आवश्यक प्रकाश ऊर्जा की तुलना में निर्मोचित ऑक्सीजन को मापने के लिये चुना। कैल्विन (Calvin) ने कार्बन यौगिकीकरण के दौरान कार्बन के पथ को स्पष्ट किया, जो कि एक ऐसी समस्या थी जिसे उच्च पादपों का उपयोग करके नहीं सुलझाया जा सकता था। इमरसन (Emerson) ने प्रकाश संश्लेषण में सहायक वर्णकों के महत्व की खोज नील-हरित तथा लाल शैवालों के प्रयोग के द्वारा की थी।

कोशिकीय विभेदन, विकास तथा उसके नियंत्रण के क्षेत्र में, *फ्यूकस* (*Fucus*) के अंडों का व्यापक रूप से प्रयोग किया गया। *ऐसीटेबुलेरिया* (*Acetabularia*) आज भी आणविक स्तर पर केन्द्रक तथा कोशिकाद्रव्य की सापेक्ष भूमिकाओं के अध्ययन के लिये बेहतर शैवाल है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद कुछ देशों ने *क्लोरेला* (*Chlorella*), *स्केनडेस्मस* (*Scendesmus*) तथा *स्पाइरूलाइना* (*Spirulina*) जैसे शैवालों को विशाल स्तर पर उगाने के लिये तकनीक विकसित की, जिससे उन्हें भोजन के विकल्प के रूप में तथा प्रोटीन के स्त्रोत के रूप में उपयोग किया जा सके। वास्तव में, आज भी बहुत से दक्षिण-पूर्वी एशियाई देश इन्हें भोजन योज्यों (food additives) के रूप में उपयोग करते हैं। प्राचीन काल से ही लोग समुद्री शैवालों को या तो प्रकृति से एकत्रित करते रहे हैं अथवा उनकी तटीय समुद्री जल में कृत्रिम रूप से खेती करते रहे हैं।

वर्तमान वर्षों में, जीव विज्ञानी विविधता के कारण तथा विभिन्न प्रकार के उपापचयी उत्पादों को उत्पन्न करने की क्षमता के कारण शैवालों का जैव तकनीकी में व्यापक रूप से उपयोग किया जा रहा है। कुछ व्यापारिक रूप से उपयोगी यौगिक जिनकी औषध रसायन, वस्त्र उद्योग, पेय पदार्थों तथा जेल तत्वों (gelling agents) जैसे ऐगार (agar), ऐल्जिनिक अम्ल, आइसक्रीम के लिये तथा अन्य उत्पादों में आवश्यकता पड़ती है, शैवालों से प्राप्त किए जाते हैं। शैवाल जैव-खाद के रूप में उपयोग किये जाते हैं, उदाहरण के लिये नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले शैवाल तथा समुद्री शैवाल जिन्हें किसान अपने खेत में उत्पन्न कर सकते हैं, खाद के रूप में प्रयोग किये जाते हैं।

शैवाल ताजे पानी के जीवों तथा समुद्री जीवों के लिये भोजन का प्रमुख स्त्रोत हैं। वे उनके लिये ऑक्सीजन की पूर्ति भी करते हैं। मछली तथा झींगा (prawn) पालने के उद्योग के रूप में (जल कृषि-aquaculture) मुनाफ़ा प्राप्त करने के लिये शैवालों के जीवविज्ञान को समझना बहुत जरूरी है।

शैवाल जलीय निकायों में प्रदूषण का नियंत्रण करने में तथा कम खर्चे से वाहित मल (sewage) के शुद्धीकरण करने में भी सहायक होते हैं।

हमें विश्वास है कि ऊपर दिये गए विवरण से आप समझ सकते हैं कि शैवालों का विस्तार से अध्ययन क्यों किया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त, बाकी खंडों का अध्ययन करने के बाद आपको हरे शैवालों से शुरू करके थलीय पादपों के विकास की अवस्थाओं का संपूर्ण चित्र स्पष्ट होगा।

इस खंड में पाँच इकाइयां हैं।

इकाई 3 शैवालों की कोशिकीय संरचना तथा तुलनात्मक आकारिकी से संबंधित है। शैवाल आकार तथा संरचनाओं में बहुत अधिक विविधता दिखाते हैं। ये एककोशिकीय (unicellular), निवही (colonial) तंतुमय (filamentous) तथा थैलसाभ (thalloid) प्रकार के होते हैं। कुछ प्रकृति में विषमतंतुक (heterotrichous) तथा बहुसाइफ़्नी (polysiphonoid) भी होते हैं। कुछ शैवाल सूक्ष्मदर्शीय होते हैं जबकि अन्य विशाल आकार के होते हैं, परन्तु इनमें जटिल अंगों अथवा ऊतकों का निर्माण नहीं होता है।

इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी से अध्ययन करने पर उनकी सूक्ष्म संरचना दर्शाती है कि नील-हरित शैवालों में पूर्व केन्द्रकी प्रकार की कोशिकाएं होती हैं जबकि अन्य सभी शैवाल वास्तविक केन्द्रकी प्रकार के होते हैं।

इकाई 4 ''शैवालों में प्रजनन'' पर है। शैवाल कायिक, अलैंगिक तथा लैंगिक तरीकों से प्रजनन करते हैं। युग्मकों के प्रकार, युग्मकीय संगलन तथा आदिम से उन्नत प्रकार की प्रजनन प्रक्रिया की ओर क्रमिक उन्नति को इस इकाई में उपयुक्त उदाहरणों के साथ समझाया गया है।

इकाई 5 ''शैवालों का वर्गीकरण'' पर है। पांच जगत् के वर्गीकरण के अनुसार पूर्व केन्द्रकी नील-हरित शैवाल जगत् मोनेरा में रखे गये हैं। अन्य सभी शैवाल 9 प्रभागों में विभाजित किये गये हैं। अप्रकाशसंश्लेषी शैवाल प्रोटिस्टों के साथ जगत् प्रोटिस्टा में रखे गये हैं। प्रत्येक प्रभाग की विशिष्ट विशेषताओं तथा उनके तुलनात्मक अध्ययन की इस इकाई में व्याख्या की गई है।

इकाई 6 शैवालों के आवास तथा वितरण के बारे में है। शैवाल सभी आवास स्थानों में पाये जाते हैं तथा यह अनुकूलन की आश्चर्यजनक क्षमता दिखाते हैं। हम ताजे पानी, समुद्री, मृदा, भूपृष्ठीय शैवालों तथा साथ ही साथ रूक्ष व अवास्य आवासों में पाई जाने वाली शैवालों की चर्चा करेंगे। शैवालों के पादप तथा प्राणी सहवास और शैवाली-सहजीवी सहवास की चर्चा भी इसी इकाई में है।

इकाई 7 ''शैवाल तथा मानव कल्याण'' में यह चर्चा की गई है कि किस प्रकार हम शैवालों को पोषक खाद्य स्त्रोत, जंतु चारा, जैव उर्वरक तथा ऊर्जा स्त्रोत के रूप में उपयोग कर सकते हैं। शैवाल कई औद्योगिक तथा औषधीय पदार्थ प्रदान करते हैं जो काफी मूल्यवान हैं इसलिए शैवालों के व्यापारिक महत्व पर भी जोर दिया गया है।

इकाई 3 शैवालों की तुलनात्मक आकारिकी तथा कोशिका संरचना

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

3.2 शैवालों की तुलनात्मक आकारिकी

एककोशिकीय प्रकार

ऐनासिस्टिस

क्लैमाइडोमोनस

निवही प्रकार

माइक्रोसिस्टिस

वाल्वॉक्स

तंतुमय प्रकार

नॉस्टॉक

यूलोथ्रिक्स

इडोगोनियम

विषमतंतुक प्रकार

ड्रेपर्नेल्डियॉप्सिस

कोलियोकीटि

एक्टोकार्पस

थैलसाभ प्रकार

अल्वा

फ्यूकस

पॉलीसाइफ़नी प्रकार

पॉलीसाइफ़ोनिया

3.3 शैवालीय कोशिका की संरचना

पूर्व केन्द्रकी शैवालीय कोशिका

वास्तविक केन्द्रकी शैवालीय कोशिका

3.4 सारांश

3.5 अंत में कुछ प्रश्न

3.6 उत्तर

3.1 प्रस्तावना

पिछले खंड में आपने पढ़ा कि शैवालों को प्रोटोज़ोआ के साथ जगत् प्रोटिस्टा में रखा गया है। पहले इन्हें पादपों के साथ वर्गीकृत किया जाता था क्योंकि ये प्रकाश संश्लेषी स्वपोषी होते हैं इनमें क्लोरोफिल तथा क्लोरोप्लास्ट होते हैं तथा सतही तौर पर पादप जैसे दिखाई देते हैं। चूंकि इनके युग्मकों में रक्षक कोशिकाएं नहीं होती हैं, अतः अब इन्हें पादपों के साथ वर्गीकृत नहीं किया जाता है। शैवालों की इस पहली इकाई में आप शैवालों तथा सायनोबैक्टीरिया (जिन्हें नील-हरित शैवालों के रूप में जाना जाता है) के आकृति विज्ञान तथा कोशिका संरचना के बारे में पढ़ेंगे। शैवाल प्रकृति में उन सभी स्थानों में विस्तार से फैले हुए हैं जहाँ कहीं भी पर्याप्त जल तथा सूर्य का प्रकाश उपलब्ध है। यहाँ तक कि वे रूक्ष आवास स्थानों में भी पाये जाते हैं। हालांकि शैवाल संरचना में सरल बिना किसी प्रकार के विभेद के होते हैं फिर

परम्परा के अनुसार, भौतिक लक्षणों के आधार पर वनस्पति जगत को चार प्रभागों में विभाजित किया गया है। थैलोफाइटा (Thallophyta) ब्रायोफाइटा (Bryophyta) टैरिडोफाइटा (Pteridophyta) स्पर्मेटोफाइटा (Spermatophyta)। पहले तीन प्रभागों को एकत्र रूप में क्रिप्टोगेम्स (Cryptogames) या फूल विहीन या बीज विहीन पादप कहते हैं क्योंकि ये कभी भी फूल उत्पन्न नहीं करते हैं। अंतिम प्रभाग को फ़ेनरोगेम्स (Phanerogames) या पुष्पीय पौधे कहते हैं।

कैल्प्स (kelps) का प्रपर्ण 100 मीटर तक लम्बा हो सकता है। और इसकी वृद्धि दर 60 से.मी. प्रतिदिन होती है।

भी ये आकार तथा बनावट में बहुत विविधता दर्शाते हैं। इनका आकार सरल सूक्ष्मदर्शीय से लेकर विशाल थैलसी होता है जोकि लंबाई में कुछ मीटरों तक विस्तारित होता है जैसे कि कैल्प्स में। शैवालीय आकारिकी सरल एककोशिकीय प्रकार से लेकर जटिल थैलसी प्रकार की होती है जोकि समुद्री शैवालों में पाई जाती है। यहाँ सम्मिलित किए गए प्रतिनिधि वंशों की आकारिकी का अध्ययन करते समय आप बहुकोशिकीय थैलस के विकास की विभिन्न अवस्थाओं को नोट कीजिएगा। इनके द्वारा प्रथम थलीय पादपों का विकास हुआ।

इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखने पर इनकी कोशिकाओं की संरचना में एक प्रमुख तथ्य दिखाई पड़ता है कि नील-हरित शैवालों में जीवाणुओं की भाँति पूर्व केन्द्रकी प्रकार की कोशिकाएं पाई जाती हैं और इस प्रकार वे उन अन्य शैवालों की अपेक्षा जीवाणुओं से अधिक संबंधित हैं, परन्तु प्रचलित तौर पर उन्हें अन्य शैवालों के साथ समूहित किया जाता है। अन्य सभी शैवालों में वास्तविक केन्द्रकी प्रकार की कोशिकाएं पाई जाती हैं।

शैवालों में पायी जाने वाली प्रजनन प्रक्रियाओं की चर्चा इसके बाद वाली इकाई में की गई है। शैवाल प्रकृति में विस्तार से फैले हुए हैं तथा विविध प्रकार के आवासों में होते हैं। आवास स्थान तथा वितरण विशेषरूप से भारत में वितरण की चर्चा छठी इकाई में की गई है।

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप:

- शैवालों में पाये जाने वाले मूल प्रकार के थैलस का वर्णन कर सकेंगे,
- एककोशिकीय (unicellular), निवही (colonial), तंतुमय (filamentous), विषमतंतुक (heterotrichous), थैलसाभ (thalloid) तथा पॉलीसाइफ़नी (polysiphonoid) प्रकार के शैवालों की आकारिकी की तुलना कर सकेंगे,
- *ऐनासिस्टिस, क्लैमाइडोमोनस, माइक्रोसिस्टिस, वालवॉक्स, नॉस्टॉक, यूलोथ्रिक्स, इडोगोनियम, ड्रेपर्नेल्डियॉप्सिस, कोलियोकीटि, एक्टोकार्पस, अल्वा, फ़्यूकस* तथा *पॉलीसाइफ़ोनिया* की आकारिकी का चित्रण तथा उनके विशेष लक्षणों का वर्णन कर सकेंगे,
- पूर्व केन्द्रकी तथा वास्तविक केन्द्रकी शैवालों की सूक्ष्म संरचना का चित्रण तथा उनके भागों को चिन्हित कर सकेंगे साथ ही उनके विभेदी लक्षणों को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- पूर्व केन्द्रकी तथा वास्तविक केन्द्रकी शैवालों में पाये जाने वाले विभिन्न कोशिकीय कोशिकांगों के बुनियादी लक्षणों का संक्षिप्त वर्णन कर सकेंगे,
- यह समझ सकेंगे कि शैवालों में किस प्रकार से थैलस का विकास हुआ।

3.2 शैवालों की तुलनात्मक आकारिकी

शैवालों के वैज्ञानिक अध्ययन करने वाली शाखा को फायकोलॉजी (Phycology) कहा जाता है और जो वैज्ञानिक शैवालों के विशेषज्ञ होते हैं उन्हें फ़ायकोलोजिस्ट (Phycologist) या एलगोलजिस्ट (Algologist) कहते हैं।

शैवाल की काया थैलस कहलाती है। एककोशिकीय शैवालों में यह सरल एक कोशिका लिये हुए होती हैं। सभी बहुकोशिकीय जीव अपना जीवन एक कोशिका के रूप में आरंभ करते हैं। जब कोशिका विभाजित होती है तथा संतति कोशिकाएं श्लेष्मी (mucilaginous) पदार्थ में ढ़का हुआ पैकेट बनाती है तब निवह (colony) बनता है। एक ही तल में कोशिका के लगातार विभाजन तथा संतति कोशिकाओं के एक साथ जुड़े रहने के परिणामस्वरूप कोशिकाओं की एक कतार अर्थात तंतु (filament) बन जाता है। तंतु की कुछ कोशिकाएं सिर्फ एक बार ऊर्ध्वाधर तल से विभाजित होकर व उसके बाद लगातार अनुप्रस्थ विभाजनों द्वारा विभाजित हो तो, तंतुमय शाखित थैलस का निर्माण होता है। जब तंतु की सभी कोशिकाओं में अनुप्रस्थ तथा अनुदैर्ध्य विभाजन होते हैं तो इसके परिणामस्वरूप एक अथवा अधिक कोशिका की मोटाई की पट्टी (sheet) का निर्माण होता है। इस प्रकार के बहुकोशिकीय थैलस जटिल विभेदन भी दर्शा सकते हैं जैसा कि समुद्री शैवालों में पाया जाता है। सभी बहुकोशिकीय शैवाल अपने विकास के दौरान उपर्युक्त अवस्थाओं को दर्शाते हैं।

इस अध्याय में आप शैवालों में पाये जाने वाले ऊपर बताये गये मूल प्रकार के थैलसों के विशिष्ट उदाहरणों का अध्ययन करेंगे। यह ध्यान दिया जाना चाहिये कि उपर्युक्त सभी प्रकार के थैलस सभी शैवालीय प्रभागों में नहीं पाये जाते हैं, कुछ प्रभाग प्रमुख रूप से बहुकोशिकीय, कुछ तंतुमय तथा कुछ सिर्फ एक कोशिकीय हो सकते हैं। शैवालों की संरचना में क्रमिक रूप से जटिलता यह भी इंगित करती है कि किस प्रकार से शैवालों में थैलस का विकास हुआ।

आकारिकी के आधार पर शैवालों को एककोशिकीय, निवही, तंतुमय, विषमतंतुक, थैलसाभ तथा पॉलीसाइफ़नी प्रकार (forms) में बांटा जा सकता है। इनमें से प्रत्येक प्रकार का नीचे वर्णन किया गया है।

3.2.1 एककोशिकीय प्रकार

ऐनासिस्टिस (Anacystis)

एक कोशिकीय, बेलनाकार, छोटे अथवा लंबे, कभी-कभी बहुत ही लंबे साँप जैसे प्रकार के होते हैं (चित्र 3.1ए)। कोशिकाएं संकीर्णन (constriction) के द्वारा विभाजित होती हैं तथा दो संतति कोशिकाएं अलग-अलग हो जाती हैं, कभी-कभार वे दो कोशिकीय तंतु बनाने के लिये एक साथ रहती हैं।

प्रत्येक अकेली कोशिका में उसके चारों ओर स्वयं का श्लेष्मी आवरण हो सकता है। कुछ ऐसी कोशिकाएं एक रंगहीन श्लेष्मा में ढ़की हुई हो सकती हैं। जिससे कि वे एक निवह का प्रभाव देती हैं।

क्लैमाइडोमोनस (Chlamydomonas)

यह एक कोशिकीय शैवाल है जिसमें एक केन्द्रक होता है, इसमें प्यालेनुमा आकार का क्लोरोप्लास्ट होता है। जिसमें आमतौर पर एक पाइरीनॉइड (pyrenoid) उपस्थित होता है (चित्र 3.1बी तथा 3.8 बी)। क्लोरोप्लास्ट के अग्रभाग पर वसा के लाल रंग के कणों की 2 से 3 कतारें दिखाई पड़ती हैं। इसे नेत्र बिंदु अथवा दृक बिन्दु (eyespot) कहते हैं जो शैवाल की प्रकाश के प्रति अनुक्रिया में सहायक होते हैं। कोशिकाभित्ति दृढ़ तथा सुस्पष्ट होती है। प्रत्येक कशाभ के आधार पर एक छोटी संकुचनशील धानी (contractile vacuole) पाई जाती है।

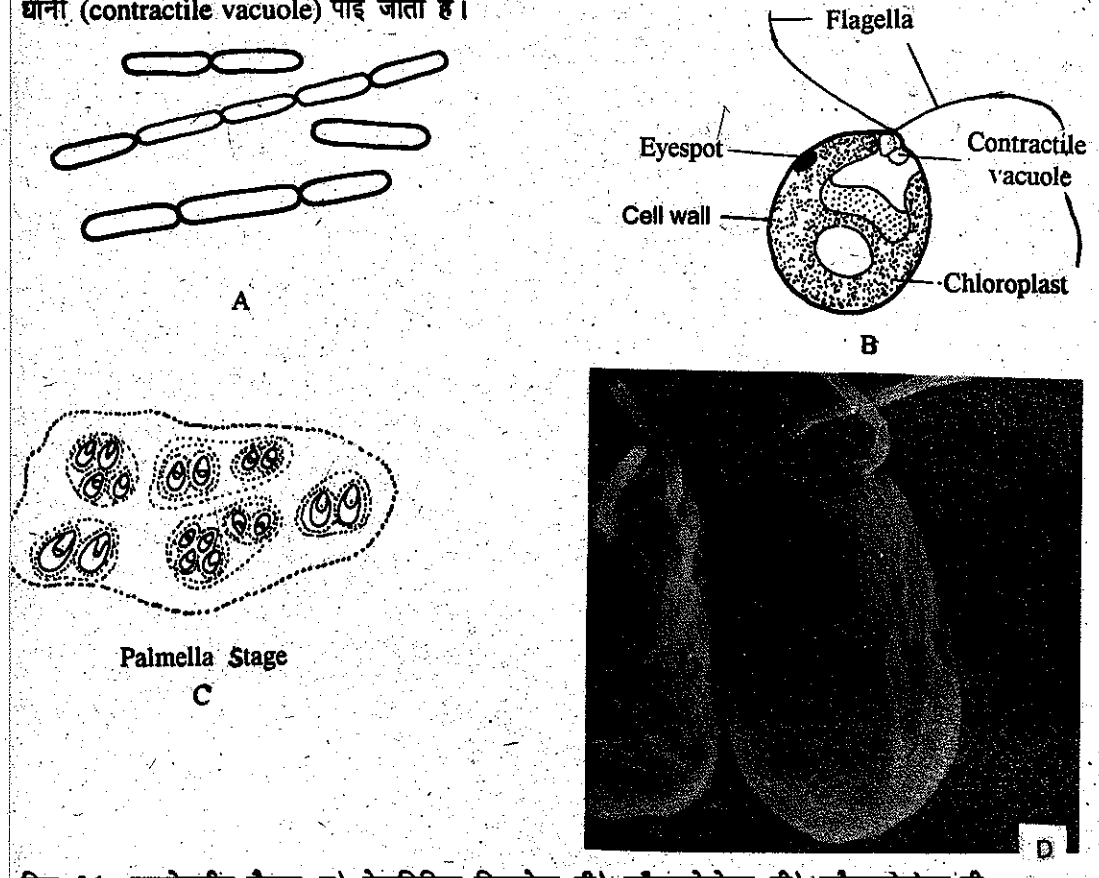

चित्र 3.1 : एककोशकीय शैवाल: ए) *ऐनासिस्टिस निड्यूलेन्स*, बी) *क्लैमाइडोमोनस*, सी) *क्लैमाइडोमोनस* की पाल्मेला अवस्था, डी) *क्लैमाइडोमोनस* का स्कैनिंग इलेक्ट्रान माइक्रोग्राफ ठोस संवर्धन माध्यम में वर्धित होते हुए (पी. दयानन्दन के सौजन्य से)।

सूखे की स्थिति में, *क्लैमाइडोमोनस* की कोशिकाएं आंशिक रूप से विभाजित होती हैं तथा कशाभ रहित संतति कोशिकाएं श्लेष्म के सामान्य पिंड द्वारा परिबद्ध (enclosed) रहती हैं। इस प्रकार का निवह *क्लैमाइडोमोनस* की **पाल्मेला अवस्था (palmella stage)** कहलाता है। यह सिर्फ अस्थाई अवस्था होती है तथा जल से भरने के बाद प्रत्येक कोशिका कशाभ विकसित कर लेती है तथा निवह में से तैरकर बाहर चली जाती है। इस प्रकार से *वाल्वॉक्स* में पाये जाने वाले निवह के बनने का आरंभ *क्लैमाइडोमोनस* में देखा जा सकता है।

3.2.2 निवही शैवाल

जब एक कोशिका विभाजित होती है तथा संतति कोशिकाएं एक साथ एक श्लेष्मपिंड के अंदर रहती हैं तब उसे निवह कहते हैं। निवह में बहुत अधिक संख्या में भी कोशिकाएं हो सकती हैं। कभी-कभी यह इतना बड़ा भी हो सकता है कि कोई भी इसे नग्न आँखों से देख सकता है।

माइक्रोसिस्टिस (Microcystis)

सिनोबियम- निवह अथवा कॉलोनी जिसमें कोशिकाओं की संख्या निर्माण के समय से ही सीमित रहती है और उसमें कोई बढ़ोतरी नहीं होती। सामान्यतः निवह में कोशिकाओं की व्यवस्था भी विशेष प्रकार की होती है।

यह एक निवही शैवाल है जो भारत में प्रदूषित तालाबों तथा झीलों में बहुत ही सामान्य तौर पर पाया जाता है (चित्र 3.2 ए)। कभी निवह इतने बड़े होते हैं कि उन्हें नग्न आँखों से देखा जा सकता है। वे पानी की सतह पर एकत्रित हो जाते हैं तथा कुछ मौसमों में एक मोटी परत बनाते हैं (जल प्रस्फुटन यानि water blooms)।

एकल कोशिकाएं गोलाकार होती हैं तथा निवह श्लेष्म द्वारा जुड़ी हुई कुछ हजार कोशिकाओं के ढ़ीले रूप से संचयित होने के कारण बनता है (चित्र 3.2 बी)। प्रत्येक कोशिका के अंदर पाई जाने वाली दीर्घित बेलनाकार वायु पुटिका (vesicle) की उपस्थिति के कारण निवह पानी की सतह पर तैरते हैं। प्रजनन कोशिकाओं के विभाजन के द्वारा होता है जो द्वि-खंडन (binary fission) कहलाता है।

वाल्वॉक्स (Volvox)

वाल्वॉक्स के निवह गोलाकार, गेंद जैसे तथा नग्न आँखों से देखने के लिये पर्याप्त रूप से बड़े होते हैं (चित्र 3.2 सी)। प्रत्येक निवह में 1000-5000 कोशिकाएं होती हैं जो श्लेष्मीय गोले जिसको समंडल या सिनोबियम (coenobium) कहते हैं के बाहर की ओर व्यवस्थित रहती हैं। आमतौर पर दो प्रकार की कोशिकाएं देखी जा सकती हैं, कायिक अथवा दैहिक कोशिकाएं (vegetative cells) तथा गोनिडियमी कोशिकाएं (gonidial cells)। तरुण निवहों की कोशिकाओं में कोशिकाद्रव्यी संबंधन-प्लैज़्मोडेस्माटा (plasmodesmata) दो कोशिकाओं के बीच में सूक्ष्मदर्शी के द्वारा देखे जा सकते हैं।

कायिक कोशिकाएं लगभग *क्लैमाइडोमोनस* जैसी दो कशाभीय, कोशिका भित्ति, एकल प्यालेनुमा क्लोरोप्लास्ट, नेत्रबिन्दु, पाइरीनॉइड, संकुचनशील धानी तथा एक केन्द्रक वाली होती है। (चित्र 3.2 डी)। पश्च भाग की कोशिकाएं आगे के भाग से बड़ी भी हो सकती हैं।

गोनिडियम-कोशिकाएं जो लैंगिक प्रजनन के लिये होती हैं वे पीछे के भाग में होती हैं, उनके कशाभ शीघ्र ही गिर जाते हैं। वे विभाजित होती हैं तथा संतति निवहों को जन्म देती हैं। पैतृक निवहों के फट जाने के बाद संतति निवह जल में निर्मुक्त हो जाते हैं।

गोनीडियम से उत्पन्न हुई संतति निवह, बाद में नर निवहों (जो शुक्राणु (spermatozoa) उत्पन्न करते हैं) अथवा मादा निवहों (जो अंडे उत्पन्न करते हैं) में विकसित हो जाते हैं। *वाल्वॉक्स* में निवह अधिकतर एकलिंगी (unisexual) होते हैं लेकिन कुछ जातियों में उभयलिंगी (bisexual) होते हैं।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि *वाल्वॉक्स* का निवह *माइक्रोसिस्टिस* के निवह से बहुत अधिक उन्नत होता है। *माइक्रोसिस्टिस* में वैयक्तिक कोशिकाएं (individual cells) विभाजन के पश्चात् श्लेष्म के एक ही पिंड में निलंबित (suspended) रहती हैं जिनके बीच में कोई संपर्क नहीं होता है। यदि स्थितियां अनुकूल रहती हैं तो प्रत्येक कोशिका लगातार हमेशा विभाजित होती रह सकती है।

वाल्वॉक्स में निवह की सभी कोशिकाएं एक ही जनक कोशिका से उत्पन्न होती हैं। वे श्लेष्मीय गोले की सतह पर व्यवस्थित होती हैं, व अन्य कोशिकाओं से जीवद्रव्यी संयोजनों के द्वारा जुड़ी रहती हैं। कुछ कोशिकाएं लिंग कोशिकाओं की भाँति व्यवहार करती हैं जो प्रजनन के लिये होती हैं जबकि अन्य कायिक

रहती हैं तथा अंततः वृद्धि करती हैं व मर जाती हैं। कायिक कोशिकाओं तथा प्रजनन कोशिकाओं में यह अन्तर बहुकोशिकीय जीव के निर्माण में बहुत महत्वपूर्ण लक्षण हैं।

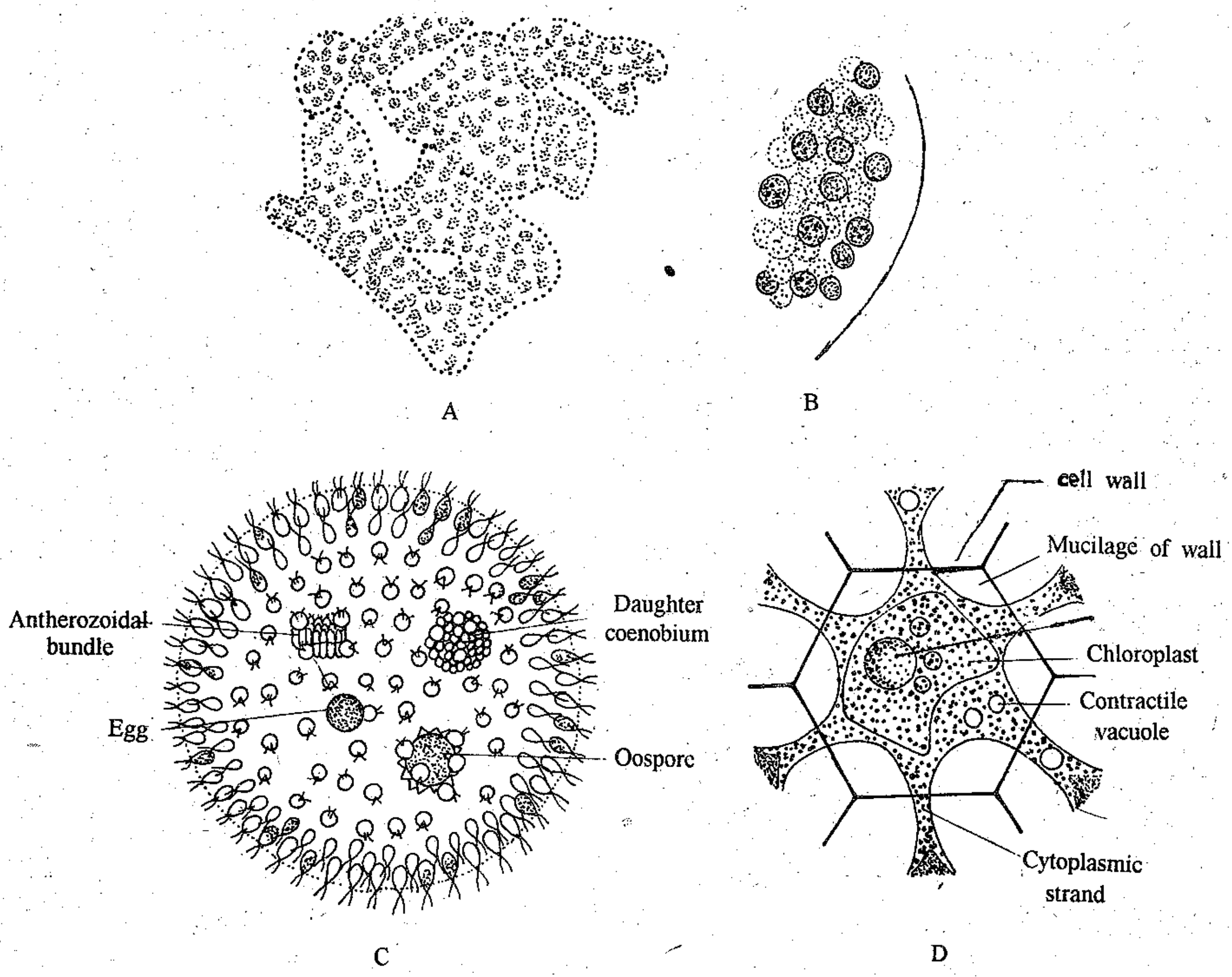

चित्र 3.2: निवही शैवाल: ए) *माइक्रोसिस्टिस एरुयगिनोसा,* बी) आवर्धित ए का भाग, सी) *वाल्वॉक्स ऑरियस,* डी) c की कोशिकाएं अग्र ध्रुवी दृश्य में।

3.2.3 तंतुमय प्रकार

जब कोई कोशिका हमेशा अनुप्रस्थ रूप से विभाजित होती है तथा संतति कोशिकाएं एक दूसरे से अलग नहीं होती हैं, तब इसके फलस्वरूप कोशिकाओं की एक रेखीय कतार बन जाती है जैसा कि *नॉस्टॉक, यूलोथ्रिक्स* तथा *इडोगोनियम* में होता है। हालांकि, तीनों शैवाल विभेद के भिन्न-भिन्न स्तरों को दर्शाते हैं।

नॉस्टॉक (Nostoc)

यह एक सरल तंतुमय प्रकार है, जिसमें कोशिकाओं की एक ही कतार (एक पंक्तिक) होती है (चित्र 3.3 ए)। कायिक कोशिकाओं के बीच में ही कुछ कोशिकाएं हेटेरोसिस्ट के रूप में रूपांतरित हो जाती हैं (चित्र 3.3 बी)। सभी कायिक कोशिकाएं निश्चेष्ट बीजाणुओं (akinetes) में विकसित होने में समर्थ होती हैं।

यूलोथ्रिक्स (Ulothrix)

यह भी तंतुमय शैवाल है परन्तु एक संकीर्ण आधारीय स्थापन अंग (holdfast) में विभेदित होता है जिसके द्वारा यह जल में चट्टानों से जुड़ा रहता है (चित्र 3.3 सी)। चित्र 3.3 डी को देखिये, जो *यूलोथ्रिक्स* की कोशिकाओं की संरचना को मेखला (girdle) के आकार के क्लोरोप्लास्टों के साथ दर्शाता

हेटेरोसिस्ट : एक बहुत ही विभेदित कोशिका जो कुछ तंतुमय नील-हरित शैवालों में पाई जाती हैं जिसमें नाइट्रोजन का यौगिकीकरण होता है।

निश्चेष्ट बीजाणु - शैवालों में पाई जाने वाली मोटी भित्ति की अचल प्रजनन कोशिकाएं।

एकपंक्तिक (uniseriate) - कोशिकाओं की तंतु के रूप में एक कतार।

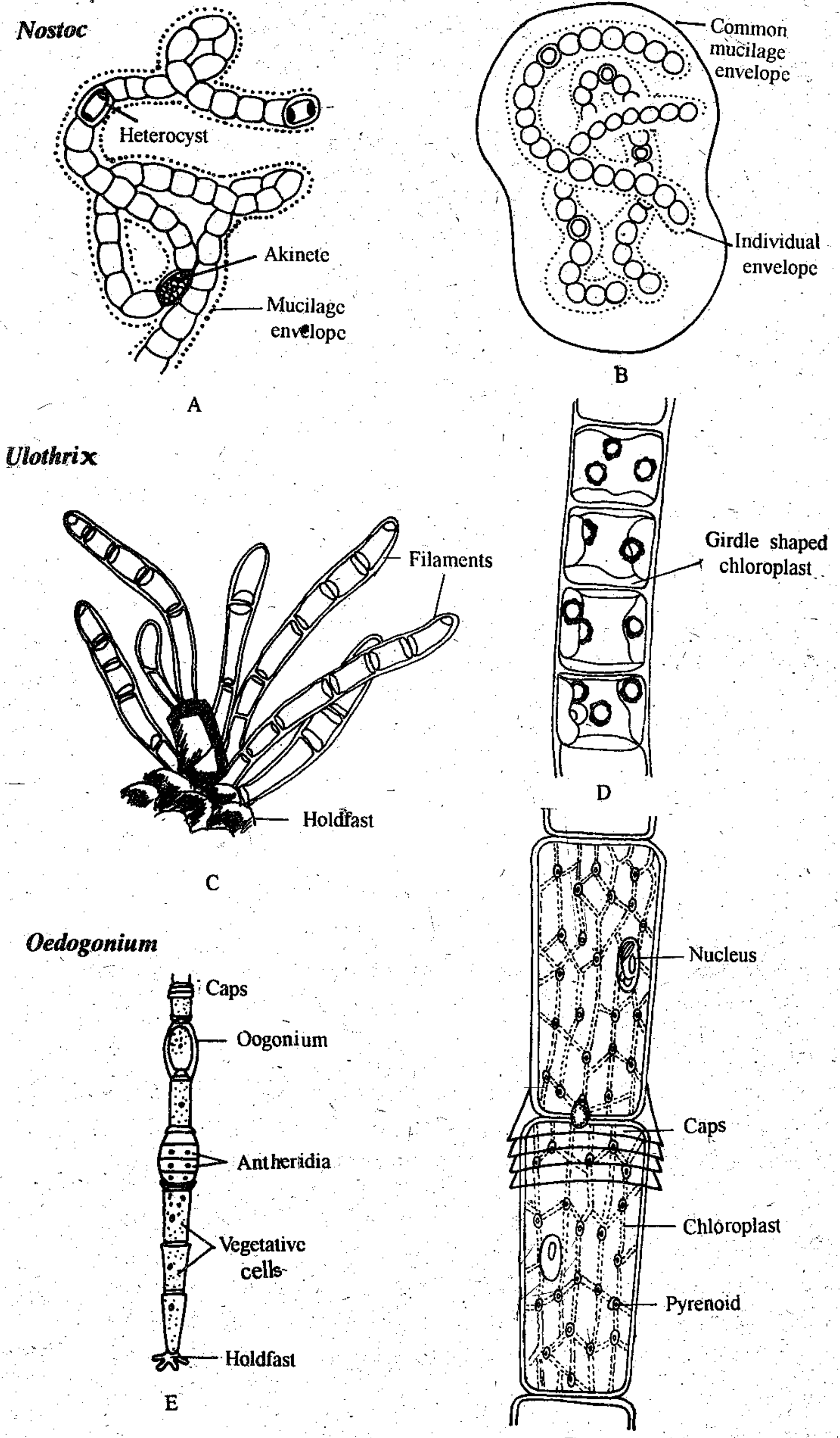

चित्र 3.3: निवही शैवाल: ए) *नॉस्टॉक* के तंतु निश्चेष्ट बीजाणु तथा हेटेरोसिस्ट दर्शाते हुए, बी) *नॉस्टॉक* के तंतु पुंजित होकर बॉल बनाते हुए, सी) *यूलोथ्रिक्स* के नूतनोद्भिद् (germlings), डी) *यूलोथ्रिक्स* की कोशिका संरचना मेखला के आकार के क्लोरोप्लास्ट दर्शाते हुए, इ) *इडोगोनियम* के तंतु कायिक तथा प्रजनन कोशिकाए दर्शाते हुए, एफ) *इडोगोनियम* के तंतु का भाग, कोशिका संरचना तथा आच्छद कोशिका में चार टोपिया दर्शाते हुए।

है। अग्रसिरे की कोशिकाएं अपेक्षाकृत चौड़ी होती है उनमें से प्रत्येक अपने अंदर विभाजित होती है तथा प्रजनन के लिये बड़ी संख्या में चल (motile) कोशिकाओं को उत्पन्न करती हैं।

इडोगोनियम (*Oedogonium*)

इडोगोनियम के तंतु अशाखित होते हैं, आमतौर पर एक सिरे पर स्थापन अंग में विभेदित होते हैं (चित्र 3.3 ई)। बेलनाकार कोशिकाएं चौड़ाई की अपेक्षा छोटी अथवा बड़ी होती हैं। तंतु की वृद्धि विशेष कोशिकाओं के विभाजन के द्वारा होती हैं जिन्हें आच्छद कोशिकाएं (cap cells) कहते हैं इनमें आच्छद यानि टोपी अथवा छल्ले जैसे चिन्ह भित्तियों पर दिखाई पड़ते हैं (चित्र 3.3 एफ)। ये कोशिकाएं बहुत सी बार विभाजित हो सकती हैं तथा कोशिका पर उपस्थित टोपियों की संख्या कोशिका में हुए विभाजनों की संख्या को सूचित करती है।

बोध प्रश्न 3.1

(अ) निम्नलिखित कथनों में से कौन से सत्य हैं और कौन से असत्य। सत्य के आगे 'स' तथा असत्य के आगे 'अ' लिखें।

i) *इडोगोनियम* में टोपी कोशिकाएं स्थापन कोशिकाओं की तरह काम करती हैं। ☐

ii) *नॉस्टॉक* में स्थापन कोशिका पाई जाती है। ☐

iii) *क्लैमाइडोमोनस* गैस धानियों के कारण तैरता है। ☐

iv) जीवद्रव्यी संयोजन *माइक्रोसिस्टिस* में नहीं पाए जाते हैं। ☐

(ब) निम्नलिखित में सही उत्तरों को चुनिए।

i) निम्नलिखित में से कौन सा शैवाल निवही प्रकार का होता है ?

1) *माइक्रोसिस्टिस*

2) *ऐनासिस्टिस*

3) *क्लोरेला*

4) *क्लैमाइडोमोनस*

ii) निम्नलिखित में से किसमें हेटेरोसिस्ट उपस्थित होती हैं ?

1) *माइक्रोसिस्टिस*

2) *नॉस्टॉक*

3) *वाल्वॉक्स*

4) *यूलोथ्रिक्स*

(स) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) ....एक एककोशिकीय शैवाल है।

ii) *वाल्वॉक्स* की तरुण निवहों में, निवह की कोशिकाएं.................. से जुड़ी रहती हैं।

iii) .... का निवह पानी की सतह पर तैरता है, क्योंकि वैयक्तिक कोशिकाओं में वायु की धानियाँ पाई जाती हैं।

iv) आंशिक रूप से............. परिस्थितियों में *क्लैमाइडोमोनस* की कोशिकाएं विभाजित हो जाती हैं तथा श्लेष्मीय पिंड से ढ़क जाती हैं।

3.2.4 विषमतंतुक प्रकार

जब तंतु की कुछ कोशिकाएं ऊर्ध्वाधर रूप से विभाजित होती हैं तब वह शाखित हो जाता है। बहुत सी तंतुमय प्रकारें मुख्य तंतु का बहुत अधिक शाखन दिखाती हैं जिससे कि यह झाड़ीनुमा दिखाई पड़ती हैं।

कुछ शैवालों में आधार की शाखाएं क्षैतिज रहती हैं व आधार से जुड़ी रहती हैं जिसे शयान तंत्र (prostrate system) कहते हैं जिसमें से ऊर्ध्वाधर शाखित तंतुओं का सतर तंत्र (erect system) निकलता है। इस प्रकार की काया विषमतंतुक प्रकृति कहलाती है। विषमतंतुक प्रकृति, शैवालों में सबसे अधिक विकसित तंतुमय संरचना है।

ड्रेपर्नेल्डियॉप्सिस (***Draparnaldiopsis***)

यह भी एक विषमतंतुक शैवाल है जो अपनी पादप काया में बहुत अधिक विभेदन दर्शाता है। शयान तंत्र बहुत अधिक लघुकृत होता है। मुख्य अक्ष में लंबी पर्व कोशिकाओं (**internodal cells**) के साथ एकांतरण में छोटी पर्वसंधि कोशिकाएं (**nodal cells**) पाई जाती हैं (चित्र 3.4)। छोटी पर्वसंधि कोशिकाओं पर छोटी शाखाओं का गुच्छा रहता है। कुछ पार्श्व शाखाएं लंबे रंगहीन रोम यानि सीट में विकसित हो सकती हैं। मुख्य अक्ष, आधार पर लंबे बहुकोशिकीय रंगहीन मूलाभास (**rhizoids**), एक प्रकार का वल्कुट (cortex) बनाने के लिये बहुत अधिक संख्या में उत्पन्न करता है। इनका मुख्य कार्य शैवाल को आधार से जोड़ना है।

कोलियोकीटि (***Coleochaete***)

कोलियोकीटि एक जलीय शैवाल है जो जलीय पादपों की सतह पर उगता है (चित्र 3.4 ए)। *कोलियोकीटि पल्वीनेटा* विषमतंतुक है। सतर तंत्र शाखित तंतुओं के रूप में होता है। *कोलियोकीटि स्कूटेटा* में सतर तंत्र अनुपस्थित होता है तथा शयान तंत्र छोटे लगातार शाखित तंतुओं का बना होता है जो एक सघन डिस्क बनाता है (चित्र 3.5 बी)। दोनों प्रकारों में कुछ कोशिकाएं अपनी ऊपरी सतह पर से रोम जैसे रंगहीन शूक (bristles) उत्पन्न करती हैं जिन्हें सीटी (setae) कहते हैं।

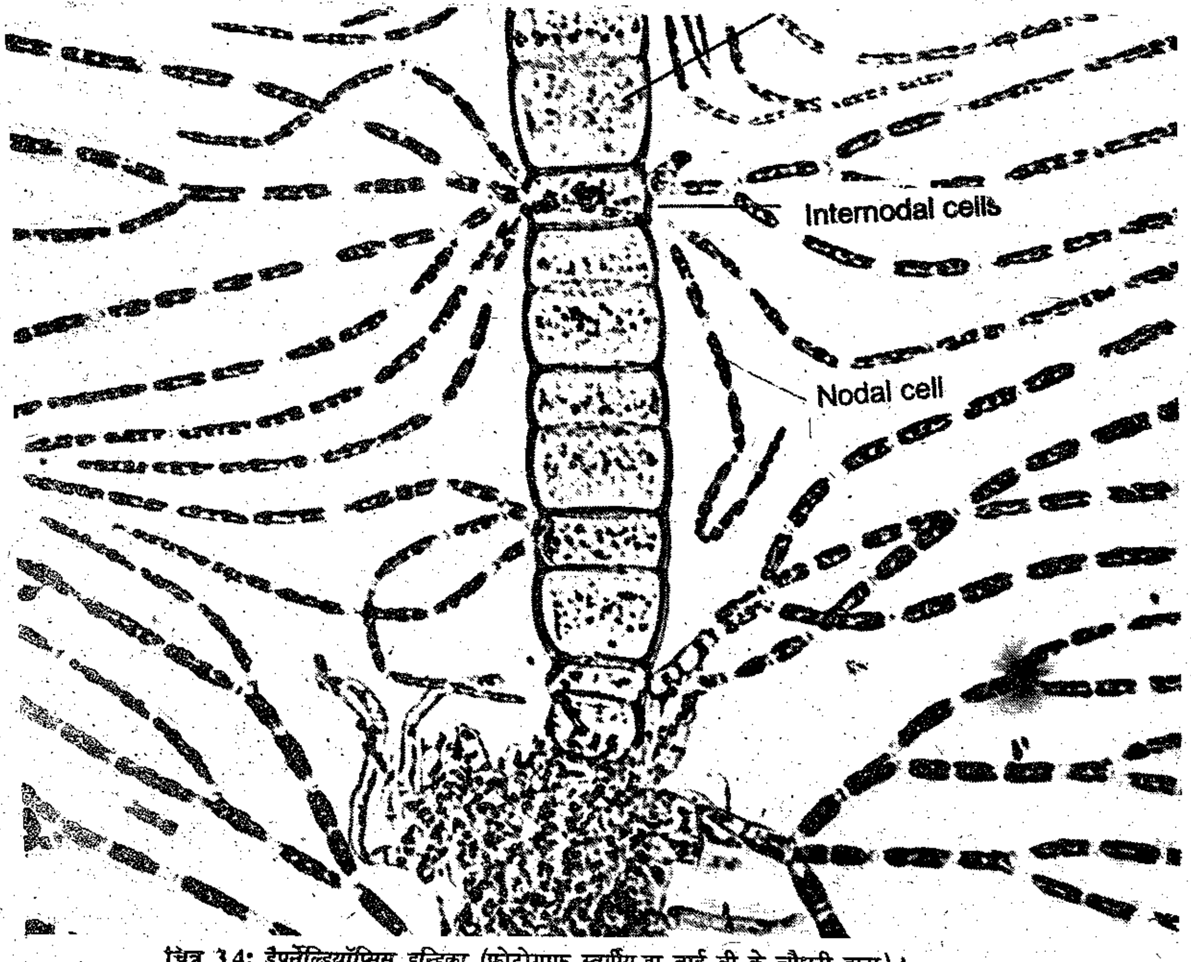

चित्र 3.4: *ड्रेपर्नेल्डियॉप्सिस इन्डिका* (फोटोग्राफ स्वर्गीय डा. वाई. बी. के. चौधरी द्वारा)।

एक्टोकार्पस (*Ectocarpus*)

एक्टोकार्पस प्रकृति में विषमतंतुक होता है (चित्र 3.5 सी)। शयान तंत्र जो पादप को आधार से जोड़ता है वह शाखित तंतुओं का बना होता है। सतर तंत्र एकपंक्तिक, शाखित तंतुओं के रूप में होता है जो

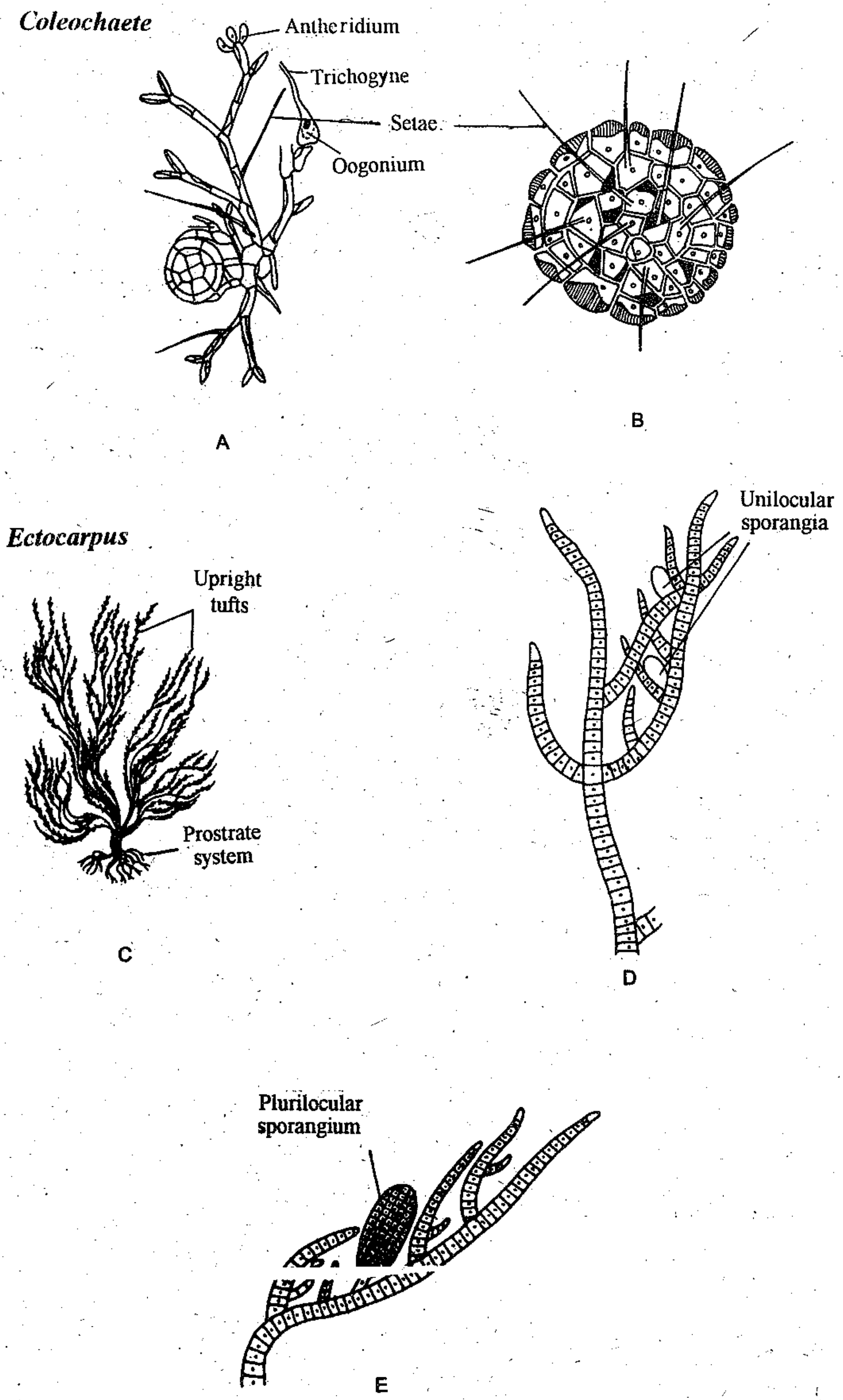

चित्र 3.5: विषमतंतु शैवाल: ए और बी) *कोलियोकीटि,* सी) *एक्टोकार्पस* का स्वरूप, डी तथा इ) थैलस एककोष्ठकीय अथवा बहुकोष्ठकी बीजाणुधानिया दर्शाते हुए।

1 मि.मी. से 10 मि.मी. अथवा अधिक के ढ़ीले गुच्छे बनाता है। एकलिंगी पादप एककोष्ठकी अथवा बहुकोष्ठकी बीजाणुधानियां (**sporangia**) लिये होता है (चित्र 3.5 डी तथा ई)।

शाखाएं मुख्य तंतु की कोशिकाओं की अनुप्रस्थ भित्तियों के ठीक नीचे से निकलती हैं। इनमें से अधिकांश शाखाएं दीर्घित रोमों में समाप्त हो जाती है।

3. .5 थैलसाभ प्रकार

जब तंतु की कोशिकाएं एक से अधिक तल में विभाजित होती हैं यानि कि सिर्फ अनुप्रस्थ रूप में ही नहीं बल्कि लंबाई में भी, तब इसके फलस्वरूप कोशिकाओं की एक पट्टी यानि शीट बनती है। थैलस एक कोशिकीय अथवा बहुकोशिकीय मोटाई का हो सकता है।

अल्वा (Ulva)

अल्वा एक बहुत ही सामान्य तौर पर समुद्र की चट्टानी तटों पर पाया जाने वाला शैवाल है (चित्र 3.6 ए)। थैलस आधार पर उपस्थित मूलाभासों द्वारा अवस्तर जैसे कि पत्थरों या चट्टानों से जुड़े रहते हैं। थैलस की पतली पट्टी काटने पर कोशिकाओं की दो परतें दिखाई देती हैं जो एकल पटि्टका बनाने के लिये एक दूसरे से चिपकी और दबी रहती हैं (चित्र 3.6 बी)।

फ्यूकस (Fucus)

फ्यूकस एक भूरा समुद्री शैवाल है जो शीतोष्ण देशों में समुद्र की चट्टानी तटों पर आमतौर पर पाया

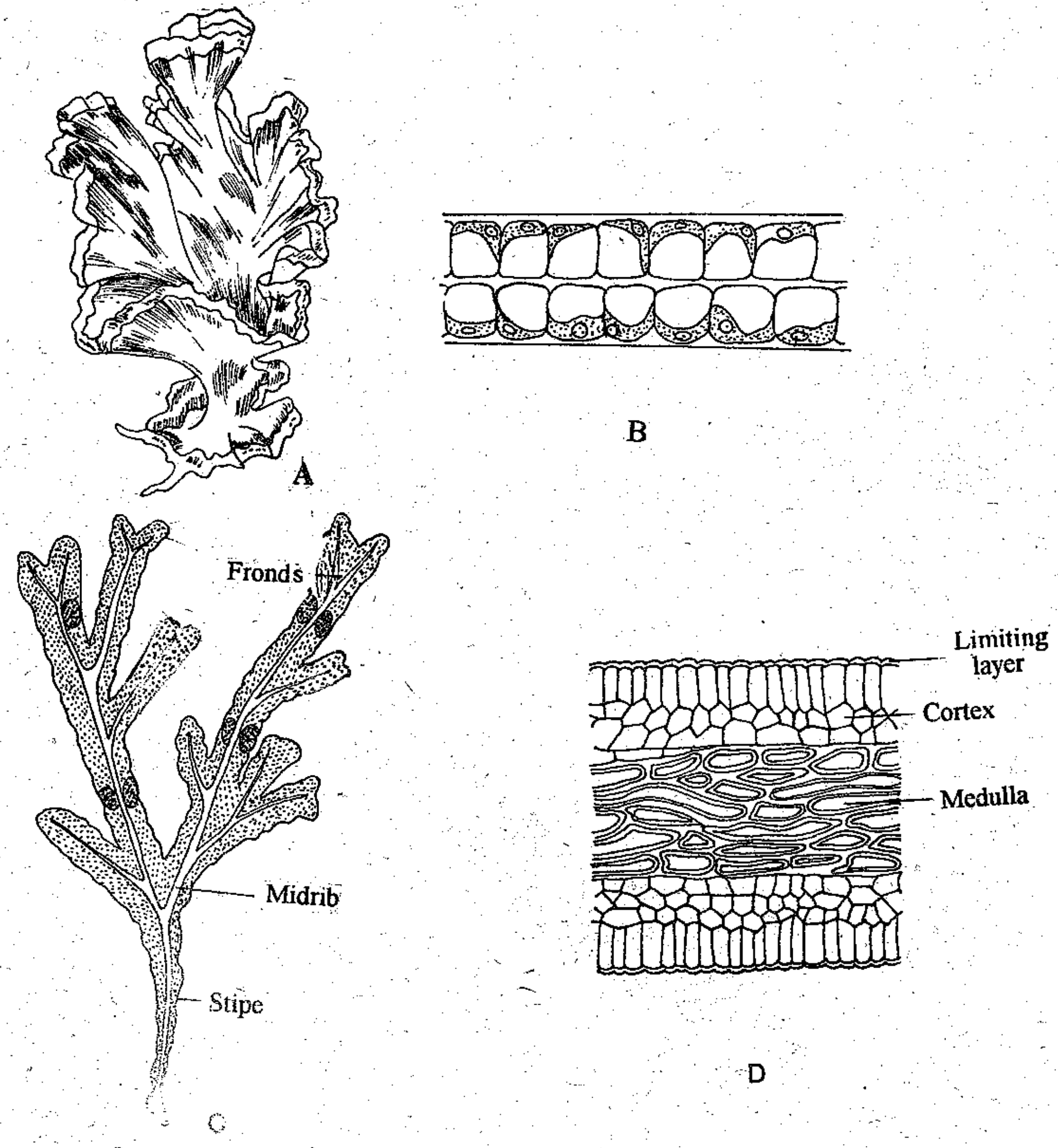

चित्र 3.6 ए) *अल्वा लैक्टयूका*: वृद्धि स्वरूप, बी) अनुप्रस्थ काट, सी) *फ्यूकस वेसीकूलोसस* के थैलस की आकारिकी, डी) एक थैलस के भाग की अनुप्रस्थ काट।

जाता है (चित्र 3.6 सी)। *फ़्यूकस* के पौधे लंबे लगभग आधा मीटर या ऐसी ही लंबाई के होते हैं। इसमें आधारीय डिस्क जैसा स्थापन अंग (holdfast), एक छोटा वृत (stipe) तथा लंबा चपटा एवं द्विशाखित रूप से शाखित प्रपर्ण (frond) या फलक (blade) होता है। फलक के शीर्ष पर वायु आशय (air bladders) पाये जाते हैं जिनके कारण पौधा जल में तैरता है।

फ़्यूकस बहुकोशिकीय है जिसकी आंतरिक संरचना जटिल है और तीन भागों में बांटी जा सकती है। सबसे बाहर की परत बाह्य त्वचा, बीच में वल्कुट (cortex) और सबसे अंदर मज्जा (medulla) होती है।

थैलस की वृद्धि, शीर्षस्थ कोशिका, जो शाखा के शीर्ष पर धंसी हुई होती है, के विभाजन द्वारा होती है। बाह्य त्वचा तथा वल्कुट की बाहरी परतों की कोशिकाओं में वर्णकीलवक (chromatophores) होते हैं जो प्रकाश संश्लेषण में हिस्सा लेते हैं। मज्जा में खाद्य पदार्थों का संग्रह होता है तथा इसकी कोशिकाएं प्रपर्ण के विभिन्न हिस्सों में खाद्य पदार्थों का संवहन करती हैं।

3.2.6 पॉलीसाइफ़नी प्रकार

पहले वर्णित शैवालों के प्रकार की तुलना में इस प्रकार के शैवालों का स्वरूप काफी जटिल होता है। इस प्रकार की आकारिकी लाल शैवाल *पॉलीसाइफ़ोनिया* में पायी जाती है जो समुद्र में पाया जाता है।

***पॉलीसाइफ़ोनिया* (*Polysiphonia*)**

सामान्यत: यह शैवाल विषमतंतुक प्रकृति दर्शाता है। शयान तंत्र सुदीर्घित मूलाभास के रूप में होता है जो शैवाल को आधार से जोड़ता है। सतर तंत्र बहुत अधिक शाखित होता है। शाखाएं दो प्रकार की होती हैं, कुछ लंबी होती हैं तथा कुछ छोटी रोम-जैसी होती हैं। मुख्य तंतु एक ही शीर्ष कोशिका के विभाजन के द्वारा वर्धित होते हैं। वयस्क पादप काया केन्द्रीय कोशिकाओं की कतार-केन्द्रीय नाल (siphon) की बनी होती हैं जो कोशिकाओं की ऊर्ध्व कतारों, 4 से 24 परिकेन्द्रीय नालों द्वारा घिरी रहती हैं।

सभी परिकेन्द्रीय कोशिकाएं एवम् केंद्रीय नाल की कोशिकाएं तथा वे स्वयं भी एक दूसरे से इसी तरीके से जुड़ी रहती हैं।

जब एक कोशिका का कोशिकाद्रव्य समीपवर्ती कोशिका के कोशिकाद्रव्य से उनकी भित्तियों के बीच में गर्त के द्वारा जुड़ा रहता है, तब इसे गर्त संयोजन (pit connection) कहते हैं।

पॉलीसाइफ़ोनिया में हालांकि सभी कोशिकाएं अलग-अलग होती हैं, परन्तु उनका कोशिकाद्रव्य गर्त संयोजनों के द्वारा जुड़ा रहता है।

नई शाखाएं केन्द्रीय नाल की कोशिकाओं से अथवा परिकेन्द्रीय कोशिकाओं से विकसित हो सकती हैं। रोमकोरक (trichoblasts) जो सरल अथवा **शाखित रोम-जैसी पार्श्व शाखाएं होती हैं** वे परिकेन्द्रीय कोशिकाओं से निकलते हैं।

प्रपर्ण- इस शब्द का प्रयोग अक्सर फर्नस् की बहुत ज्यादा विभाजित पत्तियों के लिए किया जाता है। शैवालों के बड़े फलकनुमा थैलस के लिए भी इसका प्रयोग किया जाता है।

क्रोमेटोफोर: वह लवक (plastid) जिसमें क्लोरोफिल-ए तथा और वर्णक होते हैं परंतु क्लोरोफिल-*बी* अनुपस्थित होता है। लवक जिसमें दोनों क्लोरोफिल 'ए' तथा '*बी*' होते हैं वह हरित लवक यानि क्लोरोप्लास्ट (chloroplast) कहलाता है।

द्विशाखित शाखन- शाखन का वह प्रकार जिसमें दोनों शाखिकाएं करीब-करीब समान लम्बाई की होती हैं।

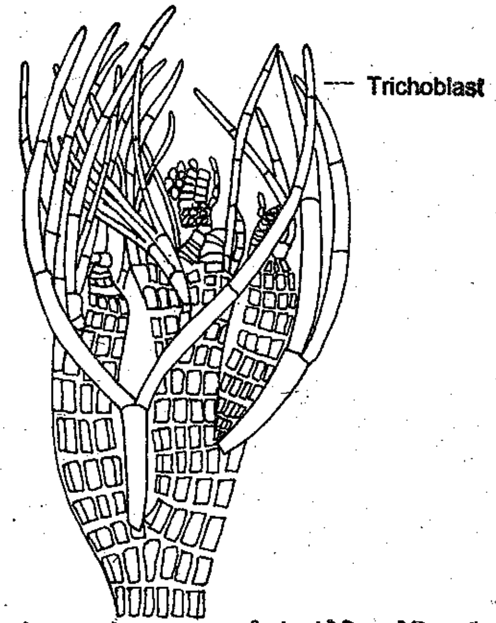

चित्र 3.7: *पॉलीसाइफ़ोनिया*: बहुकोशिकीय बनावट का स्वरूप, कई अंत:संयोजित कोशिकाओं की नालों की कतारें।

बोध प्रश्न 3.2

अ) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिये।

i) विषमतंतुक प्रकृति में शैवाल के सीधे तंतु............ तंत्र बनाते हैं।

ii) *फ़्यूकस* के थैलस की तीन परतें हैं बाह्य त्वचा, केन्द्रीय .... तथा आंतरिक................

iii) जब शैवालीय कोशिकाएं अनुदैर्ध्य तथा............ रूप से विभाजित होती हैं, तब फ़लस्वरूप कोशिकाओं की एक पट्टिका बनती है।

iv) .... के थैलस में कोशिकाओं की दो परतें एक दूसरे को दबाये हुए एक एकल पट्टिका बनाती हैं।

v) *फ़्यूकस* के प्रपर्ण तैर सकते हैं क्योंकि उनके शीर्ष में........................ उपस्थित रहते हैं।

ब) निम्नलिखित में से कौन से लक्षण *ड्रेपर्नेल्डियाप्सिस* की विशेषता हैं।

i) पर्वसंधि तथा पर्व कोशिकाओं की उपस्थिति,

ii) लघुकृत शयान तंत्र

iii) सतर तंत्र की अनुपस्थिति

iv) पट्टिका की भांति थैलस

v) बहुकोशिकीय रंगहीन मूलाभास।

स) निम्नलिखित में से कौन सा शैवाल आकारिकी में थैलसाभ है।

i) *फ़्यूकस*

ii) *एक्टोकार्पस*

iii) *कोलियोकीटि*

iv) *इडोगोनियम*

द) निम्नलिखित कथन सत्य हैं या असत्य हैं। सत्य के लिए 'स' और असत्य के लिए 'अ' कोष्ठकों में लिखें।

i) *पॉलीसाइफ़ोनिया* में सभी परिधीय कोशिकाएं केन्द्रीय नाल से जुड़ी रहती हैं। ☐

ii) *फ़्यूकस* में खाद्य पदार्थ मज्जा की अंत:कोशिकाओं में संचित होता है। ☐

iii) एकपंक्तिक तंतु *एक्टोकार्पस* की विशेषता है। ☐

iv) *कोलियोकीटि* थलीय शैवाल है। ☐

3.3 शैवालीय कोशिका की संरचना

इकाई 1 तथा 2 में आपने शैवालों की सामान्य विशेषताओं तथा विभिन्न पादप समूहों के बीच में उनके स्थान के बारे में पढ़ा। शैवाल दो सुस्पष्ट मूल प्रकारों की कोशिका संरचना दिखाते हैं। अत: उन्हें दो समूहों में बांटा जा सकता है। पूर्व केन्द्रकी तथा वास्तविक केन्द्रकी शैवाल। पूर्व केन्द्रकी में तथाकथित नील-हरित शैवाल सम्मिलित हैं जिन्हें सायनोफ़ाइसी अथवा मिक्सोफ़ाइसी समूह में रखा जाता था, परन्तु अब इन्हें सायनोबैक्टीरिया कहते हैं। प्रमुख समूह यूकैरियोटा वास्तविक केन्द्रकी है तथा कोशिका संरचना तथा आकारिकी में काफी विविध हैं, इन गुणों को वर्गीकरण के लिये उपयोग में लाया जाता है। हाल ही के वर्षों में इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी के प्रयोग से शैवालों के कोशिकीय घटकों की सूक्ष्मसंरचना से संबंधित काफी

नई जानकारियां मिली हैं। रासायनिक संयोजन तथा कार्यों के बारे में निर्धारण किसी कोशिका को तोड़ने तथा उसके कोशिकांगों को अलग-अलग करने पर होता है। इस प्रकार के अध्ययन बताते हैं कि वास्तविक केन्द्रकी शैवाल ऐसे बहुत से लक्षण दर्शाते हैं जो उच्च पादप समूहों के समान होते हैं।

नीचे दिए गये विवरण में आप पूर्व केन्द्रकी तथा वास्तविक केन्द्रकी दोनों प्रकार के शैवालों की मूलभूत विशेषताओं तथा उनमें उपस्थित विभिन्न कोशिकीय कोशिकांगों के बारे में पढ़ेंगे।

3.3.1 पूर्व केन्द्रकी शैवालीय कोशिका

आपने पढ़ा है कि सायनोबैक्टीरिया अपनी सूक्ष्मसंरचना में बैक्टीरिया से बहुत अधिक मिलते-जुलते हैं (देखिए ब्लाक 1अ, इकाई 2, सेक्शन 2.2, पृष्ठ 34)। इनके कोशिकीय घटकों के विशिष्ट लक्षण जो चित्र 3.8 ए में दिखाए गए हैं उनका वर्णन नीचे किया गया है।

कोशिका भित्ति तथा कोशिका आच्छद

सायनोबैक्टीरिया की कोशिकाएं एक श्लेषी आछच्द (gelatinous sheath) और एक सुस्पष्ट कोशिका भित्ति से घिरी रहती है जो जीवद्रव्य कला के बाहर की ओर होती है। कोशिका भित्ति को एन्ज़ाइम लाइसोज़ाइम (lysozyme) के द्वारा पचाकर हटाया जा सकता है। रासायनिक विश्लेषण से ज्ञात होता है कि यह म्यूकोपॉलिसैकेराइड (peptidoglycan) की बनी होती है, जैसे कि जीवाणुओं की कोशिका भित्ति बनी होती है। इसकी संरचना जटिल होती है, यह एन-ऐसीटिलम्यूरामिक अम्ल (N-acetylmuramic acid) तथा एन-ऐसीटिलग्लूकोसामीन (N-acetylglucosamine) के बहुलक (polymer) की बनी होती है जो कि पेप्टाइड्स तथा अन्य यौगिकों द्वारा क्रॉस बद्ध होते हैं। भित्ति, हकीकत में कम से कम चार परतें दर्शाती हैं तथा सबसे बाहर की में लिप्पो-पॉलिसैकेराइड्स तथा प्रोटीन हो सकते हैं।

बहुत से सायनोबैक्टीरिया में कोशिका भित्ति के ऊपर श्लेषी श्लेष्म (gelatinous mucilage) का आच्छद होता है। यह पतली, रंगहीन तथा तरल हो सकती है जैसे कि प्लवकी प्रकारों में पाई जाती है। भूपृष्ठीय प्रकारों में आच्छद मोटा, दृढ़ तथा रंगीन-पीला, नारंगी, भूरा एवं बहुपरती होता है, कुछ जलीय प्रकारों जैसे *साइटोनीमा (Scytonema)*, *पेटलोनीमा (Petalonema)* में भी बहुपरतीय तथा रंगीन आच्छद दिखाई पड़ सकता है।

प्लवक (Plankton) - सूक्ष्म जलीय जीव जो मुक्त रूप से तैरते हैं या सचल होते हैं प्लवक कहलाते हैं। जो प्रकाश संश्लेषण करते हैं उन्हें पादप प्लवक कहते हैं। बहुत सारे एक कोशकीय शैवाल खुले समुद्र, महासागरों तथा झीलों में तैरते हैं। ये खुले समुद्र तथा झीलों में छाए रहते हैं और प्रथम उत्पादकों के रूप में जलीय जीवों का खाना बनते हैं। इस प्रकार ये जीवन को बनाए रखने में सहायक हैं। अनुमान के अनुसार वायुमंडल की आक्सीजन का एक तिहाई हिस्सा यही जीव उत्पन्न करते हैं।

प्रकाश संश्लेषी पटलिकाएं

सायनोबैक्टीरिया में क्लोरोप्लास्ट नहीं होता है, सिर्फ वर्णकित झिल्लियां (pigmented membranes) कोशिकाओं के परिधीय क्षेत्र - क्रोमैटोप्लाज़्म (chromatoplasm) में पाई जाती हैं। इसी क्षेत्र में प्रकाश संश्लेषी पटलिकाएं (photosynthetic lamellae) अर्थात् थाइलेकॉइड्स (thylakoids) होती हैं। ये मुड़ी हुई दोहरी झिल्लियां होती हैं जिनमें प्रकाश संश्लेषी वर्णक, क्लोरोफिल-ए, व कुछ प्रकार के कैरोटिनॉइड्स धंसे रहते हैं। थाइलेकॉइड्स की सतह पर कणिकाओं (granules) की कतार पाई जाती है जिसे फ़ाइकोबिलीसोम्स (phycobilisomes) कहते हैं, इसमें फ़ाइकोसायनिन, ऐलोफ़ाइकोसायनिन तथा कभी-कभी फ़ाइकोइरिथ्रिन भी पाया जाता है जो सायनोबैक्टीरिया की विशेषता है। यह पाया गया है कि थाइलेकॉइड्स में श्वसन के लिये जरूरी एन्ज़ाइम्स भी पाये जाते हैं।

फ़ाइकोबिलिसोम्स- छोटे-छोटे फ़ाइकोबिलिन कण जो नील-हरित तथा लाल शैवाल में थाइलेकॉइड झिल्लियों पर होते हैं।

कोशिकाद्रव्य के कणिकामय अंतर्वेशन

सायनोबैक्टीरियाई कोशिकाद्रव्य की सूक्ष्म संरचना में विभिन्न आमापों की कुछ प्रकार की कणिकाएं पाई जाती हैं। थाइलेकॉइड्स के बीच में ग्लाइकोजन विभिन्न आमाप की कणिकाओं के रूप में पाया जाता है। प्रोटीन कण भी होते हैं जो सायनोफ़ाइसिन (cyanophycin) कण भी कहलाते हैं। ये दो ऐमीनो अम्लों ऐस्पार्टिक अम्ल (aspartic acid) तथा आर्जिनिन (arginine) के बहुलक होते हैं तथा नाइट्रोजन को संचित करने के लिए होते हैं। एक अन्य प्रकार के कण जो फ़ॉस्फ़ेट युक्त पानी में उगने वाले शैवालों में आमतौर पर पाया जाता है, वह पॉलीफ़ॉस्फ़ेट (polyphosphate) हैं, जो कि फ़ॉस्फ़ेट की संचित प्रकार है। कुछ शैवालों में बड़े क्रिस्टलों के रूप में पॉलीबीटाहाइड्रॉक्सीब्यूटिरेट (polybetahydroxybuty-rate) के कण भी पाये जाते हैं।

ग्लियोबैक्टर में थाइलेकॉइड अनुपस्थित होते हैं तथा प्रकाश संश्लेषणी वर्णक कोशिका झिल्ली में उपस्थित होते हैं।

हाल ही में सायनोबैक्टीरिया के गुणसूत्रों में इन्ट्रोन्स की पहचान कर ली गई है।

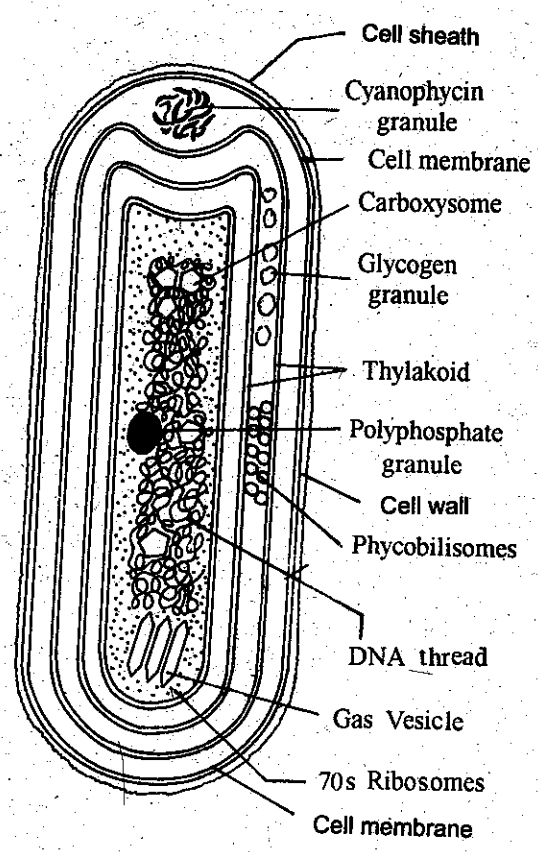

A

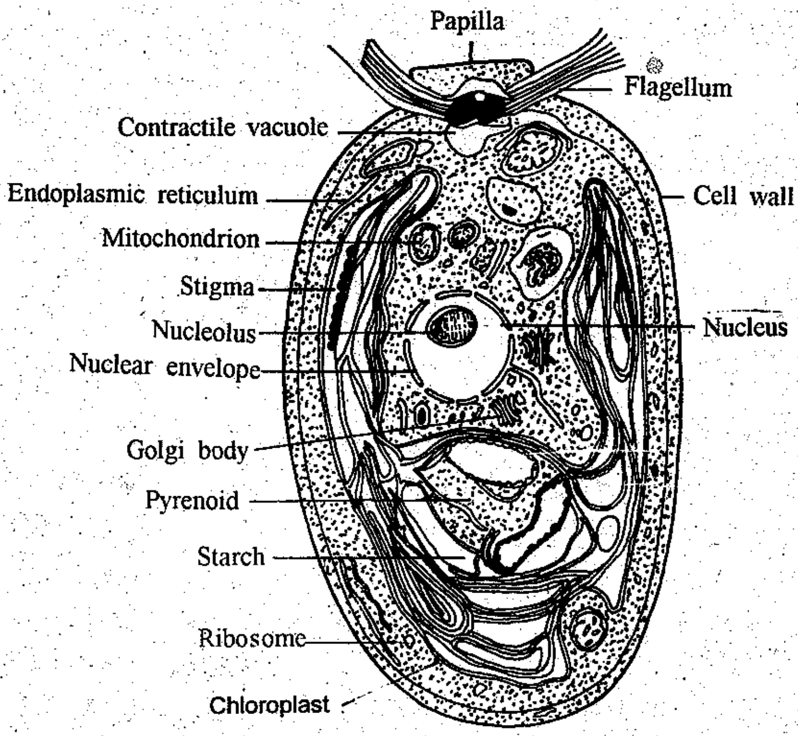

B

चित्र 3.8: ए) प्रोकेरीयोटी तथा बी) यूकैरीयोटी की परासंरचना का रेखाचित्र।

सायनोबैक्टीरिया में पाया जाने वाला एक अन्य विशेष कण बहुफलकीय क्रिस्टली पिंड (polyhedral crystalline body) है जिसे कार्बोक्सीसोम (carboxysome) कहते हैं। यह एन्ज़ाइम राइब्यूलोस-बिसफ़ॉस्फ़ेट कार्बोक्सीलेज़ (रूबिस्को Rubisco) का बना होता है जिसकी प्रकाश संश्लेषी कार्बन-डाइऑक्साइड के यौगिकीकरण में आवश्यकता होती है। अन्य सभी जीवाणु कोशिकाओं की भांति ही, सायनोबैक्टीरिया की कोशिकाओं में भी कोशिकाद्रव्य में बिखरे हुए राइबोसोम पाये जाते हैं जो प्रोटीन संश्लेषण के लिये आवश्यक है। सभी पूर्व केन्द्रकी राइबोसोम 70S प्रकार के होते हैं इसके विपरीत वास्तविक केन्द्रकी कोशिकाओं में 80S प्रकार के राइबोसोम पाये जाते हैं।

वायु धानियाँ

बहुत से प्लवकी सायनोबैक्टीरिया जैसे *माइक्रोसिस्टिस* अपनी कोशिकाओं में सुदीर्घित, बेलनाकार धानियां एकल रूप में अथवा बंडलों में लिये रहते हैं, जिन्हें वायु धानियां (vacuole) कहते हैं। इन धानियों के कारण कोशिकाएं पानी की सतह पर तैर पाती हैं। जब वायु निकल जाती है तब ये निपाती (collapse) होकर चपटी बन जाती हैं, तथा कोशिकाएं नितल में डूब जाती हैं। धानी की भित्ति प्रोटीन अणुओं की एकल परत की बनी होती हैं तथा गैसों के लिये पारगम्य होती हैं परन्तु जल के लिये नहीं होती हैं।

केन्द्रक द्रव्य

कोशिका का मध्य भाग आमतौर पर केन्द्रक द्रव्य कहलाता है। इसमें आनुवंशिक द्रव्य, डीराइबोन्यूक्लीक अम्ल (DNA) पाया जाता है जो कि वास्तविक केन्द्रकी जीवों के केन्द्रक में उपस्थित DNA के समान ही होता है। यह तंतुकों के जाल जैसा दिखाई पड़ता है तथा जीवाणुओं के आनुवंशिक द्रव्य की तरह वलय के आकार में एक लंबा धागा होता है जिसे आमतौर पर गोलाकार गुणसूत्र (circular chromosome) कहते हैं। एक कोशिका में इसकी कई प्रतिलिपियां पाई जाती हैं। हिस्टोन प्रोटीन जो वास्तविक केन्द्रकी कोशिकाओं में उपस्थित होते हैं सायनोबैक्टीरिया के DNA में नहीं पाये जाते।

प्लैज़्मिड

जीवाणुओं की भांति ही सायनोबैक्टीरिया की कोशिकाओं में DNA भी छोटे सहसंयोजी रूप से बन्धे हुए गोलाकार अणुओं के रूप में पाया जाता है जिन्हें प्लैज़्मिड कहते हैं। इनमें जीन्स पाये जाते हैं जो जीव को प्रतिजैविकों (antibiotics) के लिये प्रतिरोधी (resistant) बनाते हैं। प्लैज्मिड कोशिकाओं में स्थाई रूप से नहीं पाये जाते हैं, वे समाप्त भी हो सकते हैं तथा बाद में पुन: प्राप्त किए जा सकते हैं, वे परपोषी कोशिकाओं के भीतर वृद्धि भी कर सकते हैं।

सायनोबैक्टीरिया की विशिष्ट कोशिकाएं

जैसा कि आप पहले पढ़ चुके है कि सामान्य कायिक कोशिकाओं के अतिरिक्त, तंतुमय सायनोबैक्टीरिया में दो अन्य प्रकार की संरचनाएं भी पाई जाती हैं, हेटेरोसिस्ट तथा निश्चेष्ट बीजाणु (akinetes)।

हेटेरोसिस्ट

ये तंतुमय सायनोबैक्टीरिया में पाई जाने वाली मोटी भित्ति की कोशिकाएं हैं जो या तो कायिक कोशिकाओं अंतर्विष्ट (intercalary) होती हैं अथवा तंतु के सिरों पर यानि अंतस्थ (terminal) होती हैं। हेटेरोसिस्ट का सबसे महत्वपूर्ण कार्य वातावरणीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करना है। इनमें आवश्यक एन्ज़ाइम तंत्र नाइट्रोजिनेज़ पाया जाता है।

हेटेरोसिस्ट की संरचना

चित्र 3.9 में हेटेरोसिस्ट की संरचना ध्यानपूर्वक देखें। कायिक कोशिकाओं के विपरीत, हेटेरोसिस्ट में तीन परतों वाली मोटी भित्ति होती है ये परतें संरचनात्मक रूप से भिन्न होती हैं। सबसे भीतरी परत में कुछ ग्लाइकोलिपिड पाये जाते हैं जो हेटेरोसिस्ट को ऑक्सीजन के लिये अपारगम्य बनाते हैं, अन्यथा ऑक्सीजन नाइट्रोजिनेज के साथ क्रिया करके नाइट्रोजन यौगिकीकरण को रोकती है।

हेटेरोसिस्ट्स अपने बगल वाली कोशिकाओं से बारीक जीवद्रव्यी रज्जुकों (protoplasmic strands)-

कायिक कोशिकाएं हेटेरोसिस्ट का निर्माण करती हैं जब वे कम घुलनशील नाइट्रोजन वाले वातावरण में होती हैं। हेटेरोसिस्ट बनाने वाले सायनोबैक्टीरिया
ऐनाबीना *(Anabaena)*
नॉस्टॉक *(Nostoc)*
कैलोथ्रिक्स *(Calothrix)*
ग्लिओट्राइकिया *(Gleotrichia)*
साइटोनीमा *(Scytonema)*
टॉलिपोथ्रिक्स *(Tolypothrix)*
स्टाइगोनीमा *(Stigonema)*

प्लैज़्मोडेस्मेटा, के द्वारा जुड़े रहते हैं, ध्रुवों पर बड़े चमकदार कणों - ध्रुवीय कणों – के द्वारा भी जुड़े रहते हैं जो सायनोफ़ाइसिन के बने होते हैं।

हेटेरोसिस्ट्स के जीवद्रव्य में बहुत सी प्रकाशसंश्लेषी पट्टलिकाएं भी पाई जाती हैं, परन्तु ये कायिक कोशिका की अपेक्षा कम सघन होती हैं। पटलिकाओं में क्लोरोफिल ए तथा कैरोटिनॉइड्स भी पाये जाते हैं। हालांकि, जब कायिक कोशिका हेटेरोसिस्ट में परिवर्तित होती हैं तब फ़ाइकोसायनिन समाप्त हो जाता है। अतः वयस्क हेटेरोसिस्ट्स कार्बन-डाइऑक्साइड का यौगिकीकरण नहीं कर पाती हैं अतः प्रकाश की उपस्थिति में ऑक्सीजन निर्मुक्त नहीं होती है। पॉलीफ़ॉस्फेट कणिकाएं, ग्लाइकोजन, वायु धानियां तथा कार्बोक्सीसोम हैटेरोसिस्ट्स के कोशिकाद्रव्य में पूर्णतः अनुपस्थित होते हैं।

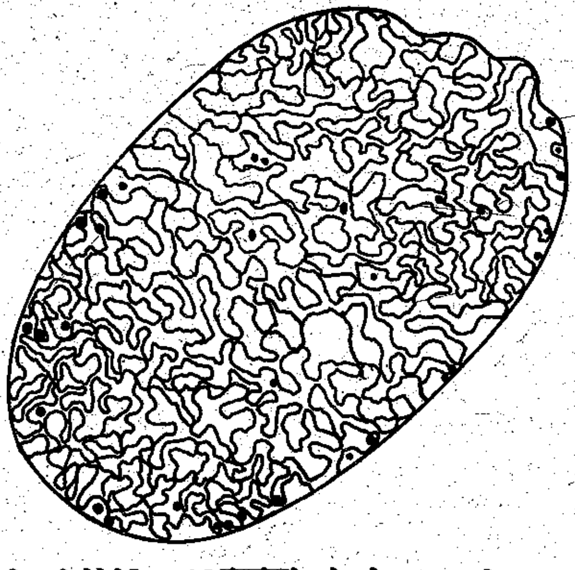

चित्र 3.9: *ऐनाबीना* की हेटेरोसिस्ट (जी.बी. चेपमैन के इलेक्ट्रान माइक्रोग्राफ पर आधारित)।

निश्चेष्ट बीजाणु

निश्चेष्ट बीजाणु (**akinetes**) मोटी भित्ति की कोशिकाएं हैं जिन्हें स्पोर्स भी कहते हैं, जो चिरकालिकता के लिये बनती हैं। तंतु की सभी कायिक कोशिकाएं अथवा सिर्फ कुछ कोशिकाएं जैसे कि हेटेरोसिस्ट्स के आसपास की कोशिकाएं बीजाणुओं में विकसित हो सकती हैं।

निश्चेष्ट बीजाणुओं में मोटी भित्तियां होती हैं, सामान्यतः ये हल्के भूरे, गहरे भूरे अथवा काले रंग की होती हैं। कोशिका के भीतर अंतर्वस्तुएं (**contents**) काफी कणिकामय व ग्लाइकोजनयुक्त होते हैं परन्तु पॉलीफ़ॉस्फ़ेट अनुपस्थित होता है।

निश्चेष्ट बीजाणु सुदीर्घ सूखे को झेल लेते हैं तथा अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित होकर नये तंतु को जन्म देते हैं।

बोध प्रश्न 3.3

अ) सायनोबैक्टीरिया के कोशिकाद्रव्य में पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के अंतर्वेशनों (**inclusions**) का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

ब) निम्नलिखित वक्तव्यों में कोष्ठकों में दिये गये शब्दों में से सही विकल्प को चुनिये।

i) सायनोबैक्टीरिया के हेटेरोसिस्ट्स (कार्बन-डाइऑक्साइड/नाइट्रोजन) का यौगिकीकरण करते हैं।

ii) सायनोबैक्टीरिया के केन्द्रक द्रव्य में (गोलाकार DNA/गुणसूत्र) पाया जाता है।

iii) सायनोबैक्टीरिया में कोशिकाभित्ति के बाहर श्लेषी आच्छद (उपस्थित/अनुपस्थित) होता है।

iv) नील-हरित शैवालों में राइबोसोम (70 S / 80 S) प्रकार के होते हैं।

स) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिये।

i) सायनोबैक्टीरिया की कोशिका भित्ति जीवाणुओं की कोशिका भित्ति की भांति ही..................... की बनी होती है।

ii) प्रकाश संश्लेषी पटलिका की सतह पर उपस्थित वर्णक लिये हुए कण .... कहलाते हैं।

iv) हेटेरोसिस्ट की सबसे भीतरी परत ऑक्सीजन के लिये अपारगम्य होती है क्योंकि इसमें कुछ विशेष .... पाये जाते हैं।

v) सायनोबैक्टीरिया में कोशिकाद्रव्य का वह भाग जहां वर्णकित पटलिकाएं पाई जाती हैं वह .... कहलाता है।

3.3.2 वास्तविक केन्द्रकी शैवालीय कोशिका

वास्तविक केन्द्रकी शैवालों के कुछ प्रभाग हैं जिनमें से प्रत्येक की अपनी निजी कोशिका संरचना तथा अन्य विशिष्ट गुण हैं। हालांकि, मूलभूत गुण जो चित्र 3.8 बी में दर्शाये गये हैं सभी समूहों में सामान्यत: पाये जाते हैं। जैसे कि झिल्ली बद्ध केन्द्रक (nucleus) की उपस्थिति, गुणसूत्र (chromosomes), प्लैस्टिड्स (plastids) माइटोकॉन्ड्रिया (mitochondria), गॉल्जी काय (golgi body) तथा 80S राइबोसोम। समसूत्री विभाजन (mitosis) के द्वारा कोशिका विभाजन के साथ ही साथ बहुत से समूहों में लैंगिक प्रकार का प्रजनन (sexual reproduction) भी दिखाई पड़ता है जिसमें युग्मकों का संगलन (gametic fusion) तथा अर्धसूत्री विभाजन (meiosis) शामिल है। निम्नलिखित अध्ययन विभिन्न समूहों की शैवालीय कोशिकाओं के प्रमुख लक्षणों का विवरण देता है।

कोशिका भित्ति

शैवालीय कोशिका भित्ति मुख्यत: सेलुलोज़ की बनी होती है। अन्य अतिरिक्त यौगिक इसमें विकास के दौरान जुड़ सकते हैं। भूरे शैवालों में हेमीसेलुलोज़, ऐल्जिनिक अम्ल, फ़्यूसिन व फ़्यूकॉइडिन भी उपस्थित रहते हैं। डायटम्स में भित्ति द्रव्य मुख्यत: सिलिका होता है।

क्राइसोफ़ाइटा की कोशिकाओं में वास्तविक कोशिका भित्ति नहीं होती है। वे सिलिका के शल्कों से आच्छादित रहते हैं, जैसा कि *मेलोमोनस* (*Mellomonas*) में। कोकोलिथोफ़ोराइड्स में विस्तृत शल्क कैल्शियम कार्बोनेट (कैल्साइट) के होते हैं। लाल शैवालों की कोशिका भित्ति में सेलुलोस तथा पेक्टिन के अतिरिक्त कार्बोहाइड्रेट्स के पॉलीसल्फ़ेट एस्टर्स भी पाये जाते हैं।

कैल्शियम कार्बोनेट के निक्षेप विभिन्न समूहों की समुद्री शैवालों की सतह पर पाये जाते हैं, जिन्हें कैल्शियमी शैवाल कहते हैं। उदाहरण के लिये *निओमेरिस* (*Neomeris*), *यूडोशिया* (*Udotia*), हरित शैवाल, *कोरेलाइना* (*Corallina*) – लाल शैवाल, *पैडाइना* (*Padina*) – भूरा शैवाल तथा ताज़े पानी वाला हरा शैवाल *कैरा* (*Chara*)।

कोकोलिथोफ़ोराइड्स- वह जीव जो कोकोलीथस धारण करते हैं। कोकोलिथ मुख्यत: सुनहरी-भूरे शैवालों से सम्बंधित समुद्री एक कोशिकीय जीवों में उपस्थित कैल्शियम के शल्क होते हैं।

प्रवालीय शैवाल- लाल शैवालों का समूह जो अपनी कोशिकाओं के चारों ओर कैल्शियम कार्बोनेट स्त्रावित करते हैं और कठोर थैलस बनाते हैं। प्रवालीय शैवाल उष्ण कटिबंधीय जल में कोरल रीफ बनाने में महत्वपूर्ण हैं, यह इस धारणा के विपरीत है कि कोरल जीव अकेले ही कोरल रीफ बनाते हैं।

प्लैस्टिड्स

सभी प्रकाशसंश्लेषी शैवालों में प्लैस्टिड-क्लोरोप्लास्ट पाया जाता है जिसकी मूलभूत संरचना उच्च पादपों के क्लोरोप्लास्ट के समान होती है। क्लोरोप्लास्ट का आकार तथा स्थिति शैवालों में एक जाति से दूसरी जाति में भिन्न होती है।

जब ये कोशिका के केन्द्र में स्थित होते हैं, तब वे स्तंभीय (axile) कहलाते हैं, और जब परिधि के निकट स्थित होते हैं तब वे भित्तीय (parietal) कहलाते हैं। उनकी संख्या भी एक से लेकर अनेक तक हो सकती हैं, परन्तु एक जाति में निश्चित संख्या होती है। सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखने पर, क्लोरोप्लास्ट के निम्नलिखित आकारों को आसानी से पहचाना जा सकता है: प्यालेनुमा (cup-shaped) *क्लैमाइडोमोनस* में, मेखलानुमा (girdle shaped) *यूलोथ्रिक्स* में, सर्पिल पट्टिका (spiral band) *स्पाइरोगाइरा* (*spirogyra*) में, तथा ताराकार (stellate) यानि सितारेनुमा *जिग्नीमा* (*zygnema*) में। इन्हें नीचे दिये गये चित्र 3.10 में दिखाया गया है।

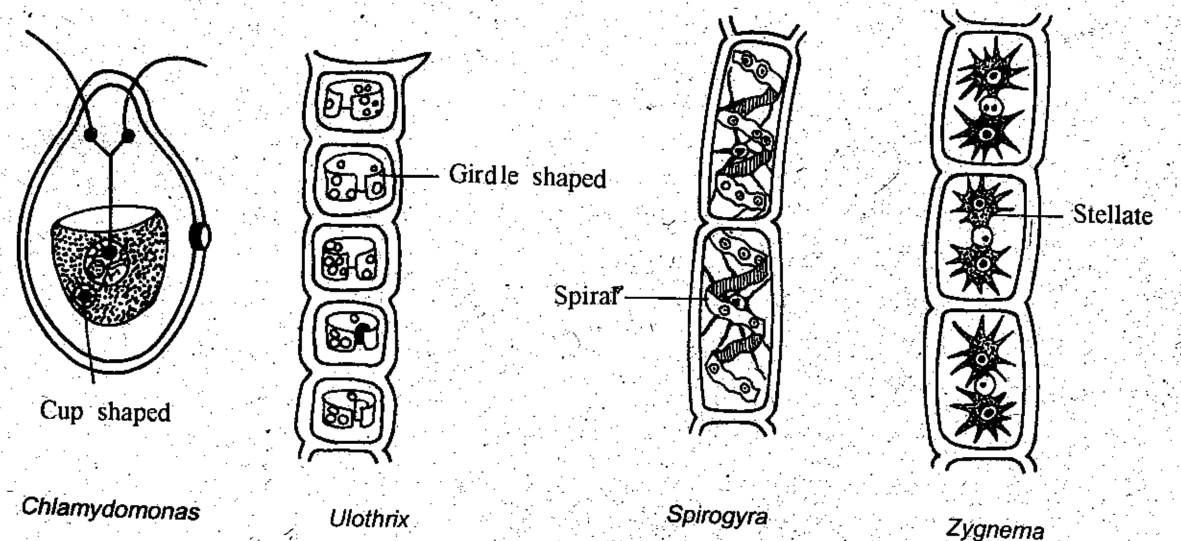

चित्र 3.10: शैवालों में क्लोरोप्लास्ट के विभिन्न आकार।

परासूक्ष्मसंरचना

शैवालीय क्लोरोप्लास्ट की परासूक्ष्मसंरचना उच्च पादपों के समान होती हैं। यह दोहरी झिल्ली के द्वारा घिरा रहता है। बहुत सारी थाइलेकॉइड पटलिकाएं मैट्रिक्स यानि पीठिका (stroma) में बिखरी रहती हैं। पटलिकाएं लिपोप्रोटीन सम्मिश्रों की बनी होती हैं जो क्लोरोफिल तथा कैरोटिनॉइड के अणुओं के साथ अंतप्रकीर्ण (interspersed) रहती हैं। जब फाइकोबिलिन उपस्थित होते हैं जैसे कि लाल शैवालों में, तब वे कणिकाओं के रूप में उपस्थित रहते हैं जिन्हें फाइकोबिलीसोम्स कहते हैं, जो कि झिल्ली की सतह पर रेखीय कतारों में जुड़े रहते हैं (चित्र 3.11)। क्लोरोप्लास्ट की पीठिका में कुछ एन्ज़ाइम्स पाये जाते हैं जो प्रकाश संश्लेषी कार्बन यौगिकीकरण से जुड़े होते हैं।

क्लोरोप्लास्ट में थाइलेकॉइड्स का विन्यास विभिन्न शैवालों में बदलता रहता है। वे बहुत पास-पास गठ्ठर के रूप में ग्रेना (grana) बनाने के लिये एकत्रित हो सकते हैं, जैसे कि हरित व भूरे शैवालों तथा यूग्लीनोफाइट्स में। लाल शैवालों में वे एक दूसरे से काफी अलग-अलग रहते हैं (चित्र 2.6 इकाई 2, पृ. 43 देखिए)।

क्लोरोप्लास्टों का एक प्रमुख गुण गोलाकार अथवा छल्ले जैसे DNA की उपस्थिति है। *यूग्लीना, ऐसीटेबुलेरिया, क्लैमाइडोमोनस*, डायटम्स, व क्राइसोफाइसी, जैन्थोफाइसी, फियोफाइसी के सभी सदस्यों में गोलाकार DNA पाया जाता है। क्लोरोप्लास्ट नये प्लैस्टिडों को साधारण विभाजन के द्वारा जन्म देते हैं।

क्लोरोप्लास्ट में 70S प्रकार के राइबोसोम पाये जाते हैं ना कि 80S प्रकार के, जो कि कोशिकाद्रव्य में पाये जाते हैं। उनमें प्रोटीन संश्लेषण के लिये भी पूर्ण व्यवस्था पाई जाती है। 70S प्रकार के राइबोसोम पूर्व केन्द्रकी जीवों, जैसे सायनोबैक्टीरिया की विशेषता है तथा इसी तथ्य के कारण यह माना जाता है कि वास्तविक केन्द्रकी जीवों के क्लोरोप्लास्ट कभी मुक्त रूप से रहने वाले सायनोबैक्टीरिया थे तथा विकास के क्रम में वे अंत:सहजीवी बन गए।

पाइरीनॉइड्स

बहुत से हरित शैवालों के प्लैस्टिड्स में विशिष्ट प्रोटीन युक्त कणिकाएं होती हैं जिन्हें पाइरीनॉइड्स (pyrenoids) कहते हैं जिनके चारों ओर स्टार्च का निक्षेप होता है। बहुत सी बार प्रकाश संश्लेषी थाइलेकॉइड्स को पाइरीनॉइड की पीठिका (matrix) में से गुजरते हुए या फिर कम से कम उससे बहुत नजदीकी से जुड़े हुए देखा जा सकता है। जब क्लोरोप्लास्ट विभाजित होता है, तब पाइरीनॉइड भी नए पाइरीनॉइड्स को जन्म देने के लिये विभाजित हो जाते हैं।

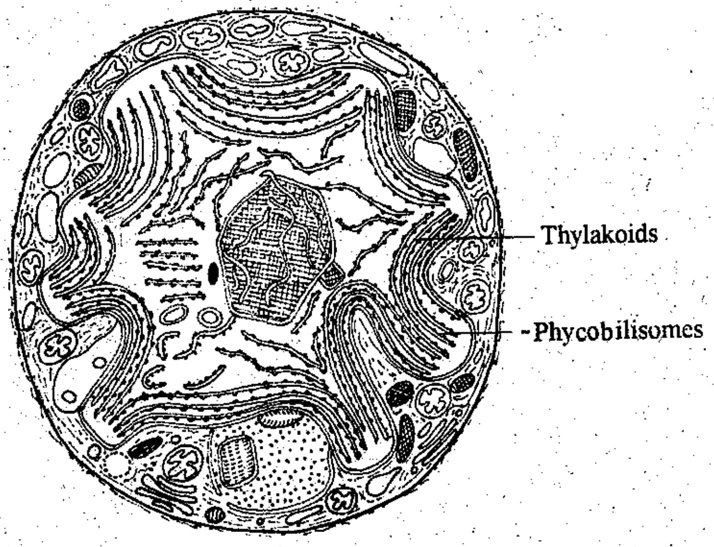

चित्र 3.11: लाल शैवाल *पॉरफिरिडियम* के क्लोरोप्लास्ट।

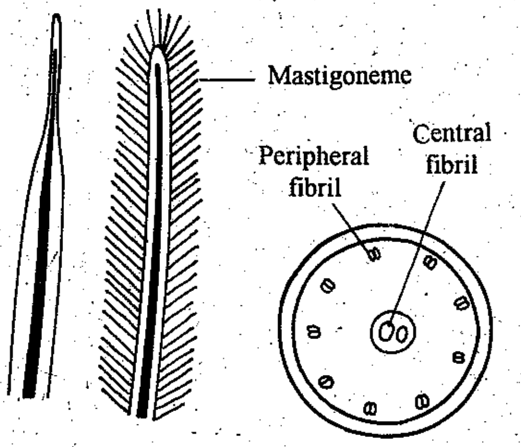

चित्र 3.12: *क्लैमाइडोमोनस* के पाइरीनॉइड (इलेक्ट्रान माइक्रोग्राफ का रेखाचित्र)।

केन्द्रक

बहुत से शैवालों में प्रति कोशिका में एक केन्द्रक पाया जाता है। हालांकि, हरित शैवाल जैसे *क्लेडोफोरा, कौलर्पा, वौकैरिया* (ज़ैन्थोफाइसी) में एक से अधिक केन्द्रक (बहुकेन्द्रकी) होते हैं।

वास्तविक केन्द्रकी पादप तथा जंतु की भांति ही, शैवालीय केन्द्रक भी स्पष्ट दोहरी झिल्ली द्वारा ढके रहते हैं जिसमें छिद्र पाये जाते हैं। समसूत्री विभाजन की अन्तरावस्था (interphase) के दौरान (जब विभाजन न हो रहा हो, विश्रामी केन्द्रक) केन्द्रक में अकुंडलित, महीन क्रोमेटिन तंतु दिखाई पड़ते हैं। जैसा कि आप जानते हैं क्रोमेटिन DNA, हिस्टोन तथा अ-हिस्टोन प्रोटीन का एक सम्मिश्र है। कोशिका विभाजन के दौरान, यह गुणसूत्रों को बनाने के लिये संघनित हो जाता है।

बहुत से शैवालीय केन्द्रकों में गोलाकार केन्द्रिक (nucleolus) पाये जाते हैं, जिनकी संख्या एक अथवा अधिक होती है, कभी-कभी ये गुणसूत्र के विशिष्ट क्षेत्र केन्द्रिक संघटक (nucleolar organizer) से जुड़े रहते हैं। कोशिका विभाजन के दौरान केन्द्रिक विलुप्त भी हो सकता है परन्तु अन्तरावस्था के दौरान पुन: प्रकट हो जाता है। यह अब ज्ञात है कि केन्द्रिक कोशिकाद्रव्यी राइबोसोम के संश्लेषण में भाग लेता है।

शैवालीय समूहों यूग्लीनोफाइटा तथा डाइनोफाइटा में केन्द्रक की संरचना काफी विशिष्ट है तथा अन्य सभी वास्तविक केन्द्रकी शैवालों से भिन्न है। अन्तरावस्था के दौरान, केन्द्रक अपनी झिल्ली के भीतर अकुंडलित क्रोमेटिन तंतुओं की बजाय काफी संघनित गुणसूत्र दिखाता है। इसके अलावा अन्य जीवों की भांति इनमें हिस्टोन प्रोटीन भी नहीं पाये जाते हैं।

शैवाल के प्रत्येक वंश अथवा जाति में उपस्थित गुणसूत्रों की संख्या का उसके वर्गीकृत स्थान से कोई संबन्ध नहीं होता है। सबसे छोटी संख्या जो अब तक रिकॉर्ड की गई है वह एन = 2 ($n = 2$) है तथा सबसे अधिक एन = 600 अथवा अधिक है। वैयक्तिक गुणसूत्रों का आमाप भी अलग-अलग होता है। *इडोगोनियम, क्लेडोफोरा* तथा *कैरा* में बहुत बड़े गुणसूत्र पाये जाते हैं।

वास्तविक केन्द्रकी कोशिकाओं के अन्य कोशिकांग

माइटोकॉन्ड्रिया: शैवालीय कोशिकाओं में माइटोकॉन्ड्रिया की संख्या एक (जैसा कि कुछ फ़्लैजेलेट्स में) से लेकर अन्य शैवालों में अनेक तक हो सकती है। उनके आमाप तथा आकार में भी काफी भिन्नता होती है। सूक्ष्मसंरचना में माइटोकॉण्ड्रिया में दोहरी झिल्ली दिखाई पड़ती है, भीतर वाली अन्दर की ओर मुड़ी रहकर क्रिस्टी बनाये रहती है जो अवकाशिका (lumen) में निकली रहती है। नये माइटोकॉन्ड्रिया बहुत कुछ प्लैस्टिड्स की ही तरह, पैतृक कोशिका में उपस्थित माइटोकॉन्ड्रिया के विभाजन द्वारा उत्पन्न होते हैं। यह माना जाता है कि माइटोकॉन्ड्रिया की उत्पत्ति अंत:सहजीवी जीवाणु से हुई है जो पूर्वजी वास्तविक केन्द्रकी कोशिकाओं के भीतर अन्तराकोशिकीय जीवन यापन के लिये अनुकूलित हो गये हैं। क्लोरोप्लास्ट की भांति ही, उनमें भी गोलाकार DNA, RNA (राइबोन्यूक्लीक अम्ल), 70 S राइबोसोम तथा प्रोटीन संश्लेषण के लिये मशीनरी पाई जाती है।

गॉल्जी काय : इन्हें डिक्टियोसोम (dictyosome) भी कहते हैं तथा ये काफी शैवालीय कोशिकाओं में पाई जाती हैं। ये 2-20 पटलिकाओं अथवा झिल्लियों के तहों के रूप में व्यवस्थित होने से बनती हैं। ये कोशिका भित्ति के द्रव्य के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं जैसा कि लाल शैवालों में होता है। बहुत से शैवालों में ये स्त्रावी (secretion) कार्य से जुड़ी होती हैं।

कशाभ : कशाभ (flagella) शैवालों की कोशिकाओं के लिये चालन का एक साधन हैं जो रोडोफाइटा के अतिरिक्त सभी प्रभागों में पाये जाते हैं। शैवाल स्वयं भी सचल हो सकता है (जैसे कि एककोशिकीय तथा निवही शैवाल) अथवा अपने जीवन चक्र की किसी अवस्था में वह प्रजननीय चालक कोशिकाएं-जूस्पोर (zoospores) तथा युग्मकों (gametes) उत्पन्न कर सकता है।

शैवाल के कशाभ अपनी संख्या, लंबाई, कोशिकांगों तथा कोशिका में निवेशन (insertion) के स्थान में भिन्न होते हैं। कशाभ की सतह चिकनी हो सकती है ऐसे कशाभों को अग्रसूत्री (acrenomatic) कहते हैं। उसमें एक अथवा अधिक पार्श्व रोम हो सकते हैं। जब दो कशाभ पाये जाते हैं तब वे समान लंबाई के भी हो सकते हैं (समकशाभिक – isokonton) अथवा एक कशाभ दूसरे से छोटा हो सकता है (असमकशाभिक – heterokonton) ।

कशाभ की सूक्ष्मसंरचना दिखाती है कि यह सूक्ष्मनलिकाओं का बना होता है, दो नलिकाएं केन्द्र में होती

हैं जो एक घेरे में नौ जोड़ो (9 + 2), से घिरी रहती हैं, सभी एक झिल्ली के द्वारा आच्छादित रहती हैं। कशाभ की सतह आमतौर पर चिकनी होती है अथवा विशिष्ट रोमों द्वारा ढकी रहती है जिन्हें पार्श्व सूत्र (mastigonemes) कहते हैं। कुछ हरित् शैवाल तथा फियोफ़ाइटा, क्राइसोफ़ाइटा व डाइनोफ़ाइटा में दो कशाभ दिखाई पड़ते हैं, एक चिकनी सतह वाला तथा दूसरा बारीक रोमों वाला होता है।

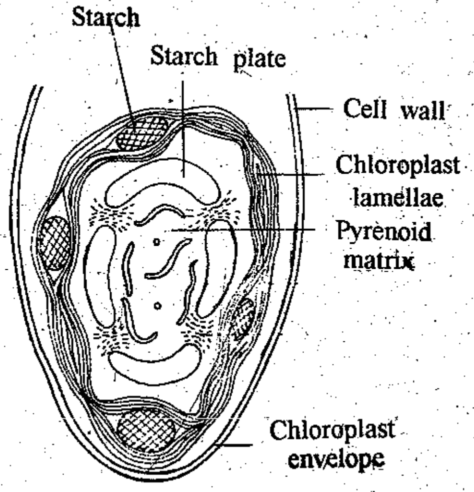

चित्र 3.13: शैवाल कशाभ की बारीक संरचना।

नेत्रबिन्दु: क्लोरोफ़ाइटा, फियोफ़ाइटा, यूग्लीनोफ़ाइटा व क्राइसोफ़ाइटा के शैवालों की चल कोशिकाओं में नारंगी-लाल रंग के नेत्रबिन्दु पाये जाते हैं। कुछ शैवालों में नेत्रबिन्दु क्लोरोप्लास्ट का भाग भी बनाते हैं तथा यह कशाभ के आधार पर पाया जाता है परन्तु *यूग्लीना* में ये काफी सुस्पष्ट तथा प्लैस्टिड से दूर होता है।

सामान्य प्रकार का नेत्रबिन्दु, हरित शैवालों में उदाहरण के तौर पर *क्लैमाइडोमोनस* में पाया जाता है। सूक्ष्मसंरचना में, नारंगी रंग के लिपिड कणों की कतारें थाइलेकॉइड के भाग के रूप में क्लोरोप्लास्ट के अग्र भाग में दिखाई पड़ती है। कणों में कैरोटिनॉइड्स पाये जाते हैं, जिनमें βकैरोटिन सबसे प्रमुख होता है।

बोध प्रश्न 3.4

अ) कॉलम 1 में दिये गये शैवालों को कॉलम 2 में दिये गए क्लोरोप्लास्ट के आकार से मिलाइये।

कॉलम 1	कॉलम 2
i) *क्लैमाइडोमोनस*	क) ताराकार
ii) *यूलोथ्रिक्स*	ख) सर्पिल पट्टिका
iii) *ज़िग्नीमा*	ग) प्याले के आकार का
iv) *स्पाइरोगाइरा*	घ) मेखला के आकार का

ब) सही वक्तव्यों को चुनिये तथा दिये गए बॉक्सों में चिन्हित कीजिये

i) लाल शैवालों में थाइलेकॉइड ग्रेना बनाने के लिये पास-पास तहों के रूप में रहते हैं। ☐

ii) उच्चपादपों के विपरीत, शैवालों के क्लोरोप्लास्ट तथा माइटोकॉन्ड्रिया में गोलाकार DNA तथा 70S प्रकार के राइबोसोम नहीं पाये जाते हैं। ☐

iii) हरित शैवालों के क्लोरोप्लास्ट में पाइरीनॉइड्स पाये जाते हैं। ☐

iv) सभी शैवालीय कोशिकाएं एक केन्द्रकी होती हैं। ☐

v) गॉल्जी काय में 70S राइबोसोम पाये जाते हैं। ☐

vi) रोडोफाइटा के अतिरिक्त सभी प्रकार के शैवालों में कशाभ उपस्थित होते हैं। ☐

3.6 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा:

- शैवाले जीवों का एक विविध समूह है जिसमें सूक्ष्मदर्शी एककोशिकीय, तंतुमय प्रकार से लेकर विशाल थैलसाभ प्रकार की जो समुद्र के नीचे चट्टानों पर पाई जाती हैं शामिल हैं। आकारिकी में उन्हें एक कोशिकीय, निवही, तंतुमय, विषमतंतुक, थैलसाभ तथा बहुसाइफनी प्रकारों में विभेदित किया जा सकता है।
- एक-कोशिकीय शैवाल आकारिकी में सबसे सरल होते हैं। निवही प्रकार कुछ अधिक विकसित प्रतीत होते है। निवह की कोशिकाएं प्लैज़्मोडेस्माटा के द्वारा संप्रेषण करती हैं तथा उनमें कायिक तथा जनन कोशिकाओं के बीच में श्रम का विभाजन पाया जाता है।
- तंतुमय प्रकार एक ही कोशिका के एक ही तल में लगातार विभाजनों के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होती हैं। तंतु की कुछ कोशिकाएं विशेष कोशिकाओं जैसे कि स्थापन अंग, टोपी कोशिका, रोम व हेटेरोसिस्ट में विभेदित होती हैं। कुछ शैवालो में आधार से जुड़ा हुआ शयान तंत्र तथा अनुदैर्ध्य शाखाओं का सतर तंत्र होता है। इन्हें विषमतंतुक प्रकार कहते हैं।
- थैलसाभ प्रकार की शैवालें शीट की तरह होती हैं। यह कोशिकाओं की एक या दो परतों से बनती हैं जबकि बहुसाइफनी प्रकार अधिक जटिल होती हैं। उनमें मूलाभास व शाखित सतर तंत्र होता है। वयस्क थैलस में कोशिकाओं की केन्द्रीय नाल – होती है जो परिकेन्द्रीय नाल द्वारा चारों ओर से घिरी रहती है। इस प्रकार के बहुकोशिकीय थैलस जिनमें बाह्य व आन्तरिक विभेद पाया जाता हैं, शैवालों में थैलस के विकास की सबसे उन्नत अवस्था को प्रदर्शित करते हैं।
- नील-हरित शैवालों की कोशिकाएं पूर्व केन्द्रकी प्रकार की होती हैं। जीवाणुओं की भांति ही उनकी कोशिका भित्ति म्यूकोपॉलिसैकेराइड्स की बनी होती है। उनमें झिल्ली बद्ध केन्द्रक, क्लोरोप्लास्ट तथा माइटोकॉन्ड्रिया नहीं पाये जाते हैं। जीवाणुओं की भांति ही उनमें सिर्फ नग्न गोलाकार DNA, RNA तथा 70S प्रकार के राइबोसोम पाये जाते हैं। उनकी थाइलेकॉइड झिल्लियों में प्रकाश संश्लेषी वर्णक पाये जाते हैं तथा प्रकाश संश्लेषण उन्हीं में होता है। कोशिकाओं में कई प्रकार के कण होते हैं।
- वास्तविक केन्द्रकी शैवालों में सुसंगठित केन्द्रक, केन्द्रक झिल्ली तथा गुणसूत्र पाये जाते हैं। उनके क्लोरोप्लास्ट विशिष्ट कोशिकांग होते हैं जिनमें प्रकाश संश्लेषी वर्णक तहों के रूप में व्यवस्थित थाइलेकॉइड्स में पाये जाते हैं तथा प्रकाश संश्लेषण और कार्बन यौगिकीकरण इन्हीं में होता है। माइटोकॉन्ड्रिया भी झिल्लियों के बने होते हैं तथा उनमें श्वसन होता है। क्लोरोप्लास्ट तथा माइटोकॉन्ड्रिया दोनों में अपना गोलाकार DNA व RNA तथा कोशिका द्रव्यी राइबोसोम के बदले 70S प्रकार के राइ[illegible] होते हैं, जबकि कोशिकाद्रव्य में 80S प्रकार के राइबोसोम होते हैं। शैवालीय कोशिकाओं मे [illegible]भिन्न कोशिकांग जैसे पाइरीनॉइड्स, गॉल्जी काय, धानियां तथा नेत्रबिन्दु दिखाई पड़ते है। शैवालों की चल कोशिकाओं में सूक्ष्मनलिकाओं के बने कशाभ पाये जाते हैं। कोशिका भित्ति सेलुलोस की बनी होती है तथा कुछ समुद्री शैवालों में जटिल पॉलिसैकेराइड्स, रि. या कैल्शियम कार्बोनेट भी पाये जा सकते हैं।

3.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. शैवालों में सबसे अधिक उन्नत प्रकार की तंतुमय संरचना को एक उदाहरण के साथ समझाइये।

....

....

....

....

....

2. इस इकाई में आपके द्वारा अध्ययन किये गए विभिन्न शैवालों की आकारिकीय संरचना के चित्र बनाइये तथा उन्हें चिन्हित कीजिए।

3. कॉलम 1 में दिये गए शैवालों को कॉलम 2 में दिए गए आकारिकीय प्रकारों से मिलाइये।

कॉलम 1	कॉलम 2
क) *अल्वा*	i) विषमतंतुक
ख) *यूलोथ्रिक्स*	ii) निवही
ग) *माइक्रोसिस्टिस*	iii) थैलसाभ
घ) *एक्टोकार्पस*	iv) तंतुमय

4. निम्नलिखित में सही उत्तर को चुनिये:

अ) निम्न में से किस शैवाल का थैलस तंतुमय तथा बहुत अधिक शाखित होता है ?

i) *अल्वा*

ii) *फ्यूकस*

iii) *ड्रेपर्नेल्डियॉप्सिस*

iv) *ऐनासिस्टिस*

ब) निम्न में से किस शैवाल में बहुत अधिक उन्नत पादप काया के साथ बहुकोशिकीय थैलस पाया जाता है:

i) *नॉस्टॉक*

ii) *एक्टोकार्पस*

iii) *फ्यूकस*

iv) *यूलोथ्रिक्स*

5. निम्नलिखित वक्तव्यों में से सही वक्तव्यों को चुनिये तथा दिये गए बॉक्सों में चिन्हित कीजिए।

i) जब शैवालीय थैलस की कोशिकाएं अनुदैर्ध्य रूप से विभाजित होती हैं तो थैलस की शाखा बनती है ☐

ii) सीटी अथवा रंगहीन रोम *यूलोथ्रिक्स* में पाये जाते हैं। ☐

iii) विषमतंतुक शैवाल आधार से स्थापन अंगों के द्वारा जुड़े रहते हैं। ☐

iv) पाल्मेला अवस्था *वाल्वॉक्स* में पाई जाती है। ☐

v) *इडोगोनियम* के तंतु आधार से स्थापन अंगों के द्वारा जुड़े रहते हैं। ☐

vi) शैवालीय कोशिकाएं जटिल अंगों अथवा उतकों का निर्माण नहीं करती हैं। ☐

vii) शैवालीय थैलस की कोशिकाएं एक दूसरे से लगभग स्वतंत्र होती हैं। ☐

3.8 उत्तर

बोध प्रश्न

3.1 अ) i) अ, ii) अ, iii) अ, iv) स

ब) i) 1, ii) 2

स) i) *क्लैमाइडोमोनस*, ii) *प्लैज़्मोडेस्माटा*, iii) *माइक्रोसिस्टिस*, iv) विपरीत।

3.2 अ) i) शयान तंत्र, ii) वल्कुट, मज्जा, iii) अनुप्रस्थ iv) *अल्वा,* v) वायु आशय।

ब) i), ii) और v)

स) i)

द) i) स, ii) अ, iii) स, iv) अ

3.3 नीचे लिखे गुणों का विस्तार कीजिए और चित्र में इनके स्थान दर्शाइए।

अ) i) विभिन्न आमापों की ग्लाइकोजन कणिकाएं

ii) सायनोफ़ाइसिन

iii) पॉलीफॉस्फ़ेट

iv) कार्बोक्सीसोम

ब) i) नाइट्रोजन, ii) गोलाकार DNA, iii) उपस्थित, iv) 70S प्रकार

स) i) म्यूकोपॉलिसैकेराइड्स, ii) फ़ाइकोबिलीसोम, iii) ग्लाइकोलिपिड्स, iv) क्रोमोप्लाज़्म।

3.4 अ) i) ग, ii) घ, iii) क, iv) ख

ब) i) अ, ii) अ, iii) स, iv) अ, v) अ vi) स

अंत में कुछ प्रश्न

1) सेक्शन 3.3.6 को देखिए

2) पाठ्य सामग्री में दिए गये चित्रों को देखें।

3) क) iii, ख) iv, ग) ii] घ) i।

4) अ) iii, ब) iii

5) i) स, ii) अ, iii) अ, iv) अ, v) स, vi) स, vii) स

इकाई 4 शैवालों में प्रजनन

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
4.2 प्रजनन के प्रकार
कायिक जनन
अलैंगिक जनन
लैंगिक जनन
4.3 प्रजनन तथा जीवन चक्र
क्लैमाइडोमोनस
यूलोथ्रिक्स
अल्वा
लेमिनैरिया
फ्यूकस
4.4 लिंग की उत्पत्ति और विकास
लिंग की उत्पत्ति
लिंग का विकास
4.5 सारांश
4.6 अंत में कुछ प्रश्न
4.7 उत्तर

4.1 प्रस्तावना

इकाई 3 में आपने पढ़ा था कि शैवालें आकार में सूक्ष्मदर्शीय एककोशिकीय जैसे कि *क्लोरेला* (*Chlorella*) से लेकर दीर्घदर्शी (macroscopic), बहुकोशिकीय प्रकार की शैवालें जैसे कि *लेमिनैरिया* (*Laminaria*) तक भिन्न हो सकती हैं। बहुकोशिकीय शैवालें अपने संगठन में बहुत अधिक विभिन्नता प्रदर्शित करती हैं तथा उनमें तंतुमय (filamentous), विषमतंतुक (heterotrichous), थैलसाभ (thalloids) तथा बहुसाइफ़नी (polysiphonoid) प्रकार की शैवालें सम्मिलित हैं। इस इकाई में हम शैवालों में प्रजनन तथा जीवन चक्र पर विभिन्न समूहों के प्रतिनिधियों के उदाहरणों को लेकर चर्चा करेंगे। शैवालों में सभी तीनों प्रकार का पजनन कायिक, अलैंगिक तथा लैंगिक पाया जाता है। कायिक तरीका पूर्णतः शैवाल की काया के किसी हिस्से के दुर्घटनावश टूट जाने पर, साधारण कोशिका विभाजन के द्वारा नये पादप को उत्पन्न करने की उसकी क्षमता पर निर्भर करता है। अलैंगिक तरीकों में नई प्रकार की कोशिकाओं जैसे कि अलैंगिक चल जीवाणु (zoospore) का उत्पादन होता है।

लैंगिक जनन में युग्मकों (gametes) का निर्माण होता है। युग्मक मिल कर युग्मनज (zygote) का निर्माण करते हैं। युग्मनज या तो विभाजित होकर नया पौधा उत्पन्न कर सकते है अथवा ये एक मोटी भित्ति बनाकर युग्माणु (zygospore) बना सकते हैं।

लैंगिक विभेदन (sexual differentiation), युग्मको का एक दूसरे की ओर आकर्षण, तथा युग्मकों के नर अथवा मादा होने का निर्धारण कैसे होता है? हम इन मुद्दों पर भी चर्चा करेंगे।

आप देखेंगे कि शैवालों में लैंगिक प्रजनन में बहुत से दिलचस्प लक्षण होते हैं, जो पादपों में लिंगो की उत्पति तथा विकास पर भी प्रकाश डालते हैं। इसकी चर्चा इस इकाई के आखिरी भाग में की जायेगी।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- उचित उदाहरणों के साथ शैवालों में तीनों प्रकार के प्रजनन – कायिक, अलैंगिक तथा लैंगिक को वर्णित कर सकेंगे,
- शैवालों में युग्मकों के मिलन के तीनों प्रकार - समयुग्मन (isogamy), असमयुग्मन (anisogamy) तथा विषमयुग्मन (oogamy) में विभेद कर सकेंगे,
- *क्लैमाइडोमोनस* (*Chlamydomonas*), *यूलोथ्रिक्स* (*Ulothrix*), *अल्वा* (*Ulva*), *लेमिनैरिया* (*Laminaria*), तथा *फ़्यूकस* (*Fucus*) में प्रजनन तथा जीवन चक्र को आरेखों द्वारा समझा सकेंगे तथा उनके विशेष लक्षणों को वर्णित कर सकेंगे,
- शैवालों में पाये जाने वाले प्रमुख चार प्रकार के जीवन चक्रों के बीच में विभेद कर सकेंगे,
- शैवालों में लिंग की उत्पत्ति तथा विकास पर चर्चा कर सकेंगे।

4.2 प्रजनन के प्रकार

शैवालों के विभिन्न समूहों में पाई जाने वाली प्रजनन प्रक्रियाओं को मोटे तौर पर तीन प्रकार में विभेदित किया जा सकता है: कायिक, अलैंगिक तथा लैंगिक

4.2.1 कायिक प्रजनन

शैवालों में सर्वाधिक प्रचलित प्रजनन समसूत्री कोशिका विभाजन (mitotic cell division) के द्वारा होता है। एककोशिकीय केन्द्रकी शैवालों में जैसे कि *ऐनासिस्टिस* (*Anacystis*) में प्रकृति में पाया जाने वाला यह एकमात्र प्रजनन का तरीका है। तंतुमय तथा बहुकोशिकीय शैवाले जब दुर्घटनावश छोटे टुकड़ों में टूट जाती हैं, उनमें से प्रत्येक टुकड़ा नये में विकसित हो जाता है। इस प्रकार का प्रजनन कायिक प्रजनन कहलाता है।

4.2.2 अलैंगिक प्रजनन

जब कायिक प्रजनन कुछ विशेष कोशिकाओं (लिंग कोशिकाओं के अतिरिक्त) के द्वारा होता है, तो वह अलैंगिक प्रजनन कहलाता है।

ऐनाबीना (Anabaena) और नॉस्टॉक (Nostoc)

बीजाणु अथवा निश्चेष्ट बीजाणु (akinetes) में बदलने के लिये कोशिकाएं भोज्य पदार्थ एकत्रित करके मोटी भित्ति विकसित कर लेती हैं (चित्र 4.1)। निश्चेष्ट बीर गु शुष्कता को तथा उच्च तापमान को लंबे समय तक झेल लेते हैं, लेकिन जब अवस्थाएं अनुकूल होती हैं वे नया तंतु बनाने के लिये अंकुरित हो जाते हैं।

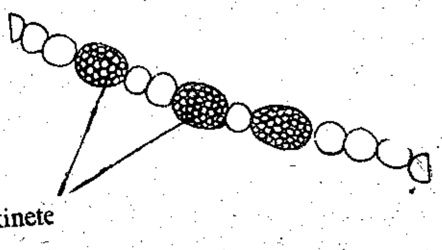

चित्र 4.1: *ऐनाबीना* में निश्चेष्ट बीजाणु।

यूलोथ्रिक्स **(*Ulothrix*)**

तंतुमय शैवाल (जैसे *यूलोथ्रिक्स*) चालक कोशिकाओं का उत्पादन करके, जो जूस्पोर कहलाती हैं, प्रजनन कर सकते हैं (चित्र 4.2)। एक ही कोशिका का जीवद्रव्यक (protoplast) कुछ जूस्पोरों के उत्पादन के लिये समसूत्री विभाजन के द्वारा बहुत बार विभाजित होता है। प्रत्येक जूस्पोर में 2 - 4 कशाभ होते हैं जिनसे वह कुछ समय के लिये तैरता रहता है तथा फिर अपने अग्र सिरे के द्वारा स्थिर हो जाता है। बाद में ये विभाजित होता है निचली कोशिका से स्थापनांग (holdfast) बन जाता है तथा ऊपरी कोशिका से बाद के विभाजनों के द्वारा कायिक तंतु बन जाता है। जूस्पोर अन्य शैवालों में भी बनते हैं।

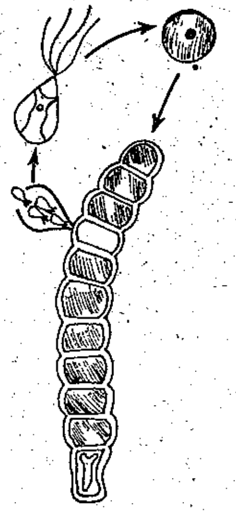

चित्र 4.2: *यूलोथ्रिक्स* में जूस्पोर का निर्माण।

क्लैमाइडोमोनस **(*Chlamydomonas*)**

हालांकि ये एक कोशिकीय चालित शैवाल हैं, फिर भी ये जूस्पोर बनाता है। मातृ कोशिका का कोशिकाद्रव्य कोशिका आवरण के अन्दर विभाजित होता है तथा प्रत्येक संतति कोशिका दो कशाभ विकसित कर लेती है। ये जूस्पोर बिल्कुल मातृ कोशिकाओं जैसे लगते हैं लेकिन आकार में अपेक्षाकृत छोटे होते हैं। जब जूस्पोर पूर्णत: विकसित हो जाते हैं तब मातृ कोशिका भित्ति विगलित हो जाती है, और वे अपने आसपास के जल में मुक्त हो जाते हैं (चित्र 4.3)।

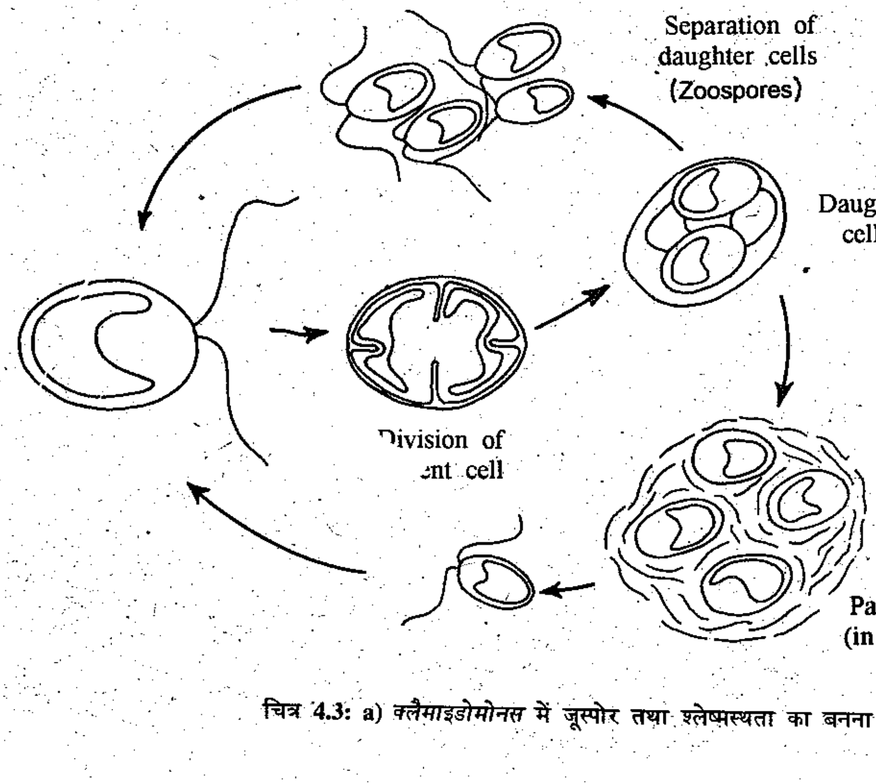

चित्र 4.3: a) *क्लैमाइडोमोनस* में जूस्पोर तथा श्लेष्मस्थता का बनना।

कभी-कभी जब बाहर कम पानी होता है, जूस्पोर कशाभों को गिरा देते हैं तथा गोल हो जाते हैं। ये अचल बीजाणु, एप्लेनोस्पोर (aplanospore) कहलाते हैं जो मोटी भित्ति वाले सुप्तबीजाणु (hypnospores) में विकसित हो जाते हैं।

नम मिट्टी पर जब जूस्पोर मुक्त जल की कमी के कारण निर्मुक्त नहीं हो पाते हैं तब वे मातृ कोशिका भित्ति द्वारा निर्मित श्लेष्मकीय पदार्थ में धंस जाते हैं। ऐसी कोशिकाओं में कशाभ नहीं होते हैं लेकिन जल के साथ सम्पर्क होने पर उनमें कशाभ विकसित हो जाते हैं और जल में तैर जाते हैं। ये श्लेष्मकीय द्रव्यमान (mucilagenous masses) जिनमें हजारों अचल कोशिकाऐं होती हैं *क्लैमाइडोमोनस* की श्लेष्मस्थता (palmella stage) कहलाती हैं।

***इडोगोनियम* (*Oedogonium*)** : जूस्पोर कोशिका में अकेले ही उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक में एक केन्द्रक होता है तथा शीर्ष पर कशाभों का मुकुट होता है।

***ड्रेपर्नेल्डियॉप्सिस* (*Draparnaldiopsis*)** तथा ***अल्वा* (*Ulva*)**: *यूलोथ्रिक्स* की भांति ही एक ही कोशिका से बहुत से जूस्पोर उत्पन्न होते हैं ये एक केन्द्रक और 2 - 4 कशाभ लिये होते हैं।

***एक्टोकार्पस* (*Ectocarpus*)**: जूस्पोर बीजाणुधानियां (sporangia) में बनते हैं जो दो प्रकार की होती हैं।

बहुकोष्ठकी बीजाणुधानियां (Plurilocular sporangia) : प्रत्येक बीजाणुधानी बहुत सी कोशिकाओं की बनी होती है, इसमें कुछ द्विकशाभीय (**biflagellate**) जूस्पोर बनते हैं (चित्र 4.4)।

एककोष्ठकी बीजाणुधानियां (unilocular sporangia) : प्रत्येक बीजाणुधानी एक कोशिका की बनी होती है तथा एक द्विकशाभीय जूस्पोर बनता है (चित्र 4.4)।

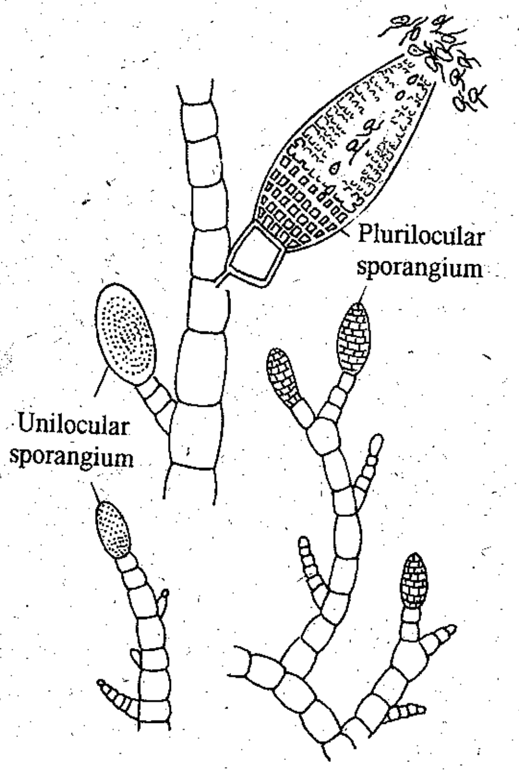

चित्र 4.4: *एक्टोकार्पस* में बहुकोष्ठकी तथा एककोष्ठकी बीजाणुधानियां।

4.2.3 लैंगिक जनन

शैवाल में लैंगिक जनन अन्य जीवों की भांति ही विपरीत लिंग की दो कोशिकाओं, जो युग्मक कहलाती हैं के संगलन से होता है जिसके फलस्वरूप युग्मनज का निर्माण होता है। इस प्रकार के प्रजनन के कुछ मूलभूत लक्षण निम्नलिखित हैं।

युग्मक सदैव अगुणित (haploid) होते हैं तथा संरचना में भिन्न अथवा समान हो सकते हैं। यदि दोनों लिंग कोशिकाएं एक सी दिखाई पड़ती हैं तो वे धन (plus +) अथवा नर तथा ऋण (minus –) अथवा मादा संगम (mating) प्रकार अथवा विभेद (strain) कहलाती हैं। युग्मकों का संगलन तभी होता है जब एक धन तथा दूसरा ऋण हो।

दोनों + तथा - एक ही मातृ थैलस द्वारा उत्पन्न हो सकते हैं, यह समथैलिक (homothallic) अथवा उभयलिंगाश्रयी (monoecious) स्थिति कहलाती है। जब वे अलग-अलग धन तथा ऋण पादप प्रकारों से आते हैं तब ये विषमथैलिक (heterothallic) अथवा एकलिंगाश्रयी (dioecious) कहलाते हैं।

तीन प्रकार के युग्मक संगलन (gametic fusion) पाये जाते हैं (चित्र 4.5):

अ) **समयुग्मन (Isogamy)**: जब दोनों युग्मक एक ही आकार तथा संरचना के होते हैं।

ब) **असमयुग्मन (Anisogamy)**: दोनों युग्मक आकार अथवा आकृति में स्पष्ट रूप से भिन्न होते हैं, दोनों में से बड़ा वाला ऋण (मादा) प्रकार होता है।

स) **विषमयुग्मन (Oogamy)** : मादा युग्मक, अंड अथवा अंडाणु (ovum) आकार में बड़ा होता है तथा कशाभ रहित होता है अत: अचल (non-motile) होता है। नर युग्मक कशाभयुक्त तथा बहुत गतिशील होते हैं। वे पुमणु (antherozoids, spermatozoids अथवा sperms) भी कहलाते हैं।

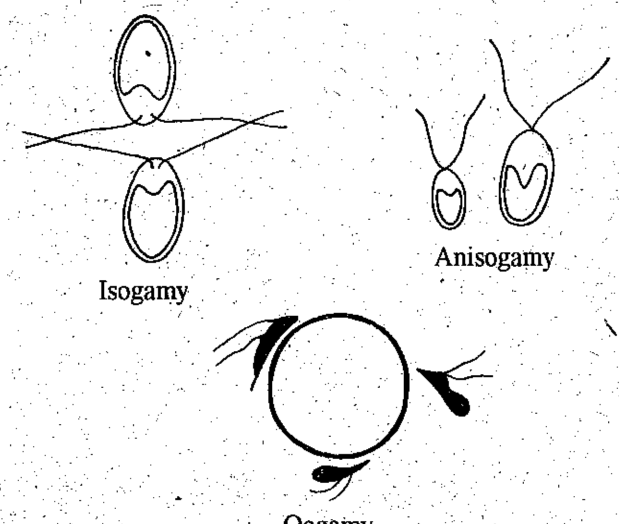

चित्र 4.5: तीन प्रकार के युग्मक संगलन: ए) समयुग्मन, बी) असमयुग्मन तथा सी) विषमयुग्मन।

नर युग्मक मादा युग्मक द्वारा आकर्षित होते हैं क्योंकि मादा युग्मक में एक विशेष रासायनिक पदार्थ (गैमोन), एक प्रकार का हॉर्मोन उत्पन्न होता है। युग्मकों के संगलन से युग्मनज का निर्माण होता है। यदि परिस्थितियां वृद्धि के लिये अनुकूल नहीं होती हैं तो युग्मनज एक मोटी भित्ति विकसित कर लेते हैं तथा विश्रांति युग्माणु (resting zygospore) बन जाते हैं। युग्मक अगुणित होने के कारण, समसूत्री विभाजन (mitosis) के द्वारा अगुणित थैलस उत्पन्न करते हैं। यदि शैवाल द्विगुणित होता है जैसे कि *फ्यूकस* (*Fucus*) तो प्रजनन कोशिकाऐं अगुणित युग्मक बनाने के लिये अर्धसूत्री विभाजन (meiosis) करती हैं।

अगुणित थैलस में, युग्मकों के संगलन के बाद, द्विगुणित युग्मनज अंकुरण के दौरान अर्धसूत्री विभाजन करता है। जबकि, द्विगुणित शैवालों में युग्मनज समसूत्री विभाजन कर सकता है तथा द्विगुणित थैलस को जन्म देता है (*फ्यूकस*)। *अल्वा* में अगुणित तथा द्विगुणित दोनों प्रकार के थैलस पाये जाते हैं। वे आकृति और आकार में बहुत अधिक एक समान दिखते हैं।

बोध प्रश्न 4.1

निम्नलिखित में से कौन सा शैवाल सिर्फ कोशिका विभाजन द्वारा ही जनन करता है ?

अ) i) *वाल्वॉक्स*

ii) *क्लैमाइडोमोनस*

iii) *ऐनासिस्टिस*

iv) *माइक्रोसिस्टिस*

ब) नीचे दिये गये कथनों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिये।

i) .... एक सुदीर्घित कायिक कोशिका है जो संचयित भोजन को एकत्रित करके, मोटी भित्ति विकसित कर लेती है तथा विश्रांति बीजाणु की भांति कार्य करती है।

ii) विपरीत परिस्थितियों में जूस्पोर अपने कशाभ हटा देते हैं तथा गोल हो जाते हैं, ये .... कहलाते हैं।

iii) जब तंतु शैवाल दुर्घटनावश टूट जाता है वह .... में विकसित हो जाता है।

iv) वह अवस्था जब *क्लैमाइडोमोनस* के हजारों जूस्पोर गुच्छ रूप में एकसाथ श्लेष्मीय द्रव्य में एकत्रित हो जाते हैं, ...कहलाती है।

v) जब धन (+) तथा ऋण (-) विभेद दोनों एक ही मातृ थैलस द्वारा उत्पन्न होते हैं तो वे .... विभेद कहलाते हैं।

vi) जब दोनों युग्मक (धन तथा ऋण) अलग-अलग मातृ पौधों से उत्पन्न होते हैं तो वे .... कहलाते हैं।

vii) एक ही आकार तथा संरचना के युग्मकों का संगलन .... कहलाता है।

viii) असमयुग्मन में दो युग्मक .... होते हैं।

स) कोष्ठकों में दिये गये विकल्पी शब्दों में से सही शब्द छांटिये।

i) शैवालों में युग्मक सदैव (अगुणित/द्विगुणित) होते हैं।

ii) युग्मक (मादा/नर) के द्वारा उत्पन्न किया जाने वाला रासायनिक पदार्थ जो (मादा/नर) युग्मक को आकर्षित करता है वह (गैमोन/कीमोन) कहलाता है।

iii) शैवाल में नर तथा मादा युग्मक के संगलन का उत्पाद (जूस्पोर/युग्मनज/युग्माणु) कहलाता है।

4.3 प्रजनन तथा जीवन चक्र

हमने ऊपर शैवालों में प्रजनन के मूलभूत तरीकों को बताया है। अब हम कुछ विशिष्ट प्रकार के शैवालों का, प्रकृति में जीवन चक्र समझेगें। ये बात ध्यान देने योग्य है कि किसी भी शैवाल का जीवन चक्र पर्यावर्णीय कारकों जैसे तापमान, प्रकाश, मौसम, पोषक पदार्थों की उपलब्धता, तथा समुद्री शैवालों में लवणता, धारा का प्रवाह, ज्वार भाटे की आवर्तिता (periodicity of tides) से भी बहुत अधिक नियंत्रित होता है। अलग-अलग समय पर, अलग अलग भौगोलिक स्थानों तथा कभी-कभी प्रायोगिक रूप से नियंत्रित अवस्थाओं में किए गए अध्ययन, हमें शैवाल के जीवन चक्र की अगर पूर्ण नहीं तो भी बहुत व्यापक तस्वीर देते हैं।

4.3.1 क्लैमाइडोमोनस (*Chlamydomonas*)

इस शैवाल में लैंगिक जनन के तीनों विभिन्न प्रकार देखे गये हैं, तथा ये जाति पर निर्भर करते हैं।

क्लैमाइडोमोनस मीऊसायी (*C. moewusii*), *क्लैमाइडोमोनस रीनहार्डी* (*C. reinhardii*), *क्लैमाइडोमोनस गाइनोगेमा* (*C. gynogama*) और *क्लैमाइडोमोनस मीडिया* (*C. media*) में समयुग्मन पाया जाता है (चित्र 4.6)।

समयुग्मन दो प्रकार का होता है:

एक पूर्वजी जनसंख्या (clonal populations - में एक जनक कोशिका के बारंबार विभाजित होने से प्राप्त हुई कोशिकाऐं) में ऐसे युग्मकों के बीच में संगलन हो सकता है जो समथैलिक हों। समयुग्मन स्वयं निषेच्य विभेदों (self compatible strains) में किन्हीं भी दो कोशिकाओं में हो सकता है। जैसे कि *क्लैमाइडोमोनस गाइनोगेमा* तथा *क्लैमाइडोमोनस मीडिया* में।

क्लैमाइडोमोनस मीऊसायी तथा *क्लैमाइडोमोनस रीनहार्डी* में युग्मकों का संगलन सिर्फ तभी होता है जब वे दो अलग-अलग असंबद्ध विभेदों (विषमथैलिक एवम् स्वयं अनिषेच्य) से आते हैं।

बहुत सी समयुग्मकी जातियों में जनक कोशिका 16 से 64 बड़े कशाभयुक्त युग्मक उत्पन्न करने के लिये विभाजित हो सकती है जबकि कुछ में व्यस्क कोशिकाऐं स्वयं ही सीधे-युग्मकों की तरह से व्यवहार करने लगती हैं तथा संगलित हो जाती हैं।

युग्मकी संगलन की असमयुग्मकी प्रकार *क्लैमाइडोमोनस ब्राउनी* (*C. braunii*) में पाई जाती है। एक

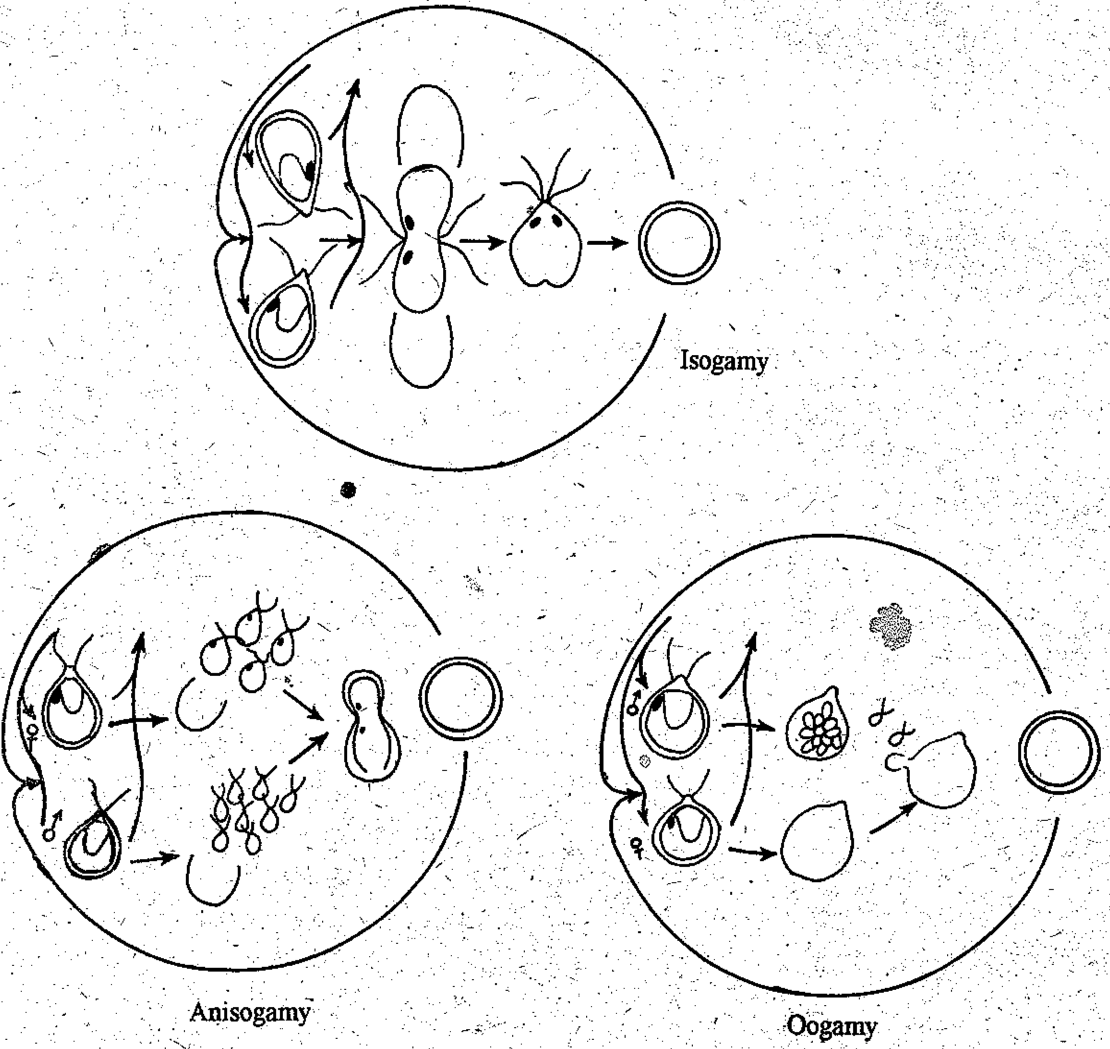

चित्र 4.6: *क्लैमाइडोमोनस* में लैंगिक जनन: ए) समयुग्मन, बी) असमयुग्मन, सी) विषमयुग्मन।

मादा कोशिका विभाजित होती है और चार बड़ी कोशिकाए उत्पन्न करती है जिनमें प्रत्येक में दो कशाभ होते हैं पर यह कम सक्रिय होती हैं। नर कोशिकाए संख्या में लगभग 8 होती हैं परन्तु आकार में छोटी होती हैं।

विषमयुग्मन अग्रगत (advanced) प्रकार का लैंगिक जनन है जो *क्लैमाइडोमोनस कॉक्सीफेरा* (*C. coccifera*) में पाया जाता है। जनक कोशिका अपने कशाभों को फेंक देती है तथा सीधे ही अचल अण्ड अथवा अण्डाणु बन जाती है। नर जनक कोशिका से बारंबार विभाजनों के द्वारा सोलह नर युग्मक बनते हैं। ये द्विकशाभीय तथा बहुत अधिक गतिशील होते हैं।

युग्मकीय आकर्षण, संगलन तथा संबद्ध घटनाओं की प्रक्रिया का प्रयोगशाला में कुछ विस्तार से अध्ययन किया गया है। समुचित प्रकाश की अवस्था तथा कार्बन डाइऑक्साइड सान्द्रता में युग्मकों के उत्पादन को नाइट्रोजन बुभुक्षण (starvation) के द्वारा भी आरंभ किया जा सकता है। नर अथवा मादा युग्मकों का बनना (समयुग्मन की स्थिति में भी) उनके द्वारा उत्पन्न किये जाने वाले रसायन गैमोन की बदलती हुई सान्द्रता को दिया जाता है। युग्मकों के बीच में आकर्षण, एक विभेद के कशाभ के सिरे पर ग्लाइकोसिडिक मैनोस की उपस्थिति के कारण पाया जाता है जो विपरीत विभेद के युग्मक के कशाभ में उपस्थित संगम पदार्थ (mating substance) से पूरक प्रकार (complementary way) से बंध जाता है। एकबार

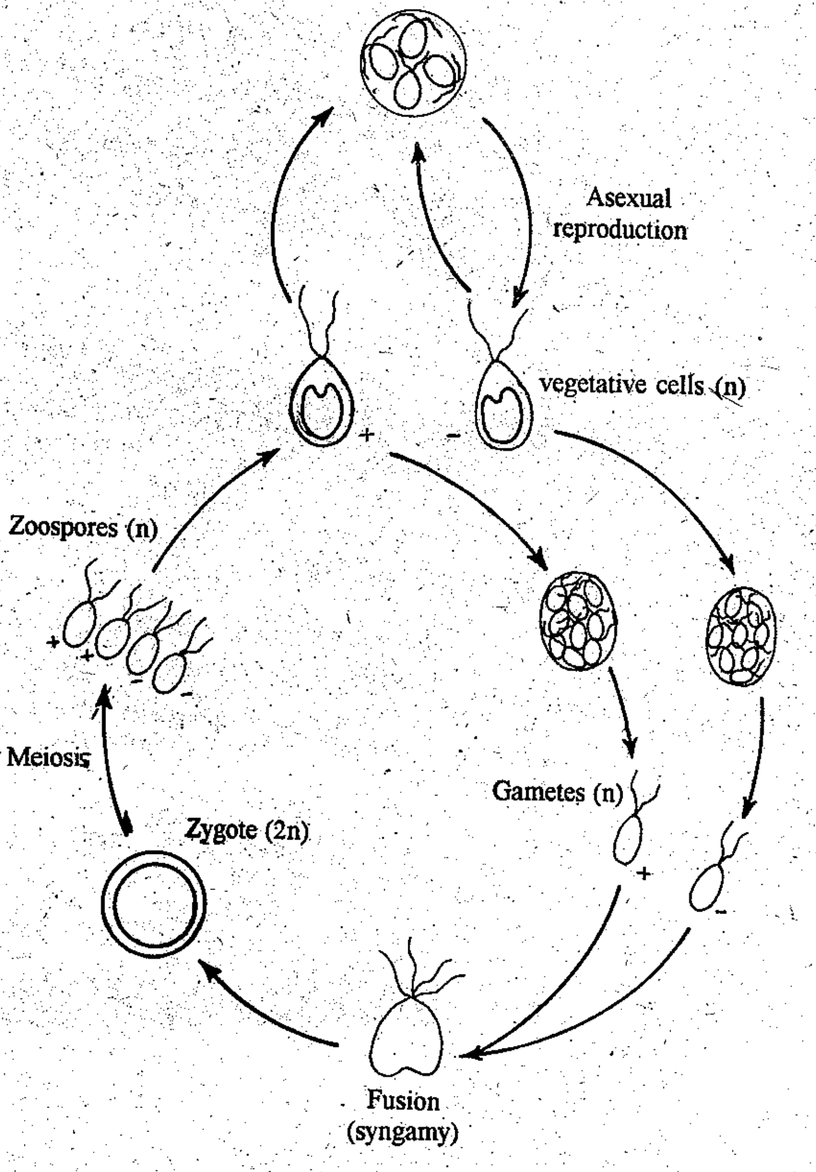

चित्र **4.7:** ***क्लैमाइडोमोनस*** का जीवन चक्र।

जब धन और ऋण युग्मकों के कशाभ चिपक जाते हैं, कशाभ एक दूसरे के ऊपर व्यावर्तित (twist) हो जाते हैं जिससे युग्मकों के अग्र सिरे समीप आ जाते हैं। इसके बाद कोशिकीय तथा केन्द्रकीय संयुग्मन होता है।

युग्मनज एक मोटी भित्ति बना लेता है तथा बड़ी मात्रा में भोज्य पदार्थ जैसे मांड यानि स्टार्च, लिपिड तथा नारंगी-लाल वर्णक संचित कर लेता है। ये अब युग्माणु कहलाता है तथा तब तक सुषुप्त (dormant) रहता है जब तक कि वातावरणीय अवस्थाए उसके अंकुरण के लिये अनुकूल नहीं हो जाती हैं।

यह देखा गया है कि युग्मनज के अंकुरण के दौरान अर्धसूत्री विभाजन होता है तथा उसके बाद समसूत्री विभाजन होता है जिसके फलस्वरूप अगुणित *क्लैमाइडोमोनस* कोशिकाए बनती हैं।

जीवन चक्र

क्लैमाइडोमोनस एककोशिकीय तथा अगुणित होते हैं तथा जूस्पोर उत्पादन के द्वारा अलैंगिक तरीके से बहुत बार प्रजनन करते हैं। विपरीत वातावरणीय परिस्थितियों में यह युग्मकों को उत्पन्न करते हैं जो द्विगुणित युग्माणु बनाने के लिये संगलित हो जाते हैं। अंकुरण के दौरान, अर्धसूत्री विभाजन होता है तथा अगुणित कोशिकाए बनती हैं (चित्र 4.7)।

क्लैमाइडोमोनस जीव वैज्ञानिकों के लिये विशेष महत्वपूर्ण है। इसके अध्ययन ने जीववैज्ञानिक महत्व के कुछ दिलचस्प लक्षणों पर प्रकाश डाला है, उनमें से कुछ नीचे सूचीबद्ध किये गये हैं।

a) शैवालों के क्लोरोप्लास्ट में आनुवंशिक तत्व, DNA की उपस्थिति।

b) कोशिकाद्रव्यी जीन्स की उपस्थिति (इसके बारे में आपने LSE-03, इकाई 7 में पढ़ा है)।

c) आनुवंशिक उत्परिवर्तनों (genetic mutations) का उत्पादन–पोषण और प्रकाश संश्लेषण प्रभावित उत्परिवर्ती तथा बिना कशाभ अथवा भित्ति के उत्परिवर्तियों (mutants) का उत्पादन।

d) गैमोन्स की खोज तथा लैंगिक प्रजनन में उनकी भूमिका।

e) एक ही जाति में समयुग्मन, असमयुग्मन तथा विषमयुग्मन की उपस्थिति।

f) प्रजनन का वातावरणीय नियंत्रण।

4.3.2 *यूलोथ्रिक्स (Ulothrix)*

लैंगिक प्रजनन समयुग्मनी, द्विकशाभीय युग्मकों के द्वारा होता है। संयुग्मन सिर्फ धन तथा ऋण संगम प्रकार के बीच में होता है। युग्मक अलग अलग थैलस से आते हैं यानि एक विषमथैलिक प्रकार है। युग्मनज एक मोटी भित्ति का निर्माण कर लेता है तथा तब तक सुषुप्त अवस्था में रहता है जब तक कि अवस्थाएं अंकुरण के लिये अनुकूल नहीं हो जाती हैं। इसमें अर्धसूत्री विभाजन होता है तथा 4 - 16 अगुणित जूस्पोर उत्पन्न होते हैं जो स्थिर (settle down) होने पर कायिक तंतुओं को जन्म देते हैं (चित्र 4.8)।

ये पाया गया है कि *यूलोथ्रिक्स* तब युग्मक उत्पन्न करते हैं जब दीर्घप्रदीप्त काली (long day) अवस्था में उगाये जाते हैं जबकि अल्पप्रदीप्त काली (short day) अवस्था जूस्पोर का निर्माण करती है।

जीवन चक्र

यूलोथ्रिक्स के जीवन चक्र को दर्शाने वाले चित्र 4.8 को देखिये।

थैलस की द्विगुणित अवस्था कौन सी है?

यूलोथ्रिक्स थैलस अगुणित है तथा द्विगुणित अवस्था सिर्फ युग्मनज द्वारा ही प्रदर्शित होती है।

हम आपका ध्यान इस तथ्य की ओर दिलाना चाहेंगे कि कुछ जातियों जैसे कि *यूलोथ्रिक्स स्पीशिओसा (U. speciosa)*, *यूलोथ्रिक्स फ्लेका (U. flacca)*, तथा *यूलोथ्रिक्स इम्प्लैक्सा (U. implexa)* में युग्मनज एक स्वतंत्र, एककोशिकीय (द्विगुणित थैलस) में विकसित होता है। यह अलैंगिक तरीके से

अर्धसूत्री विभाजन के द्वारा जूस्पोर उत्पन्न करता है जो अगुणित तंतुओं के रूप में विकसित होते हैं।

इस प्रकार *यूलोथ्रिक्स* में दो प्रकार के जीवन चक्रों में विभेद किया जा सकता है।

अध्यगुणित (Haplobiontic)

यूलोथ्रिक्स जोनेटा (*U. zonata*) में थैलस काया अगुणित होती है तथा सिर्फ युग्मनज द्विगुणित होता है।

अधिद्विगुणित (Diplobiontic)

अधिद्विगुणित जीवन चक्र में शैवाल अगुणित थैलस लिये होता है जो युग्मक उत्पन्न करता है तथा द्विगुणित थैलस अर्धसूत्री विभाजन के पश्चात् जूस्पोर उत्पन्न करता है। दोनों पीढ़ियां (generations) अगुणित तथा द्विगुणित, एक दूसरे के साथ प्रत्यावर्तित (alternate) होती हैं तथा चूंकि दोनों प्रकार की पादप कायाऐं एक दूसरे से आकार तथा संरचना में बहुत अधिक भिन्न होती हैं ये विषमरूपी (heteromorphic), अधिद्विगुणित (diplobiontic) जीवन चक्र कहलाता है।

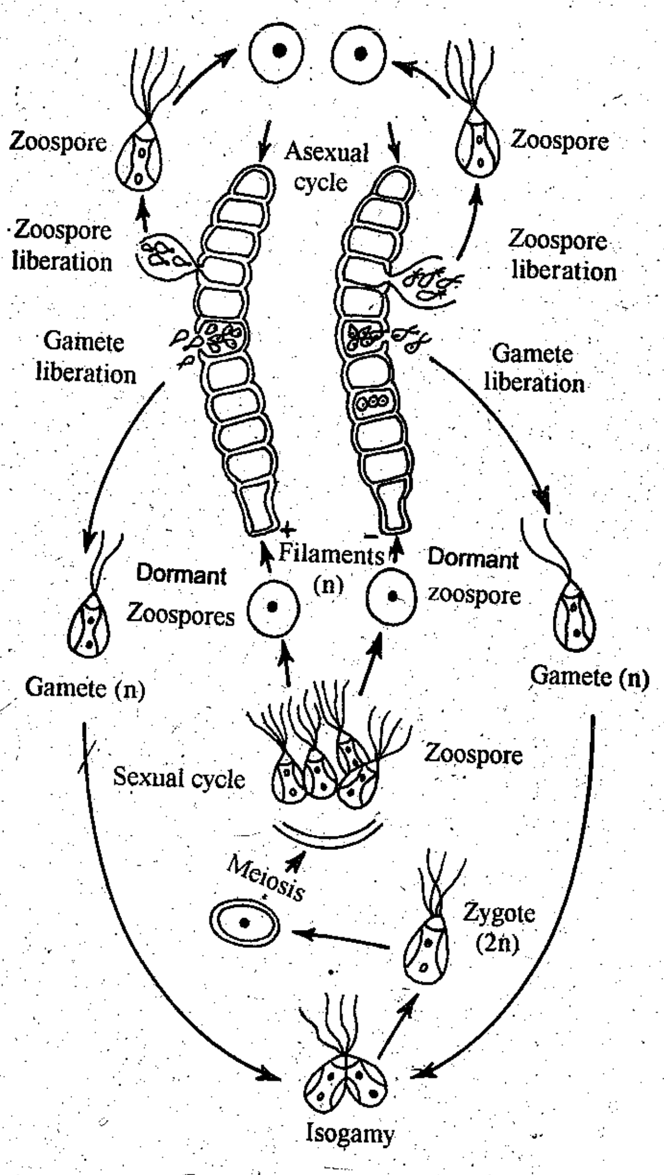

चित्र 4.8: *यूलोथ्रिक्स* का जीवन चक्र।

बाक्स 1

पीढ़ियों का प्रत्यावर्तन

जीव के जीवन चक्र में प्रजनन के दौरान लैंगिक तथा अलैंगिक प्रजनन में प्रत्यावर्तन होता है जिसे पीढ़ियों का प्रत्यावर्तन कहते हैं। ये दो पीढ़ियां युग्मकोद्भिदी तथा बीजाणुउद्भिदी पीढ़ियां कहलाती हैं। युग्मकोद्भिदी पीढ़ी अगुणित तथा बीजाणुउद्भिदी पीढ़ी द्विगुणित होती है।

दो युग्मको का संगलन युग्मज बनाता है जो अंकुरित होकर थैलस बनाता है इसे बीजाणुउद्भिद् कहते हैं यह अर्धसूत्री विभाजन के द्वारा अगुणित बीजाणु बनाता है। बीजाणु अंकुरण द्वारा युग्मकोद्भिद् उत्पन्न करता है जो नर या मादा युग्मक या दोनों धारण करता है।

कुछ ब्रायोफाइट्स में युग्मकोद्भिदी अवस्था सुस्पष्ट होती है जबकि फर्नस में बीजाणुउद्भिदी अधिक सुस्पष्ट होती है। आवृतबीजियों में मुख्य पादपीय काया बीजाणुउद्भिद् अवस्था होती है जबकि युग्मकोद्भिद् अवस्था अल्प समय की होती है और कुछ कोशिकाओं तक सीमित होती है। आप देखेंगे कि ये सभी स्थितियाँ शैवालों में पाई जाती हैं, कुछ शैवालों में युग्मकोद्भिद् अवस्था सुस्पष्ट होती है तो कुछ में बीजाणुउद्भिदी।

4.3.3 *अल्वा* (*Ulva*)

अल्वा का जीवन चक्र चित्र 4.9 में दिखाया गया है। बीजाणुउद्भिद् (sporophyte) तथा युग्मकोद्भिद् (gametophyte) पादप काया पर ध्यान दीजिये। दोनों संरचनात्मक रूप से समान हैं। हालांकि,

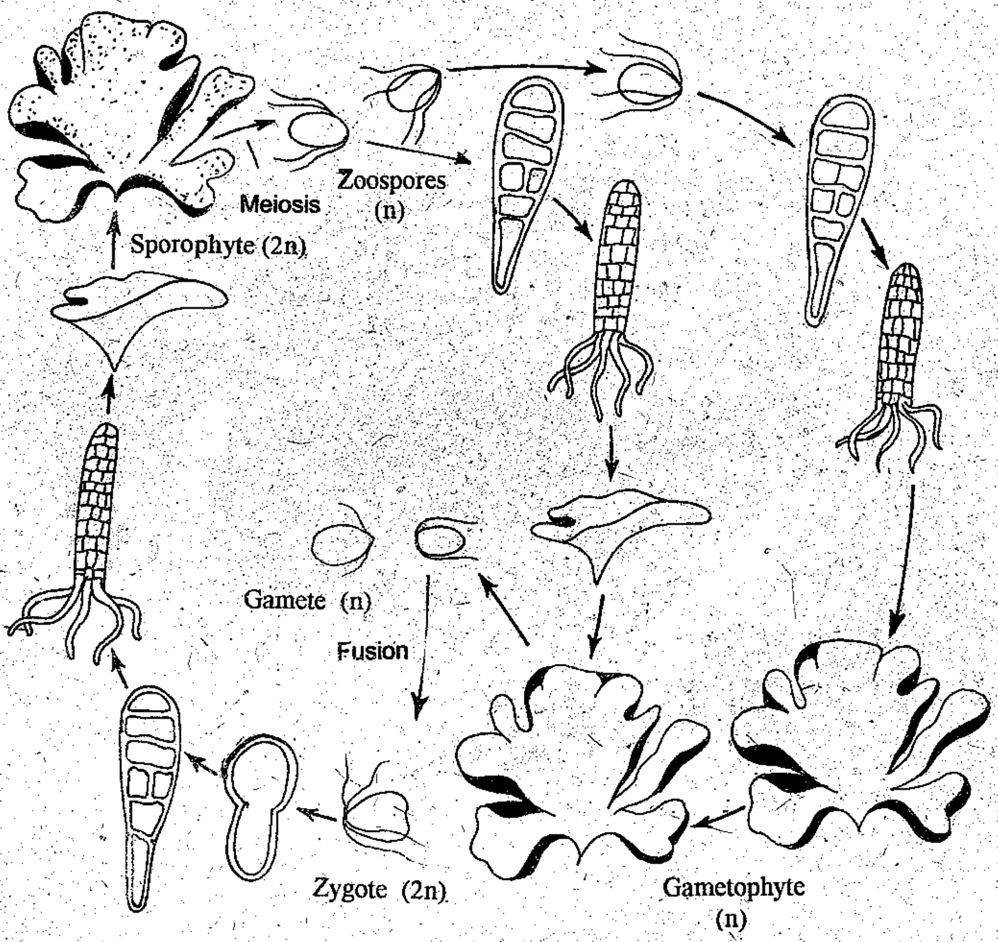

चित्र 4.9 : *अल्वा* का जीवन चक्र। पीढ़ियों के समरूपी प्रत्यावर्तन पर ध्यान दीजिये।

युग्मकोद्भिद् अगुणित (n) है जबकि बीजाणुउद्भिद् द्विगुणित (2n) होता है। अगुणित युग्मकोद्भिद् युग्मक उत्पन्न करता है तथा द्विगुणित बीजाणुउद्भिद् अर्धसूत्री विभाजन के पश्चात् जूस्पोर बनाता है जो अगुणित युग्मकोद्भिद् बनाने के लिये अंकुरित होते हैं।

अल्वा युग्मकोद्भिद् युग्मक उत्पन्न करता है जो समयुग्मकी अथवा असमयुग्मकी होते हैं। संयुग्मन के पश्चात् युग्मनज द्विगुणित बीजाणुउद्भिद् के रूप में विकसित होता है।

अल्वा के जीवनचक्र को समरूपी (isomorphic) अधिद्विगुणित (diplobiontic) प्रकार के रूप में वर्णित किया जाता है।

4.3.4 *लेमिनैरिया* (*Laminaria*)

लेमिनैरिया में लैंगिक जनन विषमरूपी (oögamous) प्रकार का होता है।

वयस्क द्विगुणित थैलस - बीजाणुउद्भिद्, स्तरिका (lamina) की सतह पर बीजाणुधानी पुंज (sori) अथवा एककोष्ठकीय बीजाणुधानी (unilocular sporangia) उत्पन्न करते हैं। प्रत्येक बीजाणुधानी अर्धसूत्री विभाजन के द्वारा विभाजित होकर 32 बड़े कशाभकीय जूस्पोर को जन्म देती हैं जो अंकुरित होकर नर तथा मादा युग्मकोद्भिद् बनाते (चित्र 4.10) हैं।

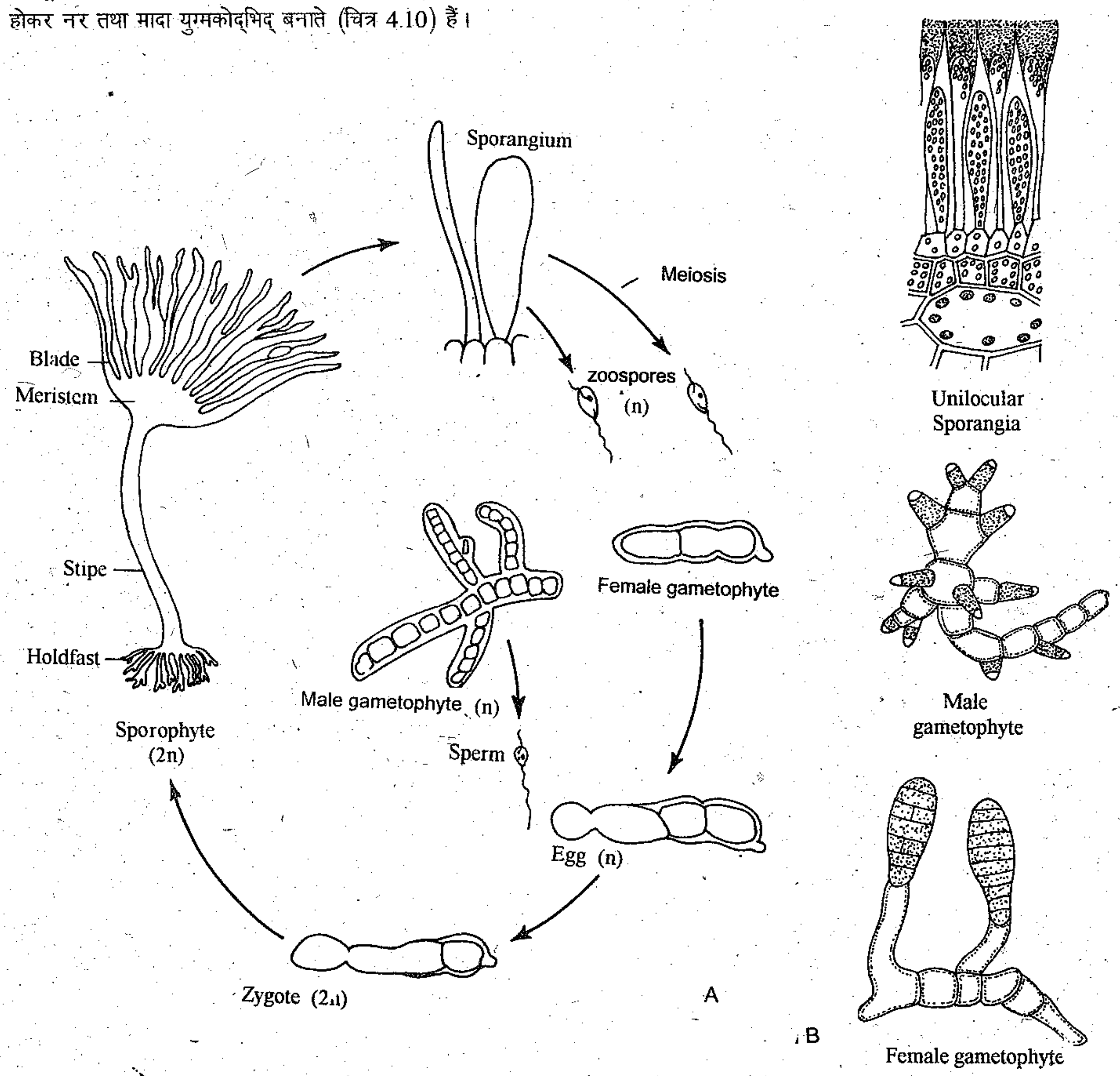

चित्र 4.10 : *लेमिनैरिया* का जीवन चक्र। बीजाणुउद्भिद् दीर्घदर्शीय है तथा नर और मादा युग्मकोद्भिद् सूक्ष्मदर्शीय हैं।

दोनों लिंगों के युग्मकोद्भिद् सूक्ष्मदर्शीय होते हैं व उनमें कुछ शाखाऐं होती हैं तथा उनकी उर्वरता (fertility) पर्यावरणीय अवस्थाओं द्वारा नियंत्रित होती है।

मादा युग्मकोद्भिद् की कोई भी कोशिका अंडधानी (oogonium) में विकसित हो जाती है जिसके अंश (contents) से एक ही अंडा बनता है। जब यह वयस्क हो जाता है तब यह बाहर की तरफ उभरने लगता है किन्तु रिक्त अंडजननी कोशिका (oogonial cell) के मुख से जुड़ा रहता है।

पुंधानियां (antheridia) एकल रूप में नर युग्मकोद्भिद् के पार्श्व उद्वर्ध (outgrowth) की भांति उत्पन्न होती हैं। प्रत्येक पुंधानी से सिर्फ एक पुमणु (sperm) उत्पन्न होता है, जो नाशपाती जैसी आकृति का होता है तथा उसमें असमान लंबाई के दो कशाभ होते हैं।

निषेचन के पश्चात् युग्मनज उसी वक्त बिना किसी विश्रांति काल के विभाजित हो जाता है तथा बीजाणुउद्भिद् के रूप में विकसित होता है (चित्र 4.10)।

जीवन चक्र

लेमिनैरिया में अगुणित युग्मकोद्भिद् तथा प्रभावी (dominant) द्विगुणित बीजाणुउद्भिद् का स्पष्ट प्रत्यावर्तन होता है।

बीजाणुउद्भिद् की बीजाणुधानी में जूस्पोर के बनने के पूर्व अर्ध सूत्री विभाजन होता है जो अंकुरित होकर नर तथा मादा युग्मकोद्भिद् निर्मित करते हैं।

दो असमान पीढ़ियां-एक सादा तंतुल युग्मकोद्भिद् तथा दूसरा बहुत अधिक विभेदित (differentiated), जटिल, बहुकोशिकीय थैलस-एक दूसरे के साथ प्रत्यावर्तित होते हैं- अतः जीवनचक्र पीढ़ियों का विषमरूपी (heteromorphic) प्रत्यावर्तन कहलाता है।

4.3.5 फ्यूकस (*Fucus*)

फ्यूकस में उन्नत प्रकार की प्रजनन संरचनाऐं होती हैं जिन्हें रिसेप्टिकल्स् (receptacles) कहते हैं। ये शाखाओं के सिरों पर फूली (swollen) होती हैं (चित्र 4.11ए)। प्रत्येक रिसेप्टिकल की सतह पर छोटे-छोटे छिद्र आस्यक (ostiole) बिखरे रहते हैं जो गुहाओं (cavities) में खुलते हैं इन गुहाओं को कंसेप्टिकल (conceptacles) कहते हैं (चित्र 4.11बी)। प्रत्येक कंसेप्टिकल या तो सिर्फ अंडे अथवा सिर्फ शुक्राणु और कुछ दोनों उत्पन्न करता है।

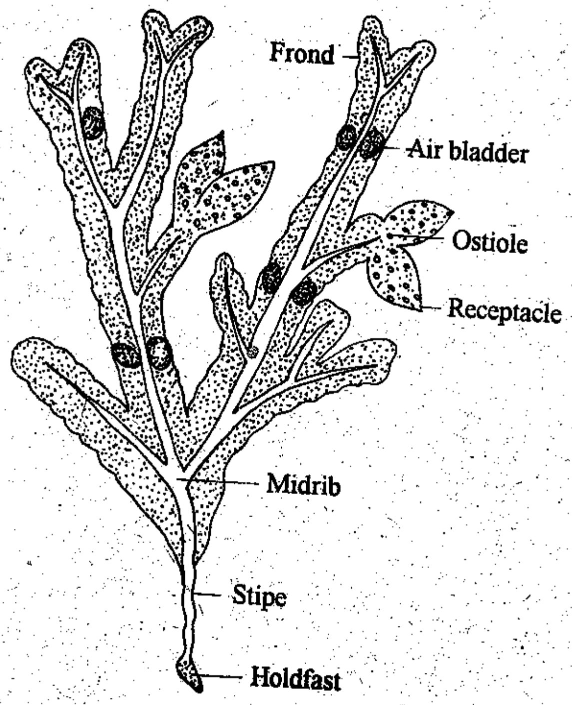

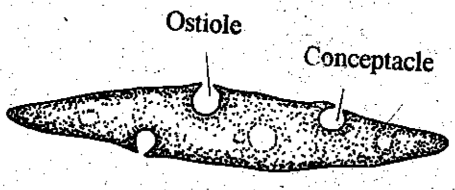

चित्र 4.11 : फ्यूकस : ए) थैलस की संरचना, बी) दीर्घित रिसेप्टिकल।

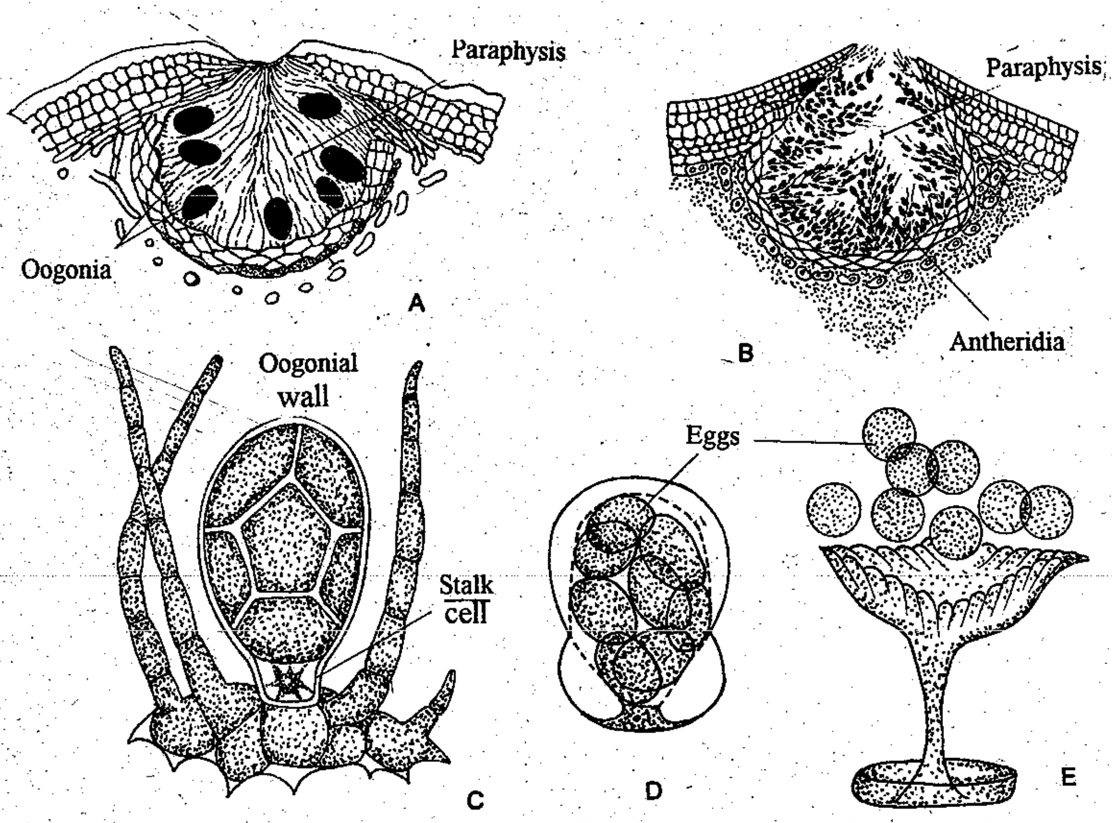

चित्र 4.12: ए) मादा कंसेप्टिकल का अंडधानी दर्शाते हुए अनुप्रस्थ काट। बी) नर कंसेप्टिकल अनुप्रस्थ काट में पुंधानी को दर्शाते हुए, सी) अंडधानी की संरचना, डी और ई) अंडों का बनना तथा निष्कासित होना।

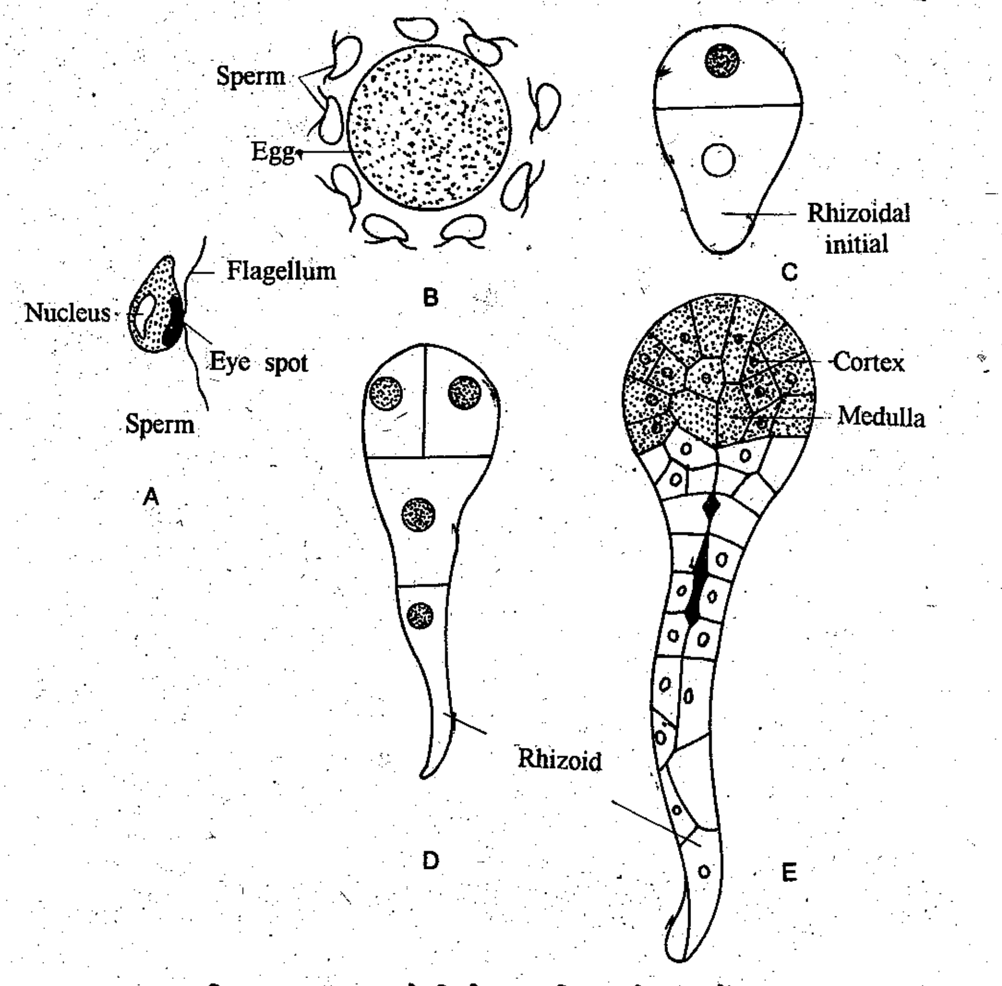

चित्र 4.13 : युग्मनज के निर्माण तथा विकास की अवस्थाऐं।

आधार पर, कंसेप्टिकल के अन्दर कोशिकाओं की सतह होती है - उर्वर (fertile) सतह, जो अंडधानियों के रूप में विकसित होती है (चित्र 4.12ए तथा 4.14ए)। प्रत्येक अंडधानी में एक आधारीय बंध्य कोशिका तथा एक ऊपरी कोशिका होती है जिसमें अर्धसूत्री विभाजन होता है तथा आठ अगुणित अंडे उत्पन्न होते हैं (4.12 सी तथा डी)। धानी के अन्दर कुछ कोशिकाएं अशाखित बहुकोशिकीय रोम जिन्हें सहसूत्र (paraphysis) कहते हैं, उत्पन्न करती हैं जो छिद्र में से गुच्छे (tuft) के रूप में बाहर आते हैं।

पुंधानियां (antheridia) शाखित समसूत्र पर कंसेप्टिकल के अन्दर उत्पन्न होती हैं (चित्र 4.12 बी और 4.14 बी)। प्रत्येक पुंधानी एक एककोष्ठीय बीजाणुधानी की भांति होती है जो अर्धसूत्री विभाजन के द्वारा विभाजित होती है तथा उसके बाद और विभाजित होकर 64 अगुणित शुक्राणु उत्पन्न करती है। द्विकशाभीय शुक्राणु में एक अपेक्षाकृत लंबा कशाभ पीछे की ओर को झुका हुआ होता है तथा एक छोटा आगे की ओर निकला रहता है। इसमें एक अकेला क्लोरोप्लास्ट होता है तथा एक स्पष्ट नारंगी नेत्र बिन्दु होता है (चित्र 4.14ए)।

युग्मकों का निर्गमन समुद्री ज्वारभाटे से संबंधित होता है। निम्न ज्वार भाटा होने पर *फ़्यूकस* प्रपर्ण (fronds) पानी की कमी के कारण संकुचित हो जाते हैं तथा जब ये प्रपर्ण बढ़ते हुऐ ज्वार भाटे के सम्मुख होते हैं, तब अंडे तथा शुक्राणु अपने इर्द गिर्द के समुद्री जल में निर्गमित हो जाते हैं।

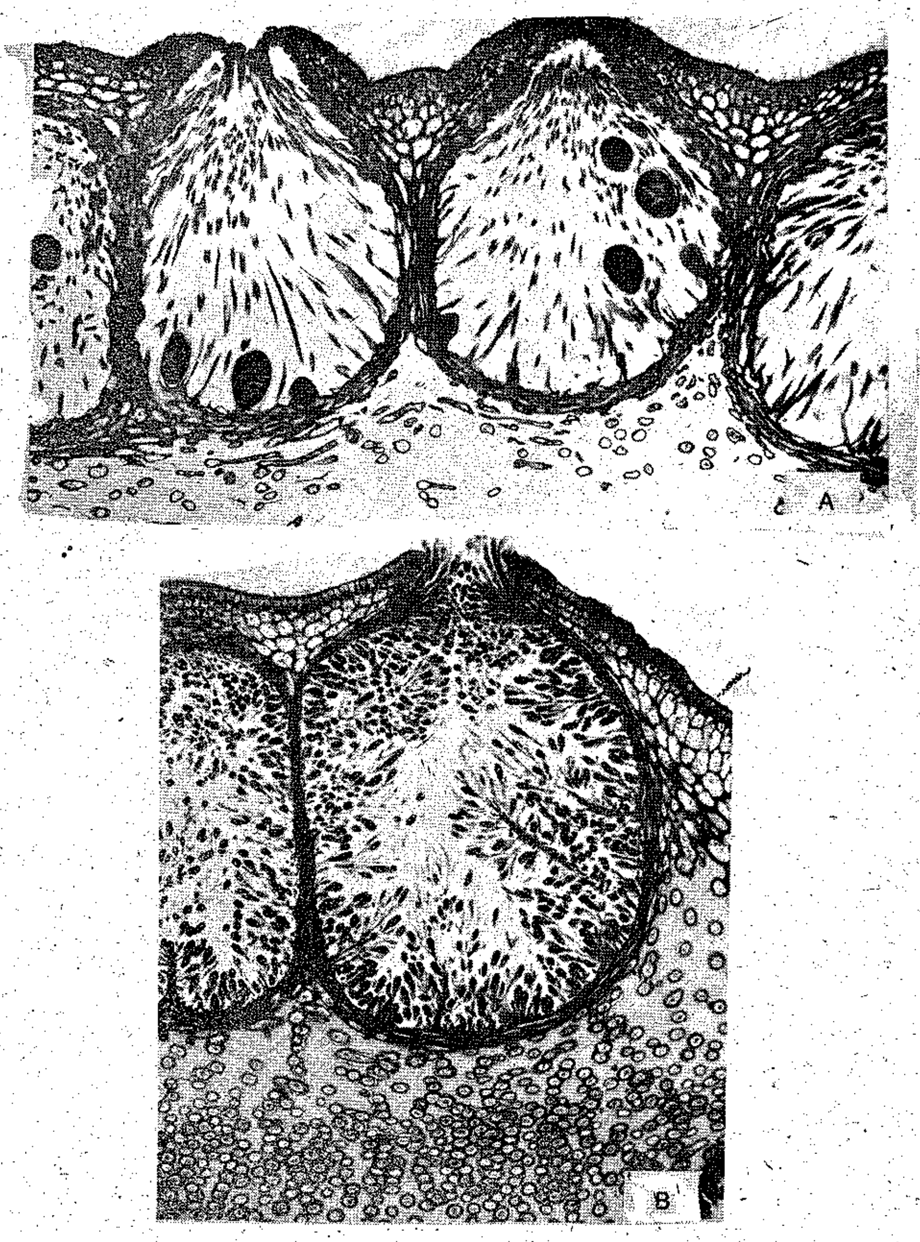

चित्र 4.14 : *फ़्यूकस* : ए) मादा कंसेप्टिकल की अनुप्रस्थ काट, बी) नर कंसेप्टिकल की अनुप्रस्थ काट।

ये माना जाता है कि फ़्यूकस के अंडे, गैमोन (gamone वाष्पशील हाइड्रोकार्बन) स्त्रावित करके शुक्राणुओं को आकर्षित करते हैं। निषेचन के तुरन्त बाद ही युग्मनज के चारों ओर एक भित्ति स्त्रावित हो जाती है। ये देखा जा चुका है कि अनिषेचित अंडे से नूतनोद्भिद् (germlings) अनिषेकजननीय (parthenogenetically) तरीके से भी विकसित हो सकते हैं अगर उनकी तनु ऐसीटिक अम्ल से क्रिया कराई जाये।

द्विगुणित युग्मनज एक ओर मूलाभासी उद्धर्ध (rhizoidal outgrowth) उत्पन्न करने से अंकुरित होते है। यह बाद में भित्ति के बनने से नीचे की ओर मूलाभासी कोशिका तथा ऊपर शीर्ष कोशिका (apical cell) में बट जाता है और फ़्यूकस के प्रपर्ण को जन्म देता है।

जीवनचक्र

फ़्यूकस (*Fucus*) का पौधा द्विगुणित होता है तथा अगुणित अवस्था सिर्फ युग्मकों (अंडों तथा शुक्राणुओं) के द्वारा प्रदर्शित होती है। फ़्यूकस का जीवन चक्र अधिद्विगुणित (diplobiontic) जीवन चक्र के रूप में वर्णित किया जाता है।

ऊपर वर्णित किए गए चार आधारभूत प्रकार के जीवन चक्र चित्र 4.15 में दर्शाए गए हैं।

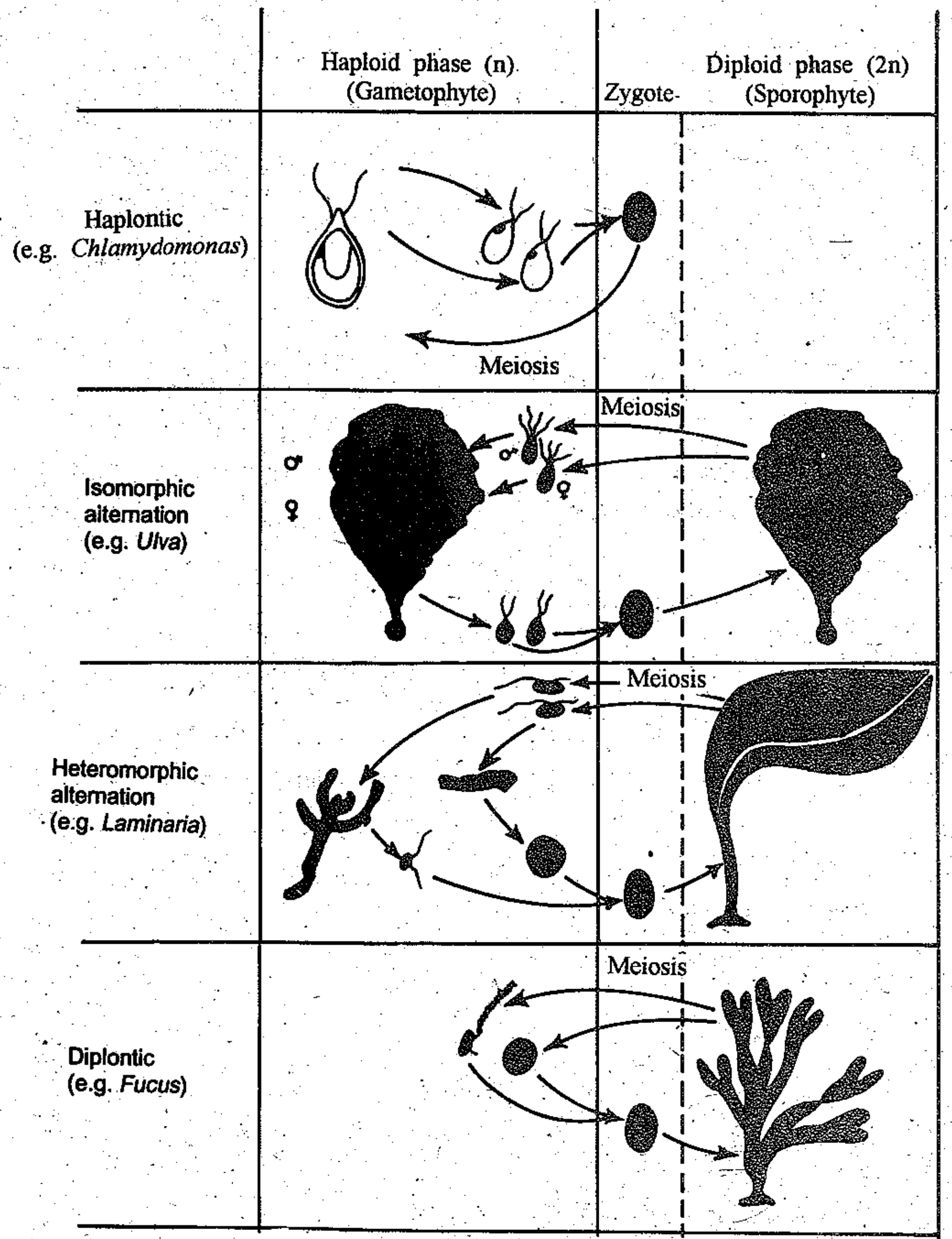

चित्र 4.15 : शैवालों में चार आधारभूत प्रकार के जीवन चक्र।

जीवन चक्र में जब प्रभावी प्रावस्था अगुणित युग्मकोद्भिद् होती है तो यह हेप्लोंटिक जीवन चक्र कहलाता है। इसमें द्विगुणित प्रावस्था या बीजाणुकोद्भिद् अवस्था प्रदर्शित करता है जो कि अर्धसूत्री विभाजन द्वारा बीजाणु उत्पन्न करता है तथा युग्मकोद्भिद् में विकसित होता है।

डिप्लोन्टिक चक्र में मुख्य या प्रभावी प्रावस्था द्विगुणित बीजाणुकोद्भिद् होती है। युग्मनज सीधे ही बीजाणुकोद्भिद् में अंकुरित होता है बाद में अर्धसूत्री विभाजन से अगुणित युग्मक बनते हैं व मिलन के बाद युग्मनज बनता है। डिप्लोन्टिक शैवाल में इस बात को नोट करना आवश्यक है कि स्वतंत्र अगुणित थैलस नहीं पाये जाते हैं।

जब दोनों युग्मकोद्भिद् तथा बीजाणुकोद्भिद् बराबर ही विकसित होते हैं तथा आकारकी में एक जैसे होते हैं तब समरूपी पीढ़ियों का प्रत्यावर्तन होता है। परन्तु यदि युग्मकोद्भिद् बीजाणुकोद्भिद् की अपेक्षा अधूरा विकसित होता है तो जीवन चक्र द्विरूपी पीढ़ियों का प्रत्यावर्तन कहलाता है।

बोध प्रश्न 4.2

अ) कोष्ठकों में दिये गये शब्दों में से सही शब्द चुनिये।

i) *क्लैमाइडोमोनस* के युग्मनज में अंकुरण के दौरान (अर्धसूत्री विभाजन/समसूत्री विभाजन) होता है।

ii) *यूलोथ्रिक्स* में अल्पप्रदीप्त काली अवस्था (short day condition) (जूस्पोर/युग्मक) के निर्माण को आरंभ करती है।

iii) हेप्लोन्टिक जीवन चक्र में पादप काया (अगुणित/द्विगुणित) होती है। सिर्फ युग्मनज (अगुणित/द्विगुणित) होता है।

iv) (हेप्लोन्टिक/डिप्लोन्टिक) प्रकार के जीवन चक्र में युग्मक उत्पन्न करने वाला पादप अगुणित होता है तथा जूस्पोर उत्पन्न करने वाला पादप द्विगुणित होता है।

v) *फ़्यूकस* में शाखाओं के फूले हुए सिरों पर उपस्थित प्रजनन संरचनाऐं (रिसेप्टिकल/कंसेप्टिकल) कहलाती हैं।

vi) (रिसेप्टिकल/कंसेप्टिकल) पर उपस्थित छोटा छिद्र उस गुहा को जाता है जो (रिसेप्टिकल/कंसेप्टिकल) कहलाती हैं।

ब) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्द (शब्दों) से भरिये।

i) पीढ़ियों का प्रत्यावर्तन जहां दी गई जाति के युग्मकोद्भिद् तथा बीजाणुउद्भिद् संरचनात्मक रूप से एक दूसरे से भिन्न-भिन्न होते हैं तथा युग्मकोद्भिद् आमतौर पर सूक्ष्मदर्शीय होता है वह शैवाल.....................कहलाता है।

ii) ....में युग्मकोद्भिद् तथा बीजाणुउद्भिद् संरचनात्मक रूप से एक से होते हैं। इस प्रकार का पीढ़ियों का प्रत्यावर्तन .... कहलाता है।

iii) रिसेप्टिकल की सतह पर .... होते हैं जो गुहा की तरफ ले जाते हैं जिसे .... कहते हैं।

iv) *फ़्यूकस* में .... शुक्राणु पुंधानी में उत्पन्न होते हैं।

v) *फ़्यूकस* में अंडे शुक्राणुओं को आकर्षित करने के लिये .... स्त्रावित करते हैं।

vi) *फ़्यूकस* का जीवन चक्र .... प्रकार का होता है।

4.4 लिंग की उत्पत्ति और विकास

4.4.1 लिंग की उत्पत्ति

लिंग का मूलभूत लक्षण दो कोशिकाओं – युग्मकों का संगलन है लिंग दो प्रकार के होते है, नर (धन) तथा मादा (ऋण)। कौन से कारक कोशिकाओं के संगलन को निर्धारित करते हैं ये स्पष्ट नहीं है लेकिन संगलन दो भिन्न-भिन्न (किन्तु संबन्धित) जीनोम (genome) को एक साथ मिश्रित कर देता है, संभवत: एक दूसरे की कमियों को प्रतिपूरित (compensate) कर देता है। यह विशेष लक्षण जाति की उत्तर जीविता (survival) के लिये जीववैज्ञानिक लाभ हैं। ये आश्चर्य की बात नहीं है कि लगभग सभी जीवों में लैंगिक प्रकार का प्रजनन विकसित हो गया है।

यहां तक कि पूर्व केन्द्रकी नील-हरित शैवालों में तथा बैक्टीरिया में भी भिन्न-भिन्न क्रियाविधिया (mechanisms) खोजी जा चुकी हैं परालैंगिक क्रियाविधि (parasexual mechanism), जिनका आवश्यक लक्षण जीन्स का आदान-प्रदान अथवा उनका मिश्रित होना अथवा दाता (donor) तथा आदाता (recipient) के बीच में जीनोम पूर्ण होना है।

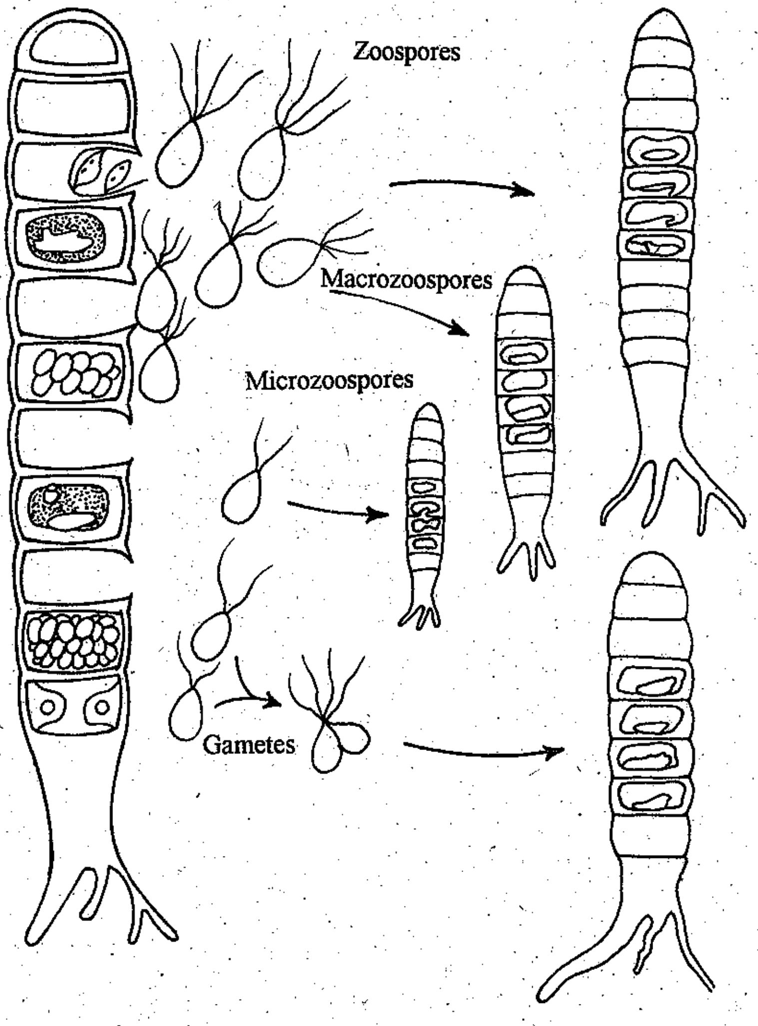

चित्र 4.16 : *यूलोथ्रिक्स* में लिंग की उत्पत्ति को दर्शाता हुआ परिकाल्पनिक आरेख (कुमार तथा सिंह से आधारित, 1990)।

सभी वास्तविक केन्द्रकी शैवालों में, पादपों तथा जंतुओं की भांति ही कोशिकाओं का संगलन ही प्रक्रिया है जिसके द्वारा लैंगिक प्रजनन होता है। प्रश्न यह है कि किस प्रकार इन कोशिकाओं के संगलन की उत्पत्ति हुई तथा आगे किस प्रकार विकास के दौरान ये परिघटना (phenomenon) संरक्षित तथा परिष्कृत (refined) हुई। आज के शैवालों में पाई जाने वाली लैंगिक प्रक्रियाओं का अध्ययन उक्त प्रश्नों के कुछ उत्तर दे सकता है।

निम्न शैवालों में जैसे कि *क्लैमाइडोमोनस, यूलोथ्रिक्स* तथा अन्य में अलैंगिक प्रजनन चल बीजाणुओं (swamers) के द्वारा होता है जो जूस्पोर कहलाते हैं। *यूलोथ्रिक्स* में कोशिका द्वारा होने वाले विभाजनों की संख्या पर निर्भर करते हुए, कम से कम दो प्रकार के जूस्पोर उत्पन्न होते हैं, बड़े **दीर्घ जूस्पोर (macrozoospores)** तथा छोटे **सूक्ष्म जूस्पोर (microzoospores)**। सूक्ष्म जूस्पोर अक्सर नये पौधे उत्पन्न करने में असफल रहते हैं, संभवतः किसी कमी के कारण अथवा किसी ऐसे महत्वपूर्ण पदार्थ का निम्न स्तर होने के कारण जिसकी कोशिका विभाजन तथा वृद्धि के लिये आवश्यकता होती हैं। हालांकि, इस प्रकार के चल बीज़ाणु कभी कभार जोड़ों में संगलित होते हुए पाये जाते हैं तथा उसके बाद *यूलोथ्रिक्स* के तंतुओं में विकसित होते हैं। ऐसा लगता है कि दीर्घजूस्पोर स्वपर्याप्त होते हैं तथा उन्हें इस प्रकार के संगलन की आवश्यकता नहीं होती है।

बहुत से शैवालों में जूस्पोर तथा युग्मक की संरचना के बीच में कोई अन्तर नहीं किया जा सकता है सिर्फ उनके व्यवहार के अतिरिक्त - जूस्पोर सीधे ही तंतु में विकसित हो जाता है जबकि युग्मक को आगे के विकास के लिये दूसरे युग्मक के साथ संगलन की आवश्यकता होती है। यदि कुछ प्रकार के जूस्पोर - छोटे सूक्ष्मजूस्पोर युग्मकों की भांति व्यवहार करते हैं तो कभी संगलित होने में असफल रहने पर युग्मक जूस्पोर की भांति व्यवहार कर सकते हैं तथा सीधे ही पादप में विकसित हो जाते हैं- इस परिघटना की उपस्थिति जो कि अनिषेकजनन (parthenogenesis) कहलाती है, विविध प्रकार के जीवों में रिपोर्ट की गई है। इस प्रकार के प्रेक्षण सूचित करते हैं कि युग्मक रूपान्तरित जूस्पोर हैं तथा युग्मकीय संगलन की उत्पत्ति छोटे तथा कमजोर जूस्पोर के दुर्घटनावश संगलित होने से हुई थी। सामान्यतः संगलन आनुवंशिक मिश्रण के द्वारा जीववैज्ञानिक उत्तरजीविता के लिए उपयोगी गुणों को अर्जित करने में सहायक है। इस प्रकार लिंग के आवश्यक लक्षण धारित रहे तथा विकास के दौरान और संशोधित हो गये।

4.4.2 लिंग का विकास

समयुग्मन, एक समान छोटे युग्मकों का संगलन लिंग का सबसे पहला चरण प्रतीत होता है। हालांकि संरचनात्मक रूप से समान युग्मकों की उत्पत्ति भिन्न-भिन्न हो सकती है जो दो भिन्न-भिन्न मैथुन प्रकारों धन तथा ऋण से उत्पन्न हुए हों (विषमथैलिक)।

सरलतम प्राचीन अवस्था संरचनात्मक रूप से समान युग्मकों का संगलन (जो फिर कभी दुर्घटनावश ना होकर बल्कि नियमित हो) प्रतीत होती है, जो शायद एक ही थैलस से उत्पन्न हुए हों- समथैलिक समयुग्मन। ये बाद में विषमथैलिक समयुग्मी संगलन द्वारा और संशोधित हो गया, जिसमें हालांकि युग्मक संरचनात्मक रूप से समान दिखाई देते हैं। लेकिन उनमें विपरीत मैथुन प्रकारों, सिर्फ धन तथा ऋण के बीच में संगलन को उत्साहित करने के लिये आनुवंशिक तथा जैवरासायनिक भिन्नताएँ होती हैं।

असमयुग्मन एक बीच की अवस्था बनाता है क्योंकि इसमें आकार में स्पष्ट भिन्नता वाले युग्मकों का संगलन हो सकता है। हालांकि दोनों युग्मक कशाभ युक्त होते हैं लेकिन बड़ा वाला छोटे नर युग्मक की अपेक्षा कम क्रियाशील हो सकता है। और अधिक परिष्कृत होने पर अंततः विषमयुग्मन होता है जो सबसे अधिक प्रचलित तथा उच्चतर थैलस रूपी शैवालों में लैंगिक प्रजनन का एकमात्र तरीका है।

विषमयुग्मन बड़े अचल अंडे तथा छोटे चल पुमणु (spermatozoid) द्वारा परिलक्षित होता है। युग्मक अंडधानी में तथा पुंधानी में उत्पन्न हो सकते हैं जबकि अंडधानी सिर्फ कुछ अंडे (आठ) अथवा कुछ शैवालों में सिर्फ एक अंडा उत्पन्न करती है, जबकि उत्पन्न हुये पुमणुओं की संख्या हमेशा बहुत ज्यादा होती है। सामान्यतः अंडे अपने आसपास के जल में निर्गमित हो जाते हैं लेकिन अंडधानी के अन्दर ही अंडों के रहने की प्रवृति पाई जाती है निषेचन भी वहीं होता है। युग्मनज तथा ऊस्पोर (oospore) खाली अंडधानी के अन्दर आगे विकसित हो सकते हैं।

ये बात ध्यान देने योग्य है कि लिंग की उत्पत्ति और विकास का उपर्युक्त विवरण पूर्णतः विभिन्न शैवालों की प्रजनन प्रक्रियाओं के अध्ययन पर आधारित है। जीवविज्ञानियों ने हाल ही के वर्षों में पता लगाया है कि शैवाल में लिंग का आनुवंशिक तथा जैवरासायनिक आधार होता है। *क्लैमाइडोमोनस* में युग्मक एक वाष्पशील पदार्थ उत्पन्न करते हैं जो विपरीत लिंगों के युग्मकों को आकर्षित करता है। *फ्यूकस,*

लेमिनैरिया, इडोगोनियम तथा अन्य बहुत से शैवालों के **अंडे पुमणुओं** को आकर्षित करने के लिये जाति-विशिष्ट रसायनों का उत्पादन करते हैं। ये रसायन सामूहिक नाम गैमोन, अथवा फैरोमोन (pheromone) अथवा सेक्स हार्मोन से जाने जाते हैं।

शैवालों में, प्रजनन से संबद्ध कुछ अन्य प्रक्रियाऐं जैसे युग्मकजनन (gametogenesis), युग्मकों का रसायन अनुचलन (chemotaxis of gametes), विपरीत लिंगों के युग्मकों का आसंजन (adhesion) तथा संगलन-फैरोमोन द्वारा नियंत्रित माना जाता है।

बोध प्रश्न 4.3

अ) निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य हैं तथा कौन से असत्य हैं। दिये गये कोष्ठकों में सत्य के लिए स व असत्य के लिए अ लिखें।

i) बहुत से शैवालों में जूस्पोर तथा युग्मक की संरचना से, उनमें अन्तर नहीं किया जा सकता है। ☐

ii) शैवालों में किसी समय जूस्पोर युग्मक की भांति व्यवहार करते हैं और युग्मक जूस्पोर की भांति व्यवहार करते हैं। ☐

iii) धन तथा ऋण युग्मक आनुवंशिक रूप से समान होते हैं। ☐

4.5 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा :

- शैवालों में प्रजनन कायिक, अलैंगिक तथा लैंगिक प्रकार का होता है।
- अलैंगिक प्रजनन किसी कायिक कोशिका या विशेष कोशिकाओं में विभिन्न प्रकार के बीजाणुओं के निर्माण द्वारा होता है।
- शैवालों में लैंगिक प्रजनन में दो युग्मको का संगलन होता है।
- युग्मकों में नर या मादा कहलाने के लिये स्पष्ट संरचनात्मक विभेद नहीं भी हो सकते हैं, इसलिये वे धन तथा ऋण मैथुन प्रकार कहे जाते हैं। संगलन से बनने वाला उत्पाद युग्मनज कहलाता है।
- समयुग्मन में दोनों युग्मक आकार में समान होते हैं तथा कशाभयुक्त होते हैं, असमयुग्मन में दोनों कशाभयुक्त होते हैं लेकिन एक युग्मक आकृति और आकार में अपेक्षाकृत बड़ा होता है तथा मादा अथवा ऋण प्रकार कहलाता है। विषमयुग्मन में बड़ा वाला बिना कशाभ के अचल अंडा होता है तथा नर युग्मक, पुमणु छोटे तथा चल होते हैं।
- अगुणित युग्मक समसूत्री विभाजन के द्वारा अगुणित थैलस से उत्पन्न होते हैं अथवा द्विगुणित थैलस से अर्धसूत्री विभाजन के द्वारा उत्पन्न होते हैं। एक शैवाल के पूर्ण जीवन चक्र में दो प्रावस्थाऐं होती हैं: अगुणित प्रावस्था तथा द्विगुणित प्रावस्था।
- भिन्न भिन्न शैवालों में अगुणित तथा द्विगुणित प्रावस्थाए विभिन्न प्रकार की संरचनाएं दिखाती हैं तथा दोनों प्रावस्थाए एक दूसरे के साथ प्रत्यावर्तित (alternate) होती हैं- जो पीढ़ियों का प्रत्यावर्तन कहलाता है, चाहे दोनों प्रावस्थाए एक ही जीवन चक्र में हों।
- शैवाल हेप्लोन्टिक, डिप्लोन्टिक, समरूपी तथा विषमरूपी पीढ़ियों का प्रत्यावर्तन दर्शाते हैं।
- शैवालों में युग्मकों के संगलन का अध्ययन, लिंग की उत्पत्ति पर प्रकाश डालता है।

4.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. शैवाल के जीवन चक्र को नियंत्रित करने वाले कारकों को सूचीबद्ध कीजिये।

....

....

....

....

....

....

2. चिन्हित आरेख की सहायता से लैंगिक प्रकार के प्रजनन में तीनों प्रकार के युग्मकीय संगलन का वर्णन कीजिये।

3. किसी विशेष जाति को लैंगिक प्रजनन से कौन सा विशेष लाभ होता है?

....

....

....

....

....

....

4. "युग्मक रूपान्तरित जूस्पोर होते हैं" टिप्पणी कीजिये।

....

....

....

....

4.7 उत्तर

बोध प्रश्न

4.1 अ) *ऐनासिस्टिस* और *माइक्रोसिस्टिस*

ब) i) निश्चेष्ट बीजाणु, ii) अचल बीजाणु, iii) नये थैलस,
iv) श्लेष्मस्थता, v) समथैलिक,
vi) विषम थैलिक, vii) समयुग्मन, viii) स्पष्ट रूप से भिन्न

स) i) अगुणित, ii) मादा, नर, गैमोन, iii) युग्माणु

4.2 अ) i) अर्धसूत्री विभाजन

ii) जूस्पोर

iii) अगुणित, द्विगुणित

iv) डिप्लोन्टिक

v) रिसेप्टिकल

vi) रिसेप्टिकल, कसेप्टिकल

ब) i) द्विरूपी

ii) *अल्वा*, समरूपी

iii) आस्यक, कसेप्टिकल

iv) द्विकशाभयुक्त

v) गैमोन

vi) डिप्लोन्टिक

4.3 i) सत्य ii) सत्य iii) असत्य

अंत में कुछ प्रश्न

1. तापमान

   प्रकाश

   पोषक तत्वों की उपलब्धता

   मौसम

   तरंग क्रिया

   ज्वार भाटे की आवर्तिता

2. समयुग्मन

   असमयुग्मन

   विषमयुग्मन

3. इसमें दो भिन्न-भिन्न किन्तु संबन्धित जीनोमो का मिश्रण होता है जो एक दूसरे की कमी की पूर्ति करता है। ये विशेष रूप से जाति की उत्तरजीविता के लिये लाभदायक होता है।

4. बहुत से शैवालों मे युग्मक तथा जूस्पोर में विभेद करना सम्भव नहीं है केवल उनके आचरण के अतिरिक्त - एक जूस्पोर सीधे एक तंतु बनाता है जबकि युग्मकों को तंतु बनाने के लिए संगलित होना आवश्यक है। यदि कुछ प्रकार के जूस्पोर - छोटे सूक्ष्म जूस्पोर कभी कभी युग्मकों की तरह व्यवहार करते हैं, तो कभी संगलित होने में असफल होने वाले युग्मक जूस्पोर की भांति व्यवहार करते हैं और सीधे ही थैलस का निर्माण करते हैं ये परिघटना अनिषेकजनन कहलाती है और विविध प्रकार के जीवों में पाई जाती है। इस प्रकार के प्रेक्षण सूचित करते हैं कि युग्मक रूपान्तरित जूस्पोर है तथा युग्मकीय संगलन की उत्पत्ति छोटे और कमजोर जूस्पोर के दुर्घटनावश संगलित होने से हुई थी।

इकाई 5 शैवालों का वर्गीकरण

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

अध्ययन निर्देशिका

5.2 शैवालों के वर्गीकरण का आधार

5.3 पूर्व केन्द्रकी शैवाल

सायनोफाइटा (नील-हरित शैवाल)

5.4 वास्तविक केन्द्रकी शैवाल

प्रभाग क्लोरोफ़ाइटा (हरे शैवाल)

प्रभाग फ़ियोफ़ाइटा (भूरे शैवाल)

प्रभाग रोडोफ़ाइटा (लाल शैवाल)

प्रभाग ज़ैन्थोफ़ाइटा (पीले हरे शैवाल)

प्रभाग क्राइसोफ़ाइटा (सुनहरे भूरे शैवाल)

प्रभाग यूग्लीनोफ़ाइटा (यूग्लीनोइड्स)

प्रभाग डाइनोफ़ाइटा (घूर्णीकशाभ या डाइनोफ्लैजेलेट्स)

प्रभाग क्रिप्टोफ़ाइटा (क्रिप्टोमोनाड्स)

प्रभाग बैसिलेरियोफ़ाइटा (डायटम्स)

5.5 कुछ वंशों का वर्गीकृत स्थान

5.6 सारांश

5.7 अंत में कुछ प्रश्न

5.8 उत्तर

5.1 प्रस्तावना

पिछली दो इकाइयों से यह स्पष्ट है कि शैवाल संरचना तथा प्रजनन में बहुत अधिक विविधता दर्शाते हैं। इस इकाई में आप इस विविध समूह का वर्गीकरण पढ़ेंगे।

वर्गीकरण का अर्थ है जीवों को उनके लक्षणों में समानताओं के आधार पर समूहित करना। यह कल्पना नहीं बल्कि वास्तविकता है कि वे जीव जो समान आकारिकी, जीवनचक्र, शरीरक्रिया विज्ञान तथा जैव-रसायन दर्शाते हैं वे आनुवंशिक रूप से संबंधित होते हैं (जाति-वृत्तीय रूप से संबंधित का अर्थ है विकासात्मक दृष्टिकोण से संबंधित) तथा उन्हें एक साथ समूहित करना उचित होता है।

पादपों के अन्य समूहों के बीच शैवालों का स्थान एक समूह के रूप में ब्लॉक 1 अ में (इकाई 2, पृ. 39) में बताया जा चुका है। यह संकेत दिया गया था कि शैवालों को उनके सामान्य लक्षणों के आधार पर आठ प्रभागों (इकाई 1, पृष्ठ 21) में समूहित अथवा वर्गीकृत किया जा सकता है। इकाई 1 में विभिन्न समूहों के बीच में संबंधों की भी चर्चा की गई थी। आप यह भी जान गये हैं कि सामान्य नील-हरित शैवालों को प्रभाग सायनोबैक्टीरिया के रूप में समूहित किया गया है, तथा बैक्टीरिया के साथ जगत् मोनेरा के अंतर्गत रखा गया है।

इस इकाई में आपको शैवालों के विभिन्न प्रभागों के लक्षणों से परिचित कराया जायेगा जो उनको वर्गीकृत करने में सहायक होते हैं।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- शैवालों के वर्गीकरण के लिये प्रयुक्त विभिन्न आधारों को सूचीबद्ध कर सकेंगे,

- यह समझा सकेंगे कि किसलिये शैवालों को पादपों की बजाय प्रजीव (protists) के रूप में वर्गीकृत किया गया है,
- शैवालों के विभिन्न प्रभागों को सूचीबद्ध कर सकेंगे तथा प्रत्येक की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे,
- इकाई 3 में अध्ययन किये गये शैवालों के वंशों (genera) में प्रत्येक को प्रभाग (division), गण (order) तथा कुल (family) में वर्गीकृत कर सकेंगे,
- प्रत्येक प्रभाग के कुंछ आम शैवालों के उदाहरण दे सकेंगे।

अध्ययन निर्देशिका

इस इकाई में हमने प्रत्येक प्रभाग के बहुत से शैवालों के उदाहरण दिए हैं लेकिन आपसे प्रत्येक प्रभाग के तीन उदाहरणों को याद रखने की आशा की जाती है।

5.2 शैवालों के वर्गीकरण का आधार

शैवाल विज्ञानियों द्वारा उपयोग किये जाने वाले वर्गीकरण के आधार अथवा मानक काफी भिन्न-भिन्न हैं। सामान्यत: बाह्य आकारिकी से लेकर सूक्ष्मसंरचना, गुणसूत्र संख्या तथा उनकी आकारिकी, वर्णकों का संयोजन, कोशिकीय संचयन तत्वों की प्रकृति, एन्ज़ाइमों, समएन्ज़ाइमों (isoenzymes), डी.एन.ए. सजातीयता, तथा डी.एन.ए. पट्टाभन (banding) आदि बहुत से लक्षणों का साथ-साथ उपयोग किया जाता है। जैसे-जैसे नई तकनीकें विकसित होती जा रही हैं उनका उपयोग अधिक सुस्पष्ट रूप से जीवों में संबद्धता (अथवा उसकी अनुपस्थिति को) को सुनिश्चित करने के लिये होने लगा है जो अन्यथा एक दूसरे से संबन्धित प्रतीत होते हैं।

शैवालों के प्रत्येक प्रभाग की विशेषताओं का वर्णन आगे किया गया है। यह नोट किया जाना चाहिये कि प्रत्येक प्रभाग पुन: गणों, कुलों, वंशों तथा जातियों (species) में विभाजित किया गया है। भाग 5.5 में आप उन सभी शैवालों का वर्गीकरण पायेंगे जिन्हें आपके अध्ययन में शामिल किया गया है। कृपया ध्यान दीजिये कि वे सिर्फ कुछ प्रभागों, गणों व कुलों के ही हैं। समय की पाबंदी के कारण अन्य प्रभागों के प्रतिनिधियों को आपके अध्ययन में शामिल नहीं किया गया है, ना कि इसलिये कि जीव जगत् में वे कुछ कम महत्वपूर्ण हैं।

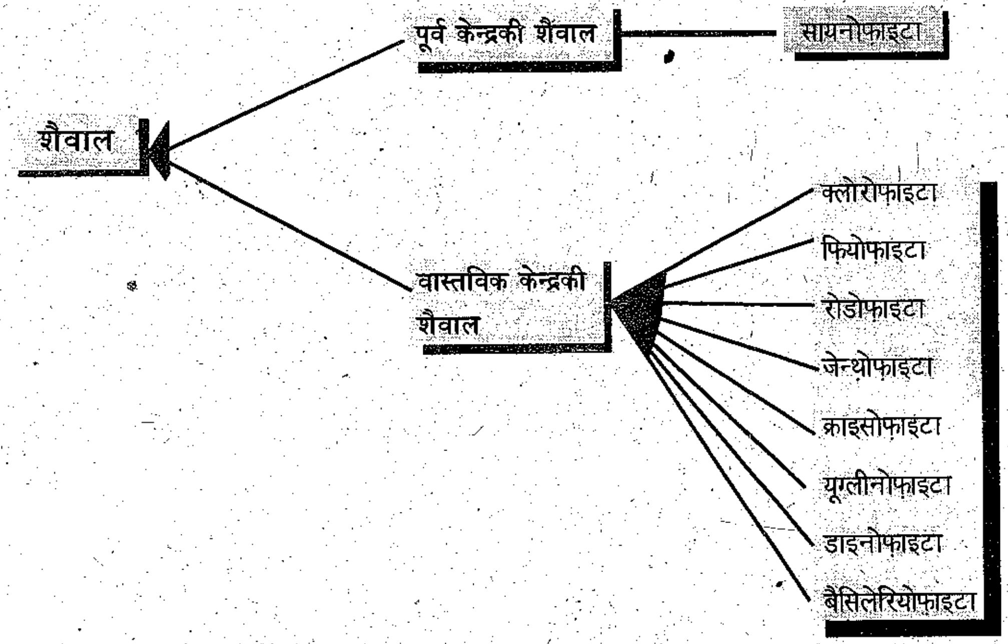

5.3 पूर्व केन्द्रकी शैवाल

5.3.1 प्रभाग सायनोफ़ाइटा (सायनोबैक्टीरिया अथवा नील-हरित शैवाल)

पूर्व केन्द्रकी शैवालों को प्रभाग सायनोफ़ाइटा (Cyanophyta) में रखा गया है। इस प्रभाग के शैवाल एक कोशिकीय, निवही, तंतुमय, शाखित अथवा शाखा रहित, व 'वास्तविक' अथवा 'आभासी' प्रकार के शाखन वाले हो सकते हैं। अधिकांश प्रकार श्लेष्मी या श्लेषी आवरण में धंसी रहती हैं।

कोशिका भित्ति की रचना और संयोजन जीवाणुओं की कोशिका भित्ति के समान ही होते है। यह सुस्पष्ट रूप से म्यूकोपेप्टाइड्स (mycopeptides) तथा म्यूरेमिक अम्ल (muramic acid) की बनी होती है।

कोशिका सूक्ष्मसंरचना में, व्यवस्थित केन्द्रक, माइटोकॉन्ड्रिया अथवा क्लोरोप्लास्ट नहीं दिखलाती है। प्रकाश संश्लेषी पटलिकाएं तथा 70S प्रकार के राइबोसोम कोशिकाओं के कोशिकाद्रव्य में पाये जाते हैं। कुछ तंतुमय प्रकार की शैवालों में विशिष्ट प्रकार की कोशिकाएं-हेटेरोसिस्ट्स (चित्र 3.2 देखें) पाई जाती हैं जो नाइट्रोजन यौगिकीकरण में संलग्न रहती हैं।

प्रमुख प्रकाश संश्लेषी वर्णक क्लोरोफिल *a* तथा फ़ाइकोबिलिन (फ़ाइकोसायनिन तथा फ़ाइकोइरिथ्रिन) हैं। बहुत से कैरोटिनॉइड्स व β-कैरोटिन भी उपस्थित रहते हैं। जिनमें से कुछ खासतौर पर सिर्फ नील-हरित शैवालों में ही पाये जाते हैं।

कार्बन ग्लाइकोजन के रूप में तथा नाइट्रोजन, सायनोफ़ाइसिन कणिकाओं (cyanophycean granules) में संग्रहित रहते हैं। अन्य कणिकाएं जैसे कि पॉलीफ़ॉस्फ़ेट कणिकाएं (polyphosphate granules), कुछ एन्ज़ाइम पुंज (aggregates) तथा कार्बोक्सीसोम्स (carboxysomes) भी उपस्थित हो सकते हैं।

प्रजनन सामान्य कोशिका विभाजन के द्वारा होता है। नील-हरित शैवालों में कोई चल-कोशिकाएं नहीं पाई जाती हैं तथा वे लैंगिक प्रकार के प्रजनन के द्वारा नहीं संवर्धित होती हैं। मोटी भित्ति की कोशिकाएं जिन्हें निष्चेष्ट बीजाणु (akinetes) अथवा बीजाणु कहते हैं, वे कुछ शैवाल प्रकारों में चिरकालिकता (perennation) अथवा अलैंगिक प्रजनन के लिये पाई जाती हैं।

नील-हरित शैवाल पृथ्वी पर सभी जगहों पर विभिन्न आवास स्थानों में जैसे ताजे पानी की झीलों, तालों, नदियों, गर्म पानी के झरनों, खारे पानी के चश्मों, उत्तर ध्रुवीय तथा दक्षिण ध्रुवीय क्षेत्रों में, रेगिस्तानी भूमि, भूपृष्ठीय (sub-aerial) सतहों जैसे पेड़ों के तने, इमारतों के छज्जों तथा पत्थरों की सतहों पर पाये जाते हैं।

उदाहरण: *ऐनासिस्टिस (Anacystis), माइक्रोसिस्टिस (Microcystis), नॉस्टॉक (Nostoc), ऐनाबीना (Anabaena), ऑसिलैटोरिया (Oscillatoria), स्पाइरूलाइना (Spirulina), कैलोथ्रिक्स (Calothrix), टॉलिपोथ्रिक्स (Tolypothrix), ग्लियोट्राइकिया (Gleotrichia), लिंग्ब्या (Lyngbya), साइटोनीमा (Scytonema) और स्टाइगोनीमा (Stigonema)*।

5.4 वास्तविक केन्द्रकी शैवाल

जैसा कि आप पहले पढ़ चुके हैं, कि जगत् प्रोटिस्टा में शैवालों के आठ प्रभाग सम्मिलित हैं। कुछ शैवाल विज्ञानी बैसिलेरियोफ़ाइटा को क्राइसोफ़ाइटा से अलग प्रभाग में रखकर शैवालों को 9 प्रभागों में विभाजित करते हैं। आप नोट कर सकते हैं कि हमने भी बैसिलेरियोफ़ाइटा को पृथक प्रभाग में लिया है। इन सभी प्रभागों का नीचे वर्णन किया गया है।

5.4.1 प्रभाग क्लोरोफ़ाइटा (हरित शैवाल)

क्लोरोफ़ाइटा (Chlorophyta) में हरित शैवालों के एककोशिकीय व बहुकोशिकीय प्रकार सम्मिलित हैं। बहुकोशिकीय प्रकार तंतुमय, शाखित अथवा अशाखित, थैलसाभ, नलिकाकार अथवा परत रूपी कोशिकाओं की व्यवस्था के रूप में हो सकते है। कुछ हरित शैवाल निवही प्रकार के भी होते हैं। हरित-शैवालों की

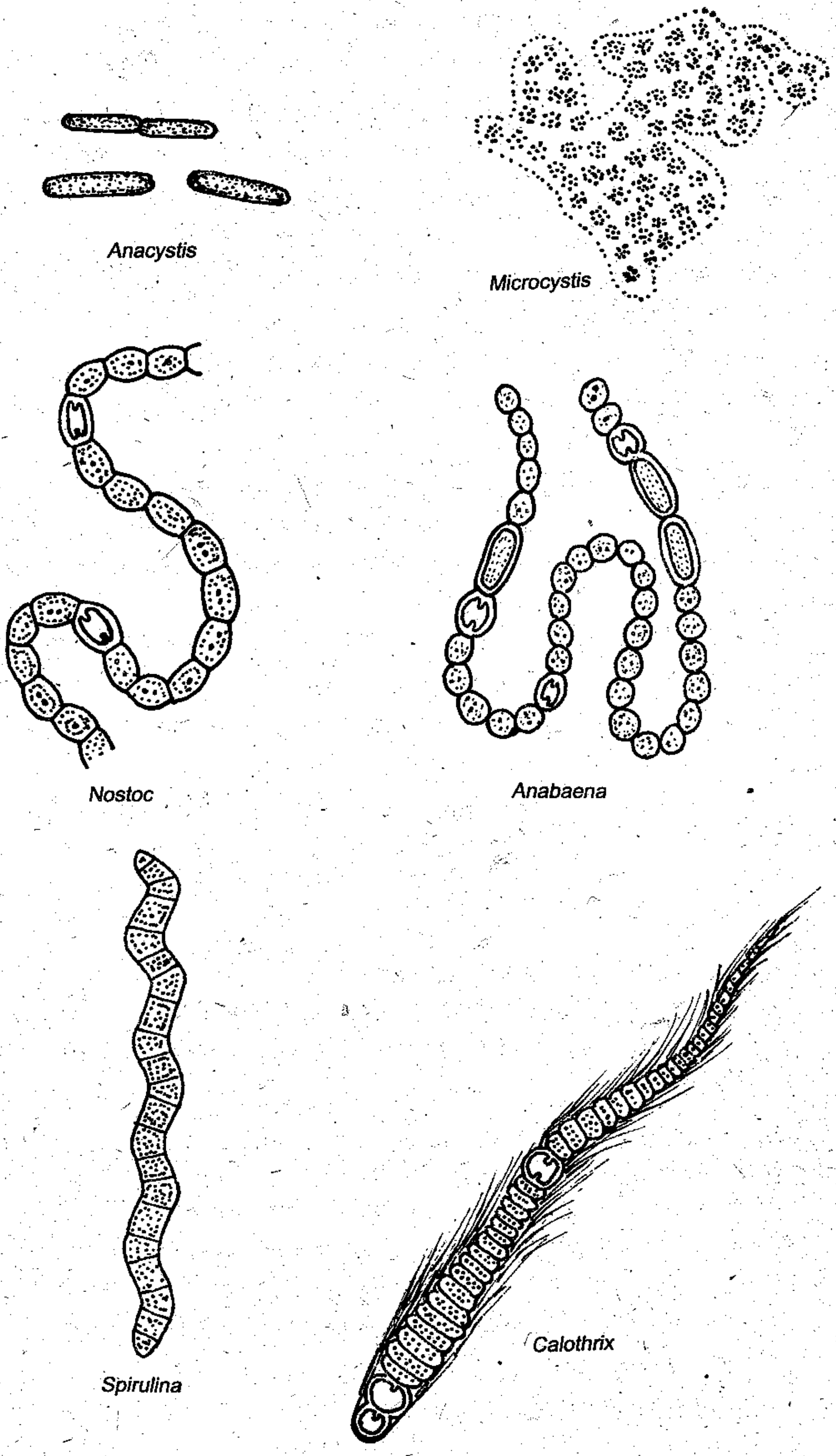

चित्र 5.1 : नील-हरित शैवाल के कुछ उदाहरण।

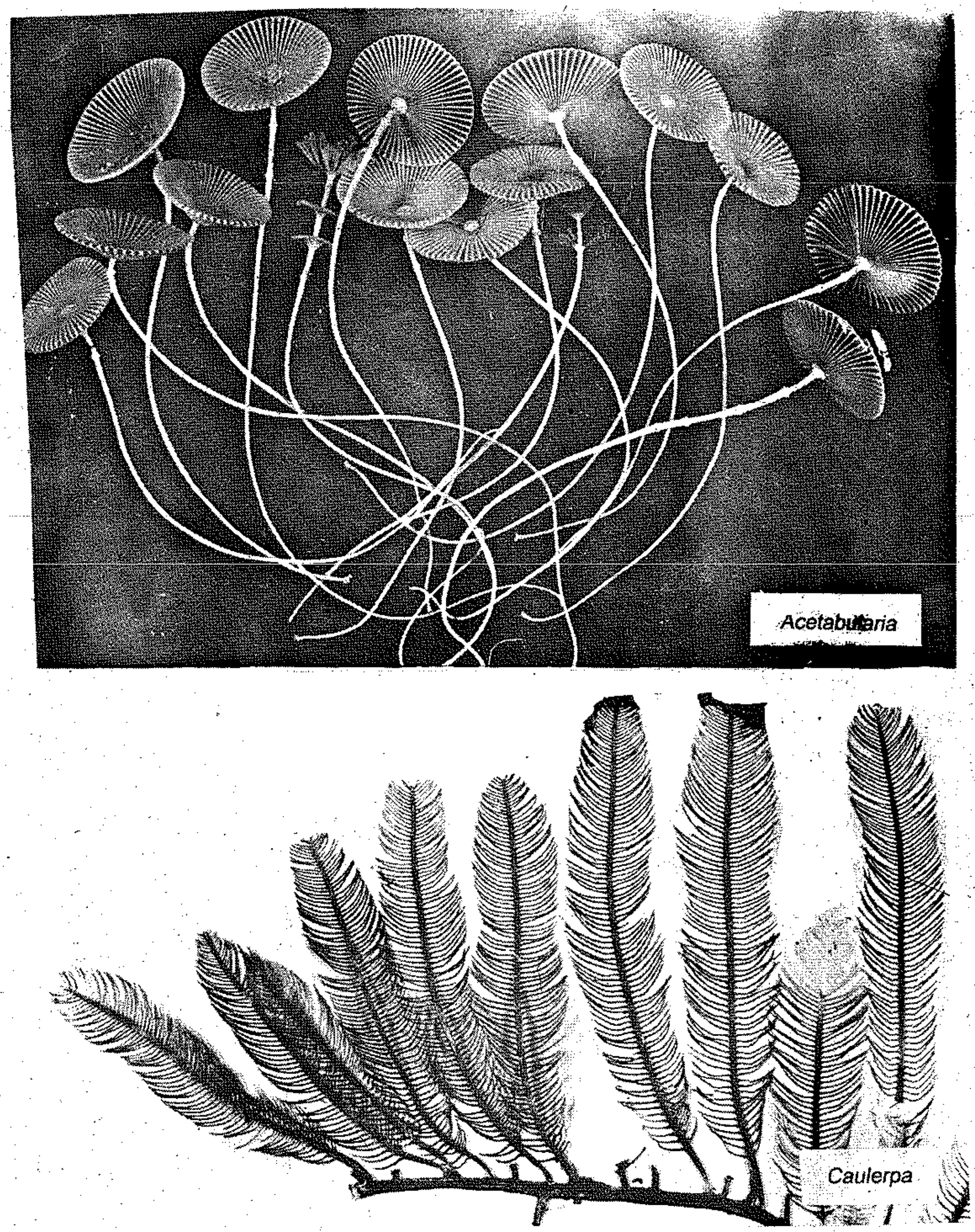

चित्र 5.4 : कई अलग-अलग *ऐसीटेबुलेरिया* के थैलस (आमतौर पर mermaid's wine glass कहलाता है) तथा *कौलर्पा* एक संकोशकी (coenocytic) शैवाल (पी. दयानन्दन के सौजन्य से)।

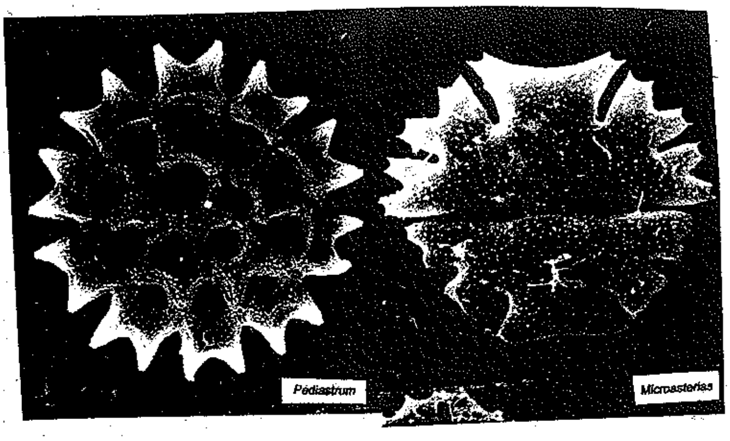

चित्र 5.5 : ए) *पैडिएस्ट्रम,* बी) *माइक्रोएस्ट्रियास* का स्कैनिंग इलेक्ट्रा। सूक्ष्मदर्शी चित्र (पी. दयानन्दन के सौजन्य से)।

हरित शैवाल ताजे पानी तथा समुद्री आवास स्थानों में पाये जाते हैं: कुछ नम मिट्टी अथवा पेड़ों की छालों पर भूपृष्ठीय भी हो सकते हैं।

उदाहरण:

क्लोरेला (*Chlorella*), *क्लैमाइडोमोनस* (*Chlamydomonas*), *पैडिएस्ट्रम* (*Pediastrum*), *स्पाइरोगाइरा* (*Spirogyra*), *क्लेडोफ़ोरा* (*Cladophora*), *ऐसीटेबुलेरिया* (*Acetabularia*), *ट्रैंटीफ़ोलिया* (*Trentepohlia*), *माइक्रोएस्ट्रियास* (*Micrasterias*) और *कौलर्पा* (*Caulerpa*)।

5.4.2 प्रभाग फ़ियोफ़ाइटा (भूरे शैवाल)

संरचनात्मक रूप से ये आकारिकी में सबसे जटिल होते हैं। ये सरल शाखित तंतुओं से लेकर स्थूल काया तक होते हैं।

कोशिका भित्ति का संयोजन जटिल होता है। इसमें सेलुलोस के अतिरिक्त ऐल्जिन (**algin**), फ़्यूकोइडिन (**fucoidin**) भी हो सकते हैं।

प्रमुख प्रकाश संश्लेषी वर्णक क्लोरोफिल a तथा c एवं कैरोटिनॉइड्स हैं। फ़्यूकोजैन्थिन (भूरे रंग का) बहुत अधिक मात्रा में उपस्थित रहता है जो क्लोरोफिल के हरे रंग को दबा कर शैवाल को भूरा रंग प्रदान करता है।

प्रकाश संश्लेषण का संग्रह उत्पाद मैनिटॉल (**mannitol**) व कभी कभी लेमिनेरिन (**laminarin**) होता है। विरले ही लिपिड की छोटी बूंदें भी कोशिकाओं में पायी जा सकती हैं। लैंगिक प्रजनन समयुग्मन से लेकर विषमयुग्मन तक हो सकता है। गतिशील चल-बीजाणुओं में दो असमानपार्श्व में लगे हुए कशाभ होते हैं, एक कशाभ अपेक्षाकृत बड़ा व अग्र तथा दूसरा छोटा एवं पश्च होता है।

अधिकांश भूरे शैवाल समुद्री तथा साइज में बड़े होते हैं जो सामान्यत: केल्प्स (**kelps**) कहलाते हैं। ये आयोडीन, ऐगार (**agar**) तथा संबद्ध उत्पादों के स्त्रोत हैं।

उदाहरण: *एक्टोकार्पस* (*Ectocarpus*), *फ़्यूकस* (*Fucus*), *लेमिनैरिया* (*Laminaria*), *सर्गेसम* (*Sargassum*), *डिक्टियोटा* (*Dictyota*), *ऐलेरिया* (*Alaria*), *मेक्रोसिस्टिस* (*Macrocystis*), *नीरिओसिस्टिस* (*Nereocystis*), *पैडाइना* (*Padina*)।

5.4.3 प्रभाग रोडोफ़ाइटा (लाल शैवाल)

यह अधिकांशत: बहुकोशिकीय, (कुछ थैलसाभ, व एक शैवाल कैल्शियम *पॉरफ़िरिडियम* (*Porphyridium*) एककोशिकीय है) व बहुत अधिक शाखित होते हैं। पादप काया कैल्शियम कार्बोनेट की पपड़ी से ढकी हो सकती है।

प्रवाली शैवाल- लाल शैवालों का समूह जो कैल्शियम कार्बोनेट अपनी कोशिकाओं के चारों ओर स्त्रावित करके दृढ़ थैलस बनाते हैं। यह इस धारणा के विपरीत है कि कोरल जन्तु अकेले ही कोरल रीफ बनाते है। प्रवाली शैवाल उष्णकटिबंधीय जलों में कोरल रीफ के बनाने में महत्वपूर्ण होते हैं।

सेलुलोस के अतिरिक्त कोशिका-भित्ति की सतह के ऊपर की ओर पेक्टिन (**pectin**), पॉलीसल्फेट (**polysulphate**), एस्टर्स (**esters**) तथा बहुत अधिक मात्रा में पॉलिसैकेराइड्स (**polysaccharides**) पाये जाते हैं। ये पॉलिसैकेराइड्स, ऐगार तथा कैरागीनन्स (**carrageenans**) के स्रोत हैं। कुछ लाल शैवाल उदाहरण के लिए प्रवाली (**coralline**) शैवाल अपनी कोशिकाओं के चारों ओर कैल्शियम कार्बोनेट स्त्रावित कर लेते हैं तथा दृढ़ थैलस बनाते हैं।

प्रमुख प्रकाश संश्लेषी वर्णक क्लोरोफिल a तथा d, फ़ाइकोबिलिन्स (**phycobilins**), लाल फ़ाइकोइरिथ्रिन हैं तथा कुछ लाल शैवालों में फ़ाइकोसायनिन भी पाया जाता है। शैवाल बहुत अधिक मात्रा में फ़ाइकोइरिथ्रिन की उपस्थिति के कारण ही लाल (अथवा गुलाबी रंग के) दिखाई देते हैं।

कोशिकाओं में संचित खाद्य पदार्थ फ्लोरिडी स्टार्च है।

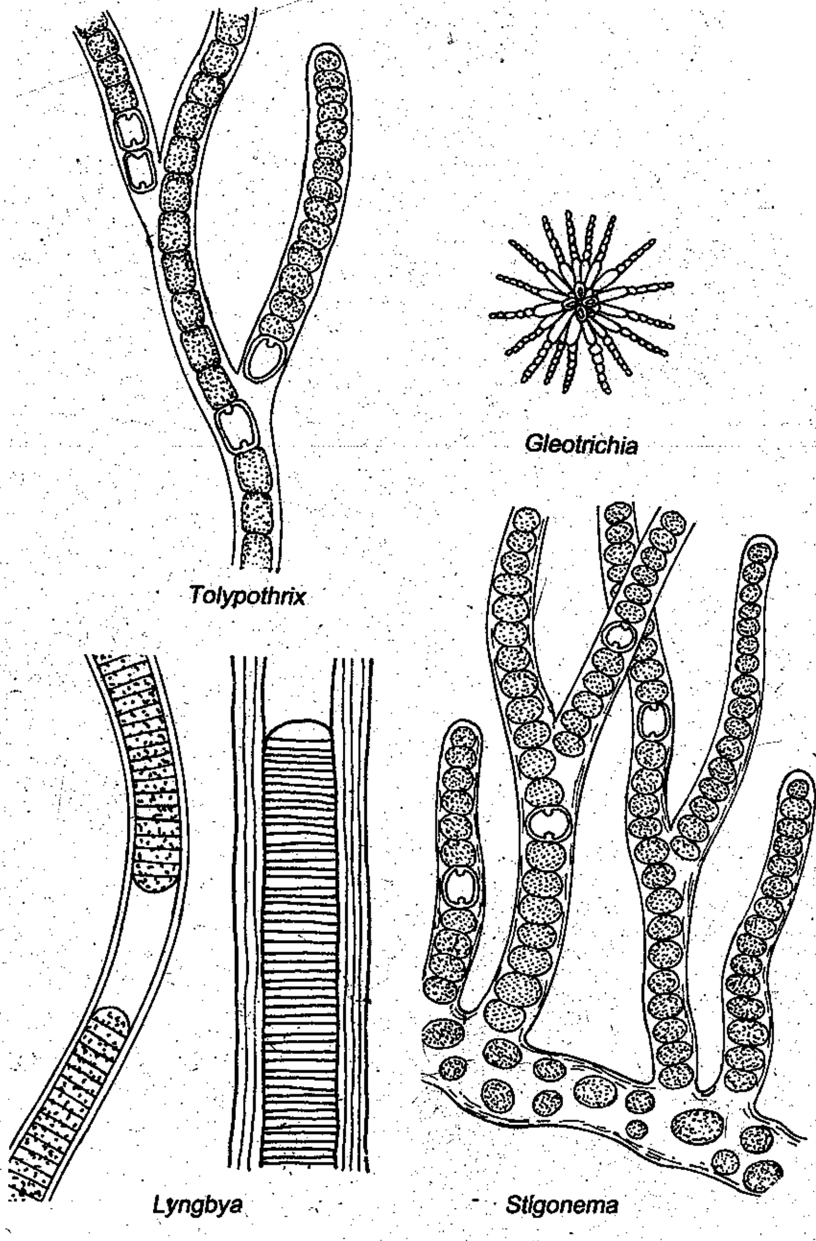

चित्र 5.2 : नील-हरित शैवालों की थैलस संरचना।

कोशिका संरचना उच्च पादपों की भांति ही वास्तविक केन्द्रकी प्रकार की होती है जिनमें झिल्ली से घिरे हुए कोशिकांग, केन्द्रक, क्लोरोप्लास्ट, माइटोकॉण्ड्रिया तथा 80S प्रकार के कोशिकाद्रव्यी राइबोसोम पाये जाते हैं।

कोशिका भित्ति आमतौर पर सेलुलोस की बनी होती है, कुछ में कोशिकाएं काइटिन से आच्छादित भी होती हैं।

प्रमुख प्रकाश संश्लेषी वर्णक क्लोरोफिल a और b कैरोटिन तथा ज़ैन्थोफिल्स होते हैं जो थाइलेकॉइड्स (thylakoids) में स्थित होते हैं।

कोशिका का संग्रहित उत्पाद अधिकांशतः स्टार्च है, परन्तु कुछ शैवालों में कभी-कभी लिपिड्स भी संग्रहित होते हैं।

प्रजनन अलैंगिक तथा लैंगिक तरीकों से होता है। अलैंगिक प्रजनन में अलैंगिक चल-बीजाणु जो द्विकशाभी अथवा चतुष्कशाभी होते हैं जबकि लैंगिक प्रजनन के लिये युग्मक द्विकशाभी होते हैं। कशाभ अग्र तथा/

प्रतोद (whiplash) प्रकार का होता है। लैंगिक प्रजनन में समयुग्मन, असमयुग्मन तथा विषमयुग्मन शामिल है।

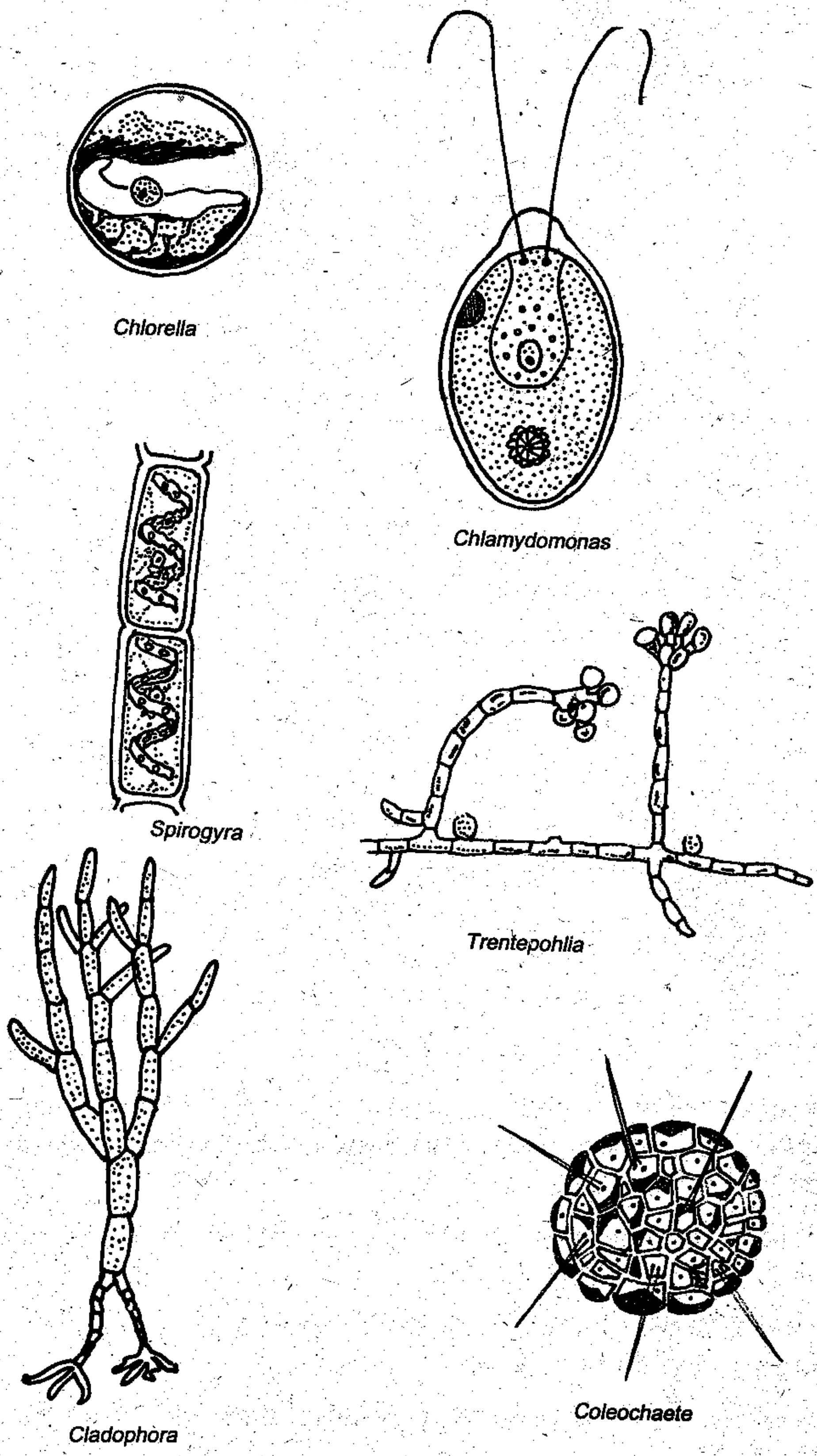

चित्र 5.3 : प्रभाग क्लोरोफाइटा के कुछ सदस्य।

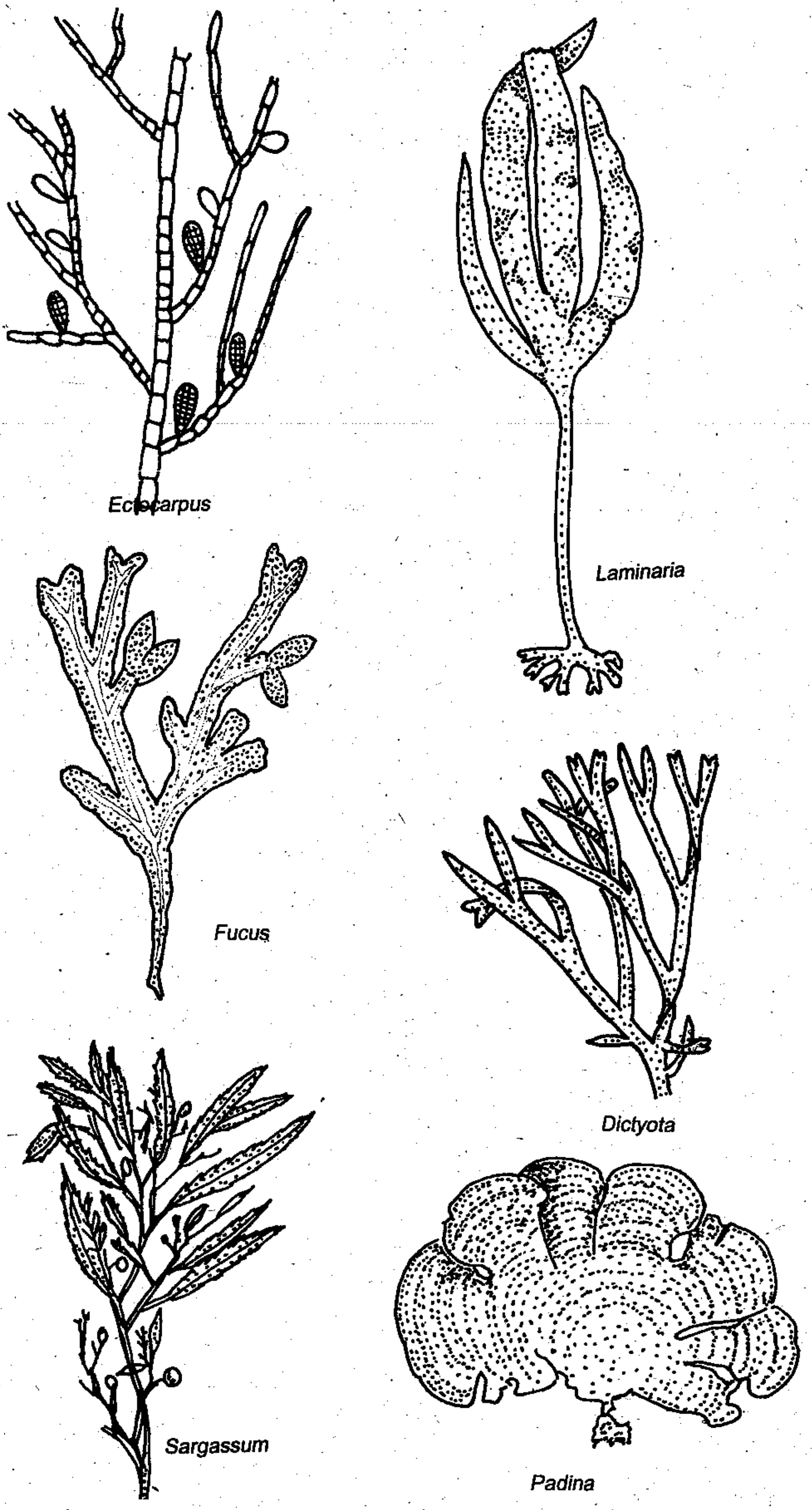

चित्र 5.6: कुछ आम भूरे शैवाल।

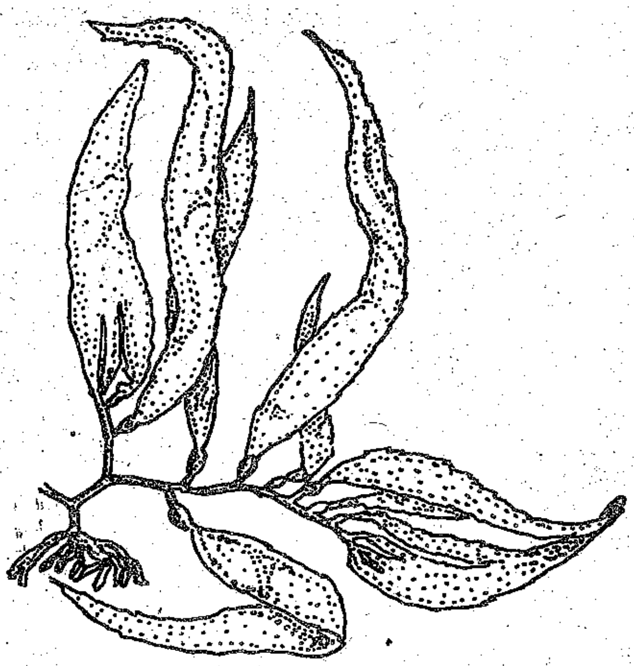

Macrocystis

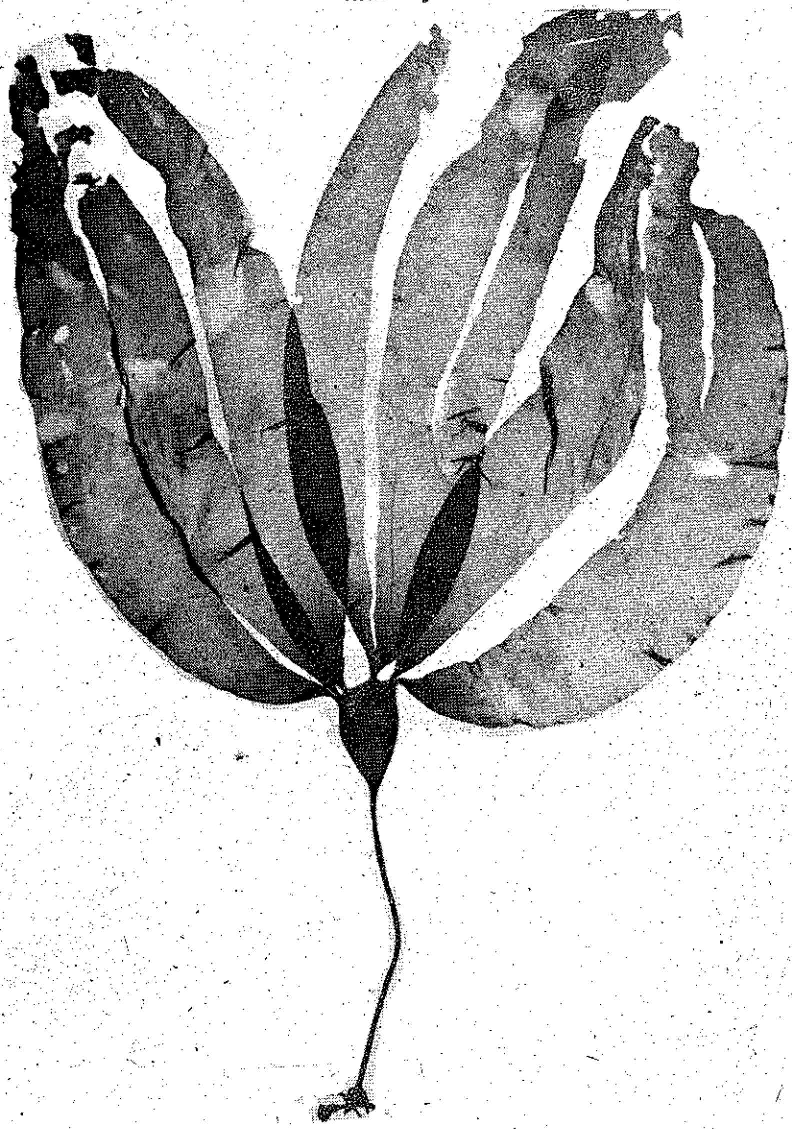

Nereocystis

चित्र 5.7 : ए) *मैक्रोसिस्टिस*, ब) *नीरिओसिस्टिस* का फ़ोटोग्राफ (पी. दयानन्दन के सौजन्य से)।

लाल शैवालों में प्रजनन की किसी भी अवस्था में कोई चल-कोशिका नहीं पाई जाती है। लैंगिक प्रजनन उन्नत विषमयुग्मी प्रकार का होता है। नर युग्मक-अचल पुमणु (स्पर्मेशियम), निष्क्रिय रूप से जल के बहाव के द्वारा मादा कार्पोगोनियम के स्त्रीधानी रोम (trichogyne) के शीर्ष पर पहुंच जाते हैं। निषेचन के पश्चात् विशेष विकासात्मक बदलाव आते हैं, जो किसी भी अन्य शैवाल के प्रभाग में नहीं पाये जाते हैं।

अधिकांश लाल-शैवालों का आवास समुद्री होता है। कुछ ताजे पानी में, झीलों, नदियों, झरनों तथा तालों में पाये जाते हैं। कुछ अधिपादपी (epiphyte) या परजीवी भी हो सकते हैं।

उदाहरण: *पॉरफिरिडियम* (*Porphyridium*, एक कोशिकीय), *पॉरफाइरा* (*Porphyra*), *पॉलीसाइफ़ोनिया* (*Polysiphonia*), *जिलीडियम* (*Gelidium*), *ग्रेसिलेरिया* (*Gracilaria*) तथा *कोरेलाइना* (*Corallina*)।

Porphyra

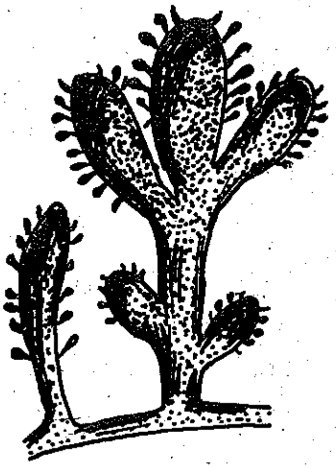

Gelidium

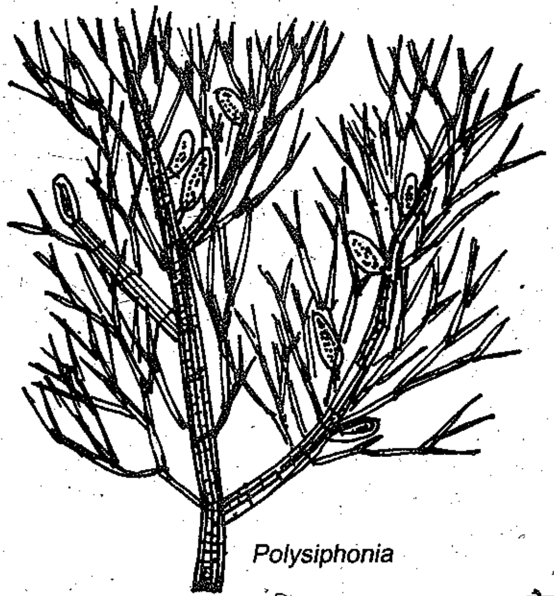

Polysiphonia

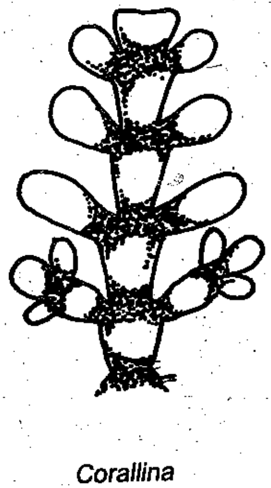

Corallina

चित्र 5.8 : कुछ आम लाल शैवाल।

5.4.4 प्रभाग ज़ैन्थोफ़ाइटा (पीत-हरित शैवाल)

कुछ प्रकार एककोशिकीय तथा सचल होती हैं जबकि अन्य तंतुमय व बहुकेन्द्रकीय (multinucleate) कोशिकाओं वाली होती हैं।

प्रकाश संश्लेषणी वर्णक क्लोरोफिल *a*, *c* तथा β-कैरोटिन (जो बहुत अधिक मात्रा में उपस्थित रहता है), तथा जैन्थोफिल्स हैं जो कोशिकाओं को पीला-हरा रंग प्रदान करते हैं।

संचित खाद्य पदार्थ लिपिड तथा क्राइसोलेमिनेरिन (β-1, 3 कड़ी वाले ग्लूकोज़ बहुलक जो ल्यूकासिन भी कहलाते हैं) के रूप में होते हैं। कोशिका भित्ति प्राय: दो अतिव्यापित (overlapping) भागों की बनी होती है, जो पैक्टिन, सिलिका तथा कुछ मात्रा सेलुलोस लिये रहती है।

लैंगिक प्रजनन दुर्लभ होता है। चल-कोशिकाओं में अग्र भाग की ओर दो असमान कशाभ उपस्थित रहते हैं, एक कूर्च (tinsel) प्रकार का तथा दूसरा प्रतोद (whiplash) प्रकार का होता है।

पीत-हरित शैवाल जलीय, ताजे पानी के आवास स्थानों में बहुत अधिक पाये जाते हैं। कुछ भूपृष्ठीय व कुछ समुद्री स्थानों में पाये जाते हैं।

उदाहरण: *वौकैरिया* (*Vaucheria*), *बोट्रीडियम* (*Botrydium*)।

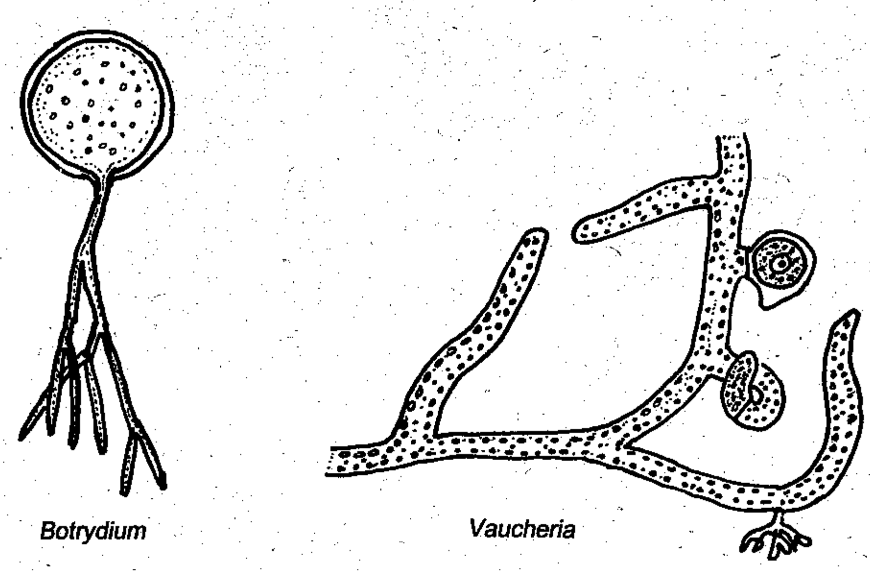

चित्र 5.9 : पीत-हरित शैवाल के दो सदस्य।

बोध प्रश्न 5.1

अ) शैवालों के वर्गीकरण के आधारों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

ब) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरिये।

i) सायनोबैक्टीरिया में कार्बन .... के रूप में संचित रहता है।

ii) लाल शैवाल का रंग .... के कारण होता है।

iii) प्रभाग फ़ियोफ़ाइटा के शैवाल के संचित पदार्थ .... होते है।

iv) ज़ैन्थोफ़ाइटा में लैंगिक प्रजनन .... होता है।

स) निम्नलिखित में सही उत्तर छांटिए।

निम्नलिखित में से किस शैवाल के प्रभाग में चल कोशिकाएं नहीं पाई जाती हैं?

i) सायनोफ़ाइटा

ii) रोडोफ़ाइटा

iii) क्लोरोफ़ाइटा

iv) फ़ियोफ़ाइटा

5.4.5 प्रभाग क्राइसोफ़ाइटा (सुनहरे-भूरे शैवाल)

अधिकांशतः एक कोशिकीय अथवा निवही होते हैं, तंतुमय प्रकार बहुत कम पाई जाती हैं।

चल-कोशिकाओं में दो समान अथवा असमान कशाभ अग्रभाग में उपस्थित होते हैं। लंबे वाले कशाभ में कड़े रोम होते हैं तथा छोटा चिकना होता है। कोशिका भित्ति पेक्टिन तथा सिलिका की अथवा कार्बोनेट के शल्कों की बनी होती है। क्लोरोप्लास्ट बहुत अधिक पालियुक्त (lobed) होते हैं।

प्रमुख वर्णक क्लोरोफिल a तथा c एवं कैरोटिनॉइड्स – β-कैरोटिन, फ़्यूकोज़ैन्थिन, डायटोज़ैन्थिन तथा नियोफ़्यूकोज़ैन्थिन हैं।

संचित खाद्य पदार्थ अधिकांशतः तेल बिन्दुकण होते हैं, तथा वास्तविक स्टार्च अनुपस्थित होता है जबकि ग्लूकॉन कण अथवा ल्यूकोसिन उपस्थित होते हैं। लैंगिक प्रजनन दुर्लभ होता है। सबसे अधिक आम सुप्तपुटी (cysts), या आसुप्त बीजाणु (statospores) होते हैं जिनमें सिलिका की भित्तियां होती हैं। सुप्त पुटी अलैंगिक अथवा लैंगिक प्रजनन के परिणाम स्वरूप बनती हैं।

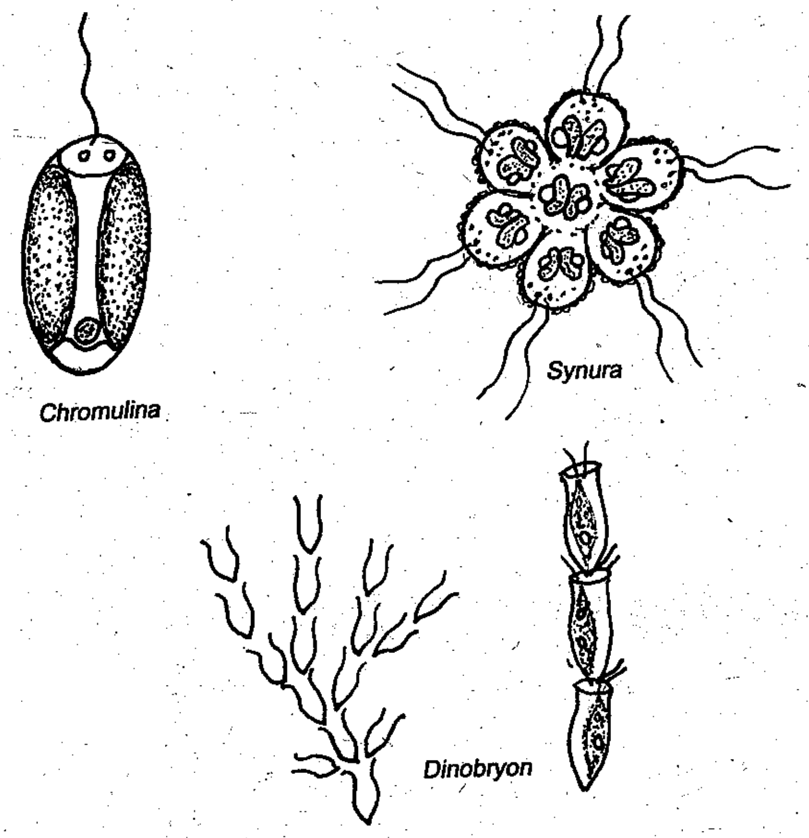

चित्र 5.10 : कुछ क्राइसोफ़ाइटा के सदस्य।

सुनहरे भूरे शैवाल समुद्री तथा ताजे पानी के आवास स्थानों तथा तेजी से गिरते हुए पहाड़ी झरनों में पाये जाते हैं। समुद्री कोकोलिथोफोराइड्स (coccolithophorides) समुद्र की तली में खड़िया (chalk) सतह के निर्माण के लिए उत्तरदायी होते हैं।

उदाहरण: *साइनूरा* (*Synura*), *क्रोमुलाइना* (*Chromulina*), *ओक्रोमोनस* (*Ochromonas*) *मैलोमोनस* (*Mallomonas*) *तथा डाइनोब्रियॉन* (*Dinobryon*)।

5.4.6 प्रभाग यूग्लीनोफ़ाइटा (यूग्लीनोइड्स)

ज्यादातर यूग्लीनोइड्स सरल, एककोशिकीय, चल-कशाभी होते हैं। उनमें सुदृढ़ कोशिका भित्ति नहीं होती है, तथा उनमें आदिजीवों (protozoan) जैसे लक्षण पाये जाते हैं। उनमें संकुचनशील धानी (contractile vacuoles) पाई जाती है। कोशिका की सतह तनुत्वक् (pellicle) होती है तथा उसमें कुंडलाकार (helical), घुंडीनुमा प्रक्षेपण (knob like projections) होते हैं। कोशिका की आकृति लगातार बदलती रहती है (यूग्लीनोइड गति)। क्लोरोप्लास्ट विभिन्न प्रकार की आकृतियों के होते हैं जैसे कि चक्रिक (discoid), फीताकार अथवा ताराकार (stellate)। कोशिकाएं द्विकशाभी होती हैं परन्तु सिर्फ एक कशाभ अग्रभाग की ओर निकलता है।

प्रकाश संश्लेषणी वर्णक जो कि प्लैस्टिड में स्थित रहते हैं उनमें क्लोरोफिल *a*, *b* तथा कैरोटिनॉइड्स सम्मिलित हैं जिनमें β- कैरोटिन भी शामिल होते हैं। कुछ यूग्लीनोइड्स रंगहीन भी होते हैं।

एक प्रकार की स्टार्च पैरामाइलोन (paramylon) सुस्पष्ट कणिकाओं के रूप में उपस्थित रहती हैं। तेल बिन्दुकण तथा पॉलीफ़ास्फ़ेट कण भी कोशिकाओं में आमतौर पर पाये जाते हैं।

कोशिकाएं द्वि-खंडन (binary fission) के द्वारा विभाजित होती हैं। बहुत सी जातियां विपरीत परिस्थितियों में पुट्टियां (cysts) बनाती हैं। लैंगिक प्रजनन अनुपस्थित होता है।

यूग्लीनोइड्स ताजे पानी तथा खारे पानी में पाये जाते हैं तथा ये प्रदूषित तालाबों तथा अस्थाई बारिश के पानी के तालों में बहुत ही सामान्य रूप से पाये जाते हैं।

उदाहरण: *यूग्लीना* (*Euglena*), *ट्रेकीलोमोनस* (*Trachelomonas*), *फेकस* (*Phacus*) आदि।

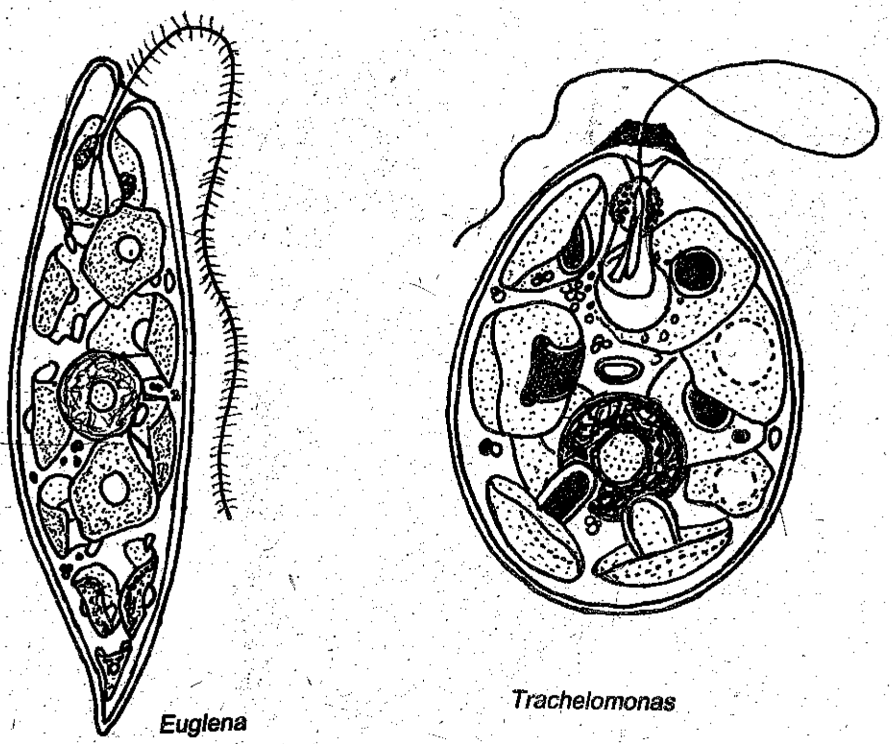

चित्र 5.11 : यूग्लीनाइड्स।

5.4.7 प्रभाग डाइनोफ़ाइटा (घूर्णीकशाभ या डाइनोफ्लैजेलेट)

कोशिका भित्ति सेलुलोस पट्टिकाओं की बनी होती है। असंख्य पट्टिकाएं अथवा काया शल्क कोशिका भित्ति पर उपस्थित हो सकते हैं। कोशिका की संरचना जटिल होती है। अधिकांश प्रकार एककोशिकीय तथा सचल होते हैं।

इनमें से अधिकांश शैवालों में क्लोरोफिल *a* तथा *c* तथा एक विशिष्ट कैरोटिनाइड पेरिडिनिन पाया जाता है जो कि विशेष तौर पर घूर्णीकशाभों में ही पाया जाता है।

संचित खाद्य पदार्थ आमतौर पर स्टार्च तथा तेल होते हैं।

अलैंगिक प्रजनन कोशिका विभाजन के द्वारा होता है। मातृ कोशिका बहुत सारे अचल बीजाणुओं अथवा अलैंगिक चल बीजाणुओं अथवा अ-गतिशील कोशिकाओं में विभाजित हो जाती है। लैंगिक प्रजनन का हाल ही में पता चला है, युग्मक कायिक कोशिकाओं से छोटे होते हैं तथा संगलन (fusion) समयुग्मी (isogamous) होता है। युग्मकों के संगलन के द्वारा अथवा उसके बिना ही सुप्त पुटी का निर्माण भी पाया जाता है।

गोनीओलेक्स तंत्रिका विष पैदा करता है जो मछलियों को मार सकता है लेकिन कवचमछली (shellfish) इस तंत्रिका विष से नहीं मरती है और इस को एकत्र करती रहती है। जब मनुष्य इन कवच मछलियों का भक्षण करता है तो वह खाद्य जहर (food poisoning) का शिकार हो जाता है।

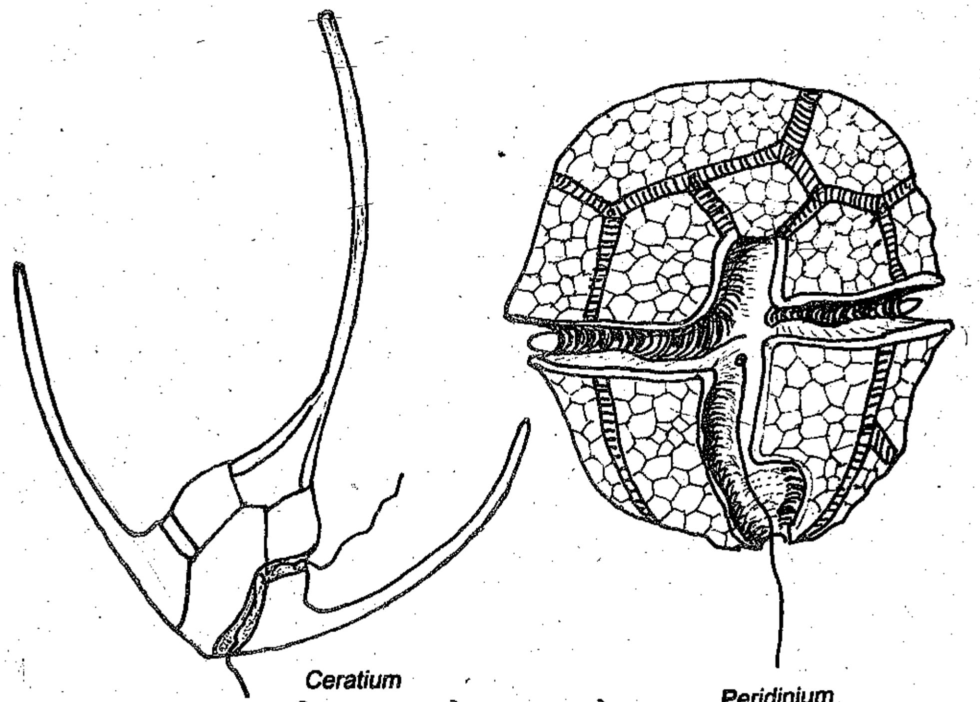

चित्र 5.12 : डाइनोफ़ाइटा प्रभाग के सदस्य।

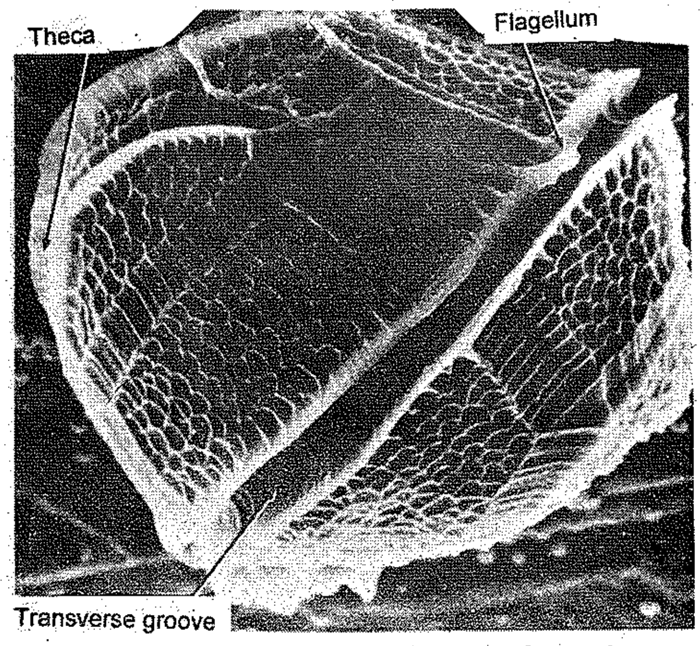

चित्र 5.13 : एक समुद्री प्लवक घूर्णीकशाभ का स्कैनिंग इलेक्ट्रान माइक्रोग्राफ (पी. दयानन्दन के सौजन्य से)।

घूर्णीकशाभ अधिकांशत: समुद्री पादपप्लवकों (phytoplanktons) के रूप में पाये जाते हैं, कभी कभी ये लाल ज्वार पुंजों (red tide blooms) के रूप में भी पाये जाते हैं। बहुत से घूर्णीकशाभ सहजीवियों की भांति समुद्री जन्तुओं जैसे प्रवालों (जोओज़ैन्थैला) के अन्दर पाये जाते हैं।

उदाहरण: *नॉक्टील्यूका* (*Noctiluca*), *गोनीओलेक्स* (*Gonyaulax*), *पेरिडिनियम* (*Peridinium*), *सेरैशियम* (*Ceratium*)।

5.4.8 प्रभाग क्रिप्टोफ़ाइटा (क्रिप्टोमोनेड्स)

ये एककोशिकीय गतिशील जीव होते हैं, व जीवित अवस्था में ये भूरे रंग के होते हैं। कुछ वंशों में आकारिकी तथा पोषण के तरीके जंतुओं जैसे होते हैं, व कुछ रंगहीन तथा मृतजीवी (saprophytic) प्रकृति के होते हैं।

कोशिकाएं बिना कोशिका भित्ति वाली, अंडाकार तथा पृष्ठाधर (dorsiventrally) रूप से चपटी होती हैं। दो कशाभ शीर्षस्थ तथा लंबाई में असमान होते हैं। कोशिका में क्लोरोप्लास्ट एक अथवा अनेक हो सकते हैं। कुछ क्रिप्टोमोनेड्स में दो, बड़े भित्तीय (parietal), अथवा बहुत सारे चक्र (disc) रूपी क्लोरोप्लास्ट हो सकते हैं।

वर्णकों में क्लोरोफिल *a*, और *c*, फ़ाइकोसायनिन, फ़ाइकोइरिथ्रिन तथा विविध कैरोटिनॉइड्स होते हैं।

संचित खाद्य पदार्थ स्टार्च है।

प्रजनन, कोशिकाओं के अनुदैर्ध्य (longitudinal) विभाजन द्वारा होता है। श्लेष्मस्थताभ (palmelloid) प्रकार अलैंगिक चल-बीजाणु उत्पन्न कर सकती हैं। लैंगिक प्रजनन अभी तक नहीं देखा गया है।

उदाहरण: *क्रिप्टोमोनस* (*Cryptomonas*), *क्रूमोनस* (*Chroomonas*)।

5.4.9 प्रभाग बैसिलेरियोफ़ाइटा (डायटम्स)

अधिकांशत: एककोशिकीय प्रकार के हैं, कुछ संरचना में निवही अथवा तंतुमय भी होते हैं। कोशिका भित्ति सिलिकाकृत होती है, जो दो छिद्रित अतिव्यापी पट्टिकाओं की बनी होती है। इसकी सतह बहुत अधिक अलंकृत होती है। कैरोटिनॉइड्स की अधिकता के कारण वर्णकीलवक (chromatophores) भूरे से रंग के होते हैं।

प्रकाश संश्लेषी वर्णक क्लोरोफिल *a* तथा *c*, फ़्यूकोज़ैन्थिन, डायटोज़ैन्थिन तथा डायडीनोज़ैन्थिन होते हैं।

सामान्य संचित खाद्य पदार्थ तेल तथा क्राइसोलेमिनेरिन (chrysolaminarin) हैं।

प्रजनन, कायिक तथा लैंगिक तरीकों से होता है। डायटम्स की कोशिकाएं अन्य शैवाली कोशिकाओं के विपरीत द्विगुणित (diploid) प्रकृति की होती हैं। लैंगिक संगलन समथैलसी होता है, जो कि एक ही एकपुंजक (clone) सदस्यों के बीच होता है। दो अमीबाभ युग्मक संगलित होकर युग्मनज बनाते हैं जो एक प्रबल बीजाणु (auxospore) में विकसित होता है। संगलन समयुग्मकी अथवा असमयुग्मकी या फिर विषमयुग्मकी हो सकता है।

डायटम्स ताजे पानी तथा समुद्री प्लवक में, पंकिल सतहों पर, चट्टानों तथा बालू में बहुतायत में पाये जाते हैं। वे अधिपादपी, अंत:जंतुक (endozoid) अथवा अधिजंतुक (epizoid) भी हो सकते हैं। बडी संख्या में जीवाश्म डायटमी कोशों (shells) के निक्षेप जिन्हें डायटमी मृत्तिका कहते हैं का खनन किया जाता है तथा विभिन्न उद्योगों में इनका उपयोग किया जाता है।

उदाहरण: *नैवीकुला* (*Navicula*), *सिम्बेला* (*Cymbella*), *कोसिनोडिस्कस* (*Coscinodiscus*), *डायटोमा* (*Diatoma*) और *फ्रेग्लिेरिया* (*Fragilaria*)

अन्त में हम यह स्पष्ट कर देना चाहेंगे कि शैवालों का वर्गीकरण अस्थायी है इसको नई उन्नत तकनीकों जैसे DNA फिंगर प्रिन्टिंग इत्यादि द्वारा और भी परिष्कृत किया जा सकता है। इस तकनीक द्वारा जीव की आनुवांशिक सम्बन्धता स्पष्ट हो जाती है।

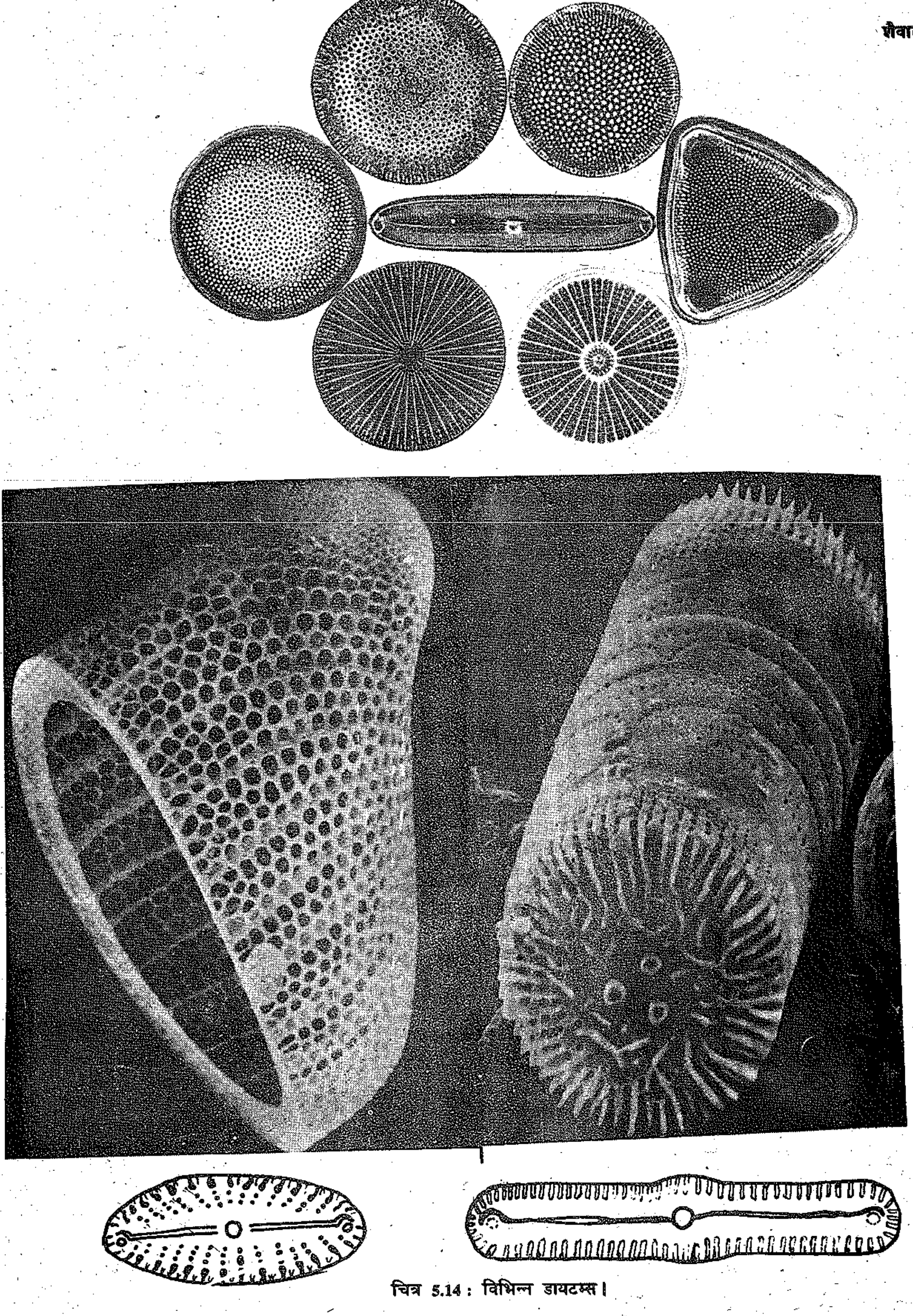

चित्र 5.14 : विभिन्न डायटम्स।

बोध प्रश्न 5.2

निम्नलिखित वक्तव्यों में कोष्ठकों में दिये गये विकल्पों में से सही शब्दों को चुनिये।

i) कोशिका भित्ति अनुपस्थित होती है (फ़ियोफ़ाइटा/यूग्लीनोफ़ाइटा) में।

ii) (क्राइसोफ़ाइटा/रोडोफ़ाइटा) अधिकांशतः एक कोशिकीय होते हैं।

iii) (डाइनोफ़ाइटा/यूग्लीनोफ़ाइटा) में संचित पदार्थ पेरामाइलोन है।

iv) (डाइनोफ़ाइटा/बैसिलेरियोफ़ाइटा) के शैवाल डायटम्स कहलाते हैं।

v) (डाइनोफ़ाइटा/क्राइसोफ़ाइटा) की कोशिका भित्ति पेक्टिन, सिलिका अथवा कार्बोनेट्स की बनी होती है।

vi) प्रभाग (यूग्लीनोफ़ाइटा/बैसिलेरियोफ़ाइटा) के शैवालों में लैंगिक प्रजनन पाया जाता है।

vii) (डायटम्स/डाइनोफ़्लैजेलेट्स) की कोशिकाएं द्विगुणित होती हैं।

तालिका 5.1 : शैवालीय प्रभागों के चुने हुए लक्षण

प्रभाग	कोशिका प्रकार	प्रकाश संश्लेषी वर्णक	कोशिका भित्ति के घटक	खाद्य संग्रह प्रकार
क्लोरोफ़ाइटा	एककोशिकीय व बहुकोशिकीय	क्लोरोफ़िल *a* तथा *b* जैन्थोफिल, कैरोटिन्स	पॉलिसैकेराइड्स या सेलुलोज़ या कोशिका भित्ति अनुपस्थित	स्टार्च कभी कभी लिपिड्स
फ़ियोफ़ाइटा	अधिकतर बहुकोशिकीय	क्लोरोफ़िल *a* तथा *c* फ़्यूकोजैन्थिन कैरोटिनॉइड्स	सेलुलोज़ ऐल्जिनेट के साथ	लेमिनेरिन (तेल) मैनिटाल
रोडोफ़ाइटा	अधिकतर बहुकोशिकीय	क्लोरोफ़िल *a* तथा *d* फ़ाइकोबिलिन्स फ़ाइकोइरिथ्रिन	सेलुलोज़ या पैक्टिन कई कैल्शियम कार्बोनेट के साथ	फ़्लोरीडियन स्टार्च
जैन्थोफ़ाइटा	एक कोशिकीय तथा बहुकोशिकीय	क्लोरोफ़िल *a* तथा *c* β-कैरोटिन	सेलुलोज़ या कोशिका भित्ति अनुपस्थित	क्राइसोलेमिनेरिन
क्राइसोफ़ाइटा	अधिकतर एककोशिकीय	क्लोरोफ़िल *a* तथा *c* β-कैरोटिन तथा फ़्यूकोजैन्थिन	सेलुलोज़ या कोशिका भित्ति अनुपस्थित, कुछ में सिलिका या कैल्शियम कार्बोनेट	क्राइसोलेमिनेरिन
यूग्लीनोफ़ाइटा	अधिकतर एककोशिकीय	क्लोरोफ़िल *a, b* कैरोटिन जिन वंशों में क्लोरोप्लास्ट होते हैं	कोशिका अनुपस्थित, प्रोटीन से भरपूर पैलिकल	पैरामाइलोन (स्टार्च)
डाइनोफ़ाइटा	अधिकतर एककोशिकीय	क्लोरोफ़िल *a* तथा *b* तथा पेरिडिनिन	सेलुलोज़ या कोशिका भित्ति अनुपस्थित	स्टार्च, लिपिड्स
क्रिप्टोफ़ाइटा	एककोशिकीय	क्लोरोफ़िल *a* तथा *c* फ़ाइकोबिलिन्स	कोशिका भित्ति अनुपस्थित	स्टार्च
बैसिलेरियोफ़ाइटा	अधिकतर एककोशिकीय	क्लोरोफ़िल *a* तथा *c* फ़्यूकोज़ैन्थिन	कोशिका भित्ति सिलिकायुक्त	क्राईसोलेमिनेरिन

5.5 कुछ वंशों का वर्गीकृत स्थान

***ऐनासिस्टिस* (*Anacystis*)**

कुल (Family)-क्रूकोकेसी (Chroococcaceae)

गण (Order)-क्रूकोकेलीस (Chroococcales)

प्रभाग (Division)-सायनोफ़ाइटा (Cyanophyta)

***माइक्रोसिस्टिस* (*Microcystis*)**

कुल (Family)-क्रूकोकेसी (Chroococcaceae)

गण (Order)-क्रूकोकेलीस (Chroococcales)

प्रभाग (Division)-सायनोफाइटा (Cyanophyta)

नॉस्टॉक (Nostoc)

कुल (Family)-नोस्टोकेसी (Nostocaceae)

गण (Order)-नोस्टोकेलीस (Nostocales)

प्रभाग (Division)-सायनोफाइटा (Cyanophyta)

क्लैमाइडोमोनस (Chlamydomonas)

कुल (Family)-क्लेमिडोमोनाडेसी (Chlamydomonadaceae)

गण (Order)-वाल्वोकेलीस (Volvocales)

प्रभाग (Division)-क्लोरोफाइटा (Chlorophyta)

वाल्वॉक्स (Volvox)

कुल (Family)-क्लेमिडोमोनाडेसी (Chlamydomonadaceae)

गण (Order)-वाल्वोकेलीस (Volvocales)

प्रभाग (Division)-क्लोरोफाइटा (Chlorophyta)

यूलोथ्रिक्स (Ulothrix)

कुल (Family)-यूलोट्रिकेसी (Ulotrichaceae)

गण (Order)-यूलोट्रिकेलीस (Ulotrichales)

प्रभाग (Division)-क्लोरोफाइटा (Chlorophyta)

अल्वा (Ulva)

कुल (Family)-अल्वेसी (Ulvaceae)

गण (Order)-यूलोट्रिकेलीस (Ulotrichales)

प्रभाग (Division)-क्लोरोफाइटा (Chlorophyta)

इडोगोनियम (Oedogonium)

कुल (Family)-इडोगोनिएसी (Oedogoniaceae)

गण (Order)-इडोगोनिएलीस (Oedogoniales)

प्रभाग (Division)-क्लोरोफाइटा (Chlorophyta)

कोलियोकीटि (Coleochaete)

कुल (Family)-कोलियोकीटेसी (Coleochaetaceae)

गण (Order)-कीटोफोरेलीस (Chaetophorales)

प्रभाग (Division)-क्लोरोफाइटा (Chlorophyta)

ड्रेपर्नेल्डियॉप्सिस (Draparnaldiopsis)

कुल (Family)-कीटोफोरेसी (Chaetophoraceae)

गण (Order)-कीटोफोरेलीज़ (Chaetophorales)

प्रभाग (Division)-क्लोरोफाइटा (Chlorophyta)

एक्टोकार्पस (Ectocarpus)

कुल (Family)-एक्टोकार्पेसी (Ectocarpaceae)

गण (Order)-एक्टोकार्पेलीस (Ectocarpales)

प्रभाग (Division)-फ़ियोफ़ाइटा (Phaeophyta)

फ़्यूकस (Fucus)

कुल (Family)-फ़्यूकेसी (Fucaceae)

गण (Order)-फ़्यूकेलीस (Fucales)

प्रभाग (Division)-फ़ियोफ़ाइटा (Phaeophyta)

लेमिनैरिया (Laminaria)

कुल (Family)-लेमिनैरिएसी (Laminariaceae)

गण (Order)-लेमिनैरिएलीस (Laminariales)

प्रभाग (Division)-फ़ियोफ़ाइटा (Phaeophyta)

पॉलीसाइफ़ोनिया (Polysiphonia)

कुल (Family)-रोडोमेलेसी (Rhodomelaceae)

गण (Order)-सिरेमिएलीस (Ceramiales)

प्रभाग (Division)-रोडोफ़ाइटा (Rhodophyta)

5.6 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा:

- शैवालों को दो प्रमुख समूहों में बांटा गया है: पूर्व केन्द्रकी तथा वास्तविक केन्द्रकी क्योंकि इनकी कोशिकाओं की सूक्ष्मसंरचना में बुनियादी रूप से भिन्नता है।
- नील-हरित शैवाल (सायनोबैक्टीरिया) हालांकि बैक्टीरिया से संबन्धित हैं, परन्तु इन्हें अन्य शैवालों के साथ रखा गया है क्योंकि इनके वर्णकों के संघटन तथा प्रकाश संश्लेषण में समानता है।
- वास्तविक केन्द्रकी शैवालों को 8 प्रभागों में विभेदित किया जा सकता है जिसमें से प्रत्येक प्रभाग की शैवालों के बहुत से सामान्य लक्षण एक समान होते हैं। सभी प्रकाश संश्लेषणी शैवालों में क्लोरोफिल *a* व कैरोटिन पाया जाता है, जबकि अन्य वर्णक भिन्न भी हो सकते हैं।
- तीन प्रभागों – सायनोफाइटा, रोडोफ़ाइटा तथा क्रिप्टोफ़ाइटा में एकसमान फ़ाइकोबिलिन वर्णक – नीला फ़ाइकोसायनिन तथा लाल फ़ाइकोइरिथ्रिन होता है, अन्यथा वे अन्य किसी भी लक्षण में असंबद्ध होते हैं।
- हरे शैवाल (प्रभाग क्लोरोफ़ाइटा) एककोशिकीय, निवही तथा तंतुमय प्रकार के, सचल एवं मुक्त रूप से प्लवन करने वाले होते हैं। प्रकाश संश्लेषणी वर्णक क्लोरोफिल *a*, *b*, β-कैरोटिन तथा ज़ैन्थोफ़िल्स होते हैं। खाद्य पदार्थ स्टार्च के रूप में संचित होता है। हालांकि यूग्लीनाभों में भी क्लोरोफिल *a* एवं *b* पाया जाता है परन्तु वे हरे शैवालों से भिन्न होते हैं।
- भूरे शैवाल (प्रभाग फ़ियोफ़ाइटा) अधिकांशत: समुद्री व आमतौर पर बहुकोशिकीय, बड़े, जटिल एवं अ-गतिशील होते हैं। क्लोरोफिल भूरे वर्णक फ़्यूकोजैन्थिन के द्वारा दब जाते हैं। खाद्य पदार्थ तेल तथा जटिल कार्बोहाइड्रेट-लेमिनेरिन के रूप में संचित होते हैं। अलैंगिक चल-बीजाणु तथा युग्मक गतिशील होते हैं।
- लाल शैवाल (प्रभाग रोडोफ़ाइटा) समुद्री, बहुकोशिकीय एवम् तंतुमय होते हैं। क्लोरोफिल फ़ाइकोबिलिनों के द्वारा दब जाता है। भोजन फ्लोरीडी स्टार्च के रूप में संचित होता है तथा जीवन चक्र में कोई भी गतिशील कोशिका नहीं पाई जाती है।

- जैन्थोफ़ाइटा, क्राइसोफ़ाइटा, डाइनोफ़ाइटा तथा क्रिप्टोफ़ाइटा के सदस्य अधिकांशत: एककोशिकीय होते हैं। उनमें क्लोरोफिल a तथा c पाया जाता है तथा वे संयुक्त रूप से क्रोमोफाइट्स कहलाते हैं।
- जैन्थोफ़ाइटा, क्राइसोफ़ाइटा तथा डाइनोफ़ाइटा में कोशिका भित्ति या तो सेलुलोस की बनी होती है अथवा अनुपस्थित होती है। यूग्लीनोफ़ाइटा तथा क्रिप्टोफ़ाइटा में कोशिका भित्ति नहीं होती है।

5.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. कॉलम 1 में दिये गये शैवालों के प्रभागों को कॉलम 2 में दिये गये शैवालों के रंगों से मिलाइये।

कालम 1		कालम 2
क) रोडोफ़ाइटा	i)	नील-हरित शैवाल
ख) फ़ियोफ़ाइटा	ii)	हरित शैवाल
ग) जैन्थोफ़ाइटा	iii)	सुनहरे-भूरे शैवाल
घ) क्लोरोफ़ाइटा	iv)	लाल शैवाल
ङ) क्राइसोफ़ाइटा	v)	भूरे शैवाल
च) सायनोफ़ाइटा	vi)	पीत-हरित शैवाल

2. शैवालों के प्रमुख प्रभागों को सूचीबद्ध कीजिए तथा संक्षिप्त में उनकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

3. शैवालों के उन प्रभागों को सूचीबद्ध कीजिए जिनमें गतिशील कशाभयुक्त कोशिकाएं नहीं पाई जाती।

....

....

....

....

....

5.8 उत्तर

बोध प्रश्न

अ) 1) बाह्य आकारिकी 2) सूक्ष्मसंरचना

3) गुणसूत्र संख्या 4) प्रकाश संश्लेषणी वर्णक

5) संग्रह पदार्थ
6) डी.एन.ए. समरूपता
7) डी.एन.ए. पट्टन
8) एन्ज़ाइम तथा आइसोएन्ज़ाइम
9) कोशिका भित्ति का संघटन

ब) i) ग्लाइकोजन

ii) फाइकोइरिथ्रिन

iii) मैनिटॉल, लेमिनेरिन तथा दुर्लभ तौर पर कभी-कभी लिपिड बिन्दुकण

iv) अनुपस्थित

स) सायनोफ़ाइटा तथा रोडोफ़ाइटा

5.2 i) यूग्लीनोफ़ाइटा

ii) क्राइसोफ़ाइटा

iii) यूग्लीनोफ़ाइटा

iv) बैसिलेरियोफ़ाइटा

v) क्राइसोफ़ाइटा

vi) बैसिलेरियोफ़ाइटा

vii) डायटम्स

अंत में कुछ प्रश्न

1) क) iv, ख) v, ग) vi, घ) ii), ड) iii), च) i

2) तालिका 5.1 में देखिये

3) सायनोफ़ाइटा तथा रोडोफ़ाइटा

इकाई 6 शैवाली आवास तथा वितरण

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
अध्ययन निर्देशिका
6.2 जलीय शैवाल
ताजे पानी के आवास
समुद्री आवास
विशेष आवास
6.3 मृदीय तथा भूपृष्ठीय शैवाल
मृदीय शैवाल
भूपृष्ठीय शैवाल
6.4 शैवाली –साहचर्य
शैवाली - पादप साहचर्य
शैवाली - जन्तु साहचर्य
शैवाली - सहजीवी साहचर्य
6.5 सारांश
6.6 अंत में कुछ प्रश्न
6.7 उत्तर

6.1 प्रस्तावना

आप शैवालों की सामान्य विशेषताओं से, तथा अन्य समूहों के बीच उनकी स्थिति से परिचित हैं। आपने शैवालों का वर्गीकरण विभिन्न प्रभागों में तथा प्रत्येक प्रभाग की विशेषताओं के बारे में भी पढ़ा है। अब तक आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि वे संरचना तथा अन्य गुणों में बहुत ही विविधता लिये हुए होते हैं परन्तु एक समूह के रूप में पादपों से काफी भिन्न होते हैं।

शैवाल एककोशिकीय (सूक्ष्मदर्शीय) से लेकर बड़े (स्थूलदर्शीय) थैलसाभ प्रकार तक के होते हैं जो पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार के आवास स्थानों में, लगभग सभी जगहों पर उगते हैं। इस इकाई में उन विभिन्न आवास स्थानों का संक्षिप्त विवरण दिया गया है, जहां शैवाल प्राकृतिक रूप से उगते हुए पाये जाते हैं। इस परिचय का उद्देश्य है जब आप उन्हें उनके प्राकृतिक वातावरण में देखें तो आप उनमें से कुछ आम शैवालों को पहचान सकें।

हमारा यह कहना कि शैवाल सभी स्थानों पर पाये जाते हैं अतिशयोक्ति नहीं है। जहां कहीं भी पानी अथवा थोड़ी सी भी नमी या वाष्प होती है तथा प्रकाश चाहे जितना भी क्षीण होता है वहां ये निश्चित रूप से हरे, पीले या भूरे धब्बों के रूप में प्रकट हो जाते हैं जो वक्त के साथ पूरी सतह को ढक लेते हैं। उनकी उपस्थिति तथा वृद्धि कुछ कारकों के द्वारा नियंत्रित होती है तथा यह पारिस्थितिक विज्ञान का विषय है। जब कुछ प्रकार के शैवाल एक साथ समान प्राकृतिक स्थितियों में उगते हैं तो हम उन्हें समुदाय कहते हैं। समुदाय का संयोजन आवास स्थान की भौतिक तथा रासायनिक प्रकृति द्वारा निर्धारित होता है तथा बहुत सी बार शैवाली समुदाय हमें आवास स्थान की प्रकृति के बारे में संकेत करते हैं, कि वह प्रदूषित है, या पोषक तत्वों से भरपूर है अथवा नहीं है आदि। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो ये पारिस्थितिक सूचक (ecological indicator) की भांति कार्य करते हैं।

इस इकाई में आपका ध्यान इस बात पर भी दिलाया जायेगा कि किस प्रकार से शैवाल विशेष आकारिकीय तथा शरीर क्रियात्मक लक्षणों के द्वारा उस पर्यावरण के अनुरूप अनुकूलित हो गये जिसमें वे

रहते हैं। हम नीचे प्रकृति में पाये जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण शैवालीय आवास स्थानों को सूचीबद्ध कर रहे हैं।

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप:

- शैवालों के विभिन्न प्रकार के आवास स्थानों का वर्णन कर सकेंगे,
- उन शैवालों के उदाहरण दे सकेंगे जो सामान्य रूप से ताजे पानी में या समुद्री अथवा कठोर आवास स्थानों में पाये जाते हैं,
- शैवालों के कुछ वर्गों को पहचानने में समर्थ हो सकेंगे जब आप उन्हें उनके प्राकृतिक माहौल में देखेंगे,
- पादपों तथा जंतुओं के साथ शैवाली साहचर्य को समझ सकेंगे,
- शैवालों के अन्य शैवालों, आदिजीवियों, पादपों तथा जंतुओं के साथ सहजीवी साहचर्य के उदाहरण दे सकेंगे,
- पादपों तथा जंतुओं के साथ शैवाली साहचर्य को समझ सकेंगे,

अध्ययन निर्देशिका

हमने शैवालों के कई उदाहरण इस इकाई में दिए हैं लेकिन आप से कम से कम दो उदाहरण याद रखने की आशा की जाती है।

6.2 जलीय शैवाल

अधिकांश शैवाल पानी में पनपते हैं तथा पानी की अनुपस्थिति में वे शीघ्र ही सूख जाते हैं तथा मर जाते हैं हालांकि, कुछ भूपृष्ठीय शैवाल भी होते हैं जो सेक्शन 6.3.2 में वर्णित किए गए हैं। लवण की मात्रा के अनुसार विभिन्न प्रकार के जलाशय पाये जाते हैं, जैसे कि ताजे पानी के, खारे पानी के, समुद्री पानी के, अथवा लवण जल के-लवण झील, लवण क्यारी (जमीन में कोई गड्ढा या नहर) आदि। इसके अतिरिक्त ये आवास स्थान आजकल विभिन्न प्रकार के प्रदूषण तत्व लिये हुए भी हो सकते हैं। जैसे अत्यधिक कार्बनिक पदार्थ, भारी धातुएं, कीटनाशक, औद्योगिक बहिःस्रावी तत्व (industrial effluents) जो मानव द्वारा उत्पादित किये जाते हैं तथा इन स्थानों पर डाल दिये जाते हैं। यह शैवालों तथा पानी में रहने वाले अन्य जीवों पर अत्यधिक प्रभाव डालते हैं।

6.2.1 ताजे पानी के आवास

लवण क्यारी (salt pan) – समुद्र के समीप गड्ढा इत्यादि जो नमक को वाष्पीकरण द्वारा प्राप्त करने के लिए प्रयोग किया जाता है।

ताजे पानी के आवास स्थानों में नदियां, पहाड़ी झरने, झीलें, तालाब, अस्थाई बारिश के पानी के गड्ढे आदि शामिल हैं। हमारे देश में, धान के खेतों में (जहां रुका हुआ पानी कुछ महीनों तक जमा रहता है), नाइट्रोजन-यौगिकीकरण करने वाले सायनोबैक्टीरिया-*सिलिन्ड्रोस्पर्मम* (*Cylindrospermum*), *नॉस्टॉक* (*Nostoc*), *ऐनाबीना* (*Anabaena*), *आलोसाइरा* (*Aulosira*), *रिवुलेरिया* (*Rivularia*), *ग्लियोट्राइकिया* (*Gloeotrichia*), *ऐफैनोथीका* (*Aphanotheca*) तथा कुछ हरित शैवाल जैसे कि *इडोगोनियम* (*Oedogonium*), *ड्रेपर्नेल्डियॉप्सिस* (*Draparnaldiopsis*), *कीटोफोरा* (*Chaetophora*), *कोलियोकीटि* (*Coleochaete*), डेस्मिड तथा डायटम्स बहुतायत में पाये जाते हैं।

धीमी बहने वाली नदियों में जिनके तट चट्टानी होते हैं, वहां पर आप बहुत से तंतुमय शैवालों जैसे *स्पाइरोगाइरा* (*Spirogyra*), *इडोगोनियम* (*Oedogonium*) और *क्लेडोफोरा* (*Cladophora*), को घने तैरते हुए झाड़ों (चटाई की तरह) के रूप में, पानी के अंदर चट्टानो से जुड़े हुए देख सकते हैं। निमग्न (submerged) चट्टानों पर भी विभिन्न प्रकार के जुड़े हुए अधिपादपी शैवाल जैसे डायटम्स, डेस्मिड और सायनोबैक्टीरिया पाये जाते हैं। शैवाली वनस्पतियों में आविलता (turbidity), प्रवाह की दर तथा अन्य मौसमी कारकों के अनुरूप मौसमी भिन्नताएं भी पाई जाती हैं।

एक झील में शैवाली वनस्पति विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न भिन्न समुदायों को दर्शाती है। तटों के पास तथा तली में (नितल जीवजात) *स्पाइरोगाइरा* (*Spirogyra*), *इडोगोनियम* (*Oedogonium*), *कैरा* (*Chara*), *नाइटेला* (*Nitella*) तथा बहुत से अधिपादपी शैवाल जैसे *कीटोफोरा* (*Chaetophora*), *कोलियोकीटि* (*Coleochaete*), डेस्मिड्स, डायटम्स, निवही सायनोबैक्टीरिया, *क्लेडोफोरा* (*Cladophora*) गुच्छों के रूप में जंतुओं के कवचों के ऊपर उगे हुये पाये जाते हैं। पानी की ऊपरी सतहों में निलंबित एककोशिकीय तथा निवही शैवाल *क्लैमाइडोमोनस* (*Chlamydomonas*), *वालूवॉक्स* (*Volvox*), *पैन्डोरिना* (*Pandorina*), *स्केनडेस्मस* (*Scenedesmus*), *यूग्लीना* (*Euglena*), *डायटम्स*, *माइक्रोसिस्टिस* (*Microcystis*), *ऐनाबीना* (*Anabaena*), *ऐनाबीनोप्सिस* (*Anabaenopsis*) -पादपप्लवक के रूप में पाये जाते हैं। ये शैवाल आमतौर पर छोटे, प्रकाशानुचलित (phototactic)- प्रकाश की स्थिति के अनुसार ऊपर और नीचे चलने वाले, दिन में तैरने तथा रात में तले में बैठ जाने वाले होते हैं। ऐसे समय में, जब पानी पोषक तत्वों से भरपूर हो साथ ही तापमान तथा धूप अनुकूलतम हो, तब एक विशेष प्रकार के शैवाल (*माइक्रोसिस्टिस, यूग्लीना*) दूसरे शैवालों पर हावी होकर तेजी से प्रजनन करते हैं। जिसके परिणामस्वरूप जलप्रस्फुटन (water bloom - जल में पुष्पन) होता है। ऐसे जल प्रस्फुटन पानी में रहने वाली मछलियों तथा अन्य जंतुओं के लिये हानिकारक होते हैं क्योंकि वे रात के समय पानी की समस्त ऑक्सीजन का उपभोग कर सकते हैं। हालांकि मौसमी जल प्रस्फुटन शीतोष्ण देशों में अधिक पाये जाते हैं, भारत तथा अन्य उष्णकटिबंधीय देशों में निवही सायनोबैक्टीरिया *माइक्रोसिस्टिस* का स्थायी प्रस्फुटन अधिक पाया जाता है। यह बहुत से मंदिरों के तालाबों तथा झीलों में मोटा, नीलहरित निलंबन बनाते हैं जिससे वह पानी मनुष्यों की जरूरतों के लिये अनुपयोगी हो जाता है।

6.2.2 समुद्री आवास

समुद्र में सबसे अधिक संख्या में शैवाल पाये जाते हैं जिन्हें संयुक्त रूप से सीवीड (seaweed) कहते हैं। हालांकि भारत की तट रेखा बहुत लंबी है परन्तु सिर्फ चट्टानी क्षेत्रों में ही जैसे कि गुजरात, तमिलनाडु तथा आन्ध्र प्रदेश में, व कुछ द्वीपों जैसे अंडमान, लक्षद्वीप में अधिक समुद्री वनस्पतियां पाई जाती हैं।

समुद्री तट, ज्वार भाटे के कारण आवर्ती रूप से भीगते हैं तथा सूखते हैं। उच्च ज्वार तथा निम्न ज्वार के बीच के क्षेत्र को अन्तराज्वारीय (intertidal) क्षेत्र कहते हैं। अन्तराज्वारीय क्षेत्र में उगने वाले समुद्री-शैवाल क्रमशः सूखते और भीगते रहते हैं। वे नीचे की चट्टानों से भी स्थापन अंगों (holdfast) के द्वारा मजबूती से जुड़े रहते हैं। कभी-कभी वे अलग भी हो जाते हैं तथा खुले समुद्र में तैरते पाये जाते हैं जैसा कि सारगैसो सागर (Sargasso sea) के मामले में है। भारत के समुद्री तटों जैसे मन्नार की खाड़ी (तमिलनाडु) पर आप बहुत से समुद्री शैवालों जैसे कि *ग्रेसिलेरिया इड्यूलिस* (*Gracilaria edulis*, लाल शैवाल), *जिलीडिएला एसीरोसा* (*Gelidiella acerosa*, लाल शैवाल), *जिलीडिएला फोलीफेरा* (*G. folifera*), *जिलीडिएला क्रासा* (*G. crassa*), *हिप्निया मूसीफोर्मिस* (*Hypnea musciformis*, लाल शैवाल), *हिप्निया वेलैन्टी* (*H. valentiae*), *हिप्निया पेनोसा* (*Hypnea pannosa*) तथा *सर्गेसम वाइटिया* (*Sargassum wightii*) व *टर्बिनेरिया* (*Turbinaria*, भूरे शैवाल) का संग्रह कर सकते हैं जो व्यावसायिक रूप से उपयोगी हैं।

सार्गेसम सागर

दक्षिण अटलान्टिक में एक सागर जिसका नाम सारगैसो इसीलिए पड़ा क्योंकि इसमें प्रपर्णों के विशाल ढेर तैरते हुए एकत्रित हैं।

नितलस्थ (benthic) शैवाल वे समुद्री शैवाल होते हैं जो गहरे पानी में तटों से दूर समुद्र तल से जुड़े रहते हैं तथा कभी भी पानी के ऊपर नहीं आते हैं। उनका वितरण समुद्र की उस गहराई पर निर्भर करता है जहां तक पर्याप्त मात्रा में प्रकाश पहुंच सकता हो। समुद्री शैवालों के संस्तर (bed) बहुत गहरे पानी में, 100 - 200 मीटर तक भी, पाये जा सकते हैं, जिनमें अधिकांशतः लाल शैवाल होते हैं क्योंकि सिर्फ ये ही शैवाल प्रकाश की नीली तरंगदैर्ध्य का उपयोग कर सकते हैं जो कि लाल वर्णक, फाइकोइरिथ्रिन, के द्वारा अवशोषित की जाती है।

अन्तराज्वारीय क्षेत्र जिसे वेलांचली क्षेत्र (littoral zone) भी कहते हैं उसे कभी-कभी तीन पट्टियों में विभेदित किया जा सकता है, अतिवेलांचली (supra littoral), मध्य वेलांचली (middle littoral) तथा

अववेलांचली (infra littoral) पट्टियां, जिनमें से प्रत्येक में भिन्न-भिन्न परन्तु विशिष्ट शैवालों का सहयोग पाया जाता है। विभिन्न क्षेत्रों में पाये जाने वाले शैवाल भौगोलिक स्थिति, अधःस्तर (substratum) की प्रकृति तथा अन्य कारकों के आधार पर भिन्न-भिन्न होते हैं। भारत के तटीय क्षेत्रों के वेलांचली क्षेत्र में पाये जाने वाले प्रमुख समुद्री शैवाल तालिका 6.1 में सूचीबद्ध किये गये हैं।

तट से दूर खुले सागर में प्लवकीय शैवाल बहुतायत में पाये जाते हैं। समुद्री प्लवकीय शैवाल विविधता लिये होते हैं तथा उसका संघटन भौगोलिक स्थितियों तथा मौसमों पर निर्भर करता है। डाइनोफ़ाइटा, सायनोफ़ाइटा, सिलिकोफ्लैजेलेट्स तथा अन्य समूहों की आबादी कम पाई जाती है। कभी-कभी समुद्र का पानी *नॉक्टील्यूका* (*Noctiluca*) तथा कुछ अन्य शैवालों के गुलाबी प्रस्फुटनों के कारण रंगीन हो जाता है। सायनोबैक्टीरिया *ट्राइकोडेस्मियम* (*Trichodesmium*) के प्रस्फुटन समुद्र के विशाल भागों को आच्छादित करके समुद्र को लाल रंग प्रदान कर सकते हैं जैसा कि "लाल सागर" (Red Sea) में है। कभी कभी कुछ डाइनोफ्लैजेलेट्स बहुत जल्दी संवर्धित होकर प्रस्फुटन बनाते हैं जिसे आमतौर पर लाल ज्वार कहा जाता है। समुद्र की प्लवकीय वनस्पतियां प्रकाश संश्लेषी कार्बन यौगिकीकरण के उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं तथा क्रश्टेशियों (crustaceans), बहुत सी मछलियों के अंगुलिमीनों (fingerlings) तथा व्हेल मछलियों के लिये भोजन का कार्य करती हैं। समुद्री जीव सीधे तौर पर अथवा अपरोक्ष रूप से प्लवली वनस्पतियों की गतिविधियों तथा वृद्धि पर निर्भर करते हैं।

हाल ही के वर्षों में बहुत से सूक्ष्म जीव जिनमें *क्लोरेला नाना* (*Chlorella nana*), *नेनौक्लोरिस* (*Nannochloris*), *डॉलिकोमेस्टिक्स* (*Dolichomastix*) तथा *हिलबा* (*Hilba*) शामिल हैं संयुक्त रूप से पिकोप्लवक (picoplankton) कहलाते है। ये महासागरों की जैविक उत्पादकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण हैं।

तालिका 6.1 : भारतीय तटों पर पाये जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण वेलांचली समुद्री शैवाल

पूर्वी तट	
क्लोरोफ़ाइटा :	*अल्वा* (*Ulva*), *क्लेडोफोरा* (*Cladophora*), *ब्रायोप्सिस* (*Bryopsis*), *ऐसीटेबुलेरिया* (*Acetabularia*), *निओमेरिस* (*Neomeris*), *यूडोशिया* (*Udotea*), *हालीमेडा* (*Halimeda*), *बूडलिया* (*Boodlea*), *डिक्टियोस्फेरिया* (*Dictyosphaeria*)।
फियोफाइटा :	*एक्टोकार्पस* (*Ectocarpus*), *पैडाइना* (*Padina*), *डिक्टियोप्टेरिस* (*Dictyopteris*) *डिक्टयोटा* (*Dictyota*), *टर्बिनेरिया* (*Turbinaria*), *जोनेरिया* (*Zonaria*), *होर्मोफाइसा* (*Hormophysa*), *सर्गेसम* (*Sargassum*)
रोडोफाइटा :	*एक्रोकीटियम* (*Acrochaetium*), *लोरेन्शिया* (*Laurencia*), *कॉन्ड्रिया* (*Chondria*), *पॉलीसाइफोनिया*, *जिलीडियोप्सिस* (*Gelidiopsis*), *ग्रैटीलोपिया* (*Grateloupia*), *रोडीमेनिया* (*Rhodymenia*), *लायगोरा* (*Liagora*), *पॉरफाइरा* (*Porphyra*), *जिलीडिएला* (*Gelidiella*) , *ग्रैसिलेरिया* (*Gracilaria*), *सेरैमियम* (*Ceramium*)।
पश्चिमी तट	
क्लोरोफाइटा :	*कैमीडोरिस* (*Chamaedoris*), *एन्टेरोमार्फा* (*Enteromorpha*), *अल्वा* (*Ulva*) *ब्रायोप्सिस* (*Bryopsis*), *ऐसीटेबुलेरिया* (*Acetabularia*), *स्ट्रुविया* (*Struvea*), *स्यूडोब्रायोप्सिस* (*Pseudobryopsis*)।
फियोफ़ाइटा :	*डिक्टियोप्टेरिस* (*Dictyopteris*), *डिक्टियोटा* (*Dictyota*), *नेमासिस्टिस* (*Nemacystis*)।
रोडोफ़ाइटा:	*सिनाइया* (*Scinaia*), *हैलीमेनिया* (*Halimenia*), *कैलोग्लौसा* (Caloglossa), *रोडीमेनिया* (*Rhodymenia*), *डेस्या* (*Dasya*), *लोरेन्शिया* (*Laurencia*), *हैल्मिन्थोक्लेडिया* (*Helminthocladia*)।

6.2.3 विशेष आवास

शैवाल उन विशेष आवास स्थानों में भी पाये जाते हैं जहां पर्यावरणीय स्थितियां तीव्रतम होती हैं।

खारे जल तथा लवण की झीलें

अंतर्देशीय झीलें जैसे राजस्थान में सांभर लवण झील (सोडियम क्लोराइड) तथा अन्य झीले जो लवण संतृप्त सांद्रणों (saturating concentration) को लिये हुए हैं (लवण जलीय) उनमें स्थाई तौर पर उगने वाले सायनोबैक्टीरिया *ऐनाबीना, ऐनाबीनोप्सिस* तथा एककोशिकीय हरे शैवाल *डूनैलिएला (Dunaliella)* को तैरते हुए नील-हरित मलफेनों (scums) के रूप में देखा जा सकता है। इन लवण-रागी (halophilic) जीवों का उपापचयन सिर्फ उच्च लवण सान्द्रता में ही सक्रिय होता है।

तापीय क्षेत्र

निचले हिमालय तथा अन्य पहाड़ों (हिमाचल प्रदेश, बिहार, उड़ीसा तथा महाराष्ट्र) के बीच में गर्म पानी के तापीय झरने पाये जाते हैं जिनका तापमान 40 से 70 डिग्री सेन्टीग्रेड तक होता है, इनमें बहुत से शैवाल मुख्यत: सायनोबैक्टीरिया, *मैस्टिगोक्लेडस लैमिनोसस (Mastigocladus laminosus) सिनेकोकॉकस लिवीडस (Synechococcus lividus), ऑसिलैटोरिया (Oscillatoria), फोरमिडियम (Phormidium)*, निवास करते हैं। अन्य शैवालों के विपरीत, तापीय शैवालों की वृद्धि तथा उपापचयन की क्रियाएं उच्च तापमानों पर ही सबसे अधिक सक्रिय रहती हैं।

ध्रुवीय क्षेत्र

शैवाल अत्यंत ठंडी जलवायु वाली स्थितियों में भी उग सकते हैं जोकि उत्तर ध्रुवीय तथा दक्षिण ध्रुवीय क्षेत्रों में पाई जाती हैं। सायनोबैक्टीरिया *नॉस्टॉक (Nostoc)* सर्वाधिक पाया जाता है, इसके अतिरिक्त *स्किजोथ्रिक्स (Schizothrix), ऑसिलैटोरिया (Oscillatoria), लिंग्ब्या (Lyngbya)* , *फोरमिडियम (Phormidium)*, तथा *स्टाइगोनीमा (Stigonema)* भी पाये जाते हैं। सहजीवी शैवालों (*कॉलीमा*) वाले लाइकेन सामान्य रूप से पाये जाते हैं। सायनोबैक्टीरिया तथा लाइकेन ध्रुवीय क्षेत्रों में उगते हैं तथा नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करते हैं। दक्षिणी ध्रुव पर भारतीय अभियान दलों ने कुछ प्रकार के शैवाल एकत्रित किये हैं जिनमें से अधिकांशत: डायटम्स तथा सायनोबैक्टीरिया हैं।

स्थायी बर्फ के क्षेत्रों में जहां सतह स्थिर होती है वहां कभी-कभी शैवालों की बहुत अधिक वृद्धि पाई जाती है जो कि बर्फ को लाल, भूरा या पीला रंग प्रदान करती है। बर्फ का लाल रंग, हरे शैवाल *क्लैमाइडोमोनस निवेलिस (Chlamydomonas nivalis)* तथा *क्लैमाइडोमोनस फ्लेवोवाइरेन्स (C. flavo-virens)* के कारण हो जाता है।

बोध प्रश्न 6.1

अ) सही उत्तरों पर चिन्ह लगाइये।

i) ताजे पानी वाले शैवाल मुख्यत: किस प्रभाग के हैं?

1) सायनोफ़ाइटा

2) क्लोरोफ़ाइटा

3) फ़ियोफ़ाइटा

4) रोडोफ़ाइटा

ii) निम्नलिखित में से कौन सी शैवाल धान के खेतों में होती हैं

1) *सर्गेसम*

2) *पॉरफ़ाइरा*

3) *आलोसाइरा*

4) *अल्वा*

ब) गहरे समुद्री जल में किस प्रकार के शैवाल पाये जाते हैं और क्यों?

....

....

....

....

....

स) दो उन समुद्री शैवालों के नाम बताइये जिन्हें भारत में (मन्नार की खाड़ी से) एकत्रित किया जा सकता है।

....

....

....

....

स) रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से पूरा कीजिए।

i) वे शैवाल जो मन्दिरों के तालाबों तथा झीलों में स्थायी प्रस्फुटन करते हैं वे प्रभाग ....के हैं।

ii) .... समुद्री पादपप्लवकों का मुख्य भाग बनाते हैं।

iii) लाल सागर के पानी का रंग लाल .... के कारण होता है।

iv) सारगैसो सागर का नाम .... शैवाल के विशाल संचय के कारण है।

v) .... उत्तर ध्रुवीय तथा दक्षिण ध्रुवीय क्षेत्रों में सबसे अधिक पाया जाने वाला शैवाल है।

vi) *क्लैमाइडोमोनस* की जातियां .... बर्फ को लाल रंग प्रदान करती हैं।

vii) वे शैवाल जो समुद्र में रहते हैं उन्हें .... कहते हैं।

6.3 मृदीय तथा भूपृष्ठीय शैवाल

6.3.1 मृदीय शैवाल

पूरे विश्व भर में मृदा की सतही परतें नम होने पर कुछ प्रकार के शैवालों की वृद्धि के लिये अनुकूल आधार प्रदान करती हैं। स्थलीय शैवाल नव प्रकट हुए क्षेत्रों पर प्राथमिक उपनिवेशकों (colonizers) के रूप में प्रमुख भूमिका निभाते हैं तथा ह्यूमस (**humus**) एकत्रित करके अन्य पादपों की स्थापना में मदद करते हैं। सन् 1883 में, क्रेकाटोआ के द्वीप (जापान) पर ज्वालामुखी के फटने के कारण समस्त जीवन के विध्वंश हो जाने के बाद, पहले प्रकट होने वाले पादप *ऐनाबीना, टॉलिपोथ्रिक्स* (*Tolypothrix*), *सिम्प्लोका* (*Symploca*), *लिंग्ब्या* (*Lyngbya*) जैसे सायनोबैक्टीरिया थे।

मृदीय शैवाल दलदली अथवा नम मिट्टी पर घने रूप से उगते हैं, हालांकि उनमें से बहुत से सुदीर्घ तथा गंभीर सूखे की स्थितियों को झेल लेते हैं। बहुत से सायनोबैक्टीरिया – *नॉस्टॉक* (*Nostoc*),

सिलिन्ड्रोस्पर्मम (*Cylindrospermum*), पॉरफाइरोसाइफोन (*Porphyrosiphon*), साइटोनीमा (*Scytonema*), टॉलिपोथ्रिक्स (*Tolypothrix*), स्टाइगोनीमा (*Stigonema*), ऐफैनोकैप्सा (*Aphanocapsa*), लिंग्ब्या (*Lyngbya*), फोरमिडियम (*Phormidium*), हरे शैवाल –(इडोगोनियम (*Oedogonium*), इडोक्लेडियम (*Oedocladium*), यूरोनीमा (*Uronema*) तथा अन्य शैवाल – ब्रोट्रीडियम (*Botrydium*), वौकैरिआ (*Vaucharia*) तथा डायटम्स मिट्टी की ऐसी सतह पर उगते हैं जो मौसम में कम से कम कुछ समय के लिये अस्थाई रूप से नम रहती है। वे मिट्टी की सतह पर पपड़ी बना देते हैं, खासतौर पर सायनोबैक्टीरिया जिनमें श्लेष्मी आवरण होता है तथा ये मिट्टी की ऊपरी सतह को अपरदन (erosion) से बचाते हैं।

6.3.2 भूपृष्ठीय शैवाल

ये शैवाल अपने लिये पानी वायु की नमी से लेते हैं तथा अपनी वृद्धि के लिये वायु में उपलब्ध नमी पर निर्भर करते हैं। वे मृदीय शैवालों की भांति ही सूखे को झेलने में सक्षम होते हैं। अपने देश में गहरे भूरे धब्बों को या कभी-कभी मखमली गलीचों की भांति दिखने वाले कुशनों को इमारतों की खुली सतहों, दीवारों, छतों, एस्बेस्टस की छतों, पत्थर की सतहों, तथा पेड़ों के तनों पर पूरी तरह से आच्छादित किये हुए देखा जा सकता है। प्राचीन पुरातात्विक स्मारक, मंदिर तथा वास्तव में कोई भी चूने से पुती हुई अथवा चूने की सतह सायनोबैक्टीरियाई कुशनों की वृद्धि के लिये बेहतरीन आवास स्थान बनाती है जिन पर उच्च पादपों के बीज उपनिवेशित हो जाते हैं तथा अंततः उन इमारतों को बर्बाद तथा विध्वंस करते हैं। शैवालीय वृद्धि मुख्यतः सायनोबैक्टीरियाई प्रकृति की होती है जिसमें क्रूकॉकस (*Chroococcus*), मिक्सोसार्सीना (*Myxosarcina*), साइटोनीमा (*Scytonema*), टॉलिपोथ्रिक्स (*Tolypothrix*), लिंग्ब्या (*Lyngbya*) पॉरफाइरोसाइफोन (*Porphyrosiphon*) सिनेकोकॉकस (*Synechococcus*) सम्मिलित हैं। सभी प्रकार मोटी, श्लेष्मी, गहरे भूरे रंग की सतह बनाते हैं। बहुत से पेड़ों के तनों की छाल में न सिर्फ ये शैवाल बल्कि कुछ अन्य हरे शैवाल जैसे ट्रेंटीफोलिया (*Trentepohlia*), फाइसोलिनम (*Physolinum*), नारंगी रंग के गुच्छे के रूप में तथा क्लोरोकॉकम (*Chlorococcum*) भी पाये जाते हैं।

6.4 शैवाली-साहचर्य

शैवाले अन्य पादपों तथा जन्तुओं के साथ साहचर्य द्वारा भी जीवन यापन करती है। जैसा नीचे विवरण दिया जा रहा है।

6.4.1 शैवाली - पादप साहचर्य

शैवालों के अन्य पादपों के साथ संबंद्ध ज्ञात हैं, कुछ अधिपादपों के रूप में ऊपरी सतह से जुड़े हुए तथा कुछ अंतःपादपों के तौर में ऊतकों के भीतर पाये जाते हैं। जलीय शैवालों के सभी समूहों में अधिपादप आमतौर पर होते हैं। एक दिलचस्प उदाहरण हरित शैवाल सैफ़ैल्यूरास (*Cephaleuros*) का है जो चाय की पत्ती (चाय की लाल किट्ट (rust) बीमारी), कॉफी, आम, अमरूद तथा अन्य फल देने वाले पेड़ों की पत्तियों की उपत्वचा के ठीक नीचे, किट्टीय लाल रंग के धब्बों के रूप में उगता है।

अन्य अंतःपादपी शैवाल क्लोरोकाइट्रियम (*Chlorochytrium*) जलीय पादपों–लेम्ना (*Lemna*), सिरैटोफिलम (*Ceratophyllum*) तथा इलोडिया (*Elodea*) के अन्तरकोशिकीय स्थानों में पाया जाता है। कोलियोकीटि नाइटलेरम (*Coleochaete nitellarum*) एक अन्य शैवाल नाइटेला (*Nitella*) की उपत्वचा के भीतर पाया जाता है। भूरे शैवाल की कुछ जातियां–एक्टोकार्पस तथा स्फेसीलेरिया (*Sphacelaria*) अंतःपादपों की भांति अपेक्षाकृत बड़े केल्प्स (*kelps*)– लेमिनैरिया तथा सिस्टोसीरा (*Cystoseira*) के अन्दर उगते हैं।

6.4.2 शैवाली साहचर्य

ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जिनमें शैवाल जंतुओं के भीतर (अंतःजंतुक) उगते हुए पाये जाते हैं। हरा शैवाल *क्लोरेला* एककोशिकीय *पैरामीशियम* के भीतर तथा *हाइड्रा* के स्पर्शकों (tentacles) में तथा स्पंजों

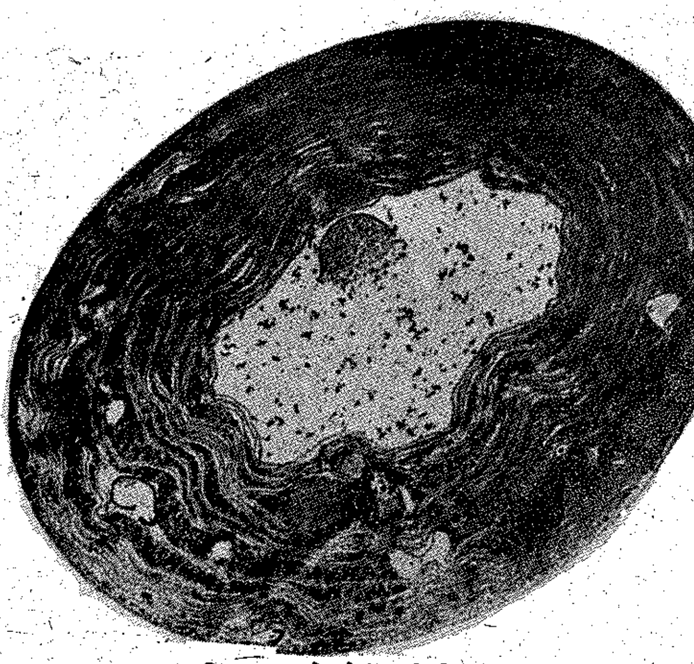

चित्र 6.1 : प्रोक्लोरॉन की विस्तृत संरचना।

(sponges) में भी पाया जाता है। समुद्री आवास स्थानों में *समुद्री ऐनिमोन* (*Sea anemones*) तथा कुछ कोरल, एककोशिकीय शैवाल *जोओजैन्थैला* (*Zooxanthallae* क्रिप्टोफाइसी) तथा कुछ डाइनोफाइसी के सदस्यों को लिये रहते हैं। *प्लेटिमोनस* (*Platymonas*, हरित शैवाल) समुद्री कृमि *कॉन्वोल्यूटा* (*Convoluta*) के भीतर पाया जाता है। हाल ही में यह खोज की गई है कि पूर्व केन्द्रकी शैवाल *प्रोक्लोरॉन डिडेम्नी* (*Prochloron didemni*) जिसमें क्लोरोफिल *b* पाया जाता है सहजीवी के रूप में समुद्री स्क्वर्ट की आंत में रहता है।

6.4.3 शैवाली सहजीवी – साहचर्य

जब कोई शैवाल किसी अप्रकाश संश्लेषणी जीव (कवक अथवा जंतु) के निकट सानिध्य में रहता है तो कार्बन यौगिकीकरण के कुछ उत्पाद जैसे शर्करा अप्रकाश संश्लेषी परपोषी द्वारा अवचूषित किये जा सकते हैं क्योंकि शैवाल प्रकाश संश्लेषण से कार्बन का यौगिकीकरण करने में समर्थ होता है। शैवाल को इस साहचर्य के बदले में किसी तरह का संरक्षण मिल जाता है। इस प्रकार आपसी फायदे का सहजीवन साहचर्य कहलाता है। कुछ शैवाल नाइट्रोजन यौगिकीकरण भी करते हैं जैसे कि कुछ सायनोबैक्टीरिया। इनसे कार्बन यौगिकों के साथ ही नाइट्रोजिनी यौगिक भी परपोषी जीव को उपलब्ध होते हैं। कुछ सायनोबैक्टीरिया तथा कुछ हरे शैवाल भी कवकों के साथ सहजीवी साहचर्य में एक अलग पादप के रूप में रहते हैं जिन्हें लाइकेन कहते हैं। लाइकेन पर अधिक जानकारी आपको ब्लॉक 2 इकाई 12, में दी गई है। नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले सायनोबैक्टीरिया सहजीवी साहचर्य में, प्रकाशसंश्लेषी रूप से सक्रिय उच्च पादपों जैसे ब्रायोफाइट्स, टेरिडोफाइट्स, जिम्नोस्पर्मस (अनावृतबीजी) तथा एन्जियोस्पर्मस (आवृतबीजी) के साथ पाये जाते हैं (तालिका 6.2 को देखिये)।

ये अधिकांशत: अंतराकोशिकीय अवकाशों के बीच में प्रवालाभ ग्रंथिकाएं (coralloid nodules) बनाते हुए पाये जाते हैं जैसे कि *साइकस* में। *आज़ोला*, जो कि एक जलीय फर्न है उसमें *ऐनाबीना* के पैकेट पत्तियों की गुहिकाओं (cavities) में पाये जाते हैं (इकाई 7, चित्र 7.4 बी, पृ० 95)।
सायनोबैक्टीरिया–*रिचेला इन्टरसेलुलेरिस* (*Richella intercellularis*) का एकल तंतु समुद्री डायटम (एककोशिकीय) *राइजोसोलेनिया* (*Rhizosolenia*) में पाया जाता है। जो कि संभवत: नाइट्रोजन यौगिकीकरण करता है। इस प्रकार की अंतर कोशिकीय उपस्थिति एककोशिकीय फ्लैजेलेट *पॉलिनिया* (*Paulinia*) तथा *ऊसिस्टिस* (*Oocystis*) में भी देखी गई है, जहां सायनोबैक्टीरिया जैसी कायाऐं पाई गई हैं। *सायनोफोरा* (क्रिप्टोफाइट) में भी इस प्रकार के सायनोबैक्टीरिया जैसे अन्तरकोशिकीय अंतरवेशन (inclusions) दिखाई पड़ते हैं, जिन्हें साइनेलस (cyanelles) अंतर्नीलशैवाल) कहते हैं। इलेक्ट्रान-सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखने पर उनमें पूर्व केन्द्रकी संरचना दिखाई पड़ती है परन्तु वह बिना उपयुक्त कोशिका भित्तियों के होते हैं।

तालिका 6.2 : नील-हरित शैवालों का पादपों तथा जन्तुओं के साथ सहजीवी साहचर्य

पादप तथा जंतु	सायनोबैक्टीरिया
कवक	
एस्कोमाइसिटीज वाली लाइकेन में	*कैलोथ्रिक्स, नॉस्टॉक, साइटोनीमा, स्टाइगोनीमा*
ब्रायोफाइट्स	
एन्थोसिरोस, ब्लेसिया	*नॉस्टॉक, ऐनाबीना*
फर्न-अज़ोला	*ऐनाबीना आज़ोली*
जिम्नोस्पर्मस	
साइकस, मैक्रोजेमिया	*नॉस्टॉक*
एन्जियोस्पर्मस	
गुनरा (Gunnera)	*नॉस्टॉक*
प्रोटोजोआ	
सायनोफ़ोरा पेराडोक्सा, (Cyanophora paradoxa)	विभिन्न "साइनेल्स"
ग्लौकोसिस्टस (Glaucocystis)	
पॉलिनेला (Paulinella)	

हाल ही में यह पाया गया है कि एक पूर्व केन्द्रकी शैवाल *प्रोक्लोरॉन डिडेम्नी (Prochloron didemni)* समुद्री स्वर्ट्स की आंत में एक सहजीवी के रूप में रहता है। यह शैवाल तथा एक अन्य शैवाल *प्रोक्लोरोथ्रिक्स हौलेण्डिका (Prochlorothrix hollandica)* सायनोबैक्टीरिया की भांति ही सभी मायनों में पूर्व केन्द्रकी संरचना दर्शाते हैं सिवाय इसके कि इनमें क्लोरोफिल *b* भी पाया जाता है परन्तु फ़ाइकोबिलिन अनुपस्थित होते हैं। कुछ फ़ाइटोफ्लैजेलेट्स (शैवाल अथवा क्रिप्टोमॉनाड) में नील-हरित शैवालीय कोशिकाएं सहजीवी साहचर्य में रहती हैं। परपोषी कोशिका **सायनोम्स (cyanomes)** तथा शैवालीय कोशिका साइनेल्स (cyanelles) कहलाती हैं तथा यह साहचर्य सिनसायनोसिस (syncyanosis) कहलाता है।

डाइनोफ़ाइसी में, एक शैवाल के अंदर दूसरे शैवाल की अंतराकोशिकीय उपस्थिति भी पाई जाती है। एककोशिकीय रंगहीन (अहरित-बिना वर्णकों के) शैवाल *पेरिडिनियम बाल्टिकम (Peridinium balticum)* और *ग्लिनोडिनियम (Glenodinium)* भी अपने कोशिकाद्रव्य में एक एककोशिकीय क्राइसोफ़ाइट अंत:सहजीवी के रूप में लिये रहते है। उपर्युक्त सभी उदाहरणों में यह बात ध्यान देने योग्य है कि परपोषी कोशिका रंगहीन होने के कारण प्रकाश संश्लेषी अंत:सहजीवी पर कार्बनिक कार्बन यौगिकों के लिये निर्भर रहती है।

सहजीवी अवस्था का एक चरम उदाहरण है शैवालीय समुद्री जंतुओं के ऊतकों में संपूर्ण कोशिकाओं की बजाय सिर्फ क्लोरोप्लास्ट की उपस्थिति। एक समुद्री स्लग (slug) *सैकोग्लॉसस (Saccoglossus)*, समुद्री हरे शैवाल जैसे *कोडियम (Codium)* से अपना भोजन लेता है। शैवाल के क्लोरोप्लास्ट का पाचन नहीं होता अपितु वे स्लग की आहार नाल की उपत्वचीय कोशिकाओं में आत्मसांत (incorporate) हो जाते हैं। स्लग हरे रंग का दिखाई देता है तथा इसमें क्लोरोप्लास्ट प्रकाश में आम प्रकाश संश्लेषी कोशिकाओं की भांति ही तेजी से प्रकाश संश्लेषण करते हैं।

आज इस प्रकार के विविध सहजीवी साहचर्यों की उपस्थिति, विशेष रूप से उन उदाहरणों में जहां रंगहीन वास्तविक केन्द्रकी कोशिका में, एक पूर्व केन्द्रकी सायनोबैक्टीरिया जैसा जीव निवास करता है, इस मत का दृढ़ता से समर्थन करते हैं कि उच्च पादपों के क्लोरोप्लास्ट पूर्वजी सायनोबैक्टीरिया जैसे अंत: सहजीवियों से विकसित हुए हैं (देखिए इकाई 1, सेक्शन 1.6, पृ 15. इकाई 2, सेक्शन 2.2, पृ 34)

बोध प्रश्न 6.2

अ) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिये।

i) वे शैवाल जो थल पर प्राथमिक उपनिवेशक हैं वे प्रभाग .... के सदस्य हैं।

ii) मृदा पर सायनोबैक्टीरिया की परत मृदा अपरदन को रोकती है क्योंकि उनमें बाहरी .... होता है।

iii) शैवाल .... *पैरामीशियम* के अंदर रहता है।

iv) कार्यशील क्लोरोप्लास्ट की उपस्थति समुद्री .... में देखी गई है।

v) कुछ फ़ाइटोफ्लैजेलेट्स की कोशिकाओं में पाये जाने वाले सायनोबैक्टीरिया .... कहलाते हैं।

vi) चाय का लाल किटट् रोग एक शैवाल द्वारा होता है जो .... प्रभाग का सदस्य है।

vii) *प्रोक्लोरोन डिडेम्नी* अंत:सहजीवी के रूप में समुद्री .... की आंत में रहता है।

6.5 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि:

- शैवाल पृथ्वी की सतह पर सभी प्रकार के आवास स्थानों में पाये जाते हैं जहां पर जल अथवा जलवाष्प तथा सूर्य का प्रकाश पर्याप्त रूप से उपलब्ध होता है। वे उन पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुसार अनुकूलन की आश्चर्यजनक क्षमता दिखाते हैं जहां पर भी उगते हैं।
- हरित शैवाल ताजे पानी के स्थानों, प्रदूषित जल, बहती हुई नदियों तथा पहाड़ी झरनों में पाये जाते हैं। शैवाल की वनस्पति मौसम के अनुसार बदलती रहती है। समुद्र के विभिन्न क्षेत्रों के शैवालों में भिन्नता होती हैं।
- सायनोबैक्टीरिया तथा कुछ शैवाल बहुत अधिक ठंडे तथा गर्म आवास स्थानों में भी निवास करते हैं।
- यदि सूर्य की रोशनी उपलब्ध हो तो सायनोबैक्टीरिया, हरे शैवाल, डायटम्स तथा कुछ अन्य शैवाल नम मिट्टी में उगते हैं। उनमें से बहुत से सुदीर्घित सूखे की स्थिति को भी झेल लेते हैं। सायनोबैक्टीरिया नई प्रकट भूमि पर प्राथमिक उपनिवेशकों के रूप में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। नील-हरित तथा हरित शैवाल भूपृष्ठीय आवास स्थानों में भी पाये जाते हैं।
- कुछ शैवाल पादपों के साथ-अधिपादपों तथा अंत:पादपों के रूप में साहचर्य में रहते हैं। उनमें से कुछ परजीवी प्रकृति के भी होते है।
- शैवाल जंतुओं के भीतर उगते हुए भी पाये जाते हैं, उदाहरण के लिये *पैरामीशियम*, स्पंज, *हाइड्रा*, *समुद्री ऐनीमोन*, प्रवाल तथा समुद्री कृमियों में।
- सायनोबैक्टीरिया के सायनेल्स जंतुओं, पादपों तथा प्रोटिस्टों में भी देखे जाते हैं। यह अवलोकन तथा साथ ही समुद्री जंतुओं में क्रियात्मक क्लोरोप्लास्ट का होना क्लोरोप्लास्ट के अंत:सहजीवी के रूप में विकास के सिद्धांत का समर्थन करता है।

6.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. सही उत्तर चुनें

अ) तापीय झरनों में पाये जाने वाले शैवाल किस प्रभाग के सदस्य हैं ?

i) सायनोफ़ाइटा

ii) फ़िस्रोफ़ाइटा

iii) डाइनोफ़ाइटा

iv) रोडोफ़ाइटा

ब) लवणीय झीलों में पाये जाने वाले शैवाल किस प्रभाग के सदस्य हैं ?

i) डाइनोफ़ाइटा

ii) सायनोफ़ाइटा

iii) रोडोफ़ाइटा

स) भूरा शैवाल, *एक्टोकॉर्पस* कहां पाया जाता है?

i) खुले समुद्र में

ii) ताजे पानी में

iii) समुद्र के अन्तराज्वारीय क्षेत्र में

2. नीचे लिखे कथनों में से सही को चिन्हित करिए।

अ) कैल्प जैसे कि *लेमिनैरिया* भारत के पश्चिमी तट पर पाए जाते हैं। ☐

ब) साइनेल्स सहजीवी तथा वास्तविक केन्द्रकी शैवाल होते हैं। ☐

स) *प्रोक्लोरान* पूर्व केन्द्रकी शैवाल है जिसमें क्लोरोफिल *b* भी पाया जाता है। ☐

द) जल प्रस्फुटन समुद्र में *माइक्रोसिस्टिस* द्वारा बनाया जाता है। ☐

3. ताजा तथा समुद्रीय जल में पाये जाने वाल कुछ शैवालों की सूची बनाइए।

6.7 उत्तर

बोध प्रश्न

.1) i) 1 और 2, ii) 3

.) अधिकतर लाल शैवाल क्योंकि उनका लाल वर्णक फ़ाइकोइरिथ्रन नीली रोशनी को शोषित कर लेता है, जो गहरे पानी में उपलब्ध होती है।

स) *जिलीडिएला, ग्रेसिलेरिया*

द) i) सायनोफ़ाइटा

ii) डाइटम्स

iii) *ट्राइकोडेस्मियम*

iv) *सर्गेसम*

v) *नॉस्टॉक*

vi) *क्लैमाइडोमोनस निवेलिस* तथा *क्लैमाइडोमोनस फ्लेवोवाइरेन्स*

vii) समुद्रीय शैवाल (सी वीड)

6.2 अ) i) सायनोफ़ाइटा

ii) श्लेष्मी आछच्द

iii) *क्लोरेला*

iv) स्लग

v) साइनेल्स

vi) क्लोरोफ़ाइटा

vii) स्कवर्ट

अंत में कुछ प्रश्न

1) अ) सायनोफाइटा ब) सायनोफाइटा स) समुद्र के अन्तराज्वारीय क्षेत्र

2) अ) असत्य ब) असत्य स) सत्य द) असत्य

3) सेक्शन 6.2 देखिये।

इकाई 7 शैवाल तथा मानव कल्याण

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

अध्ययन निर्देशिका

7.2 शैवाल - एक पोषक खाद्य स्त्रोत

7.3 शैवाल - जंतु चारा स्त्रोत

7.4 व्यर्थ जल के उपचार के लिए शैवालों का उपयोग

7.5 जैव उर्वरक के रूप में शैवालों का उपयोग

7.6 शैवाल - ऊर्जा का स्त्रोत

7.7 शैवालों के औद्योगिक उपयोग

फ़ाइकोकोलॉइड्स

डायटोमाइट

वर्णक

7.8 शैवालों के चिकित्सीय उपयोग

7.9 शैवालीय कम्पनियाँ

7.10 शैवालों के हानिकारक प्रभाव

7.11 सारांश

7.12 अंत में कुछ प्रश्न

7.13 उत्तर

7.1 प्रस्तावना

आप में से कुछ लोग पूर्व चार इकाइयों की प्रासंगिकता के बारे में आश्चर्य कर सकते हैं कि किसलिए विभिन्न शैवालों की संरचना तथा प्रजनन के बारे में विस्तार से पढ़ा जाए ? जीव वैज्ञानिक उत्सुकतावश विभिन्न प्रकार के जीवों के बारे में ज्ञान प्राप्त करने के लिए प्रकृति की गहन छानबीन करते हैं। परन्तु यह ज्ञान अक्सर मानव जरूरतों के तुष्टीकरण के लिए काम आता है।

शैवाल जीवों का एक सम्मोहक समूह है परन्तु इनकी तरफ भारत में अधिक ध्यान नहीं दिया गया है। ऐसा संभवतः उच्च पादपों की काफी अधिक विविधता उपलब्ध होने के कारण है जो कई उपयोगी तथा दिलचस्प पदार्थों को प्रचुरता में प्रदान करते हैं। जबकि, समुद्रीय देशों जैसे जापान, ताईवान, चीन तथा हाँगकाँग में कुछ शैवाल दैनिक भोजन का एक हिस्सा हैं इसलिए उनकी खेती व्यापारिक स्तर पर की जाती है। इन देशों में शैवालों पर आधारित विशाल उद्योग हैं तथा वे विभिन्न शैवालीय उत्पादों का निर्यात भी करते हैं।

इस इकाई का उद्देश्य आपको शैवालों के उपयोग-मानव भोजन, जंतु चारा, जैव-उर्वरक तथा ऊर्जा एवं विभिन्न औषधीय तथा अन्य उपयोगी उत्पादों के स्त्रोत के रूप में विशाल संभावनाओं से परिचित कराना है। यह उपयुक्त समय है जब कि भारतीय उद्योगपति शैवालों में दिलचस्पी लें तथा निजी एवं निर्यात के उद्देश्य से विभिन्न उपयोगी उत्पादों का उत्पादन करें। हम उम्मीद करते हैं कि आप में से कुछ छात्र शैवालों में सक्रिय दिलचस्पी दिखाएंगे और उनके बारे में छानबीन करेंगे तथा उनका दोहन प्रदेशों में व्यावसायिक रूप से करने की चेष्टा करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- शैवालों के आर्थिक महत्व की चर्चा कर सकेंगे,
- प्रमुख खाद्य शैवालों को सूचीबद्ध कर सकेंगे तथा उनके पोषक गुणों की चर्चा कर सकेंगे,
- विभिन्न देशों में शैवालीय खाद्य पदार्थों के व्यावसायिक उत्पादन तथा उपभोग को समझा सकेंगे,
- व्यर्थ जल के उपचार में शैवालों की उपयोगिता का सुझाव दे सकेंगे,
- जैव उर्वरकों के रूप में शैवालों की उपयोगिता का सुझाव दे सकेंगे,
- ऊर्जा के स्त्रोत के रूप में शैवालों पर विचार करने के कारण बता सकेंगे,
- प्रमुख शैवालीय उत्पादों तथा उनके उपयोगों का वर्णन कर सकेंगे,
- शैवालों की हानिकारक भूमिका की चर्चा कर सकेंगे।

अध्ययन निर्देशिका

आपको इस इकाई को भी अन्य इकाइयों की भांति ही महत्वपूर्ण समझना चाहिए। यहां नील-हरित शैवालों सायनोबैक्टीरिया तथा शैवालों के कुछ विशिष्ट नामों को सिर्फ संदर्भ के लिए दिया गया है। आपसे सिर्फ उन कुछ महत्वपूर्ण शैवालों को याद रखने की उम्मीद की जाती है जिनका वर्णन विस्तार से किया गया है।

हमने सायनोबैक्टीरिया के आर्थिक महत्व को भी इसमें सम्मिलित किया है क्योंकि प्रचलित तौर पर इन्हें शैवालों के साथ ही समूहित किया जाता है। कृपया नोट कीजिए कि यहां उन्हें सायनोबैक्टीरिया की बजाय नील-हरित शैवाल कहा गया है। निम्नलिखित वंश सायनोबैक्टीरिया के हैं।

स्पाइरूलाइना (Spirulina)	*स्केनडेस्मस (Scenedesmus)*
ऐनाबीना (Anabaena)	*कैलोथ्रिक्स (Calothrix)*
नॉस्टॉक (Nostoc)	*हैप्लोसाइफॉन (Haplosiphon)*
ऑसिलैटोरिया (Oscillatoria)	*वेस्टिएला (Westiella)*
टॉलिपोथ्रिक्स (Tolypothrix)	*वेस्टिलोप्सिस (Westielopsis)*
आलोसाइरा (Aulosira)	
सिलिन्ड्रोस्पर्मम (Cylindrospermum)	*ऐनाबीनोप्सिस (Anabaenopsis)*
मैस्टाइगोक्लैडस (Mastigocladus)	

7.2 शैवाल – एक पोषक खाद्य स्त्रोत

विश्व की बढ़ती नई जनसंख्या की मांग को पूरा करने के लिए नए खाद्य स्त्रोतों की खोज निरंतर जारी है। लगभग 90.. जन थल से प्राप्त किया जाता है। हालांकि जलकृषि (aquaculture) अथवा ताजे पानी, खारे या समुद्री पानी में खेती भी लगभग उतनी ही प्राचीन है जितनी कि कृषि, परन्तु उसकी सामर्थ्य का अन्वेषण पूर्णत नहीं किया गया है। समुद्री जीवों में शैवाले एक समर्थ खाद्य स्त्रोत ... होते हैं। बहुत से खाद्य प्रका... नों, विटामिनों तथा खनिजों में काफी समृद्ध होते हैं। जिनमें, आयोडीन भी शामिल है, शैवाल कुछ आवश्यक बहु असंतृप्त वसा अम्लों का संश्लेषण करते हैं जो दुर्ल रूप से ही उच्च पादपों अथवा जंतुओं में संश्लेषित होते हैं। शैवाल तेजी से बढ़ते हैं तथा उनकी खेती ताजे पानी, खारे पानी, उथले तटीय क्षेत्रों तथा खुले समुद्र में भी की जा सकती है। इसलिए, उन शैवालों तथा शैवालीय उत्पादों की खोजबीन करना उपयोगी है जो पोषण की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं यानि जिनका अच्छा पोषण मूल्य है।

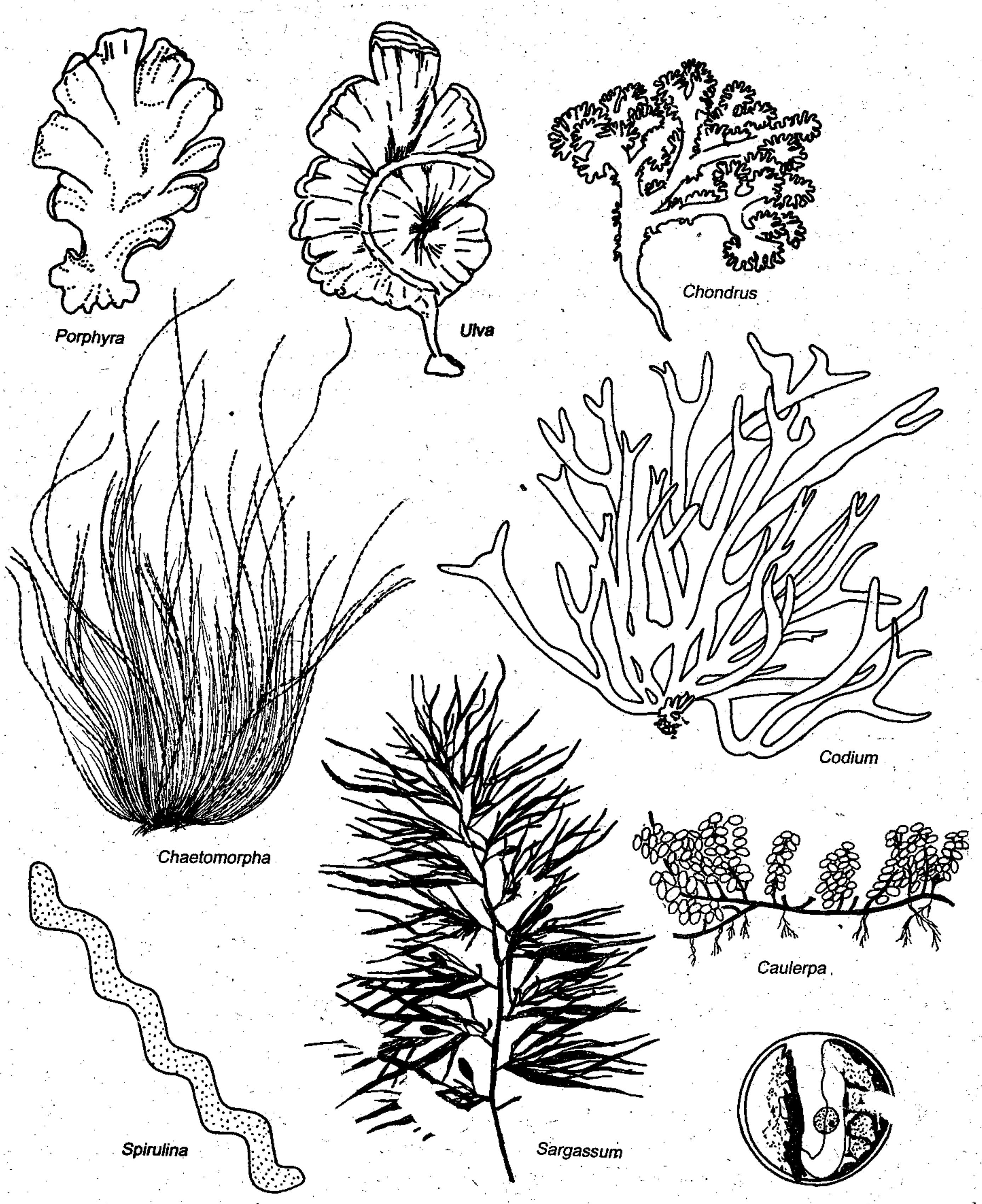

चित्र 7.1 : कुछ खाद्य शैवाल

मानव भोजन में शैवालों को सम्मिलित करने का विचार भारत में नया है परंतु समुद्रतटीय देशों में शैवाल तथा शैवालीय उत्पादों का दैनिक तौर पर अन्य खाद्य पदार्थों के साथ उपभोग किया जाता है। तटीय जापानियों के द्वारा समुद्री शैवालों का उपयोग 600 वर्ष ईसा पूर्व से है तथा चीनी लोगों के द्वारा छठी शताब्दी से है। शैवालों की लगभग 160 जातियां व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण खाद्य स्त्रोतों के तौर पर उपयोग की जाती हैं। कुछ प्रमुख खाद्य शैवालीय जातियां तालिका 7.1 में दी गई है।

स्पाइरूलाइना (चित्र 7.1) में लगभग 65% प्रोटीनें तथा प्रचुर मात्रा में कैरोटीनें भी होते हैं तथा उसे व्यर्थ जल में उगाया जा सकता है। यह मैक्सिको, ताईवान तथा भारत में बड़े पैमाने पर उगाया जाता है। इसके उच्च पोषक मूल्य के कारण इसको एक कोशिकीय प्रोटीन (SCP यानि Single Cell Protein) के स्त्रोत के रूप में पहचाना जाता है, क्योंकि यह शाकाहारी भोजन का उपयुक्त पूरक हो सकता है। विकासशील देशों में पाये जाने वाले कुपोषण को दूर करने के लिए इसको बच्चों के आहार में मिलाया जा सकता है। यह लंबे समय से मैक्सिको तथा अफ्रीका के लोगों द्वारा उपयोग किया जाता रहा है। अभी तक, भारत में इसको प्रचलित करने के प्रयास सफल नहीं हुए हैं क्योंकि यहाँ की खाद्य रुचियां तथा स्वाद भिन्न हैं। फिर भी, इसको एक स्वस्थ खाद्य सामग्री के रूप में तथा विदेशी मुद्रा अर्जित करने के लिए उगाया जा सकता है। वर्तमान में, कुछ गैर सरकारी तथा सरकारी एजेन्सियां इसकी व्यावसायिक खेती में लगी हुई हैं। केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकीय अनुसंधान संस्थान (Central Food Technological Research Institute), मैसूर ने *स्पाइरूलाइना* को व्यापक स्तर पर उगाने की तकनीक विकसित की है।

अन्य एक कोशिकीय, तेजी से उगने वाला शैवाल *क्लोरेला* (*Chlorella*) है (चित्र 7.1)। इसका अच्छा खाद्य मूल्य है क्योंकि इसमें बहुतायत में प्रोटीनें, लिपिड तथा बहुत से विटामिन अच्छी मात्रा में पाये जाते हैं। इसका पोषण मूल्य लगभग सोयाबीन तथा पालक के समान ही होता है। जापान, ताईवान तथा अन्य दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में इसे स्वास्थ्य खाद्य के रूप में उगाया जाता है जिसमें सर्व रोग हर (cure all) के गुण हैं। अकेले ताईवान में ही 1500 टन (शुष्क भार) वार्षिक उत्पादन होता है। खेती के बाद कोशिकाओं को धोया जाता है तथा वर्णकों को निकाला जाता है। सूखा हुआ शैवालीय पिण्ड पीसा जाता है तथा पाउडर के रूप में संचित किया जाता है। *क्लोरेला* को खाद्य पूरक के रूप में प्रचलित करने के प्रयास भारत में सफल नहीं हुए हैं क्योंकि इसका रंग तथा स्वाद दोनों ही लोगों की पसन्द के नहीं है।

समुद्री शैवालीय खाद्य पदार्थ जापान, कोरिया, चीन, फिलीपीन्स तथा थाइलैण्ड में प्रचलित भी हैं तथा सुस्वादु भोज्य पदार्थ भी माने जाते हैं। शैवालों की बहुत सी जातियां जैसे कि *एन्टेरोमार्फा* (*Enteromorpha*), *कौलर्पा* (*Caulerpa*), *अल्वा लेक्टयूका* (*Ulva lactuca*), *जिलीडिएला* (*Gelidiella*), *लौरेन्शिया* (*Laurencia*) तथा *ग्रेसिलेरिया* (*Gracilaria*) कच्चे ही सलाद के रूप में खाए जाते हैं। *ग्रेसिलेरिया* का उपयोग एक स्वादिष्ट मिठाई बनाने में होता है। *अल्वा लेक्टयूका* (*Ulva lactuca*) तथा *जिलीडिएला एसरोसा* (*Gelidiella a erosa*) को अन्य सब्जियों के साथ पकाया जाता है जैसे भारत में पालक पकाया जाता है।

समुद्री शैवालों में सबसे महत्वपूर्ण *पॉरफ़ाइरा* (*Porphyra*) है। इसमें 30-35% प्रोटीनें, 40-45% कार्बोहाइड्रेट्स होते हैं, और ये विटामिनों से भरपूर होते हैं। व्यस्क *पॉरफ़ाइरा* को काटकर सुखा लिया जाता है तथा परतों में दबा दिया जाता है। इन परतों को भूनकर टुकड़ों में काट ि ाता है तथा चावल, कच्ची ग ऽली या किसी सब्जी के साथ खाया जाता है। इनका उपयोग सूप क। सुवासित करने में तथा "सशी" (sushi) में भी किया जाता है। जापान में, *पॉरफ़ाइरा* (नोरी ऽलाता है) की खेती समु ०0,000 हैक्टेयर क्षेत्र में या तो समुद्र के तल में कंक्रीट ब्ला ,कर की जाती है अथवा बाँस रस्सी का जाल या बाँस का बेड़ा बनाकर की जाती है जिससे शैवाल की वृद्धि बढ़े। उत्तरी ाटेक तट पर *पामेरिया* (*Palmaria*) जो डुल्स (dulse) कहलाता है तथा *पॉरफ़ाइरा* (*hyra*) जो लेवर (laver) कहलाता है – सबसे विस्तृत रूप से प्रयोग में आने वाले शैवाल हैं। प्रशांत देशों में तथा एशिया में तटों को खोजने पर समुद्री शैवालों की अनेक किस्में मिलती हैं तथा भोजन के रूप में प्रयोग की जाती हैं।

केल्प्स (Kelps) –भूरे शैवाल समुद्री जल में पाई जाने वाली आयोडीन की सांद्रता की अपेक्षा 10,000 गुना अधिक आयोडीन की सांद्रता संग्रहीत कर सकते हैं।

संसाधित *क्लोरेला वल्गेरिस* E-25 (*Chlorella vulgaris* E-25) जापान में मोमोटारो E-25 (Momotaro E-25) के रूप में बिकता है। यह एकमात्र कोशिका भित्ति पारगम्य *क्लोरेला* है। ये कणिकाओं के रूप में 5 ग्राम के पैकेट्स में बेचा जाता है।

अन्ड्यूलेरिया (*Undularia*) – इस भूरे शैवाल का उपयोग जापान में एक खाद्य पदार्थ वैकेमी (wakame) के दोहन में किया जाता है।

अल्वा लैक्ट्यूका (*Ulva lactuca*) – यह हरा शैवाल समुद्री पालक के रूप में जाना जाता है। मुख्यत: स्कॉटलैन्ड में सलाद के रूप में खाया जाता है।

भारतीय तटों के प्रमुख खाद्य समुद्री शैवाल हैं:

हरित शैवाल

कीटोमार्फा (*Chaetomorpha*)

कौलर्पा (*Caulerpa*)

कोडियम (*Codium*)

एन्टेरोमार्फा (*Enteromorpha*)

अल्वा (*Ulva*)

लाल शैवाल

रोडीमेनिया (*Rhodymenia*)

लौरेन्शिया (*Laurencia*)

स्कैन्थोफोरा (*Scanthophora*)

भूरे शैवाल

पैडाइना (*Padina*)

टर्बिनेरिया (*Turbinaria*)

क्नूस्पोरा (*Chnoospora*)

हाइड्रोक्लैथ्रस (*Hydrochlathrus*)

सर्गेसम (*Sargassum*)

तालिका 7.1: कुछ खाद्य शैवाले तथा उनका उपयोग करने वाले देशों के उदाहरण।

उदाहरण	देश
समुद्री शैवाल	
पॉरफ़ाइरा (Porphyra)	जापान (नोरी के नाम से), चीन (सेटसाइ और जिकाई के नाम से), कोरिया (किम व लेवर के नाम से), फिलीपीन्स तथा ब्रिटेन में
लेमिनैरिया (Laminaria)	जापान (कोम्बू के रूप में), चीन (टेडेन), कोरिया, फिलीपीन्स
अन्ड्यूलेरिया (Undularia)	जापान, चीन, फिलीपीन्स
लेमेनी (Lemanea)	मणिपुर, भारत (नगी के नाम से)
एन्टेरोमार्फा (Enteromorpha)	फिलीपीन्स
पामेरिया (Palmaria)	कनाडा, यू.के.
कोन्ड्रस क्रिस्पस (Chondrus crispus)	कनाडा, यू.के.
सूक्ष्म शैवाल	
स्पाइरूलाइना (Spirulina)	सैन्ट्रल अमरीका, मैक्सिको, पश्चिमी अफ्रीका (दूही के नाम से), संयुक्त राज्य अमेरिका, इजरायल, ताईवान, थाईलैण्ड
फोरमिडियम (Phormidium)	मैक्सिको
क्रूकोकस (Chroococcus)	मैक्सिको
नॉस्टॉक कम्यून (Nostoc commune)	मैक्सिको, मंगोलिया, चीन, फ़ीज़ी, इक्वेडोर
नॉस्टॉक इडूल (N. edule)	मंगोलिया, चीन,
नॉस्टॉक वेरुकोसम (N. verrucosum)	थाईलैण्ड
क्लोरेला (Chlorella)	जापान, मैक्सिको, अमरीका, ताईवान, जर्मनी
प्रेसियोला (Prasiola)	चीन, जापान
स्पाइरोगाइरा (Spirogyra)	बर्मा, थाईलैण्ड, भारत
इडोगोनियम (Oedogonium)	बर्मा, थाईलैण्ड, भारत

बोध प्रश्न 7.1

अ) निम्नलिखित व्यक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से पूरा कीजिए।

i) खाद्य शैवाल महत्वपूर्ण पोषक स्त्रोत होते हैं क्योंकि वे..... ....,.............. तथा............ में समृद्ध होते हैं।

ii) *स्पाइरूलाइना* में....................% प्रोटीनें होती हैं।

iii) शैवालीय खेती ताजे जल में .... जल में, उथले तथा................ समुद्र में की जा सकती है।

iv) एक के .कीय शैवाल .... जापान में स्वास्थ्यवर्धक खाद्य के रूप में बेचा जाता है जिसमें .... के गुण होते हैं।

स्पाइरूलाइना को .... जल में उगाया जा सकता है।

.... की सूखी, दबी हुई परतें भूनकर, चावल, कच्ची मछली अथवा सब्जियों के साथ खाई जाती है।

vii) शैवाल कुछ................ बहुअसंतृप्त वसीय अम्लों को संश्लेषित करते हैं।

ब) पोषक रूप से महत्वपूर्ण तीन शैवालों के नाम बताइए जिनको व्यापारिक तौर पर संवर्धित किया जाता है।

....

....

....

7.3 शैवाल – जंतु चारा स्त्रोत

समुद्री शैवाल जो चारे के रूप में प्रयोग किए जाते हैं।

रोडीमेनिया

लेमिनैरिया

ऐलेरिया

फ्यूकस

एस्कोफिलम

मैक्रोसिस्टिस

सर्गेसम

सूक्ष्म शैवाल जो मुर्गीपालन, मछली, सीप, झींगा, मृदु कवची जीवों का पालन करने वाले कारखानों में प्रयोग किए जाते हैं।

क्लोरेला

स्पाइरूलाइना

स्केनडेस्मस

जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं *स्पाइरूलाइना, क्लोरेला* तथा बहुत से समुद्री शैवाल अपने उच्च पोषक गुणों के कारण मानव उपयोग के लिए व्यापारिक तौर पर संवर्धित किए जाते हैं। उनको सीधे ही चारे के लिए भूसे के रूप में प्रयोग किया जा सकता है अथवा चारे के पूरक के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान जब चारे की आपूर्ति कम हो गई थी तब समुद्री शैवालों को पशुओं के चारे के रूप में प्रयोग किया गया था तथा पशुओं के दूध की गुणवत्ता इससे अप्रभावित पाई गई थी। उसके बाद, समुद्री शैवाल आधारित चारे के कारखाने फ्रांस, नार्वे, डेनमार्क, जर्मनी तथा संयुक्त राष्ट्र अमरीका में स्थापित किए गए। कुछ रिपोर्टों के अनुसार समुद्री शैवाल खाने वाली गायों का दूध, प्रचलित चारा खाने वाली गायों के दूध की तुलना में वसा में समृद्ध पाया गया है। समुद्री शैवाल या तो सीधे ही चारे के रूप

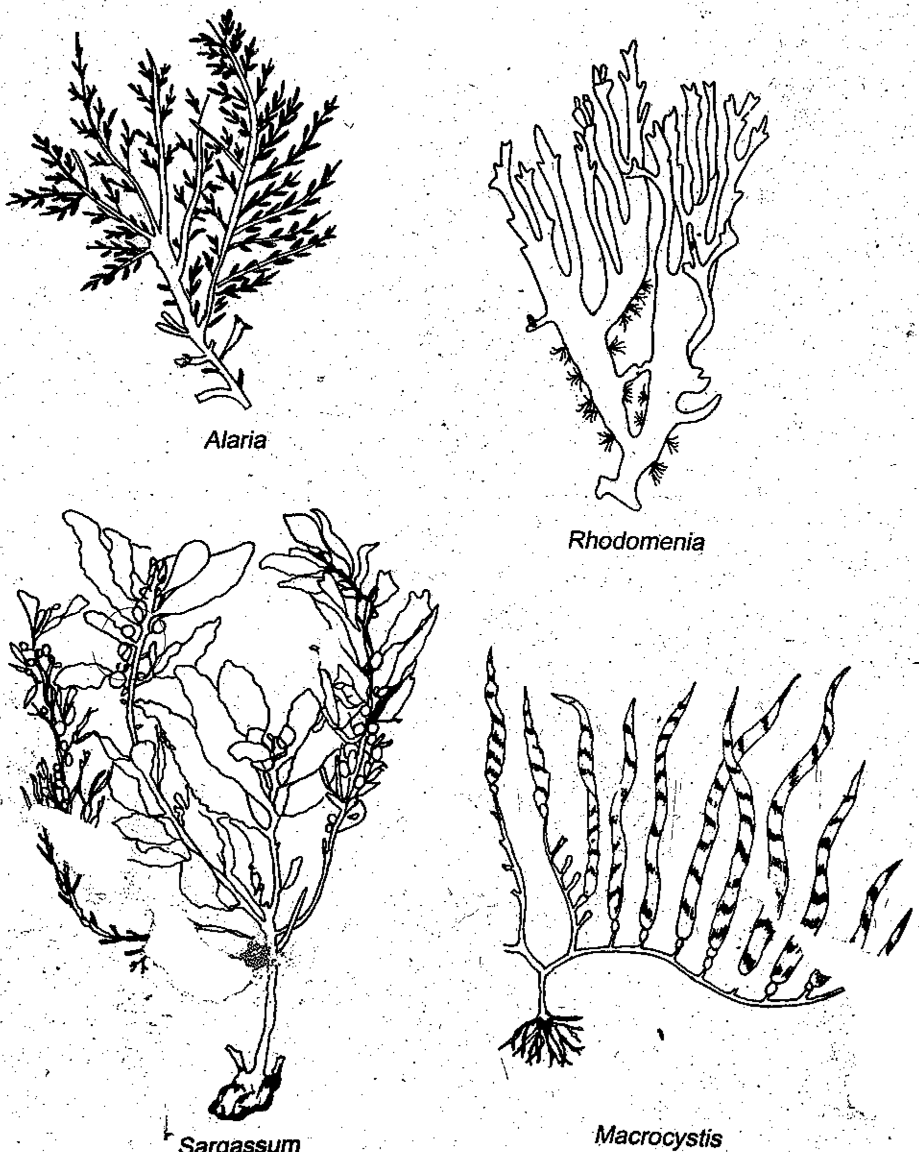

चित्र 7.2 : चारे के रूप में प्रयुक्त होने वाले शैवाल।

में उपयोग किए जाते हैं या दुधारू पशुओं, सूअर, भेड़, मछली तथा मुर्गी के चारे में पाउडर के रूप में मिलाए जाते हैं। भारत में, *स्पाइरूलाइना* लखनऊ, नागपुर, तथा बनारस में व्यर्थ जल में उगाया जाता है। ये मछली, मुर्गी तथा दुधारू पशुओं को खिलाया जाता है। इसको खिलाने का उद्देश्य पशुओं के स्वास्थ्य तथा उनकी उत्पादकता को बेहतर बनाना है।

बोध प्रश्न 7.2

बताइए कि निम्नलिखित वक्तव्य सत्य हैं या असत्य। दिए गए बॉक्स में सत्य के लिए स तथा असत्य के लिए अ लिखिए।

i) "समुद्री शैवालों का पशुओं के चारे के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता है। ☐

ii) सूक्ष्म शैवाल मछली तथा मुर्गी के चारे के लिए प्रयोग किए जाते हैं। ☐

iii) समुद्री शैवाल खाने वाली गायों का दूध वसा तत्व में समृद्ध होता है। ☐

iv) भारत में *स्पाइरूलाइना* व्यर्थ जल पर उगाया जाता है। ☐

7.4 व्यर्थ जल के उपचार के लिए शैवालों का उपयोग

घरों के शौचालयों, स्नानघरों तथा रसोई का व्यर्थ जल काफी मात्रा में कार्बनिक तत्व लिए रहता है तथा ये सामान्यत: मल जल (sewage) कहलाता है। मलजल बदबूदार होता है परन्तु इसमें पोषक तत्व काफी होते हैं। यदि इसे तालाब, ताल या नदी में प्रवाहित किया जाता है तो विभिन्न प्रकार के जीवाणुओं तथा विषाणुओं की वृद्धि हो जाती है जिसके फलस्वरूप हैजा, जठरांत्र शोध (**gasteroenteritis**), टाइफॉइड, विषाणु पीलिया आदि रोग महामारी के रूप में फैलते हैं। शहरों में मलजल की मात्रा बहुत अधिक होती है। जल का पुन: प्रयोग करने अथवा नदी या ताल में मिलाने से पूर्व अधिकांश कार्बनिक तथा पोषक तत्वों से छुटकारा पाने के लिए जल के उपचार की आवश्यकता होती है।

व्यर्थ जल के उपचार में प्रयोग होने वाले शैवाल
क्लोरेला (*Chlorella*)
स्पाइरूलाइना (*Spirulina*)
स्केनडेस्मस (*Scenedesmus*)
क्लैमाइडोमोनस (*Chlmydomonas*)
ऑसिलैटोरिया (*Oscillatoria*)

मलजल उपचार में मुख्यत: निम्नलिखित दो अवस्थाएं होती हैं।

प्रथम अवस्था में, तनुकृत (diluted) मलजल का अवायवीय सूक्ष्मजीवों के द्वारा वायु की अनुपस्थिति में विघटन किया जाता है (अवायवीय पाचन)। जब ये आंशिक रूप से पच जाता है तो मीथेन गैस (बायोगैस) उत्पन्न होती हैं।

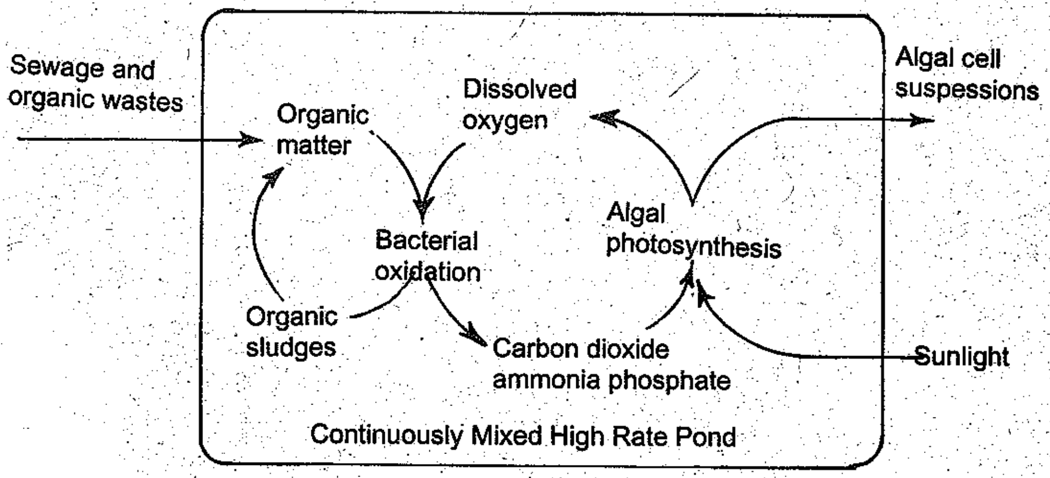

चित्र 7.3 : व्यर्थ जल के प्रकाश संश्लेषी आक्सीकरण के लिए चक्र।

द्वितीय अवस्था में इसे तेजी से वायु या आक्सीजन के साथ वायु मिश्रित किया जाता है जिससे पूर्ण आक्सीकरण हो सके। इस प्रक्रिया को श्रेष्ठ तरीके से तथा किफायत से शैवाल का प्रयोग करके किया जा सकता है। कुछ शैवाल जिनका प्रयोग किया जाता है वो *क्लोरेला (Chlorella)*, *स्केनडेस्मस (Scenedesmus)*, *क्लैमाइडोमोनस (Chlamydomonas)*, *ऑसिलैटोरिया (Oscillatoria)* हैं। उथले तालाबों में तेज सूरज की रोशनी में शैवाल सघन रूप से उगते हैं। प्रकाश संश्लेषण के दौरान ये ऑक्सीजन उत्पन्न करते हैं जो कार्बनिक तत्वों को पूर्णत: विखंडित करने में वायवीय सूक्ष्मजीवों के द्वारा उपयोग की जाती है। आक्सीकृत तालाबों के जल को बागवानी तथा कृषि के कार्यों के लिए आराम से उपयोग में लाया जा सकता है। इसके द्वारा उत्पन्न हुए शैवालीय जैवपिंड (biomass) को फायदेमंद तरीके से अन्य उपयोगों जैसे पशुओं या मुर्गियों के चारे के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

विषाक्त प्रदूषकों के जैवसंचायक के रूप में शैवाल

जस्ता, पारा, कैडमियम, तांबा तथा शीशा औद्योगिक बहि:स्त्रावों (effluents) में बहुतायत में पाए जाते हैं। ये देखा गया है कि शैवाल कीटनाशकों तथा इन विषाक्त तत्वों को कई हजार गुना संचयित कर सकते हैं। अत: जैव संचायक (bio-accumulator) के रूप में शैवालों को औद्योगिक बहि:स्त्रावों में से विषाक्त प्रदूषकों को निकालने के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। इस तरह से प्राप्त किए गए शैवालीय जैव पिंड को पशुओं के चारे के बजाय बायोगैस के उत्पादन के लिए भी प्रयोग में लाया जा सकता है।

बोध प्रश्न 7.3

निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से पूरा करिए।

i) मलजल के पाचन की मुख्य आवश्यकता.. की अच्छी आपूर्ति है।

ii) व्यर्थ जल के उपचार में वायवीय विघनटकर्त्ताओं द्वारा उपयोग की गई.......................................की आपूर्ति के लिए शैवालों का प्रयोग किया जा सकता है।

iii) पेयजल की मलजल के साथ मिलावट होने से.. हो सकते हैं।

iv) व्यर्थ जल के उपचार से प्राप्त हुए शैवालीय जैवपिंड को.. खिलाया जा सकता है।

v) औद्योगिक बहि:स्त्राव के उपचार से उत्पन्न हुए शैवालीय जैवपिंड को.. के उत्पादन में प्रयोग किया जा सकता है।

7.5 जैव उर्वरक के रूप में शैवालों का उपयोग

जनसंख्या में वृद्धि के साथ ही, फसलों के उत्पादन में वृद्धि भी आवश्यक हो गई और इसके परिणामस्वरूप रासायनिक उर्वरकों का बड़े स्तर पर उपयोग शुरू हो गया है। पर अभी कुछ समय से लोग पर्यावरण पर व विशेष तौर पर मृदा पर इन उर्वरकों के हानिकारक प्रभावों को महसूस करने लगे हैं। रासायनिक उर्वरकों का कारखानों में नवीनीकृत (non-renewable) स्त्रोतों जैसे कच्चे तेल तथा प्राकृतिक गैसों से उत्पादन किया जाता है, जो कुछ समय पश्चात् समाप्त हो जायेंगे। जल में घुलनशील होने के कारण फसल के लिए डाला गया काफी उर्वरक वास्तव में सिंचाई से या बारिश के समय, पानी में बह जाता है तथा पानी के संसाधनों जैसे तालाबों, तालों तथा नदियों में पहुँच जाता है। इससे शैवालों तथा जीवाणुओं की वृद्धि होती है। परिणामस्वरूप भयंकर जल प्रदूषण हो जाता है। इन अवांछनीय सहप्रभावों (side effects) के अतिरिक्त, रासायनिक उर्वरक मृदा के रासायनिक तथा भौतिक गुणों को प्रभावित करते हैं जिससे मृदा जल्दी ही बढ़ती हुई फसल के लिए अयोग्य हो जाती है। प्रचलित

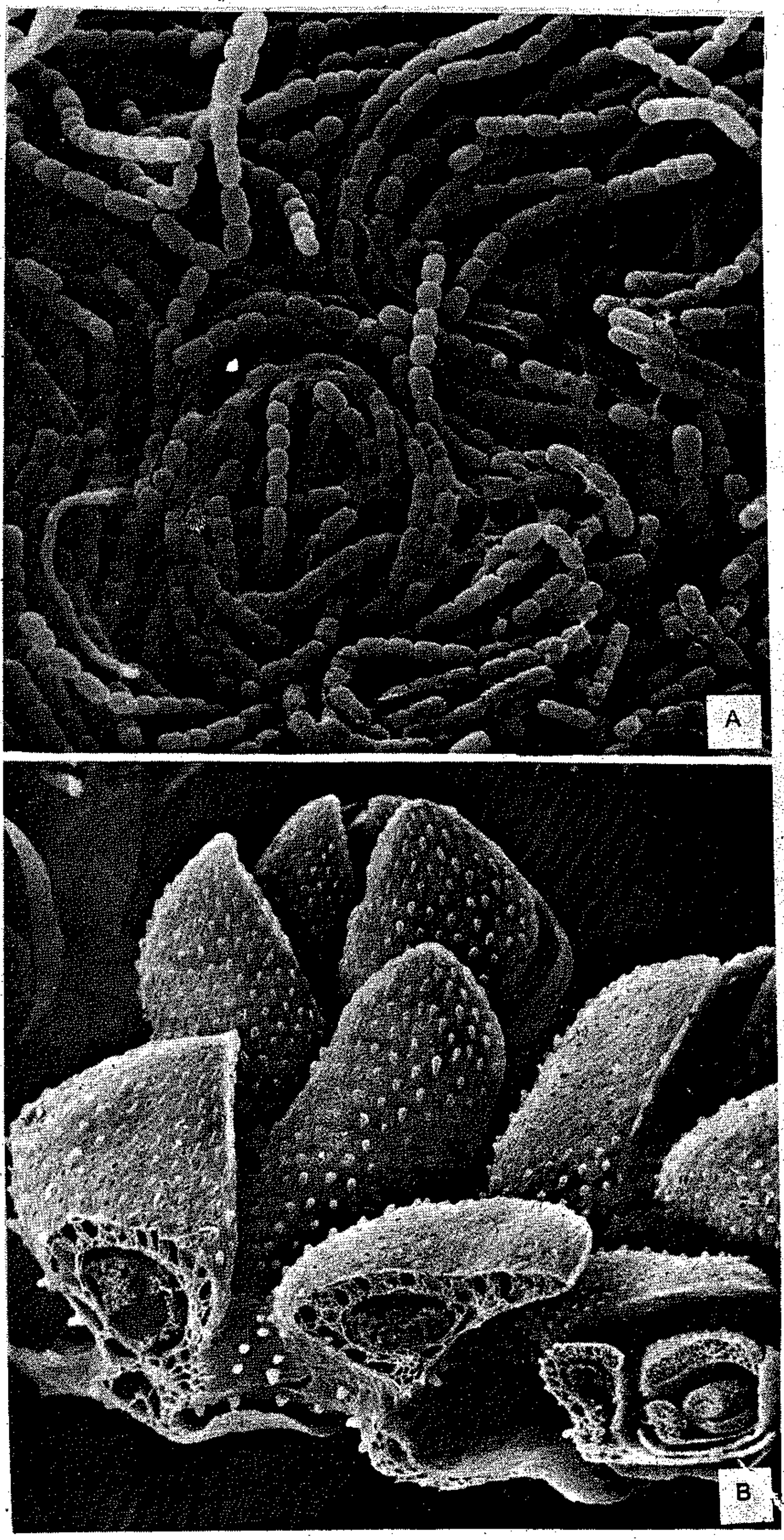

चित्र 7.4 : स्कैनिंग इलेक्ट्रान सूक्ष्मचित्र, *नॉस्टॉक मस्कोरम* (***Nostoc muscorum***) (ए), तथा जल फर्न *एज़ोला* (***Azolla***) (बी), कुछ पत्तियां आंशिक रूप से काट कर खोल दी गई हैं जिससे नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले *ऐनाबीना* (***Anabaena***) के समूहों को देखा जा सके।

तौर पर किसान पशु आहाते (farm yard) की खाद का उपयोग करते हैं, जो खेती के व्यर्थ पदार्थों से उत्पन्न होती है। हालांकि ये मृदा के अनुकूलन के लिए अच्छी होती है परंतु इसमें पोषक तत्व बहुत कम होते हैं। हाल ही के वर्षों में बहुत से कार्बनिक पोषण में समृद्ध जैविक उत्पत्ति के उर्वरक जो कि जैव उर्वरक (biofertilizers) कहलाते हैं, प्रचलित हुए हैं। कुछ शैवालीय जैव उर्वरक भी विकसित किए गये हैं जो भारत तथा बाहर के देशों में सफलतापूर्वक उपयोग में लाये गये हैं। इनका विवरण नीचे दिया गया है।

समुद्री शैवाल

तटीय क्षेत्रों में जहाँ समुद्री शैवाल लहरों के साथ तटों पर आ जाते हैं, वहाँ उन्हें एकत्रित करके पशु आहाते की खाद की तरह उपयोग में लाया जाता है। समुद्री शैवालीय खाद पोटैशियम, फॉस्फेट, सल्फेट जैसे खनिजों तथा दुर्लभ तत्वों से समृद्ध होती है। कुछ शाक फसलें जैसे भिन्डी, बैंगन, टैपियोका (tapioca), कद्दू (cucurbits), फल जैसे नींबू, वृक्ष, जैसे ताड़ तथा पपीता इस खाद से लाभान्वित पाए गए हैं।

भारतीय कृषि अनुसंधान केन्द्र (IARI) नई दिल्ली ने शैवालीय जैव उर्वरक बनाने के सरल तरीके विकसित किए हैं जिससे किसान स्वयं उनका उत्पादन कर सकें।

कुछ महत्पूर्ण नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले सायनोबैक्टीरिया

ऐनाबीना ओराइजी (Anabaena oryzae)
नॉस्टॉक कम्यून (Nostoc commune)
टॉलिपोथ्रिक्स टिनुइस (Tolypothrix tenuis)
आलोसाइरा फर्टीलीसीमा (Aulosira fertilissima)
ऐनाबीनोप्सिस (Anabaenopsis arnoldii)
कैलोथ्रिक्स कनफर्वीकोला (Calothrix confervicola)
हैप्लोसाइफॉन (Haplosiphon)
फ्रिटशिएला (Fritshiella)
मैस्टीगोक्लेडस (Mastigocladus)
वैस्टिएला (Westiella)
वैस्टिएलोप्सिस (Westiellopsis)

समुद्री शैवालों के सत् (जलसत्-जल में उबले हुए समुद्री शैवाल) भारतीय कामगारों के द्वारा चना, टमाटर तथा अन्य पादपों के अंकुरण तथा नवोद्भिदों की वृद्धि के लिए उद्दीपक पाए गए हैं। इस प्रकार के सत् कुछ देशों में विभिन्न नामों से उपलब्ध हैं जैसे एल्जीफर्ट (नोर्वे) तथा एस एम 3 (इंगलैण्ड)। सामान्य सायनोबैक्टीरिया जैसे *सिलिंड्रोस्पर्मम (Cylindrospermum)*, *कैलोथ्रिक्स (Calothrix)*, *ऐनाबीना (Anabaena)*, *आलोसाइरा (Aulosira)* के जलसत् भी फसलों तथा शाकों के पादपों की वृद्धि तथा पैदावार के लिए लाभदायक पाए गए हैं। भारत में ताड़ के वृक्षों को *टर्बिनेरिया (Turbinaria)* की खाद दी जाती है।

नील-हरित शैवालीय जैव उर्वरक

जहाँ कहीं भी सूर्य की रोशनी तथा जल उपलब्ध हो वहां पर नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले सायनोबैक्टीरिया को गर्मियों में उथले कीचड़ के गढ्ढ़ों या धातु के बरतन में उगाया जा सकता है। इसकी मोटी चटाइयां जो सप्ताह भर में ही विकसित हो जाती हैं उन्हें सुखाकर बैग में रख लिया जाता है। इस प्रकार गर्मी के मौसम में जिन खेतों में फसल नहीं उग रही होती, उनमें खाद तैयार की जा सकती है। यह सूखा हुआ शैवालीय पदार्थ नाइट्रोजन, फास्फोरस व कुछ अन्य महत्वपूर्ण तत्वों का समृद्ध स्त्रोत है। कृषि विभाग, किसानों को अपने उर्वरक तैयार करने के लिए किट्स प्रदान करते हैं। ये दक्षिण भारत के चावल उगाने वाले क्षेत्रों में बहुत प्रचलित है।

चावल के खेतों में *एजोला*

एजोला के विकास के लिए आवश्यक समय की अवधि विभिन्न कारकों जैसे मिट्टी में रसायन, उसकी जुताई, ताप, विकिरण (irradiance), जल की उपलब्धता, रोपक (inoculant) की प्रकृति तथा पर्यावरणीय व मौसम की स्थिति पर निर्भर होती है। *एजोला* के क्षय के पश्चात् यौगिकीकृत नाइट्रोजन फसल के लिए उपलब्ध हो जाती है। उसी खेत में लगातार *एज़ोला* की खेती के फलस्वरूप मिट्टी अनुकूल स्तर को बेहतर बना देती है।

भारत में, लघु स्तर के किसानों के लिए उपयुक्त *एजोला* तकनीक भारतीय चावल शोध संस्थान (Indian Rice Research Institute), कटक (उड़ीसा) में विकसित की गई है।

नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले सायनोबैक्टीरिया भी चावल के नवोद्भिदों को रोपने के तुरंत बाद ही धान के खेतों में सीधे ही डाले जाते हैं। ये तेजी से बढ़ते हैं तथा सीधे ही अथवा विघटन के द्वारा नाइट्रोजन तथा अन्य पोषक तत्वों को चावल के पौधों को प्रदान करते हैं।

एज़ोला (Azolla)

एज़ोला जल फर्न है, जो सारे भारत में तालाबों में बहुत पाया जाता है। चीन, वियतनाम तथा अन्य दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों में, ये उर्वरक के तौर पर तथा पशुओं व मुर्गियों के चारे के लिए उगाया और उपयोग किया जाता है।

एजोला में सहजीवी नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले सायनोबैक्टीरिया *ऐनाबीना (Anabaena)* पत्तियों में पाए जाते हैं और ये चावल के खेतों में रोपे जाने पर तेजी से बढ़ते हैं। इन्हें अलग भी उगाया जा सकता है, खाद बनाकर संचित किया जा सकता है तथा आवश्यकता पड़ने पर फसल में मिलाया जा सकता है।

नील-हरित शैवालों के द्वारा ऊसर भूमि का उद्धार

हमारे देश का विशाल भूखंड अपनी उच्च क्षारीय अवस्था (ऊसर भूमि) के कारण खेती के योग्य नहीं है। एकमात्र जीव जो वहां सघन रूप से उग सकता है वह नील-हरित शैवाल है। बरसात के मौसम में वर्षा

के जल को रोके रखने के लिए बांध बनाये जाते हैं तथा उनमें नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले शैवालों को रोपा जाता है। शैवाल तेजी से बढ़ते हैं तथा मोटी चटाइयों के रूप में बढ़ते हैं, जिससे बहुत कार्बनिक तत्व ऊसर भूमि में मिल जाते हैं तथा उसकी क्षारीयता भी कम हो जाती है। इस प्रक्रिया को दो-तीन वर्ष तक दोहराने से मिट्टी की गुणवत्ता बढ़ जाती है तथा फिर इसमें चावल, गेहूं तथा गन्ने की फसलों को बोया जा सकता है।

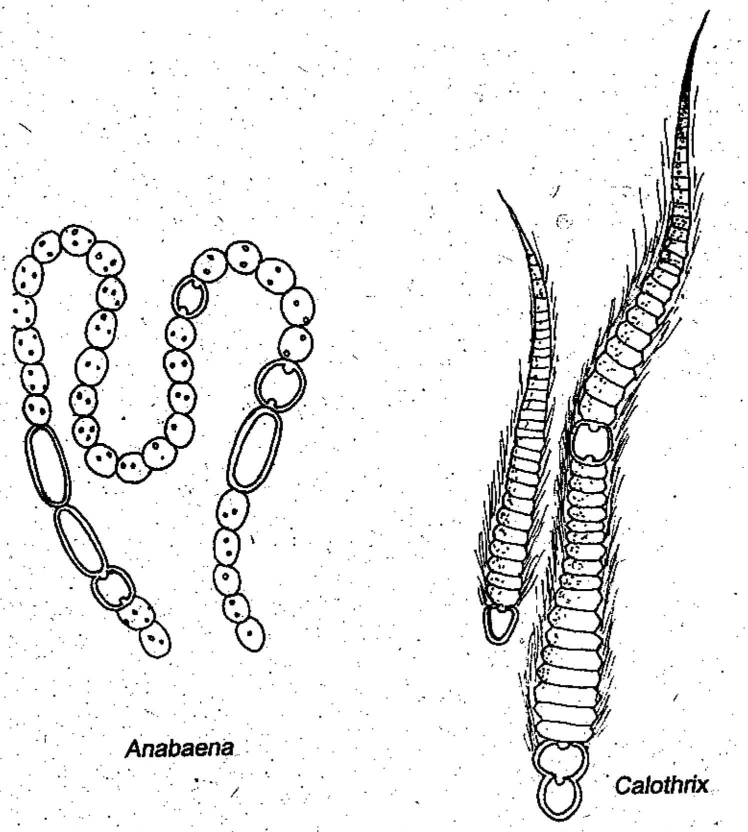

चित्र 7.5: जैव उर्वरक के रूप में उपयोगी शैवालें।

शैवाल जो ऊर्जा के उत्पादन के योग्य समझे गए हैं :
स्पाइरूलाइना (*Spirulina*)
बोट्रिओकॉकस ब्राउनी (*Botryococcus braunii*)
सर्गेसम टेनेरीमम (*Sargassum tenerrimum*)
एस्ट्रोमोनस ग्रेसीलिस (*Astromonas gracilis*)
क्लैमाइडोमोनस (*Chlamydomonas*)
डुनैलिएला (*Dunaliella*)
ऐनाबीना (*Anabaena*) (हाइड्रोजन के लिए)

डुनैलिएला में ग्लिसरॉल प्रकाश संश्लेषण का प्रमुख उत्पाद है। यह एककोशिकीय भित्ति रहित लवण मृदोद्भिदी (halophytic) शैवाल, ग्लिसरॉल के उत्पादन के लिए आदर्श जीव है। इसे राजस्थान में बंजर क्षेत्रों में तथा अन्य स्थानों पर जहाँ अत्यधिक लवणीय जल आसानी से उपलब्ध हो, वहाँ उगाया जा सकता है। इसका जैवपिंड प्रोटीन तथा β-कैरोटीन से समृद्ध होता है तथा इसे पशुओं के चारे के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

बोध प्रश्न 7.4

निम्नलिखित में प्रयुक्त शैवालों के नाम बताइए।

i) शैवाल-फर्न संयोजन जो चावल के खेतों को नाइट्रोजन से समृद्ध करने में उपयोग किया जाता है।

ii) नील-हरित शैवाल जो जैव उर्वरक के रूप में प्रयोग होते है।

iii) भारत में ताड़ के वृक्षों में खाद देने के लिए उपयोग में लाया जाने वाला समुद्री शैवाल।

iv) शैवाल का प्रकार जो मिट्टी को खनिजों से समृद्ध करने में उपयोग होता है।

v) ऊसर भूमि की क्षारीयता को कम करने के लिए उगाया जाने वाला शैवाल।

आस्ट्रेलिया तथा इजरायल में ग्लिसरॉल व्यापारिक स्तर पर *डुनैलिएला* से उत्पन्न किया जाता है।

7.6 शैवाल – ऊर्जा का स्त्रोत

पृथ्वी पर प्राकृतिक ईंधन भंडार जैसे कोयला, पीट, कच्चे तेल के उत्पाद (हाइड्रोकार्बन्स) तथा प्राकृतिक गैस सीमित हैं। वर्तमान काल में, औद्योगिकीकरण में तेज वृद्धि के कारण उनका पहले की अपेक्षा तेज दर से उपभोग किया जा रहा है। दुर्भाग्यवश, इनका नवीकरण नहीं किया जा सकता है तथा ये भी आकलन किया जा चुका है कि ये जल्दी ही समाप्त हो जायेंगे। अतः, ऊर्जा के वैकल्पिक नवीकरणीय स्त्रोतों को तलाशने के लिए गंभीर प्रयास किए जा रहे हैं। शैवाल एक ऐसे ही समर्थ स्त्रोत के रूप में पहचाने गए हैं।

शैवालों के विभेद (strains) जो हाइड्रोजन के उत्पादक माने जाते हैं।
क्लोरेला (*Chlorella*)
स्केनडेस्मस (*Scenedesmus*)
सिनेकोकॉकस (*Synechococcus*)
माइक्रोसिस्टिस (*Microcystis*)
ऑसिलैटोरिया (*Oscillatoria*)

शैवालीय जैवपिंड बायोगैस संयंत्रों में मीथेन गैस उत्पन्न करने के लिए उपयुक्त पाए गए हैं। इन्हें अवायवीय पाचक संयंत्रों में मुख्य अभिकर्मक के रूप में अथवा मलजल पंक के साथ किण्वित (ferment) किया जाता है। ये देखा गया है कि जब *स्पाइरूलाइना* (*Spirulina*) को मलजल पंक में मिलाया जाता है तो मीथेन गैस का उत्पादन दुगुना हो जाता है। भावनगर में *सर्गेसम टेनेरीमम* (*Sargassum tenerrimum*) का उपयोग बायोगैस संयंत्रों में सफलतापूर्वक किया जाता है।

शैवाल ऊर्जा समृद्ध अणुओं जैसे लंबी श्रृंखला वाले हाइड्रोकार्बन, ग्लिसरॉल तथा लिपिड्स को संश्लेषित करते हैं। जब कुछ शैवालों को नाइट्रोजन तथा सिलिकॉन के बिना उगाया जाता है, तो लिपिडों के संश्लेषण में वृद्धि हो जाती है। इस ऊर्जा समृद्ध रसायनों को पेट्रोल तथा डीजल में रूपांतरित किया जा सकता है। औषधि उद्योग में काम आने वाला ग्लिसरॉल, *एस्ट्रोमोनस ग्रेसीलिस* (*Astromonas gracilis*), *क्लैमाइडोमोनस* (*Chlamydomonas*) तथा *डुनेलिएला* (*Dunaliella*) के द्वारा उत्पन्न होता है।

हालांकि ग्लिसरॉल अच्छा तरल ईंधन नहीं है क्योंकि यह बहुत अधिक आक्सीकृत होता है, परंतु इसे अन्य

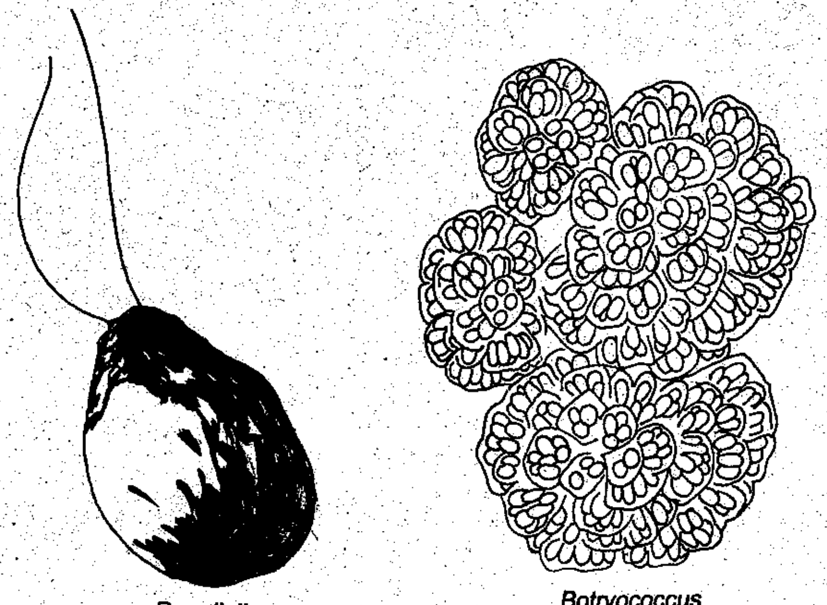

चित्र 7.6 : *डुनैलिएला सेलाइना* (*Dunaliella salina*) तथा *बौट्रिओकॉकस ब्राउनी* (*Botryococcus braunii*).

तरल ईंधनों जैसे एथानॉल, ब्यूटेनॉल तथा प्रोपेन डाइऑल में परिवर्तित करके पेट्रोल के विकल्प के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। ब्राजील में पेट्रोल के स्थान पर एथानॉल का उपयोग किया जाता है तथा अमरीका में इसे गैसोलीन में मिलाया जाता है तथा गैसोहोल के रूप में बेचा जाता है। अन्य संभावित शैवाल *बोट्रिओकॉकस ब्राउनी* (*Botryococcus braunii*) है जो लवणीय स्थिति में लंबी श्रृंखला वाले हाइड्रोकार्बनों को उत्पन्न करता है जिनमें वसीय अम्ल भी सम्मिलित हैं। सुमात्रा में इस शैवाल से तेल निकाला जाता है।

सायनोबैक्टीरिया के द्वारा हाइड्रोजन के उत्पादन पर अधिक ध्यान दिया गया है क्योंकि ये प्रकाश की उपस्थिति में विशेष तौर पर नाइट्रोजन मुक्त वातावरण में हाइड्रोजन उत्पन्न कर सकते हैं। एल.एस.ई. 05, खंड 4, इकाई 15, पृष्ठ 12 देखिए)। ईंधन सेलों में हाइड्रोजन का वायु के साथ उपयोग किया जाता है जो बिना वातावरण को प्रदूषित किए बिजली उत्पन्न करते हैं।

एक अन्य दिलचस्प संभावना जिसे सफलतापूर्वक खोजा गया है वह है सायनोबैक्टीरिया के द्वारा नाइट्रेट से अमोनिया का सतत् प्रकाश उत्पादन (sustained photo-production) हैं। इसमें एन्ज़ाइम ग्लूटामेट सिंथेटेस (glutamate synthetase) को अवरुद्ध करने की आवश्यकता होती है। इससे शैवाल काफी कुशलता से उच्च दर से अमोनिया उत्पन्न करता है।

फ़ाइकोकोलॉइड्स

शैवालों से प्राप्त होने वाले कोलॉइड्स फ़ाइकोकोलॉइड्स कहलाते हैं।

कोशिकाओं में पॉलिसैकेराइड्स तीन प्रकार के होते हैं: संरचनात्मक (कोशिका भित्ति), बाह्यकोशिकीय श्लेष्मीय (mucilagenous) तथा अंतर कोशिकीय संचय जैसे मांड। बाह्य कोशिकीय श्लेष्म मोनोसैकेराइड इकाइयों के बने होते हैं जो सल्फेट युक्त हो सकते हैं। वे राइबोस (ribose) तथा अरैबिनोस (arabinose) से समृद्ध होते हैं। जंतुओं में भी सल्फेट युक्त पॉलिसैकेराइड्स पाए जाते हैं। सल्फेट की उपस्थिति इन पॉलिसैकेराइड्स को अच्छा गाढ़ा करने वाला पदार्थ यानि जैलिंग एजेन्ट बनाती है।

उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका, ऑस्ट्रेलिया व न्यूजीलैण्ड के तटों पर *मैक्रोसिस्टिस* (*Macrocystis*) प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जिसको ऐल्जिनिक अम्ल के लिए व्यावसायिक तौर पर उगाया जाता है तथा दक्षिण अटलांटिक में *एस्कोफिलम* (*Ascophyllum*) ऐल्जिनेट्स का स्रोत है।

बोध प्रश्न 7.5

बताइए कि निम्नलिखित वक्तव्य सत्य हैं या असत्य। दिए गए बॉक्स में सत्य के लिए अक्षर स तथा असत्य के अ लिखिए।

i) लंबी श्रृंखला वाले हाइड्रोकार्बन तथा वसीय अम्ल ऊर्जा समृद्ध अणु होते हैं। ☐

ii) कुछ शैवाल ग्लिसरॉल के अणुओं को संश्लेषित करते हैं। ☐

iii) बायोगैस संयंत्र में शैवालीय पिंड का उपयोग नहीं किया जा सकता है। ☐

iv) हाइड्रोजन का ईंधन के रूप में उत्पादन करने के लिए नील-हरित शैवालों की संभावना तलाशी जा रही है। ☐

7.7 शैवालों के औद्योगिक उपयोग

बहुत से शैवालीय उत्पाद काफी अधिक व्यावसायिक उपयोग के साबित हुए हैं। विभिन्न यौगिक जो समुद्री शैवालों से प्राप्त किए जाते हैं उनकी चर्चा नीचे की गई है।

7.7.1 फाइकोकोलॉइड्स

ऐल्जिनिक अम्ल (alginic acid), ऐगार (agar) तथा कैरागीनिन (carrageenan) उच्च आणविक भार वाले पॉलिसैकेराइड्स (polysaccharides) हैं तथा इनमें कोलॉइडीय (colloidal) गुण पाए जाते हैं। ये अधिकांशत: लाल तथा भूरे समुद्री शैवालों की कोशिकाभित्ति के घटक होते हैं। इनका उपयोग खाद्य, कागज, कपड़ा, औषधि तथा कॉस्टिक (caustic) उद्योगों, लसीलाकारक (viscofer), पायसीकारक (emulsifier) तथा चिकनाई कारक (lubricant) के रूप में होता है। चूंकि इनको प्राप्त करने का कोई कृत्रिम विकल्प अथवा अ-शैवालीय स्त्रोत नहीं है अत: समुद्री शैवालों का काफी महत्व है।

ऐल्जिनिक अम्ल

शैवालों की कोशिका भित्ति में ऐल्जिनिक अम्ल ऐल्जिनेट्स के रूप में रहते हैं। ऐल्जिनिक अम्ल सोडियम, पोटैशियम, कैल्शियम तथा अमोनियम लवण के तौर पर उपस्थित रहते हैं। चूंकि सोडियम लवण जल में घुलनशील होते हैं, अत: निष्कर्षण (extraction) सोडियम हाइड्रोक्साइड के द्वारा किया जाता है। ऐल्ज़िनेट्स का उपयोग बहुत से कार्यों में किया जाता है (तालिका 7.2)। इनका उपयोग ज्वाला रोधी कपड़ों (flame proof fabrics) तथा प्लास्टिक के सामानों में भी किया जाता है। यह बहुलक जल की काफी मात्रा अवशोषित कर लेता है। अत: इसका उपयोग आंतरिक चीड़ फाड़ में प्रभावी ढंग से रक्त के बहने को रोकने के लिए, अच्छी सोखने वाली पट्टी के रूप में किया जाता है। अ-विषकारी तथा कोलॉइडल गुण के कारण इसका उपयोग प्रतिजैविक संपुटिका (antibiotic capsules) बनाने में किया जाता है।

ऐल्जिनेट्स के उपयोग का नीचे संक्षित विवरण दिया गया है।

तालिका 7.2 : ऐल्जिनेट्स के उपयोग

उद्देश्य	मद
गाढ़ा करने वाले (thickening agents)	जैम, जैली तथा चटनी, प्रसाधन, वस्त्र तथा औषधि उद्योग में
स्थिरक (stabilisers)	आइसक्रीम्स, मिल्क शेक्स तथा शर्बत के लिए
पायसीकारक (emulsifiers)	पेन्ट्स तथा पॉलिशें बनाने के लिए
सतही लेपन कारक (surface coating agents)	ज्वाला रोधी वस्त्रों तथा प्लास्टिक के लिए
अवशोषक (absorbent)	चीड़-फाड़ (surgical operations)

रामेश्वरम के निकट मंडपम में समुद्री शैवालीय अनुसंधान केन्द्र बन जाने से तथा कुछ तटीय विश्वविद्यालयों द्वारा गहन दिलचस्पी लेने से समुद्री शैवालों के उपयोग में काफी तरक्की हुई है। अधिकांश प्राकृतिक समुद्री शैवाल उगाने वाले क्षेत्र तमिलनाडु के तटों पर रामनाद जिले में स्थित हैं, जहाँ गांव वाले समुद्री शैवालों को एकत्रित करके वहां के स्थानीय उद्योगों को बेचकर लाभ कमाते हैं। मन्नार की खाड़ी में अनेकों उपमहाद्वीप हैं जिनमें समुद्री शैवालों की अच्छी पैदावार होती है तथा आजकल ये स्थान बड़े स्तर पर शैवाल उगाने के काम आते हैं। ऐगार तथा ऐल्जिनेट्स दो प्रमुख उत्पाद हैं।

अ) ऐगार उत्पादन - *ग्रेसिलेरिया इडुलिस (Gracilaria edulis)* तथा *जिलीडिएला एसरोसा (Gelidiella acerosa)*।

ब) ऐल्जिनेट उत्पादन - *सर्गेसम (Sargassum)*, *टर्बीनेरिया (Turbinaria)*

साल दर साल अनियंत्रित खेती होते रहने के कारण प्राकृतिक रूप से उगने वाले समुद्री शैवालों की वृद्धि में काफी गिरावट आई है और इसलिए अब मात्रा तथा गुणवत्ता में बेहतर समुद्री शैवालों की सतत् आपूर्ति जारी रखने के लिए खेती में सुधार के उपाय करना आवश्यक हो गया है। *ग्रेसीलेरिया* तथा *जिलीडिएला* की समुद्री खेती के लिए अब तरीके उपलब्ध हैं तथा गांव की औरतों को अतिरिक्त आमदनी के लिए इस कार्य में प्रशिक्षित किया जाता है।

भारत में आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण समुद्री शैवाल:

लाल शैवाल
जिलिडिएला एसरोसा (*Gelidiella acerosa*)
ग्रेसिलेरिया इडुलिस (*Gracilaria edulis*)
ग्रेसिलेरिया कॉर्टिकेटा (*G. corticata*)
ग्रेसिलेरिया फॉलीफेरा (*G. folifera*)
ग्रेसीलेरिया क्रासा (*G. crassa*)
हिप्निया मस्कीफोर्मिस (*Hypnea musciformis*)
हिप्निया वेलैन्टी (*H. valantiae*)
हिप्निया पेनोसा (*H. pannosa*)
सर्गेसम वाइटिया (*Sargassum wightii*)
ऐल्जिनिक अम्ल के दोहन में सामान्य रूप से उपयोग में आने वाले शैवाल :
मेक्रोसिस्टिस (*Macrocystis*) (विशाल समुद्री शैवाल)
ऐस्कोफिलम (*Ascophyllum*)
लेमिनैरिया (*Laminaria*)
सर्गेसम (*Sargassum*)
टर्बीनेरिया (Turbinaria)

ये तटीय जापान, चिली, मैक्सिको तथा अमरीका में बहुतायत में पाए जाते हैं। भारत में *जिलीडिएला एसरोसा* प्रमुख ऐगार उत्पादक शैवाल है।

ग्रेसिलेरिया तथा *जिलीडियम* तटीय जापान चिली, मैक्सिको, तथा अमरीका में बहुतायत में पाए जाते हैं। *जिलीडिएला एसरोसा* भारत में प्रमुख ऐगार उत्पादक शैवाल है।

ऐगार

श्लेष्मीय पदार्थ ऐगार सूक्ष्म जीव विज्ञान तथा ऊतक संवर्धन (tissue culture) माध्यम के स्थायीकरण के लिए सुविख्यात है। यह ऐगेरोस (agarose) तथा ऐगेरोपेक्टिन (agaropectin) का मिश्रण है तथा समुद्री शैवालों की लगभग 80 जातियों से निकाला जाता है। सामान्य तौर पर उपयोग में आने वाले शैवाल *ग्रेसिलेरिया* (*Gracilaria*) तथा *जिलीडियम* (*Gelidium*) हैं। ऐल्जिनिक अम्ल की भांति ही इसका उपयोग भी पुडिंग, आइसक्रीम, जैली तथा सूप बनाने में किया जाता है। स्थिरक (stabiliser), अथवा पायसीकारक (emulsifier) की भांति इसका उपयोग
प्रसाधन, चमड़ा तथा औषधि उद्योगों में किया जाता है। इसके दस्तकारी (laxative) गुण के कारण यह कब्ज के उपचार के लिए उपयुक्त समझा जाता है।

कैरागीनिन

कैरागीनिन का मुख्य स्त्रोत *कोन्ड्रस क्रिस्पस* (*Chondrus crispus*) है जो सामान्यत: आइरिश मॉस (Irish moss) कहलाता है तथा *यूक्यूमा* स्पी (*Eucheuma* spp) हैं। कैरागीनिन में पॉलिसैकेराइड्स सल्फेटयुक्त होते हैं। ऐल्जिनिक अम्ल तथा ऐगार की भांति ही इसका उपयोग डेरी उद्योग तथा
प्रसाधन, वस्त्र, औषधि, चमड़ा तथा मद्य (brew) उद्योगों में होता है।

7.7.2 डायटोमाइट

डायटम्स में दृढ़ सिलिकायुक्त कोशिका भित्तियां होती हैं। डायटम्स की संपूर्ण कोशिका भित्ति फ्रूस्टूयल (frustule) कहलाती है। जीवाश्मी फ्रूस्टयूल सामान्यत: डायटोमाइट अथवा डायटमी रेत (diatomaceous earth) कहलाते हैं। ये अवसादी चट्टाने बनाते हैं तथा जैवजन (biogenic) सिलिका स्त्रोतों की भांति काम आते हैं। निम्न घनत्व, उच्च छिद्रता, बड़ा सतही क्षेत्र, निम्न अपघर्षण क्षमता तथा रासायनिक रूप से निष्क्रिय गुणों के कारण डायटोमाइट का उपयोग उद्योगों में होता है। डायटोमाइट के उपयोगों को नीचे तालिका में सूचीबद्ध किया गया है:

तालिका 7.3: डायटोमाइट के उपयोग

उद्देश्य	उपयोग
फिल्टर	सफाई तथा चिकनाई प्रदान करने वाले तेलों तथा विमान ईंधन, चीनी को साफ करने के लिए।
इन्सुलेटर	क्वथित्र (boilers) भट्टियों, रेफ्रीजरेटरों में तथा ध्वनिरोधी कमरे बनाने में।
अपघर्षक	सफाई तथा पॉलिश करने वाले पाउडरों में जैसे दंतमंजन, विरंजक पाउडर, कांच साफ करने वाले पाउडर, पेन्ट्स तथा वार्निश में।
पूरक	बैटरी बक्सों में।
निष्क्रिय पदार्थ	दियासलाई की तीली के सिरों तथा सिगारों में ज्वलन तथा घर्षण के नियंत्रक, विस्फोटक पदार्थों की पैंकिग में।
अवशोषक	हानिकारक तत्वों की पैंकिग तथा उन्हें ले जाने में

7.7.3 वर्णक

आप जानते हैं कि शैवालों को वर्गीकृत करने का एक मानक प्रकाश संश्लेषी वर्णक-क्लोरोफिल, कैरोटीन्स, जैन्थोफ़िल्स, तथा फ़्यूकोजैन्थिन की उपस्थिति है जो उनको विभिन्न रंग–लाल, नीला, हरा, पीला, सुनहरा, भूरा आदि प्रदान करते हैं। इन वर्णकों का व्यावसायिक स्तर पर दोहन होता है तथा विभिन्न कार्यों में इनका उपयोग होता है। *डुनैलिएला* (*Dunaliella*) तथा *स्पाइरूलाइना* (*Spirulina*) कैरोटिन के समृद्ध स्त्रोत हैं जो विटामिन ए का पूर्ववर्ती (precusor) है। β -कैरोटिन के अन्य स्त्रोतों की तुलना में सूक्ष्म शैवालों के कुछ लाभ हैं। उन्हें वृद्धि के लिए अल्प जनन काल की आवश्यकता होती है तथा इन्हें मलजल में उगाया जा सकता है। उनमें β - कैरोटिन की मात्रा काफी अधिक सान्द्रता में पाई जाती है। हम आपको बताना चाहते हैं कि कैरोटिन को कैन्सर रोधी औषधि के रूप में पहचाना गया है।

β - कैरोटिन तथा अन्य वर्णकों (जैसे ज़ैन्थोफ़िल्स, कैन्टाज़ैन्थिन तथा जीयाजैन्थिन) का उपयोग खाद्य पदार्थों को रंगने में किया जाता है। उदाहरण के लिए β - कैरोटिन को शीतल पेय, तथा मार्जेरीन (margarine एक प्रकार का मक्खन) तथा कैन्टाजैन्थिन को मुर्गे की खाल, सुनहरी मछली की खाल तथा अंडे की जर्दी को रंगने के लिए उपयोग किया जाता है।

बोध प्रश्न 7.6

निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से पूरा करें।

i) ऐल्जिनेट्स समुद्री शैवालों की........................... में उपस्थित रहते हैं। उनका दोहन........... के द्वारा किया जाता है क्योंकि सोडियम ऐल्जिनेट जल में घुलनशील होते हैं।

ii) समुद्री शैवालों में उपस्थित कोलॉइड्स............ कहलाते हैं।

iii) ऐल्जिनेट्स का उपयोग.............................. रोधी वस्त्र तथा .... उत्पादों में होता है।

iv) ऐल्जिनिक अम्ल में बहुत अधिक...................... करने की क्षमता होती हैं। इसलिए इसका उपयोग सर्जिकल ऑपरेशन में .... को प्रभावी ढंग से रोकने के लिए होता है।

v) ऐगार का सूक्ष्म जीवों के लिए................... माध्यम के तौर पर उपयोग होता है।

vi) डायटम्स की कोशिका भित्ति दृढ़ होती है क्योंकि ये.................. होती हैं।

vii) डायटोमाइट का उपयोग............. तथा पॉलिश के पाउडरों में अपघर्षक के रूप में होता है।

viii) β -कैरोटिन के .... गुणों को पहचाना गया है।

ix) *जिलीडिएला एसरोसा* भारत में प्रमुख........... उत्पादक शैवाल है।

x) आइरिश मॉस.................. का मुख्य स्त्रोत है।

7.8 शैवालों के चिकित्सीय उपयोग

कुछ शैवाल जीवाणु रोधी (antibacterial), वाइरस रोधी (antiviral) तथा ज्वरहर (anti-pyretic) गुण दर्शाते हैं। इनका उपयोग घावों के भरने में, हृदय रोगों के उपचार में, गठिया, गलगंड (goitre) उच्च रक्तचाप, पित्तश्मरी (gall stone), अंतड़ियों के चलन (bowel movement), त्वचा रोगों में तथा कृमिहर (vermifuge) के रूप में किया जाता है। चिकित्सा क्षेत्र में शैवालों के लाभकारी उपयोगों का नीचे तालिका में संक्षिप्त विवरण दिया गया है।

चित्र 7.7 : जीवाश्म डायटम्स की सिलिकायुक्त कोशिका भित्तियों के अवशेषों को दिखाते हुए डायटम्स के एक टुकड़े का क्रमवीक्षण इलेक्ट्रान सूक्ष्मचित्र (scanning electron micrograph)।

तालिका 7. 4 : शैवालों के चिकित्सीय उपयोग

उपयोग	सक्रिय यौगिक
जीवाणु प्रतिरोधक	क्लोरेलिन (*Chlorella*)
कृमिहर	कैनिक अम्ल (kainic acid) डाइजीनिया (*Digenea*)
कफ सिरप	कैरागीनिन
स्कंदनरोधी (रक्त को जमने से रोकने वाली दवा)	ऐगार
मिरगी में दौरे की प्रकृति को समझने के लिए रोग निदान कारक	कैनिक अम्ल
कैन्सर हर	कुछ समुद्री शैवालों का काढ़ा
औषधीय गोलियों के लिए बंधनकारी एजेंट	फ्यूकोइडिन (fucoidin) तथा ऐगार

7.9 शैवालीय कम्पनियां

कम्पनियां जिन्होंने विविध प्रकार के उत्पादों के लिए शैवालीय संभावनाओं के दोहन के लिए बड़े स्तर पर उद्योग स्थापित किए हैं वे हैं: ड्यूपोन्ट एंड सोहायो (Dupont and Sohio, USA), किरीन ब्रूवेरी एण्ड डेनीपा, (Kirin Brewery and Dainipa, Japan) थापर कोर्पोरेशन, (Thapar Corporation, India) वेस्टर बायोटैक्नोलाजी लिमिटेड आस्ट्रेलिया (Wester Biotechnology Ltd., ऑस्ट्रेलिया) सिआम एल्गी कम्पनी, बैंकाक (Siam Algae Company, बैंकाक)। शैवालों का बाजार मूल्य भी तालिका में दिया गया है। तालिका आपको शैवालीय उत्पादों तथा उनके बाजार की माप का अंदाजा देने के लिए सम्मिलित की गयी है आपको इसे रटने की आवश्यकता नहीं है।

तालिका 7.5 : शैवालों से प्राप्त होने वाले विभिन्न उत्पाद, उनका अनुमानित मूल्य तथा बाजार का माप।

शैवालीय उत्पाद	उपयोग तथा उदाहरण	अनुमानित मूल्य (डालर/कि.ग्रा.)	अनुमानित बाजार*
रेडियो सक्रिय आइसोटोपिक चिन्हित यौगिक	जैवरासायनिक तथा औषधीय अनुसंधान	<1,000	लघु
फ़ाइकोबिलीप्रोटीनें (phycobiliproteins)	रोग निदान सूचक खाद्य रंग	>10,000 >10,00	लघु मध्यम
औषधि (pharmaceutical)	कैन्सर हर, एन्टिबायोटिक्स	अज्ञात (बहुत उच्च)	विस्तृत विस्तृत
β- कैरोटिन (β-Carotene)	खाद्य संपूरक, खाद्य रंग	500 300	लघु मध्यम
ज़ैन्थोफिल्स (xanthophylls)	मुर्गी का खाना मछली का खाना	200 - 500 1000	मध्यम मध्यम
विटामिन्स C तथा E	प्राकृतिक विटामिन्स	10 - 50	मध्यम
स्वास्थ्यवर्धक खाद्य	संपूरक	10 - 20	मध्यम से विस्तृत
पॉलिसैकेराइड्स	विस्कोफ़रस, गोंद आयन आदान-प्रदान कारक (ion exchangers)	5 - 10	मध्यम से विस्तृत
द्विकपाटी (bivalve) जंतुओं के खाद्य रूप में	जलसंवर्धन (aquaculture)	20 - 100 1-10	लघु विस्तृत
मृदा संरोपण (soil inocula)	अनुकूलक (conditioner) उर्वरक	>100	अज्ञात अज्ञात
ऐमीनो अम्ल	प्रोलीन (proline) आर्जिनिन (arginine) एस्पार्टेट (aspartate)	 5-50 5-50	 लघु लघु
एक कोशिकीय प्रोटीन	जंतु खाद्य	0.3-0.5	विस्तृत
वनस्पति तेल	चारे के लिए खाद्य	0.3-0.6	विस्तृत
समुद्री तेल	संपूरक	1-30	लघु
कचरे का उपचार	नगरपालिका औद्योगिक	1	 विस्तृत
मीथेन, हाइड्रोजन, तरल ईंधन	सामान्य उपयोग	0.1-0.2	विस्तृत

* बाजार माप (10 लाख डालरों में) : लघु <10$, मध्यम 10-100$, विस्तृत > 100$

बोध प्रश्न 7.7

i) शैवाल के चिकित्सीय उपयोगों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

....

कुछ महत्वपूर्ण शैवाल जो जल को गंध तथा स्वाद प्रदान करते हैं :

माइक्रोसिस्टिस (Microcystis)

ऐनासिस्टिस (Anacystis)

क्लैमाइडोमोनस (Chlamydomonas)

सेरैशियम (Ceratium)

सिनेड्रा (Synedra)

साइनूरा (Synura)

7.10 शैवालों के हानिकारक प्रभाव

अब तक आपको शैवालों के कुछ उपयोगों की जानकारी हो गई होगी। इस अंतिम सैक्शन में हम आपका ध्यान शैवालों के विपरीत प्रभावों की ओर दिलाना चाहते हैं। आप जानते हैं कि जलाशयों में शैवालों की तीव्र वृद्धि (शैवालीय प्रस्फुटन) से, उनमें सुपोषण (eutrophication) होता है। फलस्वरूप जलाशय तैरने, नौकायन (boating) अथवा मछली पालन, जैसी गतिविधियों के लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं। बदली के मौसम में, शैवाल जल की ऑक्सीजन को कम कर देते हैं इसलिए मछलियों व अन्य जीवों का दम घुटने लगता है। मछलियां मर भी जाती है क्योंकि वे जब शैवालीय तंतुओं के विशाल पिंडों में उलझ जाती हैं तो उनका मुंह तथा गिल घुट जाते हैं।

कभी-कभी, आपने पीने के पानी की आपूर्ति में एक अजीब सी गंध तथा स्वाद का अनुभव किया होगा। यह किसी शैवाल के कारण हो सकता है जो जल को घास जैसी (grassy), मछली जैसी (fishy), फंफूददार (musty) या कोई अन्य गंध तथा मीठा या कड़वा स्वाद प्रदान करते हैं। गंध तथा स्वाद शैवाल के उपापचयी तथा/अथवा विघटनकारी उत्पादों के कारण होते हैं। शैवाल की सिर्फ कुछ कोशिकाएं ही (क्राइसोफ़ाइटा प्रभाग की) जल को बुरा स्वाद तथा दुर्गंध प्रदान करने के लिए पर्याप्त होती है। यदि *साइनूरा (Synura)*, डायटम्स अथवा नील-हरित शैवाल जल आपूर्ति के फिल्टरों में चले जाएं तो फिल्टरों में रुकावट आ जाती है तथा गंभीर आर्थिक नुकसान हो जाता है।

कुछ शैवाल विष उत्पन्न करते हैं जो मनुष्यों तथा जंतुओं में सीधे ही अथवा खाद्य श्रृंखला के जरिए प्रवेश कर जाते हैं। उदाहरण के लिए किसी व्यक्ति में उस शुक्ति (oysters) या मछली को खाकर विष पहुंच सकता है जिसने विषाक्त घूर्णीकशाभ (dinoflagellate) खाया हो। ये शैवालीय विष नसों में संचरण को रोक देता है जिसके फलस्वरूप व्यक्ति लकवाग्रस्त हो जाता है व मर भी सकता है।

पेयजल के साथ अथवा तैरते वक्त शैवाल के अंतर्ग्रहण से पेट के रोग, त्वचा संक्रमण अथवा श्वॉस संबंधी समस्याएं भी हो सकती हैं। *प्रोटोथीका (Prototheca)* नामक शैवाल प्रोटोथीकोसिस रोग उत्पन्न करता है, जो मनुष्यों की त्वचा पर चकत्तों, जोड़ों के चारों ओर जलन तथा विकारग्रस्त श्वेत कोशिकाओं के रूप में उभरता है। डायटमी रेत (diatomaceous earth) पर कार्य करने वाले व्यक्ति, शैवालीय सिलिकोसिस (silicosis) से पीड़ित हो जाते हैं। समुद्री शैवालों को अधिक खाने से आर्सेनिक विषाक्तता हो जाती है। प्रभावित व्यक्ति त्वचा पर चकत्तों, फफोलों तथा जलन से पीड़ित हो जाता है। ताजे जल के नील-हरित शैवाल एल्केलॉइड्स (alkaloids) उत्पन्न करते हैं जो तंत्रिका विष (neurotoxins) होते हैं। तालिका 7.6 में हमने संदर्भ के लिए कुछ चिकित्सीय समस्याओं तथा उनके कारक शैवालों को सूचीबद्ध किया है।

कुछ शैवाल परजीवी होते हैं जिनमें से अधिकांश वंश *क्लोरेला (Chlorella)* तथा *जोओक्लोरेला (Zoochlorella)* के हैं तथा कुछ अन्य भी जो जलीय हैं, अकशेरूकी (invertebrates) प्राणियों जैसे *हाइड्रा (Hydra)*, घोंघा, स्पंज तथा शंबु (mussels) पर परजीवी होते हैं।

शैवाल कुछ पादप रोगों के लिए भी जिम्मेदार होते हैं। उदाहरण के लिए हरित शैवाल *सैफैल्यूरास (Cephaleuros)* चाय के पौधों में लाल किट्ट (red rust) उत्पन्न करता है जिससे उसकी पैदावार कम हो जाती है।

तालिका 7.6 : कुछ चिकित्सीय समस्याएं तथा उनके कारक शैवाल

चिकित्सीय समस्या	कारक शैवाल
त्वचा ज्वलन (dermatitis)	*लिंग्बया जसकुला (Lyngbya mjuscula)* *क्लोरेला (Chlorella)*
उदर विकार	*ऐनाबीना (Anabaena)* *ऑसिलैटोरिया (Oscillatoria)*
श्वसन विकार	*क्लोरेला, ऑसिलैटोरिया,* *ऐनाबीना, जिम्नोडीनियम (Gymnodinium)*
तंत्रिका तंत्रीय विकार	*पाइरोडिनियम (Pyrodinium)* *प्रोटोगोनिओलेक्स (Protogonyaulax)*
शैवालीय सिलीकोसिस	डायटमी रेत
आर्सेनिक विषाक्तता	समुद्री शैवालों का बहुत अधिक सेवन
लिंग्बया मेजर प्रत्यूर्जक	*ऑसिलैटोरिया, ऐनाबीना, क्लोरेला*

शैवालीय मुसीबतों पर नियंत्रण

शैवालों की अवांछित वृद्धि को रोकने के लिए रासायनिक तथा जैविक तरीकों का उपयोग किया जा सकता है। कुछ शैवालनाशक (algicides) भी ज्ञात हैं जैसे कॉपर सल्फ़ेट, क्विनोन्स (quinones), फ़िनॉल (phenol) तथा अन्य जो केवल शैवालों को मार देते हैं। शैवालीय वृद्धि से प्रभावित जलाशय में उपयुक्त क्रस्टेशियन (crustacean) अथवा मछली के अंगुलिमीन (fingerlings) डालकर भी नियंत्रित किया जा सकता है। कुछ वाइरस जो नील-हरित तथा हरित शैवालों को मार देते हैं, वे भी नियंत्रण में लाभकारी हैं।

बोध प्रश्न 7.8

i) शैवालों के विपरीत प्रभावों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

7.11 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- शैवाल खाद्य तथा चारे के, जैव उर्वरक, ऊर्जा तथा विभिन्न चिकित्सीय व औद्योगिक उत्पादों के महत्वपूर्ण तथा समर्थ स्त्रोत हैं।
- सूक्ष्म शैवाल तथा समुद्री शैवाल पोषण के लिए समृद्ध हैं। सामान्य तौर पर खाई जाने वाली जातियां *पॉरफाइरा, अल्वा, कॉन्ड्रस, पामेरिया, ग्रेसिलेरिया, जिलीडिएला, कौलर्पा, लेमिनैरिया, स्पाइरूलाइना,* तथा *क्लोरेला,* हैं। इनमें से कुछ बड़े स्तर पर व्यावसायिक रूप से संवर्धित की जाती हैं।
- शैवालों का उपयोग पशुओं के तथा मुर्गी, मछली, ओइस्टर, घोंघों तथा रेशमकृमि के कैटरपिलर के भोजन के लिए किया जाता है।
- सूक्ष्म शैवाल *स्पाइरूलाइना, क्लोरेला, स्केनडेस्मस, ऑसिलैटोरिया* का उपयोग व्यर्थ जल के उपचार के लिए किया जाता है।

- नील-हरित शैवाल मिट्टी को नाइट्रोजन से, तथा समुद्री शैवाल पोटैशियम व मिट्टी को बांधने वाले पॉलिसैकेराइड्स से समृद्ध करते हैं।
- शैवालों से हाइड्रोजन, अमोनिया तथा हाइड्रोकार्बनों के उत्पादन की संभावना पर खोज की जा रही है। शैवालीय जैवपिंड का उपयोग बायोगैस के उत्पादन के लिए किया जाता है।
- कुछ यौगिक जैसे ऐल्जिनिक अम्ल, कैरागीनिन, ऐगार, डायटोमाइट, तथा वर्णक शैवालों से प्राप्त किए जाते हैं। उनके विभिन्न महत्वपूर्ण उपयोग हैं।
- शैवालों का उपयोग चिकित्सीय कार्यों में भी किया जाता है।
- शैवाल काफी क्षतिकारक भी हैं क्योंकि उनका हमारे जल संसाधनों पर प्रभुत्व रहता है तथा ये अक्सर जलीय जंतुओं को हानि पहुंचाते हैं, व हमारे पेयजल की आपूर्ति को दूषित कर देते हैं तथा महामारी भी फैला सकते हैं।

7.12 अंत में कुछ प्रश्न

1) शैवाल के विभिन्न उपयोगों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

....

2) तीन प्रमुख खाद्य शैवालों के नाम बताइए जो समुद्रतटीय देशों में प्रचलित हैं। उन्हें कैसे खाया जाता है ?

....

....

....

....

....

3) शैवालों को जैव उर्वरकों के रूप में प्रयोग करने के क्या लाभ हैं ?

....

....

....

....

....

4) ऐल्जिनिक अम्ल के चार उपयोग बताइए।

....

....

....

....

....

7.13 उत्तर

बोध प्रश्न

7.1 अ) i) प्रोटीनों, विटामिनों, खनिजों, आयोडीन

ii) 65

iii) खारे, खुले

iv) *क्लोरेला,* "सर्वरोग हर" ("Cure all")

v) व्यर्थ

vi) *पॉरफाइरा* (*Porphyra*)

vii) आवश्यक

ब) i) *स्पाइरूलाइना*

ii) *क्लोरेला*

iii) *पॉरफाइरा*

7.2 i) अ, ii) स, iii) स, iv) स

7.3 अ) i) ऑक्सीजन

ii) ऑक्सीजन

iii) जल से उत्पन्न होने वाले रोग

iv) मवेशियों

v) बायोगैस

7.4 अ) i) *ऐनाबीना-एजोला*

ii) *ऐनाबीना, नॉस्टॉक,* सेक्शन 7.5 पृ० 96 में हाशिए की टिप्पणी में दी गई सूची को भी देखिए।

iii) *टर्बिनेरिया*

iv) समुद्री शैवाल

v) नील-हरित शैवाल

7.5 i) स, ii) स, iii) अ, iv) स

7.6 i) कोशिका भित्ति, सोडियम हाइड्रॉक्साइड

ii) फाइकोकोलॉइड्स

iii) ज्वाला, प्लास्टिक

iv) अवशोषण, रक्त स्त्राव

v) संवर्धन

vi) सिलिकायुक्त

vii) सफाई

viii) कैन्सर हर

ix) ऐगार

x) कैरागीनिन

7.7 i) कृमिहर, ii) प्रतिजैविक, iii) कफ/खांसी जुकाम में आराम, iv) घाव भरने में, v) हृदय रोग, vi) उच्च रक्त चाप, vii) पित्ताश्मरी, viii) अंतड़ियों के चालन में, ix) त्वचा रोग, x) गलगंड, xi) रक्त को जमने से रोकने में तथा, xii) औषधीय गोलियों के बांधने वाले पदार्थ के रूप में।

7.8 निम्नलिखित को विस्तारित कीजिए:

i) पानी के स्त्रोतों को हानि

ii) पेयजल की गंध तथा स्वाद में बदलाव

iii) विषाक्त शैवाल के अंतर्ग्रहण के कारण होने वाले रोग

iv) किस प्रकार शैवालीय विष मानव तथा अन्य जंतुओं में पहुंचते हैं

v) परजीवी शैवाल

vi) पादप रोग

अंत में कुछ प्रश्न

1) संकेत : विभिन्न सेक्शन तथा सब-सेक्शन का शीर्षक देखिये।

2) संकेत : सेक्शन 7.2 देखिए: सबसे प्रमुख हैं: *क्लोरेला, पॉरफाइरा, अल्वा* तथा *स्पाइरूलाइना*। आप कुछ अन्य शैवालों के नाम भी दे सकते हैं जिनके बारे में आप जानते हैं।

3) संकेत :

   i) मिट्टी को नाइट्रोजन तथा पोटैशियम से समृद्ध करते हैं (नील-हरित शैवाल तथा समुद्री शैवाल)

   ii) मिट्टी का पुनर्उद्धार (नील-हरित शैवाल)।

4) संकेत : सब-सेक्शन 7.7.1 देखिए।

शब्दावली

ऐगार (agar) : कुछ लाल शैवालों से प्राप्त होने वाला पदार्थ जिसका प्रयोग कोशिकाओं, ऊतकों तथा सूक्ष्मजीवों के संवर्धन के लिए ठोस माध्यम बनाने में किया जाता है।

अगुणितक (haplont) : शैवाल की कायिक संरचना अगुणित होती है, द्विगुणित प्रावस्था सिर्फ युग्मनज द्वारा ही प्रदर्शित होती है।

अंत:जंतुक (endozoic) : जंतुओं के ऊतकों के अंदर रहने वाला परंतु आवश्यक रूप से परजीवी नहीं।

अचल पुमंणु (spermatium) : लाल शैवाल का एक अचल नर युग्मक।

अचल बीजाणु (aplanospore) : एक अ-कशाभी बीजाणु जिसमें बीजाणु भित्ति अपनी जनक कोशिका की भित्ति से नहीं बनती है।

अंतर्जीले शैवाल (cyanelle) : एक अंत: सहजीवी सायनोबैक्टीरिया जो वास्तविक केन्द्रकी कोशिका में क्लोरोप्लास्ट की भांति कार्य करता है।

अंत:पादप (endophyte) : किसी पादप अथवा शैवाल के अंदर उगने वाला कोई पादप या शैवाल।

अंत:सहजीवी (endosymbiont) : वह सहजीवी जो अपने परपोषी की कोशिकाओं के अंदर रहता है।

अधि जान्तव (epizoic) : जंतुओं की बाहरी सतह से जुड़े रहने वाले जीव।

अधिद्विगुणित (diplobiontic) : पीढ़ियों के एकांतरण में दो मुक्त जीवी आकृतिक प्रावस्थाओं का पाया जाना (युग्मकोद्भिद् तथा बीजाणुउद्भिद्)।

अधिपादप (epiphyte) : कोई शैवाल अथवा पादप जो अन्य शैवाल या पादप के ऊपर उगता है।

अध्यगुणित (haplobiontic) : जिनमें सिर्फ एक कायिक प्रावस्था होती है अगुणित या द्विगुणित।

अन्तराज्वारीय क्षेत्र (intertidal region) : तट का वह भाग जो निम्न ज्वार के दौरान वायु के संपर्क में रहता है तथा उच्च ज्वार के दौरान पानी में डूबा रहता है।

अनिषेकजनन (parthenogenesis) : विकास के तरीके से संबंधित जिसमें मादा युग्मक निषेचन के बिना ही अंकुरित हो जाती है।

अलैंगिक चल बीजाणु (zoospore) : एक कशाभी बीजाणु (अलैंगिक प्रजनन के लिए)।

आसुप्त बीजाणु (statospore) : क्राइसोफाइटा के सदस्यों द्वारा बनाई जाने वाली एक प्रतिरोधी अवस्था जो सिलिकामय भित्ति की बनी होती है।

ऑस्टियोल (ostiole) : धानी का मुख या छिद्र।

एक कोष्ठकी बीजाणुधानी (unilocular sporangium) : एक कोशिकीय बीजाणुधानी जिसमें अर्धसूत्री विभाजन होता है, भूरे शैवाल में पाई जाती है।

एक पंक्तिक (uniseriate) : जिसमें कोशिकाएं एक पंक्ति या श्रृंखला में व्यवस्थित रहती हैं।

एकपूर्वजक (clone) : आनुवंशिक रूप से समान कोशिकाओं की जनसंख्या, जो अलैंगिक प्रजनन से उत्पन्न होती है।

अग्रसूत्री (acronematic) : पतली तथा चिकनी सतह युक्त कशाभ जिनके सिरे पतले रोम जैसे होते हैं।

ऐल्जिन (algin)	: फियोफाइटा के कुछ सदस्यों के अंतर कोशिकीय अवकाशों में पाया जाने वाला पॉलिसैकेराइड जो डी-मेनुरोनिक (d-mannuronic) तथा एल-गुलूरोनिक (L-guluronic) अम्लों का बना होता है।
ऐल्जिनेट (aliginate)	: ऐल्जिनिक अम्ल के लवणों के लिए प्रचलित नाम।
ऐलोफाइकोसाइनिन (allophycocyanin)	: प्रभाग सायनोफाइटा, रोडोफाइटा तथा क्राइसोफाइटा का प्रकाश संश्लेषी रूप से सक्रिय बिलीप्रोटीन वर्णक जो नीले रंग का होता है।
उत्प्रवाह (upwelling)	: पोषण से समृद्ध गहरे जल का सतह की ओर चलन।
क्राइसोलेमिनेरिन (chrysolaminarin)	: ग्लूकोस के β-1, 3 बध्य बहुलक का बना हुआ संचित पॉलिसैकेराइड।
कार्पोगोनियम (carpogonium)	: लाल शैवाल में अंड को लिए हुए एक कोशिका (अंडधानी के समकक्ष)।
कार्बोक्सीसोम (carboxysome)	: राइब्यूलोस बाइफास्फेट कार्बोक्सीलेज़ एन्ज़ाइम से बने हुए बहुभुजीय कण, जो सामान्यतः सायनोबैक्टीरिया में पाए जाते हैं।
कैरागीनिन (carrageenan)	: कुछ लाल शैवालों की भित्ति में पाया जाने वाला म्यूकोपालिसैकेराइड जो गैलैक्टोस का सल्फेट युक्त बहुलक है।
कैल्प (kelp)	: किसी भी बड़े भूरे शैवाल के लिए प्रचलित नाम।
कैल्शियमी (calcarious)	: चूने से भरे शैवाल।
कोकोलिथ (cocolith)	: शैवालीय जीवों में कैल्शियमी शल्कों से भरी काया, जो कैल्शियम कार्बोनेट की बनी होती हैं, ये प्राइम्नीसियोफाइट्स कहलाते हैं (सुनहरे भूरे शैवाल के नातेदार)।
क्रोमेटोप्लाज़्म (chromatoplasm)	: कोशिकाद्रव्य में वर्णकीलवक युक्त क्षेत्र।
कोशिकाद्रव्यलयन (plasmogamy)	: दो कोशिकाओं के कोशिकाद्रव्यी पदार्थों का संलयन। सामान्यतः केन्द्रकी पदार्थों के संलयन से संबंधित जैसे कि युग्मनज के निर्माण में।
ग्लॉकोफाइट–नीलाभ पादपी (glaucophyte)	: वास्तविक केन्द्रकी कोशिका जिसमें अंतः सहजीवी सायनोबैक्टीरिया होता है। अंतर्नील शैवाल।
युग्मोन (gamone)	: लैंगिक मिलन को प्रभावित करने वाला एक रसायन।
गोनिडियम (gonidium)	: *वाल्वॉक्स* (*volvox*) में अलैंगिक प्रजननकारी कोशिका जो संतति निवह बनाती है।
जाइलैन (xylan)	: जाइलोस (मोनोसैकेराइड) का बहुलक।
जातिवृत्त (phylogeny)	: जाति का विकासात्मक विकास।
जोओजैन्थेला (*Zooxanthella*)	: नाइडेरियनों (cnidarians) तथा अन्य अकशेरूकी जंतुओं की कोशिकाओं में पाया जाने वाला सहजीवी डाइनोफ्लैजिलेट।
डायटमी रेत (diatomaceous earth)	: वे निक्षेप जो ज्यादातर जीवाश्म डायटमों की भित्तियों से बने होते हैं।
तनुत्वक (pellicle)	: ऐसी कोशिकाएं जिनमें कोशिका भित्ति नहीं पाई जाती है, उन कोशिकाओं में पाई जाने वाली बाह्य सीमा झिल्ली, ये कुछ हद तक कोशिका भित्ति से मिलती हुई होती है, परंतु उसके समान नहीं होती है।
त्वचा रोम (trichome)	: सायनोबैक्टीरिया में कोशिकाओं की कतार जो श्लेषमीय आवरण विहीन तंतु बनाती है।

ताराकार (stellate)	: तारे के जैसा।
थैलस (thallus)	: शैवाल की काया जिसमें वास्तविक जड़ तना तथा पत्ती नहीं होती है।
थैलसी (thalloid)	: वह पादप या शैवाल जो जड़ों, तनों तथा पत्तियों में विभेदित नहीं होता है।
द्विगुणितक (diplont)	: कायिक शरीर द्विगुणित होता है, अगुणित प्रावस्था युग्मकों द्वारा प्रदर्शित होती है।
द्विशाखन (dichotomously branched)	: शाखन का बारंबार द्विभाजनी पैटर्न।
कंसेप्टिकल (conceptacle)	: प्रजनन संरचनाओं को लिए हुए एक गुहा (फ्यूकस में)।
नितलस्थ (benthic)	: जलीय पारिस्थिति तंत्र (ecosystem) में विशेष रूप से समुद्री वातावरण में तल पर अथवा तल से जुड़े रहने वाले जीव।
निष्चेष्ट बीजाणु (akinete)	: एक कायिक कोशिका जो मोटी भित्ति वाले अचल विश्रांत बीजाणु में परिवर्तित हो जाती है; कोशिका की भित्ति बीजाणु की भित्ति बन जाती है।
नेत्र बिन्दु (eye spot)	: लाल रंग का बिन्दु (दृक्‌बिन्दु) जो प्रकाश के लिए संवेदनशील होता है।
परालैंगिक (parasexual)	: आनुवंशिक पुनर्योजन (genetic recombination) को दर्शाने वाले जीव जिनमें केन्द्रक संलयन (karyogamy) तथा अर्धसूत्री विभाजन में नियमित एकांतरण नहीं पाया जाता है।
परिद्रव्यक(periplast)	: कशाभी जीवों का नाजुक सुरक्षात्मक आवरण जिसमें कोशिका भित्ति नही पाई जाती है।
परिधीय (parietal)	: कोशिका की भीतरी भित्ति के साथ स्थित।
पाइरीनॉइड (pyrenoid)	: क्लोरोप्लास्ट में एक विशिष्ट संरचना जो राइब्यूलोस बाइफॉस्फेट कार्बोक्सिलेस की बनीं होती है, ये या तो क्लोरोप्लास्ट के अंदर धंसी रहती है अथवा उसमें से ऊपर निकली रहती है व इसमें मंड सतह पर संचित रहता है।
प्रपर्ण (frond)	: यह शब्द फर्न की पत्ती तथा विशाल शैवालीय थैलस के लिए प्रयुक्त होता है जो फर्न की पत्ती जैसा दिखाई पड़ता है।
प्रवाली (coralline)	: कैल्शियमी शैवालों के लिए प्रचलित शब्द।
प्रस्फुटन (bloom)	: सूक्ष्मदर्शीय शैवालों की सघन वृद्धि जो जल पर छा जाती है।
पाल्मेला अवस्था (palmella stage)	: कुछ सचल शैवालों के जीवनचक्र में पाई जाने वाली अस्थायी अचल स्थानबद्ध अवस्था, कोशिकाएं निष्क्रिय रहती है तथा श्लेष्मीय मैट्रिक्स में धंसी रहती है।
पार्श्व सूत्र (mastigoneme)	: कुछ कशाभी जीवों में पाया जाने वाला एक कड़ा नलिकाकार रोम ।
पिट संबधन (pit connection)	: दो संलग्नी कोशिकाओं को पिट के द्वारा उनकी कोशिका भित्तियों से जोड़ने वाले कोशिका द्रव्यी तंतु, जैसे लाल शैवाल में।
पुमणु (antherozoid)	: चल नर युग्मक।
पुंधानी (antheridium)	: नर युग्मक उत्पन्न करने वाला लैंगिक अंग जो शैवाल तथा कवक में एक कोशिका का होता है तथा ब्रायोफाइट्स व संवहनी पादपों में बहुत सी कोशिकाओं का व बंध्य जैकेट सहित होता है।

पेक्टिन (pectin)	: β-1,4 बंध्य गैलेक्टरोनिक अम्ल अवशिष्ट जिसमें कार्बोक्सिल समूह मिथेनॉल रेम्नोगैलेक्टुरोनन (रैम्नोस तथा गैलेक्टोस) तथा अरेबीनोगेलेक्टन (अरेबीनोस तथा गैलेक्टोस) से ऐस्टरीकृत रहते हैं।
पैरामाइलोन (paramylon)	: एक पॉलिसैकेराइड संचयी उत्पाद जो यूग्लीनॉइड्स में पाया जाता है। यह β 1-3- बंध्य ग्लूकोस इकाइयों का बना होता है तथा यह लेमिनेरिन के समान होता है।
फ्यूकोइडिन (facoidin)	: कार्बोहाइड्रेट का एक व्युत्पन्न (derivative)।
फ्यूकोजैन्थिन (fucoxanthin)	: कुछ शैवालों में पाया जाने वाला एक प्रकार का कैरोटिनॉइड।
पॉलीफॉस्फेट कणिकाएं (polyphosphate granules)	: शैवालीय कोशिकाओं में संचित अकार्बनिक फॉस्फेट के बहुलक जो कणिका के रूप में पाए जाते हैं।
बहुकोष्ठकी बीजाणुधानी (plurilocular sporangia)	: भूरे शैवालों में बनने वाली बहुकोशकीय प्रजनन संरचना।
फाइकोबिलिन (phycobilin)	: सायनौबैक्टीरिया, लाल शैवाल तथा क्रिप्टोमोनाड्स में पाया जाने वाला जल में घुलनशील वर्णक, फाइकोबिलीप्रोटीन बनाने के लिए संहसंयोजी रूप से प्रोटीन से बंधा हुआ, फाइकोसायनिन (नीला) फाइकोइरिथ्रिन (लाल)।
फाइकोबिलीसोम (phycobilisome)	: सायनोबैक्टीरिया तथा लाल शैवाल के थाइलेकाइड्स की बाहरी सतह पर दानेदार संरचनाएं फाइकोबिलीप्रोटीन्स की बनी होती हैं।
मध्यांश (medulla)	: बहुकोशिकीय थैलस की भीतरी परत जो अवर्णकी कोशिकाओं की बनी होती है और सामान्यतः संचय में काम आती है।
म्यूकोपेप्टाइड्स (mucopeptides)	: कार्बोहाइड्रेट्स तथा ऐमीनो अम्ल के बने हुए यौगिक, कार्बोहाइड्रेट्स एन ऐसीटिल ग्लूकोसामीन तथा एन ऐसीटिल म्यूरामिक अम्ल होते हैं, ऐमीनो अम्ल ग्लूटामिक अम्ल, ऐलानिन, ग्लाइसीन, एस्पार्टिक अम्ल, लाइसीन तथा डाइऐमीनोपिमेलिक अम्ल हैं।
म्यूरामिक अम्ल (muramic acid)	: कार्बोक्सीइथाइल समूह को लिए हुए ग्लूकोसामीन व्युत्पन्न।
माइटोबीजाणु (mitospore)	: समसूत्री विभाजन के पश्चात् बनने वाला बीजाणु। अगुणित अथवा द्विगुणित हो सकता है।
मैनीटॉल (mannitol)	: भूरे शैवाल में पाया जाने वाला शर्करा एल्कोहल।
मैनेन (mannan)	: मैनोस का एक बहुलक (एक मोनोसैकेराइड)।
युग्माणु (zygospore)	: मोटी भित्ति वाला युग्मनज।
रसायन अनुचलन (chemotaxis)	: रासायनिक उद्दीपन पर कोशिका की चलन अनुक्रिया।
रुबिस्को (rubisco)	: राइब्यूलोस 1, 6 डाइफॉस्फेट कार्बोक्सीलेस, वह एन्जाइम जो कार्बन डाइऑक्साइड के यौगिकीकरण के लिए उत्तरदायी होता है।
रोम (hair)	: दीर्घीकृत, अ-वर्णकी कोशिका या कोशिकाएं जो अक्सर शीर्ष पर पतली होती हैं।
रोमकोरक (trichoblast)	: लाल शैवालों में अवर्णकी कोशिकाओं की एक श्रृंखला जो सिरे से पतली शाखा या रोम बनाती है।
ल्यूकोसिन (leucosin)	: क्राइसोलेमिनेरिन ; ग्लूकोस के β-1,3 बहुलक का बना हुआ संचित पॉलिसैकेराइड।

लाइकेन (lichen) : कवक तथा शैवाल का सहजीवी संबंध।

लाल ज्वार (red tide) : पादप प्लवक का प्रस्फुटन अथवा सघन सान्द्रता, सामान्यत: डाइनोफ्लैजिलेट्स (dinoflagellates) पीले से लाल या भूरे रंग के, अक्सर ऐसे विषों से संबद्ध जो मछली को मार सकते हों तथा मनुष्यों में बीमारी पैदा कर सकते हों या उन्हें मार सकते हों।

लेमिनेरिन (laminarin) : भूरे शैवाल में पाया जाने वाला संचित पॉलिसैकेराइड जो ग्लूकोस के β बंध्य बहुलक का बना होता है।

विषमतंतुक प्रवृत्ति (heterotrichous habit) : एक तंतुमय थैलस जिसमें शयान शाखाओं (जो आधार पर उगती हैं) तथा सतर शाखाओं में विभेद दिखाई पड़ता है।

विषमथैलसी (heterothallic) : कुछ शैवालों तथा कवकों का लैंगिक प्रजनन जिसमें प्रजनन सिर्फ दो आनुवंशिक रूप से भिन्न थैलसों के बीच ही होता है, वे या तो नर (+) अथवा मादा (–) होते हैं।

विषमयुग्मकता (oogamy) : कशाभी युग्मक (शुक्र, पुमणु) तथा अ-कशाभी युग्मक (अंड) के बीच लैंगिक युग्मन।

विषमरूपी पीढ़ी (heteromorphic generation) : पीढ़ियों के एकांतरण में पायी जाने वाली कायिक प्रावस्थाएं जो स्पष्ट रूप से आकृति में भिन्न होती हैं।

वेलांचली (littoral) : समुद्र में जल के किनारे तथा लगभग छह मीटर की गहराई के मध्य का ताजे पानी का क्षेत्र। समुद्र तट का उच्च तथा निम्न ज्वार के बीच का क्षेत्र। वेलांचली जाति वो होती है जो मुख्यत: वेलांचली क्षेत्र में निवास करती है।

वेलापवर्ती (pelagic) : मुक्त समुद्र में। महाद्वीपीय उपतटीय क्षेत्र के पार प्लावित अथवा आंशिक रूप से जल में निमग्न उदाहरण *सर्गेसम (Sargassum)*।

संकोशिका (coenocytic) : एक बहुकेन्द्रकी कोशिका।

समथैलसी (homothallic) : कुछ शैवाल तथा कवकों का लैंगिक प्रजनन जिसमें एक ही थैलस लैंगिक कार्य संपन्न करने के लिए भिन्न-भिन्न संगम प्ररूप (mating types) उत्पन्न करता है जिससे जाति उभयलिंगी (hermophrodite) हो जाती है। यह उभयलिंगी भी कहलाती है।

संमडल (coenobium) : शैवाली कोशिकाओं का समूह जिसमें कोशिकाओं की संख्या निर्माण के समय ही निश्चित हो जाती है तथा बाद में कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि नहीं होती है; सामान्यत: कोशिकाओं का विन्यास भी विशिष्ट होता है।

समयुग्मकता (isogamy) : कशाभी युग्मकों के बीच लैंगिक युग्मन जो आकारिकी में समान होते हैं व सामान्यत: एक ही माप के होते हैं।

समरूपी पीढ़ी (isomorphic generation) : पीढ़ियों के एकान्तरण में आकारिकी में समान कायिक अवस्थाएं।

सहसूत्र (paraphysis) : प्रजनन संरचना के समीप उगने वाला बंध्य तंतु; सहसूत्र रोम जैसा होता है तथा शाखित अथवा अशाखित हो सकता है।

स्थापनांग (holdfast) : आधार से जुड़ने के लिए किसी जीव का रूपांतरित आधारीय भाग जो बहुकोशिकीय अथवा एककोशिकीय होता है।

स्त्रीधानी रोम (trichogyne)	: लाल शैवालों में स्त्रीधानी का विस्तारण जिस पर अचल पुमणु संलग्न होते हैं।
सायनोफाइसिन कणिकाएं (cyanophycean granules)	: कणिकाओं के रूप में नील-हरित शैवालों की कोशिकाओं में पाया जाने वाला प्रोटीन युक्त संचित खाद्य।
सीटा (seta)	: कोशिका से एक दृढ़ विस्तार।
हेटैरोसिस्ट (heterocyst)	: कुछ तंतुमय नील-हरित शैवालों में पाई जाने वाली एक काफी विभेदित कोशिका जिसमें नाइट्रोजन यौगिकीकरण होता है।
हेमिसेलुलोस (hemicellulose)	: पादप कोशिका भित्ति का एक जटिल पॉलिसैकेराइड।

NOTES

NOTES

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGBY -01

पादप विविधता-1

खंड

2

कवक

इकाई 8

कवकीय आवास तथा आकारिकी 5

इकाई 9

कवकों में प्रजनन का तुलनात्मक अध्ययन 19

इकाई 10

कवकीय रोग 50

इकाई 11

मानव कल्याण में कवकों की भूमिका 71

इकाई 12

लाइकेन 87

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

प्रो. आर. एन. चोपड़ा
प्रोफेसर (सेवा निवृत)
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. आलोक मोइत्रा
भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी
दिल्ली

डा. (कु.) सरला
देशबंधु कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. सुश्री गुणवन्त सोखी
दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रो. एच. एन. वर्मा
लखनऊ विश्वविद्यालय

डा. बी. डी. वशिष्ठ
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय

स्व. डा. सुश्री तोशा भान
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

स्व. डा. कैलाश मंधान
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री अमृता निगम
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री जसवन्त सोखी
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.नु.वि.

खंड निर्माण समिति

प्रो. इ.आर.एस. तलपासाई
(विषय सम्पादक)
भूतपूर्व अध्यक्ष वनस्पति विज्ञान
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय

डा. एस. शंकरन (इकाई 9 और 10)
जमाल मोहम्मद कालेज
तिरूचिरापल्ली

मीनाक्षी प्रजनेशू (इकाई 10)
देशबंधु कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

स्व. डा. तोशा भान (इकाई 10 और 11)
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा (इकाई 8 से 12 तक)
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

अनुवाद

डा. कुमकुम चतुर्वेदी

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
इं.गां.रा.मु.वि.

पाठ्यक्रम संयोजक : डा. (सुश्री) स्वदेश तनेजा

जुलाई, 2002 (पुर्नमुद्रित)

©इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2001

ISBN 81-266-0177-9

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफ (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय मैदान गढ़ी, नई दिल्ली-68 से प्राप्त की जा सकती है।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के अनुमति से पुनः मुद्रित। उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से डॉ. रत्नाकर शुक्ल, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, नवम्बर 2006
मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद, फोन - 2548837 द्वारा मुद्रित। नवम्बर 2006

खंड 2 कवक

कवक पर्णहरित-विहीन, परपोषित, वास्तविककेन्द्रकी जीवों का महत्वपूर्ण समूह है, जिनके बारे में कभी ये माना जाता था कि ये वे पादप हैं जिनमें लवक (plastids) विकास के क्रम में लुप्त हो गए। इकाई 2 में आपने पढ़ा कि कवकों को पादपों में सम्मिलित नहीं किया गया है क्योंकि वे उत्पत्ति तथा संगठन में भिन्न होते हैं तथा अवशोषी (absorptive) प्रकार से पोषण के लिए अनुकूलित होते हैं। जंतुओं को अंतर्ग्राही (ingestive) पोषण द्वारा पहचाना जाता है तथा पादप प्रकाश संश्लेषी होते हैं। अतः अब कवक को अलग जगत् फंजाई (Fungi) में समूहित किया गया है।

कवक मृतजीवी या परजीवी के रूप में अथवा अन्य पादपों व जंतुओं के साथ सहजीवी साहचर्य में रहते हैं। मृतजीवी के रूप में वे जैविक पदार्थों को सरल प्रकार में विखंडित कर देते हैं जो पादपों की उत्तरजीविता के लिए आवश्यक होते हैं। दूसरी ओर, परजीवी कवक जैसे किट्ट (rust), कंड (smut) तथा रेड रॉट (red rot) पादपों में गंभीर रोग पैदा करते हैं तथा फसल को पूर्णतः नष्ट कर देते हैं जिससे अकाल पड़ जाते हैं। सहजीवी साहचर्य में ये प्रकाश संश्लेषी शैवालों के साथ लाइकेन (lichens) के रूप में तथा कवकमूल (mycorrhiza) के रूप में उच्च पादपों की जड़ों में रहते हैं। अतः हम पाते हैं कि कवक जीवों का बहुत ही महत्वपूर्ण समूह है अतः उनका विस्तृत अध्ययन करना आवश्यक है।

प्राचीन काल से ही मानव ने कवकों का उपयोग डेरी उत्पादों तथा ऐल्कोहॉली पेय पदार्थों को बनाने में किया है। लुई पाश्चर ने ऐल्कोहॉली किण्वन (alcoholic fermentation) के कारक तत्व के रूप में यीस्ट की खोज की। इससे श्वसन-क्रियाविधि को समझने व एन्जाइम्स को पहचानने में काफी सहायता मिली तथा आधुनिक जैवरसायन की आधारशिला रखी गई। आज बड़े स्तर पर कार्बनिक रसायन जैसे कि सिट्रिक अम्ल, लैक्टिक अम्ल, ग्लूटामिक अम्ल, प्रतिजैविक पेनिसिलिन, सेफैलोस्पोरिन, औद्योगिक एन्जाइम्स– डायस्टेस, पेक्टिनेस, सेलुलेस, औषधीय महत्व के यौगिक जैसे कि अर्गॉट ऐल्केलॉइड्स (ergot alkaloids) तथा अनेक स्टैरॉइड्स (steroids) के उत्पादन में अनेकों कवक जैसे *ऐस्पर्जिलस* (*Aspergillus*), *पेनिसिलियम* (*Penicillium*), *म्यूकर* (*Mucor*), *क्लैवीसेप्स* (*Claviceps*), *सेफैलोस्पोरियम* (*Cephalosporium*), *ट्राइकोडर्मा* (*Trichoderma*) तथा अन्य का उपयोग किया जाता है। सुविख्यात पादप वृद्धि नियंत्रक जिबरेलिन (gibberellin) की खोज मूल रूप से *जिबरेला फ्यूजीकुरोई* (*Gibberella fujikurai*) के कवकीय उत्पाद के रूप में की गई थी, जो चावल के पादप पर परजीवी होता है।

कवकों व उनकी जैविकी के अध्ययन ने जीवविज्ञान में अनेकों आधारीय समस्याओं को समझने में काफी सहायता की है। *न्यूरोस्पोरा* (*Neurospora*) पर बीडल तथा टैटम (Beadle and Tatum) के द्वारा अध्ययन के फलस्वरूप यह खोज की गई कि किसप्रकार जीन्स (डी.एन.ए.), एन्जाइम्स की संरचना तथा उत्पादन का निर्धारण करते हैं, जिसे सामान्यतः "एक जीन-एक एन्जाइम" परिकल्पना के नाम से जाना जाता है।

भारत में के.सी. मेहता के द्वारा परजीवी कवक जैसे *पक्सिनिया* (*Puccinia*) के विस्तृत अध्ययन ने किसानों को गेहूँ की फसल को विनाशकारी किट्ट रोग से बचाने में सहायता की।

भारत जैसे उष्णकटिबंधीय देश में अत्यधिक नमी के कारण अनाज, दालें, मूंगफली तथा अन्य खाने का सामान बहुत ही सामान्य रूप में पाए जाने वाले कवक *ऐस्पर्जिलस फ्लेवस* (*Aspergillus flavus*) के द्वारा संदूषित (contaminate) हो जाता है। यह एक शक्तिशाली विष ऐफ्लाटॉक्सिन (aflatoxin) उत्पन्न करता है। कुछ मशरूम खाने योग्य होते हैं जबकि कुछ मानव के लिए विषैले भी हो सकते हैं।

कवक का फलयुक्त पेड़ों की जड़ों से कवकमूल साहचर्य तथा बंजर भूमि में उगने वाले पेड़ों से साहचर्य जड़ों को अधिक फॉस्फेट अवशोषित करने में सहायक होता है क्योंकि यह मृदा में पाए

जाने वाले अघुलनशील फॉस्फेट खनिजों को घुलनशील बना देते हैं। मृदा में पाए जाने वाले कवक वनस्पति तथा जंतु जैविक पदार्थों के विघटन में सहायता करते हैं तथा कार्बन, नाइट्रोजन तथा अन्य तत्वों के प्रकृति में पुनर्चक्रण (recycling) की महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इस खंड में हम कवकों के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा करेंगे। इस खंड में 5 इकाइयां हैं, 8 से 12 तक।

इकाई 8 में, आप कवकों के आवास, आकारिकीय प्रकारों की श्रेणियों (range) तथा कवकतंतुओं की सूक्ष्म संरचना के बारे में पढ़ेगें।

इकाई 9 में कवकों में पाए जाने वाले प्रजनन के सामान्य तरीकों तथा कुछ प्रतिनिधि मृतजीवी तथा परजीवी कवकीय वंशों में प्रजनन के बारे में पढ़ेगे।

इकाई 10 में फसलों के कुछ प्रमुख कवकीय रोगों की चर्चा की गई है।

आगामी इकाई 11 में, हमने कवकों के आर्थिक महत्व की चर्चा की है।

लाइकेन में शैवाल तथा कवक के सहजीवी संबंध के संक्षिप्त वर्णन को कवकों की रियासत की तस्वीर को पूरा करने के लिए इकाई 12 में सम्मिलित किया गया है।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- कवकों को अन्य जीवों के समूहों से विभेदित कर सकेंगे,
- कवकों के सामान्य आकारिकीय गुणों का वर्णन तथा कवकों में पाई जाने वाली विभिन्न प्रकार की संरचनाओं की चर्चा कर सकेंगे,
- कवकों में पाए जाने वाले प्रजनन के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे,
- प्रमुख कवकीय रोगों की चर्चा कर सकेंगे,
- मानव जीवन में कवकों की लाभदायक तथा हानिकारक भूमिका की चर्चा कर सकेंगे, तथा
- हरित शैवाल व सायनोबैक्टीरिया के साथ कवकों के सहजीवी संबंध को समझा सकेंगे।

इकाई 8 कवकीय आवास तथा आकारिकी

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
उद्देश्य

8.2 कवकीय आवास

8.3 कवकों में पोषण तथा वृद्धि

8.4 कवकीय आकारिकी
एककोशिकीय प्रकारें
तंतुमय प्रकारें
कूटमृदूतकी प्रकारें

8.5 कवकों की सूक्ष्म संरचना

8.6 सारांश

8.7 अंत में कुछ प्रश्न

8.8 उत्तर

8.1 प्रस्तावना

आप संभवतः यीस्ट (yeast), रोटी की फंफूदी (bread mould), किट्ट यानि रस्ट (rust), कंड यानि स्मट (smut) तथा मशरूमों से परिचित होंगे। ये सभी कवक जगत् के सदस्य हैं। कवकों में विभिन्न प्रकार की संरचनाएं पाई जाती हैं: एककोशिकीय, प्लैज्मोडियम (plasmodium) जैसी, तंतुमय (filamentous) तथा कूटमृदूतकी (pseudoparenchymatous)। हालांकि, विभिन्न प्रकारें सामान्य कोशिकीय, कार्यिकीय तथा जैव रासायनिक गुण दर्शाती हैं। इस इकाई में, आप इन प्रकारों के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- कवक की प्रकृति तथा आवासों का वर्णन कर सकेंगे,
- आकारिकीय गुणों के आधार पर कवकों को जीवों के अन्य समूहों से विभेदित कर सकेंगे,
- कवकों में आकारिकीय प्रकारों की श्रेणियों (range) का वर्णन कर सकेंगे,
- कवकों में पोषण तथा वृद्धि के तरीकों की चर्चा कर सकेंगे तथा
- उचित उदाहरणों की सहायता से कवक की सूक्ष्म संरचना का वर्णन कर सकेंगे।

8.2 कवकीय आवास

कवक प्रकृति में बहुतायत में तथा विस्तृत रूप से फैले हुए हैं। ये वास्तव में पृथ्वी पर किसी भी आवास में पनप सकते हैं क्योंकि इनमें ऐसे किसी भी आधार का उपयोग करने की क्षमता होती है जिसमें जैविक यौगिकों की चाहे अति अल्प मात्रा ही उपस्थित हो। कवकीय बीजाणु (spores) मिट्टी, जल तथा वायु में पाए जाते हैं। वे कठोर पर्यावरणीय परिस्थितियों जैसे उष्ण

रेगिस्तानों, ठंडे पहाड़ों, पत्थरों तथा कहीं भी जीवित अथवा मृत जीवों पर भी उग सकते हैं। कवक जैविक पदार्थों को पचा लेते हैं तथा पोषक तत्वों को निर्मुक्त करते हैं। उदाहरण के लिए कवक कार्बन, नाइट्रोजन तथा फॉस्फोरस को निर्मुक्त करते हैं जब ये मृत पादपों तथा जंतुओं को पचाते हैं। जल में, कवक मृत तैरती हुई मछलियों पर पाये जाते हैं। आपने इन्हें पेन्ट्स, चमड़े, लकड़ी के लट्ठों, कपड़ों तथा चश्मे के लेन्सों पर उगते हुए भी देखा होगा। परजीवी के रूप में ये पादप तथा जंतु काया के अंदर उगते हैं तथा रोग पैदा करते हैं।

सामान्यतः कवक 0°C से 30°C के मध्य व इष्टतम (optimum) तापमान 20° से 30°C होने पर उगते हैं। अनेकों कवक 5° से 6°C के निम्न तापमान को ही नहीं बल्कि हिमीकरण से भी नीचे के तापमान को झेल सकते हैं। आपने फ्रिज में संतरों को सड़ते देखा होगा। यह हरी फफूंदी के संक्रमण के कारण होता है जो इतने कम तापमान पर भी उग सकती है। कुछ कवक 50°C तक के उच्च तापमान पर भी जीवित रह जाते हैं। कवक उच्च अतिपरासारी (hypertonic) माध्यम को भी सह लेते हैं। उदाहरण के लिए, वे जैली (jelly) पर भी उग जाते हैं।

बैक्टीरिया के विपरीत, कवक वृद्धि के लिए अम्लीय माध्यम को प्राथमिकता देते हैं, अनुसंधान किए गए अधिकांश कवकों के लिए छह के आसपास का पी.एच. (pH) इष्टतम पाया गया है।

8.3 कवकों में पोषण तथा वृद्धि

कवकों में क्लोरोफिल नहीं होता है अतः वे पोषण का परपोषित तरीका अपनाते हैं। वे मृतजीवी, परजीवी या सहजीवी के रूप में रहते हैं।

मृतजीवी कवक अपने आसपास उपस्थित जैविक आधारों से अपना पोषण प्राप्त कर लेते हैं। वे पहले उसे जलअपघटनी (hydrolytic) एन्ज़ाइमों के कोशिकाबाह्य (extracellular) स्रावों के द्वारा पचा लेते हैं और फिर उसे अवशोषित कर लेते हैं। उदाहरण के लिए, रोटी की फफूंदी रोटी में उपस्थित मांड (starch) को ग्लूकोस के रूप में पचाने के लिए ऐमिलेस (amylase) का स्रवण करती है जो शीघ्र ही कवकतंतु की श्लैज्मा झिल्ली के पार वाहित कर दिया जाता है। परन्तु, कोशिकीय अवपंक फफूंदी (cellular slime moulds) अवशोषण की बजाय भक्षकाणु क्रिया (phagocytosis) के द्वारा भोजन लेती हैं।

अनेकों कवक पादपों, जंतुओं तथा मानव के ऊपर परजीवी के रूप में रहते हैं। जंतु परजीवियों की भांति ही, कवक परजीवी भी या तो बाह्यपरजीवी होते हैं अथवा अंतःपरजीवी। आप जानते होंगे कि बाह्यपरजीवी परपोषी की सतह पर रहते हैं। बाह्यपरजीवी कवकों में, कवकतंतु परपोषी की सतह पर फैल जाता है तथा उससे एक विशेष अंग के द्वारा जुड़ जाता है जिसे आसंगांग (appressorium) कहते हैं। एक छोटा सा संक्रमण कीलक (peg) आसंगांग से उगता है तथा पोषण प्राप्त करने के लिए परपोषी ऊतक की बाह्यत्वचीय कोशिका में घुस जाता है। अंतःपरजीवी कवकों में कवकतंतु परपोषी के ऊतक के भीतर ही प्रशाखन करता है। परपोषी से भोजन का अंतःकोशिकी (intracellular) अवशोषण चूषकांग (haustoria) के द्वारा किया जाता है। कुछ परजीवी कवक अपने जीवनचक्र को पूरा करने के लिए दो परपोषियों का उपयोग करते हैं जिसका उदाहरण *पक्सिनिया ग्रैमिनिस* (*Puccinia graminis*) है जिसके बारे में आप अगली इकाई में पढ़ेंगे।

कवक विकल्पी (facultative) अथवा अविकल्पी (obligate) परजीवी हो सकते हैं। विकल्पी परजीवी वे होते हैं जो कुछ तंगहाल परिस्थितियों में परजीवी बनते हैं, जबकि अविकल्पी परजीवी उम्रभर परजीवी के रूप में रहते हैं।

सहजीवी कवक अन्य जीवों, अक्सर पादप के साथ अंतरंग परस्पर लाभदायक संबंध में रहते हैं। शैवालों के साथ निकट साहचर्य से, कवक एक जटिल जीव लाइकेन बनाते हैं। कवक का अन्य सामान्य रूप से पाया जाने वाला साहचर्य आवृतबीजी (ऐन्ज़ियोस्पर्म्स) तथा अनावृतबीजी (जिम्नोस्पर्म्स) पादपों की जड़ों के साथ होता है जिसे कवकमूल (mycorrhiza) कहते हैं। परजीवी कवक की भांति ही इस साहचर्य में भी कवकतंतु अंतराकोशिकी (intracellular) अवकाशों में से गुजरकर अनेकों ज़ीवित वल्कुटी (cortical) कोशिकाओं में घुस जाते हैं। (परांतःपोषित-endotrophic) अथवा कवकतंतु बड़ी मात्रा में वल्कुट में रहते हैं तथा सुविकसित बाहय कवक तंतु से जुड़े रहते हैं (बर्हिमुखांगी-ectotrophic)।

कुछ कवक उच्च पादपों की सतह पर भी बिना कोई खास क्षति पहुँचाए उगते हैं।

हालांकि कवक की वृद्धि के लिए प्रकाश की जरूरत नहीं होती है, फिर भी अनेकों जातियों में बीजाणुकजनन (sporulation) तथा बीजाणुओं के प्रकीर्णन (spore dispersal) के लिए कुछ प्रकाश आवश्यक होता है।

कवक पूर्णतः कवकतंतु की शीर्ष वृद्धि के द्वारा उगते हैं। कवकतंतु के शीर्ष पर लगभग 0.5 माइक्रो मी. शीर्ष लंबाई सुप्रेक्ष वृद्धि दर्शाती है। कोशिकाद्रव्यी अभिस्रवण (cytoplasmic streaming) एक दिशा में शीर्ष की ओर होता है जो सक्रिय विभेदन (differentiation) तथा केन्द्रकीय विभाजन (nuclear division) का स्थान होता है। कवकतंतु के शीर्ष के पीछे का भाग विभेदन के लिए असमर्थ होता है। संवर्धनों (cultures) में यह देखा गया है कि समूहों (colonies) की प्रकृति गोलाकार होती है तथा कवकतंतु केन्द्र से दूर परिधि की ओर उगते हैं। यह इसलिए होता है क्योंकि कवकतंतु अपने ही जीर्ण उत्पादों (staled products) के लिए ऋणात्मक रूप से रसायन-अनुवर्ती (chemotropic) होते हैं।

कुछ कवकों में कवकतंतु की संपूर्ण वृद्धि 1 कि.मी./दिन से ऊपर हो सकती है।

कवकतंतु की वृद्धि की दर विभिन्न कवकों में भिन्न-भिन्न होती है। *म्यूकर* की जातियां सबसे तेजी से उगने वाली जातियों में गिनी जाती हैं।

8.4 कवकीय आकारिकी

पहले चित्र 8.1 को गौर से देखिए जिसमें कुछ प्रचलित परंतु आकारिकीय रूप से भिन्न कवकों को दिखाया गया है। बेकर्स यीस्ट एककोशिकीय कवक है। यह आमाप में बहुत छोटा होता है तथा सामान्य सूक्ष्मदर्शी में पिन के शीर्ष जैसा दिखाई पड़ता है। अधिकांश कवक सूक्ष्मदर्शीय होते हैं परंतु कुछ बहुत बड़े आकार भी ग्रहण करते हैं उदाहरण के लिए मशरूम, मॉरेल्स (morels) तथा पफबॉल्स (puff balls) को बिना लैंस के आंखों से भी देखा जा सकता है। सूक्ष्मदर्शी में देखने पर अवपंक फफूंदी प्रोटोजोआ जैसे दिखती हैं जिसमें जीवद्रव्य का अनावृत अमीबाभ (amoeboid) पिंड होता है। रोटी की फफूंदी (*म्यूकर*), गुलाबी फफूंदी यानि पिंक मोल्ड (*न्यूरोस्पोरा*) तथा हरी फफूंदी यानि ग्रीन मोल्ड (*पेनिसिलियम*) में शाखित तंतु दिखायी पड़ते हैं। जबकि मशरूम, मॉरेल तथा पफबॉल फलन कायाएं (fruiting bodies) होती हैं जो कुछ अंतर्वयित (एक दूसरे में गुथे हुए) तंतुओं की पैकिंग के द्वारा बनती हैं। जब परिस्थितियां अनुकूल होती हैं तब फलन कायाएं कवक तंतुओं से विकसित हो जाती हैं जो अन्यथा मृदा की सतह के नीचे उगते हैं। मशरूम में छतरीनुमा टोपी तथा वृंत या छत्रिकावृंत (stipe) होता है।

कवकों में प्रजनन संरचनाएं कायिक संरचनाओं से बनती हैं तथा विभिन्न प्रकार की होती हैं जिनके आधार पर कवकों को वर्गीकृत किया जाता है। इकाई 2 में आपने पढ़ा कि कवकों को सात प्रभागों (divisions) में वर्गीकृत किया गया है (देखिये ब्लाक 1 अ, पृष्ठ 38)। इन प्रभागों के कुछ सदस्यों की सूची नीचे दी गई है।

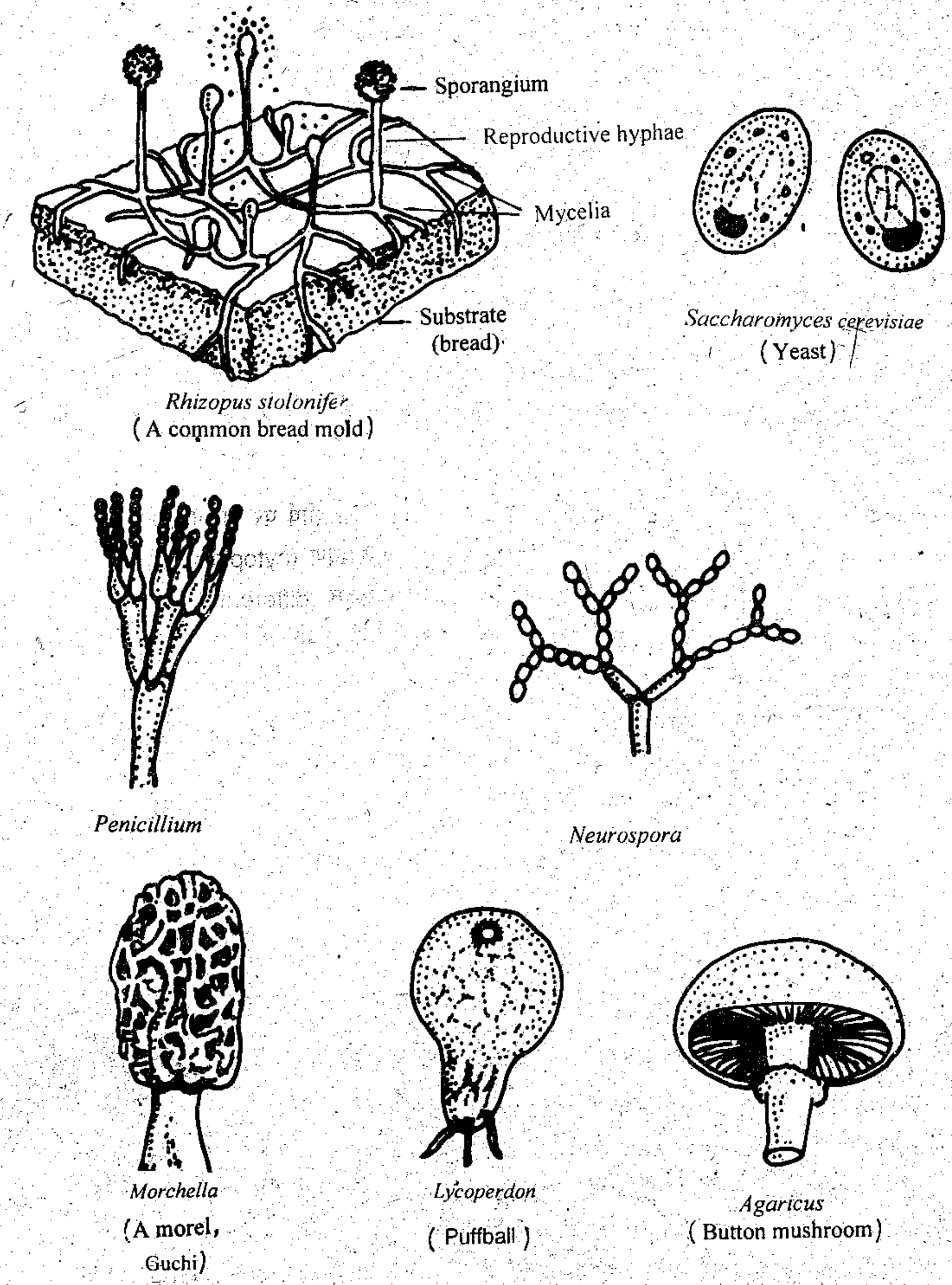

चित्र 8.1: कुछ सामान्य कवक।

आगे आप कवकों में पाई जाने वाली श्रेणियों के बारे में पढ़ेंगे।

8.4.1 एककोशिकीय प्रकारें

यीस्ट

कवक एककोशिकीय, अक्सर बहुकोशिकीय या अकोशिकीय वास्तविक केन्द्रकी जीव होते हैं। सबसे प्रचलित एककोशिकीय कवक यीस्ट (yeast) है, जो विस्तृत रूप से पाए जाते हैं। यीस्ट पके फलों की चिपचिपी शर्करायुक्त सतह पर पाए जाते हैं तथा किसी भी शर्करा युक्त घोल में उग सकते हैं। वैयक्तिक कोशिकाएं एक-दूसरे से जुड़ कर शृंखला (chain) बनाती हैं। एकल

प्रभाग	उदाहरण
मिक्सोमाइकोटा (Myxomycota)	*फाइजेरम (Physarum), डिक्टियोस्टीलियम डिस्कॉइडियम (Dictyostelium discoideum)*
ऊओमाइकोटा (Oomycota)	*पिथियम (Pythium), फाइटोफ़्थोरा (Phytophthora), ऐल्बूगो (Albugo)*
काइट्रिडियोमाइकोटा (Chytridiomycota)	*ऑल्पीडियम (Olpidium)*
जाइगोमाइकोटा (Zygomycota)	*म्यूकर (Mucor), राइजोपस (Rhizopus)*
एस्कोमाइकोटा (Ascomycota)	*ऐस्पर्जिलस (Aspergillus), पेनिसिलियम (Penicillium), न्यूरोस्पोरा (Neurospora), सैकैरोमाइसीज सेरेविसी (Saccharomyces cerevisiae)* (यीस्ट), *मार्केला* स्पी. (*Morchella* sps.) मॉरेल्स, ट्रफेल्स (Truffles)
बेसिडियोमाइकोटा (Basidiomycota)	*ऐगेरिकस (Agaricus), क्लैवीसेप्स (Claviceps), आस्टिलैगो (Ustilago), पक्सिनिया (Puccinia)*
ड्यूटरोमाइकोटा (Deuteromycota)	*क्लैडोस्पोरियम (Cladosporium), स्पोरोथ्रिक्स (Sporothrix)*

कोशिकाएं काचाभ (hyaline) होती हैं परंतु समूह (कॉलोनियाँ) हरे या भूरे से रंग की दिखाई पड़ते हैं। यीस्ट की कोशिका की सूक्ष्म संरचना जैसी कि चित्र 8.2 a में दिखाई गई है, वास्तविक केन्द्रकी प्रकार की होती है। इसमें सुविकसित केन्द्रक, माइटोकॉन्ड्रिया, अंतर्द्रव्यी जालिका तथा अन्य उपांग होते हैं। केन्द्रक के पास ही, कोशिकाद्रव्य का एक बड़ा भाग रसधानी द्वारा अधिग्रहित होता है। यीस्ट की कोशिका भित्ति 2-3 परतों की होती है जो काइटिन तथा पॉलिसैकेराइड्स-ग्लूकैन तथा मैनैन की बनी होती है। विकास की अवस्था के आधार पर विभिन्न मात्राओं में प्रोटीनें, लिपिड् तथा अन्य पदार्थ कोशिका में एकत्रित हो जाते हैं।

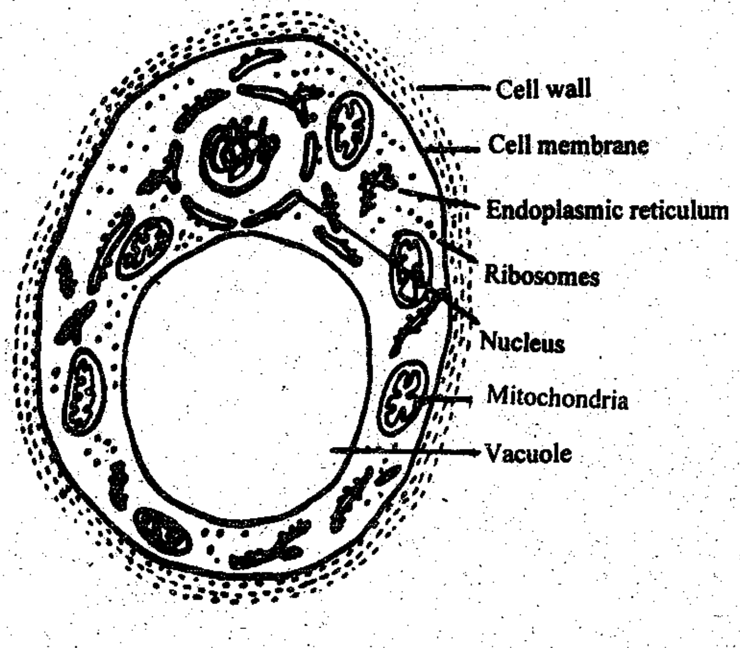

Socchuromyces

a

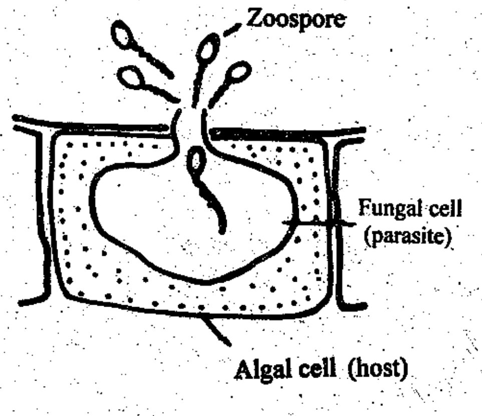

Olpidium in algal cell

b

चित्र 8.2 : (a) यीस्ट की सूक्ष्म संरचना (b) काइट्रिड, *ऑल्पीडियम* (*Olpidium*)

यीस्ट पृथ्वी की सतह पर अच्छी तरह से फैले हुए हैं। वे उन आधारों में बहुतायत में पाए जाते हैं जिनमें शर्करा होती है, जैसे फूलों के मकरंद तथा फलों की सतह पर। वे मिट्टी, जंतुओं के मल तथा दूध व पादपों के कायिक भागों पर तथा अन्य आवासों में भी पाए जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि यीस्ट की एककोशिकीय अवस्था, जो शर्करायुक्त घोलों में विकसित होती है वह काफी विशिष्ट होती है। यह अवस्था कवकों में और कहीं नहीं पाई जाती है हालांकि यीस्ट-जैसी अवस्था *म्यूकर* की कुछ जातियों में भी देखी गई है जब उनको ग्लूकोस के गाढ़े घोल में उगाया जाता है। इसी प्रकार, स्मट का बीजाणु भी यीस्ट की भांति लगातार विभाजित होता रहता है यदि उसे पोषक ऐगार माध्यम में रख दिया जाता है।

यीस्ट को विशेषतौर पर उनकी कार्बोहाइड्रेट्स को उपयोग करने की क्षमता के कारण जाना जाता है, इसीलिए इस समूह के लिए सैकैरोमाइसिटीज नाम का प्रयोग किया जाता है।

अन्य एककोशिकीय कवक-*ऑल्पीडियम* हैं (चित्र 8.2 b), यह एक सरलतम काइट्रिड है जो साधारण गोलाकार कोशिका है जिसमें शाखान नहीं होता है।

अवपंक फफूदियाँ (slime moulds)

अवपंक फफूदियों (slime moulds) में उनके जीवनचक्र की किसी अवस्था के दौरान एककोशिकीय प्रकारें भी दिखायी पड़ती हैं (चित्र 8.3)। आपको ध्यान होगा कि अवपंक फफूंदी को वास्तविक कवक नहीं माना जाता है। इनमें प्रोटोज़ोआ तथा कवकों दोनों के गुण पाए जाते

भक्षकाणुक्रिया

वह प्रक्रिया जिसमें कोशिका अपने आस-पास के कणों को घेर लेती है तथा उन्हें कोशिकाद्रव्य में ले लेती है।

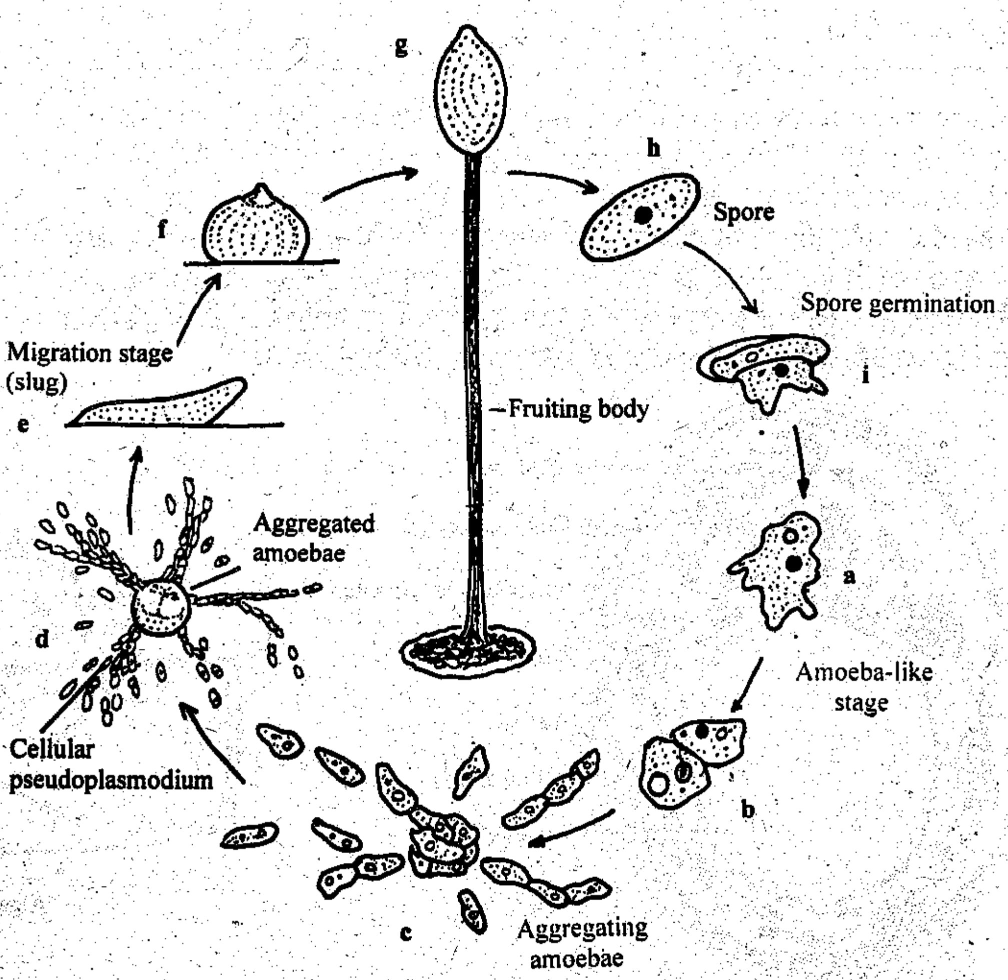

चित्र 8.3: कोशिकीय अवपंक फफूदी *डिक्टियोस्टीलियम डिस्कॉइडियम* का जीवन चक्र।

हैं। इसलिए अवपंक फफूंदी को वर्गीकृत करना कठिन है। ये विलक्षण जीव एककोशिकीय (बहुकेन्द्रकी) प्रोटोज़ोआ तथा बहुकोशिकीय कवकों जैसी अवस्थाएं अपने जीवन चक्र के दौरान दर्शाते हैं।

अधिकांश अवपंक फंफूदी ठंडे, छायादार, नम स्थानों पर काष्ठ, सड़ते हुए लट्ठों, मृत पत्तियों अथवा अन्य जैविक पदार्थों पर रहती हैं जो बहुतायत में नमी को रोके रख सकते हैं।

अवपंक फफूंदियों को आगे, कोशिकीय अवपंक फफूंदियां तथा प्लैज़्मोडियल अवपंक फफूंदियों के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।

कोशिकीय प्रकार

कायिक अवस्था में *डिक्टियोस्टीलियम डिस्कॉइडियम* (*Dictyostelium discoideum*), जो एक कोशिकीय अवपंक फंफूदी है वह छोटी, स्वतंत्र, एककेन्द्रकी अगुणित कोशिका होती है जो मिक्सअमीबा (myxamoeba) कहलाती है (चित्र 8.3 a)। अमीबा की भाँति ही यह भक्षकाणुक्रिया के द्वारा बैक्टीरिया को खाती है तथा द्वि-विभाजन के द्वारा गुणन करती है। बाद की अवस्था में वैयक्तिक मिक्सअमीबा पास-पास आते हैं तथा एक एकल बहुकेन्द्रकी स्लग slug) बनाते हैं परंतु वैयक्तिक मिक्सअमीबा अपनी कोशिका झिल्ली को अक्षुण्ण बनाए रखते हैं (चित्र 8.5 b से e)। यह संरचना कूटप्लैज़्मोडियम कहलाती है।

प्रजनन अवस्था में, बीजाणु लिए हुए बीजाणुधानियां बन जाती हैं जैसी कि वास्तविक कवक में बनती हैं (चित्र 8.3 f से h)। प्रत्येक बीजाणु अंकुरित होकर अमीबा जैसी संरचना बनाता है (चित्र 8.3 i)।

प्लैज़्मोडियल प्रकार

प्लैज़्मोडियल अवपंक फंफूदी में, जैसे कि *एकाइनोस्टीलियम माइन्यूटम* (*Echinostelium minutum*) में, कायिक अवस्था में बहुकेन्द्रकी अमीबाभ कोशिकाद्रव्य का बड़ा पिंड, विशिष्ट द्विगुणित केन्द्रकों के साथ बनता है (चित्र 8.4 a)। परंतु कोशिकीय अवपंक कवकों के विपरीत वैयक्तिक कोशिकाएं कोशिका झिल्ली के द्वारा अलग-अलग नहीं होती हैं। कोशिका भित्ति अनुपस्थित होती है। यह पुटीभूत (encysted) मिक्सअमीबा तथा जीवाणु का भक्षण करता है तथा बड़े क्षेत्र में फैल सकता है। प्लैज़्मोडियम का निश्चित आमाप या आकार नहीं होता है। यह गोलाकार, चपटा, तथा पट्टिकानुमा बड़े क्षेत्र में बहुत ही महीन जाल के रूप में फैलने वाला हो सकता है (चित्र 8.4 b)। जब प्लैज़्मोडियम आधार की सतह पर रेंगता है तो यह उसी के अनुसार अपना आकार बदल लेता है तथा राह में आने वाले खाने के कणों को निगल लेता है। अंततः यह वयस्क हो जाता है तथा जाति विशेष के प्रारूपिक फलन (fructification) में परिवर्तित हो जाता है (चित्र 8.4 c तथा d)। संपूर्ण प्लैज़्मोडियम फलनों के बनने में भाग लेता है, जो अर्धसूत्री विभाजन के फलस्वरूप बनने वाले बीजाणुओं को धारण किए रहते हैं। बीजाणु अंकुरित होकर कशाभयुक्त (flagellated) कोशिकाएं बनाते हैं जो प्लैज़्मोडियम में विकसित हो जाती हैं (मिक्सअमीबा चित्र 8.4 e से i)।

अवपंक फफूंदियां अक्सर चटक रंगों की होती हैं जो रंगहीन से लेकर चमकीले धूसर, काले, बैंगनी, नीले, हरे, पीले, नारंगी तथा लाल रंग की हो सकती हैं। पीले तथा सफेद प्लैज़्मोडिया संभवतः सबसे अधिक पाए जाते हैं। प्लैज़्मोडियम के अंदर होते हुए रंगों में परिवर्तनों को प्रयोगशाला की स्थितियों में देखा जा सकता है।

फाइज़ेरम पॉलिसिफेलम (*Physarum polycephalum*) के प्लैज़्मोडियम का निर्माण तथा संरचना पर किए गए अध्ययन दर्शाते हैं कि प्लैज़्मोडियम का जीवद्रव्य आभासी रूप से संरचना-विहीन होता है तथा इसमें कणिकाएं, रसधानियां तथा विभिन्न अन्य पदार्थ धंसे रहते हैं।

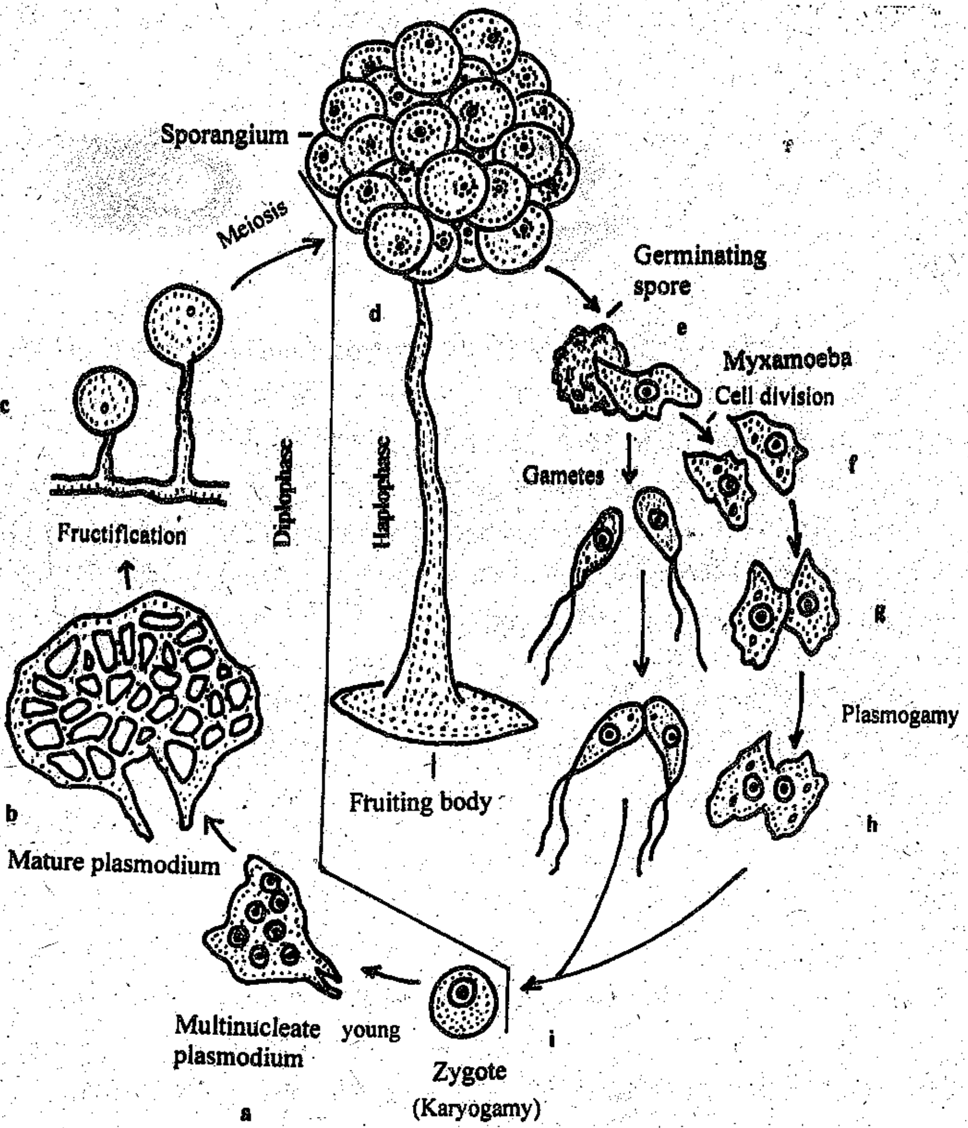

चित्र 8.4 : प्लैज़्मोडियल अवपंक फंफूदी *एकाइनोस्टीलियम माइन्यूटम* का जीवन चक्र।

प्लैज़्मोडियन में जीवद्रव्य का अभिस्त्रवण सूक्ष्मदर्शी में देखने पर एक दिलचस्प प्रक्रिया दिखाई पड़ती है। जीवद्रव्य का अभिस्रवण संकुचन प्रोटीन मिक्सोमायॉसिन (myxomyosin) की उपस्थिति से संबंधित होता है जो प्लैज़्मोडियम में उपस्थित होती है।

8.4.2 तंतुमय प्रकारें

अधिकांश कवक तंतुमय होते हैं। आपने बासी डबलरोटी के टुकड़े पर बहुत ही बारीक तथा नाजुक धागों के जाल को देखा होगा। ये तब बनते हैं जब कवक का बीजाणु डबलरोटी पर गिरता है और एक नलिका जैसी बर्हिवृद्धि में अंकुरित होता है जो आगे चलकर सभी दिशाओं में पारदर्शी नलिकाकार तंतुओं के रूप में उगती है। इनमें से प्रत्येक तंतु कवकतंतु (hyphae) कहलाता है, जो कवकीय काया की मूल इकाई है। अंतर्वयित (interwoven) कवकतंतुओं का पिंड जो कवक की काया बनाता है वह कवक जाल माइसीलियम (sing. mycelium, plur. mycelia) कहलाता है (चित्र 8.1)। यह बहुत अधिक छितरे हुए कवकतंतुओं का बना हो सकता है अथवा यह कवकतंतु का रुई जैसा पिंड हो सकता है। वायवीय कवकतंतु जो प्रजनन संरचनाओं को धारण करते हैं वे प्रजनन कवकतंतु (reproductive hypae) कहलाते हैं। कवक जाल में सतह व आयतन का बृहत् अनुपात होता है तथा यह खाने के स्त्रोत के समीप होता है। यह विशाल सतह आयतन का अनुपात अवशोषी तरीके से पोषण के लिए बेहतरीन अनुकूलन है।

कवकों का माइसीलियम यानि कवकजाल कोशिका भित्ति से ढका रहता है जो एक पॉलिसैकेराइड काइटिन (chitin) की बनी होती है, यह कीटों तथा क्रस्टेशियाई (crustaceans) जीवों के बहिःकंकाल में भी पाई जाती है। हालांकि, कुछ कवकों की कोशिका भित्ति में सैलुलोस तथा लिग्निन जैसे तत्व भी पाये जाते हैं। माइसीलियम का जीवद्रव्य पूरे माइसीलियम में सतत् हो सकता है जिससे कुछ केन्द्रक पूरे कोशिकाद्रव्य में छितरे हुए हो सकते हैं। यह अवस्था संकोशिकी (coenocytic) कहलाती है (चित्र 8.5 b)। ऐसे पट-विहीन (non-septate) कवकतंतु प्रभाग जाइरोमाइसिटीज के सदस्यों में देखे जा सकते हैं उदाहरण के लिए *म्यूकर* व *राइजोपस*। पट-विहीन कवकजाल यानि माइसीलियम में पट या अनुप्रस्थ भित्तियां सिर्फ प्रजनन संरचनाओं को अलग करने के लिए अथवा क्षतिग्रस्त भाग को बंद करने के लिए बनती हैं, ऐसे पट बिना किसी छिद्र वाली ठोस पट्टिका होते हैं।

अन्य वर्गों के कवकों के सदस्य जैसे एस्कोमाइसिटीज तथा बेसिडियोमाइसिटीज उदाहरण *ऐस्पर्जिलस* तथा *पेनिसिलियम* आंतरिक अनुप्रस्थ भित्तियां विकसित कर लेते हैं यानि कि ऐसे पट (septa) जो कवकतंतु को खंडों में विभाजित करते हैं। पट नियमित अंतरालों पर दिखाई पड़ते हैं। ये खंड एककेन्द्रकी अथवा बहुकेन्द्रकी हो सकते हैं।

इन कवकों में, पटों में छिद्र होते हैं जिनसे होकर कोशिकाद्रव्यी रज्जुक (strands) केन्द्रकों सहित एक कोशिका से दूसरी कोशिका में आ जा सकते हैं (चित्र 8.5 a)। पटों की उपस्थिति कवकतंतु को यांत्रिक बल प्रदान करती है। प्रजनन संरचनाएं भी कायिक संरचनाओं से पटों के द्वारा अलग रहती हैं परंतु ये छिद्रित नहीं होती हैं।

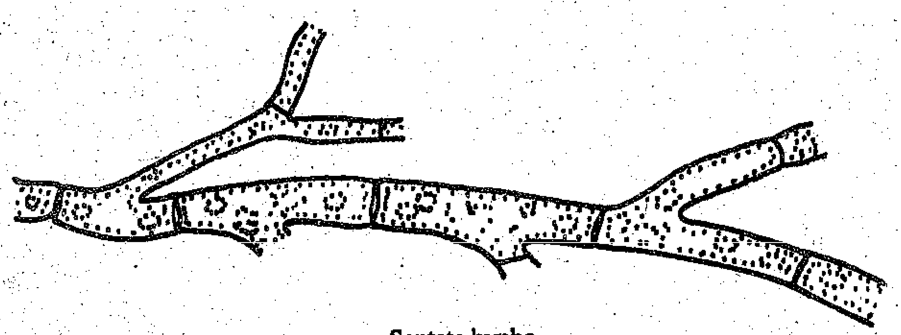

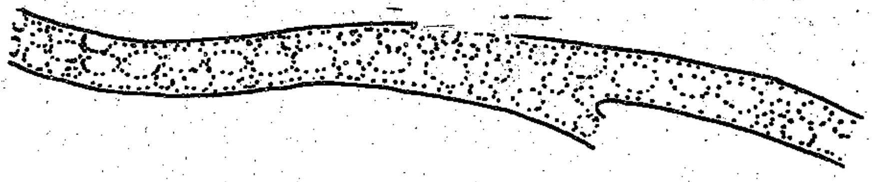

चित्र 8.5 : कवकों के प्रारूपी पटयुक्त तथा पटविहीन कवकतंतु।

कवकों के कुछ समूहों में बीजाणु के अंकुरण पर निर्मित होने वाला माइसीलियम आरंभ में एककेन्द्रकी (monokaryotic) खंडों का बना होता है। यह प्राथमिक कवकजाल (माइसीलियम) कहलाता है। बाद में जब या तो एक ही कवकजाल के कवकतंतुओं के बीच में अथवा भिन्न-भिन्न कवकजाल के कवकतंतुओं के खंडों के बीच युग्मन होता है, तो खंडों में दो केन्द्रक हो जाते हैं (द्विकेन्द्रकी)। यह रूपांतरण द्विकेन्द्रकीभवन (dikaryotisation) कहलाता है तथा कवकजाल द्वितीय माइसीलियम यानि द्वितीय कवकजाल कहलाता है। यह अवस्था लंबे समय तक रह सकती है। जब यह माइसीलियम एक विशेषीकृत संरचना में संगठित हो जाता है तब यह तृतीयक माइसीलियम या कवकजाल कहलाता है।

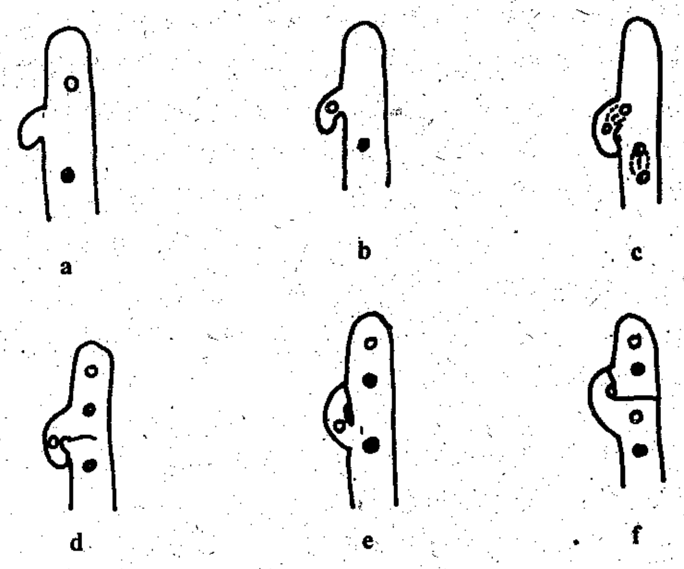

चित्र 8.6 : बेसिडियोमाइसिटीज में क्लैम्प कनैक्शन के बनने के द्वारा द्विकेन्द्रकी कवकतंतु खंड का विभाजन।

द्विकेन्द्रकी कवकतंतुओं के खंडों (segments) का विभाजन बेसिडियोमाइसिटीज में काफी विलक्षण होता है। द्विकेन्द्रकी अंतरस्थ खंड (terminal segment) एक छोटी पार्श्व बर्हिवृद्धि विकसित कर लेता है। यह विस्तारित हो जाती है तथा एक खूंटी (hook) का आकार ले लेती है और अपने साथ वाले खंड से जुड़ जाती है। यह कलैम्प कनैक्शन (clamp connection) कहलाता है (चित्र 8.6 a से c)। दोनों केन्द्रक साथ-साथ विभाजित होते हैं। जब एक केन्द्रक क्लैम्प के अंदर चला जाता है तब एक पट क्लैम्प की उत्पत्ति के स्थान पर तथा दूसरा पट कवकतंतु के खंड में बनाता है जिससे एक नया द्विकेन्द्रकी खंड बन जाता है जिसमें दो केन्द्रक होते हैं (चित्र 8.6 d से f)।

8.4.3 कूटमृदूतकी प्रकारें

जैसा कि पहले बताया गया है, कवक का माइसीलियम एक ढीले रूप में अंतर्वयित कवकतंतु का पिंड (mass) होता है जो जाल बनाता है। कुछ कवकों में संपूर्ण माइसीलियम अथवा उसके भागों में विभिन्न रूपांतरण हो जाते हैं। कवकतंतुओं के पिंड में उनकी भित्तियां मिल जाती हैं तथा ये अपनी वैयक्तिकता खो देती हैं। इसके फलस्वरूप कवकतंतु पिंड की अनुप्रस्थ काट में एक सतत् संरचना दिखाई पड़ती है। यह उच्च पादपों में पाए जाने वाले वास्तविक मृदूतक जैसी नहीं होती है। कवकों में ऐसा ऊतक आभासी मृदूतक (plectenchyma) कहलाता है।

अक्सर, बहुत से कवकों में कवकतंतु एकत्रित हो जाते हैं तथा, विभिन्न संरचनाओं में संगठित हो जाते हैं जो कायिक या प्रजनन प्रकृति की हो सकती हैं। ऐसी संरचनाओं के कुछ उदाहरण पीठिका (stroma), स्क्लैरोशियम (sclerotium) तथा तंतुजटा (rhizomorph) हैं (चित्र 8.7 a से c)।

पीठिका *डेल्डीनिया* (*Daldinia*) में बनने वाली एक अनिश्चित काया है। यह सामान्यतः प्रजनन संरचनाओं को विकसित करती है।

स्क्लैरोशियम कठोर तथा विश्रान्ति कायाएं (resting bodies) हैं। ये *क्लैवीसेप्स* स्पी. में बनते हैं। स्क्लैरोशियम में आंतरिक कोशिकाएं काचाभ होती हैं तथा भोजन संग्रह करती हैं और बाह्य कोशिकाएं मोटी भित्ति वाली, काली तथा पपड़ी जैसी होती हैं।

कुछ कवकों में, कवकतंतु वैयक्तिकता खो देते हैं तथा मोटे, गहरे भूरे, कठोर रज्जुक बनाते हैं। ये तंतुजटा कहलाते हैं क्योंकि ये जड़ों जैसे लगते हैं।

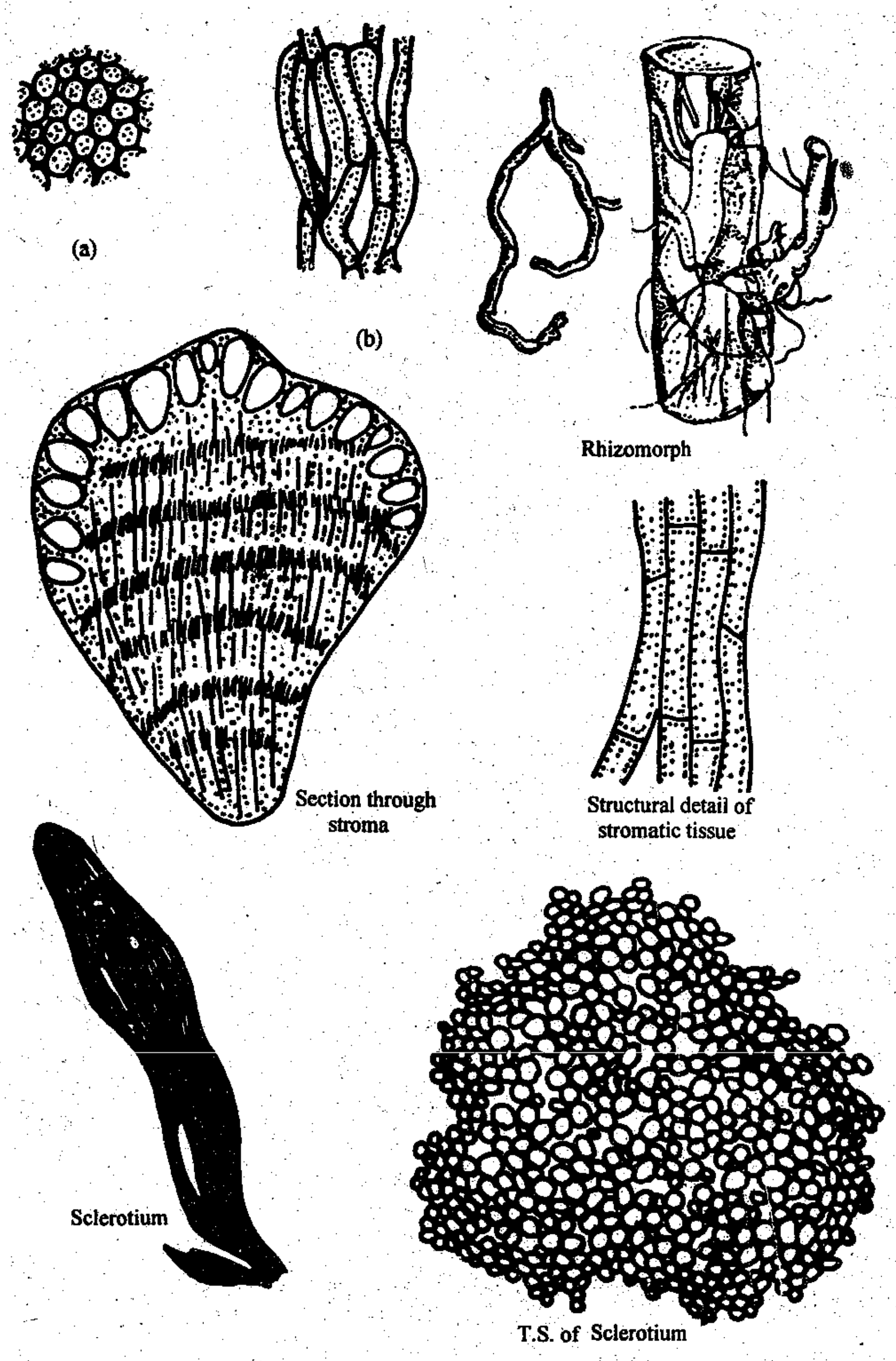

चित्र 8.7 : कवकतंतु के इकट्ठा होने से विभिन्न संरचनाओं का बनना

आभासी मृदूतकों को भी दो प्रकारों में बांटा गया है। गोल कवकीय कोशिकाओं वाला कूटमृदूतक (pseudoparenchyma) कहलाता है तथा कम सघन दीर्घीकृत कोशिकाओं वाला दीर्घ ऊतक (prosenchyma) कहलाता है (चित्र 8.7)।

परजीवी कवकों में कवकतंतु परपोषी की कोशिका भित्ति के जरिए कोशिका में दाखिल हो सकते हैं तथा पोषण प्राप्त करने के लिए चूषकांग (haustoria) बना लेते हैं। ये लंबाई में अपेक्षाकृत कम होते हैं। विभिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न आकारों के चूषकांग देखे गए हैं (चित्र 8.8)।

मॉरेल्स (ऐस्कोमाइसिटीज) तथा मशरूमों (बेसिडियोमाइसिटीज) में कवकतंतुओं का कूटमृदूतकी पिंड फलन कायाएं बनाता है। आप उनके बारे में अगली इकाई में पढ़ेंगे।

8.5 कवकों की सूक्ष्म संरचना

कवकतंतु की परासंरचना का अध्ययन दर्शाता है कि यह प्रारूपिक वास्तविक केन्द्रकी कोशिका के समान होता है। इसमें कोशिका भित्ति काइटिन (अथवा कवकीय सेलुलोस जैसे कि ऊओमाइसिटीज में) की बनी होती हैं। कोशिका भित्ति के कार्य निश्चित रूप से हरे पादपों की भांति ही होते हैं क्योंकि यह जल तथा पदार्थों के वास्तविक विलयनों के लिए पारगम्य होती है। कोशिका भित्ति के बाद ही प्लैज़्मा झिल्ली होती है जो कवकतंतुओं में विलायकों (true solution) के आवागमन को नियंत्रित करती है। कुछ झिल्लीनुमा संरचनाएं, कोशिका भित्ति तथा प्लैज़्मा झिल्ली के बीच में देखी गई हैं। केन्द्रक दोहरी झिल्ली से घिरे रहते हैं। झिल्ली में छिद्र होते हैं। वे सुविकसित केन्द्रिक (nucleolus) तथा क्रोमेटिन रज्जुक दर्शाते हैं। परंतु केन्द्रक अधिकांश अन्य वास्तविक केन्द्रकी जीवों के केन्द्रक की तुलना में आमाप में छोटे होते हैं। एक कोशिकीय यीस्ट की परासंरचना को चित्र 8.2 में दिखाया गया है।

केन्द्रकीय विभाजन के दौरान केन्द्रक झिल्ली (nuclear membrane) अदृश्य नहीं होती है बल्कि केन्द्रक डंबल (dumbell) की तरह सिकुड़ जाता है जो अंततः विभाजित होकर दो केन्द्रक बनाता है। कवकों का केन्द्रक समसूत्री विभाजन की विभिन्न स्थितियों के विशिष्ट लक्षणों को दर्शाता है। परन्तु उसके केन्द्रक की झिल्ली बरकरार रहती है। इस प्रकार का कोशिका विभाजन आन्तरकेन्द्रकीय कहलाता है।

कोशिकाद्रव्य सुविकसित अंतर्द्रव्यी जालिका (endoplasmic reticulum), राइबोसोम्स, माइक्रोबॉडीज, सूक्ष्म नलिकाएं (microtubules), रसधानियां (vacuole), लिपिड बॉडीज तथा क्रिस्टल्स दर्शाता है। राइबोसोम्स बैक्टीरिया की तरह कोशिकाद्रव्य में मुक्त रूप से पाए जाते हैं तथा सामान्यतः अंतर्द्रव्यी जालिका से संबद्ध नहीं होते हैं। कोशिकाद्रव्य में एक या अधिक रसधानियां भी पाई जा सकती हैं जो टोनोप्लास्ट द्वारा घिरी रहती हैं। प्रभाग ऊओमाइकोटा में चल-बीजाणु यानि जूस्पोरों (zoospores) तथा युग्मकों में कशाभ पाए जाते हैं।

बोध प्रश्न 8.1

अ) निम्नलिखित में से कौन से कथन, सत्य या असत्य हैं ? सत्य के लिए **स** तथा असत्य के लिए **अ** दिए गए खानों में लिखें।

i) कवक अपर्णहरित जीव होते हैं। ☐

ii) कवक वृद्धि के लिए अम्लीय माध्यम को प्राथमिकता देते हैं। ☐

iii) प्रभाग ऊओमाइकोटा के कवकों की कोशिका भित्ति काइटिन की बनी होती है। ☐

iv) कवक जैविक पदार्थों का उपयोग कर सकते हैं। ☐

v) यीस्ट की कोशिका पूर्वकेन्द्रकी प्रकार की होती है। ☐

vi) कवकों में अधिकांश वंश बहुकोशिकीय होते हैं तथा कुछ एककोशिकीय होते हैं। ☐

vii) अवपंक फंफूदी में कोशिका भित्ति अनुपस्थित होती है। ☐

ब) निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से पूरा कीजिए।

i) कवक की काया .... की बनी होती है।

ii) पोषण के आधार पर कवक .... होते हैं।

iii) कवक आधार पर परजीवी, मृतजीवी अथवा .... के रूप में रहते हैं।

iv) कवक में केन्द्रकी विभाजन .... कहलाता है।

स) निम्नलिखित कथनों में कोष्ठकों में दिए गए विकल्पों में से सही शब्द चुनिए।

i) वह अवस्था जिसमें कवकतंतु में बहुत से केन्द्रक बिना अनुप्रस्थ भित्तियों के रहते हैं वह (संकोशिकी/केन्द्रकी) कहलाती है।

ii) वर्ग (जाइगोमाइसिटीज/बेसिडियोमाइसिटीज) के कवकों में पटयुक्त माइसीलियम होता है।

iii) कवकतंतुओं के मोटे रज्जुकों का समुच्चय जो जड़ों जैसा दिखाई पड़ता है वह (तंतुजटा/मूलाभास) कहलाता है।

iv) कवकों की कोशिका में (क्लोरोप्लास्ट/जीवद्रव्य) नहीं पाया जाता है।

8.6 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा :

- कवक ऐसे विभिन्न आधारों पर उग सकते हैं जिनमें जैविक तत्वों की जरा-सी मात्रा होती है। कुछ सदस्य तापमान तथा विलेय की परासरणी सान्द्रता की चरम अवस्थाओं में भी उग सकते हैं।
- कवक मृतजीवी, परजीवी या सहजीवी के रूप में रहते हैं। मृतजीवी कवक प्रकृति में महत्वपूर्ण अपघटक हैं। एन्जाइमों के कोशिकाबाह्य स्त्रावों द्वारा वे जैविक पदार्थों को पचा लेते हैं तथा पोषक तत्वों के पचे हुए भाग को अवशोषित कर लेते हैं। बचा हुआ पदार्थ अन्य जीवों के द्वारा पुनर्चक्रण के लिए निर्मुक्त कर दिया जाता है। अनेक कवक परजीवी होते हैं तथा पादपों, जंतुओं व मनुष्यों में कुछ रोग उत्पन्न करते हैं। कवक शैवाल तथा उच्च पादपों के साथ सहजीवी साहचर्य में, क्रमशः लाइकेन्स तथा कवकमूल बनाते हैं।
- कवक आकारिकीय प्रकारों की श्रेणियां दिखाते हैं। एककोशिकीय कवक जैसे यीस्ट दुर्लभ होते हैं। अवपंक फंफूदी जीवन चक्र की किसी अवस्था में या तो एक-कोशिकीय अथवा प्लैज्मोडियम जैसे होते हैं।
- अधिकांश कवक बहुकोशिकीय शाखित तंतु होते हैं। माइसीलियम कवकीय काया का मुख्य भाग होता है। प्रजनन संरचनाएं विशेष प्रजनन कवकततुंओं पर उगती हैं।
- जब संपूर्ण माइसीलियम अथवा उसका कोई भाग समुच्चयित हो जाता है तो विभिन्न प्रकार की संरचनाएं उत्पन्न होती हैं तथा विभिन्न विशिष्ट संरचनाएं — पीठिका, स्क्लैरोशियम, तंतुजटा तथा अन्य बनती हैं।
- कवकतंतु की सूक्ष्म संरचना प्रारूपिक वास्तविक केन्द्रकी कोशिका के समान होती है। अधिकांश कवकों में यह सेलुलोस की बजाय काइटिन की बनी हुई कोशिका भित्ति से घिरी रहती है। क्लोरोप्लास्ट के अतिरिक्त अन्य सभी कोशिका उपांग कवकों में पाए जाते हैं।
- केन्द्रक छोटे होते हैं तथा अंतःकेन्द्रकी विभाजन होता है। कवकतंतु में अनेकों रसधानियां पाई जा सकती हैं।

8.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. प्लैज़्मोडियम अवपंक फंफूदी की क्या मुख्य विशेषताएं हैं?

....

....

....

2. कूटमृदूतक क्या है? यह किस प्रकार बनता है तथा यह कहां पाया जाता है ?

....

....

....

8.8 उत्तर

बोध प्रश्न

8.1. अ) i) स ii) स, iii) अ, iv) स, v) अ, vi) स, vii) स

8.2. ब) i) माइसीलिया, ii) परपोषित, iii) सहजीवी, vi) आन्तराकेन्द्रकीय

8.3. स) i) संकोशिकी, ii) बेसिडियोमाइसिटीज, iii) तंतुजटा vi) क्लोरोप्लास्ट

अंत में कुछ प्रश्न

1. निश्चित कोशिका भित्ति की अनुपस्थिति। कायिक संरचना मुक्त रूप से रहने वाला प्लैज़्मोडियम होता है जो जीवद्रव्य का बहुकेन्द्रकी पिंड होता है। केन्द्रक द्विगुणित होते हैं। संपूर्ण प्लैज़्मोडियम फलन के निर्माण में हिस्सा लेता है। कशाभी कोशिकाएं मिक्सअमीबा में विकसित हो जाती हैं।

2. कूटमृदूतक एक मिथ्या ऊतक होता है जो कवकतंतुओं के अंतर्वयित होने से बनता है जब कवकतंतु अपनी वैयक्तिक पहचान खो देते हैं। वे एक-दूसरे के लगभग समानान्तर चलते हैं तथा दीर्घीवृत कोशिकाओं के बने होते हैं। इसके परिणामस्वरूप कवकतंतु का पिंड, अनुप्रस्थ काट में संहत संरचना जैसा दिखाई पड़ता है जिसमें अंडाकार या समव्यासीय (isodiametric) कोशिकाएं दिखाई देती हैं।

इकाई 9 कवकों में प्रजनन का तुलनात्मक अध्ययन

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
उद्देश्य

9.2 प्रजनन के प्रकार
कायिक प्रजनन
अलैंगिक प्रजनन
लैंगिक प्रजनन

9.3 जीवन चक्रों के प्रकार तथा पीढ़ियों का एकान्तरण
फाइटोफ्थोरा (*Phytophthora*)
राइजोपस (*Rhizopus*)
न्यूरोस्पोरा (*Neurospora*)
पक्सिनिया (*Puccinia*)

9.4 सारांश

9.5 अंत में कुछ प्रश्न

9.6 उत्तर

9.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने कवकीय आवास तथा आकारिकी के बारे में पढ़ा था। इस इकाई में हम कवकों में प्रजनन की प्रक्रिया की चर्चा करेंगे। शैवालों की तरह ही, कवकों में भी प्रजनन कायिक, अलैंगिक तथा लैंगिक तरीकों के द्वारा संपन्न होता है। इस अध्याय में हम पहले कवकों में विभिन्न प्रकार की प्रजनन संरचनाओं की तथा प्रजनन के प्रकारों की चर्चा उपयुक्त उदाहरणों के साथ करेंगे। इसके बाद *फाइटोफ्थोरा, राइजोपस, न्यूरोस्पोरा* तथा *पक्सिनिया* में प्रजनन तथा पीढ़ियों के एकान्तरण का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- उपयुक्त उदाहरणों के साथ कवकों में प्रजनन के तरीकों का वर्णन कर सकेंगे,
- कवकों में कायिक प्रजनन के विभिन्न तरीकों का वर्णन कर सकेंगे,
- कायिक तथा लैंगिक प्रकार के प्रजनन के तरीकों में अंतर कर सकेंगे,
- *फाइटोफ्थोरा, राइजोपस, न्यूरोस्पोरा* तथा *पक्सिनिया* में प्रजनन प्रक्रियाओं की तुलना कर सकेंगे, तथा
- *फाइटोफ्थोरा, राइजोपस, न्यूरोस्पोरा* तथा *पक्सिनिया* के जीवन चक्र का चित्रण सहित स्पष्टीकरण कर सकेंगे।

9.2 प्रजनन के प्रकार

पिछली इकाई में आपने पढ़ा कि कवक तंतु शीर्ष वृद्धि के द्वारा बढ़ते हैं, परंतु कवक के अधिकांश भाग प्रभावी रूप से वृद्धि करने में समर्थ होते हैं। कवक का माइसीलियम जब परिपक्वता

की एक निश्चित अवस्था को प्राप्त करता है तथा खाद्य पदार्थों का संचय कर लेता है, तो वह प्रजनन आरंभ कर देता है। शैवालों की भांति ही, कवकों में भी प्रजनन तीन प्रकार का होता है।

i) कायिक

ii) अलैंगिक

iii) लैंगिक

कायिक तथा अलैंगिक प्रकार का प्रजनन, जिनमें केन्द्रकों, लैंगिक कोशिकाओं अथवा लैंगिक अंगों का संलयन (fusion) नहीं होता है, उन्हें बहुत से कवक विज्ञानियों द्वारा अलैंगिक प्रकार का प्रजनन माना गया है। अतः वे कवकों में सिर्फ दो तरीकों से यानि अलैंगिक तथा लैंगिक प्रजनन को ही मानते हैं।

कवकों को, उनके थैलस (कवक जाल) के अलैंगिक तथा लैंगिक प्रजनन के अंगों में शामिल होने के आधार पर पूर्णकायफलिक (holocarpic) तथा अंशकायफलिक (eucarpic) में बांटा गया है।

पूर्णकायफलिक

जब संपूर्ण कवकीय थैलस एक या अधिक प्रजनन संरचनाओं में परिवर्तित हो जाता है, जिससे कायिक तथा प्रजनन प्रावस्थाएं एक साथ एक ही कवक में नहीं हो पाती हैं, तो कवक पूर्णकायफलिक कहलाता है।

अंशकायफलिक

अधिकांश कवकों में, प्रजनन संरचनाएं थैलस के एक भाग से ही उगती हैं, जबकि बचा हुआ भाग अपनी सामान्य कायिक गतिविधियां जारी रखता है। ऐसे कवक अंशकायफलिक कवक कहलाते हैं।

9.2.1 कायिक प्रजनन

कायिक प्रजनन निम्नलिखित तरीकों से होता हैः i) खंडन (fragmentation), ii) विखंडन (fission), iii) मुकुलन (budding), iv) ऑइडिया (oidia), v) क्लैमिडोबीजाणु (chlamydospores), vi) तंतुजटा (rhizomorphs) तथा vii) स्क्लैरोशिया (sclerotia)।

खंडन

खंडन माइसीलियम के टुकड़ों या खंडों में आकस्मिक विभाजन के द्वारा अथवा यांत्रिकीय चोट या किस अन्य कारण से हो सकता है, उसमें माइसीलियम खंडों या कवकतंतुओं में विभाजित हो जाता है। प्रत्येक खंड आगे कोशिकाओं के विभाजन तथा शीर्ष वृद्धि (apical growth) के द्वारा अनुकूल परिस्थितियों में नए माइसीलियम में विकसित हो जाता है।

विखंडन

एककोशिकीय कवकों में जैसे कि विखंडन यीस्टों में एकल कोशिका विखंडन के द्वारा संवर्धन करती है (चित्र 9.1 a)। इसमें जनक कोशिका लंबी हो जाती है तथा अनुप्रस्थ रूप से दो संतति कोशिकाओं में विभाजित हो जाती है। पहले, केन्द्रक विभाजित होता है, उसके बाद कोशिकाद्रव्य का विभाजन होता है तथा भित्ति निर्मित हो जाती है, इस प्रकार जनक कोशिका दो में विभाजित हो जाती है। दोनों संतति कोशिकाएं अलग हो जाती हैं तथा स्वतंत्र रूप से जीवनयापन करती हैं।

मुकुलन

मुकुलन यीस्ट (budding yeast) में, कोशिकाएं एक प्रक्रिया द्वारा संवर्धन करती हैं जिसे मुकुलन कहते हैं। इसमें, जनक कोशिका एक छोटी उद्वर्ध (outgrowth) निकालती है जो मुकुल (bud) कहलाती है (चित्र 9.1 b)। मुकुल धीरे-धीरे बढ़ने लगता है और अंततः एक अनुप्रस्थ भित्ति के द्वारा जनक कोशिका से विलग हो जाता है। ये सिरा एक नए अलग यीस्ट में विकसित हो जाता हैं। कभी-कभी मुकुल जनक कोशिका से अलग होने से पहले नया मुकुल बना सकती है और इस प्रकार मुकुलों की एक श्रृंखला बन जाती है जो अंततः विलग हो जाती है।

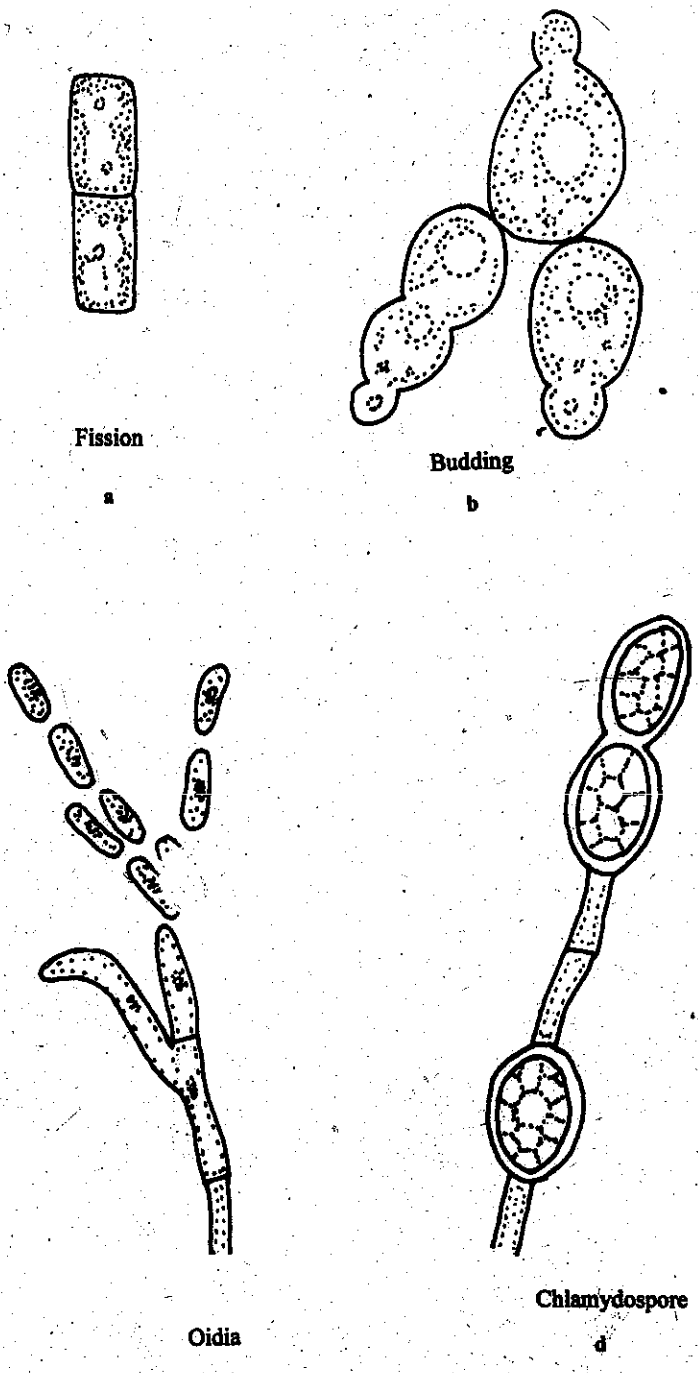

चित्र 9.1 : कवको में कायिक प्रजनन।

ऑइडिया

कुछ तंतुमय कवकों में, कवक तंतु वैयक्तिक कोशिकाओं में विभाजित हो जाता है जो ऑइडिया या खंडज बीजाणु (arthrospores) कहलाते हैं (चित्र 9.1 c)। कोशिकाएं गोलाकार या

शब्द बीजाणु का उपयोग किसी भी लघु प्रवर्धन, प्रजनन या उत्तरजीवी इकाई के लिए किया जाता है जो कि कवकतंतु या बीजाणुजन कोशिका से अलग हो जाती है तथा नए कवकतंतु को जन्म देती है। बीजाणु में, जल की मात्रा तथा उपापचयी गतिविधियां निम्न होती हैं। धानियां अनुपस्थित होती हैं तथा इसमें कोशिकाद्रव्य का संचलन रुक जाता है।

अंडाकार हो जाती हैं तथा माला के दानों जैसी दिखाई पड़ती हैं। प्रत्येक ऑइडियम या खंडज बीजाणु नए माइसीलियम में विकसित हो जाता है।

क्लैमिडोबीजाणु

क्लैमिडोबीजाणु एक कोशिकीय खंड होते हैं जो चिरकालिक कायाओं की तरह कार्य करते हैं। ये कायिक कवकतंतु में या तो एकल रूप से बनते हैं अथवा श्रृंखला में बनते हैं (चित्र 9.1 d)। क्लैमिडोबीजाणु मोटी, रोधी भित्तियां विकसित कर लेते हैं तथा खाद्य पदार्थ संग्रह कर लेते हैं और इसप्रकार कवक को प्रतिकूल परिस्थितियों को झेलने में सहायता करते हैं। अनुकूल परिस्थितियों के वापिस आने पर प्रत्येक क्लैमिडोबीजाणु नए माइसीलियम में विकसित हो जाता है, उदाहरण : *म्यूकर, फ्यूजेरियम*।

तंतुजटा

आपने पिछली इकाई में पढ़ा कि बहुत से उच्च कवक, जैसे कि *ऐगैरिकस* में कवकतंतु एकत्रित होकर रस्सी जैसी संरचना बनाते हैं। ये बारीक, जड़ जैसे तंतु जो सामान्यतः गहरे भूरे रंग के होते हैं ये तंतुजटा कहलाते हैं (चित्र 8.7 इकाई 8) जो चिरकालिता बनाये रखने का कार्य करते हैं। प्रतिकूल परिस्थितियों में तंतुजटा सुषुप्त (dormant) रहते हैं। अनुकूल परिस्थितियों के आने पर तंतुजटा पुनः वृद्धि करने लगते हैं तथा फलन कायाओं को भी जन्म दे सकते हैं।

स्क्लैरोशियम

आप जानते हैं कि स्क्लैरोशियम, माइसीलियम का एक अन्य रूपान्तरण है। यह चिरकालिकता तथा कायिक प्रवर्धन का कार्य करता है। यह गोलाकार, बेलनाकार, कुशन के आकार का या अनियमित आकार का, मोटी भित्ति वाले कवकतंतु का सघन पिंड होता है। कवकतंतु संहत (compact), कूटमृदूतकी ऊतक निर्मित करता है (चित्र 8.7)। अनुकूल परिस्थितियों के आने पर स्क्लैरोशियम अंकुरित होकर नया माइसीलियम बनाता है उदाहरण *क्लैवीसेप्स* यानि *अरगॉट* (ergot)।

9.2.2 अलैंगिक प्रजनन

कवकों में अलैंगिक प्रजनन लैंगिक प्रजनन के तरीके से अधिक आम तरीका है। ये सामान्यतः एक ऋतु में कई बार दोहराया जाता है। ये विशेष प्रजनन कोशिकाओं के निर्मित होने से संपन्न होता है जिन्हें बीजाणु कहते हैं। कवकों में बीजाणुओं के बनने को बीजाणुकजनन (sporulation) कहते हैं। प्रत्येक बीजाणु नए माइसीलियम में विकसित हो जाता है। ये बीजाणु जनक कोशिका में समसूत्री विभाजन के फलस्वरूप बनते हैं और इसलिए ये माइटोबीजाणु (mitospore) कहलाते हैं। बीजाणु रंग, आकार तथा संख्या, कवकतंतु पर व्यवस्था में, तथा उत्पन्न होने के तरीकों में भिन्न होते हैं। ये काचाभ, हरे, पीले, नारंगी, लाल, भूरे से काले रंग के होते हैं तथा बहुत छोटे से बहुत बड़े आमाप तक के हो सकते हैं। आकार में ये गोलाकार से अंडाकार, दीर्घवत् (oblong), सुई जैसे या कुंडलाकार (helical) तक भिन्न हो सकते हैं। अतः कवकों में अनेकों किस्मों के बीजाणुओं को देखा जा सकता है (चित्र 9.2)। आपको सूक्ष्मदर्शी में ये बहुत ही दिलचस्प दिखाई देंगे।

सामान्यतः बीजाणु एककोशिकीय होते हैं। वे एककेन्द्रकी या बहुकेन्द्रकी हो सकते हैं। कुछ कवकों जैसे *आल्टर्नेरिया* (*Alternaria*) तथा *कर्वुलेरिया* (*Curvularia*) में ये बहुकोशिकीय होते हैं। कवकों में उत्पन्न होने वाले माइटोबीजाणु दो प्रकार के होते हैं, धानी बीजाणु (sporangiospores) तथा कोनिडिया (conidia)।

धानी बीजाणु, धानी जैसी संरचना के अंदर उत्पन्न होते हैं जिसे बीजाणुधानी (sporangia) कहते हैं। बीजाणुधानी को धारण करने वाला कवकतंतु बीजाणुधानीधर (sporangiophore) कहलाता है (चित्र 9.3 a)। वे विशेष रूप से शाखित होते हैं। धानी बीजाणु गतिशील अथवा अचल हो सकते हैं। अचल धानी बीजाणु अचल-बीजाणु (aplanospore) कहलाते हैं

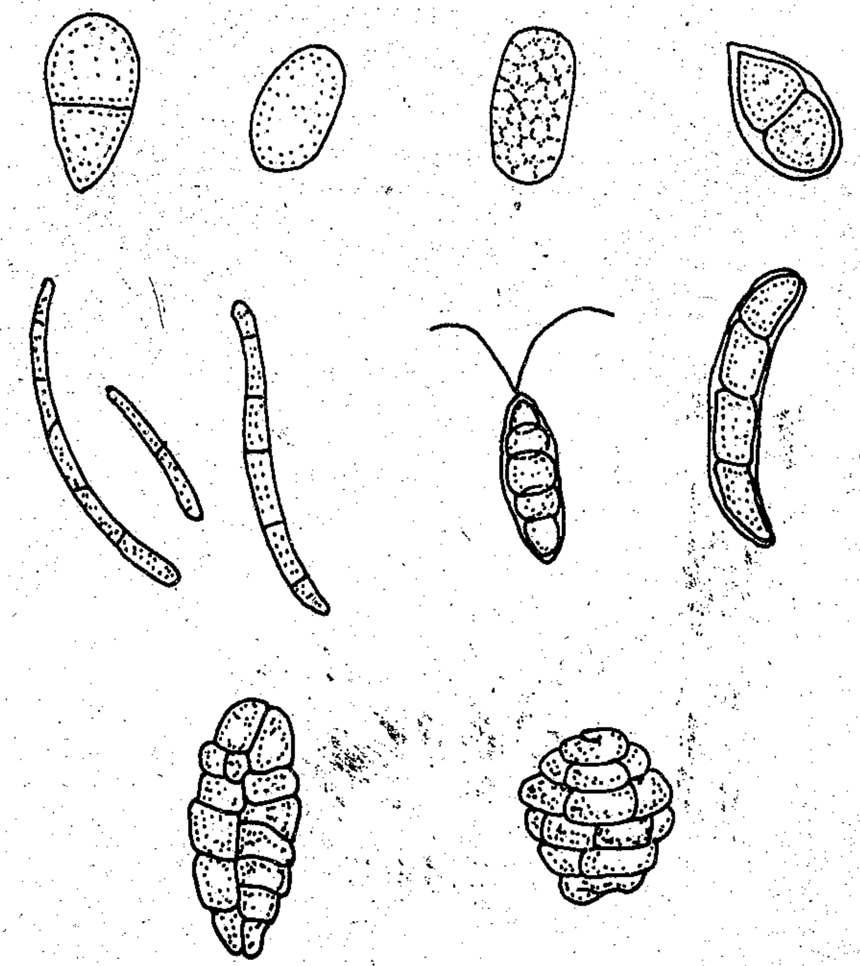

चित्र 9.2 : कवकों में विभिन्न प्रकार के बीजाणु।

(चित्र 9.3 a)। ये थलीय जातियों जैसे *म्यूकर* तथा *राइजोपस* की विशेषता है। जलीय कवक जैसे *पिथियम* (*Pithium*) जो प्रभाग *ऊओमाइकोटा* (*Oomycota*) का है इसमें गतिशील द्विकशाभी (biflagellate) धानी बीजाणु बनते हैं। ये जूस्पोर (zoospore) कहलाते हैं तथा इन्हें धारण कर वाली बीजाणुधानी चल-बीजाणुधानी (zoosporangium) कहलाती है (चित्र 9.3 ɔ तथा c)। जूस्पोर एक गतिशील बीजाणु होता है जिसमें कोशिका भित्ति नहीं होती है। झुंड में घूमने के काल (swarming period) के बाद यह एक भित्ति स्रावित करता है तथा जनन नलिका (germ tube) बनाने के लिए अंकुरित हो जाता है। जूस्पोर के विपरीत, अचल-बीजाणु में एक निश्चित बीजाणु भित्ति होती है तथा वे हवा या कीटों द्वारा परिक्षेपित (disperse) होते हैं।

कोनिडिया अचल, पतझड़ी (deciduous) माइटोबीजाणु होते हैं जो बाह्यतः एक अलग एकल कोशिका के रूप में बनते हैं। वे या तो माइसीलियम पर सीधे विकसित होते हैं अथवा आकारिकीय रूप से विभेदित कवकतंतु पर विकसित होते हैं जो कोनिडियमधर (conidiophore) कहलाते हैं (चित्र 9.3 d)। कोनिडियमधर सरल अथवा शाखित तथा पटयुक्त या पटविहीन हो सकते हैं। कोनिडियम एकल रूप में उदाहरणतः *फाइटोफ्थोरा* में, अथवा श्रृंखला में कोनिडियमधर के शीर्ष पर बनते हैं उदाहरणतः *ऐस्पर्जिलस* (*Aspergillus*) में, (चित्र 9.3 d) अथवा उनकी शाखाओं के शीर्ष पर बनते हैं। उदाहणतः *पेनिसिलियम* में (चित्र 9.3 e)।

कोनिडियमधर अक्सर एकल रूप से उगते हैं तथा माइसीलियम में बिखरे रहते हैं। कभी-कभी वे विशेषीकृत संरचनाओं में निकलते हैं जिन्हें फलन कायाएं कहते हैं। अपनी प्रकृति के अनुसार इन्हें सिनीमा (synnema), स्पोरोडोकिया (sporodochia), एसरवुली (acervuli) (प्लेटनुमा), पिक्निडिया (pycnidia) (फ्लास्क जैसा गोलाकार) स्फोट (pustules) नाम दिए गए हैं। इन्हें चित्र 9.4 में दिखाया गया है।

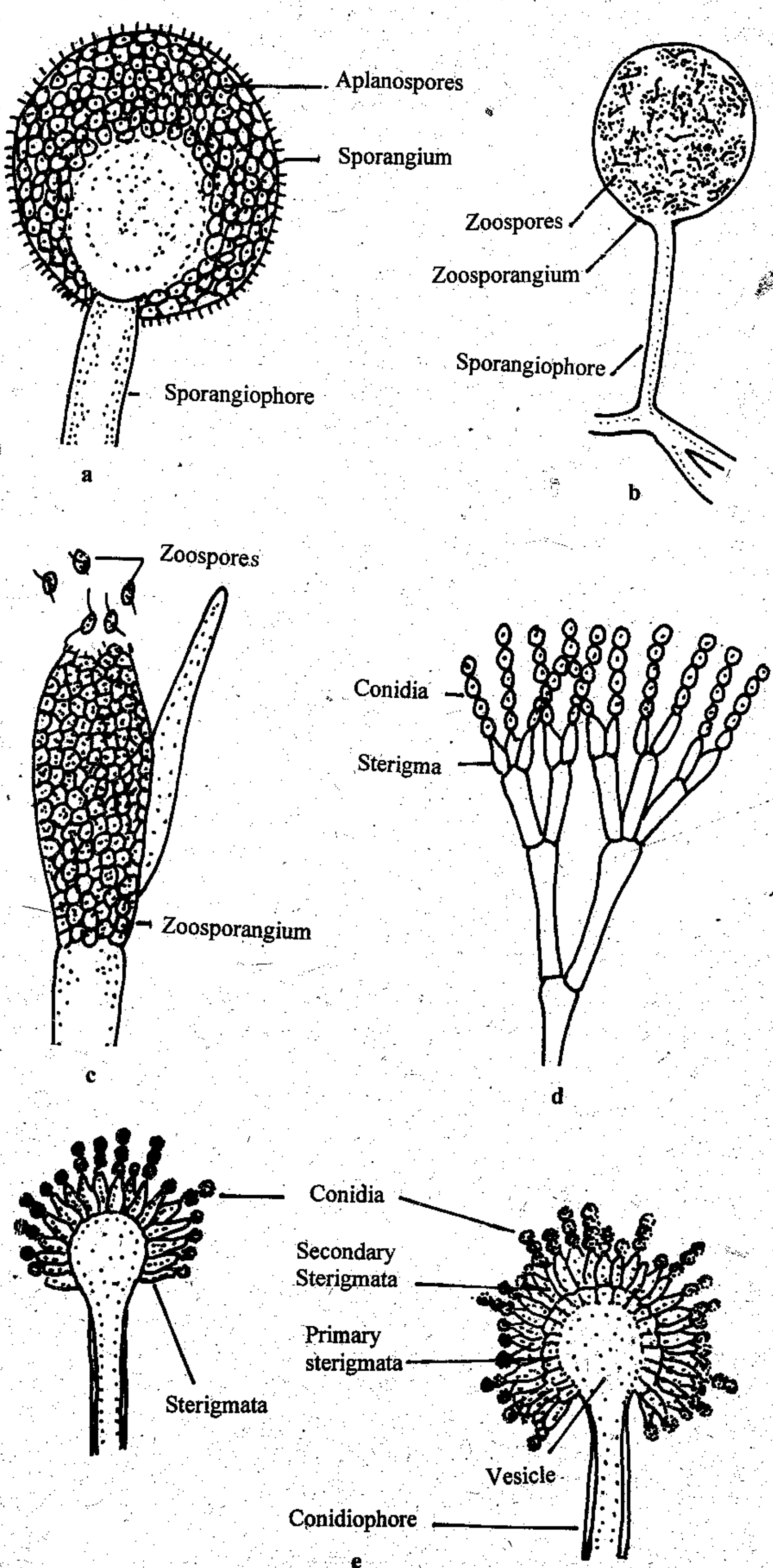

चित्र 9.3 : कवकों में बीजाणुधानीधर तथा कोनिडिया का बनना : a) अचल-बीजाणु, b तथा c) जूस्पोर्स धारण किए हुए बीजाणुधानी, d) कोनिडियमों को दिखाते हुए कोनिडियमधर, e) कोनिडियम की श्रृंखला धारण किए हुए कोनिडियमधर।

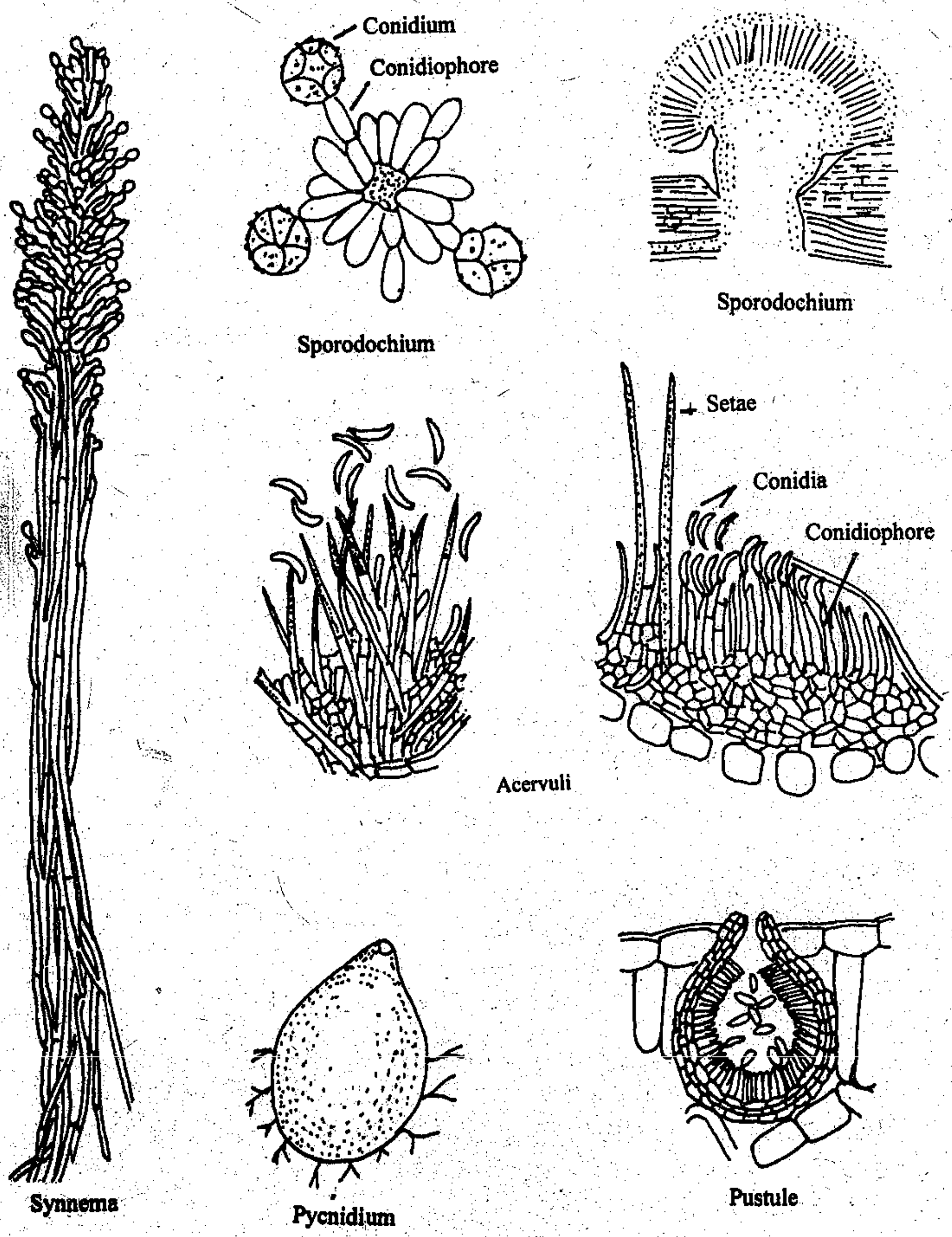

चित्र 9.4 : कवकों में विभिन्न प्रकार की फलन कायाएं।

9.2.3 लैंगिक प्रजनन

कवकों में लैंगिक अवस्था पूर्णावस्था (perfect stage) कहलाती है तथा इसके विपरीत अपूर्णावस्था (imperfect stage) अलैंगिक अवस्था होती है। लैंगिक प्रजनन में दो निषेच्य (compatible) लैंगिक कोशिकाओं या विपरीत विभेद (strain) के युग्मकों का संलयन होता है। कवकीय लैंगिक अंग युग्मकधानियां (gametangia) कहलाते हैं। वे आकार में समान हो सकते हैं। अनेकों उच्च एस्कोमाइसिटीज (ascomycetes) के सदस्यों में आकारिकीय रूप में भिन्न युग्मकधानियां बनती हैं। नर युग्मकधानियां पुंधानियां (antheridia) कहलाती हैं तथा मादा युग्मकधानियां स्त्रीधानियां (ascogonia) कहलाती है।

कवक समथैलसी (homothallic) हो सकते हैं यानि कि संयुग्मित होने वाले युग्मक एक ही माइसीलियम के हों अथवा वे विषमथैलसी (heterothallic) हो सकते हैं, जिसमें संयुग्मित होने वाले युग्मक भिन्न माइसीलियम के विभेदों के हों।

द्विकेन्द्रकी अवस्था

ऐसी कोशिका या कवकतंतु, जिसमें निकटरूप से संबद्ध केन्द्रकों का युग्म पाया जाता है, जो सामान्यतः भिन्न जनकों से आते हैं। इसको n + n से दर्शाया जाता है।

कवकों में लैंगिक प्रजनन में निम्नलिखित तीन प्रावस्थाएं शामिल हैं : i) कोशिकाद्रव्यलयन यानि प्लैज्मोगेमी (plasmogamy), ii) केन्द्रकसंलयन (karyogamy), तथा iii) अर्धसूत्री विभाजन (meiosis) (चित्र 9.5)। ये तीनों प्रक्रियाएं नियमित क्रम में तथा प्रत्येक जाति की लैंगिक अवस्था के किसी खास समय पर होती हैं।

कोशिकाद्रव्यलयन : ये प्रजनन करने वाले कवकतंतुओं या कवक कोशिकाओं के कोशिकाद्रव्य का मिलन है, इसमें एक नर से तथा एक मादा से दोनों जनक कोशिकाओं के केन्द्रकों को एक साथ युग्म (pair) में लाया जाता है। हालांकि, दोनों केन्द्रक एक दूसरे के साथ युग्मित नहीं होते हैं। इस प्रकार की कोशिका केन्द्रकयुग्म (dikaryon) कहलाती है। द्विकेन्द्रकी अवस्था कवकों की विशिष्टता होती है तथा कुछ पीढ़ियों तक चलती रह सकती है क्योंकि दोनों केन्द्रक (केन्द्रक युग्म) कोशिका विभाजन के दौरान साथ-साथ विभाजित होते हैं। वे संतति कवकतंतु या कोशिकाओं में चले जाते हैं।

केन्द्रकसंलयन : दो केन्द्रकों का युग्मन जो अगली प्रावस्था में संपन्न होता है वह केन्द्रकसंलयन कहलाता है। ये या तो कोशिकाद्रव्यलयन के तुरंत बाद हो सकता है जैसे कि निम्न कवकों में अथवा ये लंबे समय तक के लिए विलम्बित हो सकता है, जैसे कि उच्च कवकों में होता है।

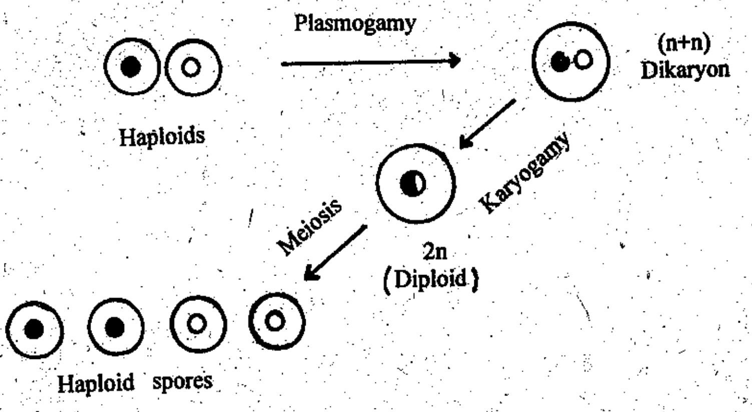

चित्र 9.5 : कवकों में लैंगिक चक्र की तीन प्रावस्थाएं।

अर्धसूत्री विभाजन : केन्द्रकसंलयन जो अंततः सभी लैंगिक प्रजनन करने वाले कवकों में पाया जाता है, उसके बाद शीघ्र ही अथवा देर से अर्धसूत्री विभाजन होता है जिससे चार आनुवंशिक रूप से भिन्न बीजाणु उत्पन्न होते हैं।

अब हम कोशिकाद्रव्यलयन के बारे में विस्तार से चर्चा करेंगे। कवकों में कोशिकाद्रव्यलयन के विभिन्न तरीके पाए जाते हैं।

(i) **चलयुग्मकी संयुग्मन (Planogametic copulation) :** इसमें दो युग्मकों का संयुग्मन होता है। शैवाल की भांति ही कवक में भी लैंगिक युग्मन समयुग्मकी (isogamous), असमयुग्मकी (anisogamous) अथवा विषमयुग्मकी (oogamous) हो सकता है (चित्र 9.6)। असमयुग्मकता तथा विषमयुग्मकता दोनों मिलकर विषमयुग्मकी (heterogamous) लैंगिक प्रजनन कहलाते हैं। समयुग्मकता सरलतम प्रकार का लैंगिक प्रजनन है, जिसमें युग्मन करने वाले युग्मक आकारिकी में समान होते हैं उदाहरण *ओल्पिडियम* (*Olpidium*) तथा *कैटीनेरिया* (*Catenaria*)। असमयुग्मकता, जिसमें युग्मित होने वाले युग्मक असमान होते हैं, वह एक वंश *ऐलोमॉइसीज* (*Allomyces*) में पाया जाता है जो कि एक काइट्रिड (chytrid) है। विषमयुग्मकता में जैसा कि आपको ध्यान होगा गतिशील पुमणु अंडधानी में प्रवेश कर जाता है तथा अंड या अंडगोल (oosphere) के साथ मिलकर युग्मनज (zygote) का निर्माण करता है। विषमयुग्मकता *पिथियम* (*Pythium*) तथा *एल्बूगो* (*Albugo*) जैसे कवकों में पाई जाती है।

(ii) **युग्मकधानीय संयुग्मन (Gametangial copulation) :** दो युग्मकधानियां (gametangia), एकदूसरे के साथ संपर्क करती हैं तथा दोनों के पूरे तत्व एक दूसरे के साथ युग्मित होकर एक हो जाते हैं उदाहरण *म्यूकर* और *राइजोपस*। कुछ कवकों में एक युग्मकधानी का संपूर्ण कोशिकाद्रव्य छिद्र के जरिए दूसरी में चला जाता है (चित्र 9.6 b)। दोनों में से, ग्राही मादा तथा दाता नर होता है।

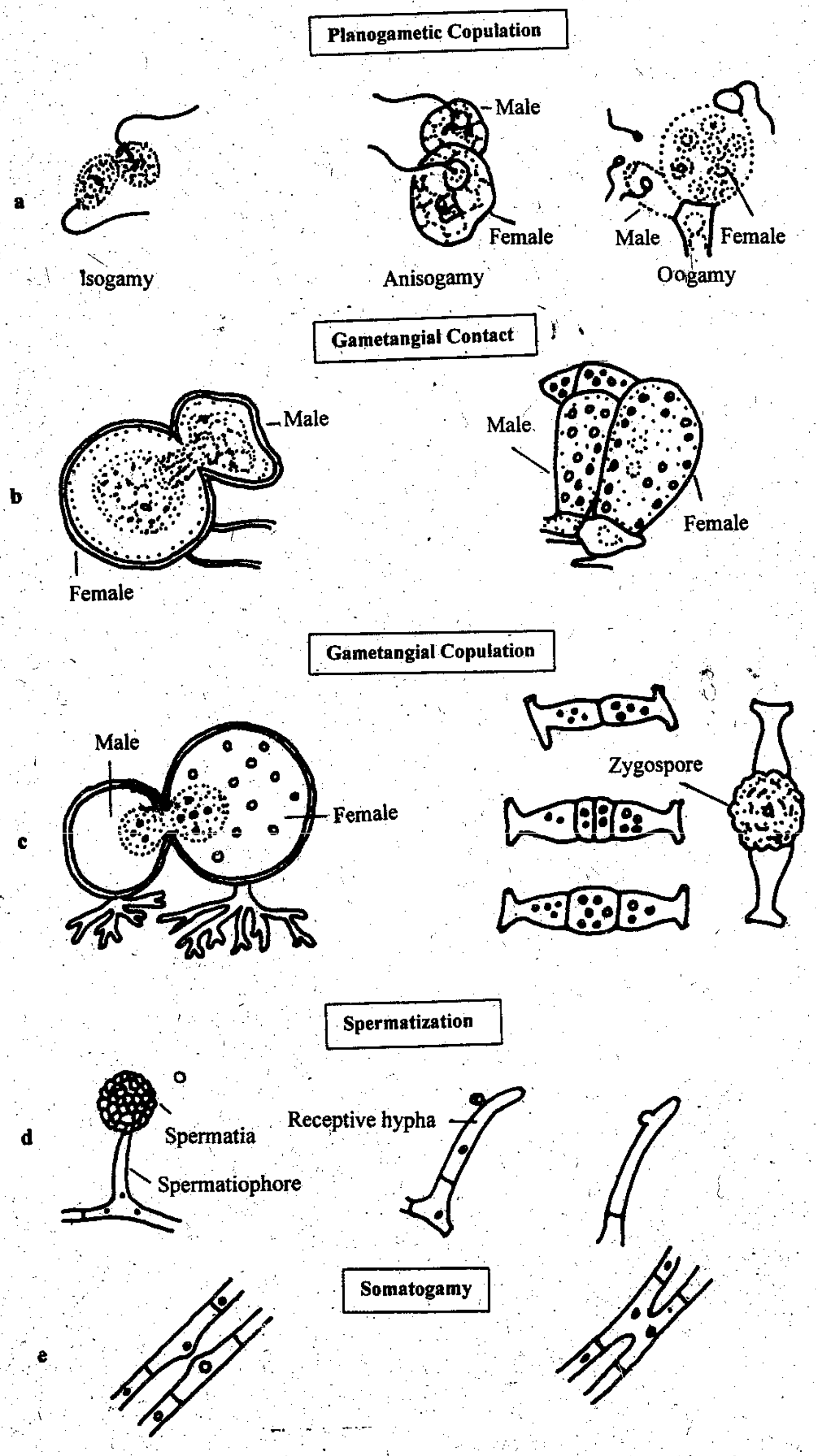

चित्र 9.6: कवकों में कोशिकाद्रव्यलयन के विभिन्न तरीके : a) चलयुग्मकी संयुग्मन, b) युग्मकधानीय संयुग्मन, c) युग्मकधानीय संपर्क, d) अचल पुमणु युग्मन, e) काययुग्मन।

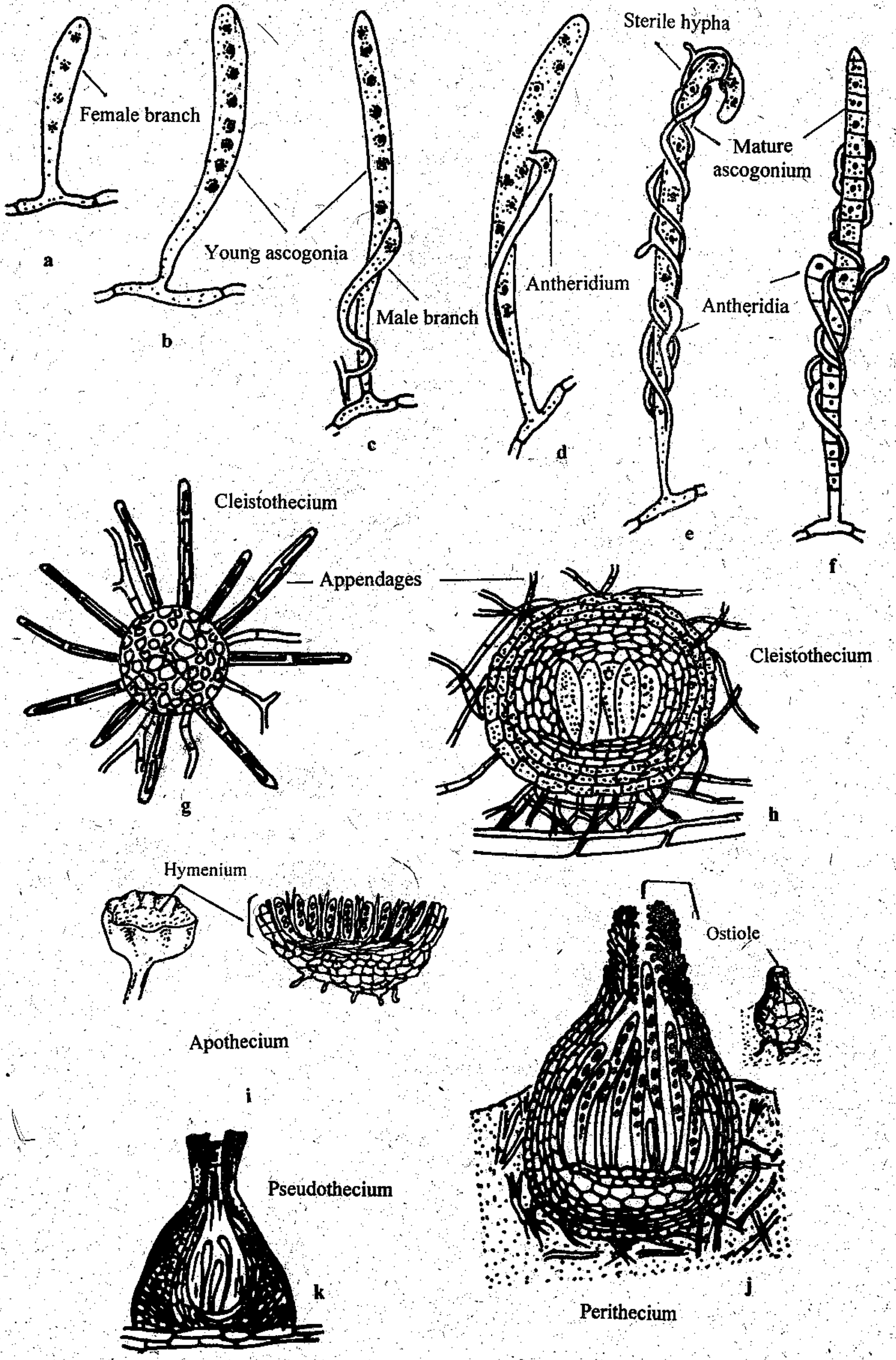

चित्र 9.7 : a से f) *पेनिसिलियम* में लैंगिक प्रजनन की अवस्थाएं : **a** से **c)** लैंगिक अंगों का विकास, पुंधानियां तथा एस्कोगोनिया, **d** से **f)** कोशिकाद्रव्यलयन की अवस्थाएं, **g** तथा **h)** कवकतंतु का अनेकों असाइ **(asci)** को घेर लेने से ऐस्कोकार्प क्लाइस्टोथीसियम का बनना **i)** *ऐस्कोबोलस* स्पी. का ऐपोथीसियम, **j)** एक पेरीथीसियम, **k)** *लेप्टोस्फेरा* (***Leptosphaera***) का अपरिपक्व कूटपेरीथीसियम।

(iii) युग्मकधानीय संपर्क (Gametangial contact) : इसमें नर युग्मक एक अलग इकाई नहीं होता है परंतु पुंधानी में स्थित केन्द्रक ही युग्मक बन जाता है। जैसा कि आप चित्र 9.6 c में देख सकते हैं। स्त्रीधानी तथा पुंधानी एक नलिका के द्वारा संपर्क में आते हैं तथा पुंधानी के एक या अधिक केन्द्रक स्त्रीधानी में स्थानांतरित हो जाते हैं। आप नोट कर सकते हैं कि इसमें दोनों युग्मकधानियां युग्मित नहीं होती हैं। ये *पेनिसिलियम* में देखा गया है (चित्र 9.7)।

(iv) अचल पुमणु युग्मन (Spermatization) : यह तरीका काफी खास है क्योंकि छोटे कोनिडियम जैसे युग्मक जो अचल पुमणु (spermatium) कहलाते हैं, वे बाह्य रूप से विशेष कवकतंतुओं पर उत्पन्न होते हैं जिन्हें अचलपुमणुधर या स्पर्मेशियमधर (spermatiophore) कहते हैं (चित्र 9.6 d)। अचल पुमणु या स्पर्मेशियम गुहाओं के भीतर भी उत्पन्न हो सकते हैं जिन्हें पुमणुजन या स्पर्मेटोगोनियम (spermatogonium) कहते हैं। मादा कोशिका युग्मकधानी, एक विशेषीकृत अभिग्रहण कवकतंतु (specialised receptive hypha) अथवा कायिक कवकतंतु भी हो सकता है।

(v) काययुग्मन (Somatogamy) : उच्च कवकों जैसे ऐस्कोमाइसिटीज तथा बेसिडिओमाइसिटीज में लैंगिकता का क्रमिक अपह्रासन (progressive degeneration) पाया जाता है। संपूर्ण प्रक्रिया दो माइसीलियमों के युग्मन के द्वारा बहुत ही सरलीकृत हो जाती है जो विपरीत विभेदों के होते हैं (चित्र 9.6 e)। निषेचन के बाद के बदलावों के फलस्वरूप फलनकाया निर्मित होती है जो एस्कोमाइसिटीज में ऐस्कोकार्प (ascocarp) तथा बेसिडियोमाइसिटीज में बेसिडियोकार्प (basidiocarp) कहलाती है।

युग्मकधानीय युग्मन के बाद नर तथा मादा केन्द्रक का युग्मन होता है जिसके फलस्वरूप द्विगुणित केन्द्रक बनता है। तत्पश्चात् अर्धसूत्री विभाजन होता है तथा अगुणित बीजाणु बन जाते हैं। कवकों में, बीजाणु विशेषीकृत संरचनाओं में बनते हैं। जो उस प्रभाग की विशेषता होते हैं। ऐस्कोमाइसिटीज में बीजाणु जोकि ऐस्कोबीजाणु कहलाते हैं वे ऐसकस (ascus) के अंदर बनते हैं (चित्र 9.7)। ऐस्कस फलनकाया-ऐस्कोकार्प के अंदर स्थित रहते हैं। अपने गुणों के आधार पर ऐस्कोकार्प को क्लाइस्टोथीसियम (cleistothecium) (अस्फुटनशील), ऐपोथीसियम (apothecium) (कप या तश्तरी के आकार का), पेरीथीसियम (perithecium) (फ्लास्क के आकार की), तथा कूटपेरीथीसिमय (perithecium) के रूप में विभेदित किया गया है।

बेसिडियोमाइसिटीज में, लैंगिक बीजाणु बेसिडियोबीजाणु कहलाते हैं जो गदाआकार संरचना पर विकसित होते हैं जो बेसिडियम कहलाती है।

जीवनचक्र

आपने पढ़ा है कि कवकीय माइसीलियम अगुणित होता है तथा अपने पूरे जीवनचक्र में अगुणित ही रहता है। अगुणित प्रावस्था अलैंगिक प्रजनन के द्वारा अनुरक्षित रहती है। युग्मनज एकमात्र द्विगुणित संरचना होती है जो लैंगिक चक्र के दौरान विपरीत विभेदों के केंद्रकों के युग्मन से बनती है। इसके तत्काल बाद ही अर्धसूत्री विभाजन हो जाता है जिससे चार अगुणित बीजाणु बन जाते हैं। बीजाणु अंकुरित होने पर अगुणित माइसीलियम बनाते हैं। ये याद रखना महत्वपूर्ण है कि कवकों में माइसीलियम की द्विकेन्द्रकी अवस्था जो कोशिकाद्रव्यलयन के फलस्वरूप होती है, वह बहुत लंबे समय तक रहती है।

बोध प्रश्न 9.1

अ) बताइए निम्नलिखित में से कौन से कथन सत्य हैं व कौन से असत्य ? सत्य के लिए **स** तथा असत्य के लिए **अ** दिए गए कोष्ठकों में लिखिए।

i) माइसीलियम का किसी दुर्घटनावश विभाजन कवकों में कायिक प्रजनन का एक तरीका है। ☐

ii) कवकतंतुओं के शीर्ष पर बनने वाली जनन कोशिकाएं कोनिडियम कहलाती हैं। ☐

iii) उच्च कवकों में लैंगिकता का प्रगामी विकास होता है। ☐

iv) कोशिकाद्रव्यलयन के तत्काल बाद ही दोनों जनकों के केन्द्रक युग्मित हो जाते हैं। ☐

ब) रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) क्लैमिडोबीजाणु कवकों में .... बनाये रखने में सहायता करते हैं।

ii) कवकों में लैंगिक अवस्था .... कहलाती है।

iii) चलयुग्मकी संयुग्मन में .... का युग्मन होता है।

iv) वे कवक, जिनमें समूची पादप काया प्रजनन में भाग लेती है वह .... कहलाते हैं।

स) निम्नलिखित कथनों में कोष्ठकों में दिए गए शब्दों में से सही विकल्प चुनिए।

i) कवकतंतु के टूटने से बनने वाली वैयक्तिक कोशिकाएं (ऑइडिया/कोनिडिया) कहलाती हैं।

ii) अचल धानी बीजाणु (अचल बीजाणु/जूस्पोर्स) कहलाते हैं।

iii) (जूस्पोर्स/कोनिडियम) बीजाणुधानी में निर्मित होते हैं।

iv) जब युग्मित होने वाले युग्मक भिन्न-भिन्न माइसीलियम से आते हैं तो कवक (समथैलसी/विषमथैलसी) कहलाता है।

9.3 जीवन चक्रों के प्रकार तथा पीढ़ियों का एकान्तरण

चलिये अब हम कुछ महत्वपूर्ण कवकों के जीवनचक्र का विस्तृत अध्ययन करें।

9.3.1 *फाइटोफ्थोरा (Phytophthora)*

यह कवक प्रभाग ऊओमाइकोटा (Oomycota) का सदस्य है। इस वंश में लगभग 75 जातियां हैं, जिनमें से अधिकांश पुष्पीय पादपों पर परजीवी के रूप में रहती हैं। *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* (*P. infestens*) का काफी आर्थिक महत्व है। यह आलू में एक भयंकर रोग उत्पन्न करता है। जिसे आलू की शीर्णता (potato blight) या आलू की विलंबित शीर्णता (late blight of potato) कहते हैं। इकाई 10 में आप इस रोग के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे।

आकारिकी

फाइटोफ्थोरा का माइसीलियम सघन रूप से शाखित होता है तथा इसमें पटविहीन, काचाभ संकोशिकी कवकतंतु होता है। कवकतंतु परपोषी के ऊतकों के अंतराकोशिकी अवकाशों में प्रशाखन (ramify) करता है। माइसीलियम चूषकांग उत्पन्न करता है जो परपोषी की कोशिका भित्ति में घुस जाते है तथा कोशिकाओं के अंदर पोषण प्राप्त करने के लिए चले जाते हैं (चित्र 9.8 a)। चूषकांग सरल या शाखित हो सकते है।

फाइटोफ्थोरा अलैंगिक तथा लैंगिक दोनों तरह से प्रजनन करता है।

अलैंगिक प्रजनन

गर्म और आर्द्र मौसम में यह सामान्यतः अलैंगिक तरीके से प्रजनन करता है। इस अवस्था के दौरान सामान्यतः आन्तरिक माइसीलियम से पतले, शाखित कवकतंतुओं के गुच्छे निकलते हैं जो रंध्र (stomata) में से होकर बाहर आ जाते हैं अथवा पत्ती की निचली सतह पर बाहयत्वचीय कोशिका में से निकलकर बाहर आ जाते हैं (चित्र 9.8 b)। कंदों (tubers) में ये त्वचा के क्षतिग्रस्त भागों से बाहर आ जाते हैं। ये वायवीय कवकतंतु काचाभ तथा शाखित होते हैं व अपने शीर्षों पर बीजाणुधानी धारण किए होते हैं। आपने पहले पढ़ा है कि बीजाणुधानियों को या कोनिडियमों को धारण किए हुए कवकतंतु क्रमशः बीजाणुधानीधर या कोनिडियमधर कहलाते हैं। बीजाणुधानियां पतली भित्ति वाली, काचाभ तथा नींबू के आकार की होती हैं तथा इनमें शीर्ष पर चोंच-जैसा बर्हिवेशन (projection) या पैपिला (papilla) होता है।

परिपक्व बीजाणुधानियों को आसानी से बीजाणुधानीधर से अलग किया जा सकता है। बीजाणुधानीधर शाखित होता है। इसमें ग्रंथिकी उभार होते हैं जो बीजाणुधानियों के अलग होने के बिन्दुओं को दर्शाते हैं। हवा, वर्षा या पड़ोसी पत्तियों से संपर्क पकी हुई बीजाणुधानियों को

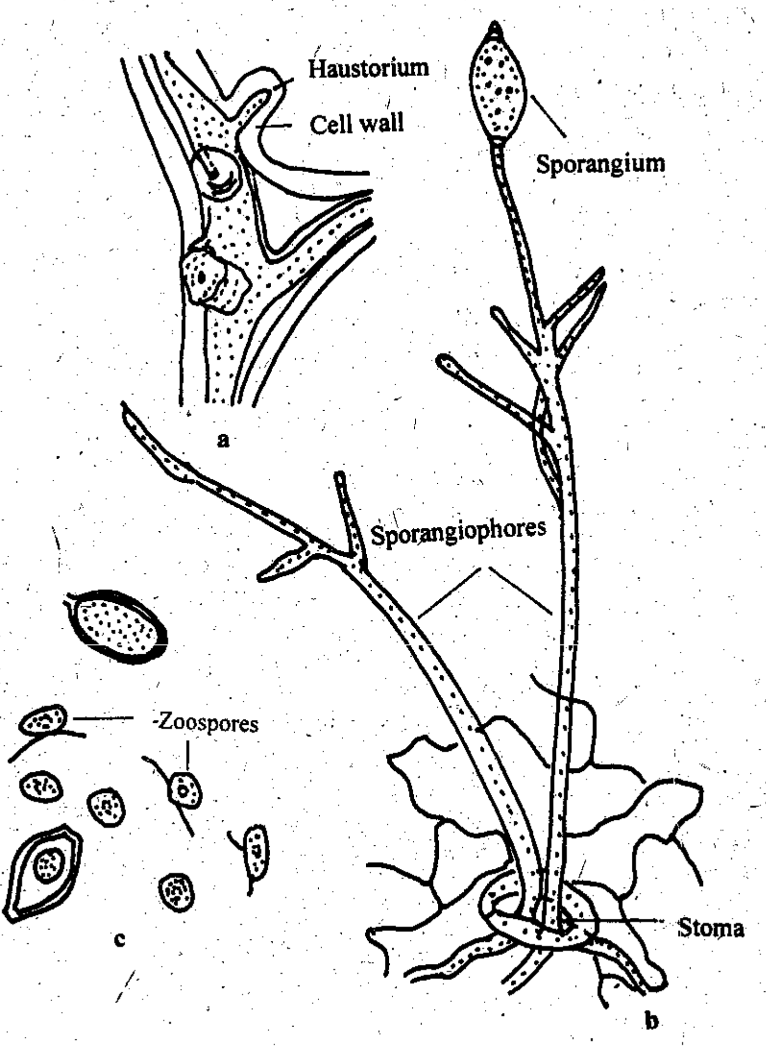

चित्र 9.8 : *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* : a) चूषकांग बनाते हुए अंतराकोशिकी माइसीलियम, b) बीजाणुधानियां धारण किए हुए रंध्र से बाहर निकलते हुए बीजाणुधानीधर, c) कशाभीय जूस्पोर्स।

अलग करके पड़ोसी आलू के पौधों पर बिखरा देते हैं। वे गिरकर मिट्टी पर भी फैल सकते हैं। बीजाणुधानियां यदि कुछ ही घंटों के अंदर अंकुरित होने में असफल रहती हैं तो वे अपनी जीवनक्षमता खो देती हैं।

जब बीजाणुधानियां परपोषी पादप की पत्ती पर गिरती हैं तो वे अंकुरित हो जाती हैं। नमी तथा तापमान अंकुरण के निर्धारक होते हैं। जल तथा निम्न तापमान (12°C तक) की उपस्थिति में बीजाणुधानियां चल बीजाणुधानी की तरह व्यवहार करती हैं। कोशिकाद्रव्य 5-8 एककेन्द्रकी संतति कोशिकाद्रव्यों में विभाजित हो जाता है जो जूस्पोर्स में परिवर्तित हो जाते हैं।

जूस्पोर्स एक जैसे तथा द्विकशाभी होते हैं (चित्र 9.8 c)। दोनों कशाभों में से एक प्रतोद (whip-lash) प्रकार का तथा दूसरा कूर्च (tinsel) प्रकार का होता है। कुछ जातियों में जूस्पोर्स शीर्ष पैपिला के जरिए एक धानी (vesicle) में जाते हैं जूस्पोर्स को मुक्त करने के लिए शीघ्र ही धानी फट कर खुल जाती है। मुक्त हुए जूस्पोर्स कुछ समय के लिए तैरते रहते हैं और बाद में इनमें से कशाभ हट जाते हैं और ये आधार पर टिककर अंकुरित हो जाते हैं। अंकुरण के दौरान, ये एक छोटा कवकतंतु बाहर निकालते हैं जो आसंगांग (appressorium) कहलाता है। आसंगांग कवक को परपोषी की पत्ती पर फिक्स करने में सहायता करता है। आसंगांग से, पतला खूंटी (peg) जैसा संक्रमण कवकतंतु विकसित होता है जो परपोषी की पत्ती में घुसने का अपना रास्ता बना लेता है।

24°C तक तापमान तथा निम्न आपेक्षित आर्द्रता पर बीजाणुधानी कोनिडियम की भांति ही व्यवहार करते हुए सीधे ही अंकुरित हो जाती है। ये जनन नलिका अथवा छोटा कवकतंतु उत्पन्न करते हुए अंकुरित हो जाती है।

वे बीजाणुधानियां जो मिट्टी में धंस जाती हैं वे अंकुरित होकर कंदों को संक्रमित करती हैं। इसके फलस्वरूप कंद, निकालने के समय तक अथवा संग्रह करने के दौरान सड़ जाते हैं। अनुकूल स्थितियों में अनेकों अलैंगिक पीढ़ियां एक ही वर्धन ऋतु में उत्पन्न हो सकती हैं। इसके फलस्वरूप रोग को फैलाने के लिए कवक तेजी से फैलता है।

लैंगिक प्रजनन

लैंगिक प्रजनन विषमयुग्मकी प्रकार का होता है। नर लैंगिक अंग पुंधानी तथा मादा लैंगिक अंग स्त्रीधानी होता है। ये छोटी पार्श्व शाखाओं के शीर्षों पर क्रमशः पुंधानी तथा स्त्रीधानी आरंभक के रूप में उगते हैं (चित्र 9.9 a)। *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* विषमथैलसी होता है।

पुंधानी एक गदा-आकार संरचना होती है जिसमें आरंभ में एक या दो केन्द्रक होते हैं। बाद में केन्द्रक विभाजित होते हैं तथा लगभग 12 केन्द्रक उत्पन्न करते हैं (चित्र 9.9 b)। निषेचन के समय सिर्फ एक क्रियाशील नर केन्द्रक बचा रहता है तथा अन्य नष्ट हो जाते हैं। स्त्रीधानी पुंधानीय शाखा के पास वाले कवकतंतु पर विकसित होती है। यह पुंधानी के आगे तक वृद्धि कर जाती है तथा फूल कर नाशपाती के आकार की या गोलाकार संरचना बनाती है (चित्र 9.9 c)।

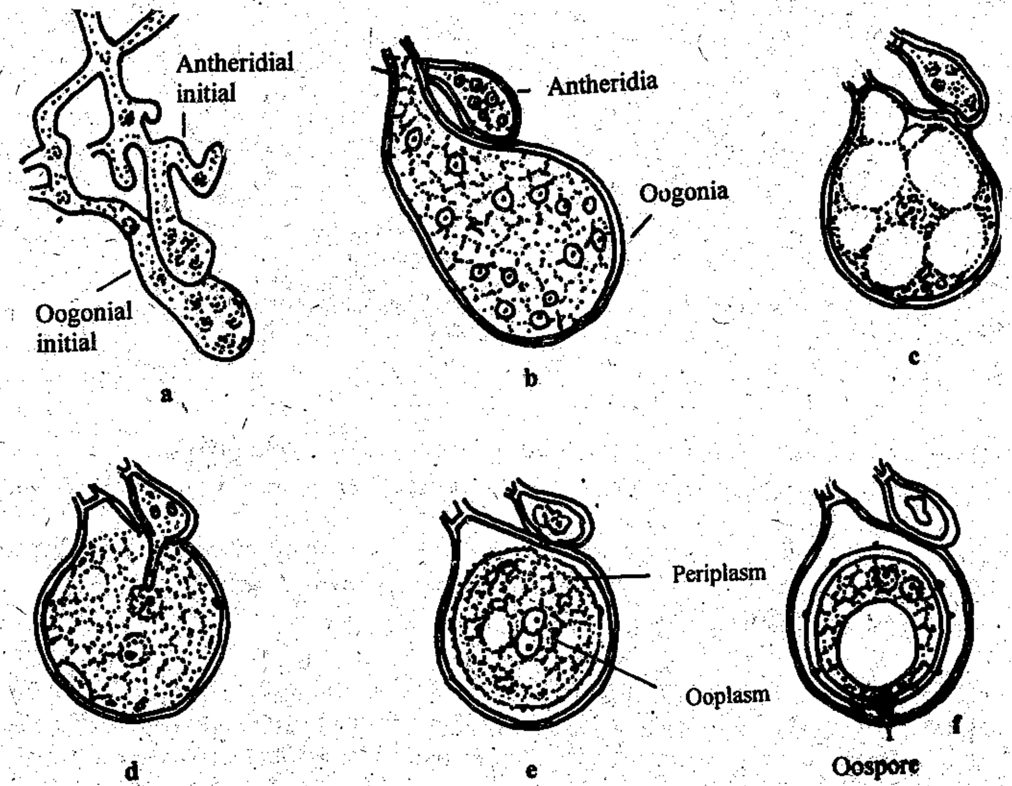

चित्र 9.9 : *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* में लैंगिक प्रजनन की अवस्थाएं।

इसमें सघन कोशिकाद्रव्य तथा अनेकों केन्द्रक होते हैं (लगभग 40)। स्त्रीधानी का कोशिकाद्रव्य बाहरी बहुकोशिकीय परिद्रव्य (periplasm) तथा केन्द्रीय एककेन्द्रकी डिम्बद्रव्य (ooplasm) में विभाजित हो जाता है। केन्द्रीय केन्द्रक दो में विभाजित हो जाता है तथा उनमें एक नष्ट हो जाता है। जीवित रहने वाला केन्द्रक अंड केन्द्रक की भांति कार्य करता है। परिद्रव्य के केन्द्रक बाद में नष्ट हो जाते हैं।

स्त्रीधानी की भित्ति एक निश्चित बिन्दु पर एक ग्राही बिन्दु बनाने के लिए फूल जाती है। स्त्रीधानी की भित्ति इस बिन्दु पर विघटित हो जाती है (चित्र 9.9 d)। इस छिद्र के द्वारा पुंधानी एक छोटी निषेचन नलिका निकालती है। निषेचन नलिका परिद्रव्य को भेद देती है तथा डिम्बद्रव्य तक पहुंच जाती है। यहां ये खुल जाती है तथा नर केन्द्रक को उसको घेरे हुए कोशिकाद्रव्य सहित उसमें पहुंचा देती है। नर तथा मादा केन्द्रक युग्मित हो जाते हैं, और इस तरह निषेचन हो जाता है (चित्र 9.9 f)।

निषेचित अंड अपने आसपास मोटी भित्ति स्रावित कर लेता है तथा निषिक्तांड (oospore) बन जाता है। जब स्थितियां अनुकूल होती हैं तो निषिक्तांड अंकुरित हो जाता है। ऐसा माना जाता है कि अंकुरण के दौरान अर्धसूत्री विभाजन हो जाता है। निषिक्तांड का अंकुरण परपोषी के ऊतक के क्षय होने के बाद होता है। निषिक्तांड एक जनन नलिका बाहर निकालता है जो सीधे ही माइसीलियम में विकसित हो सकती है अथवा ये अंतस्थ बीजाणुधानी धारण कर सकती है। बीजाणुधानी के अंदर जूस्पोर्स बनते हैं जो मुक्त होने के बाद नए माइसीलियम में विकसित हो जाते हैं।

जीवनचक्र

फाइटोफ्थोरा के जीवनचक्र में एक अलैंगिक चक्र होता है जो अनुकूल परिस्थितियों के दौरान दोहराया जा सकता है। लैंगिक चक्र प्रतिकूल परिस्थितियों के आने के पहले ही संपन्न हो जाता है तथा विश्रांति बीजाणु (resting spore) बन जाता है। ये चक्र सामान्यतः एक दूसरे के साथ एकान्तरित होते रहते हैं।

बोध प्रश्न 9.2

फाइटोफ्थोरा से संबंधित निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) *फाइटोफ्थोरा इन्फेस्टेन्स* प्रभाग .... का सदस्य है।

ii) यह .... की फसल में भयंकर रोग उत्पन्न करता है।

iii) कवक स्वयं को परपोषी की पत्ती पर एक छोटे कवकतंतु के द्वारा जमाता है जो .... कहलाता है।

iv) *फाइटोफ्थोरा* के जूस्पोर्स एक समान तथा .... होते हैं।

v) लैंगिक प्रजनन .... प्रकार का होता है तथा नर और मादा अंग .... थैलसों पर बनते हैं।

9.3.2 *राइजोपस* (*Rhizopus*)

राइजोपस प्रभाग जाइगोमाइकोटा (Zygomycota) का सदस्य है। ये आमतौर पर डबलरोटी की फंफूदी कहलाता है क्योंकि यह अक्सर बासी (stale) डबलरोटी पर उगता हुआ पाया जाता है। ये मृतजीवी कवक है। ये सड़े हुए फलों, सब्ज़ियों तथा अन्य खाद्य सामग्री पर भी उगता है। *राइजोपस स्टोलॉनीफर* (*R. stolonifer*) कभी-कभी विकल्पी (facultative) परजीवी के रूप में स्ट्रॉबेरी पर उगता है तथा उसमें एक संक्रमण रोग करता है जिसे 'लीक' (leak) कहते हैं तथा ये शकरकंदी का मृदु विगलन रोग (soft rot disease of sweet potatoes) भी उत्पन्न करता है।

माइसीलियम सफेद रूई-जैसा फूला हुआ पिंड होता है जिसमें असंख्य पतले, शाखित कवकतंतु होते हैं। माइसीलियम में तीन प्रकार के कवकतंतु होते हैं : i) मूलाभासी (rhizodal), ii) भूस्तारी (stolon) तथा iii) बीजाणुधानीधर (sporangiophores) (चित्र 9.10 a)। मूलाभासी कवकतंतु भूरे, पतले तथा शाखित मूलीय कवकतंतुओं का गुच्छा होता हैं जो भूस्तारी की निचली सतह से कुछ निश्चित बिन्दुओं पर उगते हैं जो आभासी आसंधि बिन्दु (apparent nodal point) होते हैं। ये कवकतंतु कवक को आधार से संलगन (anchorage) में तथा जल और पोषक तत्वों के अवशोषण में सहायता करते हैं।

वायवीय कवकतंतु जो आधार की सतह के ऊपर क्षैतिज रूप से उगते हैं, वे भूस्तारी कहलाते हैं। ये कवकतंतु अपेक्षाकृत बड़े तथा हल्के से चापयुक्त (arched) होते हैं। भूस्तारी तेजी से सभी दिशाओं में उगते हैं तथा पूर्णतः आधार की सतह को भर देते हैं।

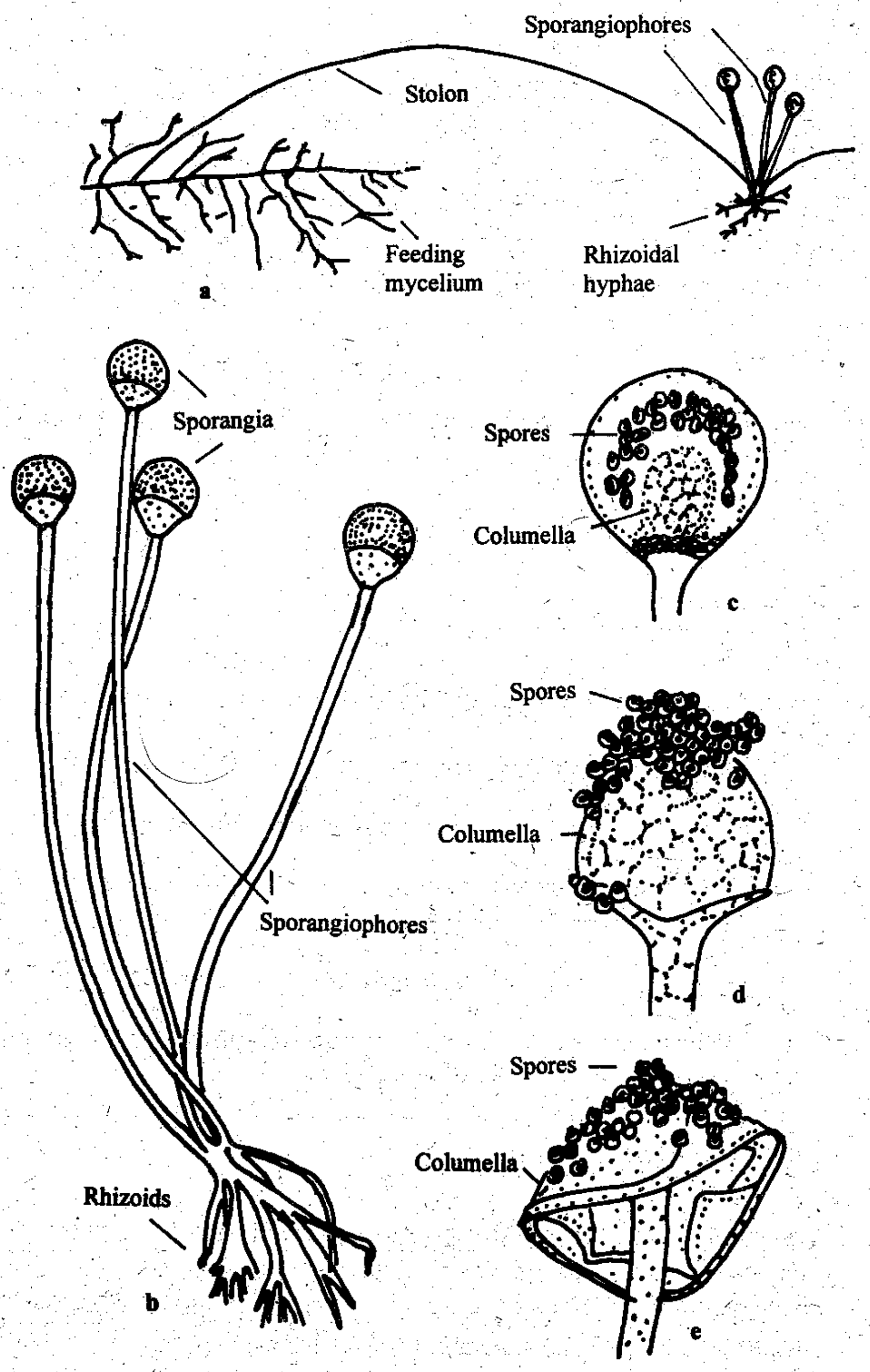

चित्र 9.10 : *राइजोपस स्टोलोनीफर* : a) माइसीलियम के तीन प्रकार के कवकतंतु, b) मूलाभासी कवकतंतु के एक बिंदु पर विकसित होते बीजाणुधानीधर, c) बीजाणुधानी की विस्तृत संरचना, d) अंतर्वलित स्तंभक, e) बीजाणुओं का प्रस्फुटन।

तीसरी प्रकार के कवकतंतु बीजाणुधानीधर कहलाते हैं जो प्रजनन प्रावस्था के दौरान विकसित होते हैं। ये बीजाणुधानीधर आभासी आसंधि क्षेत्रों से, मूलाभासी कवकतंतु के विपरीत दिशा में गुच्छों में उगते हैं। वे ऊर्ध्वाधर रूप से बीजाणुधानियों को अपने शीर्ष पर धारण किए हुए उगते हैं।

अलैंगिक प्रजनन

राइजोपस अलैंगिक रूप से बहुकेन्द्रकी, अ-चल बीजाणुओं द्वारा प्रजनन करता है जो छोटी, गोल, काली बीजाणुधानियों में उत्पन्न होते हैं। ये बीजाणुधानियां अंतस्थ तथा एकल रूप से अशाखित बीजाणुधानीधरों पर उगती हैं (चित्र 9.10 b)। परिपक्व बीजाणुधानी दो भागों में विभाजित रहती है, एक केन्द्र में कम सघन, धानीयुक्त क्षेत्र जिसमें कम केन्द्रक होते हैं जो स्तभंक (columella) कहलाता है तथा परिधीय सघन क्षेत्र जिसमें अनेकों केन्द्रक होते हैं जो बीजाणुयुक्त (sporoferous) क्षेत्र कहलाता है। स्तंभक में कोशिकाद्रव्य बीजाणुधानीधर के कोशिकाद्रव्य के साथ सतत् होता है।

बीजाणुयुक्त क्षेत्र में विखंडन (cleavage) होने पर अनेकों बहुकेन्द्रकी खंड बन जाते हैं। ये खंड गोल हो जाते हैं तथा अपने चारों ओर भित्ति स्रावित करके धानी बीजाणु (sporangiospores) बन जाते हैं। ये एककोशिकीय, बहुकेन्द्रकी अगतिशील अचल बीजाणु (aplanospores) होते हैं जो शक्ल में गोलाकर से अंडाकार तक होते हैं (चित्र 9.10 c)। जब बीजाणु परिपक्व हो जाते है तो बीजाणुधानी फटकर खुल जाती है तथा बीजाणुओं के पिंड को मुक्त कर देती है (चित्र 9.10 d तथा e)। भित्ति का एक भाग बीजाणुधानी के आधार पर कॉलर जैसी झल्लरी (fringe) की शक्ल का रह जाता है।

बीजाणु वायु के द्वारा परिक्षेपित हो जाते हैं। उपयुक्त परिस्थितियों में, उपयुक्त आधार पर गिरने पर बीजाणु अंकुरित होकर छोटी जनन नलिका निकालता है जो और वृद्धि करती है तथा सघन रूप से शाखित होकर तीन प्रकार के कवकतंतु उत्पन्न करती है।

प्रतिकूल परिस्थितियों में *राइजोपस* क्लैमिडोबीजाणु भी उत्पन्न करता है। जैसा कि आपने पढ़ा है वे मोटी भित्ति वाले बीजाणु होते हैं जिनमें खाद्य पदार्थ संचित रहता है। वे अंतर्वेशी (intercalarily) रूप से उत्पन्न होते हैं (चित्र 9.1 d को देखिए)। वे उन प्रतिकूल परिस्थितियों को पार करने में सहायक होते हैं जिस अवधि के दौरान माइसीलियम नष्ट हो जाता है। अनुकूल स्थितियों के आगमन पर वे अंकुरित होकर सामान्य माइसीलियम बनाते हैं।

लैंगिक प्रजनन

जब वर्धन काल समाप्त होने लगता है तो *राइजोपस* लैंगिक रूप से प्रजनन करता है। लैंगिक प्रजनन संयुग्मन (conjugation) प्रकार का होता है। इसमें दो युग्मकधानियां युग्मित हो जाती हैं। आपने ऊपर पढ़ा है कि इस प्रकार का जीवद्रव्य का युग्मन युग्मधानीय संयुग्मन (gametangial copulation) कहलाता है। *राइजोपस* की कुछ जातियां समथैलसी होती हैं जबकि अन्य विषमथैलसी होती हैं। विषमथैलसी जातियो में माइसीलियम दो युग्मन प्रकारों या विभेदों के होते हैं जिनमें एक धन (+) तथा एक ऋण (–) प्रकार का होता है।

लैंगिक प्रजनन के दौरान, दोनों संगम (mating) प्रकार (+ तथा –) के कवकतंतु जो युग्माणुधर (zygophores) कहलाते हैं, वे एक दूसरे की ओर आकर्षित होते हैं (चित्र 9.11 a)। वे युग्मन शाखाएं उत्पन्न करते हैं जो प्राक्युग्मधानियां (progametangia) कहलाती हैं, जो अपने सिरों पर मिलती हैं (चित्र 9.11 b)। प्राकयुग्मकधानियों के सिरे कोशिकाद्रव्य और केन्द्रक के संग्रह के कारण बड़े हो जाते हैं, तथा आधारीय भाग से अनुप्रस्थ भित्तियों के द्वारा कट जाते हैं (चित्र 9. 11 c) अंतस्थ भाग निलंबक (suspensor) कहलाता है। संपूर्ण युग्मकधानी अचल युग्मक (aplanogamete) में परिवर्तित हो जाती है (चित्र 9.11 d)। दोनों युग्मकधानियां एक ही साइज की हो सकती हैं अथवा उनमें से एक दूसरी से थोड़ी छोटी या बड़ी हो सकती है।

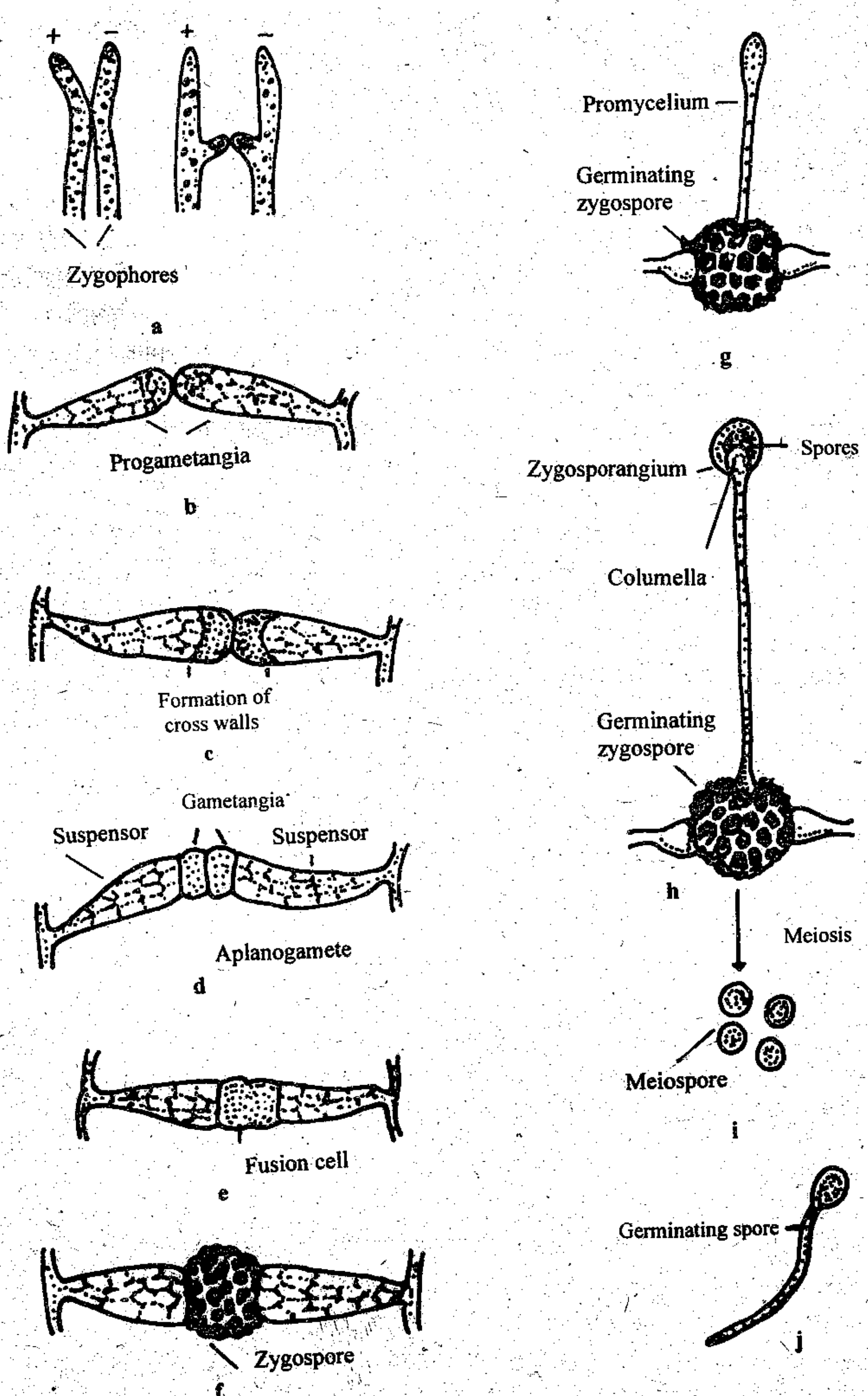

चित्र 9.11 : *राइजोपस स्टोलॉनीफर* में लैंगिक प्रजनन की प्रावस्थाएं।

जब युग्मकधानियां परिपक्व हो जाती हैं तो उनके बीच की भित्तियों का विलय (dissolve) हो जाता है तथा दोनों युग्मक युग्मित होकर जाइगोबीजाणु (zygospore) बनाते हैं (चित्र 9.11 e तथा f)। जाइगोबीजाणु साइज में बढ़ जाता है तथा अपने चारों ओर मोटी दो परतीय भित्ति स्रावित कर लेता है। बाहरी परत गहरी तथा किणकीय (warty) होती है। यह बाह्यचोल (exine) या बीजाणुबर्हिचोल (exospore) कहलाती है। भीतरी परत मोटी होती है तथा अंतःचोल (intine) या बीजाणु अंतश्चोल (endospore) कहलाती है। जैसे-जैसे जाइगोबीजाणु साइज में बढ़ता जाता है तो जाइगोबीजाणु को लिए हुए युग्मन कोशिका की भित्ति फट जाती है तथा वह मुक्त हो जाता है।

जाइगोबीजाणु के अंकुरण से पहले, द्विगुणित केन्द्रक अर्धसूत्री रूप से विभाजित होते हैं तथा

अनेक अगुणित केन्द्रक उत्पन्न करते हैं। अर्धसूत्री विभाजन के दौरान विभेदों का अलगाव हो जाता है। जाइगोबीजाणु अंकुरण के दौरान पानी अवशोषित कर लेते हैं और फूल जाते हैं। इसके फलस्वरूप बाहरी भित्ति बाह्यचोल फट कर खुल जाती है। भीतरी भित्ति आंतरचोल भीतरी तत्वों के साथ जनन नलिका या प्रोमाइसीलियम के रूप में उगती है (चित्र 9.11 g)। प्रोमोइसीलियम सीमित वृद्धि का होता है तथा अंतरस्थ बीजाणुधानी उत्पन्न करता है। यह जाइगोबीजाणुधानी या जननबीजाणुधानी कहलाती है (चित्र 9.11 h)। बीजाणुधानी के अंदर अनेक, अचल जनन बीजाणु बनते हैं जो मायोबीजाणु (meiospore) कहलाते हैं। वे परिपक्व होने पर मुक्त हो जाते हैं जो नए माइसीलियम में विकसित हो जाते हैं (चित्र 9.11 i तथा j)।

जीवनचक्र

राइजोपस का जीवनचक्र दो प्रावस्थाओं, लैंगिक तथा अलैंगिक का बना होता है। अलैंगिक प्रावस्था में माइसीलियम, बीजाणुधानीधरों, बीजाणुधानियों तथा धानीबीजाणुओं होते हैं। जीवनचक्र की यह प्रावस्था अनुकूल परिस्थितियों में कवक की अगुणित प्रावस्था को प्रवर्धित करने का कार्य करती है। लैंगिक प्रावस्था धन तथा ऋण विभेदों के माइसीलियम, आद्ययुग्मकधानियों, युग्मकधानियों, अचल युग्मक, जाइगोबीजाणु, आद्यमाइसीलियम, जनन बीजाणुधानी तथा जनन बीजाणुओं की बनी होती हैं। इनमें से जाइगोबीजाणु एकमात्र द्विगुणित संरचना होती है। अन्य सभी अगुणित होती है। इस प्रकार का लैंगिक चक्र अगुणितकी (haplontic) कहलाता है जिसकी विशेषता युग्मनजी अर्धसूत्री विभाजन तथा एकमात्र परिपक्व कवक के रूप में अगुणित माइसीलियम होता है।

क्या आपको ध्यान है कौन-सा शैवाल अगुणितकी जीवनचक्र दर्शाता है?

....

....

राइजोपस में विषमथैलसता पाई जाती है जिसमें एक ही जाति के माइसीलियम आकारिकी रूप से समान परंतु शरीरक्रियात्मक रूप से भिन्न होते हैं। नर तथा मादा माइसीलियम में आभासी रूप से कोई अंतर नहीं होता है सिर्फ उनके लैंगिक व्यवहार भिन्न होते हैं। इस प्रकार के अंतर को धन तथा ऋण चिन्हों से अलग-अलग संबोधित किया जाता है। इसे सबसे पहले ब्लेक्सली (Blackeslee) द्वारा 1904 में खोजा गया था। यह बीज में लैंगिक-प्रावस्था की एकलिंगाश्रयी स्थिति की उत्पत्ति का प्रथम सूचक है।

बोध प्रश्न 9.3

निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) *राइजोपस* प्रभाग .... का सदस्य है।

ii) वे कवकतंतु जो आधार की सतह पर क्षैतिज रूप से उगते हैं वे .... कहलाते हैं।

iii) *राइजोपस* में अलैंगिक प्रजनन .... के निर्माण के कारण पाया जाता है।

iv) *राइजोपस* में दोनों संयुग्मन प्रकार के कवकतंतु .... कहलाते हैं।

v) जाइगोबीजाणु अंकुरण के बाद .... बनाते हैं।

9.3.3 न्यूरोस्पोरा (*Neurospora*)

न्यूरोस्पोरा प्रभाग ऐस्कोमाइकोटा (Ascomycota) का सदस्य है। ये एक मृतजीवी कवक है। प्रचलित आम जातियां — *न्यूरोस्पोरा सीटोफिला* (*N. sitophila*), *न्यूरोस्पोरा क्रेसा* (*N. crassa*) तथा *न्यूरोस्पोरा टेट्रास्पर्मा* (*N. tetrasperma*) है। यह जातियां सड़ी पत्तियों, चमड़े, डबलरोटी

जली हुई भूमि तथा जली हुई वनस्पति पर पाई जाती है। *न्यूरोस्पोरा क्रेसा* आमतौर पर रेड ब्रेड मॉल्ड कहलाता है, जबकि *न्यूरोस्पोरा सीटोफिला* बेकरी मॉल्ड कहलाता है। *न्यूरोस्पोरा* कवकों और जीवाणुओं के प्रयोगशालीय संवर्धनों का आम संदूषक (contaminant) है। *न्यूरोस्पोरा* अधिकांशतः विषमथैलसी होता है, और + तथा – विभेदों में विभेदित रहता है।

अलैंगिक प्रजनन

न्यूरोस्पोरा के कवकतंतु पटयुक्त तथा बहुकेन्द्रकी कोशिकाओं युक्त होते हैं। माइसीलियम तेजी से वृद्धि करता है तथा आधार पर प्रशाखन करता है। यह अलैंगिक रूप से कोनिडियम द्वारा प्रजनन करता है जो अपने साइज के आधार पर माइक्रोकोनिडिया (microconidia) तथा मेक्रोकोनिडिया (macroconidia) कहलाते हैं (चित्र 9.12 a से c)। माइक्रो तथा मैक्रो

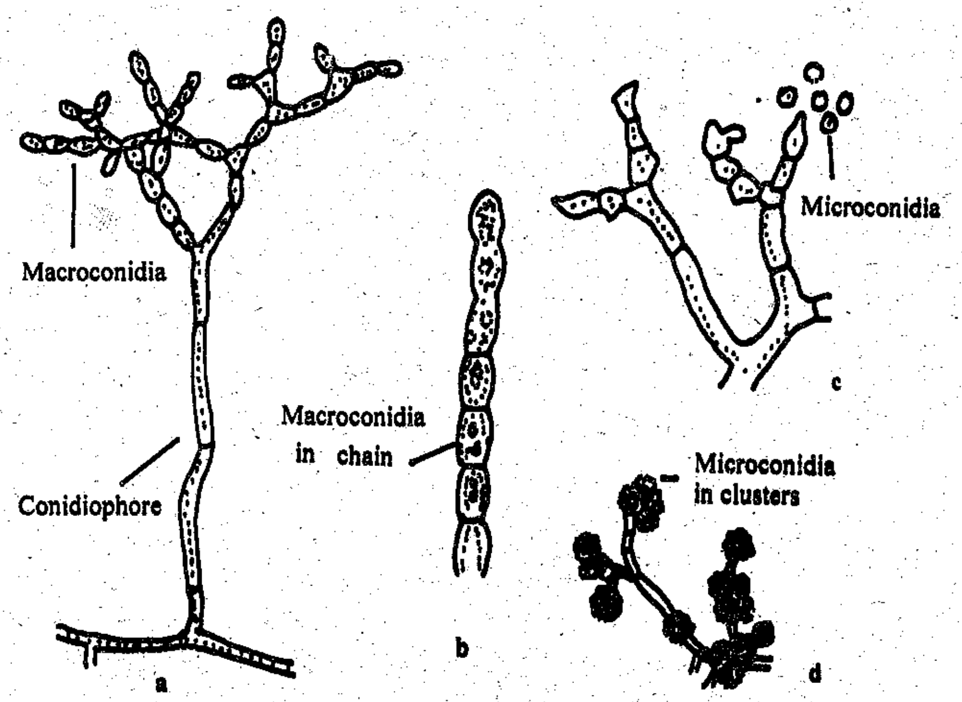

चित्र 9.12: *न्यूरोस्पपोरा क्रेसा* में अलैंगिक प्रजनन : a) मैक्रोकोनिडिया धारण किए हुए कोनिडियमधर, b) आवर्धित मैक्रोकोनिडिया, c) माइक्रोकोनिडिया, d) माइक्रोकोनिडिया के आर्वधित गुच्छे।

कोनिडिया दोनों नए माइसीलियम में विकसित हो जाते हैं। कोनिडियमधर वायवीय कवकतंतु से विकसित होते हैं तथा बड़ी संख्या में गुलाबी मैक्रोकोनिडिया शाखित श्रृंखलाओं में उत्पन्न करते हैं। ये कोनिडिया अंडाकार, बहुकेन्द्रकी तथा बड़े होते हैं व हवा के द्वारा वितरित होते हैं। अपेक्षाकृत छोटे, अंडाकार, चिपचिपे माइक्रोकोनिडिया भी ऊर्ध्व वायवीय शाखाओं पर पार्श्व रूप से विकसित होते हैं।

लैंगिक प्रजनन

मादा लैंगिक अंग एक बहुकोशिकीय संरचना होती है जो प्राक्पेरीथीसियम (protoperithecium) या बिलबिट (bilbit) कहलाती है (चित्र 9.13 a)। प्राक्पेरीथीसियम में कायिक कवकतंतु बहुकेन्द्रकी ऐस्कोधानी (ascogonium) को घेरे रहते हैं एस्कोधानी की लंबी कवकतंतुकीय शाखाएं स्त्रीधानी रोम (trichogyne) की भांति व्यवहार करती हैं। अचल पुमणु यानि स्पर्मेशिया या कोनिडिया नर कोशिकाओं की भांति कार्य करते हैं। स्पर्मेशिया रासायनिक रूप से स्त्रीधानीरोम की ओर आकर्षित होते हैं तथा उससे मिल जाते हैं (चित्र 9.12 b)। स्त्रीधानीरोम तथा युग्मन करने वाले स्पर्मेशिया के बीच की भित्ति का विलय हो जाता है तथा स्पर्मेशिया के अंतर्तत्व ऐस्कोधानी में चले जाते हैं। परन्तु इस अवस्था में नर तथा मादा केन्द्रकों के बीच में कोई युग्मन नहीं होता है, अतः अनेकों द्विकेन्द्रक ऐस्कोधानी में उपस्थित रहते हैं

ऐस्कजन कवकतंतु (ascogenous hyphae) के विकसित होने के थोड़ी देर बाद ही द्विकेन्द्रक ऐस्कजन कवकतंतु में चले जाते हैं (चित्र 9.13 c)। प्रत्येक ऐस्कजन कवकतंतु की अंतस्थ कोशिका में दो केन्द्रक होते हैं, एक नर का तथा दूसरा मादा का। अब अंतस्थ कोशिका मुड़ जाती हैं तथा क्रोजियर या हुक बनाती हैं (चित्र 9.13 d)। दोनों केन्द्रक साथ-साथ विभाजित होते हैं तथा उसके बाद भित्तियों के बनने से एक केन्द्रक शीर्ष कोशिका में, दो उसके बाद वाली कोशिका में, जिनमें से एक नर तथा दूसरा मादा आता है तथा एक आधारीय कोशिका में वितरित हो जाता है (चित्र 9.13 e तथा f)। द्विकेन्द्रकी कोशिका बड़ी हो जाती है इसके दोनों केन्द्रक युग्मित हो जाते हैं तथा द्विगुणित केन्द्रक बनाते हैं (चित्र 9.13 g)। इन एस्कजन कवकतंतुओं से ऐस्कस विकसित हो जाते हैं। ये केन्द्रक पहले अर्धसूत्री रूप से विभाजन करता है और उसके बाद समसूत्री विभाजन करता है तथा आठ अगुणित केन्द्रक उत्पन्न करता है (चित्र 9.13 h तथा i)। कोशिकाद्रव्य का भी विभाजन हो जाता है। आठ अगुणित जीवद्रव्य (protoplast) बन जाते हैं जो आठ ऐस्कोबीजाणुओं में रूपांतरित हो जाते हैं (चित्र 9.13 i)। *न्यूरोस्पोरा क्रेसा* तथा *न्यूरोस्पोरा सीटोफिला* आठ बीजाणुयुक्त, द्विलिंगी तथा विषमथैलसी जातियां हैं। *न्यूरोस्पोरा डॉजिआई* (*N. dodgei*) तथा *न्यूरोस्पोरा टेरीकोला* (*N. terricola*) समथैलसी जातियां हैं।

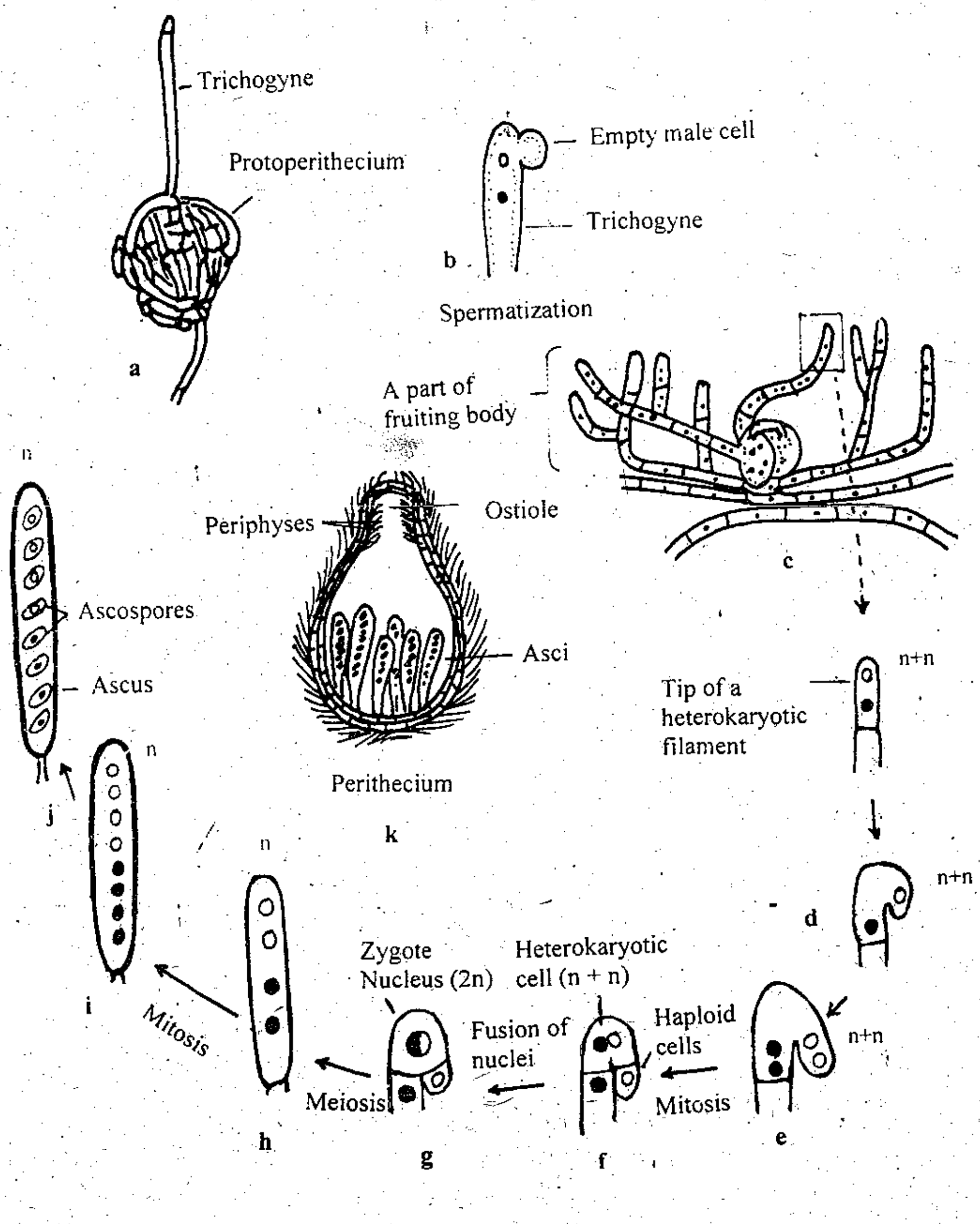

चित्र 9.13 : *न्यूरोस्पोरा क्रेसा* में लैंगिक प्रजनन की अवस्थाएं।

न्यूरोस्पोरा टेट्रास्पर्मा (*N. tetrasperma*) में सिर्फ अर्धसूत्री विभाजन होता है जिसके फलस्वरूप चार अगुणित ऐस्कोबीजाणु ही बनते हैं।

वयस्क पेरीथीसियम नाख रूप (pyriform), गहरे रंग की तथा चोंचयुक्त संरचना होती है जो गहरे रंग की कूटमृदूतकी कवक फलभित्ति (peridium) द्वारा घिरी रहती हैं (चित्र 9.13 k)। चोंच में एक अंतस्थ छिद्र होता है जिसे ऑस्टियोल (ostiole) कहते हैं। ग्रीवा तथा ऑस्टियोल में पेरीफिसिस (periphyses) या छोटे, बंध्य कवकतंतु होते हैं। परिपक्व पेरीथीसियम के अंदर बहुत सारे ऐस्कस तथा पेरीफिसिस पाए जाते हैं। ऐस्कस में उत्पन्न होने वाले आठ ऐस्कोबीजाणुओं में से चार एक संयुग्मन प्रकार के तथा अन्य चार विपरीत संयुग्मन प्रकार के होते हैं। ऐस्कोबीजाणु गहरे भूरे या काले होते हैं तथा इनकी बाहरी भित्तियों पर तंत्रकोशिकाओं (neuron) जैसे खांचे होते हैं। इनके कारण ही कवक को *न्यूरोस्पोरा* कहते हैं। जब यह तरुण होते हैं तो ऐस्कोबीजाणु एककेन्द्रकी होते हैं तथा बाद में वे द्विकेन्द्रकी हो जाते हैं। ऐस्कोबीजाणु पेरीथीसियम में मुक्त हो जाते हैं तथा फलन काया से बाहर निकाल दिए जाते हैं। वे अंकुरित हो जाते हैं तथा खुरदरे, पटयुक्त तेजी से बढ़ने वाले माइसीलियम को उत्पन्न करते हैं जिसमें बहुकेन्द्रकी कोशिकाएं पाई जाती हैं।

जीवन चक्र

न्यूरोस्पोरा के जीवनचक्र में दो प्रावस्थाएं होती हैं अलैंगिक तथा लैंगिक। अलैंगिक प्रावस्था कायिक माइसीलियम, माइक्रो तथा मैक्रो कोनिडिया के द्वारा प्रदर्शित होती है जो कवक को तेजी से फैलने में सहायता करते हैं। लैंगिक प्रावस्था ऐस्कोधानी, पेरीथीसियम तथा एसाई के द्वारा प्रदर्शित होती है। ऐस्कोबीजाणु मायोबीजाणु (meiospores) होते हैं जो अलैंगिक तथा लैंगिक प्रावस्थाओं के बीच मध्यवर्ती कड़ी होते हैं। जीवनचक्र में द्विगुणित प्रावस्था ऐस्कस के भीतर थोड़े से समय के लिए दिखाई पड़ती है। बाकी जीवनचक्र में सिर्फ अगुणित अवस्था होती है।

बोध प्रश्न 9.4

निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) *न्यूरोस्पोरा* प्रभाग .... का सदस्य है।

ii) *न्यूरोस्पोरा* में अलैंगिक प्रजनन .... के निर्माण के द्वारा होता है जो दो प्रकार के .... तथा .... होते हैं।

iii) *न्यूरोस्पोरा* में मादा लैंगिक अंग .... होती हैं।

iv) एस्कोजन कवकतंतु एक फलन काया के अंदर रहते हैं जिसे .... कहते हैं।

v) ऐस्कोबीजाणु .... के अंदर बनते हैं।

9.3.4 *पक्सिनिया* (*Puccinia*)

पक्सिनिया प्रभाग बेसिडियोमाइकोटा (Basidiomycota) का सदस्य है। *पक्सिनिया* एक बड़ा वंश है जिसमें 700 से अधिक जातियां अब तक रिपोर्ट की जा चुकी हैं। लगभग 150 जातियां भारत में पाई जाती हैं। ये एक अविकल्पी परजीवी (obligate parasite) के रूप में अनाजों, मिलैट्स (millets) तथा कई अन्य आर्थिक महत्व की फसलों पर पाया जाता है। सबसे प्रचलित जाति *पक्सिनिया ग्रैमिनिस* (*Puccina graminis*) है जो अधिकांशतः गेहूँ को तथा कभी-कभी जौ, जई, राई आदि को संक्रमित करती है। इकाई 10 में आप इस रोग के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे।

पक्सिनिया ग्रैमिनिस एक किट्ट (rust) कवक है जो गेहूँ को प्राथमिक तथा झड़बेड़ी (barberry) को द्वितीयक परपोषी की भांति उपयोग करता है। ऐसे रोगजनक जिन्हें अपना जीवनचक्र पूरा करने के लिए दो अलग–अलग परपोषियों की जरूरत पड़ती है वे भिन्नाश्रयी (heteroecious) जातियां कहलाती हैं।

इसमें जीवनचक्र में कुल मिलाकर पांच अवस्थाएं पाई जाती हैं। तीन अवस्थाएं यूरीडोबीजाणु (uredospores), टेल्यूटोबीजाणु (teleutospores) या टीलियोबीजाणु (teliospores), तथा बेसिडियोबीजाणु (basidiospores) गेहूँ के पादपों पर पाई जाती हैं जबकि, बाकी दोनों अवस्थाएं पिक्निडियमबीजाणु (pycnidiospores) तथा इसीडियमीबीजाणु (aeciospores) झड़बेरी की पत्तियों पर पाई जाती हैं। गेहूँ में माइसीलियम द्विकेन्द्रकी होता है तथा झड़बेरी में ये एककेन्द्रकी होता है। माइसीलियम पटयुक्त तथा अंतराकोशिकी होता है जिसमें गोलाकार चूषकांग होते हैं।

गेहूँ के पादप पर जीवनचक्र

निम्नलिखित बीजाणु अवस्थाएं प्राथमिक परपोषी गेहूँ पर पाई जाती हैं।

यूरीडियम तथा यूरीडोबीजाणु

गेहूँ के तने, पत्तियों या पर्णआच्छदों में द्विकेन्द्रकी माइसीलियम उपबाह्यत्वचीय (sub-epidermally) रूप में विकसित होता है तथा यूरीडीनियमी कोशिकाओं (uredinial cells) में विकसित हो जाता है। यूरीडीनियमी कोशिकाएं कवकतंतुओं के शीर्षों (hyphal tips) से खंभ (palisade) जैसी परत बाह्यत्वचा के नीचे बनाती हैं तथा यूरीडीनियमी बीजाणु (urediniospores) उत्पन्न करती हैं जो यूरीडोबीजाणु (uredospores) भी कहलाते हैं (चित्र 9.14 a)। *पक्सिनिया* के यूरीडीनियमी बीजाणु कोनिडिया प्रदर्शित करते हैं, जो द्विकेन्द्रकी प्रावस्था को उत्तरोत्तर (successive) पीढ़ियों तक दोहराते रहते हैं जब तक कि स्थितियां अनुकूल नहीं हो जाती हैं।

परिपक्व यूरोडोबीजाणु एक वृंतीय संरचना होती है, जो फूली हुई, गोलाकार या अंडाकार काया धारण किए रहती है। प्रत्येक यूरोडोबीजाणु में दो केन्द्रक होते हैं तथा यह मोटी कंटकीय भित्ति से घिरा रहता है। भित्ति में पतले क्षेत्र होते हैं जो जननछिद्र (germpores) कहलाते हैं। एकल यूरीडियम (बहुवचन-यूरीडीनिया) में 50,000 से 4,00,000 तक यूरीडीनियमी बीजाणु हो सकते हैं। यूरीडीनिया दीर्घवृतीय, लाल-भूरे या काले से कणिकीय स्फोट (pustule) जैसे दिखाई पड़ते हैं तथा ये परपोषी को किट्ट जैसा (rusty) स्वरूप प्रदान करते हैं और इसीलिए इस कवक का नाम (किट्ट कवक) है। यूरीडीनियमी बीजाणु स्फोट से वायु द्वारा ले जाये जाते हैं तथा जब ये ताजे गेहूँ के परपोषी पर गिरते हैं, तो ये अंकुरित होकर द्विकेन्द्रकी माइसीलियम उत्पन्न करते हैं। अतः यूरीडिनियमी बीजाणु अनुकूल परिस्थितियों में कवक के अलैंगिक प्रजनन मे सहायता करते हैं।

टीलियम तथा टीलियोबीजाणु

वर्धन ऋतु के अंतकाल में, कवक के माइसीलियम टीलियोबीजाणु (teliospores) उत्पन्न करने आरंभ कर देते हैं (चित्र 9.14 b)। जब टीलियोबीजाणु अकेले ही उत्पन्न होते हैं तो सोरस या स्फोट टेल्यूटोसोरस (teleutosori) या टीलियोसोरस (teliosori) कहलाते हैं। वे गहरे भूरे या काले रंग के होते हैं। टीलियोबीजाणु वृंतीय, द्विकोशिकी, तर्कुरूपी (spindle-shaped) संरचनाएं होती हैं, व प्रत्येक पट (septum) पर हल्की सी संकुचित रहती हैं। टीलियोबीजाणु की भित्ति मोटी तथा चिकनी होती है तथा उनके शीर्ष सामान्यतः नुकीले या गोल होते हैं। टीलियोबीजाणु की प्रत्येक कोशिका में एक जननछिद्र होता है। जननछिद्र ऊपरी टीलियोबीजाणु की कोशिका में शीर्ष पर होता है तथा निचली कोशिका में पट के समीप होता है।

टीलियोबीजाणु की प्रत्येक कोशिका द्विकेन्द्रकी होती है। मोटी भित्ति के कारण टीलियोबीजाणु

प्रतिकूल परिस्थितियों को भी झेल सकते हैं। परिपक्व होने पर टीलियोबीजाणु की प्रत्येक कोशिका के दोनों बीजाणु युग्मित होकर द्विगुणित केन्द्रक बनाते हैं।

टीलियोबीजाणु गेहूँ के पादप को संक्रमित नहीं कर सकते हैं। टेल्यूटोबीजाणु अगली बसंत ऋतु आने तक विश्रान्ति काल में रहते हैं। ये टीलियोबीजाणु विश्रान्ति काल के दौरान मृत परपोषी पादप पर अथवा भूमि के अंदर रह सकते हैं।

प्रत्येक टीलियोबीजाणु अंकुरित होकर बेसिडियोबीजाणु उत्पन्न करता है।

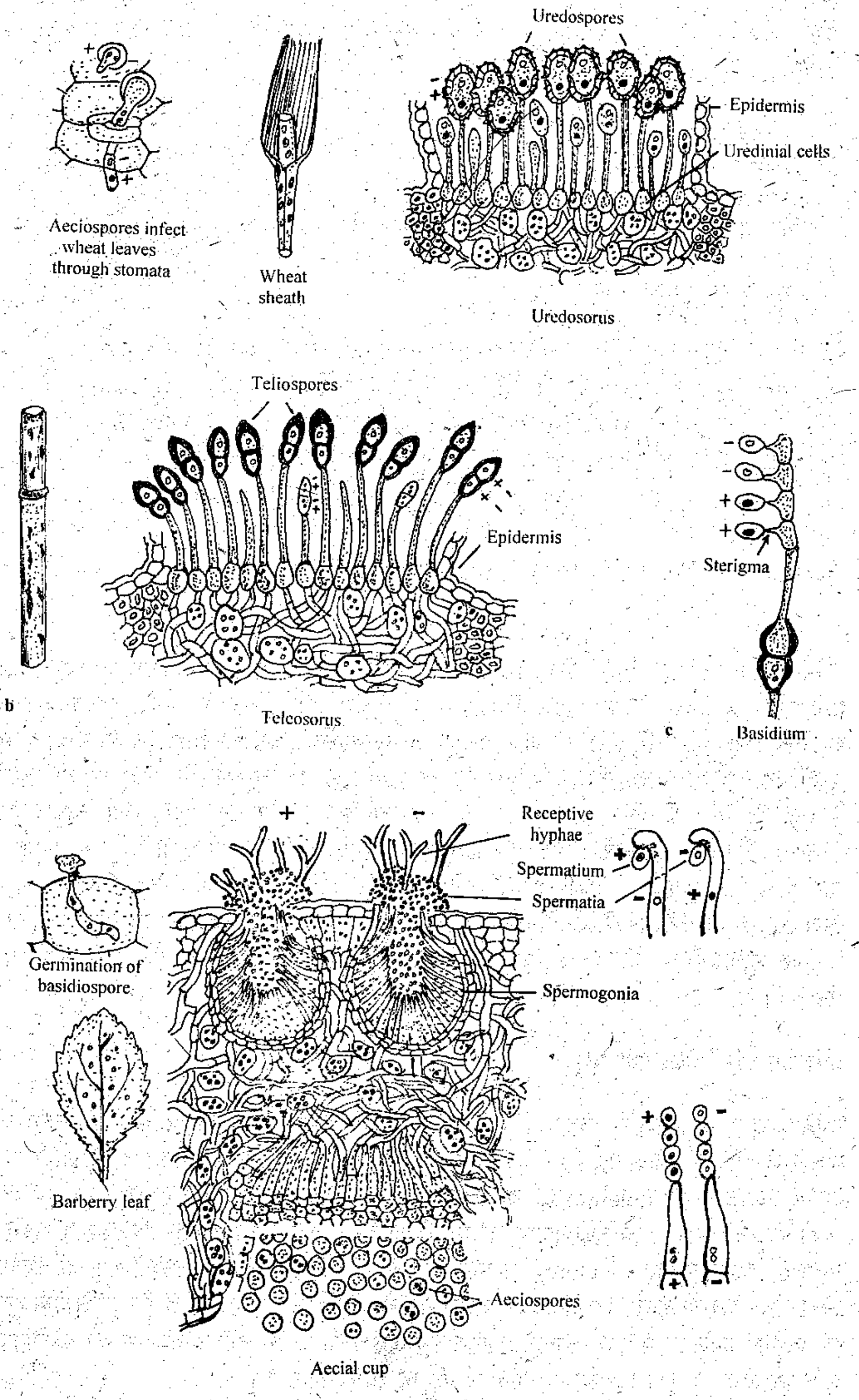

चित्र 9.14 : *पक्सिनिया ग्रैमिनिस* का जीवन चक्र।

बेसिडियम तथा बेसिडियोबीजाणु

यह अवस्था बेसिडियमी अवस्था को प्रदर्शित करती है (चित्र 9.14 c)। टीलियोबीजाणु की दोनों कोशिकाएं अधोबेसिडियम (hypobasidia) की भांति कार्य करती हैं। प्रत्येक अधोबेसिडियम से एक लंबी नलिका विकसित होती है जो अधिबेसिडियम (epibasidium) कहलाती है। प्रत्येक कोशिका का द्विगुणित केन्द्रक अपने अधिबेसिडियम में चला जाता है तथा अर्धसूत्री रूप से विभाजन करके चार अगुणित केन्द्रक बनाता है। अगुणित केन्द्रकों के बीच में अनुप्रस्थ भित्तियां विकसित हो जाती हैं और इस प्रकार प्रत्येक अधिबेसिडियम में चार अगुणित कोशिकाएं बन जाती हैं। इनमें से प्रत्येक कोशिका से छोटा खूंटी जैसा पार्श्व बहिर्वेशन (projection) विकसित हो जाता है जो प्रांगुल (sterigma) कहलाता है। प्रत्येक प्रांगुल के शीर्ष पर एक बेसिडियोबीजाणु निर्मित हो जाता है। विभेदों का विसंयोजन (segregation) बेसिडियोबीजाणु के निर्माण के दौरान संपन्न होता है। अतः, प्रत्येक अधिबेसिडियम में दो बेसिडियोबीजाणु धन विभेद के तथा अन्य दो ऋण विभेद के होते हैं। प्रत्येक बेसिडियोबीजाणु छोटा, एककोशिकीय, एककेन्द्रकी तथा अगुणित होता है।

बेसिडियोबीजाणु हवा में बल के साथ छोड़े जाते हैं। वे गेहूँ के पादप को संक्रमित नहीं करते हैं। वे तभी अंकुरित होते हैं जब वे झड़बेरी (*Berberis vulgaris*) के पादप पर गिरते हैं, जो विकल्पी या द्वितीय परपोषी होता है।

झड़बेरी की पत्ती पर जीवन चक्र

पक्सिनिया ग्रैमिनिस के जीवन चक्र की अगुणित अवस्था द्वितीय परपोषी तक ही सीमित है। इसमें प्राथमिक या अगुणित माइसीलियम तथा दो प्रकार के बीजाणु — स्पर्मगोनिया तथा ईशिया (aecia) होते हैं (चित्र 9.14 d)।

जब अगुणित बेसिडियोबीजाणु झड़बेरी की पत्तियों पर बैठ जाते हैं तो वह अंकुरित होकर प्राथमिक एककेन्द्रकी माइसीलियम बनाते हैं। कवकतंतु परपोषी के ऊतक के अन्तराकोशिकीय अवकाशों में उगते हैं। संक्रमण के बाद 3-4 दिनों में ही पूरे परपोषी के ऊतक में सघन कवकतंतु का जाल विकसित हो जाता है जो झड़बेरी की पत्ती पर बाहर से देखने पर छोटे, पीले से, गोलाकार स्फोटों के रूप में दिखाई पड़ता है। प्रत्येक स्फोट एक स्पर्मगोनियम अथवा एक पिक्निडियम को प्रदर्शित करता है।

परिपक्व स्पर्मगोनियम एक फ्लास्क-जैसी काया होती है। जो बाहर की ओर एक छिद्र द्वारा खुलती है जिसे ऑस्टियोल कहते हैं। स्पर्मगोनियम की गुहा में अनेकों, छोटी एककेन्द्रकी, सिरे से पतली होती शुंडाकार कोशिकाओं की खंभ-जैसी परत का अस्तर होता है जो स्पर्मेशियमधरों (spermatiophores) को प्रदर्शित करती है। प्रत्येक स्पर्मेशियमधर के शीर्ष से अनेकों, छोटे एककेन्द्रकी स्पर्मेशियम उत्पन्न होते हैं। ऑस्टियोल के निकट कुछ लंबे नुकीले कवकतंतु उत्पन्न होते हैं जो ऑस्टियोल से बाहर निकले रहते हैं। ये पेरीफिसिस कहलाते हैं। कुछ कवकतंतु जो बाहर निकले रहते हैं वे बहुत लंबे हो जाते हैं तथा वे ग्राही कवकतंतु या वक्र कवकतंतु (flexous hyphae) कहलाते हैं। स्पर्मेशियम नर कोशिकाओं की भांति कार्य करता है तथा लंबे ग्राही कवकतंतु स्त्रीधानी रोम की भांति व्यवहार करते हैं।

स्पर्मेशियम का स्त्रीधानीरोम पर स्थानांतरण अचल पुमणु युग्मन (spermatization) कहलाता है। परिपक्व स्पर्मगोनियम एक मकरंद (nectar) जैसा तरल पदार्थ स्रावित करता है जो ऑस्टियोल क्षेत्र पर एकत्रित हो जाता है। वे कीट जो मकरंद जैसे तरल की ओर आकर्षित होते हैं वे स्पर्मेशियम को एक स्पर्मगोनियम के स्त्रीधानीरोम से दूसरे स्पर्मगोनियम के स्त्रीधानीरोम तक स्थानांतरित कर देते हैं। जब स्पर्मेशियम तथा स्त्रीधानी रोम विपरीत विभेदों के होते हैं तो स्पर्मेशियम तथा स्त्रीधानीरोम के बीच की भित्तियों का विलय हो जाता है तथा स्पर्मेशियम के तत्व स्त्रीधानीरोम में चले जाते हैं। स्पर्मेशियम का केन्द्रक ग्राही कवकतंतु की आधारीय कोशिका तक पहुंच जाता है और इस प्रकार ये द्विकेन्द्रकी हो जाता है।

सुविकसित प्राथमिक माइसीलियम झड़बेरी की पत्ती के भीतर ही बाह्यत्वचा के ठीक नीचे गोलाकार कवक तंतुकीय पिंड उत्पन्न करता है जो आद्यईशियम (protoaecium) कहलाता है।

यह आद्यईशियम द्विकेन्द्रकी कोशिकाओं के विकास के साथ ही ईशियम में विकसित हो जाता है। प्रत्येक ईशियम की आधारीय कोशिकाएं बीजाणुधरों (sporophores) अथवा वृंत कोशिकाओं में दीर्घीकृत हो जाती हैं। इनमें से प्रत्येक आधारीय कोशिका में द्विकेन्द्रकी कोशिकाओं की एक शृंखला निचली बाह्यत्वचा की ओर कटती है। ये कोशिकाएं विभाजित होकर एक बड़ी कोशिका तथा एक छोटी कोशिका बनाती है। छोटी कोशिका अंतर्वेशी

सारणी 9.1 : कवकों के विभिन्न प्रभागों की विशेषताओं की तुलना

प्रभाग	माइसीलियम की विशेषताए	अलैंगिक प्रजनन	लैंगिक प्रजनन	उदाहरण
जाइगोमाइकोटा (600 जातियां)	संकोशिकी कवकतंतु	बीजाणु बीजाणुधानियों में	संयुग्मन, जाइगोबीजाणु	सामान्य रोटी की फंफूदी
बेसिडियोमाइकोटा (25,000 जातियां)	पटयुक्त कवकतंतु	खंडन	बेसिडियम द्वारा — बेसिडियोबीजाणु उत्पन्न	किट्ट (rust), कंड (smut), मशरूम
ऐस्कोमाइकोटा (30,000 जातियां)	पटयुक्त कवकतंतु या एककोशिकीय (यीस्ट)	कोनिडियम, मुकुलन (यीस्ट)	ऐस्कस द्वारा ऐस्कोबीजाणु उत्पन्न।	यीस्ट, फंफूदी, आसिता (mildew), मॅरिल्स (morels)
ड्यूटेरोमाइकोटा (10,000 जातियां)	पटयुक्त कवकतंतु	कोनिडियम	अज्ञात	*क्लैडोस्पोरियम* स्पी. (*Cladosporium*) *स्पोरोथ्रिक्स* स्पी. (*Sporothrix* sp.)

बाक्स आइटम 1

छत्रक (mushrooms)

खाद्य बटन मशरूम प्रभाग बेसिडियोमाइकोटा के सदस्य हैं। मशरूम एक फलन काया होती है। कवक का माइसीलियम भूमि की सतह के नीचे उगता है और सिर्फ जब स्थितियां अनुकूल होती हैं तब माइसीलियम स्थानीय गुच्छों (clumps) में समुच्चित हो जाते हैं तथा भूमि के ऊपर उग आते हैं। तब फलनकायाएं बटनों के रूप में अंततः मशरूम में भूमि की सतह के ऊपर विकसित हो जाती हैं।

मशरूम में वृत क्षेत्र या छत्रिकावृंत (stipe), अर्धगोलाकर ऊपरी भाग टोप (cap) जिसकी निचली सतह पर क्लोम होते हैं। क्लोमों की कतारों के नीचे छोटे, मुग्दर जैसे बेसिडियमों की परत रहती है, जैसा कि नीचे चित्र में दिखाया गया है।

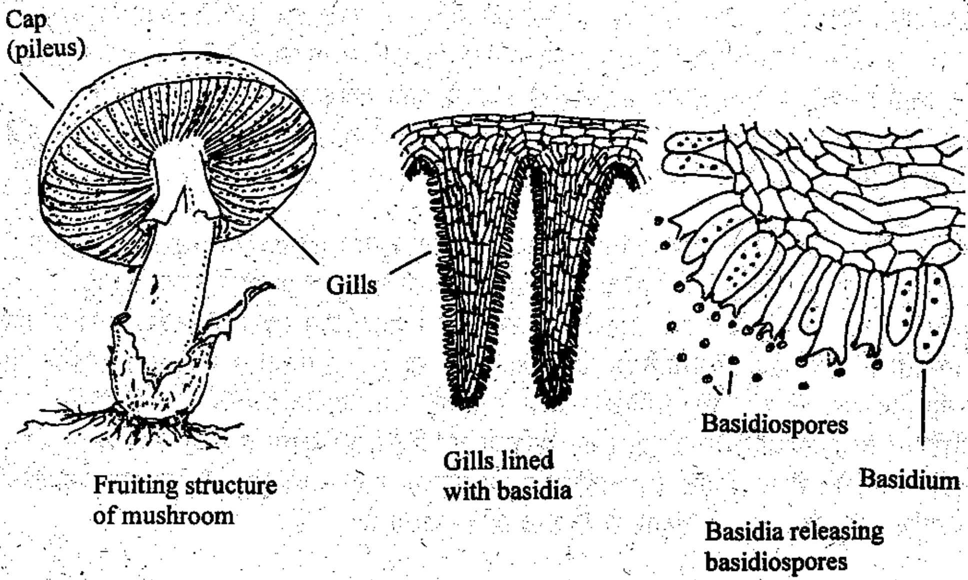

चित्र 9.15 : खाद्य मशरूम की फलन संरचना

(intercalary) या वियोजक (disjunctor) कोशिका कहलाती है। बड़ी वाली कोशिकाएं इसिडियमीबीजाणु (aeciospore) बन जाती हैं। वियोजक कोशिकाएं इसिडियमीबीजाणु के परिक्षेपण में सहायता करती हैं। संपूर्ण संरचना एक प्याले जैसी होती है तथा ये इसिडियमी कप कहलाती है। इसिडियमी कप के लिए एक सुरक्षात्मक परत या कवक फलभित्ति होती है। विकासशील इसिडियमी बीजाणु परपोषी की बाह्यत्वचा को धकेलकर फाड़ देते हैं और इस प्रकार इसिडियमी बीजाणु परिक्षेपण के लिए मुक्त हो जाते हैं। प्रत्येक इसिडियमीबीजाणु एक बहुफलकीय, द्विकेन्द्रकी संरचना होती है जिसमें दो भित्ति परतें होती हैं। बाहरी भित्ति परत मोटी तथा चिकनी होती है तथा भीतरी भित्ति परत पतली और चिकनी होती है। ये बसंत ऋतु के अंत में झड़ जाते हैं। ये झड़बेरी के पादप को संक्रमित नहीं करते हैं। जब ये प्राथमिक परपोषी यानि कि गेहूँ पर गिरते हैं तो ये अंकुरित हो जाते हैं तथा द्विकेन्द्रकी माइसीलियम में विकसित हो जाते हैं। इस प्रकार से जीवनचक्र पूर्ण हो जाता है और नया चक्र पुनः आरंभ हो जाता है। *पक्सिनिया ग्रैमिनिस* जटिल जीवनचक्र प्रदर्शित करता है जिसमें दो परपोषी, दो प्रकार के माइसीलियम व पांच प्रकार के बीजाणु होते हैं, अतः यह दीर्घचक्री कवक कहलाता है।

बोध प्रश्न 9.5

अ) निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों को समुचित शब्द/शब्दों से भरिए।

i) *पक्सिनिया ग्रैमिनिस* एक दीर्घचक्रीय .... किट्ट है।

ii) *पक्सिनिया ग्रैमिनिस* के लिए विकल्पी परपोषी .... है।

iii) *पक्सिनिया* में जीवनचक्र की अगुणित प्रावस्था परपोषी .... पर सीमित रहती है।

iv) *पक्सिनिया* में उत्पन्न होने वाली नर कोशिकाएं .... कहलाती हैं।

ब) बताइए कि *पक्सिनिया ग्रैमिनिस* के संदर्भ में निम्नलिखित वक्तव्य सत्य हैं या असत्य। सत्य के लिए **स** तथा असत्य के लिए **अ** दिए गए खानों में लिखिए।

(i) *पक्सिनिया* द्वारा उत्पन्न किए जाने वाले यूरीडोबीजाणु द्विकेन्द्रकी होते हैं। ☐

(ii) टीलियोबीजाणु में केन्द्रकी संयुग्मन नहीं होता है। ☐

(iii) *पक्सिनिया* में बेसिडियोबीजाणु के बनने के दौरान विभेद पृथक होते हैं। ☐

9.4 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि:

- कवक कायिक, अलैंगिक तथा लैंगिक तरीकों से प्रजनन करते हैं।
- कायिक प्रजनन विखंडन, खंडन, ओइडिया, क्लैमिडोबीजाणु तथा तंतुजटा के निर्माण के द्वारा संपन्न होता है।
- अलैंगिक प्रजनन लैंगिक प्रजनन की अपेक्षा अधिक बहुलता से होता है। बीजाणुधानीधर या कोनिडियमधर बन जाते हैं, जो क्रमशः बीजाणुओं तथा कोनिडियमों को धारण करते हैं।
- लैंगिक प्रजनन में, जाति पर निर्भर करते हुए, संपूर्ण थैलस अथवा उसका एक भाग प्रजनन कायाओं के निर्माण में भाग लेता है। कवकीय लैंगिक अंग युग्मकधानियां कहलाते हैं। लैंगिक प्रजनन में कोशिकाद्रव्यलयन, केन्द्रक संलयन तथा अर्धसूत्री विभाजन शामिल हैं।

- चलयुग्मकी संयुग्मन, युग्मकधानीय संयुग्मन, युग्मकधानीय संपर्क, अचल पुमणु युग्मन तथा काययुग्मन, कोशिकाद्रव्यलयन के तरीके हैं। कोशिकाद्रव्यलयन के दौरान दो विपरीत विभेदों के जीवद्रव्यों का युग्मन होता है, परंतु केन्द्रकों का युग्मन नहीं होता है, द्विकेन्द्रकी अवस्था लंबे समय तक चल सकती है क्योंकि आमतौर पर दोनों अवस्थाओं के बीच में काफी अंतराल होता है।

- अर्धसूत्री विभाजन केन्द्रक संलयन के तत्काल बाद ही होता है जिसके फलस्वरूप चार अगुणित बीजाणु बनते हैं।

- *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* गंभीर आलू का रोग उत्पन्न करता है। संकोशिकी कवकतंतु परपोषी के ऊतक में बहुशाखन करता है तथा चूषकांग के द्वारा पोषण प्राप्त करता है। अलैंगिक प्रजनन बीजाणुधानियों के निर्माण के द्वारा संपन्न होता है जो तापमान तथा आर्द्रता की स्थिति पर निर्भर करते हुए या तो जूस्पोर्स उत्पन्न कर सकती हैं अथवा सीधे ही अंकुरित हो सकती हैं। लैंगिक प्रजनन विषमयुग्मकी प्रकार का होता है।

- *राइजोपस* में माइसीलियम में मूलाभासी, भूस्तारी तथा बीजाणुधानीधर धारण किए हुए कवकतंतु होते हैं। बीजाणुधानीधर कवकतंतु अचल बीजाणु धारण करते हैं जो अलैंगिक प्रजनन कायाएं हैं। लैंगिक प्रजनन विपरीत विभेदों की युग्मकधानियों के युग्मन के द्वारा होता है जिससे जाइगोबीजाणुधानी बनती है जो अनेको अचल जाइगोबीजाणु धारण किए रहती है।

- *न्यूरोस्पोरा* विषमथैलसी होता है जो + तथा – विभेदों में विभेदित रहता है। माइसीलियम शाखित, पटयुक्त कायिक कवकतंतु का बना होता है। यह अलैंगिक रूप से दीर्घ तथा लघु कोनिडियमों द्वारा प्रजनन करता है। लैंगिक प्रजनन में अचल पुमणु युग्मन तब होता है जब नर कोशिका ऐस्कोधानी के स्त्रीधानीरोम से युग्मन करती हैं। दोनों केन्द्रक विशेषीकृत कवक तंतु में चले जाते हैं तथा अपने शीर्ष पर ऐस्कस उत्पन्न करते हैं। केन्द्रकों के युग्मन के पश्चात् अर्धसूत्री तथा समसूत्री विभाजन होता है जिससे आठ अगुणित ऐस्कोबीजाणु बनते हैं।

- *पक्सिनिया ग्रैमिनिस* का भिन्नाश्रयी, विषमचक्रीय किट्ट कवक दो परपोषियों – गेहूँ तथा झड़बेरी का उपयोग करता है। माइसीलियम गेहूँ में द्विकेन्द्रकी तथा झड़बेरी में एककेन्द्रकी होता है। तीन प्रकार के बीजाणु–यूरीडोबीजाणु, टीलियोबीजाणु तथा बेसिडियोबीजाणु गेहूँ के पौधे पर उत्पन्न होते हैं। *पक्सिनिया* में लैंगिकता घटकर सिर्फ टीलियोबीजाणु में दो केन्द्रकों के युग्मन तक सीमित रह जाती है। टीलियोबीजाणु के अंकुरण पर बेसिडियम बनते हैं। अर्धसूत्री विभाजन के फलस्वरूप चार अगुणित बेसिडियोबीजाणु दो + तथा दो – विभेद के बनते हैं। वे सिर्फ झड़बेरी की पत्तियों पर अंकुरित होते हैं तथा फलन कायाएं स्पर्मोगोनियम (पिक्निडियम) बनाते हैं जिनमें स्पर्मेशियम, पेराफिसिस तथा ग्राही कवकतंतु होते हैं। अचल पुमणु युग्मन के बाद द्विकेन्द्रक बन जाते हैं। ये ईशियम कपों को जन्म देते हैं जिनमें ईशियमी बीजाणु होते हैं, जो सिर्फ गेहूँ के पादप पर अंकुरित होते हैं।

9.5 अंत में कुछ प्रश्न

1. पूर्णकायफलिक तथा अंशकायफलिक कवकों को परिभाषित कीजिए।

....

....

....

2. कवकों में कायिक प्रजनन के आम तरीकों को सूचीबद्ध कीजिए।

3. स्क्लैरोशियम किसे कहते हैं?

4. कवकों में कितने प्रकार का लैंगिक प्रजनन पाया जाता है? उन्हें परिभाषित कीजिए।

5. किसलिए *पक्सिनिया* भिन्नाश्रयी कवक कहलाता है?

....

....

....

....

....

....

....

....

6. *पक्सिनिया* में टीलियोबीजाणु के निर्माण का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

7. *पक्सिनिया* में स्पर्मेगोनियम की संरचना का वर्णन करिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

9.6 उत्तर

बोध प्रश्न

9.1 अ) i) स, ii) स, iii) अ, iv) अ

ब) i) चिरकालिकता, ii) पूर्णावस्था, iii) युग्मकों, iv) पूर्णकायफलिक

(स) i) ऑइडिया, ii) अचल बीजाणु, iii) जूस्पोर्स, iv) विषमथैलसी

9.2. i) ऊओमाइकोटा, ii) आलू, iii) आसंगांग, iv) द्विकशाभी, v) विषमयुग्मकी, भिन्न–भिन्न

9.3. i) जाइगोमाइकोटा, ii) भूस्तारी, iiii) बीजाणुधानी में धानीबीजाणु, iv) जाइगोबीजाणुधर या युग्माणुधर, v) जाइगोबीजाणुधानी (zygosporangium)

9.4. i) ऐस्कोमाइकोटा, ii) कोनिडिया, मेक्रोकोनिडिया, माइक्रोकोनिडिया, iii) ऐस्कोधानी, iv) पेरीथींसियम, v) ऐस्कस

9.5. अ) i) विषमचक्रीय, ii) झड़बेरी का पादप, iii) गेहूँ के पादप, iv) स्पर्मेशियम

ब) i) स, ii) अ, iii) स

अंत में कुछ प्रश्न

1. अलैंगिक अथवा लैंगिक प्रजनन अंगों या संरचनाओं के निर्माण में, संपूर्ण थैलस एक या अधिक प्रजनन संरचनाओं में परिवर्तित हो सकता है, जिससे कायिक तथा प्रजनन प्रावस्थाएं एक साथ एक ही कवक में नहीं पाई जाती हैं। वे कवक जो इस प्रकार प्रजनन करते हैं वे पूर्णकायफलिक कहलाते हैं उदाहरण यीस्ट। अधिकांश कवकों में, हालांकि, प्रजनन अंग थैलस के एक भाग से उत्पन्न होते हैं और बचा हुआ भाग अपनी सामान्य कायिक गतिविधियां जारी रखता है। इस श्रेणी के कवक अंशकायफलिक कहलाते हैं, उदाहरण : *ऐस्पर्जिलस, पेनिसिलियम* आदि।

2. कवकों में कायिक प्रजनन के आम तरीके हैं :

   i) खंडन, ii) क्लैमिडोबीजाणु का निर्माण, iii) ओइडिया का निर्माण, iv) विखंडन, v) मुकुलन, vi) तंतुजटा तथा स्क्लैरोशियम का निर्माण।

3. स्क्लैरोशियम माइसीलियम का रूपांतरण होते हैं जो चिरकालिकता तथा कायिक प्रवर्धन के माध्यम होते हैं। ये गोलाकार, बेलनाकार, कुशन के आकार के अथवा अनियमित आकार के तथा मोटी भित्ति वाले कवकतंतु के सघन पिंड युक्त होते हैं। कवकतंतु संहत, कूटमृदूतकी ऊतक बनाते हैं। अनुकूल स्थितियों के आने पर वे अंकुरित होकर नया माइसीलियम बनाते हैं उदाहरण : *क्लैवीसेप्स* (Ergot)।

4. कवकों में तीन प्रकार का लैंगिक प्रजनन पाया जाता है। वे हैं समयुग्मन, असमयुग्मन तथा विषमयुग्मन। समयुग्मन में, युग्मन करने वाले युग्मक आकारिकीय रूप से समान होते हैं। असमयुग्मन में युग्मन करने वाले युग्मक गतिशील होते हैं। विषमयुग्मन में मादा युग्मक अपेक्षाकृत बड़ा तथा अगतिशील होता है जबकि नर युग्मक छोटा और गतिशील होता है। कभी-कभी युग्मकधानियां लैंगिक प्रजनन के दौरान युग्मित हो जाती हैं जैसे कि *राइजोपस* और *म्यूकर* में। यह युग्मकधानीय संयुग्मन कहलाता है।

5. *पक्सिनिया ग्रैमिनिस* का अपना जीवनचक्र पूरा करने के लिए दो भिन्न परपोषियों की आवश्यकता पड़ती है इसलिए यह भिन्नाश्रयी कवक कहलाता है।

6. सेक्शन 9.3.4 में उपशीर्षक टीलियम तथा टीलियोबीजाणु को देखिए।

7. सेक्शन 9.3.4, में झड़बेरी की पत्ती पर जीवनचक्र को देखिए अन्तरा 3।

इकाई 10 कवकीय रोग

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
उद्देश्य

10.2 आलू की विलंबित अंगमारी
लक्षण
रोगजनक : *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स*
रोगचक्र
नियंत्रण के उपाय

10.3 गुलाब की चूर्णिल आसिता
लक्षण
रोगजनक : *स्फेरोथीका पेनोसा*
रोगचक्र
नियंत्रण के उपाय

10.4 गन्ने का रक्त विगलन
लक्षण
रोगजनक : *कोलेटोट्राइकम फेल्केटम*
रोगचक्र
नियंत्रण के उपाय

10.5 गेहूँ का श्लथ कंड
लक्षण
रोगजनक : *ऑस्टिलैगो ट्रिटिसाई*
रोगचक्र
नियंत्रण के उपाय

10.6 गेहूँ के किट्ट
रोगजनक : *पक्सिनिया*
लक्षण
रोगचक्र : *पक्सिनिया ग्रैमिनिस*
नियंत्रण के उपाय

10.7 मानव तथा जंतुओं के कवकीय रोग
पिंडित ऊर्ण
आनन-छाजन
स्पोरोट्राइकोसिस
दाद तथा सिर का चर्म रोग

10.8 सारांश

10.9 अंत में कुछ प्रश्न

10.10 उत्तर

10.1 प्रस्तावना

इस खंड की पिछली दो इकाइयों में आपने कवकों की आकारिकी, आवास तथा प्रजनन के बारे में पढ़ा था। इस इकाई में हम कवकों द्वारा होने वाले कुछ आम पादप तथा जंतु रोगों के बारे में पढ़ेंगे जो हमारे देश में व्यापक रूप से पाए जाते हैं। कवकों की 8000 से अधिक जातियां ज्ञात हैं जो पादपों में रोग उत्पन्न करती हैं।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- कुछ आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण फसलों जैसे कि आलू, गन्ना तथा गेहूँ में कवकों द्वारा होने वाले कवकीय रोगों का वर्णन कर सकेंगे,
- रोग के लक्षणों को, खेतों में रोगी पादपों को तथा रोग उत्पन्न करने वाले कवक को पहचान सकेंगे,
- ऐसे तरीके बता सकेंगे जिनका उपयोग करके रोग को अन्य स्वस्थ पादपों में फैलने से रोका जा सके,
- भविष्य में संक्रमण को रोकने के लिए तरीके सुझा सकेंगे, और
- जंतुओं और मनुष्यों में कवकों द्वारा होने वाले त्वचा के रोगों की चर्चा कर सकेंगे।

10.2 आलू की विलंबित अंगमारी

आलू की विलंबित अंगमारी (late blight of potato) फसलों का एक सबसे विनाशकारी कवकीय रोग है। ये आलू के पादपों तथा कंदों (tubers) को नष्ट कर देता है। ये विश्व के लगभग उन सभी क्षेत्रों में पाया जाता है जहां आलू उगाए जाते हैं। भारत में यह रोग नीलगिरि पहाड़ियों में 1870 तथा 1880 के बीच में पहली बार देखा गया था। उसके थोड़े ही समय पश्चात् यह हिमालयी क्षेत्र में दार्जिलिंग जिले से इंगलिश आलू उगाने के बाद रिपोर्ट किया गया था। वहां से यह आसाम, बंगाल तथा बिहार में फैल गया तथा 1943 के करीब यह रोग उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों तक पाया जाने लगा। इसका वर्ष दर वर्ष प्रसार तथा विनाश मौसम की स्थिति पर निर्भर करता है। कम तापमान और नमी आलू की वृद्धि में तथा साथ ही रोग की वृद्धि में भी सहायक होते हैं।

आलू दक्षिणी अमरीका का मूल पैदायशी है। आलू की विलंबित अंगमारी दक्षिण अमरीका में एक स्थानिक रोग के रूप में पायी जाती है। विश्व ज्ञान 1845-46 में आयरलैंड का अकाल वहां पर आलू की फसल सही न हो पाने के कारण हुआ था आलू उस समय पर 40 लाख से अधिक लोगों का मुख्य भोजन था।

10.2.1 लक्षण

सबसे पहले लक्षण निचली पत्तियों के शीर्ष अथवा किनारों पर वृत्तीय या अनियमित जल सिक्त (water soaked) धब्बों जैसे दिखाई पड़ते हैं। नम वातावरण में धब्बे तेजी से बड़े हो जाते हैं तथा अनियमित किनारों युक्त भूरे रुग्ण क्षेत्र बनाते हैं (चित्र 10.1 a)। पत्तियों के नीचे की सतह पर धब्बों के किनारे, 3.5 मि.मी. चौड़ा सफ़ेद मृदु रोमिल (मुलायम तथा परिफुल्लित) कवकीय वृद्धि का क्षेत्र दिखाई पड़ता है। इसके बाद संपूर्ण पत्रक तथा सभी अन्य पत्रक संक्रमित हो जाते हैं। पर्णक श्लथ तथा मृत हो जाते हैं। जल्दी ही रोग तने तक फैल जाता है और अंततः पूरा प्ररोह तंत्र सड़ी हुई लुगदी जैसा हो जाता है। बाद में, चलं बीजाणुधानियाँ (zoosporangia) या अलैंगिक चल बीजाणु (zoospores) उन रुग्ण पत्तियों से कंदों में चले जाते हैं जो मिट्टी में गिर पड़ते हैं (चित्र 10.1 b)। शुष्क मौसम में कवक की गतिविधियाँ रुक जाती हैं।

आलू के कंद खेतों में ही जब पादप से जुड़े हुए होते हैं तभी अथवा कटाई के समय तथा कभी-कभी भंडारण के समय भी संक्रमित हो जाते हैं। संक्रमित कंदों में पहले तो लगभग अनियमित बैंगनी काले से या भूरे से रंग के धब्बे दिखाई पड़ते हैं। बाद में प्रभावित क्षेत्र दृढ़ और सूखे तथा कुछ-कुछ धंसे हुए से हो जाते हैं।

10.2.2 रोगजनक : *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स*

इकाई 9 में आपने पढ़ा था कि *फाइटोफ्थोरा* में अलैंगिक प्रजनन के दौरान कवक जाल

(mycelium) जो पत्तियों में रंध्रों से व कंदों में वातरंध्रों (lenticels) से बाहर निकलते हैं वो अनियमित वृद्धि के शाखित बीजाणुधानीधर (sporangiophore) उत्पन्न करते हैं (चित्र 10.1 c)। बीजाणुधानीधरों के शीर्ष बिन्दुओं पर बहुकेन्द्रकी, पतली-भित्ति वाली, काचाभ (hyaline), नींबू के आकार की, पिप्पलमय बीजाणुधानियां (papillate sporangia) उत्पन्न होती हैं। बीजाणुधानियां (10.1 d) पत्तियों या मिट्टी पर गिर कर अंकुरित हो जाती हैं तथा 12°–15° से. से अधिक तापमान पर अलैंगिक चल बीजाणु उत्पन्न करती हैं (चित्र 10.1 e तथा f)। जबकि 15° से. से अधिक तापमान पर बीजाणुधानियां सीधे ही जनन नलिका (germ tube) उत्पन्न करके अंकुरित हो सकती हैं (चित्र 10.1 g)। मिट्टी पर गिरने वाली बीजाणुधानियां अलैंगिक चल बीजाणु उत्पन्न करती हैं तथा भूमिगत कंदों को संक्रमित करती हैं (चित्र 10.1 b)। संक्रमित कंद में कवकजाल शाखित बीजाणुधानीधरों को निर्मित करते हैं। जो बीजाणुधानियो को धारण किए रहते हैं (चित्र 10.1 h तथा i)।

फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स (Phytophthora infestans) को लैंगिक प्रजनन के लिए दो संगम प्ररूपों (mating types) + तथा – की आवश्यकता होती है और चूंकि अधिकांश देशों में इनमें से एक ही पाया जाता है अतः कवक में लैंगिक प्रजनन कम ही होता है। लैंगिक प्रजनन के लिए दोनों संगम प्रकारों का पास-पास उगना जरूरी होता है (चित्र 10.1 A)। मादा कवकतंतु तरुण पुंधानी के ऊपर गोलाकार स्त्रीधानी में विकसित हो जाते हैं (चित्र 10.1 B)। इसके बाद पुंधानी स्त्रीधानी को निषेचित करती है जो मोटी भित्ति वाले निषिक्तांड (oospore) में विकसित हो जाती है (चित्र 10.1 C तथा D)। निषिक्तांड जनन नलिका के द्वारा अंकुरित होता है, जो बीजाणुधानी को उत्पन्न करती है (चित्र 10.1 E)। कभी-कभी जनननलिका सीधे ही कवकजाल बना देती है।

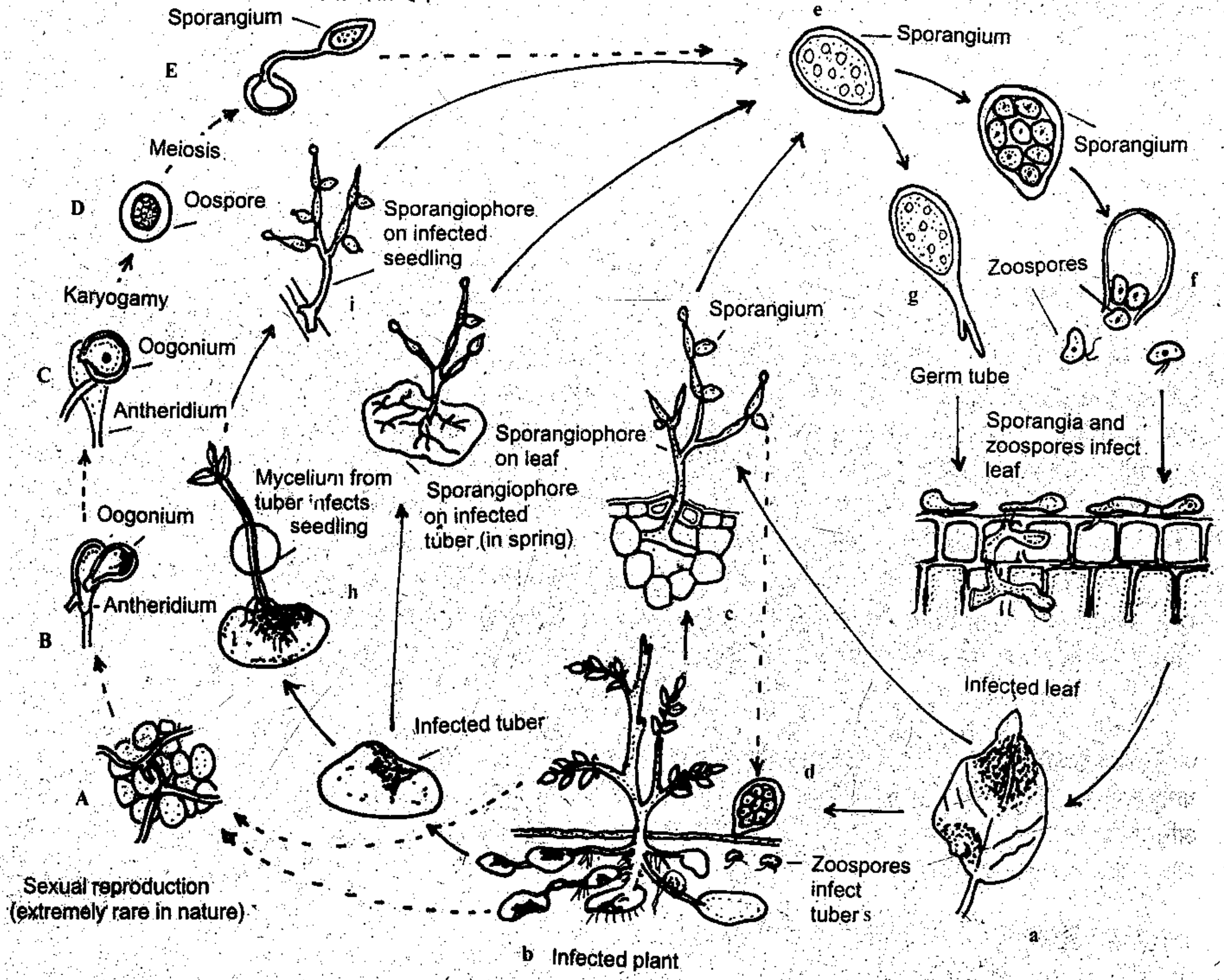

चित्र 10.1 : *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* के द्वारा होने वाला आलू की विलंबित अंगमारी रोग का रोगचक्र।

10.2.3 रोगचक्र

यदि संक्रमित कंदों को बीज के तौर पर उपयोग किया जाता है तो कवकजाल आलू के कंदों के ऊतकों में फैल जाता है तथा कुछ प्ररोहों तक पहुंच जाता है। कवकजाल तने से होकर वृद्धि करता है तथा पादप के वायवीय भागों में पहुंच जाता है, जहां ये बीजाणुधानीधर उत्पन्न करता है। बीजाणुधानीधरों पर उत्पन्न होने वाली बीजाणुधानियां विलग हो जाती हैं तथा वर्षा के द्वारा परिक्षेपित हो जाती हैं। जब बीजाणुधानियां आलू की गीली पत्तियों या तने पर गिरती हैं तो वे अंकुरित हो जाती हैं और नए संक्रमण करती हैं। जननलिका पत्ती के क्यूटिकल को बेध कर अथवा रंध्र से होकर प्रवेश करती है तथा अंदर कवकजाल निर्मित करती है जो कोशिकाओं के बीच में सघनरूप से बढ़ता है तथा कोशिकाओं में लंबे कुंचित चूषकांग (haustoria) भेजता है। वे कोशिकाएं जिनसे कवकजाल पोषण लेता है वो मृत हो जाती हैं और उनके क्षय होने पर कवकजाल अन्य स्वस्थ ऊतकों में फैल जाता है। संक्रमण के कुछ दिनों बाद नए बीजाणुधानीधर पत्तियों के रंध्रों में से निकलते हैं और असंख्य बीजाणुधानियां उत्पन्न करते हैं जो हवा के द्वारा वितरित हो जाती हैं और नए पादपों को संक्रमित करती हैं और इस प्रकार चक्र जारी रहता है। रोग के बढ़ने के साथ पहले से स्थित विक्षत (lesions) का आकार बढ़ जाता है तथा नए विक्षत विकसित हो जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप पत्तियों की कालपूर्व मृत्यु हो जाती है और आलू के कंद की वृद्धि कम हो जाती है।

10.2.4 नियंत्रण के उपाय

आलू की विलंबित अंगमारी को स्वच्छता रखने के उपायों से, प्रतिरोधी किस्मों के उपयोग से तथा उचित समय पर रसायनों के छिड़काव के द्वारा रोका जा सकता है। निम्नलिखित उपाय सहायक हैं:

- रोगमुक्त कंदों का उपयोग।
- सल्फ्यूरिक अम्ल, कॉपर सल्फेट अथवा सोडियम क्लोरेट के छिड़काव द्वारा संक्रमित पत्तियों को नष्ट करना।
- रोगयुक्त फसल की कटाई में तब तक विलंब करना जब तक की पादप पूरी तरह परिपक्व ना हो जाएं।
- कंदों की खुदाई अच्छे शुष्क मौसम में करना तथा सिर्फ स्वस्थ कंदों को संग्रहित करना।
- भंडारण से पहले कंदों को मर्क्यूरिक क्लोराइड से उपचारित करना।
- कंदों का ठंडे, शुष्क तथा सुवातायित (हवादार) स्थान पर भंडारण करना।
- बोर्दो मिश्रण (Bordeaux mixture), फाइटोलन तथा अन्य कवकनाशियों का पत्तियों पर छिड़काव करना जिससे बीजाणुधानियों के अंकुरण को रोका जा सके।
- रोग-प्रतिरोधक किस्मों का उपयोग।

बोध प्रश्न 10.1

अ) निम्नलिखित में सही उत्तरों का चयन कीजिए।

i) भारत में *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* को सबसे पहले कहां रिपोर्ट किया गया था?

1) नीलगिरि पहाड़ियों पर

2) दार्जिलिंग

3) चकराता पहाड़ियों पर

ii) प्रभावित कंद किस प्रकार के धब्बे दर्शाते हैं?

1) सफेद धब्बे

2) लाल धब्बे

3) बैंगनी-भूरे धब्बे

iii) *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* की बीजाणुधानियां किस आकार की होती हैं?

1) सेम के आकार की (bean-shaped)

2) हंसिए के आकार की (sickle-shaped)

3) नींबू के आकार की (lemon-shaped)

ब) बताइए कि *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* के संदर्भ में निम्नलिखित कथन सत्य हैं या असत्य। सत्य के लिए **स** तथा असत्य के लिए **अ** दिए गए खानों में लिखिए।

i) नम मौसम विलंबित अंगमारी रोग की वृद्धि को रोकता है। ☐

ii) प्रभावित ऊतक पहले जल सिक्त बन जाते हैं। ☐

iii) लैंगिक प्रजनन के लिए आवश्यक + तथा – दोनों युग्मक किसी देश में एक साथ नहीं पाए जाते हैं। ☐

iv) निषिक्तांड अंकुरित होकर बीजाणुधानियां अथवा कवकजाल निर्मित करता है। ☐

स) मान लीजिए कोई किसान आपसे आलुओं में *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* के संक्रमण के विस्तार को रोकने के लिए सलाह मांगता है तो आप उसे कौन से उपाय बताएंगे?

....

....

....

....

....

10.3 गुलाब की चूर्णिल आसिता

चूर्णिल आसिता के लिए सुग्राही पादप

प्रभावित पादप

बिगोनिया, डहेलिया, फ़्लोक्स, कुकरबिट्स

अनाज तथा घासें

फलियां, क्रूसीफर, ककड़ी, खीरा, ब्लू बेरी, बांज, रोडोडेन्ड्रॉन, कैटेल्पा, एल्म, मैपिल, सेब, नाशपाती, क्विन्स, खूबानी, चेरी, आड़ू, आलूबुखारा, स्ट्रॉबेरी, गूज़बेरी, किशमिश, गुलाब

गुलाब के पौधे की चूर्णिल आसिता (powdery mildew of rose) विश्व में उन सभी स्थानों पर पाई जाती है जहां गुलाब उगाए जाते हैं। ये रोग गुलाब पर साल दर साल दिखाई पड़ता है। ये पादप की कलियों, तरुण पत्तियों तथा वर्धन शीर्षों पर आक्रमण करता है तथा पुष्पों के उत्पादन को कम कर देता है।

चूर्णिल आसिता के रोग से परपोषी कभी कभार ही मरते हैं परंतु परपोषी उनके पोषक तत्वों का उपयोग कर लेते हैं। वे प्रकाश संश्लेषण को कम कर देते हैं तथा श्वसन और वाष्पोत्सर्जन को बढ़ा देते हैं, वृद्धि को कम कर देते हैं तथा उत्पादन को घटा देते हैं। वे सभी प्रकार के पादपों, अनाजों तथा घासों, सब्जियों, सजावटी पौधों, खरपतवार, फल के वृक्षों तथा झाड़ियों को प्रभावित करते हैं।

10.3.1 लक्षण

रोग पहले एक हल्के से उभरे हुए फफोले जैसे क्षेत्र के रूप में दिखाई पड़ता है (चित्र 10.2 a)। जल्दी ही फफोले पर धूसर सफेद, चूर्णिल कवक की परत बन जाती है। जैसे-जैसे पत्तियां वृद्धि करती हैं वे कुंचित और विरूपित (distorted) हो जाती हैं। इस प्रकार के धब्बे तरुण हरे प्ररोहों तथा कलियों पर भी दिखाई पड़ते हैं जो या तो फिर खिल नहीं पाती हैं अथवा विषम रूप से खिलती हैं। जब संक्रमण पुष्पों पर फैल जाता है तो उसके भाग रंगहीन व बौने हो जाते हैं तथा अंततः मृत हो जाते हैं।

10.3.2 रोगजनक : *स्फेरोथीका पेनोसा*

गुलाब की चूर्णिल आसिता का कारक है *स्फेरोथीका पेनोसा* एफ स्पी. *रोजी* (*Sphaerotheca pannosa f.* sp. *rosae*)। यह एक भिन्न प्रकार का *स्फेरोथीका पेनोसा* है।

स्फेरोथीका पेनोसा का कवकजाल सफेद होता है और पादप ऊतकों की सतह पर उगता है (चित्र 10.2 a)। यह पादप की उपत्वचीय कोशिकाओं (epidermal cells) में गोलाकार चूषकांग (globose haustoria) भेजता है। कवकजाल सतह पर कवकतंतुओं का जाल निर्मित करता है, जिनमें से कुछ छोटे ऊर्ध्व (erect) कोनिडियमधरों (conidiophores) में विकसित हो जाते हैं (चित्र 10.2 b)। प्रत्येक कोनिडियमधर के शीर्ष पर, अंडाकार कोनिडिया निर्मित होते हैं जो श्रृंखलाओं के रूप में साथ-साथ संलग्न रहते हैं।

सर्दी के मौसम की ऋतु के अंत में कोनिडियमों का उत्पादन रुक जाता है तथा कवक की लैंगिक अवस्था आ जाती है और क्लाइस्टोथीसिया (cleistothecia) निर्मित हो जाते हैं (चित्र 10.2 c तथा d)। हालांकि, आगामी ऋतु में प्राथमिक संक्रमण के लिए निवेश द्रव्य (inoculum) प्रदान करने में उनकी भूमिका प्रभावहीन है।

तरुण क्लाइस्टोथीसिया प्रारंभ में सफेद होते हैं, फिर भूरे हो जाते हैं और अंत में काले हो जाते हैं। बसंत ऋतु में ये परिपक्व हो जाते हैं और प्रकीर्णन (dissemination) के लिए तैयार हो जाते हैं। क्लाइस्टोथीसिया जल अवशोषित कर लेते हैं और फटकर खुल जाते हैं। क्लाइस्टोथीसियम में से प्रत्येक ऐस्कस (ascus) अपने शीर्ष को बाहर निकालता है, और फट जाता है तथा अपने आठ परिपक्व ऐस्कसबीजाणुओं (ascospores) को विसर्जित कर देता है। ऐस्कस बीजाणु वायु के साथ उड़ जाते हैं (चित्र 10.2 e से h)। ऐस्कसबीजाणु अंकुरित हो जाते हैं और कवकजाल बनाते हैं जो कोनिडियमधरों को विकसित करते हैं (चित्र 10.2 i तथा j)।

10.3.3 रोगचक्र

रोग का आरंभ कोनिडियम अथवा ऐस्कसबीजाणुओं के द्वारा होता है, जो हवा के जरिए तरुण हरे ऊतकों तक चले जाते हैं। यदि तापमान और आपेक्षिक आर्द्रता पर्याप्त रूप से उच्च होते हैं तो कोनिडियम जननलिका बाहर निकाल कर अंकुरित हो जाते हैं। जननलिका शीघ्र ही छोटा बारीक कवकतंतु निर्मित करती है जो क्यूटिकल तथा उपत्वचीय कोशिका भित्ति को वेधता हुआ उपत्वचीय कोशिकाओं में बढ़ता है।

वेधन करने वाला कवकतंतु कोशिका की अवकाशिका (lumen) में प्रवेश करते ही तत्काल बड़ा हो जाता है और गोलाकार चूषकांग निर्मित करता है जिसके जरिए कवक पोषक तत्व प्राप्त करता है। जननलिका की वृद्धि जारी रहती है और पादप ऊतक की सतह पर शाखाएं सतही कवक का जाल बना देती हैं। वायवीय कवकजाल छोटे सतरीय कोनिडियमधर उत्पन्न करता है, जिनमें से प्रत्येक 5-10 कोनिडियम की श्रृंखला धारण किए रहता है। कोनिडियम वायु के जरिए वितरित हो जाते हैं और विस्तारित होती पत्तियों तथा प्ररोहों में नया संक्रमण उत्पन्न करते हैं और इस प्रकार चक्र दोहराया जाता है।

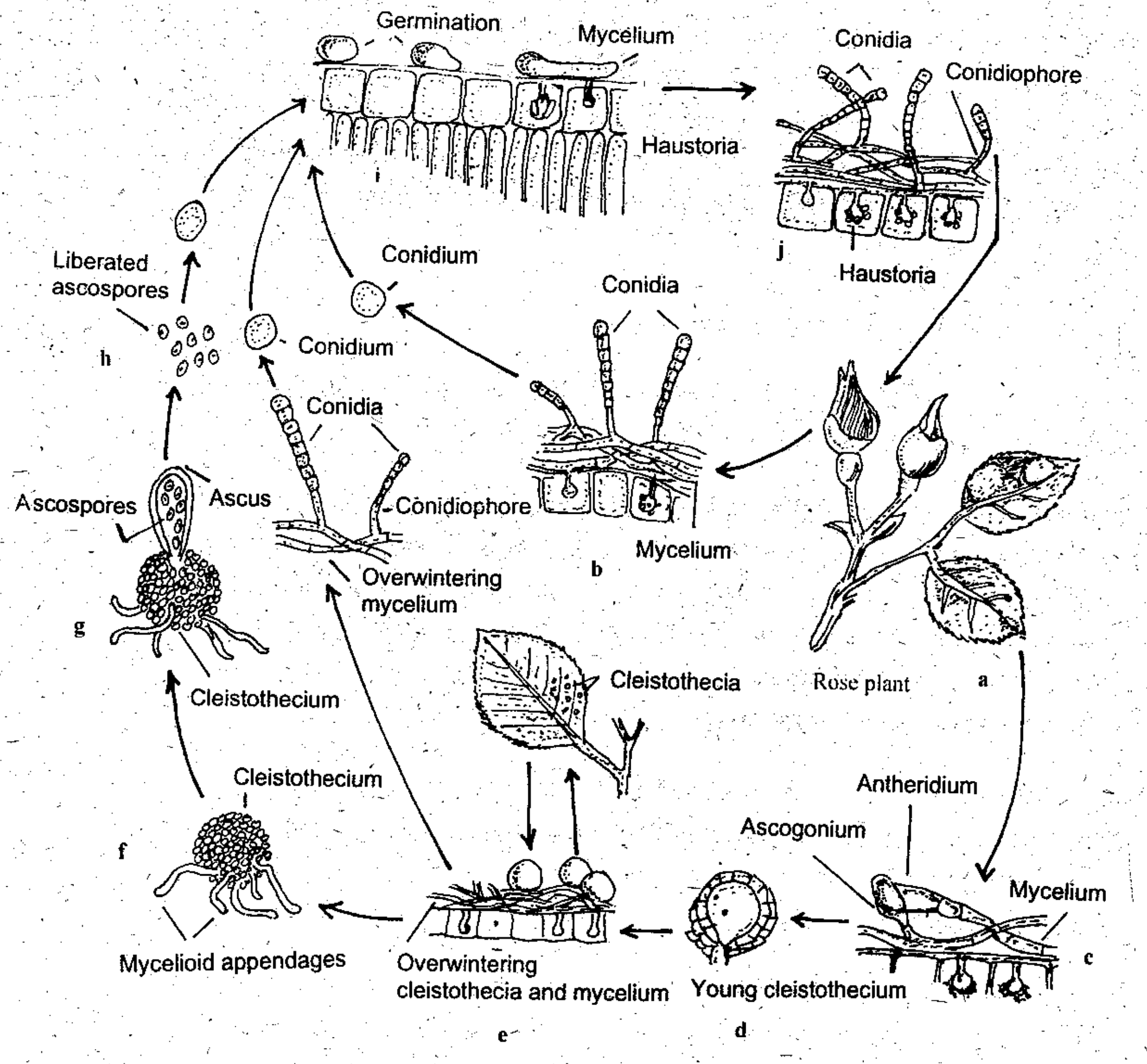

चित्र 10.2 : *स्फेरोथीका पेनोसा एफ.स्पी. रोजी* द्वारा होने वाले गुलाब की चूर्णिल आसिता के रोग का रोगचक्र।

10.3.4 नियंत्रण के उपाय

- पादपों के संक्रमित भागों पर सल्फर चूर्ण, कॉपर सल्फेट तथा कैराथेन (carathane) का छिड़काव।
- संक्रमित पादपों को नष्ट करना।
- नियंत्रण का प्रभावशाली उपाय है रोग-प्रतिरोधक किस्मों का उपयोग।

बोध प्रश्न 10.2

निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) गुलाब की चूर्णिल आसिता करने वाला रोगजनक .... है।

ii) चूर्णिल आसिता के रोग से पौधा अकसर नहीं .... है। परंतु रोगजनक परपोषी से उसके पोषक तत्वों का उपभोग कर लेता है।

iii) चूर्णिल आसिता का रोग पादपों पर .... परत के कारण आसानी से पहचाना जाता है।

iv) रोग के नियंत्रण का प्रभावशाली उपाय है .... का उपयोग।

10.4 गन्ने का रक्त विगलन

विश्व के उपोष्ण क्षेत्रों (sub-tropical) में गन्ने का रक्त विगलन सबसे गंभीर रोगों में से एक है। यह *कोलेटोट्राइकम फेल्केटम* (*Colletotrichum falcatum*) के द्वारा होता है। यह कवक खड़ी गन्ने की फसल पर आक्रमण करता है और चीनी के उत्पादन में बहुत कमी कर देता है। 1939-40 तथा 1946-47 के दौरान उत्तरी भारत (उत्तर प्रदेश और बिहार) में ये गंभीर महामारी (epidemic) के रूप में फैला था। इन महामारियों में कुछ उच्च उत्पादन वाली कोयम्बटूर गन्ने की किस्में रक्त विगलन के लिए बहुत अधिक सुग्राही बन गई थीं और उन्हें हटाना पड़ा था। यह रोग लगभग प्रतिवर्ष अपने देश के गन्ना-उत्पादक क्षेत्रों में पाया जाता है।

10.4.1 लक्षण

यह कवक पादपों के उन सभी भागों पर आक्रमण करता है जो भूमि के ऊपर होते हैं विशेषरूप से तनों तथा पत्तियों की मध्यशिराओं पर (चित्र 10.3 a तथा b)। तने का संक्रमण पूर्ण आंतरिक होता है अतः बाहरी रूप से परीक्षण करके इसका पता नहीं लगाया जा सकता है। प्रथम लक्षण रंग का उड़ जाना, पत्तियों का क्लांतिनत (कुम्हला जाना) हो जाना और उसके बाद, संपूर्ण शीर्ष का मुरझा जाना है। बाद में गन्ने झुर्रीदार हो जाते हैं उनके छिलकों में से बदबू आने लगती है तथा वो ऊर्ध्वाधर रूप से सिकुड़े से हो जाते हैं। ऐसे गन्नों का वजन कम होता है। जब उन्हें खोला जाता है तो उनमें लाल रंग की मज्जा (pith) दिखाई पड़ती है जिसमें सफेद या गंदे भूरे धब्बे होते हैं। धूसर या सफेद रंग के कवकजाल से भरी गुहिकाएं (cavities) भी मज्जा में निर्मित हो जाती हैं।

ऐसे संक्रमित गन्नों के रस में से बदबू आती है क्योंकि इनमें रोगजनक की एन्जाइमी अभिक्रिया के द्वारा सुक्रोस का ग्लूकोस और ऐल्कोहॉल में परिवर्तन हो जाता है। ऋतु के आखिर में छोटे, मखमली, गहरे रंग के बिन्दु रुग्ण गन्नों में पर्वसंधियों (nodes) के आसपास तथा मज्जा में निर्मित हो जाते हैं जो वास्तव में "एसरवुलाई" (acervuli) होते हैं। चित्र 10.3 c में एसरवुलस की संरचना को दिखाया गया है।

10.4.2 रोगजनक : *कोलेटोट्राइकम फेल्केटम*

जैसा कि हमने ऊपर बताया है गन्ने का रक्त विगलन *कोलेटोट्राइकम फेल्केटम* के कारण होता है। कवक परपोषी के अंदर प्रवेश पा जाता है और पटयुक्त कवकजाल बनाते हुए तेजी से वृद्धि करता है जो अंतर तथा अंतरा कोशिकाओं में बढ़ता है। परपोषी के अंदर कवक के आरंभिक विकास में कवकतंतु का बहुत अधिक शाखन नहीं दिखाई पड़ता है अतः आक्रमित कोशिकाएं संक्रमण के बाद जल्दी ही कवकजाल से नहीं भर जाती हैं।

कवकतंतु उपत्वचा के नीचे जमा हो जाते हैं तथा एसरवुलस बनाते हैं (चित्र 10.3 e) जिसमें लंबे दृढ़, शूक (bristle) जैसे पटीय स्फोटिका वृंत यानि सीटी (setae) होते हैं। हंसियाकार कोनिडिया छोटे कोनिडियमधरों पर निर्मित हो जाते हैं (चित्र 10.3 d तथा e) जो एसरवुलस में भरे रहते हैं। वायु, बरसात का पानी तथा कीट भी कोनिडियमों को वितरित कर देते हैं।

कोनिडिया अल्पजीवी होते हैं तथा नमी की उपस्थिति में अंकुरित होते हैं। जब जननलिका मिट्टी के कणों के संपर्क में आती है तो वह आसंगांग (appressorium) को विकसित करती है (चित्र 10.3 f)। आसंगांग मोटी भित्ति युक्त हो जाता है तथा क्लैमिडोबीजाणु (chlamydospore) की भांति कार्य करता है। कुछ समय के लिए परपोषी के ऊतकों के अंदर वृद्धि करने के पश्चात्, कवकतंतु मज्जा में भी बड़ी संख्या में क्लैमिडोबीजाणु उत्पन्न करते हैं। ये मिट्टी में लंबे समय तक जीवित रह सकते हैं।

कवक की लैंगिक अवस्था पत्तियों पर होती है। पेरीथीसिया (perithecia) गोलाकार तथा सतह। होते हैं जिनके आधारीय भाग परपोषी ऊतक में धंसे रहते हैं। एस्कस काचाभ तथा गदा-आकार (club-shaped) व असंख्य होते हैं। ऐस्कस के साथ ही अनेकों काचाभ सहसूत्र (paraphyses) भी होते हैं। ये सहसूत्र बहुत ही नाजुक होते हैं तथा परिपक्व होने पर विघटित हो जाते हैं। प्रत्येक ऐस्कस में आठ एस्कोबीजाणु होते हैं जो दो पंक्तियों में व्यवस्थित रहते हैं। ऐस्कोबीजाणु एक कोशिकीय, काचाभ तथा दीर्घवृत्ताकार (elliptical) होते हैं।

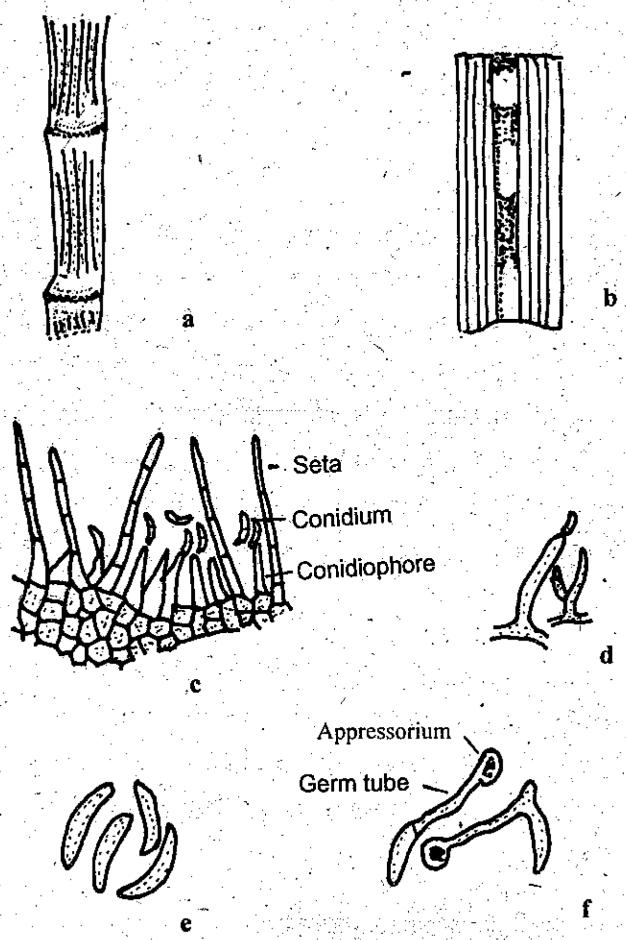

चित्र 10.3 : *कोलेटोट्राइकम फेल्केटम* द्वारा होने वाला गन्ने का रक्त विगलन रोग : a) तने पर लक्षण, b) पत्ती की मध्यशिरा पर लक्षण, c) एसरवुलस, d) कोनिडिया धारण किए हुए कोनिडियमधर, e) दीर्घीकृत कोनिडिया, f) अंकुरित होते कोनिडिया में आसंगांग।

10.4.3 रोगचक्र

गन्ने की फसल हर मौसम में उगाई जाती है, अतः मिट्टी में कवक के सीमित समय तक जीवित रहने पर भी यह रोग काटी गई फसल से नई रोपी गई फसल तक पहुँच जाता है। कोनिडिया अल्प जीवी होते हैं परंतु ऐसा लगता है कि आसंगांग तथा क्लैमिडोबीजाणु मिट्टी में रहते हैं। खेत में पानी के बहाव से ये उत्तरजीवी संरचनाएं आसानी से वितरित हो जाती हैं। पेरीथीसियमी (perithecial) अवस्था संभवतः क्षय होती पत्तियों पर जीवित रहने का प्रमुख साधन होती है और कवक की नई प्रजातियों (races) के आकस्मिक और तीव्र विकास का भी कारण हो सकती है।

रोगग्रस्त गन्नों के क्लैमिडोबीजाणु प्राथमिक संक्रमण का मुख्य कारण होते हैं। द्वितीयक संक्रमण रोगग्रस्त प्ररोहों पर लगे एसरवुलस में निर्मित होने वाले कोनिडिया के द्वारा होता है तथा कीट, वायु तथा जल के द्वारा फैलता है। जब ये कोनिडिया कीटों द्वारा होने वाले घावों पर अथवा

तरुण तह न खुली हुई पत्तियों पर गिरते हैं, तब ये नीचे पर्व कलिकाओं (nodal buds) तक चले जाते हैं और संक्रमण करते हैं।

कवक पत्ती की मध्यशिरा को भी प्रभावित करता है। मध्यशिरा पर भस्मवर्णी केन्द्रों वाले लाल चकत्ते विकसित हो जाते हैं। इन चकत्तों पर असंख्य एसरवुलस निर्मित हो जाते हैं। इन दागों से कोनिडिया आगे भी फसल को संक्रमित कर देते हैं। इसकी भी संभावना है कि पत्तियों पर उपस्थिति एसरवुलस और क्लैमिडोबीजाणु मवेशी के पाचन तंत्र से बिना हानि के निकल जाते हों और जब गोबर को खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है तो वे प्रकीर्णित हो जाते हों।

उच्च आर्द्रता, जलाप्लावित स्थिति, खरपतवार की अत्यधिक वृद्धि, किसी स्थान विशेष पर समान उपजाति की निरंतर खेती तथा आसपास के क्षेत्र में सुग्राही उपजातिग्रों की उपस्थिति कुछ ऐसे कारक हैं जो स्वस्थ फसल में रोग प्रकट कर देते हैं।

10.4.4 नियंत्रण के उपाय

गन्ने के रक्त विगलन रोग के नियंत्रण के प्रमुख उपाय नीचे दिए गए हैं।

- प्रतिरोधक उपजातियों का उपयोग (यह रोग के नियंत्रण का सबसे प्रभावशाली तरीका है)।
- बीज के तौर पर गन्ने की स्वस्थ कर्तनों (cuttings) का उपयोग।
- फसल आवर्तन (crop rotation) (ये मिट्टी से होने वाले संक्रमण को कम करने में सहायक होता है)।
- खेत की सफाई जैसे खरपतवार हटाना।
- गन्ने की छीलन (trash) तथा अन्य रुग्ण सामग्री को नष्ट करना।

बोध प्रश्न 10.3

गन्ने के रक्त विगलन रोग से सम्बन्धित निम्नलिखित कथन सत्य हैं या असत्य। सत्य के लिए **स** असत्य के लिए **अ** दिए गए खानों में लिखिए।

i) *कोलेटोट्राइकम फेल्केटम* कवक पत्तियों की मध्यशिरा को भी प्रभावित करता है। ☐

ii) रक्त विगलन के आसंगाग तथा क्लैमिडोबीजाणु मिट्टी में बने रहते हैं। ☐

iii) सिंचाई के जल के बहाव से कोनिडिया आसानी से प्रकीर्णित हो जाते हैं। ☐

iv) गन्ने की प्रतिरोधक उपजातियां गन्ने के रक्त विगलन के नियंत्रण में कतई सहायक नहीं हैं। ☐

v) फसल आवर्तन मिट्टी से होने वाले संक्रमण को कम करने में सहायक होता है। ☐

10.5 गेहूँ का श्लथ कंड

गेहूँ का श्लथ कंड (loose smut of wheat) गेहूँ तथा अन्य अनाजों का एक गंभीर रोग है। यह विश्व में हर जगह पाया जाता है तथा ये नमी वाले क्षेत्रों में अधिक उग्र होता है। भारत में ये सभी गेहूँ उत्पादक राज्यों में पाया जाता है परंतु इसका आक्रमण ठंडे उत्तरी भागों में दक्षिण भागों की अपेक्षा अधिक होता है। पंजाब में 1951–52 में इसने गेहूँ की फसल को गंभीर हानि पहुँचाई थी तथा कुल नुकसान लगभग 3 करोड़ का था। इसकी मिट्टी जनित प्रकृति के कारण

बीज-उत्पादक एजेंसियाँ इस रोग से घबराती हैं क्योंकि अपने उत्पाद की गुणवत्ता को सुनिश्चित करने के लिए उन्हें महंगे रासायनिक उपचार को अपनाना पड़ता है।

10.5.1 लक्षण

श्लथ कंड सामान्यतः तब तक कोई दृष्टिगत लक्षण उत्पन्न नहीं करता है जब तक कि पौधे में कणिश (spikes) उत्पन्न नहीं होते हैं। संक्रमित पौधों में सामान्यतः सभी कणिशिकाएं (spikelets) तथा गुठलियां (kernels) कंडित हो जाती हैं। संक्रमित कणिशिकाएं पूर्णतः कंड पिंड (smut mass) में परिवर्तित हो जाती हैं जो काले बीजाणुओं का बना होता है। कणिश पहले एक नाजुक धूसर झिल्ली से ढका रहता है जो जल्दी ही फट जाती है तथा चूर्णिल (powdery) बीजाणु मुक्त हो जाते हैं। इसके बाद बीजाणु हवा के द्वारा उड़ जाते हैं और नग्न वृंत यानि रैकिस (rachis) रह जाता है।

10.5.2 रोगजनक : *ऑस्टिलैगो ट्रिटिसाई*

गेहूँ का श्लथ कंड *ऑस्टिलैगो ट्रिटिसाई* (*Ustilago tritici*) के कारण होता है। जैसा कि आपने पढ़ा है यह रोग संक्रमित बीजों के द्वारा फैलता है। कवकजाल पादप के अन्दर अपनी वृद्धि के दौरान काचाभ होता है परंतु परिपक्व होने पर भूरा हो जाता है। कवकतंतु की कोशिकाएं भूरे, गोलाकार, लघुकंटकी टीलियोबीजाणुओं (teliospores) में रूपांतरित हो जाती हैं (चित्र 10.4 a से f तक)। ये एक से चार कोशिकाओं युक्त बेसिडियम निर्मित करने के लिए तत्काल पुष्पों के वर्तिकाग्रों (stigma) पर अंकुरित हो जाती हैं। बेसिडियम कोई बेसिडियो बीजाणु नहीं बनाता है परंतु इसकी कोशिकाएं अंकुरित हो जाती हैं तथा लघु एककेन्द्रकी कवकतंतु (संक्रमण सूत्र) निर्मित करती हैं जो द्विकेन्द्रकी कवकजाल बनाने के लिए जोड़ों में युग्मित हो जाते हैं। ये कवकजाल संक्रमण करने में समर्थ होता है (चित्र 10.4 g से j तक)।

10.5.3 रोगचक्र

रोगजनक कवकजाल के रूप में संक्रमित गुठलियों के बीजपत्रों में (जिन्हें स्कुटेलम भी कहते हैं) प्रसुप्त रहता है (चित्र 10.4 k)। जब इसे रोपा जाता है तो संक्रमित गुठली अंकुरित होने लगती है तथा कवकजाल की गतिविधि पुनः आरंभ हो जाती है और वह अंतराकोशिकी रूप से भ्रूण के ऊतकों तथा तरुण नवोद्भिद में से गुजरकर पादप के वर्धन बिंदु तक पहुंच जाता है (चित्र 10.4 i से o तक)। जब पादप का शीर्ष निर्मित होता है, तो उसके बाहर निकलने से पहले ही, कवकजाल सभी तरुण कणिशिकाओं को आक्रमित कर देता है, जहां यह अंतराकोशिकीय रूप से वृद्धि करता है तथा रैकिस के अतिरिक्त कणिश के अधिकांश ऊतकों को नष्ट कर देता है (चित्र 10.4 a से i तक)। इस समय तक संक्रमित पौधे अपेक्षाकृत थोड़े लंबे हो जाते हैं, ऐसा संभवतः रोगजनक की उद्दीपन क्रिया के कारण होता है।

संक्रमित गुठलियों में कवकजाल जल्दी ही टीलियोबीजाणुओं में रूपांतरित हो जाते हैं तथा यह मुक्त हो जाते हैं और आसपास के स्वस्थ पादपों तक उड़कर पहुंच जाते हैं। स्वस्थ पादपों के पुष्पों पर गिरने के पश्चात् टीलियोबीजाणु अंकुरित हो जाते हैं और बेसिडियम के निर्मित हो जाने से अगुणित कवकतंतु उत्पन्न करते हैं। लैंगिक रूप से निषेच्य अगुणित कवकतंतुओं के युग्मन से द्विकेन्द्रकी कवकजाल निर्मित हो जाता है। ये पुष्पों के वर्तिकाग्र को वेध कर, तरुण अंडाशय तक पहुंच जाता है और गुठलियों के परिपक्व होने से पहले ही फलभित्ति, अध्यावरण व भ्रूण के ऊतकों में स्थापित हो जाता है। इसके बाद कवकजाल निष्क्रिय हो जाता है और प्राथमिक रूप से स्कुटेलम में प्रसुप्त अवस्था में रहता है, जब तक कि संक्रमित गुठलियां अंकुरित नहीं हो जाती हैं।

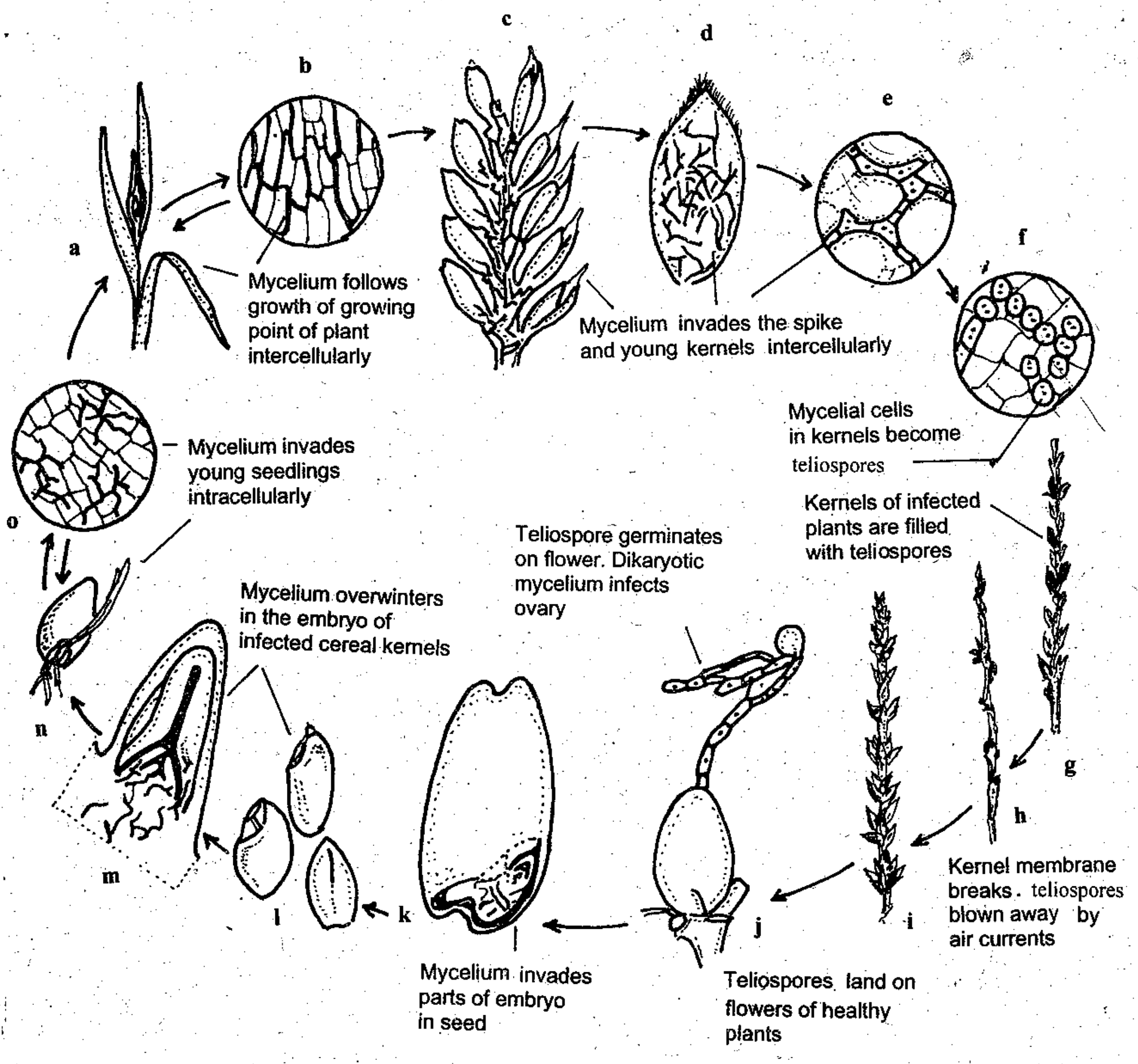

चित्र 10.4 : *ऑस्टिलैगो* के कारण गेहूँ तथा जौ में श्लथ कंड का रोगचक्र।

10.5.4 नियंत्रण के उपाय

चूंकि रोग बीजों के द्वारा फैलता है, इसको नियंत्रित किया जा सकता है :

- स्वस्थ, प्रमाणित श्लथ मुक्त बीजों के उपयोग के द्वारा।
- जिन बीजों में संक्रमण का संदेह हो उन्हें रोपने से पहले कवकनाशी से उपचारित करना।
- बीजों को गर्म जल से उपचारित करना। यह बीजों को संक्रमणमुक्त करने का श्रेष्ठ तरीका है।

सामान्यतः थोड़े-थोड़े बीजों को गर्म जल से उपचारित करके अलग-अलग खेतों में बोया जाता है जिससे कि श्लथमुक्त बीज निर्मित हो सकें और उन्हें अगली ऋतु में बोया जा सके।

बोध प्रश्न 4

निम्नलिखित वक्तव्यों में कोष्ठकों में दिए गए शब्दों में से सही शब्द चुनिए।

i) गेहूँ का श्लथ कंड (ठंडे/गर्म) क्षेत्रों में अधिक उग्र होता है।

ii) संक्रमित (पर्णक/कणिशिकाएं) काले बीजाणुओं के कंड पिंड में रूपांतरित हो जाती हैं।

iii) संक्रमित गुठली में कवकजाल की कोशिकाएं (टीलियोबीजाणुओं/बेसिडियोबीजाणुओं) में रूपांतरित हो जाती हैं।

iv) नई फसल में रोग (संक्रमित गुठलियों/टीलियोबीजाणुओं) के द्वारा फैल जाता है।

10.6 गेहूँ के किट्ट

गेहूँ के किट्ट (wheat rusts) विश्व भर में पाए जाते हैं और जहां कहीं भी गेहूँ उगाया जाता है वहां उसे प्रभावित करते हैं। किट्ट कवक गेहूँ के पादप के भूमि के ऊपर के सभी भागों को संक्रमित करता है और पत्तियों तथा जड़ों के विकास को कम करके हानि पहुंचाता है। इसके परिणामस्वरूप, दानों की उत्पादकता तथा गुणवत्ता प्रभावित होती है।

किट्ट कवक अविकल्पी (obligate) परजीवी होते हैं। अधिकांश किट्ट कवक पांच भिन्न, बीजाणु प्रकारों वाली पांच भिन्न-भिन्न फलन संरचनाओं (fruiting bodies) को निर्मित करते हैं जो निश्चित क्रम में प्रकट होती हैं। कुछ बीजाणु अवस्थाएं अन्य विकल्पी परपोषी पादप को परजीवीकृत करती हैं।

पिछली इकाई में आपने पढ़ा था कि गेहूँ के तने का किट्ट जो कि *पक्सिनिया ग्रैमिनिस* कवक के कारण होता है, वह एक दीर्घचक्री (macrocyclic), भिन्नाश्रयी (heteroecious) किट्ट कवक है। यह अपने जीवनचक्र को पूर्ण करने के लिए पिक्निया (pycnia) और ईशिया (aecia), झड़बेरी (barberry) के पादप पर तथा यूरीडिया (uredia) और टीलिया (telia) गेहूँ के पादप पर निर्मित करता है (चित्र 9.14)।

10.6.1 रोग जनक : *पक्सिनिया*

गेहूँ की फसल तीन प्रकार के किट्टों से पीड़ित होती है :

- तना किट्ट या काला किट्ट जो *पक्सिनिया ग्रैमिनिस* (*P. graminis*) के कारण होता है।
- धारीदार अथवा पीत किट्ट जो *पक्सिनिया ग्लूमेरम* (*P. glumarum*) के कारण होता है।
- पर्ण या भूरा किट्ट जो *पक्सिनिया ट्रिटिसीना* (*P. triticina*) के कारण होता है।

10.6.2 लक्षण

गेहूँ के तीनों किट्ट नीचे बताई गई विशेषताओं के आधार पर पहचाने जा सकते हैं :

सारणी 10.1 : गेहूँ के तीन किट्टों के विभेदक लक्षण।

लक्षण	काला किट्ट	पीत किट्ट	भूरा किट्ट
प्रगटन का समय	मैदानों में मार्च–अप्रैल	जनवरी में	जनवरी में
प्रभावित होने वाला भाग	पर्ण आच्छदों तथा बालियों की तुलना में तने अधिक गंभीर रूप से आक्रमित।	पत्तियां सबसे अधिक गंभीर रूप से आक्रमित।	अधिकांशतः सिर्फ पत्तियां ही आक्रमित।
यूरीडिया की उपस्थिति	सभी हरे भागों पर	सभी हरे भागों पर	मुख्यतः पत्ती की ऊपरी सतह पर
यूरीडिया के प्रकार	बड़े, दीर्घीकृत, जल्दी फट जाने वाले	छोटे, अंडाकार, देर से फटने वाले	छोटे (परंतु पीत किट्ट से बड़े) अंडाकार या गोल, जल्दी फटने वाले
यूरीडोबीजाणु	अंडाकार, भूरे, लघु कंटकी, चार मध्यवर्ती जनन छिद्र	गोल, पीले, लघुकंटकी, 6-10 बिखरे हुए जनन छिद्र	अंडाकार या गोल, चटकीले नारंगी रंग के 3-4 बिखरे हुए जनन छिद्र
टीलिया की उपस्थिति	टीलिया सभी हरे भागों पर उपस्थित पर्णफलकों पर कम	सभी हरे भागों पर, मुख्यतः पत्ती की निचली सतह पर	मुख्यतः पत्ती की निचली सतह पर
टीलिया के प्रकार	टीलिया काले, जल्दी फट जाने वाले, टीलिया बिना सहसूत्र के	हल्के काले रंग के, उपत्वचा में से नहीं फटते, सहसूत्रों द्वारा टीलियम कक्षों में विभाजित	टीलिया विरले यदि उपस्थित तो ये उपत्वचा में से होकर नहीं फटते हैं टीलियम को घेरे सहसूत्र।
टीलियोबीजाणु	बहुत मोटे, गोल या शीर्ष पर नोकदार, भूरे या काले	अक्सर शीर्ष पर चपटे, गहरे भूरे, शीर्ष पर कम मोटे	अक्सर शीर्ष पर अधिक चपटे हल्के काले, शीर्ष पर कम मोटे

नोट : यह तालिका सिर्फ संदर्भ के लिए दी गयी है, इसे याद करने की आश्यकता नहीं है।

10.6.3 रोगचक्र : *पक्सिनिया ग्रैमिनिस*

सर्दी के मौसम में कवक के टीलियोबीजाणु (चित्र 10.5 a) गेहूँ की पिछली फसल के मलबे पर उपस्थित होते हैं। ये बसन्त ऋतु में अंकुरित हो जाते हैं और बेसिडियम बनाते हैं। प्रत्येक बेसिडयम चार अगुणित बेसिडियोबीजाणु उत्पन्न करते हैं (चित्र 10.5 b)। बेसिडियोबीजाणु बलपूर्वक वायु में निष्कासित किए जाते हैं तथा वायु के प्रवाह के साथ कई सौ मीटर तक चले जाते हैं। यदि बेसिडियोबीजाणु तरुण झड़बेरी की पत्तियों (विकल्पी परपोषी) पर गिरते हैं तो वे अंकुरित हो जाते हैं तथा उपत्वचीय कोशिकाओं को सीधे ही वेध देते हैं (चित्र 10.5 c)। इसके बाद कवकजाल अन्तराकोशिकीय रूप से वृद्धि करता है व उसके चूषकांग कोशिकाओं में प्रवेश कर जाते हैं। तीन चार दिनों के अंदर ही कवकतंतु कवक का जाल बना लेते हैं जो स्पर्मोगोनियम यानि पुमणुधानी (पिक्निडियम) में विकसित हो जाता है (चित्र 10.5 d)। स्पर्मोगोनियम के बाहर की ओर के दबाव से उपत्वचा फट जाती है और उसका ऑस्टियोल पादप ऊतक की सतह पर आ जाता है। स्पर्मोगोनियम में उत्पन्न होने वाले ग्राही कवकतंतु ऑस्टियोल के बाहर निकल आते हैं तथा स्पर्मेशिया (पिक्नोबीजाणु) ऑस्टियोल के जरिए बाहर निकल जाते हैं। जब स्पर्मेशिया निषेच्य स्पर्मोगोनियम के ग्राही कवकतंतु के संपर्क में आते हैं, तो

निषेचन की क्रिया संपन्न होती है (चित्र 10.5 e)। स्पर्मेशियम का केन्द्रक ग्राही कवकतंतु में चला जाता है, परंतु यह ग्राही कवकतंतु में मौजूद केन्द्रक के साथ युग्मन नहीं करता है। इसकी बजाय वह एककेन्द्रकी कवकजाल के जरिए अभिगमन कर जाता है तथा ईशियम आद्यक (primordium) बनाता है जो झड़बेरी की पत्ती की निचली सतह पर ईशियम में विकसित हो जाता है (चित्र 10.5 f)।

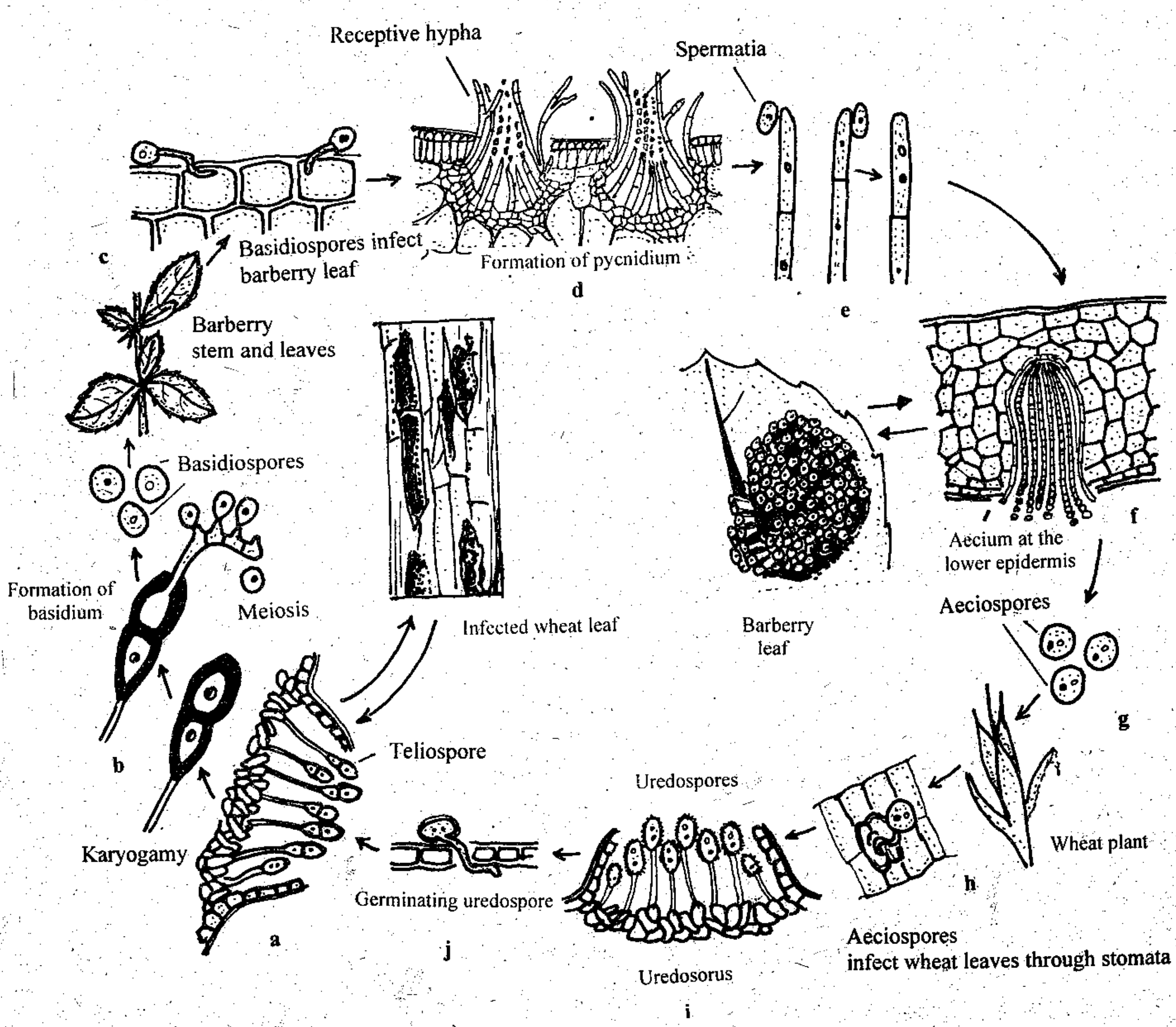

चित्र 10.5 : गेहूँ के तना किट्ट का रोग चक्र, रोगजनक *पक्सिनिया ग्रैमिनिस ट्रिटिसाई*।

ईशियमीबीजाणु ईशियम के भीतर लघु कवकतंतुओं पर श्रृंखलाओं में उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक बीजाणु में विपरीत विभेदों (strains) + तथा – के दो अलग-अलग केन्द्रक होते हैं (चित्र 10.5 g)। ईशियमीबीजाणु बसंत ऋतु के अंत में मुक्त होते हैं तथा वायु के द्वारा आसपास के गेहूँ के पादपों पर ले जाए जाते हैं, जिन पर वे अंकुरित हो जाते हैं (चित्र 10.5 h)। जनन नलिका गेहूँ के तने या पत्ती को रंध्र के जरिए वेधती है और कवकजाल कुछ समय के लिए अंतराकोशिकी रूप से वृद्धि करता है। बहुत से छोटे कवकतंतु कवकजाल में से निकलते हैं तथा प्रत्येक के शीर्ष पर एक यूरीडोबीजाणु निर्मित हो जाता है (चित्र 10.5 i)। यूरीडोबीजाणुओं की वृद्धि से निचली उपत्वचा पर दबाव पड़ता है। अन्ततः उपत्वचा टूट जाती है तथा कुछ जंग के रंग के यूरीडोबीजाणु मुक्त हो जाते हैं।

यूरीडोबीजाणु वायु के प्रवाह से आसानी से उड़ जाते हैं। जब वे गेहूँ के पादप पर गिरते हैं तब वे अंकुरित हो जाते हैं तथा रंध्रों के जरिए पादप को संक्रमित करते हैं (चित्र 10.5 j)।

कवकजाल पुनः अन्तराकोशिकी रूप से वृद्धि करने लगता है और पादप कोशिकाओं में चूषकांग भेजता है और 8-10 दिन के अंदर ही नया यूरीडियम तथा और अधिक यूरीडोबीजाणु उत्पन्न करने लगता है। गेहूँ में एक ही वर्धनकाल में पादप के परिपक्व होने तक यूरीडोबीजाणुओं द्वारा एक के बाद एक अनेक संक्रमण हो सकते हैं।

जब गेहूँ का पादप परिपक्व हो जाता है तो यूरीडियम के स्थान पर टीलियोबीजाणु उत्पन्न होते है। टीलियोबीजाणु तत्काल अंकुरित नहीं होते हैं तथा गेहूँ को संक्रमित नहीं करते हैं बल्कि वे कवक की विश्रान्ति अवस्था होते हैं। टीलियोबीजाणु ऐसी अवस्था भी होती है जिसमें दो केन्द्रकों का युग्मन होता है तथा बेसिडियम में अर्धसूत्री विभाजन के पश्चात् कवक की आनुवंशिक संरचना में नए संयोजन का निर्माण होता है (चित्र 10.5 b)।

10.6.3 नियंत्रण के उपाय

- गेहूँ की ऐसी प्रजातियों का उपयोग जो रोगजनक द्वारा संक्रमण के लिए प्रतिरोधी हों।
- किट्ट कवक के वैकल्पिक परपोषी झड़बेरी के पादप तथा अन्य पादपों का जो संपार्श्विक परपोषी की भांति कार्य करते हैं जैसे कुछ घासें उनका पहाड़ों पर से उन्मूलन। ऐसा करने से उन क्षेत्रों में गेहूँ का आरंभिक काल में संक्रमण रोका जा सकता है जहां यूरीडोबीजाणु सर्दी के मौसम में जीवित नहीं रह पाते हैं।
- एक ऋतु की फसल के कटने तथा दूसरी ऋतु की फसल रोपने के मध्य खेत की सफाई जिससे संक्रमण के प्रारंभिक स्रोत यूरीडोबीजाणुओं को नष्ट किया जा सके।
- सल्फर (sulphur), डाईक्लोन (dichlone) तथा ज़िनेब (zineb) जैसे कवकनाशियों का संक्रमित पौधे पर उपयोग।
- गेहूँ तथा जौ की मिश्रित खेती भी रोग को नियंत्रित करने में सहायक होती है।

बोध प्रश्न 10.5

पक्सिनिया ग्रैमिनस से संबंधित निम्नलिखित में से कौन से कथन सत्य या असत्य है ? सत्य के लिए **स** तथा असत्य के लिए **अ** दिए गए खानों में लिखिए।

i) पिक्निया झड़बेरी की पत्तियों की ऊपरी सतह पर निर्मित होते हैं। ☐

ii) ईशिया झड़बेरी की पत्तियों की निचली सतह पर निर्मित होते हैं। ☐

iii) स्पर्मेशिया ईशियमी प्यालों में निर्मित होते हैं। ☐

iv) भारत में गेहूँ के किट्ट का चक्र सिर्फ यूरीडोबीजाणुओं द्वारा ही पूर्ण हो सकता है। ☐

10.7 मानव तथा जंतुओं के कवकीय रोग

हालांकि कवकों की एक लाख से अधिक जातियां पाई जाती हैं परंतु उनमें से सिर्फ 50 ही मानव रोगजनक के रूप में जानी जाती हैं। मनुष्य में कवकीय रोग दो प्रकारों में बांटे जा सकते हैं, सतही कवकार्ति (superficial mycoses) या त्वचाकवकार्ति (dermatomycoses) और सर्वांगी कवकार्ति (systemic mycoses)। सतही कवकार्ति जानवरों से मनुष्य में फैलती हैं। कुछ अपवादों को छोड़कर जैसे एथलीट का फुट (athlete's foot) या पैर के दाद का संक्रमण जो मनुष्यों में एक-दूसरे के जरिए लॉकर कक्षों, तरणताल (swimming pool) क्षेत्रों तथा अन्य स्थानों के कारण फैलता है। वे कवक जो सर्वांगी संक्रमण करते हैं वे सामान्यतः मिट्टी, वनस्पति

अथवा पक्षियों की बीट आदि से आते हैं और वायु के द्वारा फैलते हैं। ये संक्रमण फेंफड़ों से आरंभ होते हैं तथा अन्य अंगों में फैल जाते हैं।

वे कवक रोग जो नाखूनों, त्वचा, बाल तथा श्लेष्म झिल्ली (mucous membrane) पर होते हैं वे सतही कवकार्ति कहलाते हैं। इनमें से अनेकों कवक कई प्रकार के दाद उत्पन्न करते हैं। ये कवक अरीय रूप से त्वचा की मृत किरेटिनीकृत (keratinized) परत में शाखन करते कवकतंतुओं के द्वारा फैलते हैं। जीवित ऊतकों में शोथ (inflammation) बहुत कम होता है सिर्फ थोड़ा सा शुष्क शल्कन (scaling) दिखाई देता है। सामान्यतः प्रसारी किनारों पर खुजली तथा जलन होती है। गुलाबी रंग के चक्रों के कारण इसका नाम रिंगवर्म पड़ा है। इस रोग का फैलाव संक्रमित व्यक्ति अथवा जानवर से सीधे संपर्क द्वारा होता है। नम त्वचा कवकीय संक्रमण के लिए सुभेद्य (vulnerable) होती है, जैसे कि खिलाड़ियों के पसीने से नम हो गए पैर आसानी से संक्रमित हो जाते हैं इसीलिए इसका नाम एथलीट फुट पड़ा है।

सर्वांगी अथवा गहरी कवकार्ति अक्सर घातक या गंभीर होती है। कवक अवत्वक ऊतकों (sub-cutaneous tissues) अथवा फेंफड़ों से प्रवेश करती हैं और वहां स्थापित हो जाती हैं तथा रोग उत्पन्न करती हैं। उनमें से अनेक वायु-जनित होते हैं तथा शरीर में श्वसन तंत्र के जरिए प्रवेश करते हैं। इनमें से कुछ सर्वांगी कवकार्ति के लक्षण ट्यूबरक्युलोसिस अथवा अन्य रोगों के समान होते हैं। अतः उचित उपचार के लिए रोग का यथार्थ निदान आवश्यक होता है। स्तनधारियों में चर्मोद्भिदों (डर्माटोफाइट्स) द्वारा होने वाले कुछ सामान्य रोग रिंगवर्म, स्पोरोट्राइकोसिस, पिंडित ऊर्ण (lumpy wool) तथा आनन छाजन (facial eczema) हैं।

10.7.1 पिंडित ऊर्ण

पिंडित ऊर्ण जिसे ऊर्ण विगलन (wool rot) भी कहते हैं, वह भेड़ों में पाई जाने वाली एक स्थिति है जो कवक *डर्माटोफिलस डर्माटोनोमस (Dermatophilus dermatonomus)* के द्वारा उत्पन्न होती है। कवक नम मौसम में भेड़ की त्वचा पर आक्रमण करती है। ये खुजली पैदा करती है तथा आधा इंच मोटे कठोर पील-सफ़ेद से खुरंड (scab) निर्मित करती है। जल्दी ही घाव भरने लगता है तथा ऊर्ण की वृद्धि होना जारी रहता है जो कठोर तत्व को त्वचा से दूर ले जाता है। उग्र संक्रमण के कारण ऊर्ण की मात्रा में हानि होती है।

10.7.2 आनन-छाजन

आनन-छाजन (facial eczyma) भेड़ तथा मवेशियों में सामान्य तौर पर न्यूजीलैंड तथा ऑस्ट्रेलिया में पाया जाता है।

ये कवक *पिथोमाइसीज कैर्टरम* (*Pithomyces chartarum*) के कारण होता है। ये एक जहरीला पदार्थ 'स्पोरीडिस्मिन' (sporidismin) उत्पन्न करता है जो हकीकत में रोग के लिए जिम्मेदार होता है।

10.7.3 स्पोरोट्राइकोसिस (Sporotrichosis)

स्पोरोट्राइकोसिस (sporotrichosis) घोड़ों तथा मनुष्यों का रोग है। ये *स्पोरोट्राइकम बुरमेनी* (*Sporotrichum beurmanni*) के कारण होता है।

रोगजनक त्वचा पर छिले हुए स्थान या किसी छोटे घाव से शरीर में प्रवेश कर जाता है तथा त्वचा में दर्दहीन गांठे निर्मित करता है। रोग के होने के सामान्य स्थान पांद रोमगुच्छों के भीतर की ओर के क्षेत्र, केशबंध (coronets), तथा जांघों के भीतर की ओर के स्थान हैं। गांठे आरंभ में छोटी मटर के दाने के आकार के उभार जैसी दिखाई पड़ती हैं, जो धीरे-धीरे आकार में बढ़ती जाती हैं। कुछ समय के बाद त्वचा की सतह केन्द्र में मुलायम हो जाती है, अंततः बहुत थोड़ी सी मात्रा में मवाद बन जाता है जो आसपास के बालों में भर जाता है और वे गुंथे हुए चटाई रूपी

और शल्कीय हो जाते हैं। बालों के झड़ जाने के बाद छिली हुई सी व्रणित यानि अल्सरयुक्त (ulcerated) सतह पीछे रह जाती है और वह जल्दी ही रोमहीन खुरंड से ढंक जाती है।

लगभग 3-4 सप्ताह पश्चात् घाव भर जाता है और सिर्फ एक छोटा रोमहीन क्षेत्र रह जाता है, परंतु बाद में मूल घाव से थोड़ी दूरी पर ही सामान्यतः नई गांठे बन जाती हैं। घोड़ों में संक्रमण के कारण कोई कुप्रभाव नहीं दिखाई पड़ते हैं। स्पोरोट्राइकोसिस मनुष्य, चूहे या मूषक में भी फैल सकता है। प्रभावित जानवरों को पृथक रखा जाना चाहिए।

प्रतिदिन पोटैशियम आयोडाइड को लेने तथा आयोडाइड के तेज टिंक्चर (10 प्रतिशत) को बाहरी तौर पर लगाने से रोग को नियंत्रित किया जा सकता है।

10.7.4 दाद तथा सिर का चर्म रोग

ये संक्रामक त्वचा संक्रमण हैं, जिसे हर्पीज (herpes), विसर्पिका (dermatomycosis) टीनिया Tinea) आदि भी कहते हैं। ये कवक की वृद्धि के कारण होते हैं जो या तो जानवरों की त्वचा की सतह पर रहते हैं अथवा उनके बालों में रहते हैं। दाद तथा सिर का चर्म रोग यानि फेवस (favus) परजीवी कवक *ट्राइकोफाइटोन* (*Trichophyton*) तथा *माइक्रोस्पोरम* (*Microsporum*) के कारण होते हैं।

दाद

नग्न आंखों से देखने पर दाद (ringworm) शुष्क, उभरी हुई, पपड़ीमय त्वचा जैसा दिखाई पड़ता है जो शल्कों यानि स्कैब से ढका रहता है।

कवक त्वचा की सतह पर रहता है तथा त्वचा और बालों को संक्रमित करता है। ये बालों के रोमकूपों (follicles) के भीतर भी चला जाता है। त्वचा के बाल झड़ जाते हैं। जीवित जंतुओं में कवक आमतौर पर शाखित कवकजाल निर्मित नहीं करता है। सूक्ष्मदर्शी से देखने पर ये रज्जु मनकों (string of beads) जैसा दिखाई पड़ता है। प्रत्येक मनका एक कोनिडियम होता है। कृत्रिम संवर्धनों में कवक बहुत सा कवकजाल निर्मित करता है।

दाद को निम्नलिखित तरीकों से नियंत्रित किया जा सकता है।

- प्रभावित जंतुओं को अलग रखना।
- उन स्थानों की अच्छी तरह से सफाई करना जहां जंतु रहते हों।
- रोगी पालतू जानवरों का संपर्क बच्चों तथा युवाओं से न होने देना।

प्रभावित जानवरों का इलाज निम्न प्रकार से किया जा सकता है।

- घाव के आसपास के स्थान से बालों को हटाकर।
- खुरंड को गर्म सोड़ा तथा जल में डुबाकर।
- छिली हुई सतह पर टिंक्चर आयोडाइड का लेप करके

सिर का चर्म रोग

सिर का चर्म रोग यानि फेवस (favus) कुत्ते, बिल्ली, चूहों, मूषकों तथा कभी-कभी मुर्गों को प्रभावित करता है। इसकी विशेषता शल्कों का निर्माण है। जिनके केन्द्र में गड्ढ़ा होता है, जो फेवस (मधुमक्खी के छत्ते) जैसा दिखाई पड़ता है।

बोध प्रश्न 10.6

निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरिये।

i) .... एक प्रचलित शब्द है जिसका उपयोग शरीर में कवक की वृद्धि के कारण होने वाले रोग के लिए किया जाता है।

ii) कवक *पिथोमाइसीज कैर्टरम* के कारण .... में आनन छाजन (एक्जिमा) होता है।

iii) दाद का कवक जानवरों की .... की सतह पर रहता है तथा .... और .... को संक्रमित करता है।

iv) स्पोरोट्राइकोसिस रोग .... और .... में पाया जाता है।

10.8 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण फसलों में होने वाले विभिन्न कवक रोग हमारी फसलों तथा पादप उत्पादों को क्षति पहुंचाते हैं।
- फसल पादपों में प्रत्येक कवक रोग सामान्यतः भिन्न कवक द्वारा होता है तथा हरेक के लक्षण विशिष्ट होते हैं।
- पादप किट्ट, जो *पक्सिनिया* की कुछ जातियों द्वारा होते हैं वे सबसे विनाशकारी पादप रोगों में से एक हैं।
- पादप कंड विश्व भर में पाए जाते हैं तथा अनाजों को काफी क्षति पहुंचाते हैं।
- *फाइट्रोफ्थोरा* की जातियां अनेक भिन्न-भिन्न पादपों पर विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न करती है। सबसे प्रमुख जाति *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* है जो आलू की विलंबित अंगमारी का कारण है।

10.9 अंत में कुछ प्रश्न

1. *फाइटोफ्थोरा इन्फैस्टेन्स* में लैंगिक प्रजनन का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2. उस कवक का नाम बताइए जो गुलाब की चूर्णिल आसिता के रोग के लिए उत्तरदायी है। इस रोग के क्या लक्षण होते हैं?

....

....

....

....

....

....

....

....

3. गन्ने के रक्त विगलन के रोगचक्र का विस्तृत विवरण कीजिए।

....

....

....

....

4. अनाज के दाने के भ्रूण में ही 'गेहूँ के श्लथ कंड' के कवकजाल को मारने के लिए अपनाए जाने वाले विभिन्न तरीकों को बतलाइए।

....

....

....

....

....

5. *पक्सिनिया ग्रैमिनिस ट्रिटिसाई* का आलेखी जीवनचक्र बनाइए।

10.10 उत्तर

बोध प्रश्न

10.1. अ) i) 1, ii) 3, iii) 3,

ब) i) अ, ii) स, iii) स, iv) स

स) सेक्शन 10.2.4 को देखिए।

10.2 i) *स्फेरोथीका पेनोसा,* ii) मरता, iii) सफेद पाउडरी, iv) प्रतिरोधक प्रजातियों

10.3. i) स, ii) स, iii) अ, क्लैमिडोबीजाणुओं का मिट्टी में वितरण हो जाता है
iv) अ, v) स

10.4. i) ठंडे, ii) कणिशिकाएँ, iii) टीलियोबीजाणु, iv) संक्रमित गुठलियों

10.5. i) स, ii) स, iii) अ, iv) अ

10.6. i) कवकार्ति, ii) भेड़ों तथा मवेशियों, iii) त्वचा, रोम, त्वचा, (iv) घोड़ों, मनुष्यों

अंत में कुछ प्रश्न

1. सेक्शन 10.2, पैराग्राफ 2 देखिए
2. सेक्शन 10.3.1 देखिए
3. सेक्शन 10.4.3 देखिए
4. सेक्शन 10.5.4 देखिए
5. चित्र 10.6 देखिए

इकाई 11 मानव कल्याण में कवकों की भूमिका

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
अध्ययन निर्देश

11.2 खाद्य प्रदायक के रूप में कवक

11.3 खाद्य संदूषक के रूप में कवक

11.4 किण्वन में कवकों की भूमिका

11.5 कवकीय प्रतिजैविक, दवाएं तथा भ्रांतिजनक

11.6 कवकमूली कवक

11.7 पादप रोग प्रबंधन में कवकों की भूमिका

11.8 कवकों की वायुजैविकी

11.9 मानवों में कवकीय रोग

11.10 सारांश

11.11 अंत में कुछ प्रश्न

11.12 उत्तर

11.1 प्रस्तावना

आपने इकाई 10 में 'कवकीय रोगों' के बारे में पढ़ा था। इस इकाई में हम मानव जीवन में कवकों की सकारात्मक तथा नकारात्मक भूमिका के बारे में चर्चा करेंगे। कवक हमारे लिए बहुत ही आर्थिक महत्व के हैं। कुछ कवक जैसे कि छत्रक (mushrooms), मॉरेल (morels), पफबॉल (puffballs) तथा ट्रफ़ल (truffles) को सुस्वादु भोजन अथवा क्षुधावर्धक (भूख बढ़ाने वाले) के रूप में उपयोग किया जाता है, जबकि, कुछ अन्य का उपयोग उनकी किण्वन की क्षमता के कारण कुछ भोज्य व पेय पदार्थों के निर्माण में किया जाता है। कवकों से प्राप्त होने वाले औषधीय तथा औद्योगिक रसायनों की सूची काफी बड़ी है।

कुछ कवक वंश जैसे कि *न्यूरोस्पोरा* (*Neurospora*) जैवरसायन तथा आनुवंशिकी को समझने के लिए महत्वपूर्ण अनुसंधान के साधन हैं और कुछ कवक जैवप्रौद्योगिकी के भी महत्वपूर्ण साधन हैं। कृषि में कवक मिट्टी की उर्वरता को नियंत्रित रखने तथा रोगजनक सूक्ष्मजीवियों द्वारा होने वाले रोगों को दूर करने में सहायक होते हैं।

भोजन को दूषित करने तथा पादप, जंतुओं और मनुष्यों में अनेकों रोग उत्पन्न करने में कवकों की नकारात्मक भूमिका हम सभी को ज्ञात है।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- मानव जीवन में कवकों की सकारात्मक तथा नकारात्मक भूमिका का वर्णन कर सकेंगे,
- विभिन्न खाद्य पदार्थों, औषधियों, दवाओं तथा औद्योगिक रसायनों के उत्पादन में कवकों के महत्व को बता सकेंगे,

- मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने में कवकों की भूमिका को बता सकेंगे,
- समाकलित पीड़क प्रबंधक तकनीक (Integrated Pest Management Technology) के मूल सिद्धांतों को समझा सकेंगे,
- कवकों के वायुजैविकी अध्ययनों के महत्व की चर्चा कर सकेंगे, तथा
- मनुष्यों और जंतुओं में पाए जाने वाले कवकीय रोगों की चर्चा कर सकेंगे।

अध्ययन निर्देश

इस इकाई में काफी वंशों के नाम दिए गए हैं, परन्तु आपको उन्हें याद करने की आवश्यकता नहीं है। आपको कुछ प्रमुख नामों की जानकारी होनी चाहिए जिनकी यहाँ अक्सर चर्चा की गई है।

11.2 खाद्य प्रदायक के रूप में कवक

खाद्य छत्रक

प्लूरोटस (Pleurotus)
लेन्टिनस (Lentinus)
ऐगैरिकस कैम्पेस्ट्रिस (Agaricus campestris)
मार्केला (Morchella)
पोडैक्सॉन पोडैक्सिस (Podaxon podaxis)
क्लवेरिया (Clavaria)
लाइकोपर्डोन (Lycoperdon)

विश्व भर से कवकों की लगभग 2,000 जातियां रिपोर्ट की गई हैं जो मानव भोजन के लिए उपयुक्त हैं। इनमें से लगभग 200 पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों में पाई जाती हैं। बहुत से खाद्य कवक स्वादिष्ट पकवानों के तौर पर खाए जाते हैं। कुछ कवकों के फलन (fructification) जैसे कि खेत छत्रक (*ऐगेरिकस कैम्पेस्ट्रिस*), मधु के रंग के छत्रक, परी वृत्त छत्रक (fairy-ring mushrooms), पफवॉल (*लाइकोपर्डोन* तथा *क्लवेरिया*), मॉरेल (*मार्केला*) तथा ट्रफल (truffles) खाद्य पदार्थ हैं, हालांकि इनका खाद्य पोषक मूल्य बहुत अधिक नहीं होता है लेकिन ये क्षुधावर्धक (भूख बढ़ाने वाले) के रूप में उपयोगी होते हैं। खमीर तथा कुछ तंतुरूपी कवक बी-कॉम्प्लेक्स समूह के विटामिनों के मूल्यवान स्रोत होते हैं।

सारणी 1 : कवकों से प्राप्त होने वाले खाद्य तथा पेय पदार्थ।

जीव	उत्पाद
सैकैरोमाइसीज सेरेविसी (Saccharomyces cerevisiae)	बेकर यीस्ट, मदिरा
सैकैरोमाइसीज केरिसबर्जिनिस (Saccharomyces carisbergenis)	लेगर बियर (Lager Beer)
सैकैरोमाइसीज रॉक्साइ (Saccharomyces rouxii)	सोयासॉस (Soy Sauce)
कैन्डिडा मिलेरी (Candida milleri)	खट्टी फ्रेंच डबलरोटी (Sour French Bread)
पेनिसिलियम रॉक्फोर्टाई (Penicillium roqueforti)	नीली-धारीदार चीज़ (Blue Veined Cheese)
मेनिसिलियम केमेमबर्टाइ (Penicillium camemberti)	केमेमबर्ट तथा ब्राइ चीज (Camembert and Brie Cheeses)
ऐस्पर्जिलस ओराइजे (Aspergillus oryzae)	सैक (Sake) (चावल-मांड जल अपघटन)
राइजोपस (Rhizopus)	टेम्पे (Tempeh)
म्यूकर (Mucor)	सूफू (Sufu) (सोयाबीन दही)
मोनैस्कस परप्यूरिया (Monascus purpurea)	एंग-काक (Ang-Kak) (लाल चावल)

खाद्य छत्रक *ऐगैरिकस* वंश के हैं जो बेसिडिओमाइसिटीज समूह का सदस्य है। इसका कवकजाल भूमि के नीचे वृद्धि करता है। लैंगिक युग्मन के पश्चात् पास-पास संहत कवकतंतु सतह पर आ जाते हैं तथा छत्रक गोपकों (mushroom cap) के रूप में बढ़ते हैं। छत्रकों के अनेक प्रकार के आकार, रंग तथा आमाप होते हैं। छत्रकों की कुछ जातियों से विषाक्तन तथा मृत्यु भी हो सकती है। खतरनाक कवकों की सूची में सबसे ऊपर *ऐमेनिटा वर्ना* (*Amanita verna*) तथा *ऐमेनिटा फेलोइडीज* (*Amanita phalloides*) हैं।

दो कवकीय जातियां, *पेनिसिलयम राक्फोर्टाई* तथा *पेनिसिलयम केमेमबर्टाइ* चीज़ को विशेष स्वाद प्रदान करते हैं। इनसे उत्पन्न होने वाली चीज़ की किस्मों को रॉक्फोर्ट तथा केमेमबर्ट चीज़ कहते हैं।

11.3 खाद्य संदूषक के रूप में कवक

कवक संचित बीजों तथा अनाजों को क्षति पहुंचाने के एक प्रमुख कारक हैं। *ऐस्पर्जिलस फ्लेवस* (*Aspergillus flavus*) तथा *ऐस्पर्जिलस पैरासिटिकस* (*A. parasiticus*) के विभेद (strains) फलों, सब्जियों, संग्रहित अनाजों, मूंगफलियों तथा अन्य खाद्य पदार्थों पर उगते हुए पाए जाते हैं, जो सामान्यतः खाए जाते हैं। ये ऐफ्लाटॉक्सिन (aflatoxin) निर्मित करते हैं जो मनुष्यों में यकृत को क्षति पहुंचाता है।

क्लेविसेप्स परप्यूरिया (*Claviceps purpurea*) की जातियां गेहूं, जौ, राई, जई तथा अन्य वन्य घासों में विषैले ऐल्केलॉइड्स उत्पन्न करती हैं। संदूषित अनाजों को खाने से बीमारियां हो जाती हैं। बीमारी के लक्षण — अंगों में गैंग्रीन (gangrene), तीव्र पीड़ा, व्याक्षोभ (convulsion), जूड़ी (chills) तथा विभ्रम आदि हैं। ये गर्भवती स्त्रियों में गर्भपात भी कर देते हैं।

हैलुसिनोजन (Hallucinogens) विभ्रम (किसी वस्तु या अनुभूति का महसूस होना जो वास्तव में उपस्थित नहीं है) पैदा करने वाली औषधियां।

आल्टर्नेरिया (*Alternaria*) सबसे अधिक पाए जाने वाली फफूंदियों में से एक है जो खेतों में टमाटर की फसल के क्षतिग्रस्त तथा कमजोर ऊतकों पर आक्रमण करके उन्हें क्षति पहुंचाती हैं।

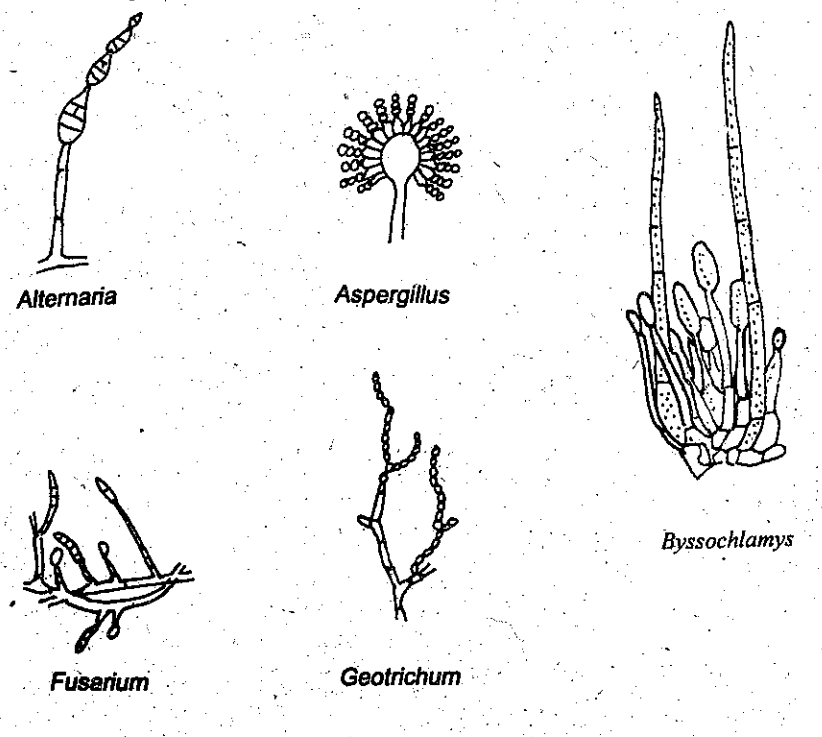

चित्र 11.1: खाद्य पदार्थों को संदूषित कर आले सामान्य कवक।

राइजोपस स्टोलॉनीफर (*Rhizopus stolonifer*) गीली डबलरोटी पर उगने वाला सामान्य फफूंद है जो पेक्टिनोलिटिक (pectinolytic) (पेक्टिन का विघटन करने वाले) एंजाइम्स स्रावित करते हैं। परजीवी के रूप में यह अक्सर सेब तथा अन्य फलों को भंडारण में प्रभावित करता है और उनमें मृदु विगलन (soft rot) करता है। एन्जाइम के ताप स्थायित्व (heat stability) के कारण डिब्बाबंदी से पूर्व ताजी खूबानियों में *राइजोपस स्टोलीनीफर* से संक्रमण होने पर डिब्बाबंद फलों में मृदु विगलन हो जाता है। *बाइसोक्लेमिस* (*Byssochlamys*) कवक जो कि ऐस्कोमाइसिटीज का एक सदस्य है, वह भी तीव्र पेक्टिनोलिटिक एन्जाइम्स उत्पन्न करता है। *बाइसोक्लेमिस फल्वा* (*B. fulva*) डिब्बाबंद फलों तथा फलों के रस को खराब कर देता है। यह विषैले तत्व (toxin) भी बनाता है।

एक अन्य वंश *फ्यूजेरियम* (*Fusarium*) प्रकृति में विस्तृत रूप से पाया जाता है। इसकी अनेकों जातियां पादप रोगजनक के रूप में काफी महत्वपूर्ण हैं। *फ्यूजेरियम मॉनिलिफॉर्मे* (*F. moniliforme*) चावल में एक रोग उत्पन्न करता है जिसे प्रचलित तौर पर 'फुलिश सीड्लिंग' (foolish seedling) यानि मूर्खनिवोद्‌भिद् कहते हैं, जिसके फलस्वरूप एक पादप वृद्धि उद्दीपक जिबरेलिक अम्ल (gibberellic acid) की खोज हुई थी। *फ्यूजेरियम* टॉक्सिन निर्मित करता है, जो विभिन्न जंतुओं तथा संभवतः मनुष्यों को भी प्रभावित करते हैं। जब भोजन *फ्यूजेरियम* से बहुत अधिक संक्रमित होता है, तो जंतु उसे नहीं खाते हैं। *जिओट्राइकम* (*Geotrichum*) एक अन्य भोजन संदूषित करने वाला कवक है। इसे 'डेरी' यानि 'दुग्धशाला फफूँद' कहते हैं क्योंकि यह डेरी उत्पादों पर उगता हुआ पाया जाता है। *पेनिसिलियम* की अनेकों जातियां हैं, जो विस्तृत रूप से प्रकृति में वितरित हैं तथा बहुत से खाद्य पदार्थों पर उगती हुई पाई जाती हैं।

बोध प्रश्न 11.1

अ) तीन खाद्य कवकों के नाम बताइए।

....

....

....

ब) कॉलम 1 में दिए गए कवकों को कॉलम 2 में दी गई खाद्य क्षति में उनकी भूमिका से मिलान कीजिए।

कॉलम 1	कॉलम 2
(i) *बाइसोक्लेमिस फल्वा*	(क) संचित बीजों तथा अनाजों का क्षय
(ii) *क्लेविसेप्स परप्यूरियां*	(ख) डिब्बाबंद फलों का संक्रमण
(iii) *जिओट्राइकम*	(ग) कुछ अनाजों में विषैले ऐल्केलॉइड्स का उत्पादन
(iv) *ऐस्पर्जिलस फ्लेवस*	(घ) डेरी उत्पादों का क्षय

11.4 किण्वन में कवकों की भूमिका

किण्वन (fermentation) तकनीक ने वास्तव में बहुत ही महत्वपूर्ण प्रगति की है जिसके परिणामस्वरूप सूक्ष्मजीवविज्ञान की एक विशेष शाखा विकसित हो गई है जिसे 'औद्योगिक

सूक्ष्मजीवविज्ञान' (Industrial Microbiology) कहते हैं। बड़ी संख्या में कवक और यीस्ट का उपयोग विभिन्न प्रकार के औद्योगिक उत्पादों के निर्माण जैसे कि एथिल ऐल्कोहॉल तथा ऐमीनो अम्लों सहित अन्य कार्बनिक-अम्लों में किया जाता है। *पेनिसिलियम, जिओट्राइकम* और *सैकैरोमाइसीज* का मनुष्यों द्वारा शराब, बियर, चीज़ तथा डबलरोटी बनाने के लिए पूरी तरह दोहन किया जा चुका है। *सैकैरोमाइसीज सेरेविसी* (प्रचलित तौर पर बेकर्स यीस्ट कहलाता है) के अनेक औद्योगिक उपयोग हैं। शराब के उत्पादन के लिए ऐल्कोहॉली किण्वन के दौरान, अंगूर का रस यीस्ट की प्रबल वृद्धि के द्वारा किण्वित हो जाता है। विलेय शर्कराओं (ग्लूकोज तथा फ्रक्टोज) का कार्बन डाइऑक्साइड तथा एथिल ऐल्कोहॉल में परिवर्तन हो जाता है।

ऐस्पर्जिलस तथा *पेनिसिलियम* दो प्रमुख कवक हैं, जिनका बहुत अधिक उपयोग संभव है, और वर्तमान समय में उनका दोहन किया जा रहा है। *ऐस्पर्जिलस* के विभेदों का उपयोग सिट्रिक, ग्लूकॉनिक तथा गैलिक अम्लों के व्यापारिक उत्पादन में किया जाता है। व्यापारिक स्तर पर लगभग सारा सिट्रिक अम्ल सुक्रोस के विलयन में वृद्धि करने वाले *ऐस्पर्जिलस नाइजर* (*A. niger*) के द्वारा निर्मित किया जाता है। यह कवक एमिलेस तथा प्रोटीन अपघटक एन्ज़ाइम भी उत्पन्न करते हैं। *ऐस्पर्जिलस* का प्रोटीन अपघटक एन्ज़ाइम, दूध को जमा (clot) देता है तथा चीज़ बनाने में रेनेट (rennet) के विकल्प के रूप में शायद उपयोगी साबित हो।

सारणी 11.2 : औद्योगिक रसायन, ऐमीनो अम्ल तथा महक बढ़ाने वाले न्यूक्लिओटाइड्स।

कवक	उत्पाद
सैकैरोमाइसीज सेरेविसी	एथानॉल (ग्लूकोस से)
क्लूवेरोमाइसीज ट्रेगाइलिस (*Kluyveromyces tragilis*)	एथानॉल (लैक्टोस से)
ऐस्पर्जिलस नाइजर	सिट्रिक अम्ल
कैन्डिडा युटिलिस (*Candida utilis*)	कागज की लुगदी के व्यर्थ पदार्थ से सूक्ष्मजैविक प्रोटीन
सैकैरामाइकोप्सिस लिपोलिटिका (*Saccharomycopsis lipolytica*)	पेट्रोलियम ऐल्केन से सूक्ष्मजैविक प्रोटीन

खाद्य सूक्ष्मजीवविज्ञान में महत्व के कवक *म्यूकर* तथा *राइजोपस* हैं। *म्यूकर* स्पी. का उपयोग भोजन के किण्वन के लिए किया जाता है। *म्यूकर, राइजोपस* तथा *ऐस्पर्जिलस* का उपयोग मांड यानि स्टार्च के ग्लूकोस में जल अपघटन (hydrolysis) के लिए किया जाता है, जिस पर बाद में यीस्ट की क्रिया द्वारा ऐल्कोहॉल का निर्माण किया जाता है। *म्यूकर पुसीलस* (*M. pussilus*) एक कोशिकाबाह्य (extracellular) प्रोटिएस (protease) उत्पन्न करता है, जिसमें दूध को जमाने की क्षमता होती है तथा जो चीज के उत्पादन में उपयोगी होता है।

कवकों का एक और बहुत महत्वपूर्ण समूह यीस्ट हैं। हालांकि यीस्ट भी भोजन को दूषित करते हैं परन्तु कुछ विभेद काफी उपयोगी हैं क्योंकि वे अवायवीय स्थिति में शर्कराओं को ऐल्कोहॉल तथा कार्बन डाइऑक्साइड में परिवर्तित कर देते हैं। एथिल ऐल्कोहॉल बेकरी में कार्बन डाइऑक्साइड के लिए महत्वपूर्ण उत्पाद हैं। कार्बन डाइऑक्साइड डो (गुंधे हुए आटे) में खमीर उठा देता है और वह हल्का हो जाता है।

सारणी 11.3 : खाद्य उद्योग में उपयोगी कुछ कवकीय एन्ज़ाइम।

एन्ज़ाइम	स्रोत	उपयोग
एमिलेस (Amylases)	*ऐस्पर्जिलस, राइजोपस*	बेकिंग, निसवन (brewing) तथा शर्बत या चाशनी बनाने में मांड का किण्वन योग्य पदार्थों में परिवर्तन फलों के रसों का स्वच्छन (clarification) अपघर्षी कैन्डी की प्राप्ति (scrap candy recovery) सब्जियों की डिब्बाबंदी
कैटालेस (Catalase)	*ऐस्पर्जिलस*	डेरी तथा अंडों के उत्पादों में H_2O_2 (हाइड्रोजन पर-ऑक्साइड) का अपघटन
α-ग्लूकोसिडेस (माल्टेस) α-Glucosidase (maltase)	*सैकेरोमाइसीज यूवेरम (S. uvarum)*	डेरी उत्पादों में माल्टोस का ग्लूकोस में परिवर्तन
ग्लूकोस आइसोमेरेस (Glucose isomerase)		मक्का चाशनी में (corn syrup) ग्लूकोस का फ्रक्टोस में परिवर्तन
ग्लूकोस ऑक्सीडेज (Glucose oxidase)	*ऐस्पर्जिलस पेनिसिलियम*	ग्लूकोस का ग्लूकोनिक अम्ल में परिवर्तन फलों के रसों अथवा डिब्बों के ऊपरी स्थानों में से ऑक्सीजन का निष्कासन
इनवर्टेस (Invertase)	*सैकैरोमाइसीज सेरेविसी* *कैन्डिडा युटिलिस*	सुक्रोस का ग्लूकोस और फ्रक्टोस में परिवर्तन मृदु-केन्द्र वाले मिष्ठानों में कणिकायन को रोकता है। कृत्रिम मधु बनाने में उपयोग किया जाता है
लाइपेस (Lipase)	*ऐस्पर्जिलस, राइजोपस पेनिसिलियम, कैन्डिडा*	वसा का ग्लिसरॉल तथा वसीय अम्ल में परिवर्तन चीज में स्वाद प्रदान करना अंडे की सफेदी से अंडे की जर्दी को हटाना

$$C_6H_{12}O_6 \longrightarrow CH_3COCOOH \longrightarrow C_2H_5OH + CO_2$$

ग्लूकोस पाइरूविक अम्ल एथिल ऐल्कोहॉल

शराब (मद्य) में पाया जाने वाला *सैकैरोमाइसीज ऐसीटी* (*S. aceti*) ऐल्कोहॉल को एसीटिक अम्ल में परिवर्तित कर सकता है। यीस्ट में विटामिन बी समुदाय (B complex) की उच्च मात्रा होती है और इसीलिए चिकित्सा में सूखी यीस्ट की गोलियों का उपयोग विटामिनों की कमी को पूरा करने के लिए किया जाता है। ग्लूकोस के ऐल्कोहॉल में किण्वन के लिए *स्किजोसैकैरोमाइसीज* (*Schizosaccharomyces*) का उपयोग किया जाता है। *सैकैरोमाइसीज सेरेविसी* के जैवप्रौद्योगिकी में उपयोग की काफी प्रबल संभावनाएं हैं। इसका उत्पादन विशाल स्तर पर किया जाता है जिससे चिकित्सा तथा जीववैज्ञानिक अनुसंधानों के लिए विभिन्न एन्ज़ाइम तथा जैवरसायन निर्मित किए जाते हैं। हाल के वर्षों में यीस्ट को बड़े पैमाने पर पेट्रोलियम उद्योग से प्राप्त होने वाले कच्चे यानि अपरिष्कृत खनिज तेलों पर उगाया गया है तथा उन्हें मवेशियों के चारे के लिए उपयोग किया जाता है।

बोध प्रश्न 11.2

निम्नलिखित कार्यों के लिए उपयोग किए जाने वाले कवकों के वंश लिखिए।

i) शराब, बियर, चीज तथा डबलरोटी के निर्माण के लिए

....

ii) सिट्रिक तथा ग्लूकॉनिक अम्ल के उत्पादन के लिए

....

iii) दूध को जमाने के लिए

....

(iv) मांड के ग्लूकोस में जल अपघटन के लिए

....

11.5 कवकीय प्रतिजैविक, दवाएं तथा भ्रांतिजनक

सन् 1929 में, सर एलैक्जेन्डर फ्लेमिंग (Alexander Fleming) ने सबसे पहले प्रतिजैविक तत्वों को बनाने में कवकों की भूमिका का पता लगाया था। उन्होंने *पेनिसिलियम नोटेटम* (*P. notatum*) से प्रतिजैविक पेनिसिलिन प्राप्त किया था। पेनिसिलिन एक कार्बनिक पदार्थ है जो सूक्ष्मजीवों के लिए मारक (lethal) होता है। ये सामान्य दवाओं तथा रोगाणुनाशियों से कहीं अधिक प्रभावी होता है। ये पहला प्रतिजैविक था जिसका उपयोग दूसरे विश्व युद्ध के दौरान व्यापक रूप से किया गया था।

प्रतिजैविकों के उत्पादन के लिए *पेनिसिलियम* के बहुत अधिक औद्योगिक उपयोग हैं। इस संदर्भ में दो जातियां सबसे अधिक प्रचलित हैं। *पेनिसिलियम क्रिसोजेनम* (*P. chrysogenum*) (पेनिसिलिन के लिए) तथा *पेनिसिलियम ग्रिज़िओफुलीवम* (*P. griseofulivum*)। यहाँ ये बताना जरुरी है कि *पेनिसिलियम नोटेटम* जिससे पेनिसिलिन की सबसे पहले खोज की गई थी उससे अब सामान्यतः पेनिसिलिन का निर्माण नहीं किया जाता है। आजकल 1,000 से अधिक प्रतिजैविक कवकों के लगभग छह वंशों से निर्मित किए जाते हैं। *सेफैलोस्पोरियम एक्रेमोनियम* (*Cephalosporium acremonium*) से एक शक्तिशाली प्रतिजैविक सिफैलोस्पोरिन निर्मित होता है जो विभिन्न प्रकार के रोगजनक जीवाणुओं पर क्रिया करने में समर्थ होता है।

सूक्ष्मजीवी द्वितीय उपापचयजों (metabolites) का एक सुपरिचित अ-प्रतिजैविक उपयोग अर्गॉट ऐल्केलॉइड्स से संबंधित है। आपने सेक्शन 11.3 में पढ़ा था कि *क्लेवीसेप्स परप्यूरिया* विष उत्पन्न करता है जो व्यापक स्तर पर उन लोगों में घातक विषाक्तन करता है जो संदूषित अनाज से बनी डबलरोटी खा लेते हैं। *क्लेवीसेप्स परप्यूरिया* घासों जैसे कि राई (rye) के पुष्पों के अंडाशय में स्क्लैरोशियम (sclerotium) निर्मित करते हैं। स्क्लैरोशियम राई का अर्गॉट कहलाता है। अर्गॉट का उपयोग पशु तथा मानव औषधियों में किया जाता है। इसमें ऐल्केलॉइड्स का मिश्रण होता है जो गर्भाशय में तीव्र और सशक्त संकुचन करते हैं। अतः इस औषधि का उपयोग बच्चे के जन्म के दौरान रक्तस्राव को रोकने के लिए किया जाता है।

अर्गॉट अनेकों जैवसक्रिय पदार्थों का सक्रिय स्रोत है जिनका उपयोग औषधगुणविज्ञानियों (Pharmacologists) के द्वारा औषधि के रूप में किया जाता है। अर्गॉट ऐल्केलॉइड के कृत्रिम व्युत्पन्नों का उपयोग तंत्रिका तंत्र की अव्यवस्थाओं, माइग्रेन, पार्किन्सोनिस्म तथा जीर्ण बुद्धिशिथिलता (senile dementia) में किया जाता है।

वृहत् पफबॉल, *क्लेवेशिया* (*Clavatia*) में एक केन्सररोधी कैल्वेसिन पाया जाता है। इस कवक को खाने से पेट के ट्यूमर (अर्बुद) नहीं होते हैं।

बुद्धि शिथिलता (Dementia)
मानसिक प्रक्रमों की गंभीर अव्यवस्थाएं जिनके कारण स्मृति में गड़बड़ियाँ व्यक्तित्व में बदलाव, गलत तर्कण आदि हो जाते हैं।

पार्किन्सन रोग (Parkinson's disease)
तंत्रिका तंत्र का एक प्रगामी रोग जिसमें कँपकँपी, पेशीय दृढ़ता तथा दुर्बलता हो जाती है। इसे पार्किन्सोनिस्म भी कहते हैं।

माइग्रेन (Migraine)
प्रत्यावर्ती स्पंदनशील सिरदर्द जो सामान्यतः सिर के एक ही भाग में होता है। इसके साथ ही अक्सर मितली आती है तथा अस्पष्ट दिखाई देता है।

कुछ बहुत ही शक्तिशाली भ्रॉंतिजनकों में से एक, लिसर्जिक अम्ल डाइ एथिल ऐमाइड है (lysergic acid diethylamide, abbre. LSD) जो मानव मस्तिष्क में मनोविकारी प्रभाव उत्पन्न करते हैं। मैक्सिको में पाये जाने वाले अनेकों छत्रक जैसे *कोनोसाइबी* (*Conocybe*), *साइलोसाइबी* (*Psilocybe*) तथा *स्ट्रोफेरिया* (*Stropharia*) भी ऐसे भ्रॉंतिजनक उत्पन्न करते हैं जो साइलोसिन तथा साइलोसाइबिन कहलाते हैं।

विषैले छत्रक भी ऐसी औषधियों के महत्वपूर्ण स्रोत हैं जिनका उपयोग मानवीय विकारों के उपचार के लिए किया जाता है। मस्केरीन जो *ऐमेनिटा मस्केरिया* (*Amanita muscaria*) से बनाया जाता है इससे तंत्रिकाओं में आवेगों के संचरण को समझने में बहुत सहायता मिली है।

बोध प्रश्न 11.3

निम्नलिखित में से कौन सा सेट गलत है ? उसे सही तरीके से लिखिए।

i) *पेनिसिलियम क्रिसोजेनम*, पेनिसिलिन, प्रतिजैविक

ii) *क्लेवीसेप्स परप्यूरिया*, ऐल्केलॉइड, केन्सररोधी

iii) *क्लेवेशिया*, क्लेवेसिन, गर्भाशय का संकुचन

iv) *सेफैलोस्पोरियम एक्रेमोनियम*, सेफैलोस्पोरिन, प्रतिजैविक

11.6 कवकमूली कवक

कवकों का वितरण सामान्यतः मृदा की ऊपरी 6-इंच की परत तक सीमित रहता है। मृदा में अकार्बनिक तथा कार्बनिक पदार्थों और सूक्ष्मजीवों का, विशेष रूप से उन कवकों का विशाल क्रम पाया जाता है जो विभिन्न पदार्थों के जैविक रूपांतरण में संलग्न होते हैं। कवक काफी महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि वे सैलुलोस, प्रोटीन तथा अन्य जटिल कार्बनिक पदार्थों को अपघटित करते हैं। **मूल परिवेषी (rhizosphere)** (पादप मूलों के एकदम आस-पास का क्षेत्र) के द्वारा मिट्टी में एक विशेषीकृत आवास निर्मित हो जाता है। ये सूक्ष्मजीवियों के लिए उच्च गतिविधि का क्षेत्र होता है। मूल परिवेषी के साथ संबद्ध सूक्ष्मजीव सहोपकारिक अन्योन्य क्रिया का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं क्योंकि जड़ों के द्वारा बड़ी मात्रा में शर्कराएं, ऐमीनो अम्ल तथा न्यूक्लीक अम्लों के व्युत्पन्न उत्सर्जित होते हैं जो कवकों तथा अन्य जीवों के लिए भोजन प्रदान करते हैं। मूल परिवेषी जीव जटिल पदार्थों को सिर्फ अपघटित नहीं करते हैं, बल्कि वह पौधों को पोषक तत्व भी प्रदान करते हैं और कभी-कभी कुछ पादप वृद्धि हार्मोन्स भी निर्मित करते हैं।

पुटिकामय-कूर्चक कवक मूल

ग्लोमस फैसीकुलेटम (*Glomus fasciculatum*)

ग्लोमस जिओस्पोरम (*G. geosporum*)

ग्लोमस मोसे (*G. mosseae*)

एकोलोस्पोरा स्पी. (*Acaulospora sps.*)

ऐन्ट्रॉफोस्पोरा स्पी. (*Entrophospora sps.*)

स्क्लेरोसिस्टिस स्पी. (*Sclerocystis sp.*)

जाइगैस्पोरा स्पी. (*Gigaspora sp.*)

स्कुटेलोस्पोरा स्पी. (*Scutallospora sp.*)

कवकमूली कवक वे कवक हैं जो अनेक प्रकार के पादपों व वन्य वृक्षों की जड़ों की सतह पर अथवा उनके अंदर उगते हैं। ये कवक-मूल का सहजीवी साहचर्य पादपों को मृदा से खनिज पोषक तत्वों को प्राप्त करने की क्षमता को बढ़ा देता है।

पुटिकामय-कूर्चक कवकमूल (Vascular-Arbuscular Mycorrhiza)

जड़ों के साथ दो प्रकार के कवकीय साहचर्य ज्ञात हैं। कवक जड़ों की ऊपरी सतह को अंदर तक वेध सकती है — अंतःकवकमूल (Endomycorrhiza) अथवा महज जड़ के चारों ओर आच्छद बनाती हैं — बाह्य कवकमूल (Ectomycorrhiza)।

सामान्य प्रकार का अंतःकवकमूल पुटिकामय-कूर्चक (VAM) प्रकार का है, उसे पुटिकामय उसकी संरचनाओं के कारण कहा जाता है : पुटिकाएं (vesicles) या कूर्चक परपोषी ऊतक के भीतर

विकसित होते हैं। ये कवक मुक्त रूप से मृदा के अंदर नहीं पाए जाते हैं परंतु नई जड़ें पहले से संक्रमित जड़ों के बीजाणुओं से संक्रमित हो जाती हैं।

कवकमूल कार्बनिक यौगिक, जैसे शर्कराएं सिर्फ पादप की जड़ों से ही प्राप्त करते हैं तथा खनिज पोषक तत्व मृदा से प्राप्त करते हैं, जिनमें ये लंबे कवकतंतु भेजते हैं। कवक मृदा में उपस्थित अघुलनशील शैल फॉस्फोरस $Ca_3(PO_4)_2$ को घुलनशील बना देते हैं और इस प्रकार उसे पादपों के लिए उपलब्ध कर देते हैं।

बाह्य कवकमूल विस्तृत रूप से फैले हुए हैं। ये खासतौर पर वृक्षों तथा झाड़ियों की जड़ों पर पाए जाते हैं। कवकतंतु मिट्टी में बाहर निकल आते हैं इसके अतिरिक्त कवक जड़ के चारों ओर कठोर आच्छद बनाते हैं। आच्छद में बड़ी मात्रा में मृदा से प्राप्त किए गए पोषक तत्व तथा कार्बन यौगिक होते हैं जिनका उपयोग पादप जड़ों द्वारा किया जा सकता है। ऐसी मिट्टी जिनमें पोषक तत्वों की कमी होती है (वृक्षहीन बंजर भूमि) वहाँ कवकमूल पोषक तत्वों की प्रमुख रूप से आपूर्ति करते हैं। शुष्क, बालू वाले, फॉस्फेट की कमी युक्त मिट्टी में उगने वाले सूखा-प्रवण क्षेत्रों के पादप, प्राकृतिक वनों तथा बागानों के वृक्ष अपनी स्वस्थ वृद्धि के लिए कवकमूलों पर बहुत अधिक आश्रित होते हैं।

बोध प्रश्न 11.4

अ) मूल परिवेषी जीव किसानों के मित्र हैं। संक्षेप में चर्चा कीजिए।

....

....

....

....

....

ब) निम्नलिखित में से कौन से कथन सत्य या असत्य हैं। सत्य के लिए **स** तथा असत्य के लिए अ दिए गए खानों में लिखिए।

i) वे कवक जो पादपों की पत्तियों पर उगते हैं उन्हें कवकमूल कहते हैं। ☐

ii) कवकमूली कवक पादपों को फॉस्फोरस प्रदान करते हैं। ☐

iii) वैम कवक बाह्य कवकमूली कवक हैं। ☐

iv) कवक मिट्टी की ऊपरी 6-इंच की परत में वितरित होते हैं। ☐

11.7 पादप रोग प्रबंधन में कवकों की भूमिका

पादप रोग प्रबंधन (plant disease management) का उद्देश्य आर्थिक हानि को रोकना तथा फसल की कीमत् को बढ़ाना है। रोगजनक को खेत अथवा कृषि पारिस्थितिक तंत्र से पूर्णतः नष्ट कर देना आर्थिक तथा पारिस्थितिक दोनों रूपों से जरुरी नहीं है। किसी भी पादप रोग को स्थायी रूप से नियंत्रित नहीं किया जा सकता है। आजकल शब्द 'नियंत्रण' के स्थान पर शब्द 'प्रबंधन' का प्रयोग किया जाता है। यह क्षतियों अथवा हानियों को आर्थिक क्षति स्तर पर रखने अथवा कम से कम रोग को उस स्तर से अधिक फैलने को कम करने के सिद्धांत पर आधारित है। प्रबंधन फसल की खेती की प्रणाली में सतत् समायोजनों की आवश्यकता को भी सुझाता है। रोग प्रबंधन का अर्थ फसल की उत्पादकता को बढ़ाना है। यह इस तथ्य पर आधारित है कि

रुग्ण पादप का उपचार संभव नहीं है परन्तु रोग तब ही दिखाई पड़ता है जब पादप क्षतिग्रस्त हो चुका होता है। अतः निरोधक उपाय बहुत महत्वपूर्ण होते हैं। इन निरोधक उपायों में परपोषी में प्रेरण अथवा प्रतिरोधकता सम्मिलित है।

पादप रोग प्रबंधन में रोगजनक, परपोषी तथा पर्यावरण के प्रबंधन की आवश्यकता होती है। रोगजनक के प्रबंधन में संक्रमण को कम करने, नष्ट करने अथवा उसकी रोकथाम के तरीके शामिल हैं। परपोषी के प्रबंधन में पादप के ओज (vigour) को सुधारने के तथा पोषण के जरिए प्रतिरोधकता को बढ़ाने के, प्रजनन के जरिए आनुवंशिक प्रतिरोधकता को बढ़ाने के तथा रासायनिक तरीकों से आक्रमण के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करने के तरीके शामिल हैं। पर्यावरण के प्रबंधन में जल प्रबंधन, मिट्टी का प्रबंधन तथा फसल का प्रबंधन सम्मिलित हैं।

अनेक प्रकार के कीट, एफ़िड (aphids) तथा अन्य जीव भी फसल पर आक्रमण करते हैं। वे ना सिर्फ भौतिक रूप से काट कर, खाकर अथवा उसके रस (sap) को चूस कर पादपों को क्षति पहुँचाते हैं बल्कि रोग पैदा करने वाले जीवों जैसे जीवाणुओं, विषाणुओं तथा कवकीय बीजाणुओं को भी अपने साथ पौधों पर ले जाते हैं। अतः फसल को बचाने के लिए यह आवश्यक है कि कीटों की जनसंख्या को नियंत्रित किया जाए। इसको कीटरोगजनकों (entomopathogens) तथा जैव कीटनाशकों (bioinsecticides) के उपयोग द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है।

कीटरोगजनक या तो लक्ष्य कीटों में रोग उत्पन्न करते हैं या वे उन्हें स्वयं ही अथवा रासायनिक कीटनाशकों के साथ मिलकर मार देते हैं। यह ज्ञात है कि कवकों (एन्टोमाफ़्थोरेलीज, Entomophthorales) की 500 से अधिक जातियाँ विभिन्न कीटों को संक्रमित करके मार सकती हैं। मनुष्यों, पालतू जानवरों तथा पर्यावरण के लिए हानिकारक कीटों को ये कवक विभिन्न रसायनों के उपयोग के बिना ही जैविक तरीके से नियंत्रित करने का सशक्त तरीका प्रस्तुत करते हैं।

सूक्ष्मजीवी कीटनाशक सामान्यतः पर्यावरण अथवा स्वास्थ्य पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं उत्पन्न करते हैं। संयुक्त राष्ट्र अमरीका में फसलों, संचित अनाजों तथा अन्य उत्पादों के परजीवी जैसे बरूथी (mites), भृंग (beetles) तथा इल्ली (caterpillar), सफल रूप से *एन्टोमाफ़्थोरा वाइरुलेन्टा* (*Entomophthora virulenta*) तथा *हिन्सुटैला थोम्पसोनाइ* (*Hinsutella thompsonii*) के द्वारा नियंत्रित किये जा चुके हैं। कवकीय कीटरोगजनकों के अन्य महत्त्वपूर्ण उदाहरणों में मच्छरों को परजीवीकृत करने वाले किट्रिड (chitrid) तथा *लेजीनिडियम* (*Lagenidium*) (ऊओमाइसिटीज़) सम्मिलित हैं। *एन्टोमॉफ़्थोरा* एफ़िड तथा इल्ली पर परजीवी होता है, तथा *वर्टीसीलियम* (*Verticillium*) एफ़िड तथा सफेद मक्खियों के लिए रोगजनक होता है।

11.8 कवकों की वायुजैविकी

अधिकांश पादप रोगजनक वायुजनित होते हैं। वायु की धाराएं कवकीय बीज़ाणुओं को लंबी दूरियों तक ले जाती हैं तथा मौसम की स्थिति के अनुसार संक्रमण फसलों के काफी बड़े भागों में फैल सकता है और फलस्वरूप महामारी हो सकती है।

वायुजैविकी (aerobiology) में वायु के नमूनों को निश्चित अंतरालों पर तथा भिन्न-भिन्न ऊँचाइयों पर से काँच की पट्टियों यानि स्लाइड्स पर अथवा पेट्रीडिशों पर एकत्रित किया जाता है जिनमें पोषक ऐगार (agar) होता है। जब बीजाणु अंकुरित होते हैं और भिन्न-भिन्न निवह (colony) निर्मित करते हैं, तो वैयक्तिक कवकों की पहचान की जाती है। किसी स्थान विशेष पर वर्ष के प्रत्येक मौसम में हवा के प्रति इकाई आयतन में उपस्थित कवकों की संख्या का आंकलन करना संभव हो गया है। विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त की गई ये जानकारी जैसे कब और कहां रोगजनक निर्मुक्त हुआ, उसके विस्तार की सीमा, उसकी संक्रमण की क्षमता तथा मौसम के बदलाव के बारे में बताती है। इस प्रकार के आंकड़ों से फसली पादपों के कवक रोगों के बारे में पहले से भविष्यवाणी करना तथा उन्हें रोकना संभव हो गया है। डॉ. के.सी. मेहता के अनाज के किट्टों (rusts) पर कार्य द्वारा वायुजैविकीय अध्ययनों के महत्व को प्रदर्शित किया गया है।

उदाहरण के लिए किट्ट के बीजाणु उत्तरी भारत के मैदानी इलाकों में गर्मी के उच्च तापमान में जीवित नहीं रह पाते हैं, परन्तु संक्रमण प्रतिवर्ष प्रगट हो जाता है। डॉ. मेहता ने दिखाया कि हिमालयी पहाड़ों पर संक्रमित गेहूँ के पादप यूरीडोबीजाणु (uredospore) उत्पन्न करते हैं जो हवा की धाराओं द्वारा उड़कर मैदानों में आ जाते हैं तथा खड़ी गेहूँ की फसल को संक्रमित करते

सारणी 11.4 : भारत के कुछ महत्वपूर्ण वायुजनित कवक रोग

कवक रोग	कारक जीव
चावल का प्रध्वंस (Blast of Rice)	*पाइरीकुलेरिया ओराइजे (Pyricularia oryzae)*
गेहूँ का काला तना किट्ट (Black Stem Rust of Wheat)	*पक्सिनिया ग्रैमिनिस ट्रिटिसाई (Puccinia graminis tritici)*
कुकरबिट्स की मृदुरोमिल आसिता (Downy Mildew of Cucurbits)	*पेरोनोस्पोरा क्यूबेन्सिस (Peronospora cubensis)*
आलू, टमाटर की आरंभिक अंगमारिता (Early Blight of Potato, Tomato)	*आल्टर्नेरिया सोलेनाइ (Alternaria solani)*
बाजरा का अरगॉट (Ergot of Bajra)	*क्लेवीसेप्स माइक्रोसिफेला (Claviceps microcephala)*
तंबाकू का मंडूक दृक्बिन्दु (Frog Eyespot of Tobacco)	*सर्कोस्पोरा निकोटिनी (Cercospora nicotianae)*
कपास की धूसर आसिता (Grey Mildew of Cotton)	*रैमुलेरिया ऐरियोला (Ramularia areola)*
सोरघम का पर्ण किट्ट (Leaf Rust of Sorghum)	*पक्सिनिया परप्यूरिया (Puccinia purpurea)*
गेहूँ का पर्ण किट्ट (Leaf Rust of Wheat)	*पक्सिनिया रिकॉन्डिटा (Puccinia recondita)*
गन्ने का पर्ण किट्ट (Leaf Rust of Sugarcane)	*इरिएन्थी (Erianthi)*
गेहूँ का श्लथ कंड (Loose Smut of Wheat)	*आस्टिलैगो ट्रिटिसाई (Ustilago tritici)*
सोरघम का दीर्घ कंड (Long Smut of Sorghum)	*टॉलिपोस्पोरियम फिलीफेरम (Tolyposporium filliferum)*
आम की चूर्णिल आसिता (Powdery Mildew of Mango)	*ऑइडियम मेन्गीफेरी (Oidium mangiferae)*
वन्य वृक्षों की चूर्णिल आसिता (Powdery Mildew of Forest Trees)	*फिल्लैक्टिनिया कोराइली (Phyllactinia corylea)*
मटर की चूर्णिल आसिता (Powdery Mildew of Pea)	*एरीसाइफी पोलीगोनी (Erysiphe polygoni)*
अलसी का किट्ट (Rust of Linseed)	*मेलम्प्स्पोरा लाइनाइ (Melampspora lini)*
गेहूँ का धारी रोग (Stripe of Wheat)	*हेल्मिन्थोस्पोरियम सेटाइवम् (Helminthosporium sativum)*
गेहूँ का धारी किट्ट (Stripe Rust of Wheat)	*पक्सिनिया ग्लूमेरम (Puccinia glumarum)*
मूंगफली का टिक्का रोग (Tikka Disease of Groundnut)	*सर्कोस्पोरा आर्किडिकोला (Cercospora archidicola)* तथा *सर्कोस्पोरा परसोनेटा (C. personata)*

बोध प्रश्न 11.5

निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) कीट तथा .... कृष्य पादपों को क्षति पहुँचाते हैं तथा रोग उत्पन्न करते हैं क्योंकि वे जीवाणुओं और विषाणुओं के वाहक होते हैं।

ii) वे रोगजनक जो लक्षित कीटों में रोग उत्पन्न करते हैं वे .... कहलाते हैं।

iii) कवकों की वायुजैविकी बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि वह अन्य स्थानों पर निर्मुक्त हुए कुछ कवकों की .... क्षमता के बारे में भविष्यवाणी कर सकती हैं।

11.9 मानवों में कवकीय रोग

अभी तक आपको पादपों के कवकीय रोगों के विनाशकारी प्रभावों की जानकारी दी गई है। कवक जंतुओं और मानवों में भी कई रोग उत्पन्न करते हैं। मानवों में, कवक कवकार्ति (mycosis), प्रत्यूर्जताएं (allergies) तथा आविषालुताएं (toxicoses) पैदा करते हैं।

कवकार्ति वो रोग हैं जो कवकों द्वारा मनुष्यों की जीवित कोशिकाओं पर आक्रमण से होते हैं।

प्रत्यूर्जताएं यानि एलर्जीस कवकीय प्रतिजनों (antigen) के लिए मनुष्य के शरीर में अतिसंवेदनशीलता विकसित होने के कारण होती हैं।

आविषालुताएं (toxicoses) कवकों के कारण भोजन में बनने वाले विषैले कवकीय उपापचयजों को खाने की वजह से होने वाली बीमारियां हैं। विष उत्पन्न करने के अतिरिक्त, कवक परपोषी पादप को विषैले पदार्थ उत्पन्न करने के लिए भी प्रेरित कर सकते हैं।

सारणी 11.5 : वायु में पाए जाने वाले सामान्य प्रत्यूर्ज कवक

आल्टर्नेरिया (*Alternaria*)	*मैक्रोस्पोरियम* (*Macrosporium*)
ऐस्पर्जिलस (*Aspergillus*)	*मोनिलिया* (*Monilia*)
बोट्रिटिस (*Botrytis*)	*म्यूकर* (*Mucor*)
कैन्डिडा (*Candida*)	*पेनिसिलियम* (*Penicillium*)
कीटोमियम (*Chaetomium*)	*पुलुलेरिया* (*Pullularia*)
क्लैडोस्पोरियम (*Cladosporium*)	*फोमा* (*Phoma*)
कॉर्टिकम (*Corticum*)	*रोडोटोरूला* (*Rhodotorula*)
कर्वुलेरिया (*Curvularia*)	*स्टेमफिलियम* (*Stemphyllium*)
एपीकॉकम (*Epicoccum*)	*स्पॉन्डीक्लेडियम* (*Spondycladium*)
फ्यूजेरियम (*Fusarium*)	*ट्राइकोडर्मा* (*Trichoderma*)
हेल्मिन्थोस्पोरियम (*Helminthosporium*)	

कवक आविष (mycotoxins) कवकों द्वारा उत्पन्न होने वाले द्वितीयक उपापचयज हैं जिनसे परपोषी में अप्राकृतिक बदलाव (unnatural changes) हो सकते हैं।

छत्रकों की विषाक्तता के बारे में लोगों को प्राचीन काल में भी पता था और यह सर्वज्ञात है कि *क्लेवीसेप्स परप्यूरिया* से संक्रमित अनाज खाने से अर्गट रोग (ergotism) हो जाता है। जापान में अन्य एशियाई देशों से आयात किए गए कवक से संक्रमित चावलों को खाने से एलीमेन्टरी टॉक्सिक एल्यूकिया (Alimentary toxic Aleukia) रोग हो गया था। ये 'पीत चावल रोग' (yellow rice disease) नामक बीमारी के प्रकोप के लिए उत्तरदायी था, जिसके कारण अनेक मौतें हुई थीं। बीमारी का संबंध *पैनिसिलियम आइलैन्डिकम* (*P. islandicum*) तथा *पेनिसिलियम सिट्रिनम* (*P. citrinum*) द्वारा चावल के संक्रमण से था। कवकों द्वारा संक्रमित अनाज का उपयोग जानलेवा हो सकता है यह जानकारी हमारे लिए महत्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न 11.6

कॉलम 1 में दिए गए शब्दों को कॉलम 2 में दिए गए उसके स्पष्टीकरण से मिलाइए।

कॉलम 1	कॉलम
i) कवकार्ति	क) कवक संक्रमित भोजन में निर्मित होने वाले आविषाक्त कवकीय उपापचयजों को खाने से होने वाली गड़बड़ियां।
ii) आविषालुताएं	ख) कवकीय प्रतिजनों के प्रति शरीर में अतिसंवेदनशीलता के विकसित होने की वजह से होने वाले रोग।
iii) प्रत्यूर्जताएं	ग) कवकों द्वारा जीवों की जीवित कोशिकाओं पर आक्रमण के फलस्वरूप होने वाले रोग।
iv) कवक आविष	घ) कवकों द्वारा उत्पन्न होने वाले द्वितीयक उपापचयज जिसके परिणामस्वरूप परपोषी जीव में अप्राकृतिक बदलाव आ जाते हैं।

11.10 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- कवक मनुष्यों के लिए बहुत अधिक आर्थिक महत्व के हैं।
- कुछ कवक खाने योग्य होते हैं और उनका सेवन सुस्वादु भोजन अथवा क्षुधावर्धकों के रूप में किया जाता है जबकि कुछ कवक विषैले होते हैं और उनको खाने से मृत्यु भी हो सकती है।
- कवक कच्चे तथा पके हुए खाद्य पदार्थों को संदूषित कर देते हैं। यदि कवक से संक्रमित भोजन खा लिया जाए तो विभिन्न प्रकार की गड़बड़ियां उत्पन्न हो सकती हैं।
- कवक अनेकों सूक्ष्मजैविक उद्योगों का आधार निर्मित करते हैं। अनेकों महत्वपूर्ण कार्बनिक अम्ल व्यावसायिक रूप से कवकों की जैवरासायनिक गतिविधियों के कारण निर्मित किये जाते हैं। यीस्ट द्वारा ऐल्कोहॉली किण्वन, मद्य तथा बेकिंग उद्योग का आधार है।
- कवक औषधि-उत्पादक प्रतिजैविकों तथा औषधियों के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं तथा मौलिक जैवरासायनिक प्रक्रियाओं के अध्ययन में प्रमुख अनुसंधान के साधन हैं।

- जड़ों से संबद्ध कवकमूली कवक सहवास मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखते हैं।
- कवकों का उपयोग कीटरोगजनक की तरह पादप रोगों के प्रबंधन के लिए भी किया जाता है।
- कई कवक रोगजनक होते हैं जो फसल तथा फलों में भयंकर रोग उत्पन्न करते हैं।

11.11 अंत में कुछ प्रश्न

1. मानव कल्याण में कवकों की सकारात्मक तथा नकारात्मक भूमिकाओं को बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2. कवक की किण्वन क्षमता के उपयोग द्वारा प्राप्त होने वाले पाँच प्रमुख उत्पादों के नाम बताइए।

....

....

....

....

....

3. पादपों के लिए कवकमूली साहचर्य का क्या महत्त्व है ?

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....
....
....
....
....
....

4. कवकों की वायुजैविकी का अध्ययन करने का क्या महत्व है ?

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

5. नीचे कुछ खाने योग्य तथा भोजन को दूषित करने वाले कवकों के चित्र बनाइए।

11.12 उत्तर

बोध प्रश्न

11.1 अ) i) *ऐगैरिकस कैम्पेस्ट्रिस* (खेत छत्रक)

ii) *लाइकोपर्डोन* (पफबॉल)

iii) *मार्केला* (गुच्छी)

ब) i) ख, ii) ग, iii) घ, iv) क

11.2 i) *सैकैरोमाइसीज* स्पी., *पेनिसिलियम* स्पी., *जिओट्राइकम* स्पी.

ii) *ऐस्पर्जिलस नाइजर, सैकैरोमाइसीज ऐसीटी*

iii) *म्यूकर* स्पी.

iv) *ऐस्पर्जिलस* स्पी., *राइजोपस* स्पी.

11.3 ii) तथा iii) गलत हैं। इनके सही सेट निम्न हैं :

i) *क्लेवीसेप्स परप्यूरिया*, ऐल्केलॉइड, गर्भाशय का संकुचन

ii) *क्लेवेशिया*, क्लेवेसिन, कैंसररोधी

11.4 अ) मूल परिवेषी जीव (मूल परिवेष से संबद्ध सूक्ष्म जीव) जड़ों के साथ सहोपकारी अन्योन्यक्रिया का उदाहरण प्रदर्शित करते हैं। जड़ों के द्वारा बड़ी मात्रा में शर्कराएं, ऐमीनो अम्ल तथा न्यूक्लीक अम्लों के व्युत्पन्न उत्सर्जित किए जाते हैं जो जीवाणुओं, कवकों तथा अन्य जीवों के लिए भोजन प्रदान करते हैं तथा उसके बदले में ये जीव जटिल अवस्तर को अपघटित कर देते हैं तथा पादपों को पोषक तत्व प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, कभी-कभी इनमें से कुछ पादप वृद्धि हार्मोन्स भी उत्पन्न करते हैं।

ब) i) अ, ii) स, iii) अ, iv) स

11.5 i) ऐफिड्स, ii) कीटरोगजनक (entomopathogens), iii) संक्रमण

11.6 i) ग, ii) क, iii) ख, iv) घ

अंत में कुछ प्रश्न

संकेत

1. विभिन्न सेक्शनों के शीषकों को पढ़िए तथा महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख कीजिए।
2. सेक्शन 11.4 में देखिए
3. सेक्शन 11.6 में देखिए
4. सेक्शन 11.8 में देखिए
5. चित्र 11.1 में देखिए

इकाई 12 लाइकेन

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
उद्देश्य

12.2 लाइकेन में संरचना के प्रकार
वैयक्तिक जीव के रूप में लाइकेन
लाइकेन की संरचना तथा शारीर

12.3 लाइकेन में प्रजनन
कायिक प्रजनन
अलैंगिक प्रजनन
लैंगिक प्रजनन

12.4 लाइकेन – सहजीवी तंत्र का एक प्रारूप

12.5 लाइकेन के महत्व
लाइकेन की पारिस्थितिकी
भोजन के रूप में लाइकेन
प्रदूषण के सूचक के रूप में लाइकेन
लाइकेन के अन्य उपयोग

12.6 सारांश

12.7 अंत में कुछ प्रश्न

12.8 उत्तर

12.1 प्रस्तावना

खण्ड की इस अंतिम इकाई में आप लाइकेन के बारे में पढ़ेंगे, जो कि कुछ असाधारण संरचना के जीव हैं। वे दो पूर्णतः भिन्न जीवों से संघटित होते हैं – हरित शैवाल अथवा सायनोबैक्टीरिया (नील-हरित शैवाल) तथा रंगहीन कवक तंतु। लाइकेन में कव्रक का विशिष्ट गुण लाइकेन थैलस को निर्मित करने की क्षमता है, जो कि वो वैयक्तिक रूप में कर पाने में असमर्थ होते हैं। जीवों के इस समूह की विशिष्ट आकारिकी होती है तथा विशेष गुण होते हैं। वे सभी प्रकार के आवास स्थानों में पाये जाते हैं जिनमें आवास अयोग्य उष्ण कटिबंधीय रेगिस्तान (tropical deserts), ध्रुवीय प्रदेश, यहाँ तक कि ग्रेनाइट को परिबद्ध करने वाली सतह भी सम्मिलित है। इस प्रकार के क्षेत्रों में वे नवीन (pioneer) तथा प्रमुख वनस्पति प्रदर्शित करते हैं। वे पृथ्वी पर पाई जाने वाली प्राचीनतम जीवित वस्तुओं में से हैं।

आगामी पृष्ठों में आप लाइकेन में संरचनाओं के प्रकार, शारीर तथा प्रजनन के बारे में पढ़ेंगे। हम कवकीय तथा शैवालीय भागीदारों के सहजीवी संबंधों की भी चर्चा करेंगे। पारिस्थितिकी की दृष्टि से लाइकेन बहुत उपयोगी हैं। इनका उपयोग मानव के उपभोग के लिये तथा रसायनों के उत्पादन के लिए किया जाता है। इकाई के अंत में हम लाइकेन के विभिन्न उपयोगों की चर्चा करेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- लाइकेन के वितरण, संरचना, शारीर तथा विभिन्न आवास स्थानों का वर्णन कर सकेंगे,
- लाइकेन में विभिन्न प्रकार के प्रजनन की चर्चा कर सकेंगे,

- लाइकेन में शैवालीय-कवकीय भागीदारी का वर्णन कर सकेंगे,
- नवीन वनस्पतियों के संदर्भ में लाइकेन की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे, और
- लाइकेन के विभिन्न उपयोगों को सूचीबद्ध कर सकेंगे।

12.2 लाइकेन में संरचना के प्रकार

12.2.1 वैयक्तिक जीव के रूप में लाइकेन

लाइकेन एक कवकीय भागीदार का एक शैवाल के साथ सहजीवी सहवास (symbiotic association) को प्रदर्शित करते हैं। हालांकि कवकीय घटक-कवकांश (mycobiont) तथा शैवालीय घटक-शैवालांश (phycobiont) को अलग-अलग उगाया जा सकता है। परन्तु लाइकेन थैलस तभी बढ़ते हैं जब वे एक वैयक्तिक जीव के रूप में साथ-साथ होते हैं। लाइकेन विलक्षण संरचनात्मक तथा जैव रासायनिक गुणों को दिखाते हैं।

अब शैवालीय भागीदार के लिए शैवालांश की जगह पर शब्द प्रकाशांश (photobiont) का प्रयोग होने लगा है, क्योंकि नील-हरित शैवाल वास्तव में पूर्व केन्द्रकी जीवाणु सायनोबैक्टीरिया है।

लाइकेन की प्रत्येक जाति के लिए कवकांश विशिष्ट होता है जबकि शैवालांश एक हो सकता है। लगभग 98 प्रतिशत लाइकेन कवक एस्कोमाइसिटीज़ के होते हैं, अन्य बेसिडियोमाइसिटीज़ अथवा ड्यूटरोमाइसिटीज़ के हो सकते हैं। ऐसा माना जाता है कि लाइकेन की संरचना कवकीय भागीदार के द्वारा निर्धारित होती है। इसी के अनुसार लाइकेन को एस्कोलाइकेन (ascolichens), बेसिडियोलाइकेन (basidiolichens) तथा ड्यूटरोलाइकेन (deuterolichens) कहा जाता है।

शैवालांश प्रकाशसंश्लेषणी भागीदार है जोकि या तो नील-हरित शैवाल अथवा हरित शैवाल होता है। लाइकेन में लगभग 37 शैवालीय वंश पाये जाते हैं, दो सर्वाधिक रूप से पाये जाने वाले

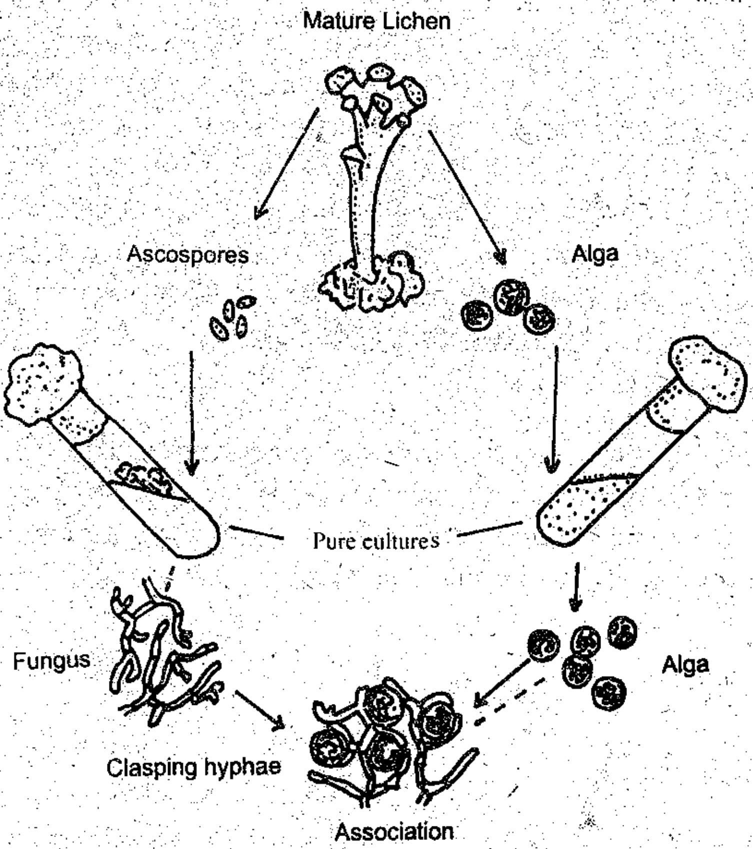

चित्र 12.1 : लाइकेन घटकों के अलग-अलग होने तथा संवर्द्धन को तथा फिर उनके लाइकेन के पुनर्निर्मित होने को दिखाता हुआ आरेखीय प्रदर्शन।

हरित शैवाल *ट्रैबोक्सिया* (*Trebouxia*) जो क्लोराकोकेल्स (Chlorococcales) समूह का है तथा *ट्रेन्टीफोलिया* (*Trentepohlia*) जो (कीटोफोरेल्स) (Chaetophorales) समूह का है तथा नील-हरित शैवाल *नॉस्टॉक* (*Nostoc*) है। कभी-कभी एक ही लाइकेन में दो या अधिक यानि तीन शैवाल भी पाये जा सकते हैं। प्रकाशसंश्लेषणी होने की वजह से लाइकेन कार्बन-डाइऑक्साइड का यौगिकीकरण (CO_2 fixation) करते हैं तथा नील-हरित शैवाल की उपस्थिति के कारण नाइट्रोजन यौगिकीकरण (nitrogen fixation) भी करते हैं जिसपर परपोषित कवकांश अपने पोषण के लिये निर्भर रहता है। शैवालीय घटक, संवर्द्धन (cultures) से कवक के बिना उगाये जाते हैं। इस प्रकार शैवाल भागीदार सिर्फ कायकीय संरक्षण के अतिरिक्त अन्य किसी बात के लिये कवकीय भागीदार पर निर्भर नहीं दिखाई पड़ता है। शैवालीय तथा कवकीय घटकों को अलग किया जा सकता है तथा परखनलियों में संवर्द्धित किया जा सकता है। आरंभ में उन्हें पुनः जोड़ने के सभी प्रयास असफल रहे थे, हालांकि अब लाइकेन की लगभग 30 जातियों को सफलतापूर्वक प्रयोगशाला में पुनर्निर्मित करना संभव हो गया है (चित्र 12.1)।

12.2.2 लाइकेन की संरचना तथा शरीर

संरचना

लाइकेन में जीव काया थैलस होती है जिसमें तना, जड़ों अथवा पत्तियों का विभेदन नहीं होता है। थैलस आमतौर पर रूपरेखा में गोल तथा 1 से.मी. 30 से.मी. व्यास के होते हैं। वे या तो बिखरे हुए होते हैं अथवा गुच्छ रूप में साथ-साथ रहते हैं तथा अवस्तर (substrate) का बड़ा हिस्सा घेरे रहते हैं। लाइकेन के प्रकार को विभिन्न वृद्धि के तरीकों तथा रंगों द्वारा पहचाना जा सकता है। लाइकेन के तीन प्रकार के प्रमुख संरचनात्मक रूप पाये जाते हैं :

(a) **पर्पटीमय प्रकारें** (Crustose forms) — जैसे *ग्राफी* (*Graphi*), *लेसिडी* (*Lecidea*) तथा *हीमेटोमा* (*Haematomma*)। थैलस पर्पटी-जैसा (चित्र 12.2 a) रंगीन चकता (patch) होता है जो नंगे पत्थरों तथा पेड़ों के तनों पर उगता है।

(b) **पर्णिल प्रकारें** (Foliose forms) — जैसे *पारमीलिया* (*Parmelia*), *पेल्टीगेरा* (*Peltigera*), *कोलीमा* (*Collema*), *पारमोट्रीमा* (*Parmotrema*) तथा *गाइरोफोरा* (*Gyrophora*)। थैलस चपटा, पृष्ठाधर (dorsi-ventral), पालियुक्त (lobed) अथवा अनियमित किनारों वाला (irregular margins) होता है (चित्र 12.2 b)। वह अवस्तर से हल्के से जुड़ा रहता है। अनुप्रस्थ काट में वह स्तरों में विभेदित दिखाई देता है।

(c) **क्षुपिल प्रकारें** (Fruitcose Forms) — जैसे *उस्निया* (*Usnea*), *क्लेडोनिया* (*Cladonia*) तथा *रेमेलीन* (*Ramalina*)। थैलस झाड़ी नुमा, क्षुप (shrubby) तथा शाखित (चित्र 12.2 c-i तक) होता है। कभी-कभी कई मीटर तक लंबा पेड़ की शाखाओं से लटका हुआ होता है। यह अन्दर से स्तरों में विभेदित होता है।

अधिकांश लाइकेन पर्पटीमय प्रकार के होते हैं।

विभिन्न प्रकार की संरचनाओं के साथ-साथ, वर्णकों की उपस्थिति के कारण लाइकेन सुस्पष्ट रंग जैसे कि धूसर (grey), पीला, नारंगी, पीताभ अथवा नील-हरित, काला या सफेद भी दर्शाते हैं।

शारीर

थैलस बनाने की क्षमता लाइकेन कवक का विशिष्ट लक्षण है। पर्णिल लाइकेन की ऊर्ध्वाधर काट का जब सूक्ष्मदर्शी द्वारा निरीक्षण किया जाता है तो पास-पास से हुए कवकीय तंतु ऊपरी और

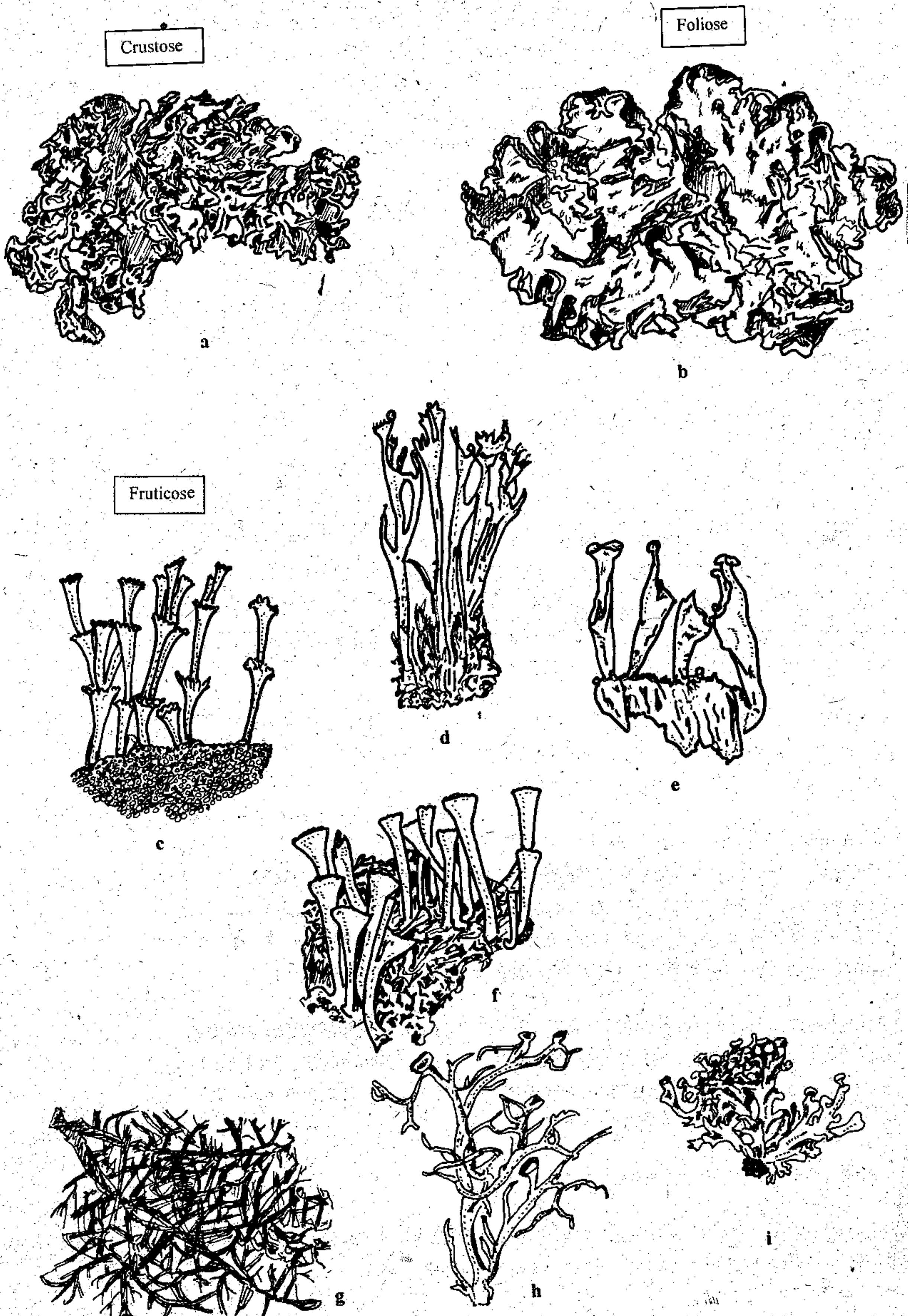

चित्र 12.2 : लाइकेन की विभिन्न संरचनात्मक प्रकारें : a) पर्पटीमय प्रकार – *क्लेडोनिया* स्पी. का प्रारम्भिक थैलस, b) पर्णिल प्रकार – *पेरमट्रीमा,* c से i) क्षुपिल प्रकार – e से f) *क्लेडोनिया* स्पी., g) उस्निया, h और i) *रेमलीन* स्पी.।

निचली वल्कुट (cortex) में तथा बिखरे हुए तंतु केन्द्रीय मज्जा (medulla) में दिखाई देते हैं (चित्र 12.3)। ऊपरी वल्कुट के नीचे शैवालीय कोशिकाएं होती हैं जो कवकीय ऊतक से घिरी होती हैं तथा एक विशिष्ट सतह बनाती हैं। इसी प्रकार की शैवालीय सतह नीचे की ओर निचले वल्कुट के ऊपर भी पाई जा सकती हैं। मूलाभास (rhizoids) निचले वल्कुट से उगते हैं तथा थैलस को मिट्टी, छाल (bark) अथवा पत्थरों से बांधे रखते हैं।

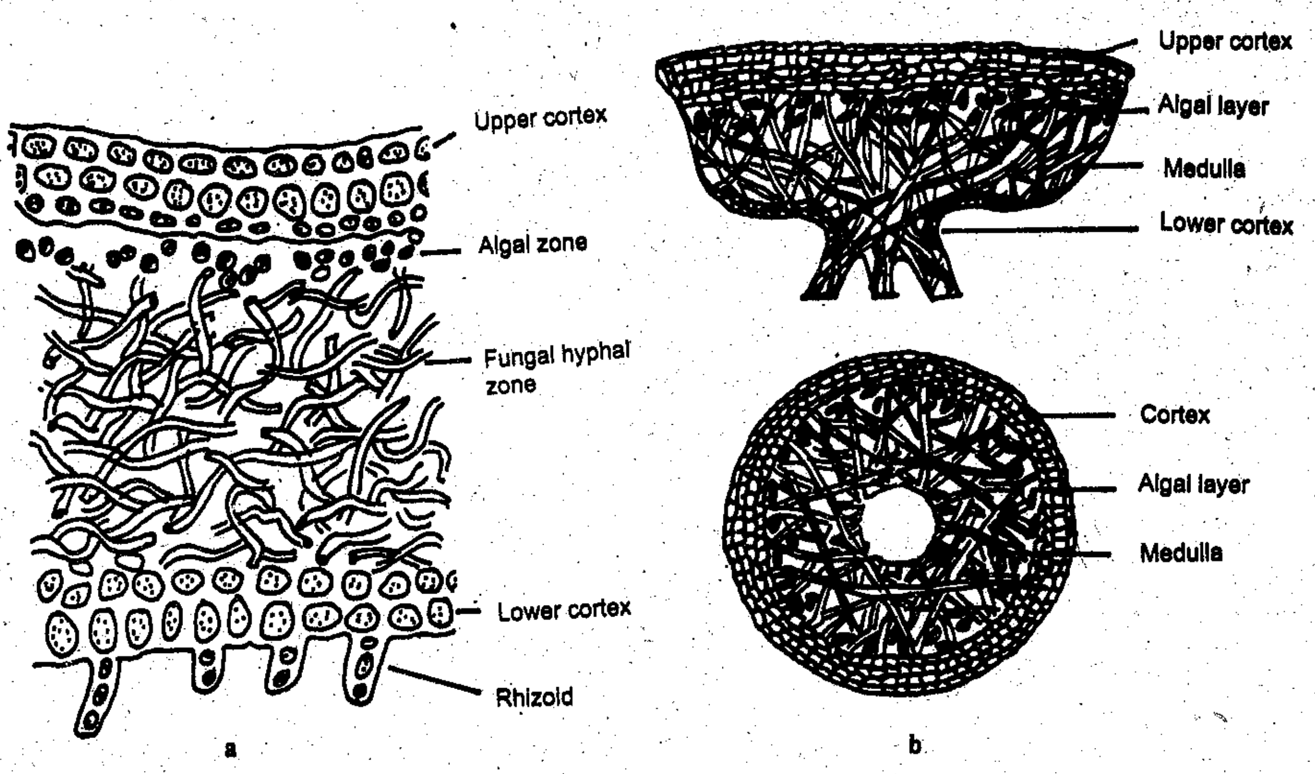

चित्र 12.3 : लाइकेन के थैलस की अनुप्रस्थ काट : a) पर्पटीमय b) क्षुपिल।

बोध प्रश्न 12.1

अ) निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरिये।

i) लाइकेन में कवकीय भागीदार .... तथा शैवालीय भागीदार .... कहलाता है।

ii) 98% लाइकेन में कवकीय भागीदार .... समूह के होते हैं।

iii) लाइकेन का शैवालीय भागीदार .... अथवा .... होता है।

iv) लाइकेन में कवकीय भागीदार के ऊपरी तथा निचले तंतु .... कहलाते हैं तथा केन्द्रीय बिखरे हुए तंतु .... कहलाते हैं।

v) लाइकेन के साथ सहजीवन में सबसे अधिक प्रचलित हरित शैवाल .... तथा .... है।

vi) लाइकेन के साथ सहजीवन में युक्त नील-हरित शैवाल .... है।

ब) निम्नलिखित में कौन से कथन सत्य या असत्य हैं ? सत्य के लिए **स** तथा असत्य के लिए **अ** दिये गये खानों में लिखिए।

i) लाइकेन के कवकीय भागीदार को अलग से उगाया जा सकता है परंतु शैवालीय भागीदार को नहीं उगाया जा सकता। ☐

ii) एक ही लाइकेन में 2 अथवा 3 शैवालीय भागीदार हो सकते हैं। ☐

iii) कवकीय तथा शैवालीय भागीदारों को अलग से प्रयोगशाला में संवर्द्धित किया जा सकता है तथा उन्हें लाइकेन में पुनर्निर्मित किया जा सकता है। ☐

iv) लाइकेन कार्बन-डाइऑक्साइड का यौगिकीकरण करने में सक्षम नहीं होते हैं। ☐

v) लाइकेन जिनमें *नॉस्टॉक* शैवालीय भागीदार के रूप में होता है वे कार्बन डाइआक्साइड के साथ ही साथ नाइट्रोजन का यौगिकीकरण भी कर सकते हैं। ☐

12.3 लाइकेन में प्रजनन

12.3.1 कायिक प्रजनन

कायिक प्रजनन में मुख्य थैलस से टूटे हुए लाइकेन के छोटे टुकड़े नये थैलस के रूप में उग सकते हैं। इसके अलावा विभिन्न प्रकार की कायिक संरचनाएं सोरीडिया (soredia), सेफौलोडिया (cephalodia) तथा आइसीडिया (isidia) उत्पन्न होती हैं जो शैवालांश तथा कवकांश दोनों को लिये रहती हैं।

(a) सोरीडिया (Soredia) : प्रत्येक सोरीडियम शैवालीय कोशिकाओं का बना होता है जो कवकीय तंतुओं से घिरा रहता है। सोरीडियम एक नये थैलस में विकसित हो सकता है (चित्र 12.4 a)।

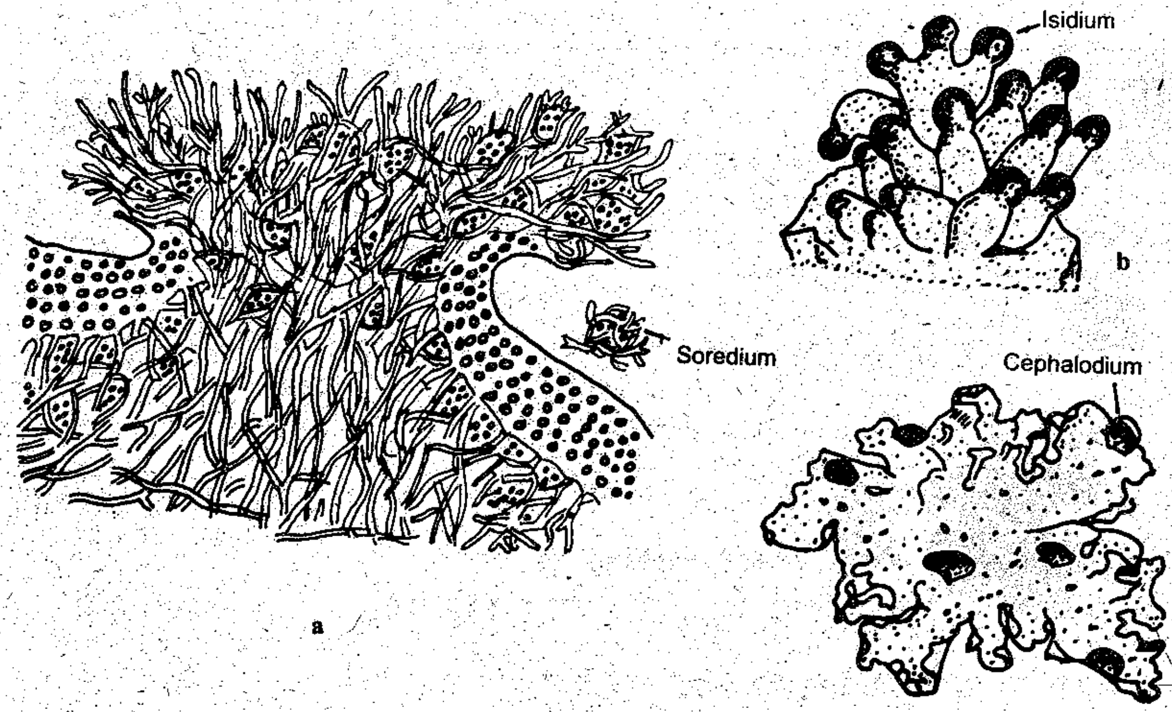

चित्र 12.4 : लाइकेन में तीन प्रकार की प्रजनन संरचनाएं : a) सोरीडिया, b) सेफैलोडिया तथा c) आइसीडिया।

(b) सेफौलोडिया (Cephalodia) : ये थैलस की गहरे रंग की पिटिका (gall) जैसी उद्वधे (outgrowth) होती है (चित्र 12.4 b)।

(c) आइसीडिया (Isidia) : ये थैलस के ऊपर बेलनाकार (cylindrical) उंगलियों जैसे उद्वर्ध होते है (चित्र 12.4 c)।

इन प्रमुख संरचनाओं के अलावा बहुत सारी अन्य विशिष्ट संरचनाएं लाइकेन द्वारा कायिक प्रवर्धन के लिए उत्पन्न होती हैं। ये दिलचस्प बात है कि इस प्रकार की संरचनाएं कवकीय अथवा शैवालीय सहभागी के जीवन चक्र में नहीं पाई जाती हैं जब उन्हें अलग-अलग उगाया जाता है किंतु सिर्फ तभी उत्पन्न होती हैं जब वे एक साथ लाइकेन के रूप में उगते हैं।

12.3.2 अलैंगिक प्रजनन

अलैंगिक प्रजनन के लिए किसी भी अन्य कवक की भाँति विभिन्न प्रकार के बीजाणु जैसे कि ऑइडिया (oidia), पिक्नियम बीजाणु (pycniospores) तथा कोनिडिया (conidia) उत्पन्न होते हैं। यह अलैंगिक प्रजनन का सबसे अधिक प्रचलित तरीका है।

12.3.3 लैंगिक प्रजनन

इस क्षेत्र में जानकारी बहुत ही सीमित है तथा सिर्फ कुछ एस्कोलाइकेन जैसे *कॉलीमा* (*Collema*) में ही ज्ञात है। यह एस्कोमाइसिटीज़ कवक की लैंगिक प्रक्रिया से बहुत अधिक मिलता-जुलता है (आप न्यूरोस्पोरा में लैंगिक प्रजनन को याद करें जो इकाई 9 में इस खण्ड में दिया गया है)।

नर लैंगिक अंग स्पर्मेगोनिया (spermagonia) कहलाते हैं व छोटे अचल नर कोशिकाओं — स्पर्मेशिया (spermatia) को उत्पन्न करते हैं।

लाइकेन की प्रजनन संरचनाओं को चित्र 12.5 में दिखाया गया है। मादा लैंगिक अंग एस्कोगोनिया

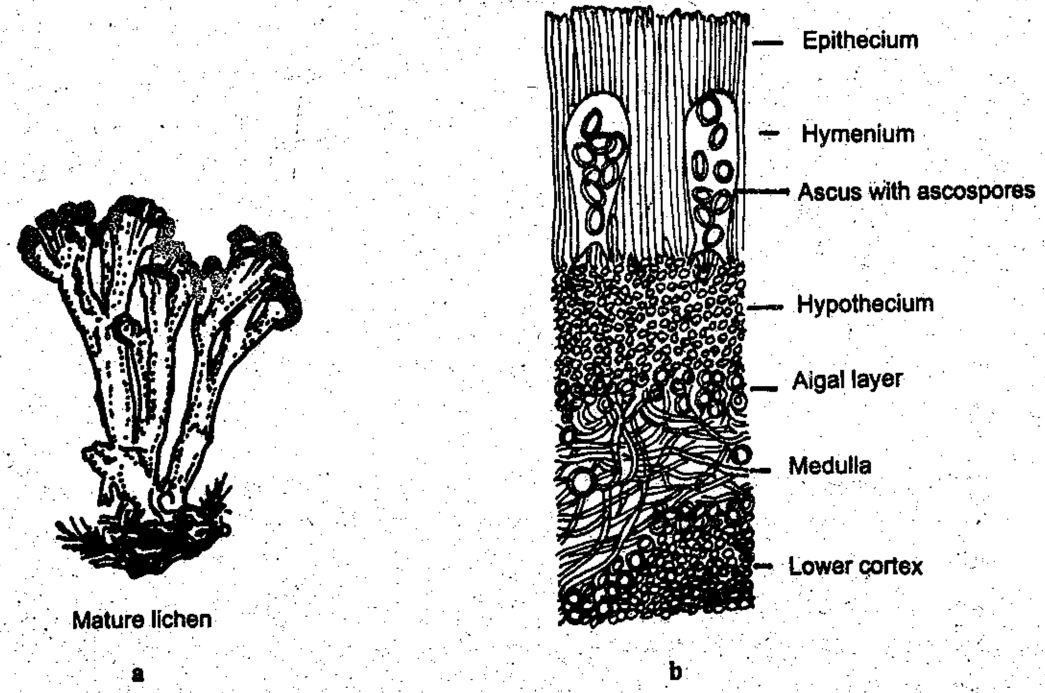

चित्र 12.5 : लाइकेन की जनन संरचनाएं : a) एपोथीसियम, b) प्रारूपिक एपोथीसियम की अनुप्रस्थ काट।

कहलाते हैं जो लाइकेन थैलस की मज्जा से विकसित होते हैं। एस्कोगोनियम में अंतस्थ लंबा बहुकोशिकीय बाल (hair) जैसा प्रक्षेप (projection) होता है जो स्त्रीधानीरोम (trichogyne) कहलाता है तथा आधारीय भाग होता है जो अंड्धानी की भांति कार्य करता है। निषेचन स्पर्मेशियम के स्त्रीधानीरोम की नोक पर स्थानांतरण के द्वारा होता है जो इसके बाद आधारीय भाग में चला जाता है। बहुत से एस्कजनक कवकतंतु एस्क्स (asci) में विकसित हो जाते हैं (चित्र 12.5 b)। एस्कोकार्प तश्तरी की आकृति का एपोथीशियम होता है। प्रत्येक एस्क्स आठ एस्कोस्पोर उत्पन्न करता है। एस्कोस्पोर अंकुरित होते हैं और जब कवकतंतु किसी उपयुक्त शैवालीय कोशिका के संपर्क में आते हैं तो वे नये लाइकेन के थैलस में विकसित हो जाते हैं।

बोध प्रश्न 12.2

निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरिये।

i) लाइकेन की कायिक जनन के लिए विशिष्ट संरचनाएं .... तथा .... होती हैं।

ii) थैलस के गहरे रंग के पिटिका जैसे उद्वर्ध जो कि नये थैलस को जन्म देते हैं .... कहलाते है।

iii) लाइकेन के थैलस पर बेलनाकार उंगलियों जैसे उद्वर्ध जो नये थैलस को जन्म देते हैं .... कहलाते है।

iv) लाइकेन द्वारा उत्पन्न किये जाने वाले अलैंगिक बीजाणु .... तथा .... अथवा .... हो सकते हैं।

v) एस्कोलाइकेन में लैंगिक जनन .... की तरह होता है।

12.4 लाइकेन - सहजीवी तंत्र का एक प्रारूप

लाइकेन में कवकीय और शैवालीय सहवास की प्रकृति सहजीवी मानी जाती है जहां दोनो भागीदार एक दूसरे से समान लाभ उठाते हैं, जो सहोपकारिता (mutualism) भी कहलाता है। कुछ लाइकेन में शैवालीय कोशिकाएं चूषकांग के द्वारा वेधित पाई जाती हैं (जैसी की कवकीय परजीवियों में) लेकिन वह मृत अथवा कमजोर नहीं होती हैं। भागीदारों में आपस के लेन-देन में एक संतुलन दिखाई पड़ता है।

यह परीक्षणों द्वारा देखा गया है कि प्रकाश संश्लेषण के दौरान शैवाल द्वारा संश्लेषित किये गये कुछ कार्बन यौगिकों जैसे कि राइबिटॉल (ribitol), मैनीटॉल (mannitol) तथा अरेबिटॉल (arabitol) का लगभग 70 से 80 प्रतिशत भाग कवक को चला जाता है।

पेल्टीगेरा (*Peltigera*) में जहां शैवालीय भागीदार नील-हरित शैवाल *नॉस्टॉक* है जो नाइट्रोजन का भी यौगिकीकरण करता है उसमें कार्बन यौगिकों के अतिरिक्त नाइट्रोजन यौगिक जैसे अमोनिया भी कवकांश को पहुंचते हुए पाये गये हैं। हालांकि यह कहना मुश्किल है कि बदले में शैवाल को कवक से क्या मिलता है। संभवतः कवक तंतु शैवालीय कोशिकाओं को आवास प्रदान करते हैं तथा उन्हें सूखने से व अत्याधिक प्रकाश से तथा अन्य विपरीत वातावरणीय दशाओं से बचाते हैं। मध्यांश के दूर-दूर बुने हुए कवकतंतु प्रकाश संश्लेषण के लिए गैसों के आदान-प्रदान को सुगम बनाते हैं। हालांकि, इस सहवास की प्रकृति विवादास्पद है। कुछ वैज्ञानिक शैवाल को सहवास में बराबर भागीदार की बजाय पीड़ित (victims) मानते हैं और उनका मानना है कि

शैवाल कवकीय ऊतक द्वारा कैद होता है। वे इस सहवास को नियंत्रित परजीवन (controlled parasitism) मानते हैं। जबकि अन्य इसे शैवालीय कोशिकाओं के स्वस्थ
दिखाई पड़ने तथा लंबी उम्र के कारण सहोपरिकता का अनूठा तथा बेहतरीन उदाहरण मानते हैं।

12.5 लाइकेन के महत्व

12.5.1 लाइकेन की पारिस्थतिकी

लाइकेन ऐसी बहुत सी जगहों पर उगते हुए पाये जाते हैं जहां अन्य जीव शायद ही जीवित रह सकें। वे उष्णकटिबंधीय (tropical), उपोष्ण, शीतोष्ण तथा ठंड से जमा देने वाले ध्रुवीय क्षेत्रों में नग्न पत्थरों पर पाये जाते हैं। कुछ उन पत्थरों पर भी जीवित पाये जाते हैं जिनका तापमान 50°C तक पहुँच सकता है।

अधिकांश लाइकेन धीरे उगने वाले, 1 मि.मि. प्रतिवर्ष, लेकिन लंबे समय तक जीवित रहने वाले होते हैं। उत्तर ध्रुवीय (arctic) क्षेत्रों में 4500 वर्ष पुराने लाइकेन के थैलस पाये जाते हैं। वे हिमालय पर्वत में सबसे ऊँचे पहाड़ों पर भी पाये जाते हैं।

नये उद्भासित पत्थर तथा ज्वालामुखीय क्षेत्र पहले लाइकेन द्वारा आवासित होते हैं जो नवीन वनस्पति का निर्माण करते हैं। उनकी क्रियाविधि के द्वारा पत्थरों का अपक्षय (weathering) होता है जिससे कार्बनिक मलबा (debris) बनता है, जो उच्च पादपों की वृद्धि के लिये स्थान को अनुकूल बनाता है। सायनोबैक्टीरियाई लाइकेन नाइट्रोजन यौगिक भी देते हैं।

लाइकेन सबसे अधिक उष्ण कटिबंधीय वर्षा वनों में पाये जाते हैं। पेड़ के तने, शाखायें, सभी पेड़-पौधों की पत्तियाँ लाइकेन द्वारा घने रूप से अच्छादित रहती हैं।

यह ध्यान देने योग्य है कि परपोषित कवक का प्रकाश संश्लेषणी शैवाल के साथ सहवास, जो अलग-अलग नामों सहोपकारिता अथवा सहजीवन से जाना जाता है वह पारिस्थतिकी की दृष्टि से अत्यंत सफल तथा उत्पादक है, जो कि समस्त पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार के आवासों में लाइकेन के फैलाव से देखा जा सकता है।

12.5.2 भोजन के रूप में लाइकेन

बहुत से अवास्य (inhospitable) क्षेत्रों में जैसे ध्रुवीय क्षेत्र तथा पथरीले रेगिस्तानों में लाइकेन ही जन्तुओं के लिये एकमात्र उपलब्ध वनस्पति होते हैं। *क्लेडोनिया रंगीफेरा* (*Cladonia rangifera*) जो रेनडियर मॉस (reindeer moss) कहलाता है, उत्तर ध्रुवीय जंतुओं जैसे रेनडियर तथा कैरीबू (caribou) द्वारा बहुतायत में खाया जाता है। भेड़ व थलीय घोंघा मृदा पर उगने वाले बहुत से क्षुपिल लाइकेन पर पल्लवचारण (browse) करते हैं।

कुछ देशों जैसे लीबिया के रेगिस्तान में *लेकैनौरा* (*Lecanora*) लाइकेन मनुष्यों द्वारा संग्रहित किया तथा खाया जाता है। जापान में पर्णिल पत्थरी लाइकेन *अम्बाइलीकेरिया* (*Umbilcaria*) सलाद में खाया जाता है। आइलैण्ड तथा लैपलैण्ड में बहुत से स्थानीय लाइकेन खाने के रूप में उपयोग किये जाते हैं।

12.5.3 प्रदूषण के सूचक के रूप में लाइकेन

लाइकेन वातावरण से सिर्फ जलवाष्प ही नहीं बल्कि विभिन्न प्रदूषकों को भी अवशोषित करते हैं जिसमें फ्लुओराइड, ओज़ोन, NO_2 (नाइट्रोजन-डाइ-ऑक्साइड), PAN तथा शाकनाशी (herbicides) सम्मिलित हैं। वे खासतौर से सल्फर-डाइ-ऑक्साइड तथा रेडियोएक्टिव रासायनों जैसे कि स्ट्रोन्शियम, सीजियम (caesium) के लिए संवेदनशील होते हैं। नाइट्रोजन यौगिकीकरण

सल्फर-डाइ-ऑक्साइड की उपस्थित से सर्वाधिक संवदेनशील होता है व उसके बाद प्रकाशसंश्लेषण तथा श्वसन होता है। जिसके फलस्वरूप थैलस का आकार घट जाता है, फलन दब जाता है तथा रंग भी प्रभावित होता है। इस संवेदनशीलता के कारण किसी क्षेत्र में लाइकेन के विस्तृत परीक्षण से वातावरणीय प्रदूषण की मात्रा, जिसमें नाभिकीय परीक्षणों के दौरान रेडियोएक्टिव अवपात (fall out) भी सम्मिलित है, को ज्ञात किया जा सकता है।

12.5.4 लाइकेन के अन्य उपयोग

लाइकेन का औषधीय मूल्य लोक औषधियों में बहुत पहले से ही मालूम था तथा ये आज भी विस्तृत रूप से उपयोग की जाती हैं। *लोबेरिया पल्मोनेरिया* (*Lobaria pulmonaria*) फेंफड़ों की बीमारियों में तथा *पेल्टीगेरा कैनिना* (*Peltigera canina*), जलभीति (hydrophobia) में उपयोगी है।

बहुत से लाइकेनों में प्रतिजैविक गुण होते हैं। *उस्निया* से प्राप्त उस्निक अम्ल कवक, जीवाणु तथा मनुष्यों के अन्य रोगाणुओं के खिलाफ प्रभावशाली होता है।

लाइकेन के पदार्थ पादपों की बीमारियो जैसे टमाटर कैंकर (tomato canker) तथा तम्बाकू किर्मीर विषाणु (tobacco mosaic virus) को भी नियंत्रित कर सकते हैं।

कृत्रिम रंजकों के आने से पहले, लाइकेन कपड़ों को रंगने के लिये प्रयोग किये जाने वाले रंगीन पदार्थों के स्रोत थे। *रोसेला* (*Rocella*), *पार्मीलिया* (*Parmelia*), *ओक्रोलेकिया* (*Ochrolechia*), *एवर्निया* (*Evernia*) लाइकेन के कुछ उदाहरण हैं। जो आर्चिल (orchil) जैसे रंजकों के निष्कर्षण के लिए उपयोग किये जाते हैं यह ऊन को लाल, बैंगनी, भूरे रंगों के शेड देते हैं।

लाइकेन से प्राप्त होने वाला ओर्सीन (Orcein), जीवविज्ञान की प्रयोगशालाओं में पादपों तथा जंतु कोशिकाओं में गुणसूत्रों को रंगने में प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार अम्ल-क्षार सूचक लिट्मस लाइकेन *रोसेला* (*Rocella*) से निष्कर्षित किया जाता है।

लाइकेन में विभिन्न प्रकार के वाष्पशील तेल पाये जाते हैं। जो इत्रों के निर्माण में प्रयोग किये जाते हैं।

बोध प्रश्न 12.3

अ) निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों को उपयुक्त शब्दों से भरिये।

i) लाइकेन अधिक से अधिक .... तापमान तक जीवित रह सकते हैं।

ii) लाइकेन धीमी गति से बढ़ते हैं। वे प्रतिवर्ष लगभग .... बढ़ते हैं।

iii) उत्तर ध्रुवीय क्षेत्रों में .... वर्ष पुराने लाइकेन के थैलस पाये गये हैं।

iv) लाइकेन .... और .... प्रदूषकों के प्रति और .... सीजियम के प्रति संवेदनशील होते हैं।

v) लाइकेन जो सामान्य रूप से रेनडियर मॉस कहलाता है व रेनडियर, कैरीबू, तथा भेड़ों द्वारा खाया जाता है उसकी जाति का नाम .... है।

ब) लाइकेन के संदर्भ में निम्नलिखित में से कौन से कथन सत्य हैं ? सत्य के **स** और असत्य के **अ** दियें गये कोष्ठकों में लिखिए।

i) कुछ लाइकेन में जब शैवालीय कोशिकाएँ कवकीय चूषकांग द्वारा वेधित होती हैं तो वे मर जाती हैं। ☐

ii) लाइकेन में शैवालीय भागीदार, कवकीय भागीदार को कार्बन यौगिक देता है। ☐

iii) एस्कोलाइकेन में लैंगिक प्रजनन, एस्कोमाइसिटीज वर्ग के कवकों के समान होता है। ☐

iv) लाइकेन में कवकीय भागीदार, शैवालीय भागीदार को भोजन तथा आवास प्रदान करता है। ☐

v) कुछ लाइकेन में शैवालीय भागीदार *ऐनाबीना* है। ☐

12.6 सारांश

- लाइकेन में परपोषित अ-प्रकाश संश्लेषणी कवक जो अन्यथा मृतपोषित (saprophytes) होता है, हरित शैवाल अथवा नील-हरित शैवाल के साथ सहजीवी सहवास में रहता है। इस प्रकार से बने हुए थैलस की अकेले उगने वाले कवक अथवा शैवाल के साथ कोई समानता नहीं होती है।
- लाइकेन अपने उत्कृष्ट रंगों तथा विशिष्ट वृद्धि के प्रकारों के द्वारा पहचाने जा सकते हैं। थैलस जालिकामय कवक तंतु का बना होता है जो शैवालीय कोशिकाओं को शरण (shelter) प्रदान करता है तथा उनसे पोषण लेता है। नील-हरित शैवाल का सहवास नाइट्रोजन पोषण भी प्रदान करता है।
- लाइकेन विशेष कायिक जनन संरचनाओं — सोरीडिया, आइसीडिया अथवा सेफैलोडिया द्वारा प्रजनन करते हैं। एस्कोलाइकेन में एस्कस के निर्माण द्वारा लैंगिक जनन भी होता है।
- लाइकेन पारिस्थितिकीय रूप से महत्वपूर्ण हैं तथा नवीन वनस्पति हैं। वे कठोर से कठोर आवासों पर भी उग जाते हैं।
- लाइकेन उत्तर ध्रुवीय जंतुओं द्वारा खाये जाते हैं तथा कुछ देशों में वे मनुष्यों के लिये भोजन के रूप में भी उपयोग किये जाते हैं। कृत्रिम रंगों के उत्पाद से पहले रंजक तथा कुछ अन्य रसायन लाइकेन से निष्कर्षित किये जाते थे। ये औषधियों के रूप में भी प्रयोग किये जाते हैं।
- लाइकेन वायु प्रदूषकों के लिये बहुत संवेदनशील होते हैं तथा इसी कारण किसी क्षेत्र में प्रदूषण के सूचक के रूप में भी उपयोग किये जा सकते हैं।

12.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रकारों के लाइकेन के कवकीय भागीदारों के नाम लिखिये।

i) एस्कोलाइकेन

ii) बेसिडियो लाइकेन

iii) ड्यूटेरो लाइकेन

2. निम्नलिखित में लाइकेन की प्रत्येक संरचनात्मक प्रकार के उदाहरण दीजिये।

i) पर्पटीमय (Crustose)

ii) पर्णिल (Foliose)

iii) क्षुपिल (Fruticose)

3. लाइकेन के विभिन्न उपयोगों को सूचीबद्ध कीजिये।

भोजन

....

....

औषधि

....

....

रंजक

....

....

4. नवीन वनस्पति के रूप में लाइकेन की भूमिका को समझाइये।

....

....

....

....

5. एक लाइकेन का नाम बताइये जो मनुष्यों द्वारा खाया जाता है।

....

12.8 उत्तर

बोध प्रश्न

12.1. अ) i) कवकांश, शैवालांश, ii) एस्कोमाइसिटीज, iii) नील-हरित शैवाल, हरित शैवाल, iv) वल्कुट, मज्जा, v) *ट्रिबोक्सिया, ट्रेन्टीफोलिया*, vi) *नॉस्टॉक*

ब) i) अ ii) स iii) स iv) अ v) स

12.2. i) सोरीडिया, आइसीडिया, सेफौलोडिया, ii) सेफौलोडिया, iii) आइसीडिया iv) ऑइडिया, कोनिडिया, पिक्योस्पोर, v) एस्कोमाइसिटीज

12.3. अ) i) 50°C, ii) 1 मि.मि., iii) 4500, iv) SO2, PAN, रेडियोएक्टिव, स्ट्रोन्शियम

v) *क्लैडोनिया रैन्गीफेरा*

ब) i) अ, ii) स, iii) स, iv) अ, v) अ

अन्त में कुछ प्रश्न

1. एस्कोमाइसिटीज

   बेसीडियोमाइसिटीज

   ड्यूटेरोमाइसिटीज

2. खण्ड 12.2.2 देखिये।

3. खण्ड 12.5 देखिये तथा उपयोगों को नीचे सूचीबद्ध कीजिये।

4. लाइकेन नग्न पत्थरों पर भी उगते हैं तथा उनकी क्रिया के द्वारा पत्थरों का अपक्षय होता है। इस प्रकार कालान्तर में वे कार्बनिक मलबे का निर्माण करते हैं जो वनस्पतियों की वृद्धि के लिये आवश्यक है।

5. *अम्बिलीकेरिया*

शब्दावली

बेसिडियम बीजाणु (Basidiospore) : बेसिडियोमाइसीट कवक में बेसिडियम पर बाहर की ओर उत्पन्न होने वाला अगुणित बीजाणु, जो सामान्यतः केन्द्रक संलयन (karyogamy) तथा अर्धसूत्री विभाजन के बाद बनता है।

बेसिडियम (Basidium) : बेसिडियोमाइसीट कवक में एक दीर्घीकृत लैंगिक प्रजननकारी कोशिका, जिसके परिणामस्वरूप बेसिडियम बीजाणु का निर्माण होता है।

क्लैम्प बंधन (Clamp connection) : बेसिडियोमाइसीट कवक में, एक लूप–जैसी संरचना जो निकटवर्ती कवकतंतु कोशिकाओं को जोड़ती है और नई कोशिकाओं के निर्माण के दौरान द्विकेन्द्रकी कवकतंतु द्वारा निर्मित होती है।

क्लाइस्टोथीसियम (Cleistothecium) : बिना द्वार (opening) की एक गोलाकार ऐस्कोकार्प (ascocarp) प्रकार की फलन काया (fruiting body) जिसमें ऐस्कस निर्मित होते हैं जो कुछ ऐस्कोमाइसीट कवकों में पाई जाती है।

द्विकेन्द्रकी कवकतंतु (Dikaryotic hypha) : कवक कोशिकाओं का द्विकेन्द्रकी कवकतंतु जो केन्द्रकीय संलयन के बिना ही धन (+) या ऋण (–) कवकतंतुओं के संलयन से उत्पन्न होते हैं।

चूषकांग (Haustorium) : कवकतंतु द्वारा निर्मित होने वाली एक संरचना जो परपोषी की कोशिकाओं को वेध देती है और परपोषी कोशिका से जल, पोषक तत्वों तथा उपापचयजों के अवशोषण के लिए अनुकूलित होती है।

केन्द्रक संलयन (Karyogamy) : दो लैंगिक केन्द्रकों का संलयन जिसके पश्चात् उनके जीवद्रव्यकों (protoplasts) का संलयन हो जाता है (**कोशिकाद्रव्यलयन**)।

सूत्रीविभाजन (Karyokinesis) : समसूत्री विभाजन के दौरान होने वाले केन्द्रक विभाजनों की प्रक्रिया।

पेरीथीसियम (Perithecium) : एक फ्लास्क-नुमा फलन काया जिसमें ऐस्कोमाइसीट कवकों में ऐस्कस का निर्माण होता है।

पिक्निडियम (Pycnidium) : एक फ्लास्क-नुमा संरचना जिसमें ऐस्कोमाइसिटीज़ तथा अपूर्ण कवकों में अलैंगिक बीजाणु जो कि कोनिडिया कहलाते हैं, निर्मित होते हैं।

स्कुटेलम (Scutellum) : घास के भ्रूण का एक उपांग (appendage), जो बीज में भ्रूणपोष (endosperm) के निकट स्थित होता है।

पुमणुधानी (Spermogonium) : एक फ्लास्क-जैसी संरचना जो कुछ ऐस्कोमाइसिटीज़ तथा किट्ट (rust) और कंड (smut) कवकों में छोटे, बीजाणु–जैसे अचल पुमणु यानि कि स्पर्मेशिया (नर युग्मकें) धारण किए रहते हैं।

प्रांगुल (Sterigma) : बेसिडियम की बाहरी सतह पर एक वृंत (stalk) जो बेसिडियोमाइसीट कवकों में बेसिडियम बीजाणु धारण किए रहते हैं।

यूरोडीबीजाणु (Uredospore) : उन बेसिडियोमाइसिटीज़ में जो किट्ट के रूप में जानी जाती हैं, में यूरीडोसोरस-प्रकार की फलन काया में उत्पन्न होने वाले अनेकों द्विकेन्द्रकी बीजाणुओं में से एक।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGBY -01
पादप विविधता-1

खंड
3
ब्रायोफ़ाइट्रस

इकाई 13

ब्रायोफ़ाइट्रस की आकारिकी तथा शारीर 5

इकाई 14

ब्रायोफ़ाइट्रस में प्रजनन तथा विकासात्मक प्रवृत्ति 33

इकाई 15

ब्रायोफ़ाइट्रस के महत्व एवं उपयोग 75

मुख्यपृष्ठ : बाएं से दाएं, ऊपर-*क्लैमाइडोमोनस रीनहार्डी* का क्रमवीक्षण सूक्ष्मदर्शी से फोटोग्राफ व मॉस का कैप्सूल, नीचे-पेनिसिलियम और फर्न प्रोथैलस (प्रो. दयानन्दन के सौजन्य से)।

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

प्रो. आर. एन. चोपड़ा
प्रोफेसर (सेवा निवृत्त)
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. आलोक मोइत्रा
भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी
दिल्ली

डा. (कु.) सरला
देशबन्धु कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. सुश्री गुणवन्त सोखी
दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रो. एच. एन. वर्मा
लखनऊ विश्वविद्यालय

डा. बी. डी. वशिष्ठ
कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय

स्व. डा. सुश्री तोशा भान
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

स्व. डा. कैलाश मंधान
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री अमृता निगम
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री शेहला रजा (सेवा निवृत्त)
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री जसवन्त सोखी
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

खंड निर्माण समिति

प्रो. आर. एन. चोपड़ा (विषय संपादक)
प्रोफेसर (सेवा निवृत्त)
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. सुश्री सरला (इकाई 13 और 15)
देशबन्धु कालेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. बी. डी. वशिष्ठ (इकाई 14)
कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा (इकाई 13, 14 और 15)
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

अनुवाद

डा. कुमकुम चतुर्वेदी

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
इं.गां.रा.मु.वि.

पाठ्यक्रम संयोजक : डा. (सुश्री) स्वदेश तनेजा

जुलाई, 2002 (पुर्नमुद्रित)

© इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2001

ISBN-81-266-0108-6

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली-68 से प्राप्त की जा सकती है।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के अनुमति से पुनः मुद्रित। उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से डॉ० ए० के० सिंह, कुलसचिव द्वारा पुनः मुद्रित एवं प्रकाशित, दिसम्बर 2011
मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

खंड 3 ब्रायोफ़ाइट्स

इस पाठ्यक्रम के पिछले खंड शैवाल में आपने पढ़ा था कि पादप जीवन की उत्पत्ति जल में हुई थी। शैवाल मुख्यत: जल में उगते हैं। विकास के क्रम में जलीय आवास से स्थलीय आवास का बदलाव आया और आरंभिक आदि थल पादप (primitive land plants) विकसित हुए। ये ब्रायोफ़ाइट्स कहलाते हैं। हालांकि ब्रायोफ़ाइट्स स्थलीय आवासों में उपनिवेशित हुए परंतु फिर भी वे अपने जीवन चक्र को पूर्ण करने के लिए जल पर आश्रित हैं। वे चल नर युग्मक उत्पन्न करते हैं जिन्हें अपनी गतिशीलता (motility) के लिए जल की पतली परत की आवश्यकता होती है। जल की इस पतली परत की उपस्थिति में ही नर युग्मक निषेचन करने के लिए अचल मादा युग्मक तक पहुंच सकते हैं। इसी वजह से ब्रायोफ़ाइट्स पादप जगत् के उभयचर (amphibians) कहलाते हैं।

आपने पत्थरों पर, पेड़ों के तनों पर तथा पहाड़ी क्षेत्रों में वनस्थलों पर अवश्य ही छोटे-छोटे पादपों को उगते देखा होगा जहाँ ये बहुतायत में पाए जाते हैं। अपने क्षेत्र में भी आप इन पादपों को नम तथा छायादार स्थितियों में ख़ासतौर पर बरसात के मौसम में पुराने घरों की दीवारों पर हरे धब्बों के रूप में देख सकते हैं।

इस खंड में आप ब्रायोफ़ाइट्स के बारे में विस्तार से अध्ययन करेंगे। आप उन बदलावों का अध्ययन करेंगे जो आकारिकीय तथा प्रजनन संरचनाओं में तथा साथ ही जीवन चक्र में आवास के इस स्थानान्तरण के दौरान आए हैं। इन पादपों ने नए यानि कि स्थलीय वातावरण के कारण उत्पन्न होने वाली विभिन्न चुनौतियों का सामना करने के लिए विभिन्न अनुकूलनों को अर्जित किया। जीवन चक्र की युग्मकोद्भिद् प्रावस्था में बदलावों के अतिरिक्त, बीजाणु-उद्भिद् की संरचना एवं विकास में भी बदलाव हुए हैं। बीजाणु-उद्भिद् के विकास में संभाव्य बीजाणुजन ऊतक (potentially sporogenous tissue) कायिक कार्य करने की ओर उन्मुख हो गया। विकासात्मक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण होने के अलावा ब्रायोफ़ाइट्स वनस्पति के अग्रणी (pioneers of vegetation) की महत्वपूर्ण पर्यावरणीय भूमिका भी निभाते हैं। हाल ही में प्रदूषण, खनिज निक्षेप तथा भारी तत्वों के संग्रहण के सूचक के रूप में इनके महत्व को पहचाना गया है। इसके अतिरिक्त ये औषधियों तथा बागवानी में भी उपयोग किए जाते हैं।

इस खंड में तीन इकाइयां हैं।

इकाई 13 में आप ब्रायोफ़ाइट्स के सामान्य गुणों तथा उनके सामान्य प्रकारों के जीवन चक्र के बारे में पढ़ेंगे। हमने इसके तीन वर्गों की कुछ चुनी हुई जातियों की तुलनात्मक आकारिकी का भी वर्णन किया है। आप स्थलीय पर्यावरण के लिए इन पादपों में अनुकूलनों के बारे में भी पढ़ेंगे।

इकाई 14 में हम कुछ चुने हुए ब्रायोफ़िटिक वंशों में प्रजनन की प्रक्रिया तथा युग्मकधानियों तथा युग्मकों की संरचना एवं विकास की चर्चा करेंगे। आप इन प्रकारों में अलैंगिक तथा कायिक प्रजनन की प्रक्रिया के बारे में भी पढ़ेंगे साथ ही आप ब्रायोफ़ाइट्स के बीजाणु-उद्भिद् के विकास की सामान्य प्रवृत्तियों के बारे में भी पढ़ेंगे।

इकाई 15 में ब्रायोफ़ाइट्स के आर्थिक महत्व की जानकारी दी गई है। इसमें औषधीय-पादपों के रूप में, निर्माण सामग्री के रूप में उनके उपयोग तथा प्रदूषण सूचक तथा खनिज पूर्वेक्षण के रूप में उनकी भूमिका की भी चर्चा की गई है।

उद्देश्य

इस खंड का अध्ययन करके आप :

- ब्रायोफ़ाइट्स को पादपों के अन्य समूहों से विभेदित कर सकेंगे,
- ब्रायोफ़ाइट्स के विभिन्न वर्गों की विशेषताओं को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- ब्रायोफ़ाइट्स में जीवन चक्रों के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे,
- ब्रायोफ़ाइट्स के विभिन्न समूहों में विकास तथा प्रजनन संरचनाओं की तुलना कर सकेंगे,
- ब्रायोफ़ाइट्स में बीजाणु-उद्भिद् के विकास का वर्णन कर सकेंगे और
- ब्रायोफ़ाइट्स के विभिन्न उपयोगों का उल्लेख कर सकेंगे।

इकाई 13 ब्रायोफ़ाइट्स की आकारिकी तथा शारीर

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
अध्ययन निर्देश
13.2 सामान्य विशेषताएं तथा जीवन चक्र
13.3 थल प्रकृति के लिए अनुकूलन
13.4 ब्रायोफ़ाइट्स की आकारिकी तथा शारीर
हिपेटिकोप्सिडा (Hepaticopsida)
रिक्सिया (Riccia)
मार्केन्शिया (Marchantia)
पेलिया (Pellia)
एन्थोसिरोटोप्सिडा (Anthocerotopsida)
एन्थोसिरोस (Anthoceros)
ब्रायोप्सिडा (Bryopsida)
स्फैग्नम (Sphagnum)
फ्यूनेरिया (Funaria)
13.5 सारांश
13.6 अंत में कुछ प्रश्न
13.7 उत्तर

13.1 प्रस्तावना

खंड 1 ब में आपने शैवालीय आवासों तथा आकारिकी के बारे में पढ़ा। आपने पढ़ा था कि शैवाल का आवास जलीय होता है। विकास के क्रम में प्रथम थल पादप लगभग 40 करोड़ वर्ष पूर्व प्रकट हुए थे। ऐसा माना जाता है कि थल पादप हरे शैवालों से विकसित हुए थे। शैवाल किसलिए थलीय पादपों के पूर्वज माने जाते हैं, इस बात की चर्चा हम इस इकाई में करेंगे।

ब्रायोफ़ाइट्स भ्रूणीपादपों (embryophytes) में प्रथम थल पादप माने जाते हैं। यह किस प्रकार से हुआ ये स्पष्ट रूप से ज्ञात नहीं है क्योंकि जीवाश्म रिकॉर्ड पूर्ण नहीं हैं। जब जलीय प्रकार के जीवन का स्थलीय आवास में स्थानांतर हुआ तो जातियों को बहुत सी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। किस प्रकार से जल तथा खनिजों को मृदा से अवशोषित किया जाय तथा उन भागों में कैसे पहुंचाया जाए जो मृदा के संपर्क में नहीं थे? किस प्रकार से मृदु कायाओं (soft bodies) व अंगों को सूखने से बचाया जाय? इन चुनौतियों को पूरा करने के लिए कुछ संरचनात्मक रूपांतरों को विकसित करने की आवश्यकता थी। विभिन्न समूहों के थल पादप/लगभग ड़िवोनी कल्प (Devonian period) से अस्तित्व में हैं। यह इस बात को दर्शाता है कि वे पादप थल पर अपने विशिष्ट निकेत (niche) के लिए भली प्रकार अनुकूलित हैं। इस इकाई में इन अनुकूलनों की प्रकृति ही हमारी रुचि का कारण है।

खंड 1अ में आपने पढ़ा कि ब्रायोफ़ाइट्स को लिवरवर्ट्स (liverworts) (हिपेटिकोप्सिडा) हॉर्नवर्ट्स (hornworts) (एन्थोसिरोटोप्सिडा) तथा मॉसेस (mosses) (ब्रायोप्सिडा) में विभाजित किया जाता है। इस इकाई में हम प्रत्येक समूह के विशिष्ट गुणों के बारे में जानेंगे तथा इन समूहों के कुछ वंशों का वर्णन करेंगे। आप पढ़ेंगे कि किस प्रकार ये वंश एक दूसरे से तथा अधिकांश उन पुष्पीय पादपों से भी भिन्न होते हैं जो आपके आसपास उगते हैं।

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- ब्रायोफ़ाइट्स के सामान्य गुणों का वर्णन कर सकेंगे,
- यह तर्क दे सकेंगे कि क्यों शैवाल प्रथम थल पादपों के पूर्वज माने जाते हैं,
- पादपों के लिए थलीय पर्यावरण के स्पर्धी लाभों तथा चुनौतियों को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- जल से थल पर जाने के दौरान अर्जित किए गए अनुकूलनों का वर्णन सकेंगे, तथा
- विभिन्न वर्गों के निम्नलिखित प्रतिनिधि वंशों - *रिक्सिया, मार्केन्शिया* तथा *पेलिया* (हिपेटिकोप्सिडा), *एन्थोसिरोस* (एन्थोसिरोटोप्सिडा), *स्फैग्नम* तथा *फ्यूनेरिया* (ब्रायोप्सिडा) की आकारिकी तथा शारीर की तुलना तथा वर्णन कर सकेंगे।

अध्ययन निर्देश

इस इकाई को पढ़ने से पहले, पादप जगत अध्याय 17 (जीवविज्ञान, कक्षा XI, भाग II, 1990 एन सी ई आर टी) को दोहराना चाहिए।

13.2 सामान्य विशेषताएं तथा जीवन चक्र

प्रभाग ब्रायोफ़ाइटा में थल पादपों के सबसे सरल तथा सबसे प्राचीन सदस्य सम्मिलित हैं जिनमें जड़ें नहीं पाई जातीं तथा संवहन तंत्र नहीं होता है। कुछ मॉसेस हैं जिनमें नलिकाओं (tubes) का आदि तंत्र होता है जो जल तथा खाद्य पदार्थों का संवहन करता है। जल संवहनी नलिकाएं जलवाह कोशिकाएं यानि हाइड्रोइड्स् (hydroids) कहलाती हैं। इनमें दीर्घीकृत, मोटी, मृत कोशिकाएं होती हैं तथा पॉलिफीनॉलिक (polyphenolic) यौगिक होते हैं। परंतु ये वाहिकाओं तथा वाहिनिकाओं की तरह लिग्निनयुक्त नहीं होती हैं। (बॉक्स आइटम 2, खंड 4, इकाई 16, पृष्ठ 20 देखिए)। भोजन संवहनी नलिकाएं पोषवाह कोशिकाएं या लेपटोइड्स (leptoids) कहलाती हैं तथा ये जीवद्रव्य तंतुओं (plasmodesmata) के द्वारा जुड़ी रहती हैं।

ब्रायोफ़ाइट्स का एक अकेला पादप देखा जाय तो वह बहुत ही छोटा, मुश्किल से कुछ से.मी. का होता है। ये बड़ा कम ही होता है क्योंकि इसमें सहारा देने वाले ऊतक नहीं होते हैं। हजारों छोटे मॉस पादप अक्सर जब एक साथ उगते हैं तब मोटे हरे कालीन जैसे दिखाई पड़ते हैं। कुछ आम ब्रायोफ़ाइट्स की आकारिकी चित्र 13.1 में दी गई है। उन्हें ध्यान से देखिए। क्या आपको याद पड़ता है कि उनमें से किसी को भी आपने उसके प्राकृतिक आवास में देखा है?

....

ब्रायोफ़ाइट्स में जीवनचक्र की दो स्पष्ट तथा सुपरिभाषित प्रावस्थाएं - लैंगिक तथा अलैंगिक पाई जाती हैं जो एक दूसरे के बाद आती हैं। युग्मकोद्भिद् अगुणित होता है तथा युग्मक उत्पन्न करता है। बीजाणु-उद्भिद् द्विगुणित होता है तथा बीजाणु उत्पन्न करता है। अगुणित पीढ़ी, द्विगुणित पीढ़ी के साथ एकांतरित होती है (चित्र 4.15 तथा बॉक्स आइटम 1, इकाई 4, पृष्ठ 40 देखिए व शैवालों में पीढ़ियों के एकांतरण को याद कीजिए)। युग्मकोद्भिद् तथा बीजाणु-उद्भिद् दोनों ही कुछ सेन्टीमीटर लंबे होते हैं परंतु युग्मकोद्भिद् जीवनचक्र की लंबे समय तक चलने वाली प्रावस्था होती है। आप नोट कर सकते हैं कि अन्य थल पादपों में बीजाणु-उद्भिद् प्रभावी पीढ़ी होती है।

युग्मकोद्भिद् थैलसनुमा हो सकता है (चित्र 13.1 A - C), अथवा उसमें अक्ष हो सकता है जो तने जैसी तथा पत्ती जैसी संरचनाओं में विभेदित हो सकता है (चित्र 13.1 D तथा E) जिनमें दारु यानि जाइलम तथा पोषवाह यानि फ्लोएम का अभाव होता है। आप नोट कर सकते हैं कि ये पत्ती जैसी संरचनाएं युग्मकोद्भिद् का भाग होती हैं, जबकि संवहनी पादपों में पत्तियां सिर्फ बीजाणु-उद्भिद् पर ही उगती हैं। ब्रायोफ़ाइट्स का युग्मकोद्भिद् हरा, प्रकाश संश्लेषी तथा पोषण की दृष्टि से स्वतंत्र होता है तथा मिट्टी

से एक कोशिकीय अथवा बहुकोशिकीय तंतुओं से जुड़ा रहता है जो मूलाभास (rhizoids) कहलाते हैं। मूलाभास जड़ों जैसे दिखाई पड़ते हैं परंतु जड़ों के विपरीत उनमें संवहनी ऊतकों का अभाव होता है तथा उनकी संरचना बहुत सरल होती है।

अब कुछ विशेषताओं की सूची बनाइए जो ब्रायोफ़ाइट्स को शैवालों से अलग करती हैं।

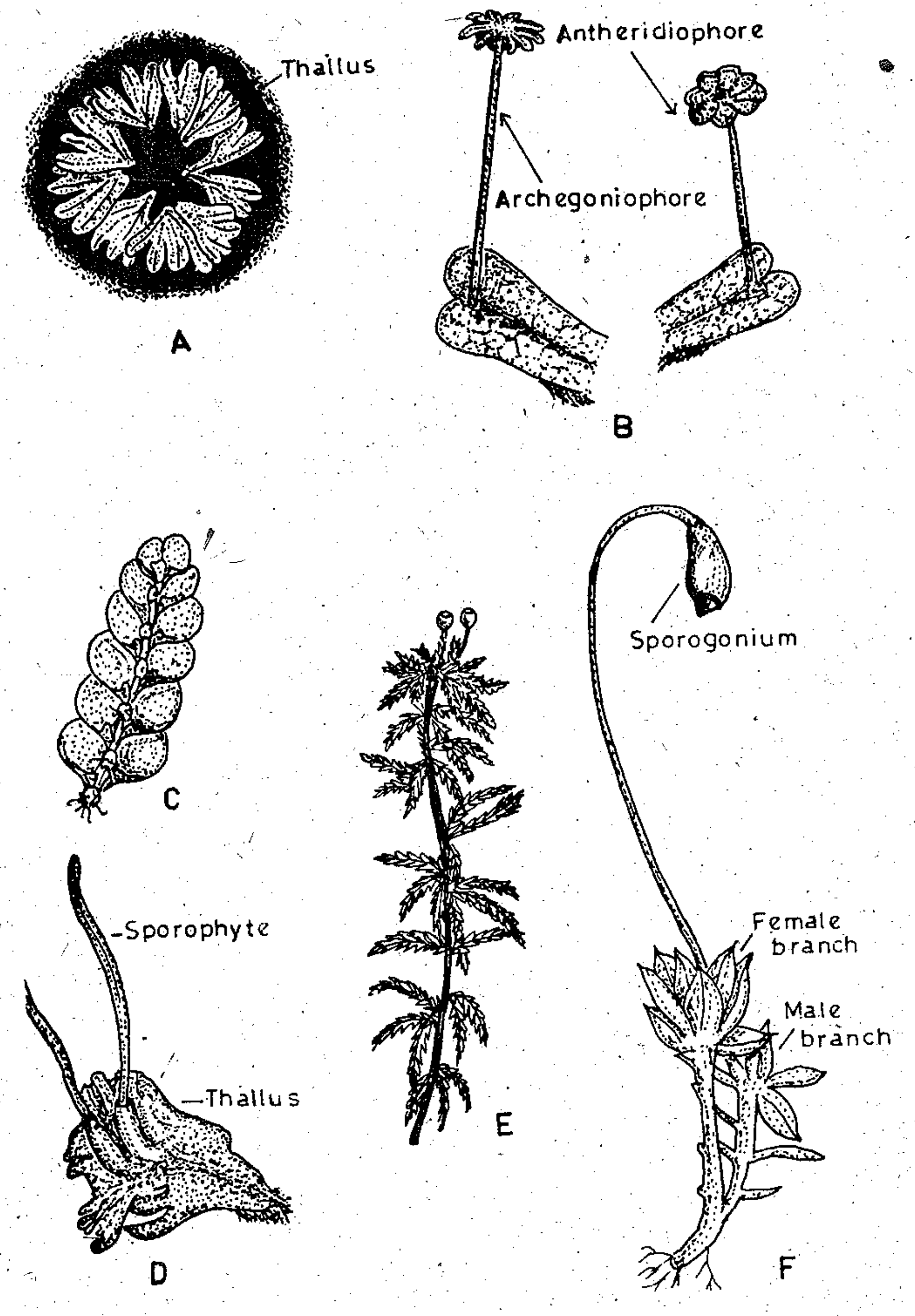

चित्र 13.1 : ब्रायोफ़ाइट्स की आकारिकी : A तथा B) थैलसनुमा लिवरवर्ट्स-*रिक्सिया* एवं *मार्केन्शिया*, C) पत्ती दार लिवरवर्ट- *पोरेला* (*Porella*), D) हार्नवर्ट-*एन्थोसिरोस*, E तथा F) मॉसेस-*स्फैग्नम* तथा *फ्यूनेरिया*।

चलिए आरंभ करते हैं :

1. सभी ब्रायोफ़ाइट्स बहुकोशिकीय पादप होते हैं।
2. ....
3. ....
4. ....
5. ....
6. ....

ब्रायोफ़ाइट्स नम उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में सबसे अधिक पाए जाते हैं। परंतु वे रेगिस्तानों व पहाड़ों पर भी उगते हैं तथा एन्टार्कटिका (Antarctica) के कुछ भागों में भी देखे जा सकते हैं। शुष्क क्षेत्रों में उनकी वृद्धि तथा गतिविधि सिर्फ नम मौसम तक ही सीमित होती है। कुछ मॉसेस ताजे पानी के झरनों में उगते हैं परंतु ये समुद्री वनस्पति में नहीं पाए जाते हैं।

जीवन चक्र

हम यहाँ ब्रायोफ़ाइट्स के जीवनचक्र को *फ़्यूनेरिया* का उदाहरण लेकर समझा रहे हैं। *फ़्यूनेरिया* के युग्मकोद्भिद् (चित्र 13.2 A) में दो प्रकार के विशेषीकृत बहुकोशिकीय प्रजनन अंग होते हैं (चित्र 13.2 B तथा C) जो युग्मकधानियां (युग्मक धारण करने वाली संरचना) कहलाती हैं जो विकास के दौरान अंड (egg) तथा पुमणु (sperm) की सुरक्षा करती हैं।

नर युग्मकधानियां, पुंधानियां (चित्र 13.2 B) कहलाती हैं जो पुमणु उत्पन्न करती हैं। मादा युग्मकधानियां, स्त्रीधानियां (चित्र 13.2 C) कहलाती हैं जो अंडे उत्पन्न करती हैं। युग्मकधानियों में एक बाहरी बंध्य कोशिकाओं की परत होती है जो सुरक्षात्मक कवच बनाती है।

क्या शैवालों में भी युग्मकधानियों में एक बंध्य कोशिकाओं का बाहरी सुरक्षात्मक कवच होता है?

....

ब्रायोफ़ाइट्स विषमयुग्मकी (oogamous) होते हैं यानि कि अंड बड़ा, कशाभविहीन (nonflagellated) तथा अचल होता है तथा पुमणु छोटा तथा गतिशील होता है।

शैवालों में किस प्रकार का लैंगिक प्रजनन पाया जाता है?

....

आपको शायद याद होगा कि विषमयुग्मकता के अतिरिक्त कुछ शैवालों में समयुग्मकता तथा असमयुग्मकता भी पाई जाती है।

निषेचन के पश्चात् (चित्र 13.2 D), बीजाणु-उद्भिद् स्त्रीधानी के भीतर विकसित होना आरंभ कर देता है (चित्र 13.2 E)। ये कुछ सेन्टीमीटर लंबा हो जाता है तथा प्रकाश संश्लेषणी रूप से सक्षम हो जाता है, परंतु ये खनिज तथा जल युग्मकोद्भिद् से ही लेता है (चित्र 13.2 F)। हालांकि, अन्य सभी थल पादपों के बीजाणु-उद्भिद् के विपरित ये कभी भी युग्मकोद्भिद् से स्वतंत्र नहीं हो पाता है। ये वयस्कता तथा जीर्णता (senescene) तक स्थायी रूप से उससे जुड़ा रहता है। ये पूर्णत: या आंशिक रूप से पोषण के लिए उस पर निर्भर रहता है। वयस्क बीजाणु-उद्भिद् चूषकांगी पाद (foot), तने-जैसी स्फोटिका वृंत (seta) तथा अंतस्थ बीजाणु उत्पन्न करने वाले कैप्सूल (capsule) में विभेदित रहता है। *रिक्सिया* में पाद तथा स्फोटिका वृंत अनुपस्थित होते हैं जबकि अन्य में जैसे कि *स्फैग्नम* में स्फोटिका वृंत अनुपस्थित होता है। कैप्सूल के अंदर बीजाणु, बीजाणु मातृ कोशिकाओं के अर्धसूत्री विभाजन के द्वारा उत्पन्न होते हैं।

ब्रायोफ़ाइट्स समबीजाणुक (homosporous) होते हैं यानि कि किसी भी एक जाति के सभी बीजाणु एक प्रकार के होते हैं। हालांकि कुछ टेरिडोफाइट्स विषम बीजाणुक (heterosporous) होतें हैं वे दो प्रकार के बीजाणु बनाते हैं - लघुबीजाणु (microspores) तथा गुरुबीजाणु (megaspores)। टेरिडोफ़ाइट्स पर अगले खंड में, इकाई 18 में, आप विषमबीजाणुकता (heterospory) तथा बीज प्रकृति (seed habit) के विकास के बारे में पढ़ेंगे।

बीजाणु, युग्मकोद्भिद् पीढ़ी की प्रथम अवस्था को प्रदर्शित करता है (चित्र 13.2 H)। ये एककोशिकीय व अगुणित होता है तथा अंकुरित होने (चित्र 13.2 I) पर अल्प जीवी हरे प्रथमतंतु (protonema) उत्पन्न करता है (चित्र 13.2 J)। वयस्क युग्मकधर (gametophore) इस प्रथमतंतु पर विकसित होता है। प्रथमतंतु थैलसनुमा, गोलाकार या तंतुमय हो सकता है। प्रथमतंतु तथा वयस्क युग्मकधर एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न होते हैं।

वयस्क युग्मकधर पर युग्मकधानियां होती हैं जो अगुणित नर तथा मादा युग्मक उत्पन्न करती हैं। युग्मकोद्भिद् पीढ़ी की आखिरी अवस्था प्रदर्शित करते हैं तथा युग्मनज बीजाणु-उद्भिद् पीढ़ी की प्रथम अवस्था को दर्शाते हैं जबकि बीजाणु मातृ कोशिका (द्विगुणित) अंतिम अवस्था प्रदर्शित करती है। बीजाणु मातृ कोशिकाओं में अगुणित बीजाणु बनाने के लिए अर्धसूत्री विभाजन होता है। अत: जीवन चक्र की कोई भी अवस्था जो अगुणित होती है, वह युग्मकोद्भिद् पीढ़ी की होती है।

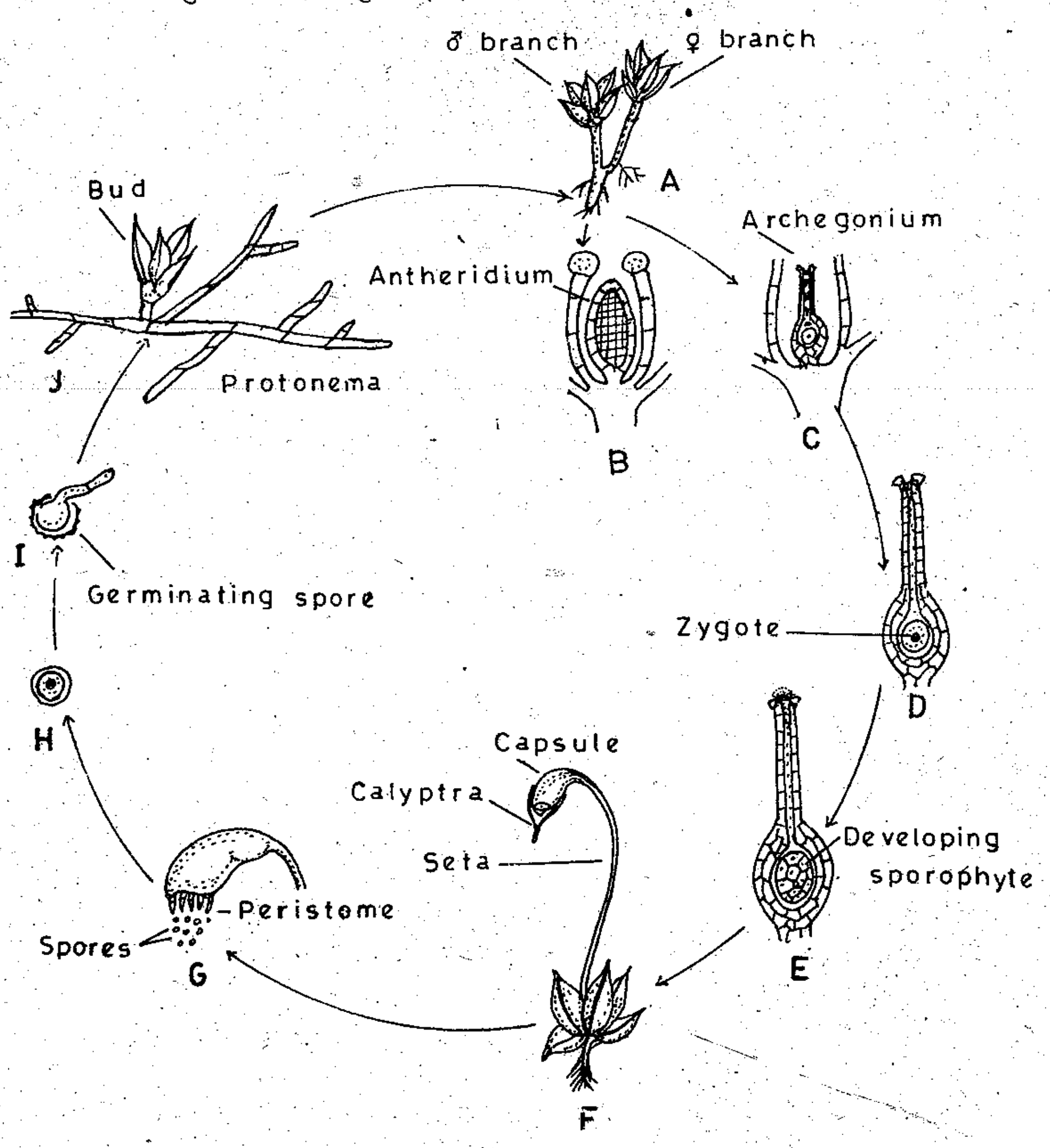

चित्र 13.2 : ब्रायोफ़ाइट्स का जीवन चक्र : (A) मॉस पादप : (B) आवर्धित पुंधानी, (C) आवर्धित स्त्रीधानी, (D) स्त्रीधानी में युग्मनज का निर्माण, (E) परिवर्धनशील बीजाणु-उद्भिद्, (F) युग्मकोद्भिद् पर बढ़ता हुआ बीजाणु-उद्भिद्, (G) कैप्सूल, (H) बीजाणु, (I) अंकुरित होता बीजाणु, (J) उगता हुआ प्रथम तंतु।

चलिए अब हम ब्रायोफाइट्स के विभेदी गुणों को लिखें।

1) इनमें संवहन तंत्र का अभाव होता है। कुछ मॉसेस में आदि संवहनी तंत्र पाया जाता है जो भोजन तथा जल का संवहन करता है।

2) युग्मकोद्भिद् प्रभावी पीढ़ी होती है तथा बीजाणु-उद्भिद् उससे जुड़ा रहता है। अन्य थल पादपों में बीजाणु-उद्भिद् प्रभावी एवं स्वतंत्र होता है।

बोध प्रश्न 13.1

अ) निम्नलिखित वक्तव्यों में कोष्ठको में दिए शब्दों में से उचित विकल्प चुनिए। ब्रायोफाइट्स में

i) जीवन चक्र की प्रभावी अवस्था (युग्मकोद्भिद्/बीजाणु-उद्भिद्) होती है।

ii) (जड़/मूलाभास) पौधे को जमीन से जोड़े रखते हैं।

iii) प्रथम तंतु (अगुणित/द्विगुणित) होता है।

iv) बीजाणु-उद्भिद्, युग्मकोद्भिद् पर (निर्भर/निर्भर नहीं) होता है।

ब) ब्रायोफाइट्स के बारे में निम्नलिखित वक्तव्यों में से कौन से सत्य हैं तथा कौन से असत्य हैं। दिये गए बॉक्स में सत्य के लिए स तथा असत्य के लिए अ लिखिए।

i) कुछ मॉसेस में जल तथा भोजन के संवहन के लिए क्रमशः हाइड्रोइड्स तथा लेपटोइड्स होते हैं। ☐

ii) युग्मकोद्भिद् एक स्वतंत्र पादप है। ☐

iii) ये दो प्रकार के बीजाणु उत्पन्न करते हैं। ☐

iv) प्रथम तंतु बीजाणु तथा वयस्क युग्मकोद्भिद् के बीच की एक संक्रमी (transitional) अवस्था है। ☐

13.3 थल प्रकृति के लिए अनुकूलन

आपने पढ़ा है कि अधिकांश शैवालों का आवास जलीय होता है। कुछ शैवालें थलीय प्रकृति के लिए अनुकूलित है। चलिए अब हम ब्रायोफाइट्स के बारे में पढ़ें जो थलीय पादपों में सबसे प्राचीन हैं। जल से थल में विचरण पूर्ण नहीं है क्योंकि इनके नर युग्मक अब भी सचल हैं और उन्हें अंड का निषेचन करने के लिए पानी की परत पर तैरना पड़ता है। अतः इस लिहाज से ये पादप उभयचरी हैं जैसे कि जंतु जगत् में होते हैं।

इकाई 2 (खंड 1 अ) में आपने पढ़ा कि कुछ वैज्ञानिक मानते हैं कि थलीय पादप शायद ताज़े जल के हरे शैवालीय पूर्वजों के उस समूह से उत्पन्न हुए हैं जो आधुनिक शैवाल जैसे कि स्टोनवर्ट्स (Stoneworts) तथा कोलियोकीटि (Coleochaetes) से संबन्धित हैं। हालांकि जीवाश्म रिकॉर्ड इस मान्यता को बल प्रदान करने के लिए उपलब्ध नहीं हैं, पर ब्रायोफाइट्स और शैवालों के निम्नलिखित संरचनात्मक तथा जैवरासायनिक गुण साझा हैं जो इस मान्यता को बल प्रदान करते हैं।

i) ब्रायोफाइट्स के क्लोरोप्लास्ट में क्लोरोफिल तथा कैरोटिनाइड रंजक (carotenoid pigments) होते हैं जो हरे शैवालों से काफी मिलते जुलते हैं।

ii) दोनों समूहों के संचित खाद्य (food reserves) मुख्य रूप से ऐमिलोस (amylose) तथा ऐमिलोपेक्टिन (amylopectin) लिए होते हैं।

iii) ये कशाभयुक्त सचल पुमणु उत्पन्न करते हैं।

iv) कशाभ प्रतोद प्रकार (whiplash type) के होते हैं। यानि कि ये नग्न संरचनाएं होती हैं, पार्श्व उपांग (lateral appendages) नहीं पाए जाते (इकाई 2, खंड 1 ब, चित्र 2.6 को देखिए) हैं।

v) इनकी कोशिका भित्तियों में पेक्टिन तथा सेलुलोस पाया जाता है।

vi) ग्लाइकोलिटिक (glycolytic) पथ दोनों समूहों में काफी समान होता है।

अतः, ये मानने के ठोस कारण हैं कि हरे शैवाल ब्रायोफाइट्स के पूर्वज रहे हैं।

जल से थल में विचरण ने जीव के लिए कुछ स्पष्ट प्रतियोगी लाभ तथा चुनौतियां प्रस्तुत की हैं। थलीय आवास के जलीय आवास की तुलना में क्या लाभ हो सकते हैं? कुछ लाभ निम्नलिखित हैं:

i) प्रकाश संश्लेषण के लिए सूर्य की रोशनी की अधिक उपलब्धता

ii) कार्बन डाइऑक्साइड का बढ़ा हुआ स्तर, तथा

iii) परिभक्षण की कम संभावना

अगर कुछ अन्य लाभ आपके दिमाग में आ रहे हैं तो आप इस सूची में जोड़ दीजिए।

....

....

क्या अब आप सोच सकते हैं कि थलीय पर्यावरण की क्या चुनौतियां हैं? उन्हें नीचे सूचीबद्ध करने की कोशिश कीजिए।

....

....

....

अपने ब्यौरे की निम्नलिखित से तुलना कीजिए :

1. थल पर पादप सूर्य की रोशनी तथा वायु के सीधे संपर्क में आते हैं। अतः वाष्पन के कारण उनके सूखने या निर्जलीकरण (desiccation) का खतरा रहता है। युग्मक तथा युग्मनज के निर्जलीकरण की भी संभावना रहती हैं।
2. जलीय पादपों को जल के उत्प्लावन (buoyancy) का आधार रहता है, परंतु थल पादपों को भूमि से जुड़ने के लिए किसी आधार की आवश्यकता होती है तथा सीधे खड़े रहने के लिए भी सहारे की आवश्यकता होती है।
3. खनिज तथा जल का अवशोषण तथा उनको उन भागों तक ले जाने के लिए प्रावधान जो मिट्टी के सीधे संपर्क में नहीं होते हैं यानि कि थल पादपों को जल और पोषक पदार्थों के वितरण के लिए आपूर्ति लाइनों की आवश्यकता होती है।

4. संतति की उत्तरजीविता के लिए बीजाणुओं का सही समय पर तथा उचित स्थान पर, आर्द्रताग्राही संरचनाओं (hygroscopic structures) जैसे कि **इलेटर्स** (**elaters**) तथा परिमुख दंत (**peristome teeth**) की सहायता से प्रभावी परिक्षेपण।

आप इकाई 2 का ध्यान कर सकते हैं जहां हमने बताया था कि पादपों ने कुछ अनुकूलन विकसित किए और इन अनुकूलनों ने उन्हें थलीय आवास में जीने में सक्षम बनाया। ये अनुकूलन क्या हैं? उन्हें नीचे लिखिए।

....

....

....

सामान्य तौर पर थल पादपों के अनुकूलन क्यूटिकल युक्त बाह्यत्वचा, रंध्र, संवहन तंत्र, लिग्निनयुक्त स्थूलन जो आधार प्रदान करते हैं, स्पोरोपोलेनिन (sporopollenin), कोशिकाओं की बंध्य परत से सुरक्षित युग्मक तथा भ्रूण का मातृ ऊतकों के द्वारा पोषण हैं।

अब हम इन अनुकूलनों की विस्तार से चर्चा करेंगें। ब्रायोफाइट्स भूमि से धागे जैसी, छोटी संरचनाओं से जुड़े रहते हैं जो मूलाभास (**rhizoids**) कहलाते हैं। ये लिवरवर्ट्स में एककोशिकीय तथा अशाखित होते हैं परंतु मॉसेस में बहुकोशिकीय तथा शाखित होते हैं। ये पादप को भूमि से जोड़े रखते हैं तथा उससे जल और खनिज अवशोषित करते हैं। आपको ध्यान होगा कि जलीय शैवाल पूर्ण रूप से जल में निमग्न रहते हैं तथा इसलिए इस समस्या का सामना नहीं करते हैं। संवहनी तंत्र का विकास थल अनुकूलन का प्रारम्भिक नवीकरण था। परंतु संवहनी तंत्र जो मॉसेस में विकसित हुआ वह बहुत आदि ढंग का था और ये आदि प्रकार का तंत्र सिर्फ कुछ मॉसेस जैसे *पोगोनेटम* (*Pogonatum*) तथा *पोलीट्राइकियम* (*Polytrichum*) में ही उपस्थित होता है। जलवाह कोशिकाएं, जल को मूलाभास से शीर्ष पर पत्तियों तक पहुंचाती हैं तथा, भोजन ले जाने वाली पोषवाह कोशिकाएं सुक्रोज (sucrose) ले जाती हैं। अधिकांश अन्य ब्रायोफाइट्स में बाह्य केशिकीय (capillary) तंत्र पादप काया के सभी भागों में जल के वितरण का ध्यान रखता है।

जैसा कि हम पहले ही बता चुके है, मॉसेस बहुत ही छोटे पादप होते हैं, जो लंबाई में मात्र कुछ से. मी. के होते हैं। क्या आप सोच सकते हैं कि ऐसा क्यों होता है? ऐसा इसलिए है क्योंकि इनमें आदि संवहन तंत्र पाया जाता है जो लंबे पादपों की जरूरतों को पूरा नहीं कर सकता है।

अब, चलिए हम देखते हैं कि निर्जलीकरण और आंतरिक ऊतकों में वायु के आवागमन की समस्या को दूर करने के लिए किस प्रकार के संरचनात्मक रूपांतरण विकसित हुए। सभी थलीय पादपों में बाह्यत्वचा की बाहरी भित्ति जलरोधी मोमयुक्त (waxy) क्यूटिकल से ढकी रहती हैं। यह परत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह नमी युक्त आंतरिक कोशिकाओं को वातावरण के सीधे संपर्क से बचाती है तथा जल के वाष्पन को कम करती हैं। इसके अतिरिक्त, बहुकोशिकीयता का एक लाभ यह भी है कि यह आयतन-और-सतह क्षेत्र के अनुपात को बढ़ाता हैं। इस प्रकार की काया में आंतरिक कोशिकाएं वातावरण के सीधे संपर्क में नहीं रहती हैं, अत: वे निर्जलीकरण से बेहतर ढंग से सुरक्षित रहती हैं।

आंतरिक ऊतकों के वायु आवागमन को सुनिश्चित करने के लिए, रंध्र विकसित हुए जो आंतरिक ऊतकों में वायु अवकाशों तथा बाह्य वातावरण के बीच में सीधा संपर्क बनाते हैं तथा ऊतकों के अंदर और बाहर कार्बन डाइऑक्साइड तथा ऑक्सीजन जैसी गैसों के विसरण के लिए पथ बनाते हैं। रंध्र थल पादपों के सबसे आदि गुणों में से हैं। ये लिवरवर्ट के अतिरिक्त अन्य सभी ब्रायोफाइट्स के बीजाणु-उद्भिद् में उपस्थित रहते हैं।

इस प्रकार बाह्यत्वचा, क्यूटिकल तथा बहुकोशिकीय पादप काया, शरीर की निर्जलीकरण से सुरक्षा के लिए अनुकूलन है। युग्मकों की सुरक्षा के लिए ब्रायोफाइट्स में बहुकोशिकीय लैंगिक अंग - पुंधानियां

तथा स्त्रीधानियां होते हैं तथा प्रत्येक बंध्य कोशिकाओं की एक परत से ढकी रहती है जो युग्मकों के चारों तरफ एक कवच (jacket) बनाती हैं। निषेचन तथा उसके बाद भ्रूण का परिवर्धन यानि भ्रूणोद्भव (embryogenesis) स्त्रीधानी के अंदर ही होता है। युग्मनज का स्त्रीधानी के अंदर ही रहना थलीय स्थितियों में जीवन के लिए अनुकूलन माना जाता है। बहुकोशिकीय मातृ ऊतक जो गोपक (calyptra) कहलाता है वह अंड, युग्मनज तथा भ्रूण को बाहरी वातावरण की प्रतिकूल स्थितियों से, खासतौर पर निर्जलीकरण से बचाता है। इसी प्रकार, पुंधानी की कवच कोशिकाएं पुमणुओं के विकास के लिए अधिक एकरूप वातावरण प्रदान करती हैं तथा उनकी तब तक सुरक्षा करती हैं जब तक कि उनके विसर्जन के लिए स्थितियां अनुकूल नहीं हो जाती हैं।

भ्रूण अंततः बीजाणु-उद्भिद् में विकसित हो जाता है, जिसमें सामान्यतः पाद (foot) स्फोटिका वृंत यानि सीटा (seta) तथा कैप्सूल (बीजाणुधानी) होते हैं। हालांकि, आदि ब्रायोफ़ाइट्स जैसे *रिक्सिया* में बीजाणु-उद्भिद् सिर्फ कैप्सूल से निरूपित होता है। कैप्सूल में द्विगुणित बीजाणु मातृ कोशिकाएं (diploid spore mother cells) होती हैं जो अर्धसूत्री विभाजन करके अगुणित बीजाणु उत्पन्न करती हैं। बीजाणुधानी एक बहुकोशिकीय संरचना है तथा थलीय पादपों का एक मूल अंग मानी जाती है।

बीजाणु कैप्सूल के अंदर सुरक्षित रहें जब तक कि वे विसर्जन के लिए तैयार न हो जायें इसलिए बीजाणुओं के परिक्षेपण के लिए किसी न किसी तरीके को विकसित करने की भी आवश्यकता थी। कोई ऐसी विधि जिसमें सभी बीजाणु एक ही समय पर निर्मुक्त न हों तथा एक ही स्थान पर न गिरें जिससे प्रतिस्पर्धा से बच सकें तथा यह सुनिश्चित हो सके कि उनमें कम से कम कुछ तो पीढ़ी की सततता (continuity) के लिए जीवित रह पायेंगे।

ब्रायोफ़ाइट्स के विभिन्न वंशों में बीजाणुओं के परिक्षेपण के लिए किसी न किसी प्रकार की विशेष विधि पाई जाती है। परंतु कुछ वंश ऐसे हैं, उदाहरण के लिए *रिक्सिया*, जिनमें कोई विशेष विधि नहीं पाई जाती है। चूंकि आगे हम ब्रायोफाइट्स के लगभग सभी वर्गों के प्रतिनिधि वंशों का अध्ययन करेगें तो हम ये भी देखेगें कि इनमें से प्रत्येक वंश में किस प्रकार बीजाणुओं का परिक्षेपण होता है।

बोध प्रश्न 13.2

अ) जलीय से थलीय जीवन प्रकार में रूपांतरण होते वक्त पादपों द्वारा जिन चुनौतियों का सामना किया गया उन्हें सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

....

ब) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) ब्रायोफ़ाइट्स में लैंगिक अंग बहुकोशिकीय होते हैं तथा युग्मक कोशिकाओं की .... से सुरक्षित रहते हैं।

ii) कुछ मॉसेस में पाई जाने वाली जल संवहनी कोशिकाएं ....

कहलाती हैं तथा भोजन ले जाने वाली कोशिकाएं .... कहलाती हैं।

iii) जलवाह कोशिकाएं .... की क्रियात्मक पूरक हैं।
परंतु वे .... होती हैं।

iv) वह पदार्थ जो बीजाणु को प्रतिरोध प्रदान करता है तथा विघटन में विलम्ब करता है। वह .... कहलाता है।

13.4 ब्रायोफ़ाइट्स की आकारिकी तथा शारीर

अभी तक आपने ब्रायोफ़ाइट्स के सामान्य गुणों के बारे में पढ़ा है। आपको इकाई 2, खंड 1 अ से याद होगा कि प्रभाग ब्रायोफ़ाइटा तीन वर्गों में विभाजित किया गया है (अ) हिपेटिकोप्सिडा (लिवरवर्ट्स) (ब) एन्थोसिरोटोप्सिडा (हार्नवर्ट्स) तथा (स) ब्रायोप्सिडा (मॉसेस)। चलिए अब हम प्रत्येक वर्ग के प्रतिनिधि वंशों के बारे में पढ़ें।

13.4.1 हिपेटिकोप्सिडा (Hepaticopsida)

आम तौर पर शब्द मॉस कभी-2 पादपों के अन्य समूहों के लिए भी प्रयोग किया जाता है उदाहरण के लिए रेनडियर मॉस (Reindeer moss) वास्तव में एक लाइकेन (Lichen) है, स्पेनिश मॉस (Spanish moss) एक आवृतबीजी पादप (Angiosperm) है तथा आइरिश मॉस (Irish moss) एक लाल शैवाल है। यह वास्तव में ब्रायोफ़ाइट्स नहीं है।

लिवरवर्ट्स के युग्मकोद्भिद् आमतौर पर भूमि के समीप स्थित रहते हैं। लिवरवर्ट्स दो प्रकार के होते हैं। कुछ में युग्मकोद्भिद् पृष्ठाधर (dorsi-ventral) थैलसाभ तथा स्पष्ट ऊपरी और निचली सतह युक्त होता है। ये थैलसाभ लिवरवर्ट्स होते हैं। जबकि अन्य में ये पत्तीनुमा तथा तने जैसी संरचनाओं में विभेदित रहते हैं जैसे कि मॉसेस में। ये पत्तीनुमा लिवरवर्ट्स कहलाते हैं। पत्तीनुमा लिवरवर्ट्स की पत्तियां मध्यशिरा (midrib) विहीन होती हैं जबकि मॉसेस में मध्यशिरा उपस्थित रहती है। आंतरिक रूप से, लिवरवर्ट्स के युग्मकोद्भिद् समरूपी (homogenous) हो सकते हैं अथवा उनमें विभिन्न प्रकार के ऊतक पाए जा सकते हैं । लिवरवर्ट्स नम भूमि पर अथवा ऐसे पत्थरों पर उगते हैं जो सदैव गीले रहते हैं। वे झरनों के निकट दलदली क्षेत्रों में भी पाए जा सकते हैं। हरितगृहों में आप उन्हें गमलों में उगते हुए देख सकते हैं।

इस पाठ्यक्रम में आप गण (Order) मार्केन्शिएलीज (Marchantiales) के दो प्रतिनिधियों (*रिक्सिया* तथा *मार्केन्शिया*) का तथा गण जंगरमैनिएलीज (Jungermanniales) के एक (*पेलिया*) प्रतिनिधि का अध्ययन करेंगे।

मार्केन्शिएलीज के युग्मकोद्भिद् सिर्फ थैलसाभ होते हैं। गण मार्केन्शिएलीज में लगभग 35 वंश तथा लगभग 420 जातियां है।

हम विस्तार से पहले वंश *रिक्सिया* और उसके बाद *मार्केन्शिया* का अध्ययन करेंगे।

रिक्सिया (*Riccia*)

प्रभाग - ब्रायोफ़ाइटा
वर्ग - हिपेटिकोप्सिडा
गण - मार्केन्शिएलीज
कुल - रिक्सिएसी

रिक्सिया (*Riccia*)

वंश *रिक्सिया,* रिक्सिएसी (Ricciaceae) कुल का सदस्य है जोकि मार्केन्शिएलीज का सबसे आदिम तथा सरलतम कुल है। *रिक्सिया* की 130 से अधिक जातियां है तथा बहुत विस्तृत रूप से वितरित है। अधिकांश जातियां थलीय हैं तथा मुख्य रूप से नम मिट्टी एवं पत्थरों पर उगती हैं।

संरचना में *रिक्सिया* सरलतम ब्रायोफाइट है। इसका युग्मकोद्भिद् छोटा, हरा, गूदेदार व थैलसाभ होता है। यह भूमि पर शयान (prostrate) उगता है तथा द्विशाखी (dichotomy) विभाजन द्वारा मुक्त रूप से शाखन करता है। कुछ *रिक्सिया* के पादप एक साथ उगते हैं तथा गोलाकार आकृति का रूप ले लेते हैं, जो प्रारूपिक रूप से पुष्पाकार (rosette) जैसे लगते हैं (चित्र 13.3 A)। मादा तथा नर लैंगिक अंगों को धारण किए थैलस चित्र 13.3 B तथा C में दिखाए गए हैं। *रिक्सिया फ्लूटैंस* (*Riccia fluitans*) एक जलीय जाति है।

थैलस की शाखाएं थैलस-पालि (lobes) कहलाती हैं। जाति के अनुसार थैलस-पालियां रेखाकार से फानाकार (wedge-shaped) होती हैं। थैलस की पृष्ठ (dorsal) सतह पर सुस्पष्ट मध्यशिरा होती है, जो छिछली खाँच (shallow groove) के द्वारा प्रदर्शित होती हैं जिसे पृष्ठ खाँच (dorsal groove) कहते हैं। इसके शीर्ष पर एक गढ्ढा होता है जिसे शीर्ष खाँच (apical groove) कहते हैं। बीजाणु-उद्भिद् पृष्ठ खांच में अंदर गहरे ढ़से हुए होते हैं, प्रत्येक एक अलग गुहा में होता है। नर तथा मादा लैंगिक अंग एक ही थैलस पर विकसित हो सकते हैं यानि कि उभयलिंगाश्रयी (monoecious) अथवा अलग-अलग थैलस पर हो सकते हैं यानि कि एकलिंगाश्रयी (dioecious) (चित्र 13.3 B तथा C)।

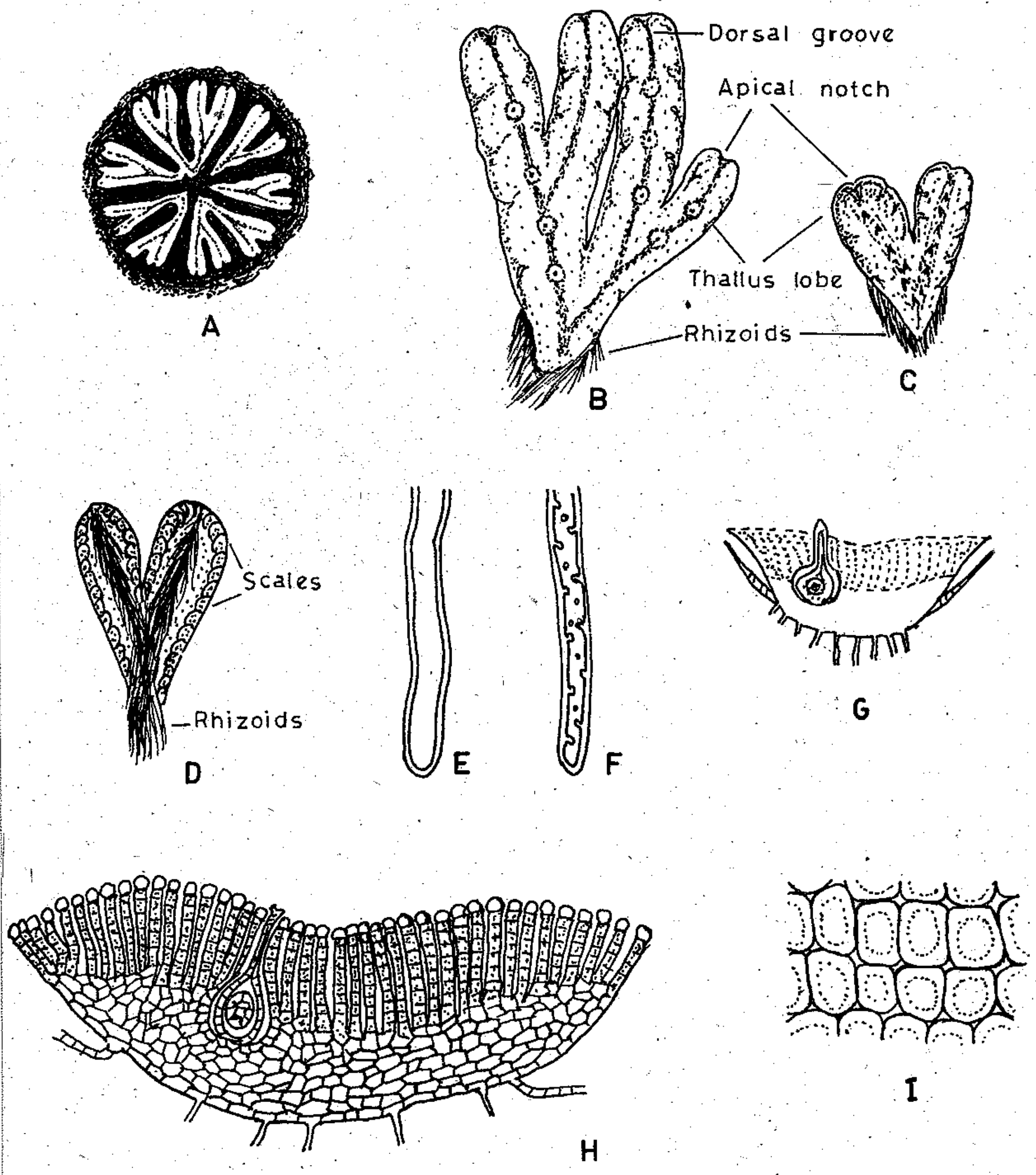

चित्र 13.3 : *रिक्सिया* की आकारिकी तथा आंतरिक संरचना : A) *रिक्सिया ट्राइकोकार्पा* (*Riccia trichocarpa*) का पुष्पाकार थैलस, B) *रिक्सिया डिस्कलर* (*R. discolor*) का मादा थैलस, C) *रिक्सिया डिस्कलर* (*R. discolor*) का नर थैलस, D) थैलस की अधर सतह, E) चिकनी भित्ति वाला मूलाभास, F) गुलिकीय मूलाभास, G) मादा थैलस की अनुप्रस्थ-खड़ी काट, H) G आवर्धित, I) थैलस के तरुण भाग से सतह दृश्य में बाह्यत्वचीय कोशिकाएं। नोट कीजिए कि चार कोशिकाएं एक वायु चैनल को घेरे हुए हैं।

रिक्सिया की कुछ आम भारतीय जातियां है

रिक्सिया डिस्कलर (*Riccia discolor*)
रिक्सिया गेंगेटिका (*R. gangetica*)
रिक्सिया क्रिस्टलीना (*R. crystallina*)
रिक्सिया फ्रॉस्टाई (*R. frostii*)

पहले वाली दो जातियां जुलाई से अगस्त तक यानि की बरसात के मौसम में पाई जाती हैं, जबकि बाद वाली दोनों नवंबर-दिसंबर में उगती हैं।

इसकी अधर (ventral) सतह पर (चित्र 13.3 D) अनेक पतले, रंगहीन, एक कोशिकीय, अशाखित प्रवर्ध जो मूलाभास कहलाते हैं, थैलस को आधार से जोड़े रखते हैं। मूलाभास दो प्रकार के होते हैं : (अ) चिकनी भित्तियों वाले - इनकी भित्तियां चिकनी होती है (चित्र 13.3 E) तथा (ब) गुलिकीय (tuberculate) - इनमें खूंटी जैसी (peg-like) भित्ति की अंतर्वृद्धि (ingrowths) अवकाशिका (lumen) में निकली रहती है (चित्र 13.3 F)। अधर सतह पर शीर्ष की ओर तथा थैलस के किनारों पर पट्टी जैसी संरचनाएं भी पाई जाती हैं (चित्र 13.3 D)। ये शस्क (scale) होते हैं जो एक कतार में व्यवस्थित रहते हैं तथा एक कोशिका की मोटाई के होते हैं। ये शल्क आगे की ओर बढ़ जाते हैं तथा वर्धन बिंदु (growing point) को ढक लेते हैं जिससे वह सूखने यानि निर्जलीकरण से बच सके। वर्धन बिंदु खाँच में स्थित रहता है तथा 3 से 5 कोशिकाओं की अनुप्रस्थ कतार का होता है। थैलस की लंबाई तथा चौड़ाई में वृद्धि, कोशिकाओं के विभाजन के द्वारा होती है। प्रत्येक थैलस द्विशाखी रूप से शाखित होता है तथा कुछ द्विशाखन एक दूसरे के पास-पास स्थित होकर विशिष्ट पुष्पाकार रचना बनाते हैं।

आंतरिक संरचना

यदि हम थैलस की अनुप्रस्थ-खड़ी (transverse vertical) काट काटें (चित्र 13.3 G, H) तो हम देखेंगे कि *रिक्सिया* के थैलस में उसकी दोनों सतहों की संगत में दो भिन्न क्षेत्र दिखाई पड़ते हैं अ) ऊपरी हरा प्रकाश संश्लेषी क्षेत्र पृष्ठ सतह की संगत में तथा ब) निचला, रंगहीन संचयी क्षेत्र, अधर सतह की संगत में। ऊपरी प्रकाश संश्लेषी क्षेत्र में पर्णहरितीय कोशिकाओं के कॉलम (column) होते हैं जो पतले वायु चैनलों (air channels) के द्वारा एक दूसरे से अलग रहते हैं। प्रत्येक कॉलम में 6-8 कोशिकाएं होती हैं, प्रत्येक कॉलम की अंतस्थ (terminal) कोशिका अपेक्षाकृत बड़ी होती है तथा उसमें क्लोरोप्लास्ट नहीं होता है।

थैलस को ऊपर से देखने पर हमें सिर्फ अंतस्थ रंगहीन कोशिकाएं तथा अवकाश यानि छिद्र (pores) दिखाई पड़ते हैं। खड़ी अनुप्रस्थ काट में हमें सिर्फ कोशिकाओं के कुछ ऊर्ध्व कॉलम कतार में व्यवस्थित दिखाई पड़ते हैं। परंतु वास्तव में, ऐसे अनेक कॉलम होते हैं जिन्हें सिर्फ त्रिविम (three dimentional) परिदृश्य में देखा जा सकता है। वायु चैनल कोशिकाओं के 4 से 8 ऊर्ध्व कॉलम से घिरे रहते हैं। चैनल का अंतस्थ सिरा बाहरी वातावरण में एक छिद्र के जरिए खुलता है जो 4 से 8 रंगहीन बाह्य-त्वचीय कोशिकाओं से घिरा रहता है (चित्र 13.3 I)। छिद्र, हालांकि अवशेषी (rudimentary) होते हैं, पर वे आंतरिक तथा बाहरी वातावरण के बीच गैसों का आदान प्रदान करते हैं।

निचले संचयी क्षेत्र में सघन रूप से व्यवस्थित रंगहीन, मृदूतकी (parenchymatous) कोशिकाएं होती हैं। इस क्षेत्र की सबसे निचली परत में मूलाभास तथा शल्क होते हैं। मूलाभास मध्यशिरा की कुछ सतही कोशिकाओं के रंगहीन, एककोशिकीय प्रवर्ध होते हैं। शल्क बहुकोशिकीय होते हैं, परंतु एक कोशिकीय मोटाई के होते हैं। मरुस्थलीय जातियों में शल्क बेहतर रूप से विकसित, दीर्घजीवी तथा एन्थोसाइएनिन (anthocyanin) युक्त होते हैं।

बोध प्रश्न 13.3

रिक्सिया के बारे में निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) *रिक्सिया* का युग्मकोद्भिद् चकतों (patches) में उगता है जिन्हें .... कहते हैं।

ii) *रिक्सिया* में दो प्रकार के मूलाभास .... तथा .... होते हैं।

iii) मूलाभास .... होते हैं जबकि शल्क .... होते हैं तथा एकल अनुप्रस्थ कतार में स्थित रहते हैं।

iv) थैलस मे वायु चैनल बाहरी वातावरण से .... के द्वारा संबद्ध रहते हैं।

मार्केन्शिया (*Marchantia*)

कुल मार्केन्शिएसी, जिसका *मार्केन्शिया* सदस्य है, उसमें लगभग 23 वंश तथा लगभग 200 जातियां हैं। इस कुल का विशेष गुण यह है कि सभी वंशों में युग्मकोद्भिद् स्त्रीधानी को ऊर्ध्व वृंतीय धानी (vertical stalked receptacle) पर धारण किए रहते हैं जो स्त्रीधानीधर (archegoniophore) या कार्पोसेफैलम (carpocephalum) कहलाता हैं। *मार्केन्शिया* में पुंधानी भी वृंतीय धानी पर उत्पन्न होती हैं जिन्हें पुंधानीधर (antheridiophore) कहते हैं। टाइप-वंश *मार्केन्शिया* को सबसे उन्नत सदस्यों में रखा जाता है जिसमें लगभग 65 जातियां है, जिनमें से *मार्केन्शिया पॉलीमॉर्फा* (*Marchantia polymorpha*) सबसे विस्तृत रूप से वितरित है।

मार्केन्शिया

प्रभाग - ब्रायोफाइटा
वर्ग - हिपेटिकोप्सिडा
गण - मार्केन्शिएलीज
कुल - मार्केन्शिएसी

मार्केन्शिया सामान्यतः ठंडे, नम स्थानों पर मॉसेस के साथ जली हुई जमीन के हिस्सों में उगते हैं। ये गहरे हरे रंग के होते हैं। *रिक्सिया* की तरह ही इसका युग्मकोद्भिद् चपटा, शयान, पृष्ठाधर तथा द्विशाखी रूप से शाखित थैलस होता है (चित्र 13.4 A)। इसमें सुस्पष्ट मध्यशिरा होती है जो पृष्ठ सतह पर छिछली खांच द्वारा तथा अधर सतह पर हल्की कटक (ridge) द्वारा पहचानी जाती है जो मूलाभासों से ढकी रहती है (चित्र 13.4 B)। मध्यशिरा के किनारे, झालरदार किनारों वाली अनेकों प्यालेनुमा संरचनाएं होती हैं। ये जेमा कप (gemma plur. gemmae) कहलाते हैं (चित्र 13.4 C) जिनमें असंख्य कायिक प्रजनन अंग होते हैं जो जेमी कहलाते हैं। वयस्क थैलस में कुछ शाखाओं के वर्धन शीर्षों पर पुंधानीधर तथा स्त्रीधानीधर पाए जाते हैं जो क्रमशः पुंधानी तथा स्त्रीधानी को धारण किए रहते हैं। *मार्केन्शिया* एकलिंगाश्रयी है। *रिक्सिया* की भांति ही प्रत्येक शाखा का शीर्ष खाँच युक्त होता है तथा वर्धन बिंदु उसमें स्थित रहता है। आप नोट कीजिए कि थैलस पृष्ठ सतह पर षट्कोणीय क्षेत्रों से पहचाना जाता है जिन्हें नग्न आंखों से भी देखा जा सकता है (चित्र 13.4 C)। यदि हम हैन्ड लैन्स (hand lens) से परीक्षण करें तो हम प्रत्येक षट्कोण के केन्द्र में एक छिद्र को देख सकेंगे।

भारत में *मार्केन्शिया* की लगभग 11 जातियां हैं जो मुख्यतः हिमालयी क्षेत्रों में उगती हैं। सबसे अधिक जानी जाने वाली निम्न हैं :

मार्केन्शिया पॉलीमॉर्फा (*M. polymorpha*)
मार्केन्शिया नेपालेन्सिस (*M. nepalensis*)
मार्केन्शिया पामेटा (*M. palmata*)
(दक्षिण भारत, आसाम, बंगाल तथा पंजाब में पाई जाती है।)

रिक्सिया की भाँति ही *मार्केन्शिया* का थैलस भी सतह से मूलाभासों द्वारा जुड़ा रहता है जो चिकनी भित्ति वाले तथा गुलिकीय प्रकार के होते हैं (चित्र 13.4 F तथा G)। अधर सतह पर शल्क भी उपस्थित रहते हैं, पर *मार्केन्शिया* में ये मध्यशिरा के दोनों तरफ व्यवस्थित रहते हैं (चित्र 13.4 B, H)।

आंतरिक संरचना

थैलस की आंतरिक संरचना को दर्शाते हुए चित्र 13.5 A तथा B को देखिए। सूक्ष्मदर्शी द्वारा निरीक्षण करने पर आप ऊतकों में उच्च श्रेणी का आंतरिक विभेदन नोट कर पाएगें। थैलस दो स्पष्ट क्षेत्रों में बंटा रहता है :

अ) पृष्ठ सतह की संगत में ऊपरी प्रकाश संश्लेषी क्षेत्र तथा

ब) अधर सतह की संगत में निचला संचयी क्षेत्र।

ऊपरी क्षेत्र पतली भित्ति वाली कोशिकाओं की एकल परत से ढका रहता है जो ऊपरी बाह्यत्वचा बनाती है। इन कोशिकाओं में कम संख्या में क्लोरोप्लास्ट होते हैं। इस परत में बहुत सारे ढोलाकार (barrel shaped) छिद्र होते हैं (चित्र 13.5 A, B)। ऊपरी बाह्यत्वचा के नीचे बहुत सारे वायु कोष्ठ एक क्षैतिज परत में होते हैं।

क्या आपको ये छिद्र *मार्केन्शिया* में विशिष्ट लग रहे हैं?

वास्तव में ये छिद्र वायु कोष्ठों के द्वार हैं। इन छिद्रों की *रिक्सिया* के छिद्रों से तुलना कीजिए (13.3 I)। आपने क्या पाया? क्या *रिक्सिया* में छिद्र अवशेषी नहीं हैं?

ये वायु कोष्ठ एक दूसरे से एक परतीय विभाजकों के द्वारा अलग रहते हैं। पृष्ठ सतह पर दिखने वाले षट्कोणीय निशान वास्तव में इन वायु कोष्ठों की बर्हिसीमा होती हैं। प्रत्येक वायु कोष्ठ में सामान्यतः

सरल या शाखित प्रकाश संश्लेषी तंतु होते हैं जो कोष्ठ के आधार से उत्पन्न होते हैं (चित्र 13.5 A, B)।

युग्मकोद्‌भिद्‌ की अधर सतह अपर्णहरिती (achlorophyllous), मृदूतकी तथा कुछ कोशिकीय मोटाई की होती है (चित्र 13.5 B)। इस क्षेत्र की कुछ कोशिकाओं में एक बड़ी तेल काया (oil body) होती है। कुछ कोशिकाओं में श्लेष्म (mucilage) भरा होता है। सबसे निचली परत स्पष्ट निचली बाह्यत्वचा बनाती है। इससे दो या अधिक बहुकोशिकीय शल्कों की अनुप्रस्थ कतारें निकलती हैं। आपको याद होगा कि *रिक्सिया* में शल्कों की एक ही परत किनारों की ओर होती है। शल्क अधर सतह तथा वर्धन क्षेत्रों की सुरक्षा करते हैं। चिकनी भित्ति वाले तथा गुलिकीय मूलाभास अधर सतह से शल्कों के बीच में से उगते हैं।

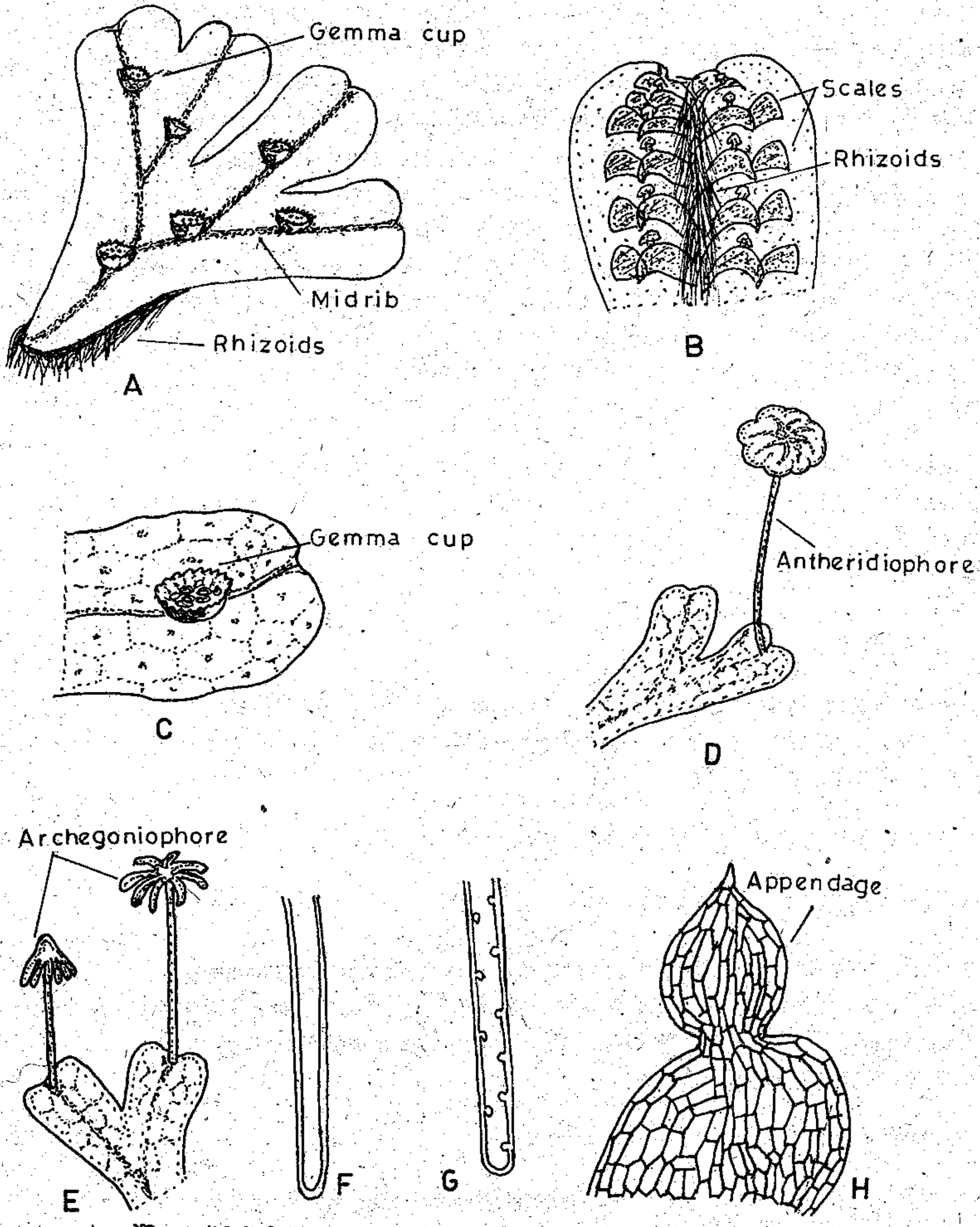

चित्र 13.4 : A) *मार्केन्शिया पॉलीमॉर्फा* की आकारिकी : A) जेमा कप के साथ थैलस, B) थैलस की अधर सतह, C) A का एक भाग आवर्धित किया हुआ (थैलस की सतह पर षट्कोणीय निशान व उनके केन्द्र में छिद्र को नोट कीजिए), D) पुंधानीधर सहित, थैलस, E) स्त्रीधानीधर सहित थैलस, F) चिकनी भित्ति वाले मूलाभास, G) गुलिकीय मूलाभास, H) आवर्धित शल्क।

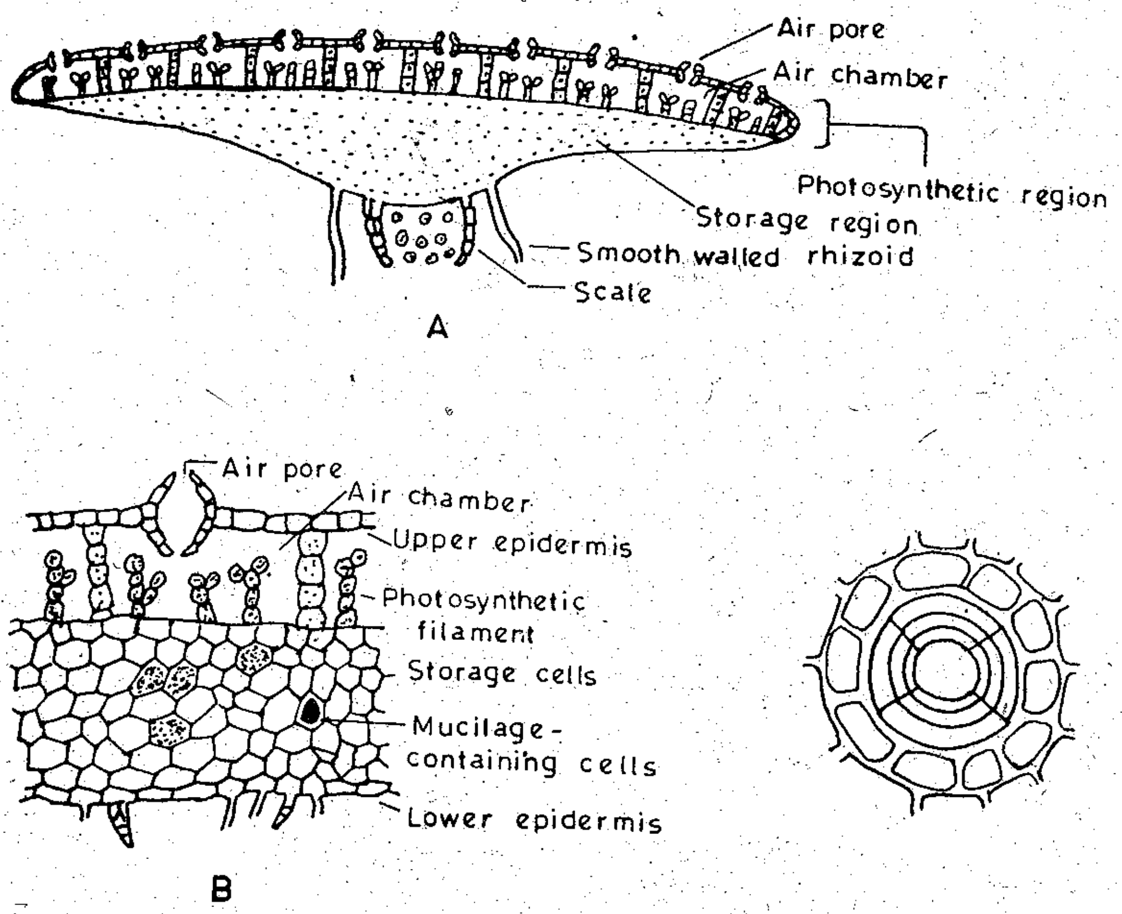

चित्र 13.5 : *मार्केन्शिया* की आंतरिक संरचना : A) थैलस की ऊर्ध्वाधर अनुप्रस्थ काट, B) A का एक भाग आवर्धित, C) सतह परिदृश्य में एक छिद्र।

बोध प्रश्न 13.4

मार्केन्शिया के बारे में निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) कुल मार्केन्शिएसी .... मादा धानियों (रिसेप्टिकल) की उपस्थिति से पहचाना जाता है।

ii) थैलस की पृष्ठ सतह पर दिखाई पड़ने वाले .... निशान वास्तव में नीचे स्थित .... की बर्हिसीमा होती है।

iii) .... तंतु प्रत्येक कोष्ठ के आधार पर स्थित होते हैं।

iv) थैलस की अधर सतह पर कुछ कोशिकाएं .... से भरी रहती हैं अथवा .... लिए रहती हैं।

पेलिया (*Pellia*)

पेलिया जंगरमेनिएलीज गण का सदस्य है। ये गण हिपेटिकोप्सिडा वर्ग का सबसे बड़ा गण है तथा इसमें 244 वंश तथा 9000 जातियां सम्मिलित हैं। जंगरमेनिएलीज के युग्मकोद्भिद् सरल थैलस अथवा तने-जैसी तथा पत्ती-जैसी संरचनाओं में विभेदित हो सकते हैं। हालांकि, इनमें आंतरिक ऊतकों का विभेदन लगभग नहीं होता है।

पेलिया (*Pellia*)
प्रभाग - ब्रायोफाइटा
वर्ग - हिपेटिकोप्सिडा
गण - जंगरमेनिएलीज
उप-गण-मेट्जीरिनी (Metzgerineae)
कुल - पेलिएसी (Pelliaaceae)

स्त्रीधानी की स्थिति के आधार पर जंगरमेनिएलीज को दो स्पष्ट समूहों (या उपगणों) में बांटा जा सकता है :

क) जंगरमेनिएलीज एनेक्रोगाइनी (anacrogynae जो मेट्जीरिनी भी कहलाती है) - इसमें स्त्रीधानी शयान थैलस की पृष्ठ सतह पर बनती हैं तथा शीर्ष कोशिकाएं स्त्रीधानी के निर्माण में शामिल नहीं होती हैं। बीजाणु-उद्भिद् पृष्ठ स्थिति में होते हैं।

ख) जंगरमेनिएलीज एक्रोगाइनी (acrogynae) - इसमें स्त्रीधानी प्ररोह के शीर्ष पर उगती है तथा शीर्ष कोशिका स्त्रीधानी के निर्माण में भाग लेती हैं। आगे की कायिक वृद्धि रुक जाती है तथा बीजाणु-उद्भिद् अंतस्थ स्थिति में होता है।

पेलिया की कुछ सामान्य जातियां है
पेलिया एपीफिला (*P. epiphylla*)
पेलिया एन्डीवीफोलिया (*P. endiviaefolia*)
पेलिया नीसीआना (*P. neesiana*)

पेलिया पेलिएसी कुल (हेप्लोलीनेसी भी कहलाता है) के मेट्जीरिनी उपगण का सदस्य है। *पेलिया* आमतौर पर नम स्थानों पर विशेष तौर पर तालाबों या झरनों के किनारे या नम पत्थरों पर उगता है। इसका युग्मकोद्भिद् पतला, चपटा तथा द्विशाखी रूप से विभाजित शांखित थैलस होता है तथा थैलस के किनारों पर कुछ कटाव दिखाई पड़ते हैं (चित्र 13.6 A) अत: इसकी बर्हिसीमा अनियमित दिखाई पड़ती है। थैलस का मध्य भाग मोटा होता है परंतु किनारे अत्यंत पतले होते हैं (चित्र 13.6 B)। *रिक्सिया* और *मार्केन्शिया* की भांति ही वर्धन बिंदु अग्र सिरे पर एक खाँच में स्थित होता है। अधर सतह पर असंख्य एककोशिकीय मूलाभास होते हैं जो सभी चिकनी भित्ति वाले होते हैं। शल्क अनुपस्थित होते हैं।

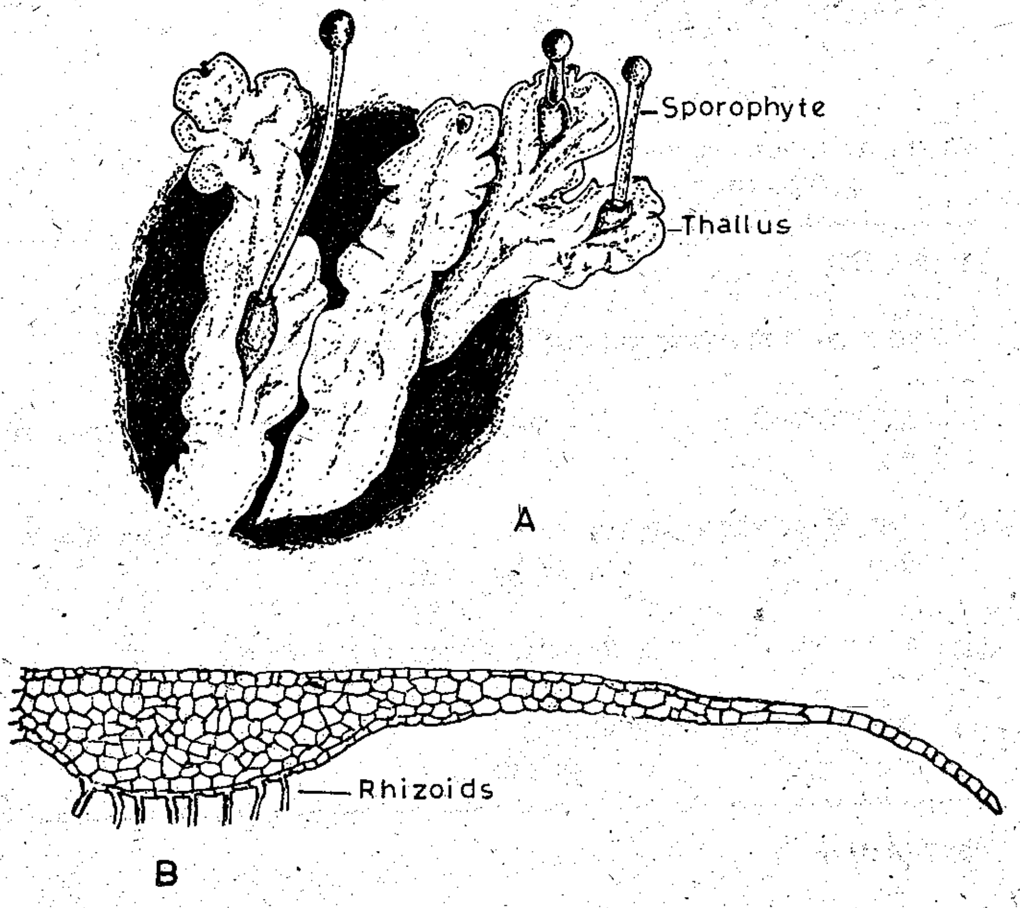

चित्र 13.6 : *पेलिया* : A) वयस्क युग्मकोद्भिद् संलग्न बीजाणु-उद्भिद् के साथ, B) थैलस की अनुप्रस्थ काट आंतरिक संरचना को दर्शाते हुए। नोट कीजिए कि थैलस मध्यशिरीय भाग में बहुपरती तथा किनारों पर एकलपरती है।

आंतरिक संरचना

चित्र 13.6 B में दिखाई गई थैलस की आंतरिक संरचना को देखिए तथा कुछ लाइनों में उसका वर्णन करने की कोशिश कीजिए। यह *रिक्सिया* तथा *मार्केन्शिया* के थैलस से किस प्रकार भिन्न है ?

....

....

जैसा कि आप देख सकते हैं, आंतरिक रूप से थैलस बहुत ही सरल होता है तथा मुख्यतः मृदूतकी कोशिकाओं का बना होता है। थैलस का मध्य भाग काफी चौड़ा, 8 से 16 कोशिकीय मोटाई का होता है, परंतु किनारों पर ये एक कोशिकीय मोटाई का होता है। थैलस के किनारों तथा मध्य शिरा की ऊपरी परत की कोशिकाओं में क्लोरोप्लास्ट बहुतायत में होते हैं, जबकि मध्य शिरा के निचले भाग में क्लोरोप्लास्ट बहुत कम अथवा नहीं होते हैं। मंड कण थैलस की सभी कोशिकाओं में पाए जाते हैं। थैलस की कुछ कोशिकाओं में तेल भी पाया जाता है। सिर्फ चिकनी भित्ति वाले मूलाभास उपस्थित होते हैं।

बोध प्रश्न 13.5

पेलिया पर निम्नलिखित वक्तव्यों में कोष्ठकों में दिए गए शब्दों में से उचित विकल्प छाँटिए।

i) ये गण (मार्केन्शिएलीज़/जंगरमेनिएलीज़) का सदस्य है।

ii) युग्मकोद्भिद् में विभेदन (बहुत उच्च श्रेणी का/नहीं) पाया जाता है।

iii) (चिकने/चिकने तथा गुलिकीय) मूलाभास पाए जाते हैं।

iv) मंड कण थैलस की सभी कोशिकाओं में (अनुपस्थित/उपस्थित) होते हैं।

13.4.2 एन्थोसिरोटोप्सिडा (Anthocerotopsida)

वर्ग एन्थोसिरोटोप्सिडा में सिर्फ एक ही गण एन्थोसिरोटेलीज है। हम इस वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में वंश *एन्थोसिरोस* का अध्ययन करेंगे।

एन्थोसिरोस (Anthoceros)

ये मुख्यतः नम छायादार स्थानों पर नालों के किनारे या पत्थरों की नम दरारों में उगता है। *एन्थोसिरोस* के युग्मकोद्भिद् पृष्ठाधर, थैलसाभ, कुछ-२ पालियुक्त (lobed) या कटे-फटे, तथा कभी-कभी द्विशाखी शाखन की प्रवृत्ति लिए होते हैं (चित्र 13.7 A)।

एन्थोसिरोस का थैलस गहरा हरा ऊपरी सतह पर मखमली तथा कई प्रकार से पालियुक्त होता है। क्या यह बाह्य आकारिकी में *पेलिया* के समान हैं?

....

हाँ, अतिरिक्त इसके कि यह नियमित तौर पर द्विशाखी नहीं होता है। मध्यशिरा या तो अस्पष्ट अथवा अनुपस्थित होती हैं। *पेलिया* की भांति ही, इसमें भी गुलिकीय मूलाभास तथा शल्क नहीं पाए जाते हैं। सिर्फ चिकनी भित्ति वाले मूलाभास पाए जाते हैं।

आंतरिक संरचना

चित्र 13.7 B को देखिए तथा विशेष लक्षणों को नीचे लिखिए।

....

....

ब्रायोफ़ाइट्स

एन्थोसिरोस
प्रभाग - ब्रायोफाइटा
वर्ग - एन्थोसिरोटोप्सिडा
गण - एन्थोसिरोटेलीज
कुल - एन्थोसिरोटेसी

वंश *एन्थोसिरोस* में लगभग 200 जातियां है। कुछ आम भारतीय जातियां है :
एन्थोसिरोस हिमालएन्सिस (*A. himalayensis*)
एन्थोसिरोस इरेक्टस (*A. erectus*)
एन्थोसिरोस फ्यूसीफोर्मिस (*A. fusiformis*)
एन्थोसिरोस पंक्टेटस (*A. punctatus*)
तथा *एन्थोसिरोस लेवीज* (*A. laevis*)

सबसे अधिक ध्यान देने वाली विशेषता निचली सतह पर विशेष श्लेष्म गुहाओं (mucilage cavities) की उपस्थिति है। इनमें नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाले तंतुमय नील-हरित शैवाल *नॉस्टॉक* (*Nostoc*) के तंतु पाये जाते हैं। ये गुहाएं बाहर की ओर रंध्र जैसे छिद्रों के जरिए खुलती हैं जिन्हें श्लेष्म छिद्र (slime pore) कहते हैं (चित्र 13.7 B)।

इन छिद्रों का क्या महत्व हो सकता है?

....

दिलचस्प बात यह है कि आप इन गुहाओं को हाथ वाले लैन्स से भी देख सकते हैं (चित्र 13.7 B)।

मार्केन्शिया के विपरीत *एन्थोसिरोस* के थैलस में प्रकाश संश्लेषी तथा संचयी क्षेत्र में कोई विभेदन नहीं होता है (चित्र 13.7 D)। आप देख सकते हैं कि संपूर्ण थैलस एक समान रूप से मृदूतकी कोशिकाओं का बना होता है। वायु कोष्ठ तथा वायु छिद्र अनुपस्थित होते हैं। निचली बाह्यत्वचीय कोशिकाओं के बीच में श्लेष्म छिद्र उपस्थित रहते हैं। थैलस की प्रत्येक कोशिका में एक क्लोरोप्लास्ट व एक बड़ा

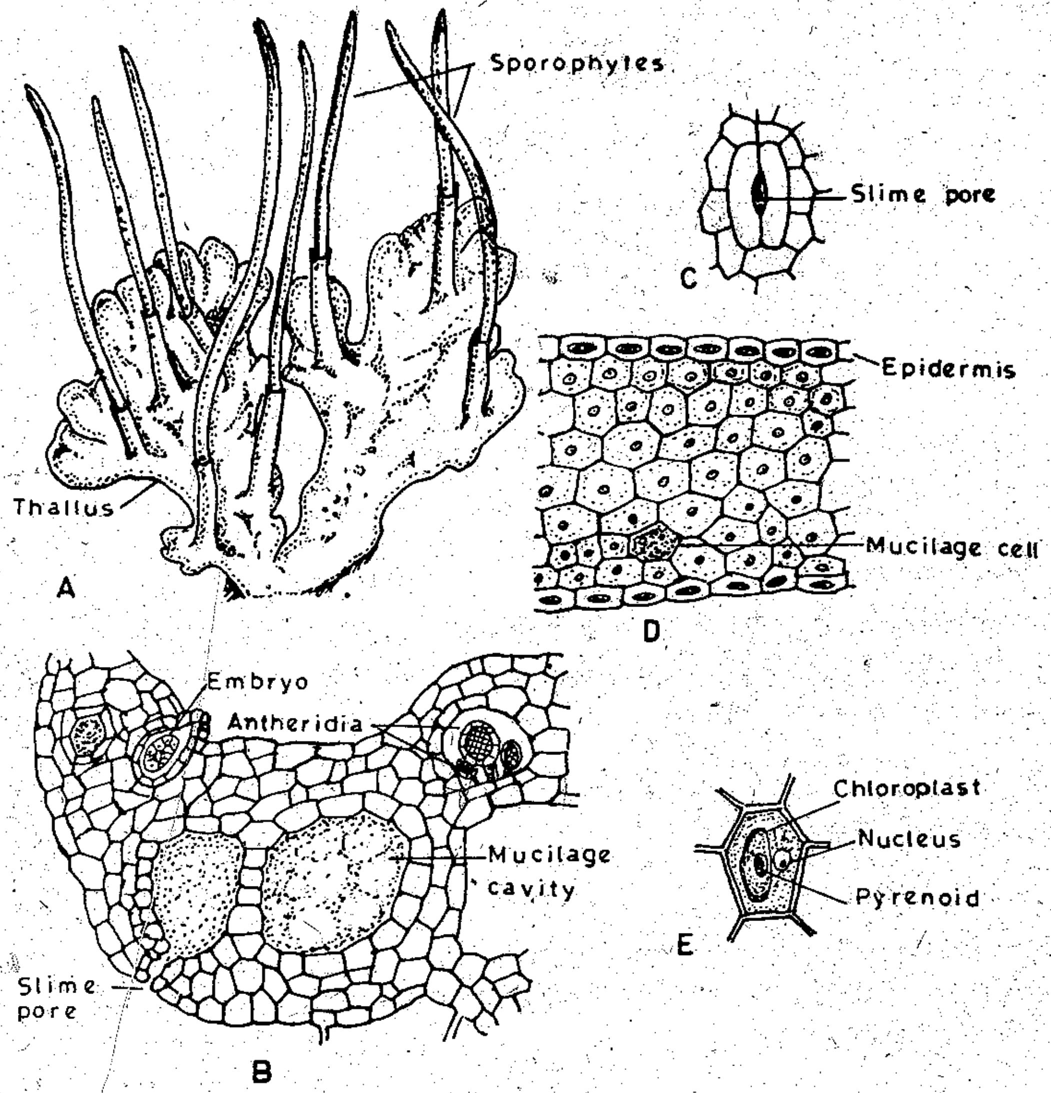

चित्र 13.7 *एन्थोसिरोस* : **A**) वयस्क थैलसाभ युग्मकोद्भिद्, संलग्न बीजाणु-उद्भिद् के साथ। प्रत्येक बीजाणु-उद्भिद् के आधार पर एक आच्छद (**sheath**) पर ध्यान दीजिए, **B**) आवर्धित श्लेष्म गुहाओं, पुंधानियों तथा परिवर्धनशील भ्रूण को दर्शाते हुए थैलस की ऊर्ध्वाधर अनुप्रस्थ काट का एक भाग, **C**) श्लेष्म छिद्रों को दर्शाती बाह्यत्वचीय कोशिकाएं, **D**) थैलस की काट का एक भाग, **E**) एक बड़े क्लोरोप्लास्ट तथा एक पाइरीनॉइड युक्त कोशिका।

पाइरीनॉइड (pyrenoid) होता है (चित्र 13.7 E) ये स्थिति सिर्फ *सैलाजिनेला* (*Selaginella*) की कुछ जातियों के अतिरिक्त, ब्रायोफाइट्स अथवा अन्य उच्च पादपों में कही नही पाया जाता है। क्या आप याद कर सकते हैं पहले आपने पाइरीनॉइड्स के बारे में कहाँ पढ़ा था?

....

ये सामान्य तौर पर शैवालों में पाए जाते हैं। क्या यह तथ्य ये नहीं सुझाता है कि कुल एन्थोसिरोटेसी अन्य ब्रायोफाइट्स की बजाय शैवालीय पूर्वजों के अधिक निकट है?

बोध प्रश्न 13.6

निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) *एन्थोसिरोस* में .... मूलाभास तथा .... अनुपस्थित होते हैं।

ii) *एन्थोसिरोस* के थैलस में नाइट्रोजन यौगिकीकरण होता है क्योंकि श्लेष्म गुहाओं में .... के तंतु पाए जाते हैं।

iii) *एन्थोसिरोस* के क्लोरोप्लास्ट शैवालों से मिलते हैं क्योंकि उनमें .... होते हैं।

iv) *एन्थोसिरोस* का थैलस .... तथा .... क्षेत्रों में विभेदित नहीं होता है।

13.4.3 ब्रायोप्सिडा (Bryopsida)

ये ब्रायोफाइट्स का सबसे बड़ा वर्ग है तथा इसमें लगभग 660 वंश तथा 14,500 जातियां शामिल हैं। ब्रायोप्सिडा तीन उपवर्गों में विभाजित है : स्फैग्निडी (Sphagnidae) यानि पीट मॉसेस, एन्ड्रिएडी (Andreaeidae) यानि शैल मॉसेस तथा ब्राइडी (Bryidae) यानि वास्तविक मॉसेस। ब्राइडी में लगभग 14,000 जातियां सम्मिलित हैं। आप वंश *फ्यूनेरिया* (*Funaria*) का इस गण के प्रतिनिधि के रूप में अध्ययन करेगें। गण स्फैग्नेलीज (Sphagnales) सिर्फ एक ही वंश *स्फैग्नम* (*Sphagnum*) के द्वारा जाना जाता है जिसमें 300 जातियां सम्मिलित हैं। चलिए पहले हम स्फैग्नम के बारे में पढ़े।

स्फैग्नम
प्रभाग - ब्रायोफाइटा
वर्ग - ब्रायोप्सिडा
गण - स्फैग्नेलीज (Sphagnales)
कुल - स्फैग्नेसी (Sphagnaceae)

स्फैग्नम (*Sphagnum*)

स्फैग्नम अम्लीय जलाक्रांत आवासों में ही पाया जाता है। ये पीट दलदल का प्रमुख भाग है जहाँ ये लगभग सतत् स्पंजी परत बनाता है।

स्फैग्नम विश्व के उत्तरी भागों में पीट दलदल बनाता है। कुछ देशों में पीट को ईंधन के रूप में जलाया जाता है। *स्फैग्नम* को पौधशालाओं में पैकिंग करने वाले तत्व के रूप में भी उपयोग किया जाता है। इस मॉस की चटाइयां नमी को बनाए रखती हैं तथा अन्य पादपों के बीजों को अंकुरित होने और उगने में सहायता करती हैं।

वयस्क युग्मकोद्भिद् एक सीधे पत्तीदार प्ररोह की भाँति, एक सरल थैलसाभ एक कोशिकीय मोटाई वाले प्रथम तंतु से विकसित होता है जो युग्मकधर कहलाता है। युग्मकधर तने तथा पत्तियों में विभेदित रहता है। तने की अंतस्थ वृद्धि एक शीर्ष कोशिका के कारण होती है। अक्ष भूमि से बहुकोशिकीय, शाखित मूलाभासों के द्वारा जुड़े रहते हैं, जिनकी क्रॉस भित्तियां तिरछी होती हैं। मूलाभास सिर्फ तरुण युग्मकोद्भिद् में पाए जाते हैं तथा इसके वयस्क होने पर विलुप्त हो जाते हैं। बाद में, युग्मकोद्भिद् जल को सीधे अवशोषित करता है।

चित्र 13.8 A को देखिए, वयस्क युग्मकधर में पत्तियों को धारण किए ऊर्ध्वाधर तना होता है। तने की प्रत्येक चौथी पत्ती के अक्ष में तीन से आठ पार्श्व शाखाओं का समूह होता है। ये शाखाएं दो प्रकार की होती हैं : (i) अपसारी तथा (ii) क्लांतिनत जो तने के आगे स्थित रहती हैं (चित्र 13.8 B)। कभी-कभी गुच्छ में से कोई एक शाखा ऊपर की ओर उसी ऊँचाई तक वृद्धि जारी रखती है जितनी कि मुख्य अक्ष की होती है तथा संरचना में भी उससे मिलती है। ये मजबूती से विकसित शाखाएं नवशाखाएं (innovations) कहलाती हैं तथा ये अंततः विलग हो जाती हैं तथा स्वतंत्र पादप बन जाती हैं। तने के शीर्ष के पास की शाखाएं छोटी तथा एक संहत शीर्ष (compact head) में सघन रूप से एकत्रित रहती हैं जो रोमगुच्छ यानि कोमा (coma) कहलाता है।

पत्तियों में मध्यशिरा नहीं होती है (चित्र 13.8 C तथा D)। वे छोटी होती है तथा तने पर तीन ऊर्ध्वाधर कतारों में व्यवस्थित रहती हैं। पत्ती के सतह परिदृश्य में आप दो प्रकार की कोशिकाएं देख सकते हैं। (i) पतली, जीवित, पर्णहरित युक्त कोशिकाएं तथा (ii) बड़ी, मृत, रिक्त, चतुष्कोणी, कांचाभ (काँच जैसी, पारदर्शी) कोशिकाएं जिनमें छिद्र तथा सर्पिलाकार व छल्लेदार (annular) भित्ति स्थूलन होते हैं (चित्र 13.8 E)। अनुप्रस्थ काट में, पत्ती बुंदकीदार (beaded) दिखाई देती है जिसमें बड़ी मृत कांचाभ कोशिकाएं नियमित रूप से छोटी, हरी, पर्णहरिती कोशिकाओं के साथ एकांतर में स्थित होती हैं (चित्र 13.8 F)। सर्पिलाकार स्थूलन यांत्रिक बल प्रदान करते हैं और कांचाभ कोशिकाओं को पिचकने से बचाते हैं जब वे खाली होती हैं।

छिद्र पानी को तेजी से अंदर आने में तथा H^+ आयन से धनायन (cation) के आदान-प्रदान में भी सहायक होते हैं जो *स्फैग्नम* का उपापचयी (metabolic) उत्पाद हैं। अतः, वे अपने

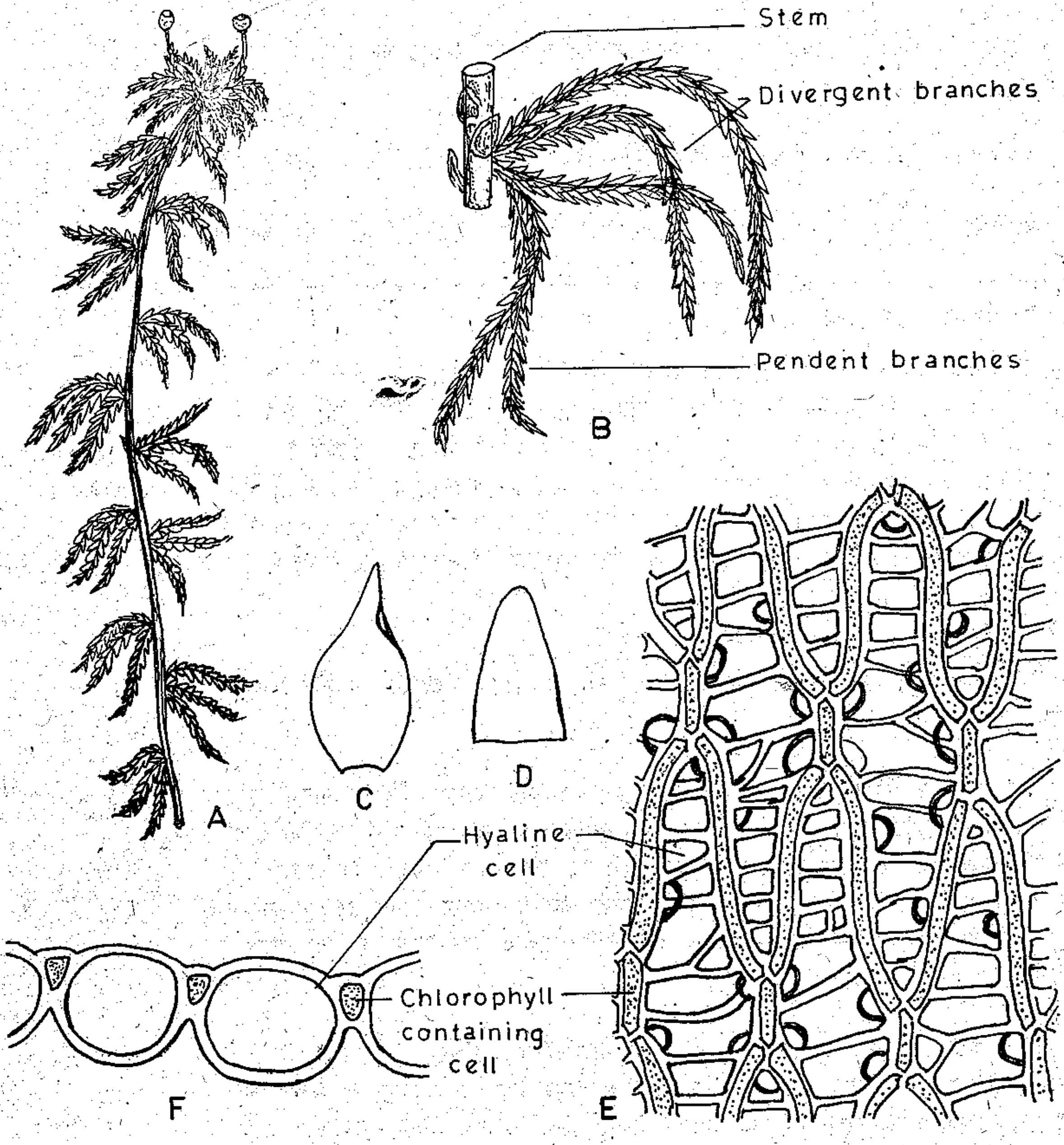

चित्र 13.8 : *स्फैग्नम* की संरचना तथा आकारिकी : A) वयस्क युग्मकोद्भिद् के शीर्ष पर संलग्न बीजाणु-उद्भिद्, B) प्ररोह का एक भाग अपसारी (divergent) तथा क्लांतिनत (drooping) (पेन्डेन्ट) शाखाओं को दर्शाते हुए, C) अपसारी शाखा की आवर्धित पत्ती, शीर्ष को नोट कीजिए, मध्यशिरा अनुपस्थित है, D) मुख्य तने की पत्ती मध्यशिरा विहीन, E) सतह परिदृश्य में पर्ण कोशिकाएं। छिद्रित काचाभ (hyaline) कोशिकाओं को घेरे हुए, पर्णहरिती कोशिकाओं के जाल को नोट कीजिए तथा काचाभ कोशिकाओं की भित्तियों के तंतुक स्थूलनों को भी नोट कीजिए, F) पत्ती की अनुप्रस्थ काट।

आसपास के परिवेश में अम्लीय पर्यावरण उत्पन्न करते हैं। कांचाभ कोशिकाएं जल की बड़ी मात्रा को लेती हैं और रोक कर रखती हैं। कभी-कभी ये पादप के भार से बीस गुना अधिक तक पानी संचय करती हैं। पतली क्लोरोप्लास्ट लिए हुए कोशिकाएं प्रकाश संश्लेषण करती रहती हैं। वयस्क पत्ती में ये दोनों प्रकार की कोशिकाएं जालिका रूप में व्यवस्थित रहती हैं। पत्ती की यह विशेष संरचना *स्फैग्नम* के पौधे के द्वारा बड़ी मात्रा में जल अवशोषित करने तथा उसे रोके रखने के लिए होती है और तदनुसार उसकी दलदल-निर्मित करने की विशेषता के लिए होती है। इनके जल अवशोषित करने के गुण के कारण इनका उपयोग बागवानी में किया जाता है। आप इसके उपयोगों के बारे में अधिक विस्तार से इस खंड की इकाई 15 में पढ़ेंगे।

आंतरिक संरचना

चित्र 13.9 A को देखिए, तना आंतरिक रूप से केन्द्रीय बेलन (cylinder) में विभेदित रहता है, जिसे बाहरी तथा भीतरी भागों में बाँटा जा सकता है। बेलन को आच्छादित करने वाली परतें वल्कुट (cortex) बनाती है। प्रारम्भ में वल्कुट एक कोशिकीय मोटाई का होता है। बाद में, मुख्य अक्ष का वल्कुट चार से पांच कोशिकीय मोटाई का हो जाता है और जैसे-जैसे ये कोशिकाएं वयस्क होती हैं वे सर्पिलाकार रूप से स्थूलित भित्तियां विकसित कर सकती हैं जैसी कि कांचाभ (hyaline) पर्ण कोशिकाओं में होती हैं। केन्द्रीय बेलन की बाह्य कोशिकाएं मोटी भित्ति वाली होती हैं, जबकि अंदर वाली पतली अथवा मोटी भित्ति की हो सकती हैं।

शाखाओं का वल्कुट कभी भी एक कोशिका से अधिक मोटाई का नहीं होता है (चित्र 13.9 B)। ये दो प्रकार की कोशिकाओं का बना होता है : (i) सामान्य मृदूतकी कोशिकाएं तथा (ii) रिटॉर्ट (retort) कोशिकाएं (रिटॉर्ट यानि भभका के आकार की, चित्र 13.9 C तथा D)। रिटॉर्ट कोशिकाएं तब बनती हैं जब वल्कुट की कुछ कोशिकाएं आकार में बढ़ जाती हैं तथा उनकी बाहरी भित्तियां ऊपरी सिरे पर छिद्रित होकर गोलाकार या अंडाकार छेद बनाती हैं। ये सिरा ऊपर की ओर ग्रीवा के रूप में हल्का सा पतला होता है जो अक्ष से दूर मुड़ी रहकर इसे रिटॉर्ट जैसी शक्ल प्रदान करती है। ये मृत, रिक्त कोशिकाएं होती हैं।

जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, वयस्क युग्मकधर में मूलाभास नहीं होते हैं तथा जल सीधे ही पौधे के द्वारा ही अवशोषित किया जाता है। उन जातियों में जिनमें वल्कुट कोशिकाओं में छिद्र तथा सर्पिलादार स्थूलन वाली भित्तियां होती हैं, जल ऊपर शीर्ष की ओर वल्कुट के जरिए तने में जाता है। अन्य जातियों में अवशोषित जल ऊपर की ओर केशिकात्व (capillarity) के द्वारा तथा तने को घेरे हुए पेन्डेन्ट शाखाओं के वर्तिका जैसे तंत्र (wick-like system) के द्वारा जाता है।

अलग-अलग तने कमजोर होते हैं परंतु वे एक दूसरे से मिलने से मजबूत हो जाते हैं और इस प्रकार जल की सतह के ऊपर सीधे खड़े रह पाते हैं। तथा कुछ सेन्टीमीटर तक का हो सकता है।

बोध प्रश्न 13.7

स्फैग्नम से संबंधित निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) *स्फैग्नम* में पत्ती में मध्यशिरा नहीं होती है तथा इसमें दो प्रकार की कोशिकाएं होती हैं .... कोशिकाएं तथा .... कोशिकाएं।

ii) वर्ग हिपेटिकोप्सिडा में मूलाभास एककोशिकीय तथा अशाखित होते हैं जबकि वर्ग ब्रायोप्सिडा में ये .... तथा .... होते हैं।

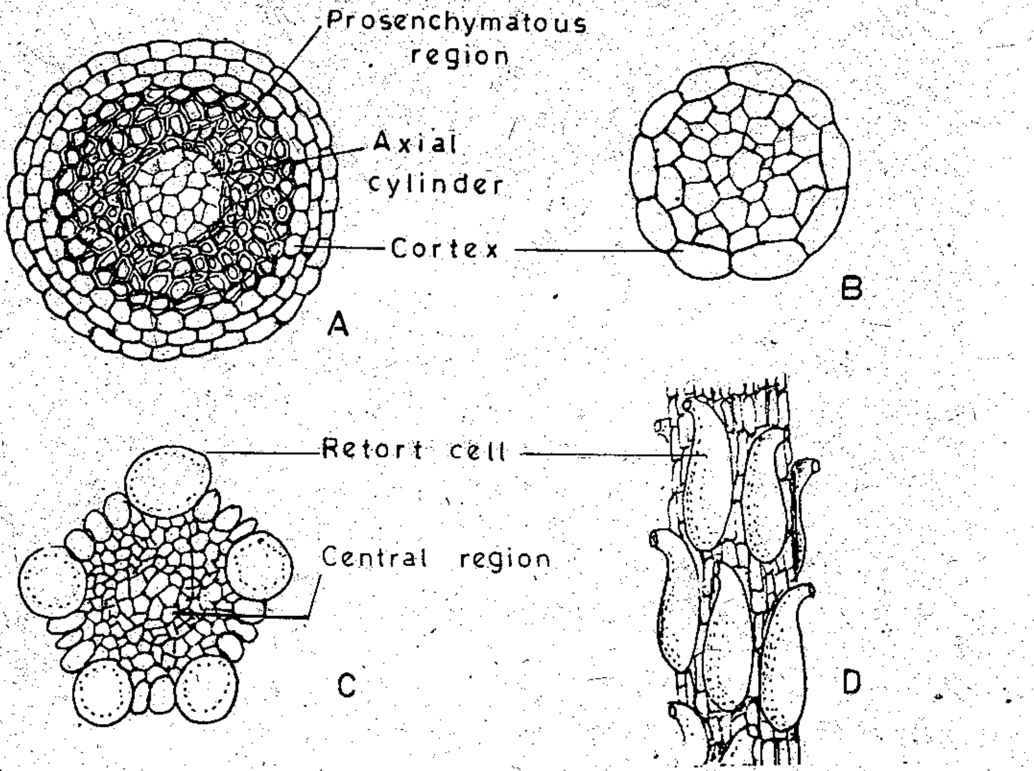

चित्र 13.9 : *स्फैग्नम* की आंतरिक संरचना : A) पुराने तने की अनुप्रस्थ काट, B) शाखा की अनुप्रस्थ काट, C) रिटॉर्ट कोशिकाओं सहित शाखा की अनुप्रस्थ काट, D) पत्तियों के हटाने के बाद शाखा का एक भाग रिटॉर्ट कोशिकाओं को दर्शाते हुए।

iii) *स्फैग्नम* के युग्मकधर के शीर्ष पर स्थित छोटी संहत शाखाएं .... कहलाती हैं।

iv) काचाभ पर्ण कोशिकाओं के सर्पिलाकार स्थूलन, पादप को .... प्रदान करते हैं जबकि जल .... के द्वारा ग्रहण किया जाता है।

v) शाखाओं के वल्कुट में विशिष्ट .... कोशिकाएं दिखाई पड़ती हैं।

फ्यूनेरिया (*Funaria*)

फ्यूनेरिया बहुत ही आम मॉस है। ये विस्तृत रूप से पूरे विश्व में वितरित है। एक जाति *फ्यूनेरिया हाइग्रोमीट्रिका* (*Funaria hygrometrica*) सर्वव्यापी है तथा सभी मॉसेस में सबसे ज्यादा जानी जाती है।

अन्य ब्रायोफाइट्स की भाँति ही जिनका आपने अध्ययन किया है, मॉस पादप की सबसे सुस्पष्ट अवस्था वयस्क युग्मकोद्भिद् होती हैं। इसमें पत्तियां धारण किए मुख्य सतर अक्ष होता है, ये पत्तियां सर्पिलाकार रूप से व्यवस्थित रहती हैं (चित्र 13.10 A)। ये वयस्क युग्मकोद्भिद् युग्मकधर कहलाता है। ये छोटा, लगभग 1-3 से. मी. ऊँचा होता है। पत्तियों में वृंत नहीं होता है परंतु स्पष्ट मध्यशिरा दिखाई पड़ती है। युग्मकधर आधार से मूलाभासों के द्वारा जुड़ा रहता है जो बहुकोशिकीय, शाखित तथा तिरछे पटों (septae) वाले होते हैं। युग्मकोद्भिद् बीजाणु-उद्भिद् धारण किए रहता है जिसमें पाद, स्फोटिका वृंत तथा कैप्सूल होता है (चित्र 13.11)।

युग्मकधर एक तंतुमय, हरे अल्प जीवी प्रथम तंतु से विकसित होता है। प्रथम तंतु विकास की एक निश्चित अवस्था में कलिकाएं उत्पन्न करता है, जो सतर पर्णिल हरे अक्ष लिए युग्मकधर के विकास को आरंभ करता है।

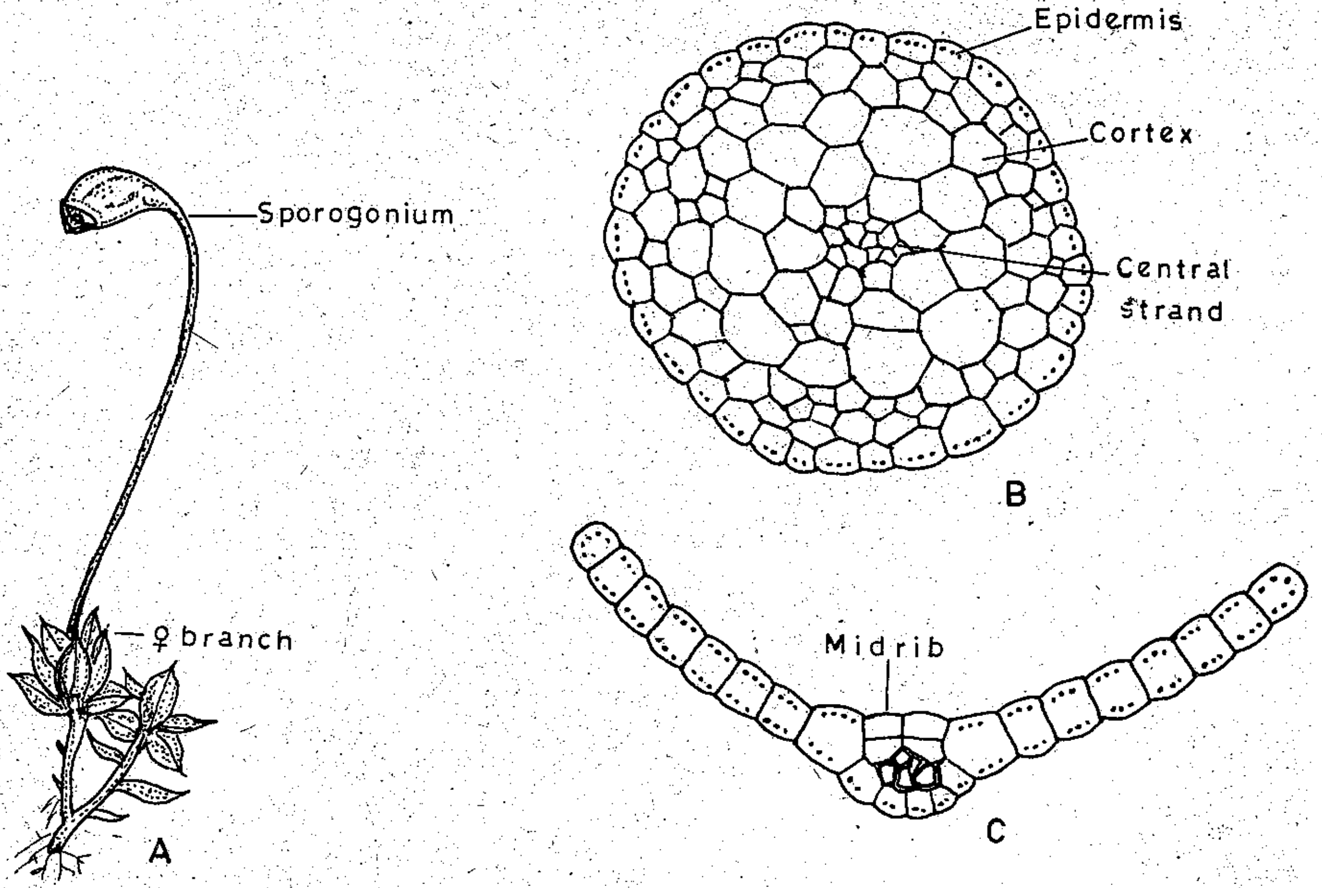

चित्र 13.10 : *फ्यूनेरिया* : A) नर तथा मादा शाखाओं के साथ वयस्क युग्मकधर तथा वयस्क बीजाणु-उद्भिद् भी (स्पोरोगोनियम), B) तने की अनुप्रस्थ काट, C) पत्ती की अनुप्रस्थ काट।

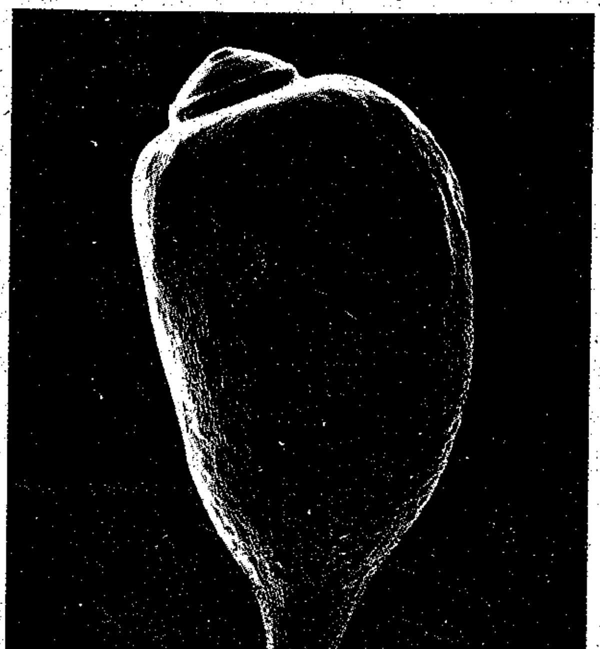

चित्र 13.11 : मॉस कैप्सूल का क्रमवीक्षण इलेक्ट्रॉन माइक्रोग्राफ (scanning electronmicrograph) (पी. दयानंदन के सौजन्य से)।

फ्यूनेरिया
प्रभाग - ब्रायोफ़ाइटा
वर्ग - ब्रायोप्सिडा
उप-वर्ग - ब्राइडी (Bryidae)
गण - फ्यूनेरिएलीज (Funariales)
कुल - फ्यूनेरिएसी (Funariaceae)

आंतरिक संरचना

चित्र 13.10 B में वयस्क तने की अनुप्रस्थ काट को देखिए। इसे तीन क्षेत्रों में बांटा जा सकता है : सबसे अंदर वाला केन्द्रीय बेलन, मध्य वल्कुट तथा बाहरी बाह्यत्वचा । केन्द्रीय बेलन की कोशिकाएं ऊर्ध्वाधर रूप से दीर्घीकृत होती हैं तथा वल्कुट की कोशिकाओं की तुलना में व्यास में कम होती हैं। पूर्णतः वयस्क वल्कुट में सामान्यतः केन्द्रीय बेलन के समीप पतली भित्ति वाली कोशिकाएं तथा बाहर की ओर मोटी भित्ति वाली कोशिकाएं पाई जाती हैं। "पर्ण अनुपथ" (leaf trace) पत्तियों से केन्द्रीय बेलन की ओर विकर्ण बनाते हुए वल्कुट में जाता है। तने के तरुण भाग में स्थित वल्कुटी कोशिकाओं में सामान्यतः क्लोरोप्लास्ट पाये जाते हैं।

पर्ण अनुपथ (leaf trace) - संवहनी ऊतक का वह बंडल जो तने से पत्ती में प्रवेश करता है।

वयस्क पत्ती में सुविकसित मध्यशिरा होती है मध्यशिरा कुछ कोशिकीय मोटाई की होती हैं, जबकि दोनों तरफ के 'पंख' कोशिकाओं की एकल परत से बनते हैं (चित्र 13.10 C)। पत्तियों की कोशिकाएं दीर्घीकृत, पतली भित्ति वाली, आयताकार या चतुष्कोणी तथा क्लोरोप्लास्ट लिए हुए होती हैं। आप उच्च पादपों की पत्तियों का ध्यान करें। क्या यह पत्ती अधिक सरल नहीं है? मध्यशिरा के केन्द्र में पतली कोशिकाओं का एक छोटा केन्द्रीय समूह होता है जो सरल प्रकार का संवहनी रज्जुक (strand) बनाता है। रंध्र अनुपस्थित होते हैं।

बोध प्रश्न 13.8

फ्यूनेरिया के बारे में निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य या असत्य हैं? दिए गए कोष्ठकों में सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) लिखिए।

i) *फ्यूनेरिया* का वयस्क युग्मकोद्भिद्, युग्मकधानीधर कहलाता है। ☐

ii) *फ्यूनेरिया* के मूलाभास *मार्केन्शिया* से भिन्न होते हैं क्योंकि *मार्केन्शिया* में वे बहुकोशिकीय होते हैं तथा उनमें तिरछे पट होते हैं। ☐

iii) पत्ती के पंख कोशिकाओं की कुछ परतों से बनते हैं। ☐

iv) पत्तियों में स्पष्ट मध्यशिरा होती हैं। ☐

13.5 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि

- ब्रायोफ़ाइट्स *एम्ब्रोयोफाइट्स* में सबसे सरल, आदि अ-संवहनी थल पादप हैं। कुछ सांझी विशेषताओं के कारण, ये माना जाता है कि वे हरे शैवालों से विकसित हुए हैं।

- हरे स्वतंत्र युग्मकोद्भिद् तथा बीजाणु-उद्भिद् जो कि आंशिक रूप से उस पर निर्भर करता है, के मध्य पीढ़ियों का एकांतरण होता है। बीजाणु-उद्भिद् सामान्यतः एक छोटा कैप्सूल होता है जिसमें पाद तथा स्फोटिका वृंत उपस्थित या अनुपस्थित हो सकते हैं। युग्मकोद्भिद् प्रथमतंतु से विकसित होता है तथ लैंगिक अंग-स्त्रीधानी एवं पुंधानी धारण किए रहते हैं। ब्रायोफ़ाइट्स समबीजाणुक होते हैं।

- पादपों के लिए थलीय वातावरण की चुनौतियां भूमि से जुड़ाव, निर्जलीकरण, जल का संवहन तथा पुमणुओं और बीजाणुओं का परिक्षेपण हैं। इनका निवारण विकासशील थलीय अनुकूलनों जैसे कि उपत्वचा, क्यूटिकल, रंध्र, वायुरंध्र, मूलाभास, विकासशील युग्मकों की सुरक्षा के लिए कोशिकाओं की बहुकोशिकीय जैकेट तथा स्त्रीधानी में युग्मनज को रोके रखने के द्वारा होता है। कुछ ब्रायोफाइट्स में आदि संवहनी ऊतक-जलवाह कोशिकाएं तथा पोषवाह कोशिकाएं भी विकसित हो जाती हैं।

लिवरवर्ट्स-*रिक्सिया* तथा *मार्केन्शिया* के युग्मकोद्भिद् पृष्ठाधर, थैलसाभ संरचना होते हैं तथा आंतरिक रूप से विभेदित होते हैं। पृष्ठ सतह पर स्थित छिद्र गैसों का आदान-प्रदान करते हैं तथा *मार्केन्शिया* में अधिक विकसित होते हैं। जबकि *पेलिया* में थैलस आंतरिक रूप से बहुत सरल होता है। पर्णिल लिवरवर्ट्स में पत्ती जैसे तथा तने जैसे उपांग होते हैं। *एन्थोसिरोस* का युग्मकोद्भिद् भी पृष्ठाधर होता है, परंतु आंतरिक रूप से विभेदित नहीं होता है। नील-हरित शैवाल *नॉस्टॉक* थैलस की श्लेष्म गुहाओं में रहता है तथा वातावरण की नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करता है।

मॉसेस - *स्फैग्नम* तथा *फ्यूनेरिया* में सतर अक्ष होता है तथा पत्ती जैसी संरचनाएं धारण करता है। *स्फैग्नम* की पत्तीनुमा संरचनाओं में मध्यशिरा नहीं पाई जाती है, जबकि *फ्यूनेरिया* की पत्तियों में मध्यशिरा होती है। दोनों में मुख्य अक्ष आंतरिक रूप से विभिन्न क्षेत्रों में विभेदित होता है।

13.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. ब्रायोफाइट्स के जीवन चक्र को आरेखी रूप से दर्शाइए, तथा उसके विशेष गुणों का उल्लेख कीजिए।

2. ब्रायोफाइट्स तथा हरे शैवालों में पाए जाने वाले समान गुणों को बताइए।

....

....

....

....

....

....

3. कॉलम 1 में दिए गए वंशों का कॉलम 2 में दिए गए उनके गुणों से मिलान कीजिए।

कॉलम 1	कॉलम 2
i) *रिक्सिया* ( )	क) ढोलाकार छिद्र
ii) *मार्केन्शिया* ( )	ख) रोज़ेट/पुष्पाकार
iii) *एन्थोरिरोस* ( )	ग) मध्यशिरा युक्त पत्तियां
iv) *स्फैग्नम* ( )	घ) नवशाखा
v) *फ्यूनेरिया* ( )	च) *नॉस्टॉक*

4. निम्नलिखित वक्तव्य सत्य हैं या असत्य हैं यह दिए गए कोष्ठकों में सत्य के लिए स अथवा असत्य के लिए अ लिखकर बताइए।

i) *एन्थोसिरोस* का युग्मकोद्भिद् उच्च कोटि का विभेदन दर्शाता है। ☐

ii) प्रथमतंतु द्विगुणित होता है। ☐

iii) ब्रायोफाइट्स को निषेचन के लिए जल की आवश्यकता नहीं होती हैं। ☐

iv) ब्रायोफाइट्स में युग्मकोद्भिद् अवस्था प्रमुख होती है। ☐

5) निम्नलिखित में विभेद कीजिए :

i) लिवरवर्ट्स तथा मॉसेस के मूलाभास।

....

....

....

ii) *रिक्सिया* तथा *मार्केन्शिया* में शल्कों की व्यवस्था।

....

....

iii) ब्रायोफ़ाइट्स की बीजाणु-उद्भिद् तथा युग्मकोद्भिद् पीढ़ियां।

....

....

13.7 उत्तर

बोध प्रश्न

13.1 अ) i) युग्मकोद्भिद्, ii) मूलाभास, iii) अगुणित, iv) निर्भर

ब) i) स, ii) स, iii) अ, iv) स ।

13.2 अ) मृदा के साथ स्थिरता, जल तथा खनिजों का अवशोषण तथा उनका परिवहन, वायवीय भागों तथा युग्मकों का शुष्कन तथा बीजाणुओं का परिक्षेपण।

ब) i) बंध्य परत

ii) जलवाह कोशिकाएं यानि हाइड्रोइड्स, पोषवाह कोशिकाएं यानि लेप्टोइड्स

iii) वाहिनिकाओं/वाहिकाओं, लिग्नीकृत नहीं

iv) स्पोरोपोलेनिन

13.3 i) रोज़ेट/पुष्पाकार

ii) चिकनी भित्ति वाले, गुलिकीय

iii) एककोशिकीय, बहुकोशिकीय

iv) अवशेषी छिद्रों

13.4 i) वृंतीय

ii) षट्कोणीय, वायु कोष्ठ

iii) प्रकाश संश्लेषी

iv) श्लेष्म, तेल काया।

13.5 i) जंगरमेनिएलीज

ii) नहीं

iii) चिकने

iv) उपस्थित

13.6 i) गुलिकीय, शल्क

ii) नॉस्टॉक

iii) पाइरीनॉइड्स

iv) प्रकाश संश्लेषी, संचयी।

13.7 i) क्लोरोफिल युक्त, काचाभ

ii) बहुकोशिकीय, शाखित

iii) रोमगुच्छ या कोमा

iv) मजबूती, छिद्रों

v) रिटॉर्ट/भभका

13.8 i) अ, ii) अ, iii) अ, iv) स।

अंत में कुछ प्रश्न

1. चित्र 13.2 देखिए।

2. क्लोरोफिल, कैरोटिनॉइड, ऐमिलोस, ऐमिलोपेक्टिन, पुमणु, प्रतोद कशाभ, सेलुलोस, इनका वर्णन कीजिए।

3. i) ख, ii) क, iii) च, iv) घ, v) ग।

4. i) अ, ii) अ, iii) अ, iv) स।

5. i) लिवरवर्ट्स - एककोशिकीय, अशाखित

मॉसेस - बहुकोशिकीय, शाखित

ii) *रिक्सियां* - एक कतार में

मार्केन्शिया - बहुत सी कतारों में

iii) बीजाणु-उद्भिद् - द्विगुणित (2n), अलैंगिक प्रजनन करते हैं, युग्मकोद्भिद् पर निर्भर रहते हैं।

युग्मकोद्भिद् - अगुणित (n), लैंगिक प्रजनन करते हैं, प्रभावी, स्वतंत्र होते हैं।

नोट : उपर्युक्त विशेषताओं को विस्तृत कर लीजिए तथा चित्र भी बनाइए।

इकाई 14 ब्रायोफ़ाइट्स में प्रजनन तथा विकास की प्रवृत्तियाँ

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

14.2 ब्रायोफ़ाइट्स में लैंगिक प्रजनन की सामान्य विशेषताएं

14.3 प्रतिनिधि वंशों में प्रजनन का अध्ययन

रिक्सिया (Riccia)
मार्केन्शिया (Marchantia)
पेलिया (Pellia)
एन्थोसिरोस (Anthoceros)
स्फैग्नम (Sphagnum)
फ्यूनेरिया (Funaria)

14.4 ब्रायोफ़ाइट्स में बीजाणु-उद्‌भिद् का विकास

14.5 सारांश

14.6 अंत में कुछ प्रश्न

14.7 उत्तर

14.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने ब्रायोफ़ाइट्स के आकारिकीय गुणों के बारे में पढ़ा। आपने यह भी पढ़ा कि शैवाल जलीय हैं तथा ब्रायोफ़ाइट्स प्रथम थल पादप हैं। आपने ध्यान दिया होगा कि इस परिवर्तन के दौरान, जलीय से थलीय आवास के विकास के क्रम में, नए थलीय पर्यावरण को अपनाने में आकारिकीय गुणों में कई परिवर्तन हुए। थलीय पर्यावरण की ओर इस स्थानांतरण में लैंगिक प्रजनन से संबंधित में अनेक समस्याओं का भी सामना करना पड़ा।

इस इकाई में आप नए वातावरण के द्वारा उत्पन्न चुनौतियों का सामना करने के लिए इन पादपों के द्वारा अपनाए गए प्रजनन के तरीकों के बारे में जानेंगे। हम विस्तार से लैंगिक अंगों की संरचना, बीजाणु-उद्‌भिद् तथा युग्मकोद्‌भिद् के विकास तथा कुछ प्रतिनिधि वंशों में बीजाणु-उद्‌भिद् के विकास के बारे में भी पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- ब्रायोफ़ाइट्स में प्रजनन की सामान्य विशेषताओं को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- *रिक्सिया, मार्केन्शिया, पेलिया, एन्थोसिरोस, स्फैग्नम* तथा *फ्यूनेरिया* में नर तथा मादा प्रजनन अंगों की संरचना तथा परिवर्धन की तुलना कर सकेंगे,
- उपर्युक्त वंशों के बीजाणु-उद्‌भिद् की संरचना तथा परिवर्धन की तुलना कर सकेंगे,
- विभिन्न वर्गको यानि टैक्सोन में कायिक प्रजनन के तरीकों को बता सकेंगे तथा
- ब्रायोफ़ाइट्स में बीजाणु-उद्‌भिद् की संरचना में विकासात्मक प्रवृत्तियों का वर्णन कर सकेंगे।

14.2 ब्रायोफ़ाइट्स में लैंगिक प्रजनन की सामान्य विशेषताएं

शैवाल एवं कवक की भाँति ही, ब्रायोफ़ाइट्स में भी, प्रजनन या तो कायिक तरीकों से (अलैंगिक तरीके भी इसमें सम्मिलित हैं) अथवा लैंगिक तरीके से होता है।

कायिक प्रजनन के तरीके निम्नलिखित है :

i) पुराने पश्च भागों का मरना व सड़ना जिसके फलस्वरूप शाखाएं अलग हो जाती हैं और नए पादपों का निर्माण करती हैं, तथा

ii) जेमी (gemmae), कंद (tuber) तथा अपस्थानिक (adventitious) शाखाओं का निर्माण।

लैंगिक प्रजनन का तरीका सभी ब्रायोफ़ाइट्स में लगभग समान होता है।

नीचे दिये गये विवरण में हम इस समूह के पादपों में लैंगिक प्रजनन के सामान्य तरीकों के बारे में पढ़ेंगे।

शैवाल में प्रजनन के बारे में पढ़ते समय, आपने ध्यान दिया होगा कि आदि प्रकारों में लैंगिक प्रजनन समयुग्मकी (isogamous) था। विकास के दौरान, अन्य प्रकार के प्रजनन के तरीके जैसे कि असमयुग्मकी (anisogamous) तथा विषमयुग्मकी (oogamous) विकसित हुए। चूंकि ब्रायोफाइट्स शैवालों की तुलना में अधिक उन्नत हैं, उनमें सिर्फ विषमयुग्मकी प्रकार का प्रजनन पाया गया है। आपको ध्यान होगा कि विषमयुग्मकी प्रजनन में बड़े, अचल मादा युग्मक का छोटे चल नर युग्मक के साथ मिलन होता है।

जल से थल पर अभिगमन के दौरान, युग्मकों की सुरक्षा की आवश्यकता हुई। अतः लैंगिक अंगों ने बंध्य कोशिकाओं की एक परत विकसित कर ली जो युग्मकों को घेरे हुए एक जैकेट बनाती है। आपने पढ़ा है कि ब्रायोफ़ाइट्स में नर तथा मादा प्रजनन अंग, क्रमशः पुंधानी तथा स्त्रीधानी कहलाते हैं। पुंधानी पुमणु मातृ कोशिकाओं का पिंड तथा पुंकोशिकाएं (androcytes) होती हैं और यह संरचना सुरक्षात्मक बंध्य कोशिकाओं की एक परत से घिरी होती है (चित्र 14.1 F), प्रत्येक पुंकोशिका एक द्विकशाभी चल पुमणु को उत्पन्न करती है। पुंधानियों की स्थिति तथा आकार विभिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न होती हैं।

ब्रायोफ़ाइट्स, टेरिडोफ़ाइट्स तथा जिम्नोस्पर्म्स की स्त्रीधानी इतनी विशेष होती हैं, कि ये तीनों समूह सामूहिक रूप से आर्कीगोनिएटी (**Archegoniatae**) कहलाते हैं। स्त्रीधानी बहुकोशिकीय, कमोवेश फ्लास्क के आकार की संरचना होती है। इसका फूला हुआ आधारीय भाग अंडधा (venter) कहलाता है तथा ऊपरी दीर्घीकृत भाग ग्रीवा (neck) कहलाता है। इसमें बंध्य जैकेट से घिरी हुई कोशिकाओं की एक अक्षीय कतार (axial) होती है। कोशिकाओं की अक्षीय कतार को, ग्रीवा नाल कोशिकाओं (neck canal cells, जिनकी संख्या जाति के अनुसार होती हैं), अंडधा नाल कोशिका (ventral canal cell) तथा एक अपेक्षाकृत बड़ी आधार कोशिका (basal cell), अंड (egg) या अंडगोल (oosphere) में विभेदित किया जा सकता है (चित्र 14.2 H)। स्त्रीधानी अंड को तथा निषेचन के पश्चात् परिवर्धनशील भ्रूण को पोषण तथा सुरक्षा प्रदान करती है। ब्रायोफ़ाइट्स में नर युग्मक पक्ष्माभी (ciliated) होते हैं तथा इसलिए स्त्रीधानी की ग्रीवा तक पहुंचने के लिए तथा ग्रीवा नाल से अंडधा तक तैर कर पहुंचने के लिए भी उन्हें जल की आवश्यकता होती है। एक एकल पुमणु अंड को निषेचित करता है तथा युग्मनज का निर्माण होता है। युग्मनज तुरंत ही बढ़ने लगता है तथा लगातार कोशिका विभाजनों (समसूत्री) के द्वारा बहुकोशिकीय भ्रूण में विकसित होता है। आप नोट कर सकते हैं कि इसमें उच्च पादपों की भाँति भ्रूण के लिए विश्रांति काल (resting period) नहीं होता है। आप ध्यान कर सकते हैं कि उच्च पादपों में बीज के अंकुरण के लिए अनुकूल परिस्थितियों के होने तक भ्रूण प्रसुप्त (dormant) अवस्था में रहता है।

भ्रूण मुक्त नहीं होता है, परंतु स्त्रीधानी के अंदर ही रहता है। निषेचन के पश्चात् स्त्रीधानी की भित्ति का आधारीय भाग बढ़ जाता हैं, बहुपरती हो जाता है तथा परिवर्धनशील भ्रूण को घेरे हुए एक सुरक्षात्मक आवरण बनाता है जो अंततः बीजाणु-उद्भिद् में विकसित होता है। सुरक्षात्मक आवरण **गोपक (calyptra)** कहलाता है। बीजाणु-उद्भिद् का विकास बहुत सीमित होता है तथा अल्प भ्रूणोद्भव (embryogeny) के बाद जल्दी ही बीजाणु का निर्माण शुरू हो जाता है। बीजाणु-उद्भिद् (sporophyte) या बीजाणुजन (sporogonium) एक सरल संरचना होती है। अन्य थल पादपों के विपरीत, ये तने, पत्ती तथा जड़ों में विभेदित नहीं होता है। सामान्यतः, ये पाद (foot), स्फोटिका वृंत (seta) तथा अंतस्थ (terminal) बीजाणु उत्पन्न करने वाले कैप्सूल या बीजाणुधानी (sporangium) में विभेदित किया जा सकता है। कुछ जातियों में स्फोटिका वृंत अनुपस्थित होता है तथा कभी-कभी पाद भी। बीजाणु मातृ कोशिकाएं (spore mother cells) कैप्सूल के अंदर विकसित होती हैं तथा ये बीजाणु-उद्भिद् पीढ़ी की अंतिम अवस्था को प्रदर्शित क... हैं। बीजाणु मातृ कोशिकाएं अर्धसूत्री विभाजन के द्वारा विभाजित होकर अगुणित बीजाणुओं के चतुष्क (tetrads) बनाती हैं जो सामान्यतः कैप्सूल से निकलने से पहले अलग हो जाते हैं। जैसा कि आपने पढ़ा है कि ब्रायोफ़ाइट्स में, बीजाणु-उद्भिद् का मिट्टी से कोई संबन्ध नहीं होता है तथा ये अपने जल तथा खनिज पोषक तत्वों के लिए पूर्णतः युग्मकोद्भिद् पर निर्भर होता है। चूंकि अधिकांश ब्रायोफ़ाइट्स में बीजाणु-उद्भिद् में क्लोरोप्लास्ट होते हैं अतः ये प्रकाश संश्लेषण करने में समर्थ होता है।

ब्रायोफ़ाइट्स में एक जाति द्वारा उत्पन्न किए जाने वाले बीजाणु आकारिकी में समान होते हैं। इस प्रकार की स्थिति समबीजाणुकता (homospory) कहलाती है। ब्रायोफ़ाइट्स में, बीजाणु में एक बाहरी सुरक्षात्मक आवरण (coat) होता है जो दो परतों का बना होता है। बाहरी बीजाणु बहिश्चोल (exospore) तथा भीतरी बीजाणु अंतश्चोल कहलाता है। ये अगुणित (haploid) बीजाणु अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित होते हैं तथा किशोर या प्रथम तंतु (protonema) प्रावस्था उत्पन्न करते हैं। लिवरवर्ट्स में प्रथम तंतु अल्प काल का हो... है तथा जल्दी ही वयस्क पादप निर्मित करता है। मॉसिस में प्रथमतंतु कलिकाएं उत्पन्न करता है जो पर्णिल युग्मकोद्भिद् में विकसित हो जाती हैं। वयस्क होने पर युग्मकोद्भिद् लैंगिक अंग युग्मकधानियां विकसित करना ...भ कर देता है तथा चक्र पुनः दोहराया जाता है।

बोध प्रश्न 14.1

ब्रायोफ़ाइट्स के बारे में निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य या असत्य हैं? सत्य के लिए (स) तथा असत्य के (अ) दिए गए कोष्ठकों में लिखिए।

i) ब्रायोफ़ाइट्स विषमयुग्मकी प्रकार का लैंगिक प्रजनन दर्शाते हैं। ☐

ii) एस्कोधानी (ascogonium) मादा प्रजनन अंग हैं। ☐

iii) पुंधानी नर लैंगिक अंग हैं। ☐

iv) ब्रायोफ़ाइट्स को निषेचन के लिए जल की आवश्यकता नहीं होती है। ☐

v) बीजाणु-उद्भिद् तने, पत्तियों तथा जड़ों में विभेदित रहता है। ☐

vi) बीजाणु-उद्भिद् जल तथा खनिज पोषक तत्वों के लिए युग्मकोद्भिद् पर निर्भर रहता है। ☐

vii) नर युग्मक द्विकशाभी होते हैं। ☐

viii) भ्रूण स्त्रीधानी के भीतर ही रहता है। ☐

14.3 प्रतिनिधि वंशों में प्रजनन का अध्ययन

पिछली इकाई में आपने पढ़ा कि *रिक्सिया* ब्रायोफाइट्स का सरलतम सदस्य है, अतः हम अपना अध्ययन इस पादप से आरंभ करते हैं। इस अध्याय में आप इस पादप में प्रजनन के प्रकार, युग्मकधानियों के परिवर्धन तथा बीजाणु-उद्भिद् का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

14.3.1 *रिक्सिया* (*Riccia*)

कायिक प्रजनन

ये प्रजनन का सबसे सरल तरीका है। *रिक्सिया* में यह पश्च सिरे से थैलस के मृत हो जाने तथा सड़ने से होता है। आपने पढ़ा था कि *रिक्सिया* में द्विभाजी शाखन दिखाई पड़ता है (इकाई 13, चित्र, 13.3 A से C तक)। जब क्षय (सड़न) द्विभाजन तक पहुँच जाता है तो दो जीवित शाखाएं अलग हो जाती हैं तथा स्वतंत्र रूप से उग जाती हैं इस प्रकार दो नए थैलस बन जाते हैं।

कुछ जातियों में थैलस की अधर सतह से अपस्थानिक शाखाएं उगती हैं, तथा इन शाखाओं के अलग होने से नए थैलस बनते हैं, उदाहरण के लिए *रिक्सिया फ्लूटैन्स* (*Riccia fluitans*) (जलीय जाति) में इस प्रकार की अपस्थानिक शाखाएं बड़ी मात्रा में बनती हैं।

कुछ जातियों जैसे *रिक्सिया डिस्कलर* (*R. discolor*) में वर्धन काल (growing season) के अंत में थैलस का शीर्ष नीचे मिट्टी की ओर बढ़ता है तथा मोटा हो जाता है। अगली ऋतु में यह वृद्धि करता है तथा नया पादप बनाता है। कभी-कभी *रिक्सिया ग्लोका* (*Riccia glauca*) में तरुण थैलस मूलाभास के शीर्ष पर बनता है तथा इसमें मूलाभास का शीर्ष अंकुरण नलिका की भाँति कार्य करता है तथा थैलस निर्मित करता है। *रिक्सिया डिस्कलर* तथा *रिक्सिया बिलैर्डिएरी* (*R. billardieri*) जातियों में, वर्धन काल के अंत में थैलस शाखाओं के शीर्ष पर चिरकालिक कंद (perennating tubers) विकसित करते हैं (चित्र 14.1 A)। ये प्रतिकूल परिस्थितियों को पार करने में सहायक होते हैं तथा कायिक प्रजनन भी करते हैं।

लैंगिक प्रजनन

आपने पढ़ा है कि नर तथा मादा प्रजनन अंग क्रमशः पुंधानी तथा स्त्रीधानी होते हैं। *रिक्सिया* की कुछ जातियों में दोनों प्रजनन अंग एक ही थैलस पर उगते हैं। इस प्रकार की जातियां उभयलिंगाश्रयी कहलाती हैं। *रिक्सिया क्रिस्टलीना* (*R. crystallina*), *रिक्सिया ग्लोका* तथा *रिक्सिया गेंगेटिका* (*R. gangetica*) उभयलिंगाश्रयी जातियों के उदाहरण हैं। जब कि कुछ जातियों में पुंधानी तथा स्त्रीधानी अलग-अलग थैलसों पर विकसित होती हैं। ये जातियां एकलिंगाश्रयी (dioecious) कहलाती हैं। एकलिंगाश्रयी जातियों के उदाहरण हैं *रिक्सिया डिस्कलर, रिक्सिया फ्रोस्टाई* (*R. frostii*), *रिक्सिया बिस्कॉफी* (*R. bischoffii*), *रिक्सिया पर्सोनाई* (*R. perssonii*) तथा *रिक्सिया कर्टिसाई* (*R. curtisii*)। आपको ध्यान होगा कि *रिक्सिया* के थैलस की पृष्ठ सतह पर एक सुस्पष्ट मध्य अनुदैर्ध्य खांच होती हैं। पुंधानी तथा स्त्रीधानी थैलस के अंदर खांच के किनारे-किनारे एकल रूप से विकसित होते हैं। (इकाई 13, चित्र 13.3 B, C)। ये लगातार बनते रहते हैं और इसलिए उनके परिवर्धन की सभी अवस्थाओं का एक ही थैलस में निरीक्षण करना संभव हैं। पुंधानी तथा स्त्रीधानी दोनों अग्राभिसारी (acropetal) रूप में उगती हैं, यानि कि सबसे छोटी यानि नवीन पालि (lobe) के शीर्ष की ओर होती है। उभयलिंगाश्रयी थैलस में, पुंधानी तथा स्त्रीधानी उत्तरोत्तर (एक के बाद एक) रूप में निर्मित होती हैं।

लैंगिक अंगों का परिवर्धन थैलस की पृष्ठ सतह पर किसी भी एक कोशिका से आरंभ हो सकता है। यह कोशिका, शीर्ष कोशिका के निकट होती है। धीरे-धीरे उनके चारों ओर के ऊतक में भी वृद्धि होती है इसके कारण पुंधानी या स्त्रीधानी जो भी हो वह धीरे-धीरे परिवर्ती ऊतक के ऊपर उठ जाने के कारण बनने वाली गुहाओं में धंस जाती है। पुंधानीय कोष्ठ बाहर की ओर थैलस की पृष्ठ सतह पर पतली बेलनाकार नलिकाओं के द्वारा खुलते हैं तथा पुंधानी पूर्णतः उनमें धंसी रहती है। परंतु स्त्रीधानी में, ग्रीवा स्त्रीधानीय कोष्ठ के ऊपर निकली रहती है।

पुंधानी का परिवर्धन

सतही कोशिका (superficial cell) (किसी भी संरचना की सतह पर उपस्थित कोशिका) जो पुंधानी में विकसित होती है वह पुंधानी आरंभक (antheridial initial) कहलाती है (14.1 B)। यह पेपिलायुक्त (papillate) यानि कि पादप के एक छोटे माँसल उभार के रूप में होती है तथा अनुप्रस्थ काट के द्वारा निचली आधार कोशिका (basal cell), जो थैलस में धंसी रहती है, तथा बाहरी कोशिका (outer cell), जो थैलस की सतह के ऊपर निकली रहती में विभाजित हो जाती हैं (चित्र 14.1 C)। आधार कोशिका

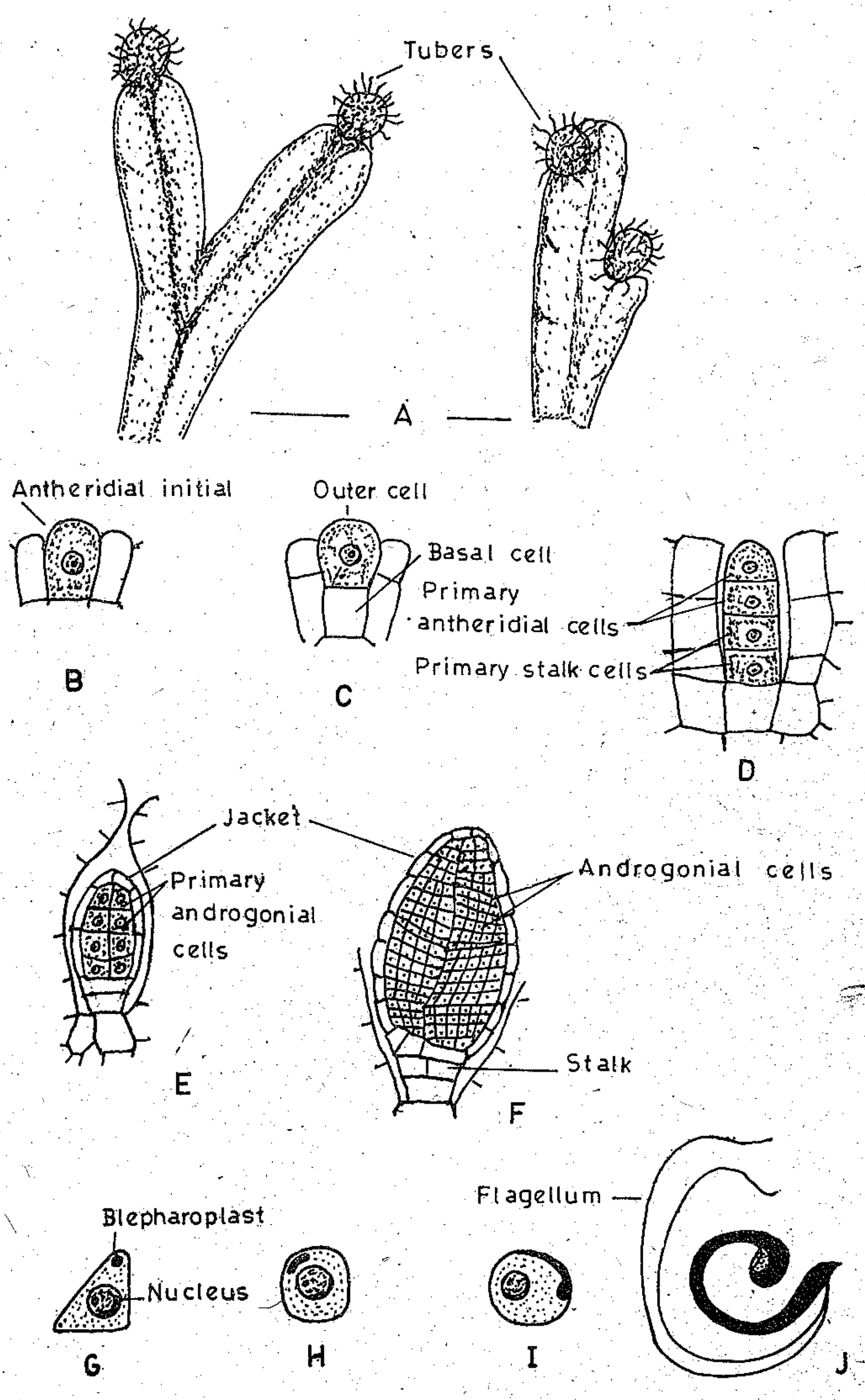

चित्र 14.1 : *रिक्सिया* **: A) कंदों को दर्शाते हुए थैलस, B-E) पुंधानी के परिवर्धन की अवस्थाएं, F) एक वयस्क पुंधानी, G-J) पुंकोशिका के पुमणु में रूपांतरण की अवस्थाएं।**

पुंधानी का वृंत बनाती है। बाकी की पुंधानी बाहरी कोशिका से निर्मित होती है। अनुप्रस्थ विभाजनों के द्वारा बाहरी कोशिका चार अध्यारोपित (superimposed) कोशिकाओं का तंतु बनाती है (चित्र 14.1 D)। इस तंतु की ऊपरी दो कोशिकाएं प्राथमिक पुंधानी कोशिकाएं तथा दो निचली वाली प्राथमिक वृंत कोशिकाएं होती हैं जो आधारीय कोशिका के साथ मिलकर पुंधानी का वृंत बनाती हैं। प्राथमिक पुंधानी कोशिकाएं एक दूसरे से समकोण बनाते हुए दो उत्तरोत्तर अनुदैर्ध्य विभाजनों के द्वारा, कोशिकाओं के दो सोपान (tier) बनाती हैं जिनमें से प्रत्येक में चार कोशिकाएं होती हैं। उसके बाद इन कोशिकाओं में परिनतिक (periclinal) विभाजन के फलस्वरूप आठ बंध्य जैकेट आरंभकों की बाहरी परत तथा आठ उर्वर (fertile) प्राथमिक पुंजनक कोशिकाओं (primary androgonial cells) का केन्द्रीय समूह बनता है (चित्र 14.1 E)। जैकेट आरंभक आगे विभाजनों के द्वारा पुंधानी की एक परत की जैकेट बनाते हैं, जबकि प्राथमिक पुंजनक कोशिकाएं बारबार विभाजित होती हैं तथा वयस्क पुंधानी में बड़ी संख्या में पुंमातृ कोशिकाएं (androcyte mother cells) बनाती हैं (चित्र 14.1 F)।

पुंधानी में प्रत्येक मातृ कोशिका विकर्ण बनाते हुए विभाजित होकर दो त्रिभुजाकार पुंकोशिकाएं या पुमणु मातृ कोशिकाएं बनाती हैं (चित्र 14.1 G)। इसके बाद ये पुमणुओं में रूपांतरित हो जाती हैं। प्रत्येक पुमणु मातृ कोशिका में एक छोटी अतिरिक्त केन्द्रीय कणिका जो ब्लेफैरोप्लास्ट (blepharoplast) कहलाती है वह परिधि के निकट प्रकट होती है (चित्र 14.1 H)। पुमणु मातृ कोशिका गोल हो जाती हैं तथा ब्लेफैरोप्लास्ट एक रस्सी की तरह कोशिका के चारों ओर लगभग तीन-चौथाई लंबाई तक लंबा होकर विस्तारित हो जाता है (चित्र 14.1 I)। केन्द्रक आधे चंद्र के आकार का हो जाता है तथा ब्लेफैरोप्लास्ट के संपर्क में आ जाता है। ब्लेफैरोप्लास्ट का एक सिरा काफी मोटा होकर सिर बनाता है, जिसमें से दो लंबे कशाभ उत्पन्न होते हैं। दोनों कशाभ आकारिकी में समान परंतु कार्य में भिन्न होते हैं (चित्र 14.1 J)। उनमें से एक नोदन (propulsion) का कार्य करता है तथा दूसरा घूर्णन (rotation) तथा दिशा बदलने का कार्य करता है। कोशिकाद्रव्य का एक छोटा भाग पुमणु के पश्च सिरे से एक छोटे आशय (vesicle) के रूप में जुड़ा रहता है।

वयस्क पुंधानी एक अंडाकार वृंतीय संरचना होती है जिसका आधार चपटा तथा शीर्ष गोल या शंकु रूपी होता है। ये जल अवशोषित करके फट जाती हैं। पुमणुओं को लिए हुए अर्धतरल श्लेष्मीय पिंड पुंधानी में से पुंधानी कोष्ठ की नाल के जरिए बाहर निकल आता है, जो कि आपको ध्यान होगा कि थैलस की पृष्ठ सतह पर होती है।

स्त्रीधानी का परिवर्धन

पुंधानी की भाँति ही, स्त्रीधानी भी पृष्ठ सतह पर शीर्ष कोशिका के पास की एक सतही पैपिला युक्त कोशिका से विकसित होती है जो स्त्रीधानी आरंभक (archegonial initial) की भांति कार्य करती हैं (चित्र 14.2 A)। पुंधानी आरंभक की तरह ही यह भी अनुप्रस्थ भित्ति के द्वारा एक आधार कोशिका (basal cell) तथा एक बाह्य कोशिका (outer cell) में विकसित होती है (चित्र 14.2 B)। आधार कोशिका स्त्रीधानी का धंसा हुआ भाग बनाती है। बाह्य कोशिका में तीन उत्तरोत्तर अनुदैर्ध्य प्रतिच्छेदी (intersecting) भित्तियां प्रकट होती हैं, जिसके फलस्वरूप तीन परिधीय आरंभक (peripheral initials) बनते हैं जो प्राथमिक अक्षीय कोशिका को घेरे रहते हैं।

इस अवस्था में स्त्रीधानी की अनुदैर्ध्य काट में बड़ी प्राथमिक अक्षीय कोशिका (primary axial cell) दिखाई पड़ती है जो सिर्फ दो परिधीय आरंभकों (peripheral initials) से घिरी रहती है (चित्र 14.2 C), परंतु तीनों परिधीय आरंभकों को अनुप्रस्थ काट में देखा जा सकता है (चित्र 14.2 D)। ये तीनों परिधीय आरंभक पुनः अरीय अनुदैर्ध्य भित्तियों (radial longitudinal walls) द्वारा विभाजित होकर छह जैकेट आरंभक बनाते हैं (चित्र 14.2 E)। जैकेट आरंभक (jacket initials) भी अनुप्रस्थ भित्तियों द्वारा विभाजित होकर दो अध्यारोपित सोपान (superimposed tier) बनाते हैं जिनमें से प्रत्येक में छह कोशिकाएं होती हैं। कोशिकाओं का ऊपरी सोपान नलिका जैसी ग्रीवा बनाता है जिसमें 6-9 कोशिका ऊँचाई की छह अनुदैर्ध्य कतारें होती हैं। कोशिकाओं का निचला सोपान अंडधा (venter) बनाता है।

परिधीय आरंभकों के विभाजन के साथ-साथ ही, प्राथमिक अक्षीय कोशिका भी अनुप्रस्थ भित्ति द्वारा विभाजित होकर ऊपरी-छोटी प्राथमिक आवरण कोशिका (cover cell) तथा निचली बड़ी केन्द्रीय

कोशिका (central cell) बनाती है (चित्र 14.2 F)। छोटी प्राथमिक आवरण कोशिका (primary cover cell), दो उत्तरोत्तर अनुदैर्ध्य भित्तियों के द्वारा जो एक दूसरे से समकोण बनाती हैं, चार समान आवरण कोशिकाएं बनाती हैं। केन्द्रीय कोशिका अनुप्रस्थ रूप से प्राथमिक ग्रीवा नाल कोशिका (neck initials) तथा प्राथमिक अंडधा (venter initials) कोशिका में विभाजित होती है (चित्र 14.2 G)। प्राथमिक ग्रीवा नाल कोशिका, अधिक अनुप्रस्थ विभाजनों के द्वारा, सामान्यत: चार ग्रीवा नाल कोशिकाओं की अनुदैर्ध्य कतार स्त्रीधानी की ग्रीवा में बनाती है। प्राथमिक अंडधा कोशिका आगे एक छोटी अंडधा नाल कोशिका (ventral canal cell) तथा बड़े अंड (egg) में विभाजित होती है (चित्र 14.2 H)।

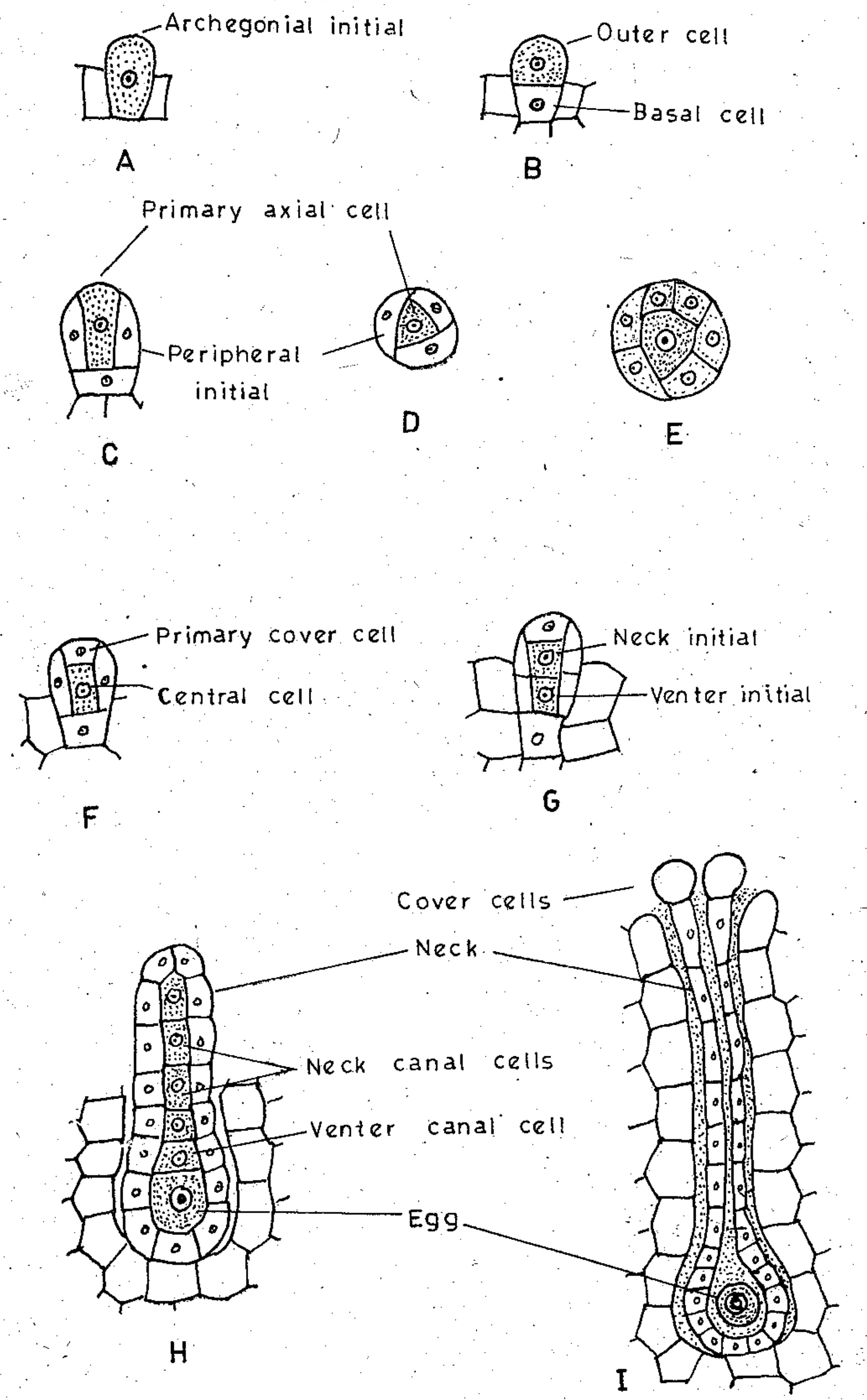

चित्र 14.2 : *रिक्सिया* : A-H) स्त्रीधानी के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, I) निषेचन के ठीक पूर्व एक वयस्क स्त्रीधानी।

वयस्क होने पर, ग्रीवा नाल कोशिकाएं तथा अंडधा नाल कोशिकाएं विघटित होकर एक श्लेष्मीय पिंड बनाती हैं, जो जल को अवशोषित करके फूल जाता है तथा इस कारण आवरण कोशिकाएं अलग हो जाती हैं। इसके फलस्वरूप पुमणुओं के प्रवेश के लिए एक खुली नाल बन जाती है (चित्र 14.2 I)।

जैसा कि आपने पहले पढ़ा है कि पुंधानी जब जल के संपर्क में आती हैं तो फट जाती हैं तथा पुमणु मुक्त हो जाते हैं। पुमणु जल की परत में तैरकर स्त्रीधानी तक पहुंच जाते हैं। जल की परत वर्षा या भारी ओस के बाद सामान्यतः पृष्ठ खाँच में उपलब्ध होती हैं। जब पुमणु स्त्रीधानी के समीप आते हैं तो वे रसायन अनुचलनी रूप से (chemotactically) स्त्रीधानी की खुली ग्रीवा की ओर आकर्षित हो जाते हैं। रसायन अनुचलनी पदार्थ सामान्यतः उस श्लेष्म में उपस्थित रहते हैं जो ग्रीवा नाल कोशिकाओं तथा अंडधा नाल कोशिकाओं के विघटन से बनता है। बहुत से पुमणु ग्रीवा तक तथा ग्रीवा नाल के अंदर तैर कर पहुँच जाते हैं, परंतु सिर्फ एक अंड के भीतर प्रवेश करता है। पुमणु के अंड के केन्द्रक से संयुग्मन से युग्मनज बनता है (चित्र 14.3 A)।

भ्रूण का परिवर्धन

परिनतिक विभाजन – वह कोशिका विभाजन जो किसी अंग की सतह के समानान्तर होता है।

अपनतिक विभाजन – पादप कोशिका का वह विभाजन जो अंग की सतह के लंब अक्ष में होता है।

जैसा कि आपने पहले पढ़ा है कि युग्मनज बीजाणु-उद्भिद् पीढ़ी की प्रथम कोशिका है। युग्मनज बनने के तुरंत बाद ही समसूत्री रूप से अनुप्रस्थ विभाजन के द्वारा ये दो कोशिकाओं में विभाजित हो जाता है (चित्र 14.3 B), जो पुनः एक दूसरे से समकोण बनाते हुए दो अनुदैर्ध्य भित्तियों द्वारा विभाजित होता है जिससे आठ समान कोशिकाएं बन जाती हैं (चित्र 14.3 C, पीछे की चार कोशिकाएं नहीं दिखाई पड़ रही हैं)। ये गोपक (calyptra) द्वारा सुरक्षित रहती हैं। ये अवस्था अष्टांशक (octant) अवस्था कहलाती है। इसके बाद आगे के विभाजन बिना किसी निश्चित क्रम के संपन्न होते हैं, तथा 20 से 40 कोशिकाओं का गोलाकार पिंड बन जाता है (चित्र 14.3 D)। इस पिंड में परिनतिक विभाजनों के फलस्वरूप एक बाहरी परत जो बहिःस्तर (amphithecium) कहलाती है तथा भीतरी कोशिकाओं का केन्द्रीय पिंड जो अंतःस्तर (endothecium) कहलाता है, बन जाता है (चित्र 14.3 E)। बहिःस्तर आगे विभाजनों के द्वारा स्पोरोगोनियम की एकल परती आच्छद बनाता है। इस परत की कोशिकाएं मुख्यतः लंबाई और चौड़ाई में बढ़ती हैं तथा अरीय भित्तियों (अपनतिक विभाजनों) के द्वारा विभाजित होती हैं। अंतःस्तर बीजाणुजन (sporogenous) कोशिकाओं की प्रथम पीढ़ी को बनाता है जो प्रप्रसूतक (archesporium) कहलाता है। बीजाणुजन कोशिकाओं में आखिरी विभाजन के फलस्वरूप विभवी बीजाणु मातृ कोशिकाएं (spore mother cells) बन जाती हैं, जो बीजाणुकोशिका (sporocyte) कहलाती हैं (चित्र 14.3 F)। स्पोरोगोनियम की बाहरी परत विघटित हो जाती है, परंतु इस परत के विघटन का समय विभिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न होता है। विभाजित होने वाली बीजाणु मातृ कोशिकाएं सामान्यतः बड़ी मात्रा में श्यान (viscous) पोषक तरल से घिरी रहती हैं जो विकासशील बीजाणु मातृ कोशिकाओं तथा बीजाणुओं को पोषण प्रदान करती हैं। प्रत्येक बीजाणु मातृ कोशिका अर्धसूत्री रूप से विभाजित होकर चार अगुणित बीजाणु बनाती है (चित्र 14.3 G)। बीजाणुओं का प्रत्येक समूह चतुष्फलकीय रूप से व्यवस्थित रहता है तथा जब तक लगभग वयस्क नहीं हो जाता तब तक चारों बीजाणु साथ-साथ रहते हैं। हालांकि, *रिक्सिया* की कुछ जातियों में बीजाणु परिक्षेपण के वक्त तक भी साथ-साथ रहते हैं, तथा उनके अंकुरण के फलस्वरूप चार पादपों के संहत समूह बनते हैं।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, स्पोरोगोनियम के आवरण का काफी जल्दी, बीजाणुओं के पकने से पहले ही, विघटन हो जाता है। वयस्क बीजाणुओं का पिंड जो एक परत वाले गोपक से घिरा रहता है वही *रिक्सिया* का वयस्क स्पोरोगोनियम होता है। (चित्र 14.3 G)। वयस्क बीजाणु नए युग्मकोद्भिद् की प्रथम कोशिकाएं होती हैं। *रिक्सिया* में बीजाणुओं के परिक्षेपण की कोई विशेष विधि नहीं होती है। वे गोपक तथा आसपास के थैलस के ऊतकों की मृत्यु तथा क्षय के द्वारा परिक्षेपित होते हैं।

बीजाणुओं का अंकुरण

बीजाणु अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित होते हैं तथा बीजाणु बहिश्चोल (exospore) फट जाता है। बीजाणु अंतश्चोल (endospore) जनन नलिका (germ tube) के रूप में बाहर आ जाता है (चित्र 14.3 H)। ये लंबा हो जाता है तथा दूरस्थ फूले हुए सिरे के निकट अनुप्रस्थ भित्ति के द्वारा विभाजित हो जाता है जो संचन रूप से जीवद्रव्यी (protoplasmic) होती है। (चित्र 14.3 I)। एक और

अनुप्रस्थ भित्ति खिंच जाती है, तथा इस प्रकार बनी दो कोशिकाएं पुन: दो अनुदैर्ध्य प्रतिच्छेदी (vertical intersecting) भित्तियों द्वारा जो एक दूसरे से समकोण बनाते हुए होती हैं, विभाजित हो जाती हैं। इन विभाजनों के फलस्वरूप चार-चार कोशिकाओं के दो सोपान बन जाते हैं (चित्र 14.3 J)। दूरस्थ सोपान में एक कोशिका शीर्ष कोशिका की तरह कार्य करती है तथा एकांतर रूप से दाएं और बांए खंड काट कर अंतत: बहुकोशिकीय थैलस बनाती है (चित्र 14.3 K)।

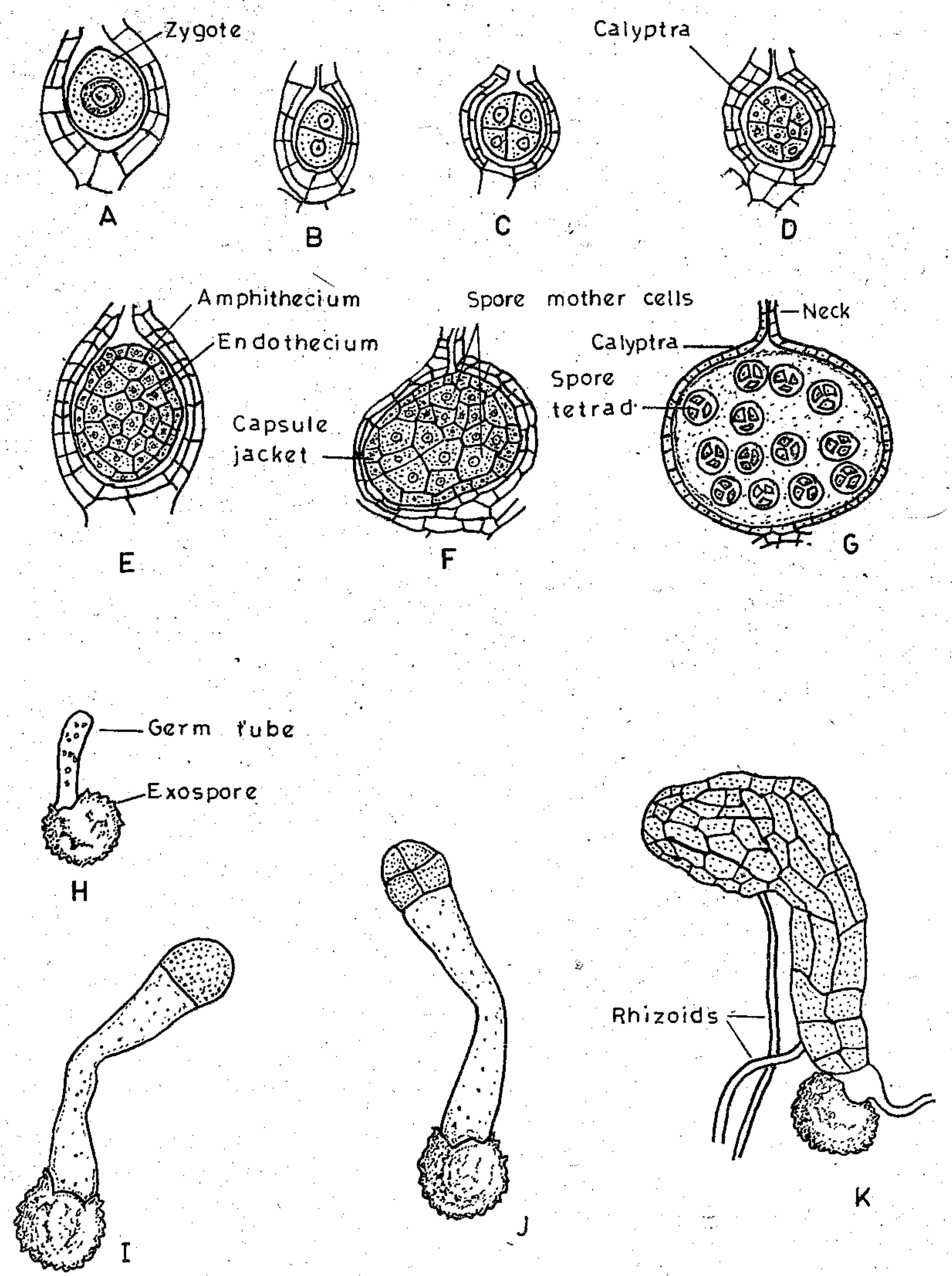

चित्र 14.3 : *रिक्सिया* : A-G) बीजाणु-उद्भिद् का परिवर्धन, H-K) युग्मकोद्भिद् का परिवर्धन। A) निषेचन के पश्चात् बना युग्मनज, B) युग्मनज प्रथम विभाजन को दर्शाते हुए, C) चार कोशिकीय अवस्था में भ्रूण (चतुष्की अवस्था), D) विभेदन की आरंभिक अवस्था, E) अंत:स्तर तथा बहि:स्तर के निर्माण को दिखाते हुए भ्रूण, F) कैप्सूल की जैकेट तथा बीजाणु मातृ कोशिकाओं का विभेदन, G) लगभग वयस्क बीजाणु-उद्भिद् की अनुदैर्ध्य काट, H-K) अंकुरित होते बीजाणु से थैलस के बनने की विभिन्न अवस्थाएं।

बोध प्रश्न 14.2

रिक्सिया के संदर्भ में निम्नलिखित वक्तव्यों में कोष्ठकों में दिए गए विकल्पों में से उचित विकल्प चुनिए।

i) वे जातियां जो पुंधानियों तथा स्त्रीधानियों को एक ही थैलस पर धारण किए रहती हैं वे (उभयलिंगाश्रयी/एकलिंगाश्रयी) कहलाती हैं।

ii) पुंधानियां थैलस में (मध्य खांच/शीर्ष खांच) में धंसी रहती हैं।

iii) लैंगिक अंग (गहरी धंसी कोशिकाओं/सतही कोशिकाओं) से विकसित होते हैं।

iv) पुंधानी की जैकेट (एकपरतीय/बहुपरतीय) होती है।

v) पुमणु (एककशाभी/द्विकशाभी) होते हैं।

vi) स्त्रीधानी (एकल रूप से/समूहों में) उगती हैं।

vii) निषेचन के लिए जल (आवश्यक/आवश्यक नहीं) होता है।

viii) प्रप्रसूतक (अंतःस्तर/बहिःस्तर) से विकसित होता है।

ix) चार बीजाणु उत्पन्न करने के लिए प्रत्येक बीजाणु मातृ कोशिका (समसूत्री विभाजन/अर्धसूत्री विभाजन) के द्वारा विभाजित होती हैं।

14.3.2 *मार्केन्शिया* (*Marchantia*)

पिछले सेक्शन में आपने *रिक्सिया* में प्रजनन के तरीकों का अध्ययन किया था, जो कि ब्रायोफाइट्स का सबसे सरल सदस्य है। अब आप अधिक उन्नत प्रकार, *मार्केन्शिया* में प्रजनन के बारे में पढ़ेंगे। जैसा कि आप जानते हैं ये भी प्रभाग हिपेटिकोप्सिडा का ही सदस्य है। *रिक्सिया* की भाँति ही *मार्केन्शिया* भी कायिक तथा लैंगिक दोनों प्रकारों से प्रजनन करता है। इस अध्याय में आप दोनों तरीकों के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे।

कायिक तरीके

आपको ध्यान होगा कि *रिक्सिया* में, द्विशाखन के नजदीक तक थैलस के मृत हो जाने तथा क्षय से दोनों शाखाएं अलग हो जाती हैं तथा प्रत्येक शाखा स्वतंत्र रूप से नया थैलस बनाती है। *मार्केन्शिया* की कुछ जातियों में अपस्थानिक शाखाएं थैलस की अधर सतह से उत्पन्न होती हैं। वे कभी-कभी स्त्रीधानीधरों से भी उत्पन्न हो जाती हैं। ये शाखाएं जनक ऊतक से अलग हो जाती हैं तथा नए थैलस उत्पन्न करती हैं।

मार्केन्शिया में कायिक प्रजनन का सबसे प्रचलित तरीका विशेष अलैंगिक कायाओं के द्वारा होता है जो जेमी (gemmae) या एकल-जेमा (gemma) कहलाती हैं। जेमी बड़ी संख्या में जेमा कपों में उत्पन्न होती है जो थैलस की पृष्ठ सतह पर उपस्थित रहते हैं तथा उनमें रंगहीन झालरदार किनारें होते हैं (इकाई 13, चित्र 13.4 A)।

जेमा बाह्य त्वचीय कोशिकाओं से जेमा कप के तल पर उत्पन्न होते हैं (चित्र 14.4 A)। बाह्यत्वचीय कोशिका पैपिलायुक्त बन जाती हैं तथा जेमा आरंभक की तरह कार्य करती हैं।

वयस्क होने पर प्रत्येक जेमा बहुकोशिकीय, उभयोत्तल (biconvex), द्विपार्श्विक रूप से सममिति, डिस्क जैसी संरचना होता है जो अनुदैर्ध्य रूप से जेमा कप में एक-कोशिकीय काचाभ वृंत सहित धंसा रहता है

(चित्र 14.4 B)। प्रत्येक जेमा में दोनों पार्श्व छिछली खाँचों में एक-एक वर्धन बिंदु होता है (चित्र 14.4 B)। जेमा की अधिकांश कोशिकाओं में क्लोरोप्लास्ट होता है, परन्तु परिधीय कोशिकाओं में क्लोरोप्लास्ट की जगह तैल कायाएं पाई जाती हैं। बहुत सी रंगहीन सघन रूप से जीवद्रव्यी कोशिकाएं दोनों चपटे तलों पर उपस्थित रहती हैं तथा ये अपनी पड़ोसी कोशिकाओं से कुछ बड़ी होती हैं। ये कोशिकाएं मूलाभासी कोशिकाएं कहलाती हैं क्योंकि ये अंकुरित होने पर मूलाभास बनाती हैं। जेमा कप के तल पर उपस्थित कुछ गद्दाकार (club-shaped) रोम, श्लेष्म स्रावित करते हैं। ये श्लेष्म जल अवशोषित करने पर फूल जाता है तथा जेमी को उनके वृंत से आसानी से अलग करने का कार्य करता है। विलग हुए जेमा अंततः वर्षा की बूंदों के साथ बह जाते हैं। जेमी नए जेमी की वृद्धि के द्वारा दबाव पड़ने के कारण भी अलग हो जाते हैं।

जब जेमी मिट्टी पर गिरते हैं तथा परिस्थितियां उनके अंकुरण के लिए अनुकूल होती हैं तो मूलाभासी कोशिकाएं मिट्टी के संपर्क में आकर मूलाभास बनाती हैं। दोनों किनारें के खांचों में स्थित शीर्ष कोशिकाएं साथ ही साथ सक्रिय हो जाती हैं तथा विपरीत दिशाओं में उगने वाले दो तरुण थैलस बनाती हैं। कुछ समय बाद, जेमा के केन्द्रीय भाग का विघटन हो जाता है, जिसके फलस्वरूप दो नए थैलस अलग हो जाते हैं। वे निचली सतह से और अधिक मूलाभास उत्पन्न करते हैं तथा नए थैलस के रूप में वृद्धि करते हैं।

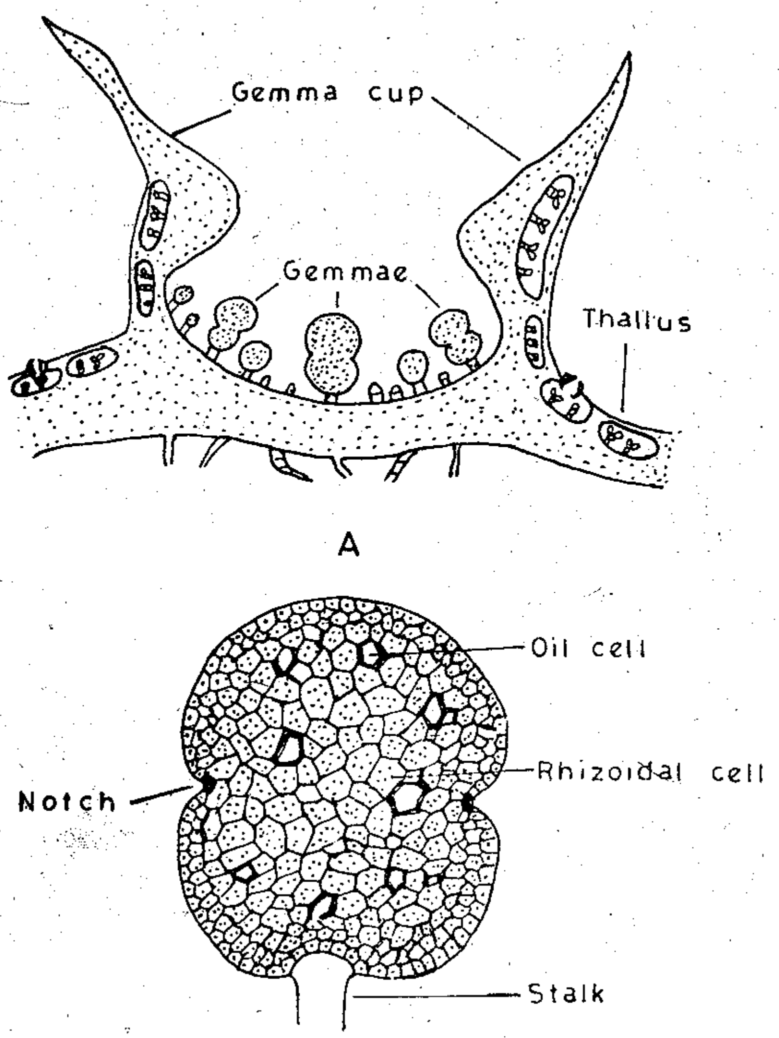

चित्र 14.4 : *मार्केन्शिया* में प्रजनन : A) बहुत से जेमा को दर्शाते हुए जेमा कप की अनुदैर्ध्य काट, B) एक आवर्धित जेमा।

लैंगिक प्रजनन

आपने इकाई 13 में पढ़ा कि *रिक्सिया* के विपरीत, *मार्केन्शिया* में स्त्रीधानियां तथा पुंधानियां थैलस की विशेष सतर शाखाओं पर उगती हैं जिन्हें क्रमशः पुंधानीधर (archegoniophore) एवं स्त्रीधानीधर (antheridiophore) कहते हैं (चित्र 13.4 D व E, इकाई 13)। चूंकि *मार्केन्शिया* एकलिंगाश्रयी है अतः पुंधानीधर तथा स्त्रीधानीधर अलग-अलग थैलस पर उगते हैं। ये सीधी लैंगिक शाखाएं थैलस के विस्तारण होते हैं तथा शयान शाखा के सिरे पर स्थित खाँचों से अनुदैर्ध्य रूप से ऊपर की ओर बढ़ते हैं।

इकाई 13 में चित्र 13.4 D, को देखिए। पुंधानीधर में एक वृंत होता है व साथ ही शीर्ष पर एक आठ-पालि (lobed) युक्त डिस्क होती है। वास्तव में, पालि अधिक रूपांतरित शाखा तंत्र प्रदर्शित करता है जिसमें प्रत्येक पालि की तुलना शाखा के शीर्ष से की जा सकती है। ये डिस्क तरुण पुंधानीय शाखा के लगातार स्थानीय द्विभाजनों के परिणामस्वरूप बनती है। पुंधानीधर की अनुप्रस्थ काट, पृष्ठाधर (dorsi-ventral) सममिति दर्शाती हैं, जो प्रारूपिक थैलस में होती हैं। थैलस की अधर सतह की ओर के भाग में सामान्यतः मूलाभासों तथा शल्कों को लिए हुए दो गहरी खाँचें होती हैं। अंतस्थ डिस्क के मध्य का शारीर थैलस के शारीर के समान होता है जिसमें ऊपरी बाह्यत्वचा में ढोलाकार रंध्र होते हैं जो शाखित पर्णहरिती (chlorophyllous) तंतु वाले वायु कोष्ठों में खुलते हैं। वायु कोष्ठों के अतिरिक्त बहुत सी फलास्क के आकार की गुहाएं होती हैं जिनकी ऊपरी सतह पर भी छिद्र होते हैं। पुंधानी इन गुहाओं के भीतर उत्पन्न होती है (चित्र 14.5 A)। डिस्क का प्रत्येक वर्धन बिंदु अग्राभिसारी तरीके से अनेकों पुंधानी उत्पन्न करता है।

पुंधानी का परिवर्धन *रिक्सिया* के समान ही होता है। वयस्क पुंधानी में एक छोटा वृंत तथा गोलाकार काया होती है। काया की जैकेट पतली भित्ति वाली कोशिकाओं की एकल परत से बनती है तथा इसमें बड़ी संख्या में पुंकोशिकाएं (androcytes) होती हैं (चित्र 14.5 A तथा B)।

जब पुंधानीधर की हल्की सी अवतल (concave) डिस्क में जल जाता है तो वह पतली नाल के जरिए पुंधानी की गुहा में चला जाता है। अब पुंधानी के जैकेट के ऊपरी भाग की कुछ कोशिकाएं

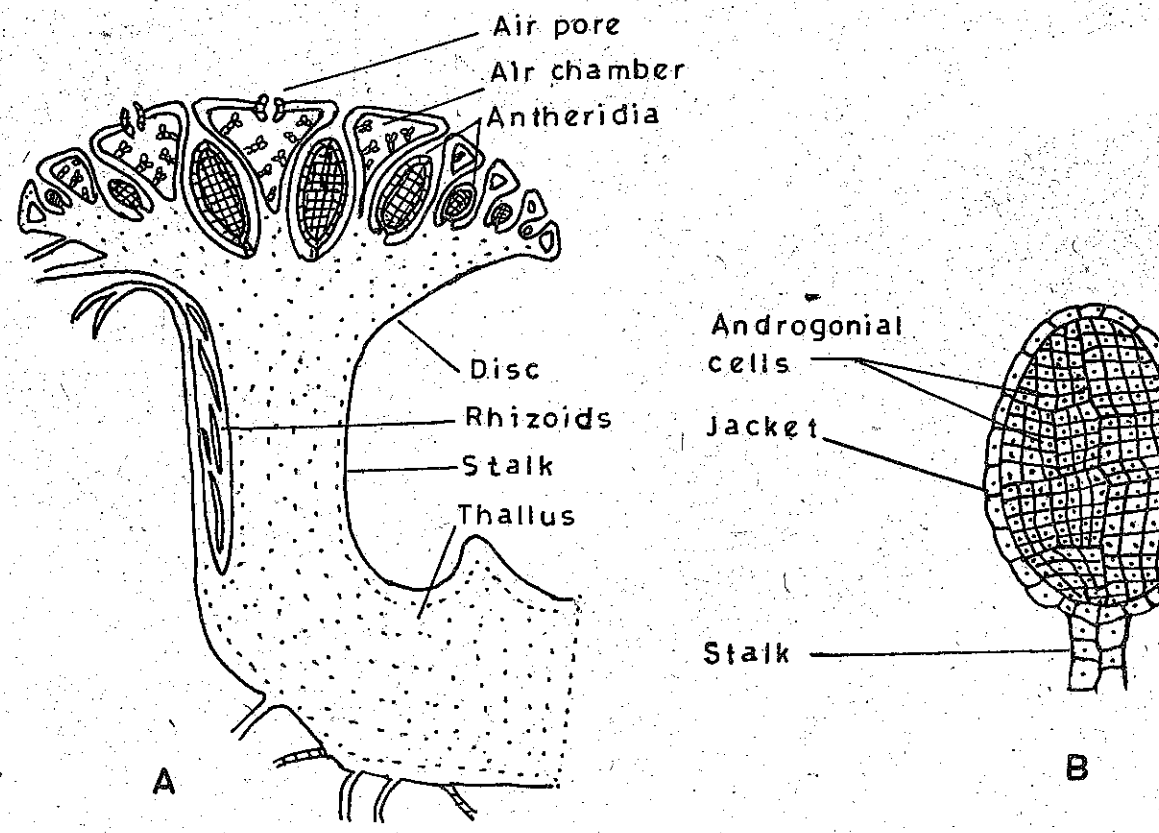

चित्र 14.5 : *मार्केन्शिया* : A) पुंधानीधर की अनुदैर्ध्य काट तथा थैलस का एक भाग, B) एक वयस्क पुंधानी।

विघटित हो जाती हैं। प्रस्फुटित (dehisced) पुंधानी में से पुंकोशिकाएं बाहर निकल आती हैं तथा द्विकशाभी पुमणु बनाती हैं।

थैलस पर स्त्रीधानीधर की स्थिति पुंधानीधरों की स्थिति के समान ही होती है। स्त्रीधानीधर में भी वृंत तथा पालियुक्त डिस्क होती है। वृंत में दो अनुदैर्ध्य खांचे पूरी लंबाई में जाते हैं जैसा कि अनुप्रस्थ काट में दिखाई पड़ता है (चित्र 14.6 A)। डिस्क की आंतरिक संरचना थैलस की आंतरिक संरचना के समान होती है।

पुंधानियों की भांति ही स्त्रीधानियां भी अग्राभिसारी क्रम में शीर्ष कोशिकाओं के द्वारा प्रत्येक पालि की पृष्ठ सतह पर काटी गई कोशिकाओं के द्वारा उत्पन्न होती हैं। जल्दी ही, डिस्क की ऊपरी सतह पर डिस्क के आठ वर्धन बिंदुओं के अनुसार स्त्रीधानी के आठ समूह विकसित हो जाते हैं। आरंभ में, जब स्त्रीधानीधर का वृंत बहुत छोटा होता है तो स्त्रीधानी की ग्रीवा ऊपर की ओर होती है तथा निषेचन इस अवस्था में होता है (चित्र 14.6 B)। निषेचन के पश्चात्, स्त्रीधानीधर का वृंत लंबा हो जाता है तथा डिस्क के केन्द्रीय भाग में काफी वृद्धि दिखाई पड़ती है जिसके कारण डिस्क का परिधीय शीर्ष भाग स्त्रीधानी के समूहों के साथ डिस्क की निचली सतह की ओर ढकेल दिया जाता है। अंततः, बढ़ते हुए शीर्ष अंदर की ओर मुड़ जाते हैं तथा स्त्रीधानीधर के वृंत के निकट स्थित हो जाते हैं। अब स्त्रीधानियों की ग्रीवाएं नीचे की ओर हो जाती हैं तथा सबसे छोटी स्त्रीधानी वृंत के निकट तथा सबसे बड़ी डिस्क की परिधि की ओर हो जाती है (चित्र 14.6 C)। इसके बाद, 12 से 15 स्त्रीधानियों को लिए हुए प्रत्येक समूह दो ओष्ठ वाले झूलते हुए परिचक्रीय आच्छद (involucral sheath) से ढक जाता है। यह परिचक्रीय आच्छद परिलिंगधानी **(perichaetium)** कहलाती है तथा यह डिस्क की पालि की निचली सतह से लंबवत् लटके रहते हैं। बहुत सी जातियों में हरे बेलनाकार प्रवर्ध डिस्क की परिधि से स्त्रीधानी के समूहों के बीच में से निकल आते हैं। ये प्रवर्ध अर (rays) कहलाते हैं। *मार्केन्शिया पॉलीमार्फा* (*Marchantia polymorpha*) में अरों की संख्या सामान्यतः नौ होती है।

वयस्क होने पर स्त्रीधानीधर अंतस्थ, नौ-अरीय डिस्क के साथ एक लंबा वृंत होता है। स्त्रीधानियां प्रत्येक पालि की निचली सतह पर अरीय कतारों में व्यवस्थित रहती हैं तथा अरों (rays) के बीच में स्थित होती हैं। स्त्रीधानियों का प्रत्येक समूह परिलिंगधानी द्वारा संरक्षित रहता है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, स्त्रीधानियां उलटी स्थिति में होती हैं (यानि ग्रीवा नीचे की ओर) स्त्रीधानियों का परिवर्धन *रिक्सिया* की स्त्रीधानियों के परिवर्धन के समान ही होता है। लगभग वयस्क स्त्रीधानी एक फ्लास्क के आकार की संरचना होती है जिसमें छोटा वृंत, फूला हुआ अंडधा तथा लम्बी ग्रीवा होती है (चित्र 14.6 B)। एकल परतीय अंडधा भित्ति के भीतर एक बड़ा अंड तथा अंडधा नाल कोशिका होती है। ग्रीवा जैकेट कोशिकाओं की छह अनुदैर्ध्य कतारों की बनी होती है जो चार या अधिक ग्रीवा नाल कोशिकाओं को घेरे हुए होती है।

पुमणु बड़े वृंत वाले पुंधानीधरों की डिस्क की ऊपरी सतह से, छोटे वृंत वाले स्त्रीधानीधरों तक, जल के द्वारा पहुंचते हैं। वे स्त्रीधानी तक तैर कर जाते हैं तथा ग्रीवा के जरिए उसमें प्रवेश करते हैं। कोई एक पुमणु अंड को निषेचित करता है तथा युग्मनज बन जाता है। साथ ही साथ, स्त्रीधानीधर का वृंत लंबा हो जाता है तथा अंडधा की भित्ति परिनतिक रूप से विभाजित होकर दो से तीन-परत वाला गोपक (calyptra) बनाती है। गोपक परिवर्धनशील स्पोरोगोनियम को घेर लेता है। अंडधा के आधार से एक अतिरिक्त कॉलर-जैसा बेलनाकार प्रवर्ध निकलता है। ये कूटसहपत्रपुंज (pseudoperianth) या परिस्त्रीधानी (perigynium) कहलाता है (चित्र 14.7 B)।

रिक्सिया की भाँति ही युग्मनज अनुप्रस्थ रूप से एक ऊपरी उपआधारीय (epibasal) तथा निचली अधोआधारी (hypobasal) कोशिका में विभाजित होता है। द्वितीय भित्ति सामान्यतः पहली भित्ति से समकोण बनाते हुए बनती है तथा चार समान कोशिकाएं बन जाती हैं। इसके बाद एक और ऊर्ध्वाधर विभाजन होता है जो पहले वाले से समकोण बनाते हुए होता है। इस अवस्था में भ्रूण में आठ समान कोशिकाएं होती है (अष्टांशक अवस्था)। *मार्केन्शिया पॉलीमॉर्फा* (*M. polymorpha*) में उपआधारीय चतुष्क कैप्सूल बनाता है तथा अधोआधारी चतुष्क पाद तथा स्फोटिका वृंत बनाता है।

क्या ये *रिक्सिया* से कुछ भिन्न हैं?

....

....

परिवर्धनशील बीजाणु-उद्‌भिद् के ऊपरी कैप्सुलर भाग में परिनतिक विभाजनों के फलस्वरूप बाहरी बहि:स्तर तथा भीतरी अंत:स्तर बनता है। बहि:स्तर कैप्सूल की जैकेट बनाता है। अंत:स्तर प्रप्रसूतक को बनाता है, जो बारंबार विभाजनों के द्वारा स्थूल बीजाणुजन ऊतक में विकसित हो जाता है। लगभग आधी बीजाणुजन कोशिकाएं अनुप्रस्थ रूप से अनेक बार विभाजित होकर कुछ-कुछ घनाकार (cubical) बीजाणु

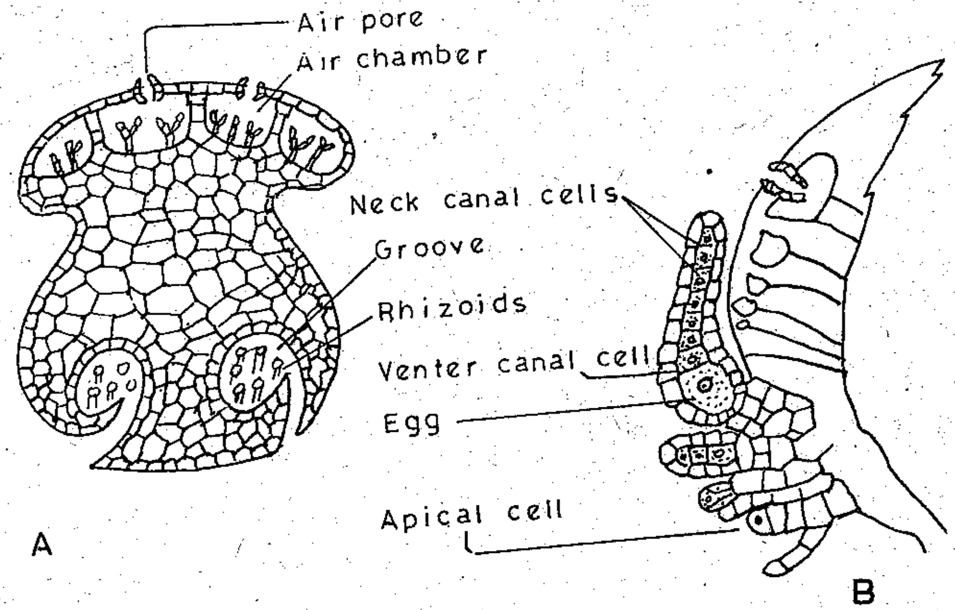

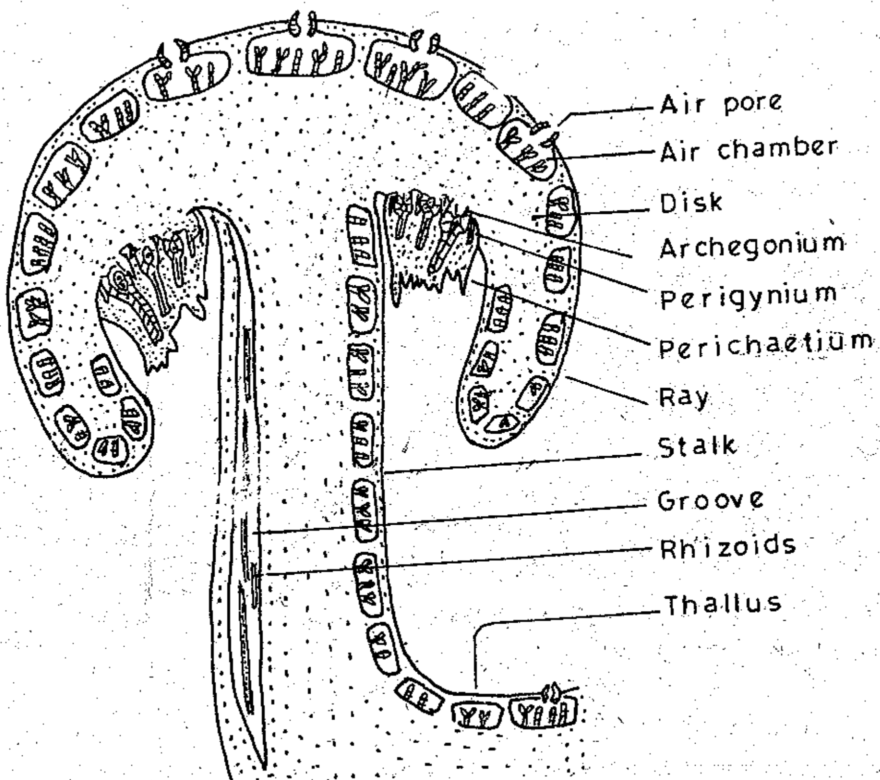

चित्र 14.6 : *मार्केन्शिया*: A) स्त्रीधानीधर के वृंत की अनुप्रस्थ काट, B) डिस्क की ऊपरी सतह पर निकलती हुई स्त्रीधानी को दिखाते हुए एक तरुण स्त्रीधानीधर की अनुदैर्ध्य काट, C) एक स्त्रीधानीधर की अनुदैर्ध्य काट तथा थैलस का एक भाग।

मातृ कोशिकाओं की ऊर्ध्वाधर कतारें बनाती हैं। बची हुई बीजाणुजन कोशिकाएं लंबी हो जाती हैं और उनके सिरे पतले हो जाते हैं तथा अपनी भित्ति में दो सर्पिलाकार स्थूलन विकसित कर लेते हैं। ये तकलीनुमा (spindle-shaped) कोशिकाएं इलेटर्स कहलाती हैं (14.7 B)।

मार्केन्शिया का वयस्क स्पोरोगोनियम पाद, स्फोटिका वृंत तथा कैप्सूल में विभेदित होता है (चित्र 14.7 B तथा E)। पाद फूली हुई या विस्तारित संरचना होती है जो स्त्रीधानी के आधार की ओर होती है। ये परिवर्धनशील बीजाणु-उद्भिद् के लिए जल तथा पोषक तत्व आसपास के युग्मकोद्भिद् के ऊतक से

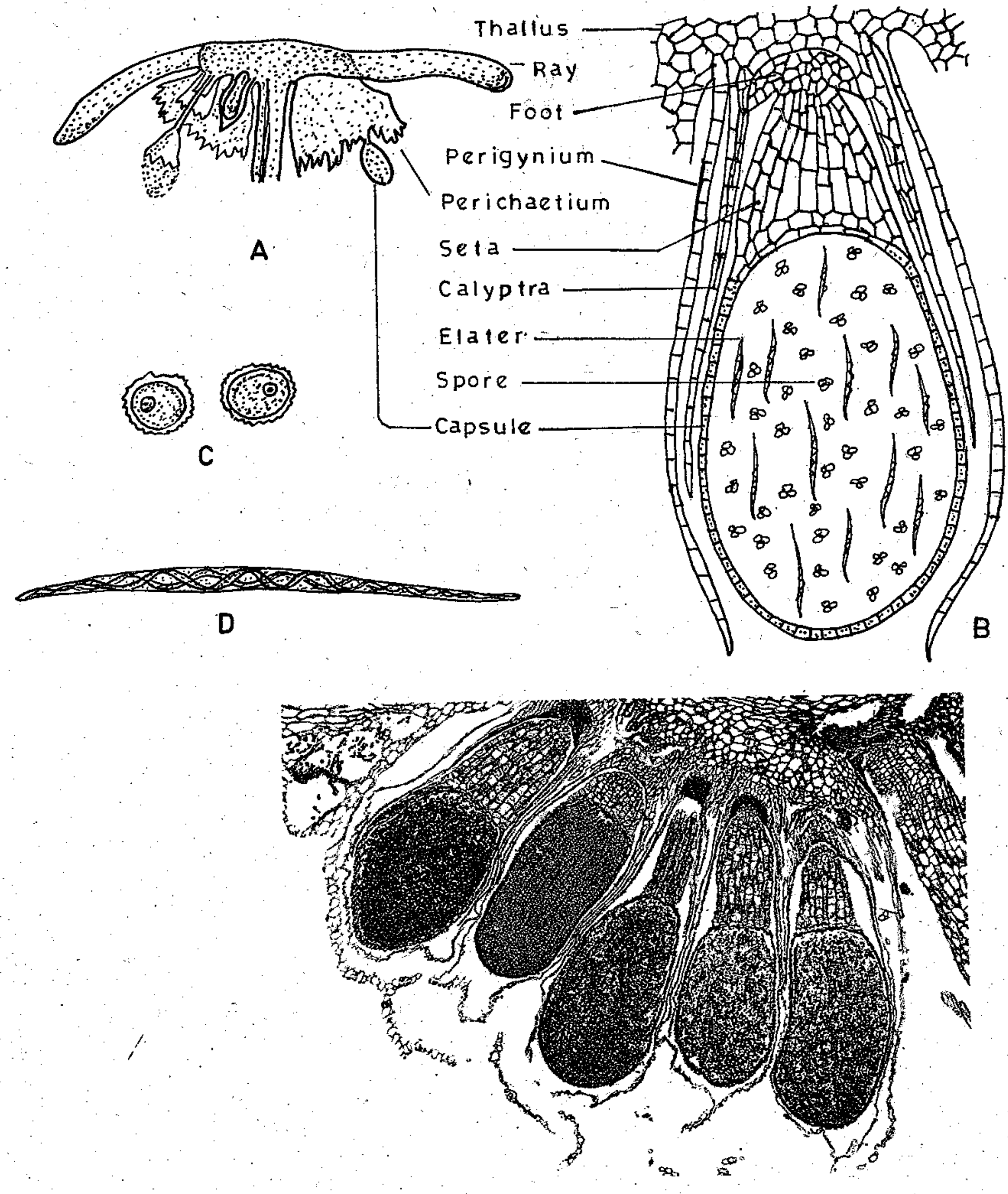

चित्र 14.7 : *मार्केन्शिया* का बीजाणु-उद्भिद् : **A**) स्त्रीधानीधर की डिस्क की ऊर्ध्वाधर काट, **B**) लगभग वयस्क बीजाणु-उद्भिद् की ऊर्ध्वाधर काट, **C**) बीजाणु, **D**) सर्पिल स्थूलनों को दिखाते हुए एक इलेटर, **E**) बीजाणुधानियों तथा संबद्ध संरचनाओं को दिखाते हुए अनुदैर्ध्य काट का सूक्ष्मदर्शी फोटोग्राफ (पी. दयानंदन के सौजन्य से)।

अवशोषित कर लेता है। स्फोटिका वृंत छोटा तथा मोटा होता है तथा ये पाद और कैप्सूल को जोड़ता है। कैप्सूल लगभग गोलाकार होता है। इसकी भित्ति, कोशिकाओं की एकल परत की बनी होती है जिसमें छल्ले जैसी स्थूलित पटि्टकाएं होती है। कैप्सूल के अंदर बीजाणु तथा इलेटर्स होते हैं (चित्र 14.7 B-D)। इलेटर्स आर्द्रताग्राही (hygroscopic) होते हैं। वे वातावरण की आर्द्रता में बदलाव के अनुसार कुंडलित होते और खुलते हैं। इस गति के द्वारा इलेटर्स बीजाणुओं के अलगाव तथा परिक्षेपण में सहायता करते हैं।

बीजाणुओं के वयस्क हो जाने के बाद, स्फोटिका वृंत काफी लंबा हो जाता है साथ ही, कैप्सूल सुरक्षात्मक आवरणों (गोपक, कूटसहपत्रपुंज, तथा परिलिंगधानी) से बाहर निकल आता है, यह स्त्रीधानीधर के नीचे की ओर से लटकने लगता है (चित्र 14.7 A)। बाहरी वातावरण के संपर्क में आने पर कैप्सूल की भित्ति शीर्ष से मध्य तक अनेक पालियों में लंबवत् फट जाती है। ये पालियां वलित होती हैं तथा बीजाणुओं और इलेटर्स को बाहरी वातावरण के संपर्क में ले आती हैं।बीजाणु अंततः वायु के द्वारा परिक्षेपित हो जाते हैं।

बीजाणु अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित हो जाते हैं। बीजाणु बहिश्चोल फट जाता है, तथा बीजाणु अंतश्चोल जनन नलिका के रूप में बाहर आ जाता है जो अनुप्रस्थ विभाजनों से विभाजित होकर एक छोटा तंतु बनाता है। कुछ समय पश्चात् अंतस्थ कोशिका शीर्ष कोशिका की भांति कार्य करने लगती है तथा एकांतर रूप से दांए और बांए खंड काटने लगती है। अंततः, शीर्ष कोशिका, कोशिकाओं की एक कतार द्वारा विस्थापित हो जाती है तथा थैलस बन जाता है।

बोध प्रश्न 14.3

मार्केन्शिया के बारे में दिए गए निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्द (ों) से पूरा कीजिए।

i) *मार्केन्शिया* विशेषीकृत डिस्कनुमा, द्विपार्श्वरूप से सममिति कायाओं के निर्माण के द्वारा जनन करता है जो .... कहलाती है।

ii) जब पुंधानियां तथा स्त्रीधानियां अलग-2 थैलसों पर उगती हैं तो यह स्थिति .... कहलाती है।

iii) लैंगिक अंग वृंतीय संरचनाओं पर उगते हैं जो .... कहलाते हैं।

iv) स्त्रीधानीधर रूपांतरित .... तंत्र को प्रदर्शित करता है।

v) पुंधानियां, पुंधानी कोष्ठों में उत्पन्न होती है जो पुंधानीधर की डिस्क की .... सतह पर उपस्थित होते हैं।

vi) वयस्क स्त्रीधानीधरों में, स्त्रीधानी की ग्रीवा .... ओर रहती है।

vii) स्त्रीधानी की ग्रीवा .... ग्रीवा कोशिकाओं की बनी होती है।

viii) वयस्क कैप्सूल में बीजाणु तथा .... होते हैं।

14.3.3 *पेलिया* (*Pellia*)

पिछली इकाई में आपने पढ़ा कि वंश *पेलिया*, *रिक्सिया* और *मार्केन्शिया* के वंशों से, कायिक थैलस की संरचना में भिन्न होता है। अब आप इस लिवरवर्ट में प्रजनन की प्रक्रिया के बारे में पढ़ेंगे तथा *रिक्सिया* और *मार्केन्शिया* से इसकी तुलना करेंगे।

कायिक प्रजनन

रिक्सिया और *मार्केन्शिया* की भाँति ही, *पेलिया* भी अपस्थानिक शाखाओं के निर्माण के द्वारा प्रजनन करता है जो थैलस की अधर सतह से या किनारों से सतही कोशिकाओं से उत्पन्न होती हैं। इन शाखाओं के जनक पादप से अलग हो जाने के फलस्वरूप अनेक नए थैलस निर्मित हो जाते हैं। इसी प्रकार थैलस के पुराने पश्च भागों के द्विशाखन के निकट क्षय तथा सड़ने से अनेक नए थैलस बन जाते हैं जो जनक पादप से अलग स्वतंत्र रूप से विकसित हो जाते हैं।

लैंगिक प्रजनन

पेलिया में कुछ जातियां उभयलिंगाश्रयी व अन्य एकलिंगाश्रयी होती हैं। क्या आपको याद है कि *रिक्सिया* तथा *मार्केन्शिया* में क्या स्थिति होती हैं? नीचे उत्तर लिखें।

....

....

उभयलिंगाश्रयी जातियों जैसे *पेलिया एपीफिला* (*Pellia epiphylla*) में, पुंधानियां तथा स्त्रीधानियां दोनों एक ही थैलस पर उत्पन्न होती हैं, जबकि एकलिंगाश्रयी जातियों जैसे *पेलिया एन्डीवीफोलिया* (*P. endiviaefolia*) तथा *पेलिया नीसिआना* (*P. neesiana*) में पुंधानियां तथा स्त्रीधानियां अलग-अलग थैलस पर उत्पन्न होती हैं। उभयलिंगाश्रयी जातियों में पुंधानियां स्त्रीधानियों से पहले बनती हैं। ये स्थिति **पुंपुर्वी (protandrous)** कहलाती है।

पुंधानियां थैलस की पृष्ठ सतह पर मध्यशिरा के किनारे उत्पन्न होती हैं, तथा उनकी उपस्थिति असंख्य मस्से जैसे उभारों से पहचानी जाती है। प्रत्येक उभार पुंधानी लिए हुए एक पुंधानी गुहा को प्रदर्शित करता है (चित्र 14.8 A)।

रिक्सिया तथा *मार्केन्शिया* में युग्मकधानियों की स्थिति को याद करने की कोशिश कीजिए। आप चित्र 13.3 B, C तथा 13.4 D को देख सकते हैं। अब हम देखते हैं कि *पेलिया* में पुंधानी किस प्रकार विकसित होती हैं। ये सतही, पेपिलायुक्त पृष्ठ कोशिका से विकसित होती हैं जो पुंधानी आरंभक की भाँति कार्य करती हैं (चित्र 14.8 B)। ये अनुप्रस्थ रूप से विभाजित होकर एक बाह्य कोशिका तथा एक आधार कोशिका बनाती है (चित्र 14.8 C)। बाह्य कोशिका आगे अनुप्रस्थ भित्ति से निचली प्राथमिक वृंत कोशिका तथा ऊपरी प्राथमिक पुंधानी कोशिका में विभाजित हो जाती है (चित्र 14.8 D) । प्राथमिक वृंत कोशिका पुंधानी के वृंत को उत्पन्न करती है। पूरी पुंधानी प्राथमिक पुंधानी कोशिका से विकसित होती है। वयस्क पुंधानी लगभग गोलाकार, वृंतीय संरचना होती है। ये फ्लास्कनुमा पुंधानी कोष्ठ में स्थित होती है जो पृष्ठ सतह पर एक पतले छिद्र द्वारा खुलता है (चित्र 14.8 E)। पुंधानी की एक कोशिकीय जैकेट में असंख्य पुंकोशिकाएं स्थित रहती हैं, जिनमें से प्रत्येक एक पुमणु उत्पन्न करती है (चित्र 14.8 F)।

आपने चित्र 14.8 E में नोट किया होगा कि स्त्रीधानियां क्षैतिज रूप से स्थित रहती हैं तथा सहपत्र चक्र (involucre) द्वारा संरक्षित रहती हैं। सहपत्र चक्र बेलनाकार, नलिकाकार या पल्लेनुमा (flap-like) हो सकते हैं। सहपत्र चक्र थैलस के शीर्ष की ओर खुलते हैं। स्त्रीधानियों के बीच में छोटे श्लेष्मीय रोम भी पाए जाते हैं। *पेलिया* में वर्धन शीर्ष के निकट की कोई भी कोशिका स्त्रीधानी आरंभक (archegonial initial) की तरह कार्य कर सकती है तथा इनमें स्त्रीधानियों के निर्माण में कोई नियमित क्रम नहीं होता है स्त्रीधानी आरंभक अनुप्रस्थ भित्ति के द्वारा बाह्य कोशिका तथा आधार कोशिका में विभाजित हो जाती है। *रिक्सिया* की भांति ही, बाह्य कोशिका में तीन प्रतिच्छेदी ऊर्ध्वाधर भित्तियों के बन जाने से, एक केन्द्रीय प्राथमिक अक्षीय कोशिका व उसको घेरे हुए तीन परिधीय आरंभक बन जाते हैं। तीन परिधीय आरंभकों में से एक अपेक्षाकृत छोटा होता है जो ऊर्ध्वाधर भित्ति द्वारा विभाजित नहीं होता जबकि बड़े दो परिधीय आरंभक ऊर्ध्वाधर भित्तियों द्वारा विभाजित होते हैं। जिसके फलस्वरूप पांच जैकेट आरंभक बन जाते हैं (चित्र 14.9 A)।

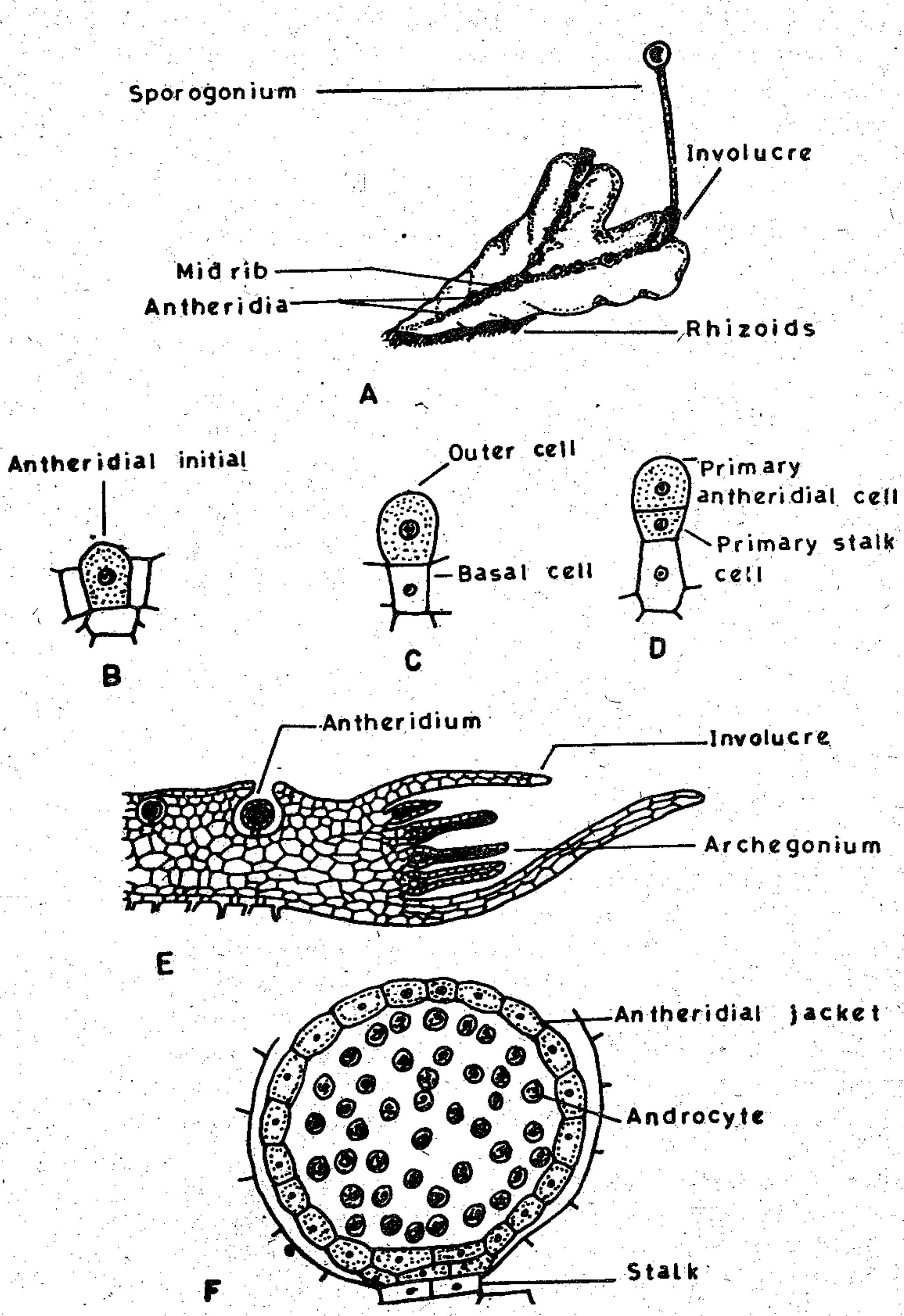

चित्र 14.8 : *पेलिया* : A) उभयलिंगाश्रयी जाति का थैलस पुंधानियों तथा स्पोरोगोनियम को दर्शाते हुए, B-D) पुंधानी के परिवर्धन की आरंभिक अवस्थाएं, E) लैंगिक अंगों से होती हुई थैलस की अनुदैर्ध्य काट, F) एक वयस्क पुंधानी।

क्या आपको ध्यान है *रिक्सिया* में कितने जैकेट आरंभक बनते हैं ?

....

....

प्रत्येक स्त्रीधानी में एक छोटा बहुकोशिकीय वृंत, एक अंडधा तथा लंबी ग्रीवा होती है (चित्र 14.9 B)। पेलिया में ग्रीवा, अंडधा से बहुत स्पष्ट रूप से विभेदित नहीं होती है। ग्रीवा की जैकेट में कोशिकाओं की पाँच ऊर्ध्वाधर कतारें होती हैं। इसमें सामान्यत: 6 से 8 ग्रीवा नाल कोशिकाएं होती हैं।

निषेचन की प्रक्रिया *रिक्सिया* तथा *मार्केन्शिया* के समान ही होती है। आपने पढ़ा है कि वयस्क पुंधानी का शीर्ष जल के संपर्क में आने पर अव्यवस्थित हो जाता है तथा बड़ी संख्या में पुमणुओं को लिए हुए श्लेष्मीय पिंड बाहर निकल आता है। उनमें से कुछ स्त्रीधानी की ग्रीवा में प्रवेश कर जाते हैं परंतु सिर्फ एक ही अंड के साथ युग्मित होकर युग्मनज बनाता है।

अंडधा की भित्ति विकसित होकर गोपक बनाती है। युग्मनज का प्रथम विभाजन अनुप्रस्थ होता है। जिससे एक ऊपरी उप आधार (epibasal) कोशिका तथा निचली अधोआधार (hypobasal) कोशिका बन जाती हैं। अधोआधार कोशिका निलंबक यानि सस्पेन्सर (suspensor) बनाती है। जो चूषकांग होता है। उपआधार कोशिका 8 कोशिकाओं का समूह बनाती है जो चार कोशिकाओं के दो सोपानों में व्यवस्थित रहती हैं। कोशिकाओं का ऊपरी सोपान कैप्सूल बनाता है तथा निचली चार कोशिकाएं स्फोटिका वृंत तथा पाद बनाती हैं। ऊपरी सोपान में परिनतिक विभाजनों के फलस्वरूप बाहरी बहि:स्तर चोल तथा भीतरी अंत:स्तर बनता है। *रिक्सिया* और *मार्केन्शिया* की भाँति ही बीजाणु अंत:स्तर प्रप्रसूतक को बनाता है तथा प्रप्रसूतक कोशिकाओं के लगातार विभाजनों के द्वारा बीजाणुजन कोशिकाओं का पिंड बनाता है। आरंभिक अवस्थाओं के दौरान, अपेक्षाकृत बड़ी बंध्य कोशिकाओं का पिंड कैप्सूल के आधार पर विभेदित हो जाता है। ये कोशिकाएं अपनी भित्तियों पर सर्पिल स्थूलन विकसित कर लेती हैं तथा इलेटरोफोर (elaterophore) बनाती हैं, जिससे कुछ इलेटर्स जुड़े रहते हैं (चित्र 14.9 C)। बीजाणुजन कोशिकाएं, बीजाणु मातृ कोशिकाओं तथा इलेटर्स को जन्म देती हैं। इलेटर्स तेजी से लंबे हो जाते हैं तथा सर्पिल स्थूलन विकसित कर लेते हैं (चित्र 14.9 D)। *पेलिया* में बीजाणु मातृ कोशिकाएं केन्द्रक (nucleus) के विभाजन से पूर्व स्पष्ट रूप से चार पालि युक्त हो जाती हैं (चित्र 14.9 E, एक पालि नीचे स्थित है अत: सिर्फ तीन पालिया ऊपर दिखाई पड़ रही हैं)। केन्द्रक अर्धसूत्री रूप से विभाजित होता है जिसके फलस्वरूप चार अगुणित बीजाणुओं का निर्माण होता है (चित्र 14.9 F)। *मार्केन्शिया* की भाँति ही *पेलिया* के वयस्क स्पोरोगोनियम में पाद, स्फोटिका वृंत तथा कैप्सूल होता है। पाद शंकु रूपी होता है इसके किनारे स्फोटिका वृंत के आधार के चारों ओर कॉलर की भांति उग आते हैं। आरंभ में स्फोटिका वृंत छोटा होता है परंतु जब बीजाणु पके होते हैं ये तेजी से लंबा हो जाता है तथा दो-तीन दिन में ही 8 से. मी. की लंबाई तक पहुंच जाता है। इसके फलस्वरूप गोपक फट जाता है तथा कैप्सूल वायुमंडल में मुक्त हो जाते हैं। पके हुए कैप्सूल गोलाकार तथा दो परत वाली जैकेट युक्त होते हैं। कैप्सूल की भित्ति चार कपाटों (valves) में फट जाती हैं कपाट नमित हो जाते हैं तथा नीचे की ओर लटक जाते हैं (चित्र 14.9 G)। इलेटर्स आर्द्रताग्राही गति के द्वारा बीजाणुओं के परिक्षेपण में सहायता करते हैं।

पेलिया में बीजाणु तब ही अंकुरित होना आरंभ कर देते हैं जब वे कैप्सूल के अंदर ही होते हैं तथा कोशिकाओं का एक अंडाकार पिंड बनाते हैं जिसमें कोशिकाओं के कुछ सोपान होते हैं। सभी कोशिकाओं में पर्णहरित होता है, परंतु कुछ आधार कोशिकाएं हल्के रंग की होती हैं। इस अवस्था में कैप्सूल का स्फुटन (dehiscence) होता है तथा अंकुरित बहुकोशिकीय बीजाणु नम भूमि पर गिर जाते हैं। निचली हल्की कोशिकाएं मूलाभासों में विकसित हो जाती हैं तथा हरा कोशिका पिंड जल्द ही नए थैलस में विकसित हो जाता है।

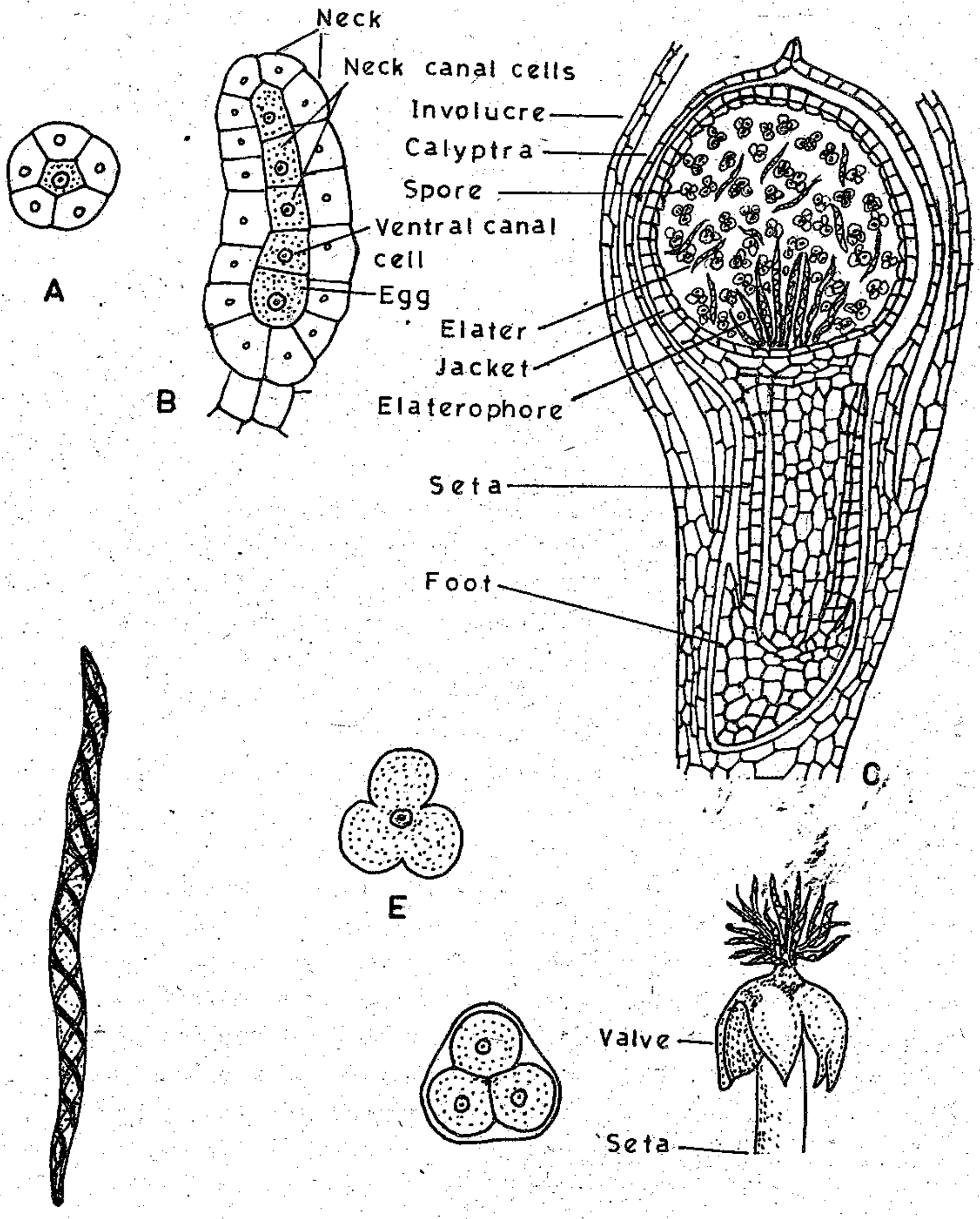

चित्र 14.9 : *पेलिया* : A) स्त्रीधानी की अनुप्रस्थ काट, B) वयस्क स्त्रीधानी की अनुदैर्ध्य काट, C) वयस्क बीजाणु-उद्‌भिद् की अनुदैर्ध्य काट, D) एक इलेटर, E) विभाजन के लिए तैयार एक बीजाणु मातृ कोशिका, F) बीजाणुओं का चतुष्क, G) प्रस्फुटित कैप्सूल।

बोध प्रश्न 14.4

पेलिया के संदर्भ में निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य हैं तथा कौन से असत्य हैं? सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) लिखिए।

i) *पेलिया* निश्चित रूप से उभयलिंगाश्रयी होता है। ☐

ii) पुंधानियां थैलस की पृष्ठ सतह पर पुंधानीय गुहिकाओं में पाई जाती हैं। ☐

iii) स्त्रीधानी सहपत्र चक्र द्वारा संरक्षित रहती हैं। ☐

iv) स्त्रीधानी की ग्रीवा अंडधा से स्पष्ट रूप से विभेदित होती हैं। ☐

v) बीजाणु-उद्‌भिद् स्फोटिका वृंत तथा कैप्सूल में विभेदित होता है। ☐

vi) कैप्सूल के अंदर एक इलेटरधर उपस्थित होता है। ☐

vii) *पेलिया* के बीजाणु कैप्सूल के अंदर ही अंकुरित होना आरंभ कर देते हैं। ☐

14.3.4 *एन्थोसिरोस* (*Anthoceros*)

उपर्युक्त सेक्शन में आपने हिपेटिकोप्सिडा के कुछ सदस्यों में प्रजनन के तरीकों के बारे में विस्तार से पढ़ा। अब आप *एन्थोसिरोस* में प्रजनन की प्रक्रिया के बारे में पढ़ेंगे।

कायिक प्रजनन

हिपेटिकोप्सिडा के तीन सदस्यों *रिक्सिया, मार्केन्शिया* और *पेलिया* की भाँति ही *एन्थोसिरोस* में भी कायिक प्रजनन थैलस के शीर्ष भाग की वृद्धि तथा पुराने पश्च भाग के मर जाने के कारण द्विशाखन की शाखाओं के अलग हो जाने पर होता है। परिणामस्वरूप दो नए स्वतंत्र थैलस बनते हैं। हालांकि, ये तरीका *एन्थोसिरोस* में ज्यादा सामान्य नहीं है। इसमें कायिक प्रजनन का सामान्य तरीका कंदों (tubers) के निर्माण के द्वारा होता है (चित्र 14.10 A तथा B)। कंद थैलस के द्वारा प्रतिकूल स्थितियों में बनते हैं तथा जाति के द्वारा सूखे के काल को झेलने में भी सहायक होते हैं। परिस्थितियां अनुकूल होने पर कंद शीघ्रता से नए पादप निर्मित कर देते हैं।

प्रतिकूल परिस्थितियों में हिपेटिकोप्सिडा का(के) कौन सा(से) सदस्य कंद बनाता(ते) है ?

....

कंद में कोशिकाओं की 2-3 बाह्य परतें होती हैं जिनमें कागजन (corky) काचाभ कोशिका भित्तियां होती हैं। ये भीतरी ऊतक को सुरक्षित रखती हैं। भीतरी ऊतक की कोशिकाओं में मंड कण, तेल गोलिका (globules) तथा छोटे एल्यूरोन कण होते हैं। कंदों की स्थिति विभिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न होती हैं। कंद वर्धन बिंदु पर या थैलस के किनारों पर विकसित हो सकते हैं। कुछ जातियों में कंद वृंतीय होते हैं तथा पृष्ठ सतह पर किनारों से उगते हैं (चित्र 14.10 A, B)। *मार्केन्शिया* की भाँति ही *एन्थोसिरोस* की कुछ जातियां भी जेमी के द्वारा प्रवर्धन करती हैं। वे जेमी थैलस के किनारों पर अथवा थैलस की सतह पर निर्मित करती हैं। जेमा जनक पादप से अलग हो जाते हैं तथा नए थैलस में विकसित हो जाते हैं।

लैंगिक प्रजनन

पेलिया की ही भाँति, *एन्थोसिरोस* के थैलस उभयलिंगाश्रयी या एकलिंगाश्रयी हो सकते हैं। उभयलिंगाश्रयी जातियों में, पुंधानियों का विकास सामान्यतः, स्त्रीधानियों से पहले होता है यानि कि, वे पुंपूर्वी (protandrous) होते हैं। दोनों प्रकार के लैंगिक अंग थैलस के पृष्ठ भाग में धँसे रहते हैं तथा वर्धन बिंदु के ठीक पीछे होते हैं।

हिपेटिकोप्सिडा के सदस्यों के विपरीत, *एन्थोसिरोस* में पुंधानी अधोत्वचीय कोशिका (hypodermal cell) से विकसित होती है। एक सतही कोशिका (चित्र 14.10 C) थैलस की पृष्ठ सतह पर परिनतिक विभाजन के द्वारा विभाजित होती है। ऊपरी संतति कोशिका छत (roof) आरंभक की भाँति कार्य करती है (चित्र 14.10 D) तथा आगे विभाजनों के द्वारा पुंधानी कोष्ठ की छत बनाती है। निचली कोशिका पुंधानी आरंभक की भाँति कार्य करती है जो एकल पुंधानी में विकसित हो सकती है या विभाजित होकर अनेक पुंधानियों को जन्म दे सकती है (चित्र 14.10 E से H)।

पुंधानी आरंभक कोशिका, अनुप्रस्थ रूप से विभाजित होकर नीचे प्राथमिक वृंत कोशिका तथा ऊपर प्राथमिक पुंधानी कोशिका बनाती है। पुंधानी का आगे का विकास *रिक्सिया* तथा *मार्केन्शिया* के समान होता है। एक व्यस्क पुंधानी कुछ-कुछ पतला वृंत लगभग गोलाकार, तथा पुंकोशिकाओं के पिंड को धारण किए दिखाई पड़ती है (चित्र 14.10 H तथा 14.11)। जैकेट सामान्यत: एक या अधिक परत की मोटाई की होती है तथा वयस्क होने पर हरे या नारंगी रंग की हो जाती है। प्रत्येक पुंकोशिका एक द्विकशाभी पुमणु बनाती है।

स्त्रीधानियां अग्राभिसारी क्रम से शीर्ष के पास पृष्ठीय सतही कोशिकाओं से बनती हैं। स्त्रीधानी आरंभक सीधा प्राथमिक स्त्रीधानी कोशिका की तरह कार्य करता है और वृंत नहीं बनता है (चित्र 14.12 A)। तीन ऊर्ध्वाधर भित्तियां तीन बाहरी जैकेट आरंभक कोशिकाएं तथा एक केन्द्रीय प्राथमिक अक्षीय कोशिका काटती हैं (चित्र 14.12 B तथा C)। ये अक्षीय कोशिका अनुप्रस्थ

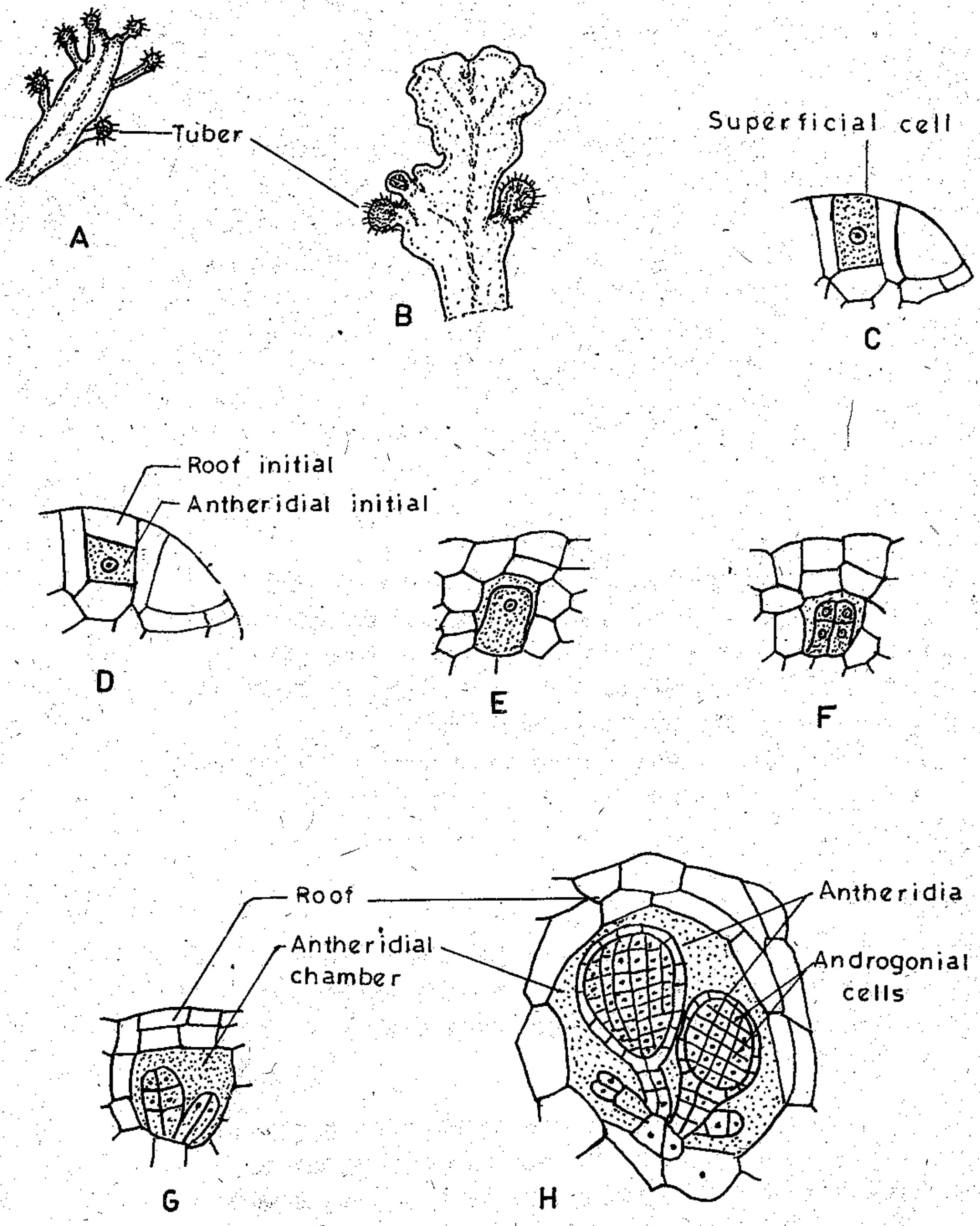

चित्र 14.10 : *एन्थोसिरास* में प्रजनन : A, B) कंदों को दर्शाते हुए थैलस, C-H) पुंधानी के परिवर्धन की विभिन्न अवस्थाएं।

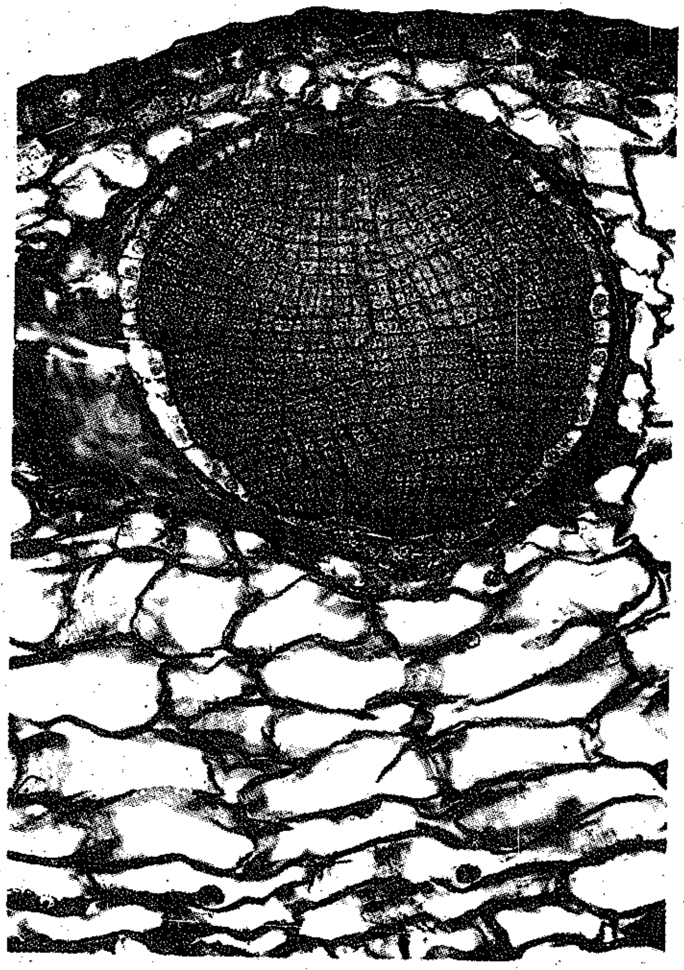

चित्र 14.11 : पुंधानी की अनुप्रस्थ काट का फोटोग्राफ (प्रो. पी. दयानंदन के सौजन्य से)।

रूप से दो कोशिकाओं में विभाजित हो जाती हैं। निचली कोशिका प्राथमिक अंडधा कोशिका बन जाती है तथा ऊपरी कोशिका पुन: विभाजित होकर शीर्ष आवरण आरंभक तथा निचली प्राथमिक ग्रीवा नाल कोशिका बनाती है (चित्र 14.12 D, E)। आवरण आरंभक चार आरंभक कोशिकाएं बनाती है जबकि प्राथमिक ग्रीवा नाल कोशिका चार या अधिक ग्रीवा नाल कोशिकाओं की ऊर्ध्वाधर कतार बनाती है। प्राथमिक अंडधा कोशिका अंडधा नाल कोशिका तथा अंड बनाती है (चित्र 14.12 F, G)। *रिक्सिया* और *मार्केन्शिया* की भांति ही, ग्रीवा कोशिकाओं की छह ऊर्ध्वाधर कतारों की बनी होती है। परिवर्धनशील स्त्रीधानियां जो एकल रूप से विकसित होती है तथा थैलस में पूरी तरह से धंसी होती है, प्रत्येक सामान्यत: श्लेष्म के पिंड से ढकी रहती है। ये आसपास की कायिक कोशिकाओं के सीधे संपर्क में रहती हैं तथा थैलस की सतह के ऊपर उभरी नहीं होती हैं। इसकी वजह से स्त्रीधानी की जैकेट को थैलस के आसपास की कोशिकाओं से विभेदित नहीं किया जा सकता है।

निषेचन के पश्चात् युग्मनज एक दूसरे से समकोण बनाते हुए दो उत्तरोत्तर विभाजनों द्वारा विभाजित होता है। इसके बाद पहले ऊर्ध्वाधर विभाजन के समकोण पर एक ओर ऊर्ध्वाधर विभाजन के फलस्वरूप आठ कोशिकाएं बन जाती हैं जो चार-चार कोशिकाओं के दो सोपानों में व्यवस्थित रहती हैं। निचला सोपान बारंबार विभाजनों के द्वारा बंध्य पाद बनाता है। ऊपरी सोपान की कोशिकाएं विभाजित हो जाती हैं तथा इनकी निचली संतति कोशिकाएं अंतर्वेशी विभज्योतकी ऊतक (intercalary meristematic tissue) बनाती हैं। ऊपरी कोशिकाओं में परिनतिक विभाजनों के फलस्वरूप भीतरी अंत:स्तर तथा बाहरी बहि:स्तर बन जाता है। अंत:स्तर कोशिकाओं की 16 ऊर्ध्वाधर कतारों की बनी संरचना बनाता है। ये स्तंभिका (columella) कहलाता है (चित्र 14.13 A)। बहि:स्तर की कोशिकाएं पुन: परिनतिक रूप से विभाजित होती हैं तथा इनकी बाहरी परत वयस्क बीजाणु-उद्भिद् की 4 से 16 कोशिका की मोटाई की

जैकेट बनाती हैं। बाह्यत्वचा में क्यूटिनयुक्त बाहरी भित्तियां तथा रंध्र होते हैं। जैकेट की भीतरी कोशिकाएं पर्णहरिती होती हैं। बहि:स्तर की भीतरी कोशिकाएं प्रप्रसूतक (archesporium) की भाँति व्यवहार करती हैं।

क्या हिपेटिकोप्सिडा के सदस्यों में प्रप्रसूतक की उत्पत्ति आपको याद है जो आपने पिछलने सेक्शन में पढ़ी है? यह बहि:स्तर से उत्पन्न होती है या अंत:स्तर से?

....

....

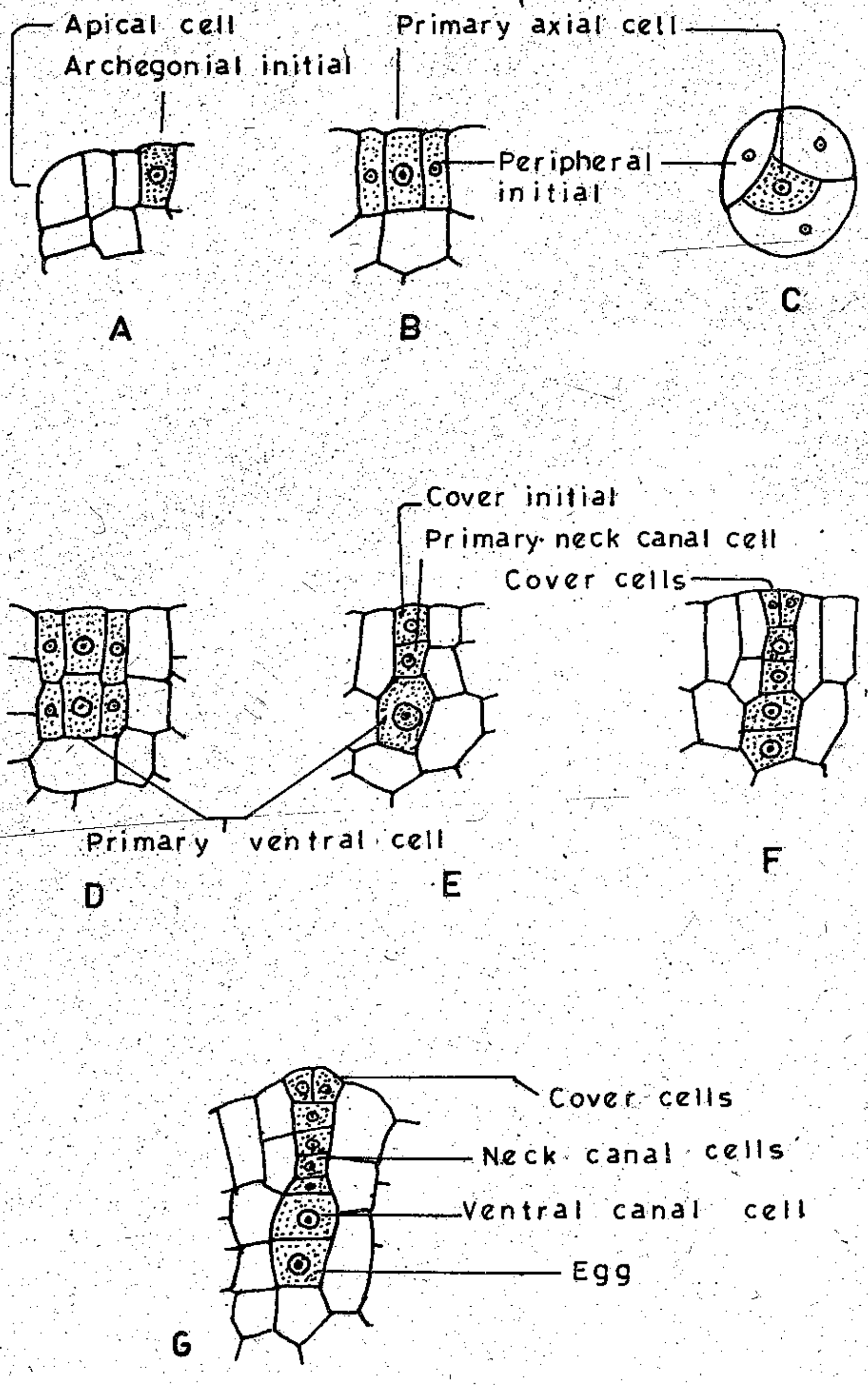

चित्र 14.12 : *एन्थोसिरोस* में स्त्रीधानी का परिवर्धन : A-F) स्त्रीधानी के परिवर्धन की विभिन्न अवस्थाएं, A, B, D-F अनुदैर्ध्य काट में तथा C अनुप्रस्थ काट में, G) एक वयस्क स्त्रीधानी।

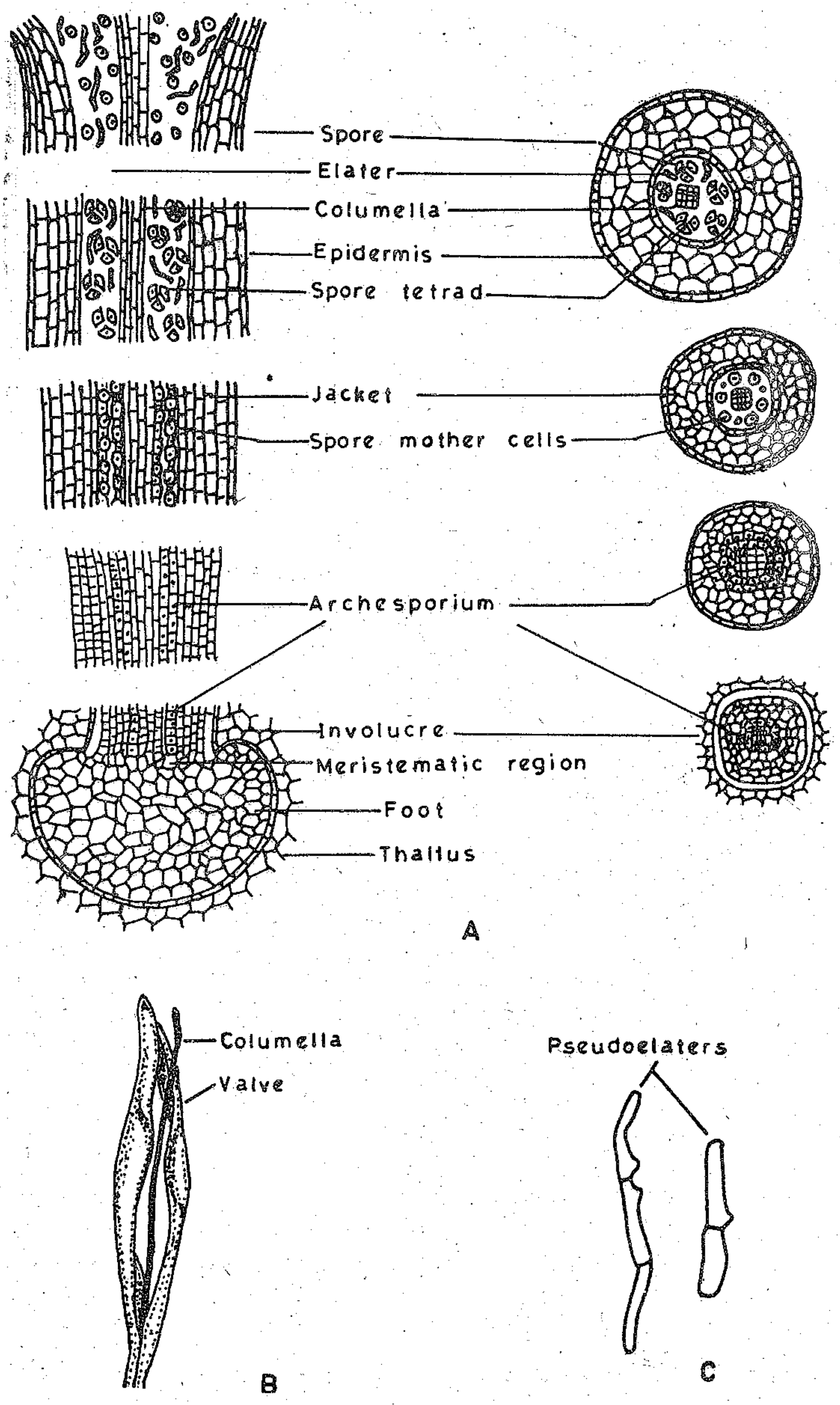

चित्र 14.13: *एन्थोसिरोस* का बीजाणु-उद्‌भिद् : A) स्पोरोगोनियम के विभिन्न भागों से गुजरता हुआ अनुदैर्ध्य काट चार स्तरों से अनुप्रस्थ काट को दिखाते हुए, B) कंशाभ जैसी स्तंभिका को दिखाते हुए कैप्सूल का स्फुटन, C) कूटइलेटर्स ।

प्रप्रसूतक स्तंभिका के गोलाकार शीर्ष को ढक लेता हैं। प्रप्रसूतक के एकांतर अनुप्रस्थ सोपान बीजाणु मातृ कोशिकाएं तथा बंध्य कोशिकाएं बन जाते हैं (चित्र 14.13 A)। बीजाणु मातृ कोशिकाएं अर्धसूत्री रूप से विभाजित होती हैं तथा बीजाणुओं के चतुष्क बनाती हैं, जबकि बंध्य कोशिकाएं समसूत्री रूप से विभाजित होकर 4 कोशिकीय, तंतुमय कूटइलेटर्स (pseudoelaters) बनाती हैं (चित्र 14.13 C)। आपने पहले पढ़ा था कि *मार्केन्शिया* तथा *पेलिया* में इलेटर्स तकली के आकार के एक कोशिकीय तथा सर्पिल स्थूलन वाले होते हैं। हालांकि, *एन्थोसिरोस* में ये बहुकोशिकीय तथा स्थूलन विहीन होते हैं इसलिए ये कूटइलेटर्स कहलाते हैं।

एन्थोसिरोस के बीजाणु-उद्भिद् में कंदीय (फूला हुआ) पाद होता है जो युग्मकोद्भिदी ऊतक में धंसा हुआ होता है पाद के ऊपर सींग जैसा सतरीय, बेलनाकार कैप्सूल होता है। कैप्सूल का आधार कॉलर जैसे सहपत्र चक्र से घिरा रहता है जो युग्मकोद्भिदी ऊतक से बनता है (चित्र 13.7 A, इकाई 13)। जैसा कि पहले बताया जा चुका है, *एन्थोसिरोस* में स्फोटिका वृंत की जगह एक छोटा माध्यमिक विभाज्योतक क्षेत्र उपस्थित रहता है। इसकी वजह से बीजाणु-उद्भिद् की वृद्धि अनिश्चित होती है तथा विकास की विभिन्न अवस्थाएं एक ही कैप्सूल में दिखाई पड़ती हैं (चित्र 14.13 A)। कैप्सूल के केन्द्र में स्तंभिका होती है। प्रप्रसूतकी क्षेत्र स्तंभिका के चारों ओर एक बेलन के रूप में होता है। प्रप्रसूतक आधार पर एक परत का होता है, यह क्रमश: ऊपर की ओर बीजाणु मातृ कोशिकाओं तथा कूटइलेटर्स में विभेदन प्रदर्शित करता है। शीर्ष पर कूटइलेटर्स तथा बीजाणु उपस्थित रहते हैं। जब कैप्सूल वयस्क हो जाता है तो एक विपाट (split) शीर्ष के नीचे प्रकट होता है तथा ये नीचे की ओर बढ़ता है। कूटइलेटर्स की आर्द्रताग्राही गति वयस्क बीजाणुओं के परिक्षेपण में सहायता करती है तथा स्तंभिका का शीर्ष, कशाभ की तरह बाहर निकल आता है (चित्र 14.13 B)। कैप्सूल का शीर्ष इस अवस्था में मुड़ा हुआ दिखाई देता है।

अनुकूल परिस्थितियों में बीजाणु अंकुरित हो जाते हैं। बीजाणु बाह्यचोल फट जाता है तथा अंत:श्चोल बीजाणु भित्ति के बाहर एक जनन नलिका के रूप में निकल आता है। जनन नलिका के विभाजनों के द्वारा एक नया युग्मकोद्भिद् जनन नलिका के शीर्ष पर निर्मित हो जाता है।

बोध प्रश्न 14.5

अ) *एन्थोसिरोस* के संबन्ध में निम्नलिखित में से कौन वक्तव्य सत्य है तथा कौन से असत्य? दिए गए बॉक्सों में सत्य के लिए (स) तथा असत्य (अ) लिखिए।

i) कायिक प्रजनन थैलस के किनारों पर तथा शीर्ष के निकट कंदों के निर्माण के द्वारा होता है। ☐

ii) थैलस सदैव उभयलिंगाश्रयी होते हैं। ☐

iii) *एन्थोसिरोस* में बीजाणु-उद्भिद् कंदीय पाद, माध्यमिक मृदूतकी क्षेत्र तथा सींग जैसे कैप्सूल में विभेदित रहता है। ☐

iv) कैप्सूल भित्ति बहुकोशिकीय मोटाई की होती है तथा इसमें बहुत सारे वायु अवकाश तथा रंध्र पाए जाते हैं। ☐

v) कैप्सूल में बीजाणु तथा वास्तविक इलेटर्स पाए जाते हैं। ☐

ब) निम्नलिखित वक्तव्यों में कोष्ठकों में दिए गए शब्दों में से उचित वैकल्पिक शब्द छाँटिए।

i) पुंधानियां उत्पत्ति में (सतही/अधोत्वचीय) होती हैं।

ii) स्त्रीधानियों की ग्रीवा थैलस की सतह के ऊपर (निकली/नहीं निकली) रहती है।

iii) पुंधानियां (छतयुक्त/खुले) पुंधानी कोष्ठों में उत्पन्न होती हैं।

14.3.5 *स्फैग्नम*

अभी तक आपने ब्रायोफाइट्स के थैलसी प्रकारों में प्रजनन की प्रक्रियाओं के बारे में पढ़ा है। अब आप मॉसेस में प्रजनन के विभिन्न पहलुओं के बारे में पढ़ेंगे, जो ज्यादा उन्नत प्रकार के माने जाते हैं। मॉसेस में, सबसे प्राचीन प्रकार *स्फैग्नम* है। पहले हम इस वंश में प्रजनन की प्रक्रिया का वर्णन करेंगे तथा उसके बाद वंश *फ्यूनेरिया* में प्रजनन का वर्णन अगले सेक्शन में करेंगे।

कायिक प्रजनन

आपको ध्यान होगा कि *स्फैग्नम* में युग्मकधर बहुवर्षी होते हैं। निचले हिस्सों के क्षय होने पर शाखाएं प्ररोह से अलग हो जाती हैं। ये अलग हुई शाखाएं बाद में स्वतंत्र पादप बनाती हैं।

लैंगिक प्रजनन

स्फैग्नम में उभयलिंगाश्रयी तथा एकलिंगाश्रयी दोनों स्थितियां पाई जाती हैं। उभयलिंगाश्रयी स्थितियों में पुंधानियां तथा स्त्रीधानियां हमेशा अलग पुंधानीय तथा स्त्रीधानीय शाखाओं पर उगती हैं। ये स्थिति ... (autocious) स्थिति कहलाती हैं। उभयलिंगाश्रयी जातियों में, पुंधानीय शाखाएं पहले मुख्य प्ररोह के शीर्ष पर प्रगट होती हैं। पुंधानीय शाखा में छोटी तथा वर्णक युक्त (pigmented) पत्तियां होती हैं जो कोरछादी (imbricately) रूप से व्यवस्थित रहती हैं। चित्र 14.14 A तथा B को देखिए। पुंधानियां पत्तियों के नीचे अग्राभिसारी रूप में व्यवस्थित दिखाई पड़ती हैं। शीर्ष पत्तियां सामान्यतः पुंधानी विकसित नहीं करती हैं तथा पुंधानियों के वयस्क होने के बाद भी शीर्ष वृद्धि जारी रहती है। प्रत्येक पुंधानी तने की सतही कोशिका से विकसित होती है। ये कोशिका छोटे तंतु में विकसित हो जाती है जिसमें दो तरफ कर्तन मुख वाली शीर्ष कोशिका होती हैं। शीर्ष कोशिका बाद में पुंधानी बनाती है। पुंधानी का परिवर्धन कुछ-कुछ *पेलिया* के समान होता है। जैसा कि आप चित्र 14.14 C में नोट कर सकते हैं एक वयस्क पुंधानी में एक लंबा वृंत तथा एक कोशिकीय मोटाई की जैकेट होती है जिसके अंदर पुंकोशिकाओं का पिंड पाया जाता है। पुंकोशिकाएं पुमणुओं में विकसित हो जाती हैं जो कुंडलित, द्विकशाभी संरचना होते हैं।

स्त्रीधानियां, स्त्रीधानीय शाखाओं के शीर्ष पर उगती हैं। आप नोट कीजिए कि इस शाखा में बड़ी पत्तियां होती हैं जिनमें कम तंतुमय काचाभ कोशिकाएं होती हैं (चित्र 14.15 A)। इस शाखा की शीर्ष कोशिका प्राथमिक स्त्रीधानी को बनाती है, तथा इसलिए स्त्रीधानीय शाखा की वृद्धि रुक जाती हैं। शीर्ष कोशिका के द्वारा उत्पन्न खंड द्वितीय स्त्रीधानी में विकसित हो जाते हैं (चित्र 14.15 B)। वयस्क स्त्रीधानीय शाखा के शीर्ष पर सामान्यतः तीन स्त्रीधानियां उपस्थित होती हैं। जैसा कि चित्र 14.15 C में दिखाया गया है, प्राथमिक स्त्रीधानी आरंभक विभाजित होकर चार से छह कोशिकाओं का छोटा तंतु बनाता है। इस तंतु की अंतस्थ कोशिका तीन जैकेट आरंभक तथा एक प्राथमिक अक्षीय कोशिका काटती है। स्त्रीधानी का आगे का विकास कुछ-कुछ *पेलिया* की स्त्रीधानी के विकास के समान ही होता है। चित्र 14.15 D में *स्फैग्नम* की वयस्क स्त्रीधानी को दिखाया गया है। इसमें एक वृंत, एक मुड़ी हुई ग्रीवा जिसमें 8 से 9 ग्रीवा नाल कोशिकाएं, एक अंडधा नाल कोशिका तथा अंडधा के भीतर एक अंड होता है। अंडधा की भित्ति निषेचन से पहले ही बहुपरतीय हो जाती है।

जब निषेचन होता है, तो प्रत्येक स्त्रीधानीय शाखा में सिर्फ एक स्त्रीधानी का युग्मनज, भ्रूण में विकसित होता है। युग्मनज बहुत बार विभाजित होता है तथा 6 से 7 कोशिकीय लंबाई का तंतु बन जाता है। इस तंतु का निचला आधा भाग कंदीय पाद बनाता है जबकि तंतु की ऊपरी कोशिकाएं परिनतिक रूप से विभाजित होकर एक बाह्य बहिःस्तर तथा भीतरी अंतःस्तर बनाती हैं। पूरा अंतःस्तर गुम्बद के आकार की स्तंभिका को बनाता है (चित्र 14.15 E)। बहिःस्तर की भीतरी परतें दो से चार परत की मोटाई का प्रप्रसूतक बनाती हैं, जबकि बाहरी परतें जैकेट बनाती हैं। चलिए अब हम वयस्क बीजाणु-उद्भिद् को दर्शाते हुए चित्र 14.15 E तथा F को देखते हैं। बीजाणु-उद्भिद् एक गोलाकार कैप्सूल है, जो काले या गहरे भूरे रंग का होता है। इसका कंदीय पाद जो बहुत ही छोटी संकुचित संरचना द्वारा युग्मकोद्भिद् से जुड़ा रहता है। आप नोट कर सकते हैं कि इसमें समुचित स्फोटिका वृंत नहीं होता है तथा इसका कार्य युग्मकोद्भिद् के ऊतक द्वारा संपन्न होता है, जो लंबे वृंत के रूप में विकसित हो जाता है। ये पादाभ (pseudo podium) कहलाता है तथा ये बीजाणु-उद्भिद् को ऊपर उठा देता है (चित्र 14.15 E)। पाद

को घेरे हुए मादा शाखा पर प्यालेनुमा अंतस्थ भाग वेजीनुला (vaginula) कहलाता है। कैप्सूल की जैकेट 4-6 परत की होती है तथा बीजाणुकोश (spore sac) गुम्बदाकार स्तंभिका के ऊपर होता है। प्रप्रसूतक बीजाणु मातृ कोशिकाओं को बनाता है जो अर्धसूत्री रूप से विभाजित होकर बीजाणु बनाती हैं। जैकेट की सबसे बाहर वाली परत मोटी हो जाती है तथा कुछ निष्क्रिय रंध्र विकसित कर लेती है। कैप्सूल की जैकेट का शीर्ष, ढक्कन जैसी संरचना में विभेदित रहता है जिसे प्रच्छद (operculum) कहते हैं जो शेष कैप्सूल भित्ति से पतली-भित्ति वाली कोशिकाओं की एक वलय द्वारा अलग रहता है जो वलयिका (annulus) कहलाती है। *स्फैग्नम* में बीजाणु परिक्षेपण गर्म मौसम में विस्फोटक विधि के द्वारा होता है। बीजाणु कोश में उपस्थित वायु गर्मी के द्वारा विस्तारित हो जाती हैं तथा कैप्सूल के अंदर दबाव डालती है। इसके फलस्वरूप प्रच्छद आवाज के साथ अलग हो जाता है तथा बीजाणु वायु के साथ उड़ जाते हैं।

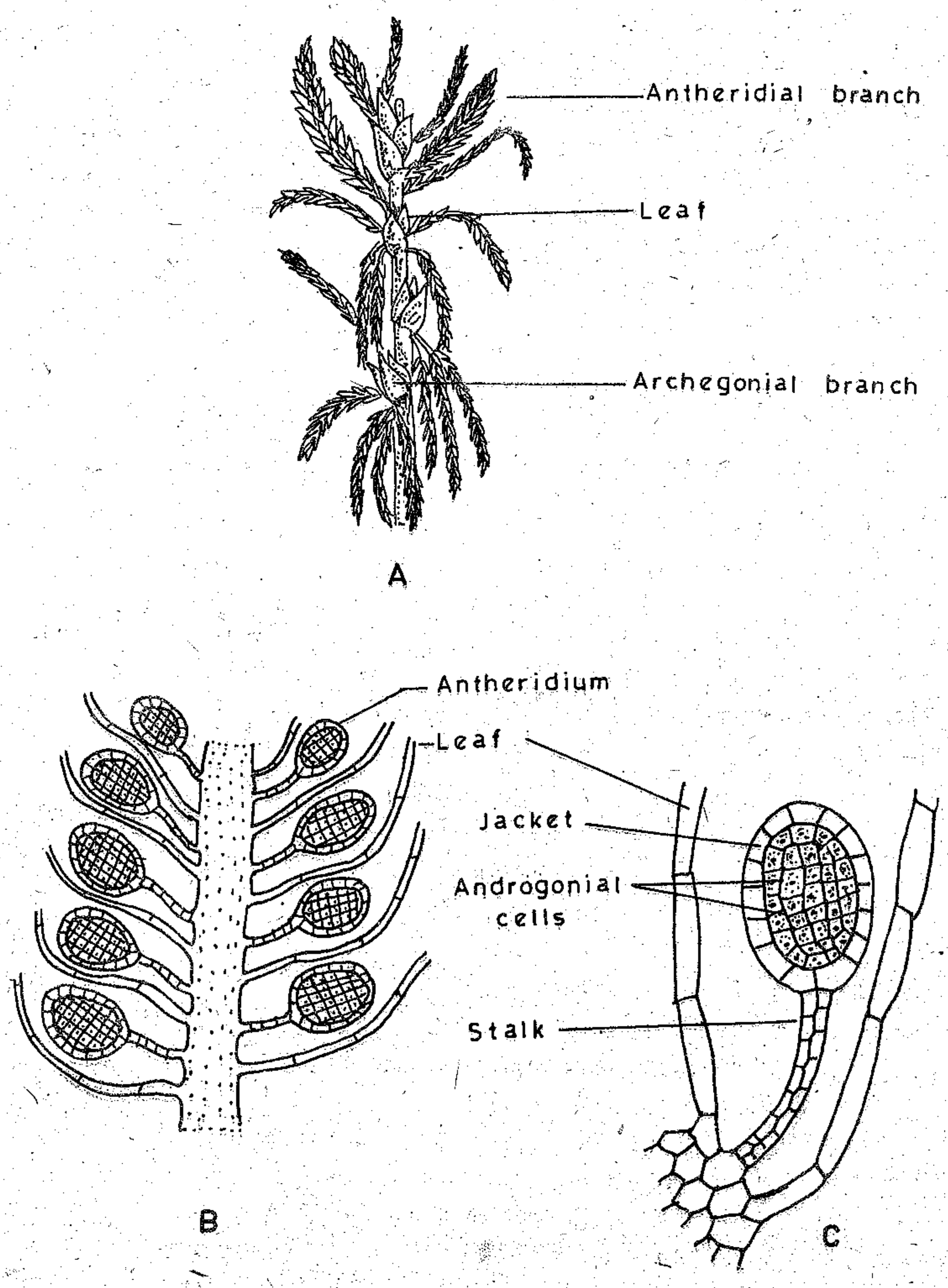

चित्र 14.14 : *स्फैग्नम* में पुंधानी की संरचना : A) एक पुंधानीय शाखा, B) एक पुंधानीय शाखा की अनुदैर्ध्य काट पत्तियों तथा पुंधानियों को दर्शाते हुए, C) एक वयस्क पुंधानी।

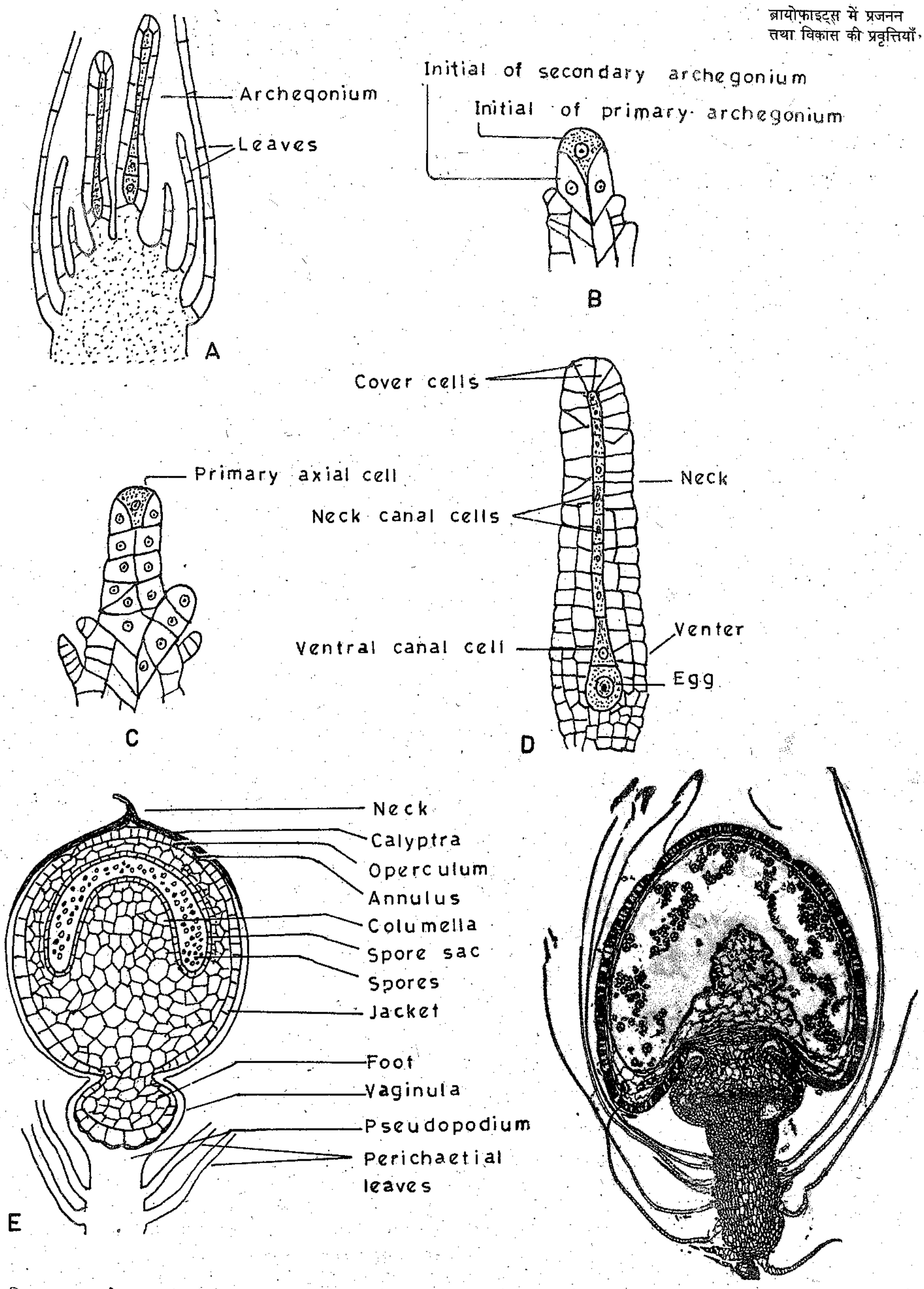

चित्र 14.15 : *स्फैग्नम* : **A**) स्त्रीधानीय शाखा की अनुदैर्ध्य काट, **B-D**) स्त्रीधानी के परिवर्धन की अवस्थाएं, **E**) युग्मकोद्भिद् से जुड़े लगभग वयस्क बीजाणु-उद्भिद् की अनुदैर्ध्य काट, युग्मकोद्भिद् से जुड़े बीजाणु-उद्भिद् की अनुदैर्ध्य काट का फोटोग्राफ (सौजन्य: पी. दयानंदन)।

अनुकूल परिस्थितियों में बीजाणु अंकुरित हो जाते हैं तथा एक छोटा थैलसनुमा प्रथम तंतु विकसित हो जाता है। ये प्रथम तंतु शयान, हरा, अनियमित रूप से पालित एक कोशिकीय मोटाई की संरचना होती है। जो आधार से बहुकोशिकीय मूलभासों के द्वारा जुड़ी रहती है। इस प्रथम तंतु की सीमांत कोशिका (marginal cell) से एक कलिका विकसित होती है तथा यह कलिका अंततः एक नए पर्णिल युग्मकोद्भिद में विकसित हो जाती है।

बोध प्रश्न 14.6

स्फैग्नम के संदर्भ में निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य हैं और कौन से असत्य? सत्य के लिए स तथा असत्य के लिए अ दिये गये कोष्ठकों में लिखिए।

अ) i) पुंधानियां तथा स्त्रीधानियां एक ही शाखा पर उत्पन्न होती हैं। ☐

ii) स्त्रीधानियों के आसपास की पत्तियां कायिक पत्तियों से बड़ी होती हैं। ☐

iii) युग्मकोद्भिद् का ऊतक एक लंबा वृंत बनाता है, जो पादाभ कहलाता है। ☐

iv) परिवर्धनशील बीजाणु-उद्भिद् में एक गुंबदाकार संरचना स्तंभिका कहलाती है। ☐

ब) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) द्वितीयक स्त्रीधानियां .... कोशिका द्वारा काटे जाने वाले उपखंडों से बनती हैं।

ii) स्फोटिका वृंत का कार्य .... के द्वारा संपन्न होता है।

iii) कैप्सूल की जैकेट का शीर्ष एक ढक्कन जैसी संरचना में विभेदित रहता है जो .... कहलाता है।

iv) बीजाणुकोश .... को घेरे रहता है।

14.3.6 *फ्यूनेरिया* (*Funaria*)

अब आप इस पाठ्यक्रम में सम्मिलित आखिरी वंश *फ्यूनेरिया* में प्रजनन के बारे में पढ़ेंगे।

कायिक प्रजनन

स्फैग्नम की भाँति ही, *फ्यूनेरिया* में भी कायिक प्रजनन ऐसी शाखाओं के द्वारा हो सकता है जो जनक पादप से क्षय के द्वारा अलग हो जाती है तथा स्वतंत्र पादप को जन्म देती है। कायिक प्रजनन युग्मकोद्भिद् के विभिन्न भागों से द्वितीय प्रथमतंतु के विकास के द्वारा भी होता है। इस प्रथमतंतु पर कलिकाएं उगती हैं जो पर्णिल युग्मकधरों में विकसित होती हैं।

लैंगिक प्रजनन

फ्यूनेरिया उभयलिंगाश्रयी तथा एकाश्रयी है यानि कि पुंधानियां और स्त्रीधानियां एक ही पादप पर किंतु भिन्न-भिन्न शाखाओं पर विकसित होती हैं। पुंधानियां मुख्य प्ररोह पर उगती है जबकि स्त्रीधानियां पार्श्व शाखाओं पर विकसित होती हैं। हालांकि, निषेचन के पश्चात् स्त्रीधानीय शाखा अधिक तेजी से बढ़ती है तथा जल्दी ही मुख्य प्ररोह से बड़ी हो जाती है (इकाई 13, चित्र 13.10 A)।

पुंधानीय शाखा में (चित्र 14.16 A) बहुत सी गदा-आकार, वृंतीय, पुंधानियां, पुंसहपत्र (perigonial) पत्तियों द्वारा घिरी रहती हैं। पुंधानियों के बीच में अनेक बहुकोशिकीय, एक पंक्तिक (uniseriate) संरचनाओं को नोट कीजिए। ये सहसूत्र (paraphysis) है। इनके सिरे फूले हुए होते हैं।

स्त्रीधानियां स्त्रीधानीय प्ररोहों पर अग्राभिसारी रूप से गुच्छों में विकसित होती हैं (चित्र 14.16 B)।

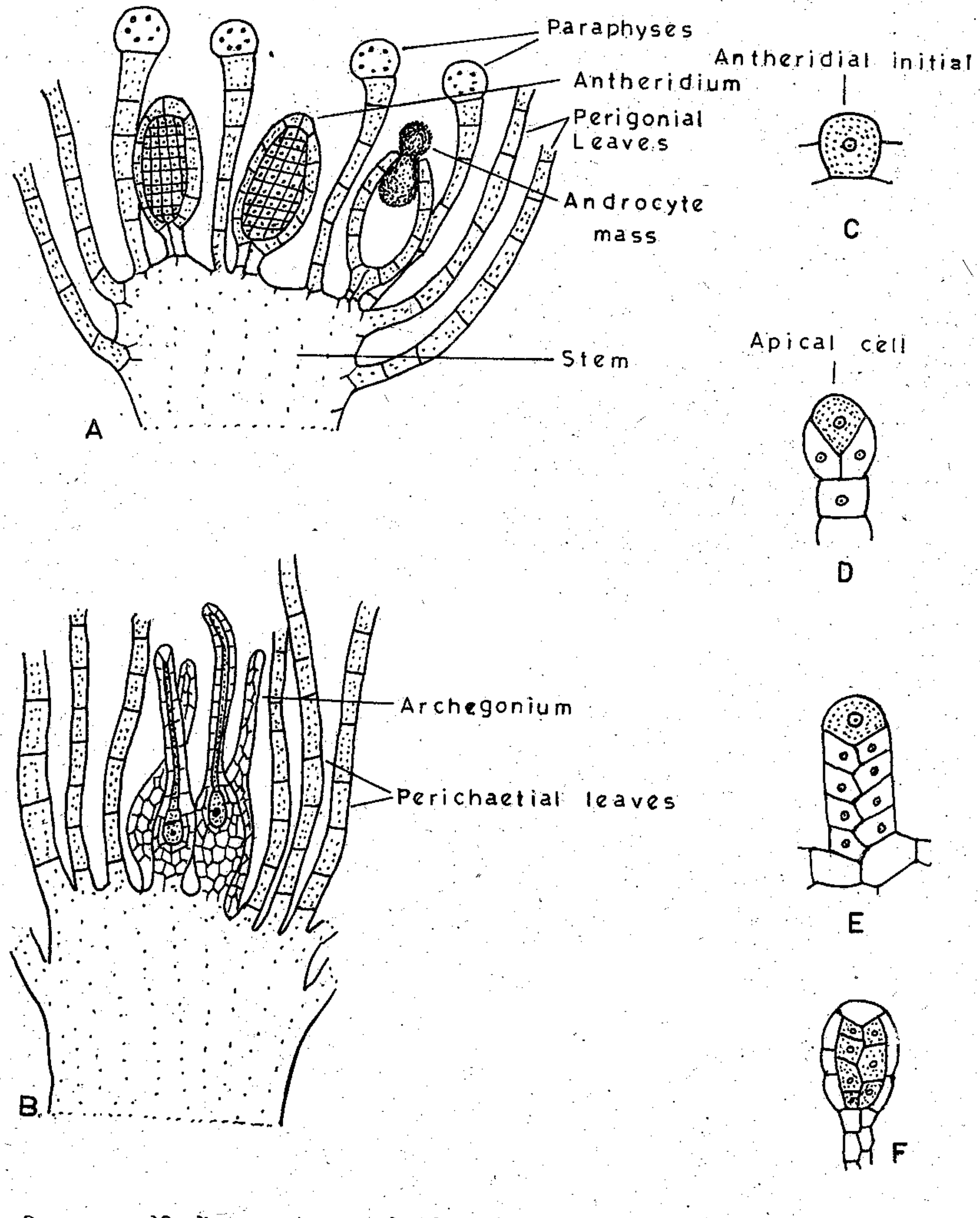

चित्र 14.16 : *फ्यूनेरिया* में प्रजनन : A) नर शाखा के शीर्ष की अनुदैर्ध्य काट पुंधानियों, सहसूत्रों तथा पत्तियों को दर्शाते हुए, B) मादा शाखा के शीर्ष की अनुदैर्ध्य काट स्त्रीधानियों एवं पत्तियों को दर्शाते हुए, C-F पुंधानी के परिवर्धन की अवस्थाएं।

अन्य पादपों की भाँति ही, पुंधानी का परिवर्धन, पुंधानी आरंभक कोशिका से आरंभ होता है। दो कर्तन मुँह वाली कोशिका, एक छोटा तंतु बनाती है जो आगे विभिन्न तलों में विभाजनों के द्वारा पुंधानी का निर्माण करती हैं (चित्र 14.16 C से F तक)।

स्त्रीधानी के विकास की आरंभिक अवस्थाओं के दौरान एक शीर्ष कोशिका स्त्रीधानी का वृंत बनाती है। उसके बाद ही यही शीर्ष कोशिका तीन उपखंड काटती है जो तीन परिधीय आरंभक तथा एक केन्द्रीय अक्षीय कोशिका बनाते हैं (चित्र 14.17 A से F तक)। स्त्रीधानी का आगे का विकास लगभग *स्फैग्नम* के विकास के समान ही होता है।

निषेचन के पश्चात् युग्मनज अनुप्रस्थ भित्ति के द्वारा विभाजित होकर एक उपआधार कोशिका तथा एक अधोआधार कोशिका बनाता है। बाद के विभाजन तकलीनुमा तरुण भ्रूण को जन्म देते हैं जिसमें दोनों सिरों पर एक शीर्ष कोशिका होती है। निचला सिरा पाद बनाता है तथा ऊपरी सिरा स्फोटिका वृंत और कैप्सूल को बनाता है। वयस्क बीजाणु-उद्भिद् में अल्प विकसित शंकु के

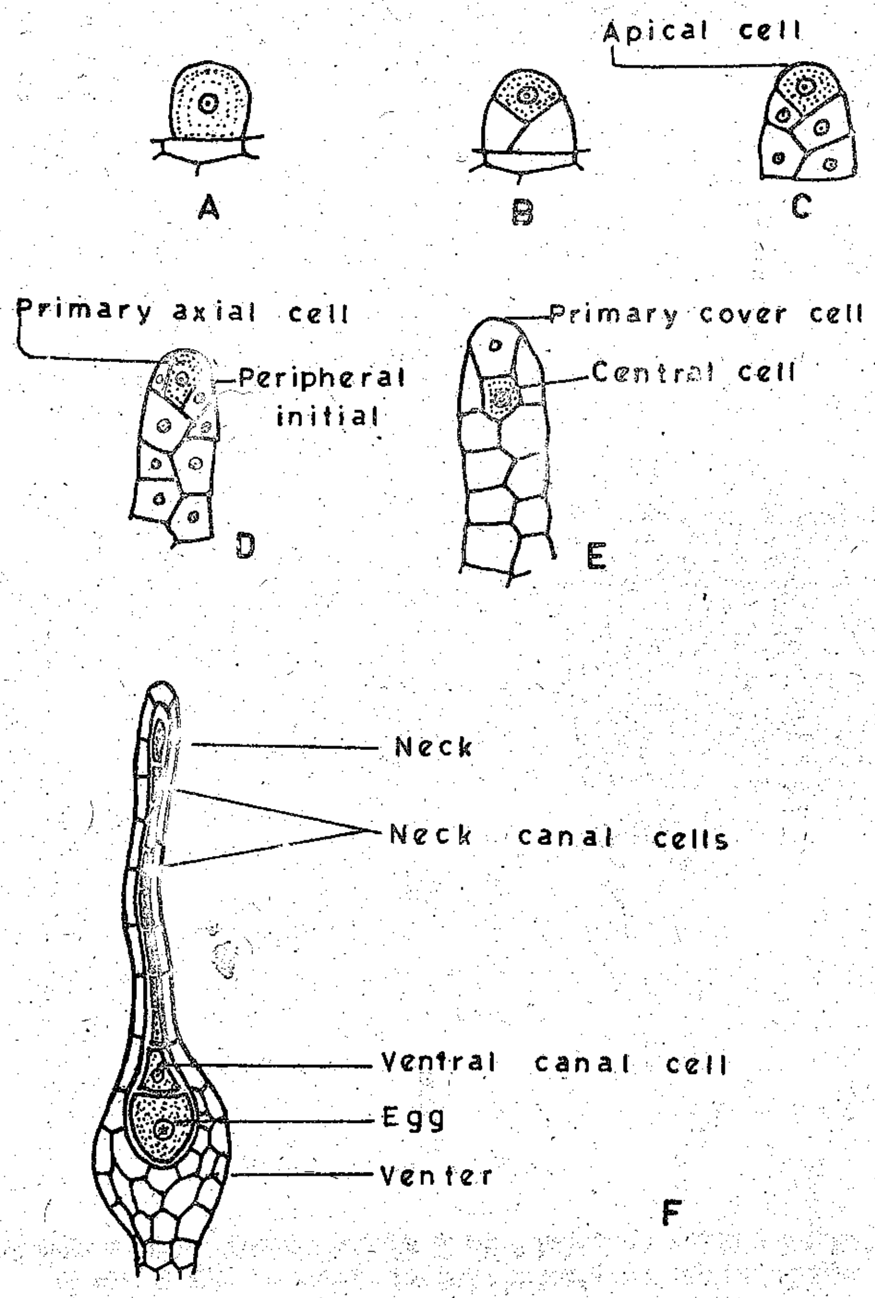

चित्र 14.17 : *फ्यूनेरिया* में स्त्रीधानी का परिवर्धन : A-E) स्त्रीधानी के परिवर्धन की अवस्थाएं, F) एक वयस्क स्त्रीधानी।

आकार का पाद दिखाई पड़ता है, जो स्त्रीधानीय शाखा के शीर्ष में धंसा रहता है। इसके ऊपर एक लंबा, लाल-भूरा तथा मुड़ा हुआ स्फोटिका वृंत होता है तथा नाशपाती के आकार का असममित, थोड़ा सा झुका हुआ, चमकते नारंगी रंग का कैप्सूल शीर्ष पर दिखाई देता है।

कैप्सूल का सबसे नीचे का भाग अध:स्फीतिका (apophysis) कहलाता है तथा ये स्फोटिका वृंत से जुड़ा रहता है (चित्र 14.18 A, B)। अध:स्फीतिका के अक्ष का निचला भाग पतली भित्ति वाली, दीर्घीकृत कोशिकाओं का बना होता है तथा ये अपने ऊपर स्थित स्तंभिका में मिल जाता है। अक्ष हरे स्पंजी ऊतक से घिरा रहता है जो अंत:स्तर से बनता है ये स्पंजी ऊतक प्रकाश संश्लेषी होता है तथा इसमें असंख्य वायु अवकाश होते हैं। स्पंजी ऊतक बाह्यत्वचा से घिरा रहता है जिसमें रंध्र होते है। जो अपने नीचे स्थित अवकाशों से जुड़े रहते हैं। कैप्सूल का मुख्य ऊपरी भाग थोड़ी सी झुकी हुई बेलनाकार संरचना होता है। इसमें केन्द्र में स्तंभिका होती है जो बीजाणु कोशों से घिरी रहती है जिनमें एकल-परत वाला प्रप्रसूतक स्थित रहता है। क्या आपको *एन्थोसिरोस* और *स्फैग्नम* में स्तंभिका की स्थिति का ध्यान है, तुलना के लिए चित्र 14.13 A तथा 14.15 E देखिए। स्तंभिका तथा बीजाणु कोश की भीतरी भित्ति अंत:स्तर से विकसित होती है, जबकि बीजाणुकोश की बाहरी भित्ति तथा उसके आसपास के ऊतक बाह्यस्तर से विकसित होते हैं। एक बड़ी बेलनाकार गुहिका बीजाणु कोष के बाहर की ओर उपस्थित रहती है। ये स्थान असंख्य हरे, दीर्घीकृत तंतुओं से पारगत (traversed) रहता है जो संबंधक (trabeculae) कहलाते हैं। कैप्सूल की भित्ति मृदूतकी कोशिकाओं की बनी होती है। इसकी सबसे बाहर की परत बाह्यत्वचा होती है आरंभ में यह हरी होती है परंतु वयस्क होने पर गहरी भूरी या नारंगी हो जाती है।

कैप्सूल का ऊपरी क्षेत्र बीजाणुओं के परिक्षेपण के लिए काफी रूपांतरित हो जाता है इसमें प्रच्छद (operculum) तथा परिमुख (peristome) पाया जाता है। ये क्षेत्र उर्वर भाग या प्रावरक (theca) से एक संकीर्णन (constriction) द्वारा अलग रहता है। संकीर्णन के ठीक नीचे एक घेरा होता है जो कैप्सूल की भित्ति की बाह्यत्वचा से अंदर की ओर खिंचा रहता है तथा परिमुख को बाह्यत्वचा से जोड़ता है। घेरे के ठीक ऊपर वलयिका (annulus) होती है। ये बाह्यत्वचीय कोशिकाओं की 5-6 अध्यारोपित (superimposed) परतों की बनी होती है। ये कैप्सूल के स्फुटन में सहायता करती है। परिमुख मुड़े हुए, पतले त्रिभुजाकार पट्टी जैसे दंतों की दो कतारों का बना होता है। प्रत्येक कतार में सोलह दांत पाए जाते हैं तथा ये दंत सर्पिल रूप से बांयी तरफ मुड़े रहते हैं (चित्र 14.18 C)। बाहरी कतार के दंत (बहिर्बीजांड द्वार) (epistome) लाल होते हैं तथा मोटे अनुप्रस्थ पट्टों द्वारा अलंकृत रहते हैं, जबकि भीतरी कतार के दंत (अंतर्बीजांड द्वार) (endostome) रंगहीन, अपेक्षाकृत छोटे तथा कोमल होते हैं (चित्र 14.18 D)। कैप्सूल का मुख प्रच्छद के द्वारा ढका रहता है।

वयस्क होने पर वलयिका की कोशिकाएं नमी सोख लेती हैं तथा तेजी से फूल जाती हैं। इसके फलस्वरूप वलयिका घेरे से अलग हो जाती है तथा प्रच्छद भी अलग हो जाता है। इसके साथ ही परिमुख दंत बाहर आ जाते हैं। बर्हिबीजांड द्वार के तत्व आर्द्रताग्राही होते हैं। वे वातावरण में आपेक्षिक नमी में बदलाव के साथ ही अंदर व बाहर चलते हैं, तथा बीजाणु के परिक्षेपण में सहायता करते हैं।

बीजाणु (चित्र 14.18 E) अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित होते हैं। बीजाणु बाह्यचोल जल अवशोषित करके फट जाता है। बीजाणु अंत:चोल जनन नलिका के रूप में बाहर निकल आता है जो दीर्घीकृत हो जाता है (चित्र 14.18 F)। ये अनुप्रस्थ विभाजनों के द्वारा विभाजित होकर बहुकोशिकीय शाखित, तंतुमय हरा प्रथमतंतु बनाता है (चित्र 14.18 H, I)। कुछ समय बाद प्रथमतंतु भूरा हो जाता है तथा उसकी अनुप्रस्थ भित्तियां तिरछे रूप से घूम जाती हैं। इस प्रथम तंतु पर कलिकाएं उग आती हैं तथा अंतत: पर्णिल युग्मकधर विकसित हो जाता है।

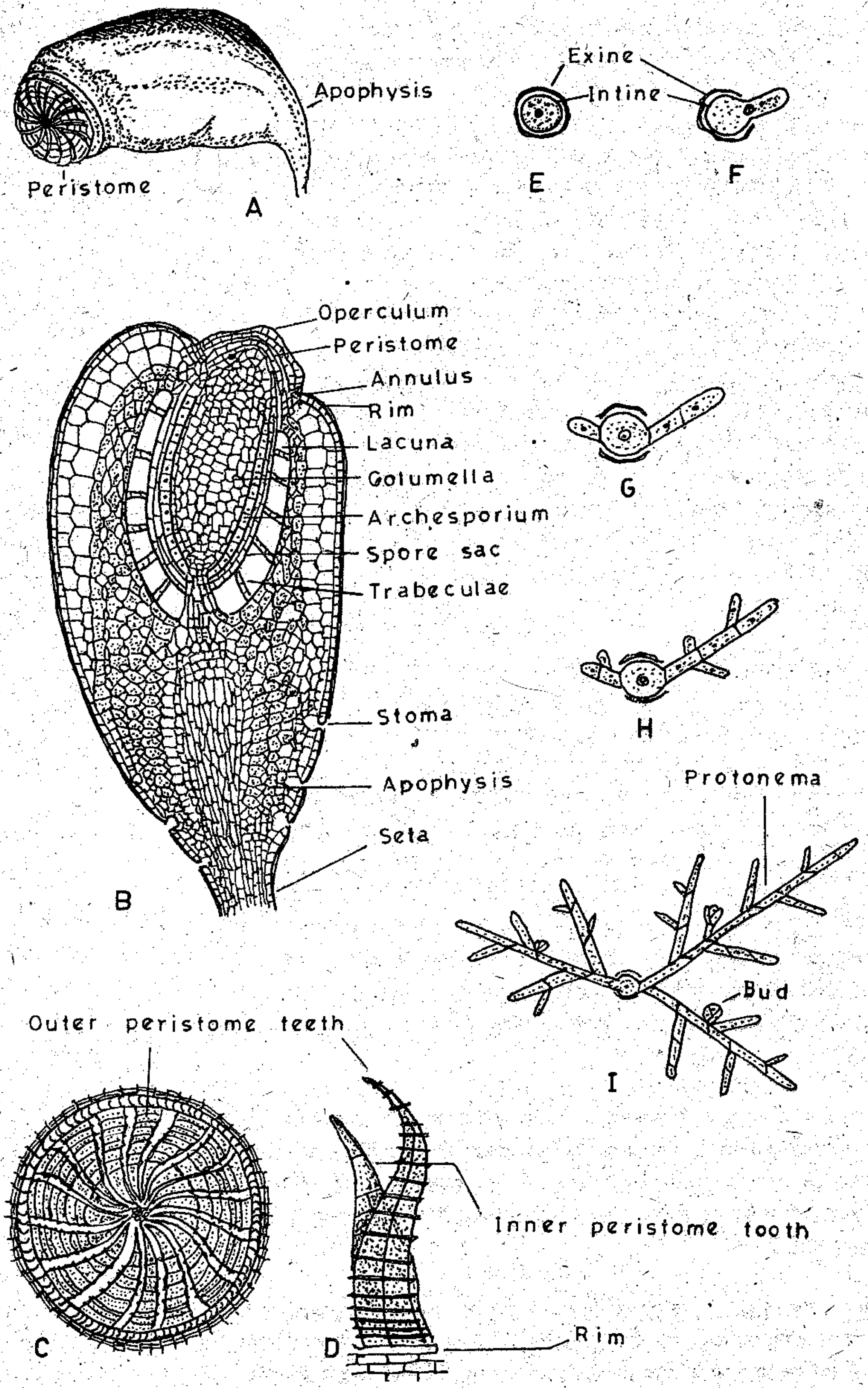

चित्र 14.18 : *फ्यूनेरिया* : A-D) बीजाणु-उद्भिद् की संरचना: A) वयस्क कैप्सूल जुड़े हुए परिमुख को दिखाते हुए, B) कैप्सूल की अनुदैर्घ्य काट, C) सतह परिदृश्य में बाह्य परिमुख, D) परिमुख का एक भाग एक बाह्य परिमुख दंत तथा एक अंत परिमुख दंत को दिखाते हुए, E) बीजाणु / युग्मकोद्भिद् का विकास: F-I) बीजाणु के अंकुरण तथा प्रथमतंतु और कलिकाओं के निर्माण की अवस्थाएं।

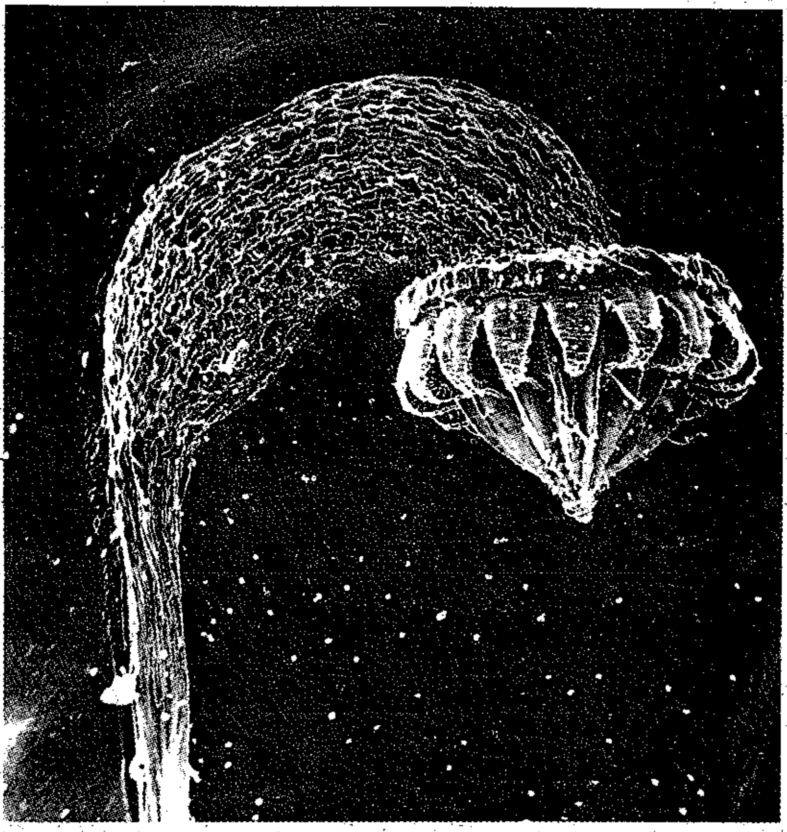

चित्र 14.19 : गोपक को हटाने के बाद मॉस कैप्सूल का क्रम वीक्षण इलेक्ट्रॉन माइक्रोग्राफ। परिमुख दंत, बीजाणु भी दिखाई पड़ रहे हैं (प्रो. पी. दयानंदन तथा के सौजन्य से)।

चित्र 14.20 : प्रथमतंतु से विकसित होता हुआ तरुण मॉस का युग्मकोद्भिद् (प्रो. पी. दयानंदन के सौजन्य से)।

बोध प्रश्न 14.7

फ्यूनेरिया के संदर्भ में निम्नलिखित वक्तव्य सत्य हैं या असत्य। दिए गए कोष्ठकों में स (सत्य) या अ (असत्य) लिखकर इंगित कीजिए।

i) बीजाणु-उद्भिद् पाद, स्फोटिका वृंत तथा कैप्सूल में विभेदित होता है। ☐

ii) पुंधानियां तथा स्त्रीधानियां एक ही पादप पर परंतु भिन्न शाखाओं पर विकसित होती हैं। ☐

iii) पुंधानीय शीर्षों में पुंधानियों के बीच में बहुत सी बहुकोशिकीय रोम जैसी संरचनाएं पाई जाती हैं। ☐

iv) *फ्यूनेरिया* का कैप्सूल गोलाकार तथा सीधा होता है। ☐

v) *फ्यूनेरिया* में प्रप्रसूतक स्तंभिका को ऊपर से ढके रहता है। ☐

vi) कैप्सूल के घेरे के समीप उपस्थित परिमुख दंत पोषण प्रदान करने में सहायता करते हैं। ☐

चलिए अब हम ब्रायोफ़ाइट्स के तीनों वर्गों की प्रमुख विशेषताओं का सार लिखते हैं।

हिपेटिकोप्सिडा

1) युग्मकोद्भिद् सामान्यत: पृष्ठाधर, थैलसाभ या पर्णिल होता है। जब पर्णिल होता है, तब पत्तियां मध्यशिरा विहीन होती हैं।

2) आंतरिक रूप से युग्मकोद्भिद् या तो सामान्य अथवा बहुल से ऊतकों का बना होता है, परंतु प्रकाश संश्लेषी कोशिकाओं में सदैव असंख्य पाइरीनॉइड्स विहीन क्लोरोप्लास्ट होते हैं।

3) मूलाभास एककोशिकीय तथा अशांखित होते हैं।

4) लैंगिक अंग थैलस की पृष्ठ सतह पर सतही कोशिकाओं से विकसित होते हैं।

5) बीजाणु-उद्भिद् या तो सरल; या पाद तथा कैप्सूल में विभेदित; या पाद, स्फोटिका वृंत तथा कैप्सूल में विभेदित होता है।

6) प्रप्रसूतक भ्रूण के अंतस्तर से विकसित होता है।

7) इलेटर्स सामान्यत: पाए जाते हैं।

उदाहरण : *रिक्सिया, मार्केन्शिया, पेलिया*।

एन्थोसिरोटोप्सिडा

1) हिपेटिकोप्सिडा की भांति ही पादप काया पृष्ठाधर होती है परंतु आंतरिक विभेदन नहीं दर्शाती है।

2) थैलस की प्रत्येक कोशिका में सामान्यत: एक क्लोरोप्लास्ट होता है जिसमें स्पष्ट केन्द्रीय पाइरीनॉइड होता है।

3) मूलाभास चिकनी भित्ति वाले होते हैं तथा शल्क अनुपस्थित होते हैं।

4) लैंगिक अंगों की उत्पत्ति अधोत्वचीय होती है तथा ये युग्मकोद्भिद् में धंस रहते हैं।

5) बीजाणु-उद्भिद् में कंदीय पाद, विभज्योतकी क्षेत्र तथा लंबा बेलनाकार कैप्सूल होता है।

6) बीजाणु-उद्भिद् अंतर्वेशी विभज्योतक की उपस्थिति के कारण सतत् वृद्धि दर्शाते हैं।

7) प्रप्रसूतक सामान्यतः बहिःस्तर से विकसित होता है।

8) कूटइलेटर्स पाए जाते हैं।

उदाहरण: *एन्थोसिरोस*

ब्रायोप्सिडा

1) युग्मकोद्भिद् तने जैसे अक्ष तथा पत्ती जैसी संरचना में विभेदित होता है।

2) मूलाभास शाखित, बहुकोशिकीय व तिरछी अनुप्रस्थ भित्तियों वाले होते हैं।

3) युग्मकोद्भिद् के परिवर्धन की दो अवस्थाएं होती है – पहली प्रथमतंतु अवस्था जो बहुकोशिकीय शाखित, तंतुमय प्रथमतंतु द्वारा प्रदर्शित होती है तथा इसके बाद अगली अवस्था स्तर, पर्णिल युग्मकधर द्वारा प्रदर्शित होती है जो प्रथम तंतु पर विकसित होते हैं।

4) लैंगिक अंग सतर युग्मकधर के शीर्ष पर स्थित होते हैं।

5) बीजाणु-उद्भिद् सामान्यतः पाद, स्फोटिका वृंत तथा कैप्सूल में विभेदित होता है। कैप्सूल की भित्ति में सक्रिय अथवा निष्क्रिय रंध्रों युक्त बहुत सी परतें होती हैं। प्रप्रसूतक अंतःस्तर अथवा बाह्यस्तर दोनों से विकसित होता है।

6) बीजाणुओं के परिक्षेपण के लिए परिमुख उपस्थित होता है।

उदाहरण: *फ्यूनेरिया*

14.4 ब्रायोफ़ाइट्स में बीजाणु-उद्भिद् का विकास

ब्रायोफ़ाइट्स के विभिन्न वंशों के बीजाणु-उद्भिदों का अध्ययन करते वक्त आपने नोट किया होगा कि *रिक्सिया* से *फ्यूनेरिया* तक बीजाणु-उद्भिद् की संरचना की जटिलता में क्रमिक वृद्धि होती है। बोवर (Bower, 1935) ने मत रखा कि *रिक्सिया* के सरल (सबसे प्राचीन) बीजाणु-उद्भिद् से उच्च ब्रायोफ़ाइट्स के अधिक जटिल बीजाणु-उद्भिद् विकसित हुए हैं। उनके अनुसार *रिक्सिया* काल्पनिक पूर्वज के सबसे करीब है तथा विकास के दौरान विभवी बीजाणुजन ऊतक का अनुक्रमिक बंध्यीकरण (progressive sterlisation of potentially sporogenous tissue) हुआ है। अन्य शब्दों में, अधिक से अधिक बीजाणुजन ऊतक बीजाणु निर्माण की बजाय अन्य कार्यों की ओर उन्मुख हुआ है। इस विभवी बीजाणुजन ऊतक का एक भाग पाद को बनाता है जो अवशोषण तथा जमीन से जोड़ने के कार्य में सहायक है। इसका कुछ भाग भोजन के निर्माण के लिए पर्णहरिती ऊतक बनाता है जिसमें अन्तरा कोशिकीय अवकाश तथा रंध्र होते हैं। इस विभवी बीजाणुजन ऊतक का कुछ भाग इलैटर्स, परिच्छद, परिमुख, स्फोटिका वृंत तथा स्तंभिका आदि के निर्माण की ओर उन्मुख हो जाता है, जो विभिन्न कार्यों जैसे संचयन तथा बीजाणुओं का परिक्षेपण करता है।

रिक्सिया के सरल तथा आदि बीजाणु-उद्भिद् से लेकर सबसे जटिल प्रकार तक बढ़ती हुई जटिलता का एक आरोही क्रम व्यवस्थित किया जा सकता है। यहां पर उद्धृत किए गए बहुत से उदाहरण प्रजनन के विस्तृत अध्ययन के लिए आपके पाठ्यक्रम में सम्मिलित नहीं किए गए हैं, परंतु पूरी कहानी के लिए आवश्यक हैं।

सबसे सरल प्रकार जैसे *रिक्सिया* में, बीजाणु-उद्भिद् सिर्फ कैप्सूल के द्वारा प्रदर्शित होता है जिसमें एकल परत की जैकेट होती है जो सिर्फ बीजाणुओं के पिंड को लिए होती है। इस क्रम में अगली अवस्था *कार्सीनिया* (*Corsinia*) जैसे प्रकारों में पाई जाती है, जो हिपेटिकोप्सिडा के ही सदस्य हैं, जिनमें बहुत छोटा बंध्य पाद विकसित हो जाता है। इनके कैप्सूल में एक परत की जैकेट होती है, परंतु कैप्सूल के भीतर कुछ बीजाणुजन कोशिकाएं, बीजाणु बनाने की बजाय बंध्य पोषक कोशिकाएं बनाती हैं। *टार्जिओनिया* (*Targionia*) द्वारा प्रदर्शित अगली अवस्था में, पाद बड़ा हो जाता है तथा पतला स्फोटिका वृंत तथा इलेटर्स भी विभवी बीजाणुजन ऊतक से विकसित हो जाते हैं। अगली अवस्था *मार्केन्शिया* के बीजाणु-उद्भिद् में देखी जा सकती हैं, जिसमें जैसा कि आप जानते हैं, चौड़ा पाद, सुविकसित स्फोटिका वृंत तथा सर्पिल स्थूलन वाले लंबे इलेटर्स भी पाए जाते हैं। विकास के दौरान बीजाणुजन ऊतक का बंध्यीकरण जारी रहता है जैसा कि *पेलिया* से स्पष्ट है जिसमें बंध्य ऊतक में स्थूल पाद, लंबा स्फोटिका वृंत तथा बहुपरतीय जैकेट वाला कैप्सूल, सामान्य इलेटर्स व साथ ही इलेटरधर भी होते हैं। वास्तविक बीजाणुजन ऊतक पूरे बीजाणु-उद्भिद् के एक छोटे प्रतिशत तक सीमित रह जाता है।

आगे, बीजाणुजन ऊतक में और अधिक बंध्यीकरण के कारण और अधिक कमी *एन्थोसिरोस* में पाई जाती है। बंध्य ऊतक में पाद, 4-6 परत वाली कैप्सूल की भित्ति जिसमें रंध्र, पर्णहरिती ऊतक, दीर्घीकृत कोशिकाओं की केन्द्रीय स्तंभिका तथा कूटइलेटर्स होते हैं। बीजाणुजन ऊतक सिर्फ बीजाणु कोशिकाओं के द्वारा प्रदर्शित होता है। ब्रायोफाइट्स में, सबसे अधिक विभवी बीजाणुजन ऊतक का बंध्यीकरण मॉसेस में देखा जा सकता है, उदाहरण *फ्यूनेरिया*। इस मॉस में बंध्य ऊतक में पाद, लंबा स्फोटिका वृंत, अधःस्फीतिका, कई परतों वाली कैप्सूल की भित्ति, स्तंभिका, बीजाणुकोश की भित्ति, परिमुख, वलयिका तथा परिच्छद सम्मिलित हैं।

टैरिडोफाइट्स के बारे में आगामी खंड में, आप पढ़ेंगे कि किस प्रकार बीजाणु-उद्भिद् जीवन चक्र में प्रभावी प्रावस्था बन जाता है।

14.5 सारांश

ब्रायोफाइट्स में प्रजनन के बारे में इस इकाई में आपने पढ़ा कि

- ब्रायोफाइट्स में लैंगिक प्रजनन विषमयुग्मकी प्रकार का होता है जिसमें मादा युग्मक अचल तथा नर युग्मक चल होता है। नर तथा मादा लैंगिक अंग क्रमशः पुंधानी तथा स्त्रीधानी कहलाते हैं। लैंगिक अंग कोशिकाओं की परत के द्वारा संरक्षित रहते है जो जैकेट जैसी लगती है। युग्मनज में विश्रान्ति अवस्था नहीं पाई जाती है तथा ये समसूत्री विभाजन के द्वारा भ्रूण का निर्माण करता है। साथ ही, बीजाणु-उद्भिद् के कैप्सूल में बीजाणु अर्धसूत्री विभाजन के द्वारा बनते हैं। बीजाणु अंकुरित होने पर प्रथम तंतु उत्पन्न करते है जो युग्मकोद्भिद् को जन्म देता है।

- *रिक्सिया* में लैंगिक अंग थैलस की पृष्ठ सतह पर मध्य खाँच में धँसे हुए रहते हैं। बीजाणु-उद्भिद् सिर्फ कैप्सूल के द्वारा प्रदर्शित होता है। पाद और स्फोटिका वृंत अनुपस्थित होते हैं। प्रप्रसूतक सिर्फ बीजाणुओं को बनाता है।

- *मार्केन्शिया* में पुंधानी तथा स्त्रीधानी वृंतीय धानियों पर उगती हैं, जिन्हें क्रमशः पुंधानीधर तथा स्त्रीधानीधर कहते हैं। बीजाणु-उद्भिद् पाद, स्फोटिका वृंत तथा कैप्सूल में विभेदित रहता है जिसमें एक कोशिकीय मोटाई की भित्ति होती है। बीजाणुओं के अतिरिक्त कैप्सूल में इलेटर्स भी होते हैं।

- *पेलिया* में पुंधानी थैलस में धंसी रहती है जबकि स्त्रीधानी पृष्ठ सतह पर उगती है तथा सहपत्र चक्र द्वारा संरक्षित रहती है। बीजाणु-उद्भिद् शंकुरूप पाद, लंबे स्फोटिका वृंत तथा गोलाकार कैप्सूल में विभेदित रहता है जिसमें बहुपरती जैकेट होती है। कैप्सूल के अंदर बीजाणु, इलेटर्स तथा

स्थिर इलेटरधर पाए जाते हैं। इस वंश का विशेष गुण है कि कैप्सूल के अंदर ही बीजाणुओं का अंकुरण होता है।

- *एन्थेसिरोस* में पुंधानियां छतदार गुहाओं में उत्पन्न होती है तथा स्त्रीधानी की ग्रीवा थैलस के ऊपर निकली हुई नहीं होती है। बीजाणु-उद्भिद् में कंदीय पाद, विभज्योतकी क्षेत्र तथा सींग जैसा कैप्सूल होता है। कैप्सूल के केन्द्र में स्तंभिका होती है जो बीजाणुओं तथा कूटइलेटर्स से घिरी रहती है।

- *स्फैग्नम* में पुंधानियां तथा स्त्रीधानियां अलग-अलग शाखाओं पर उत्पन्न होती हैं। पुंधानियां पत्तियों के नीचे उगती हैं जबकि स्त्रीधानियां अंतस्थ स्थित होती हैं। बीजाणु-उद्भिद् कंदीय पाद तथा गोलाकार कैप्सूल में विभेदित रहता है। स्फोटिका वृंत अनुपस्थित होता है। स्तंभिका जोकि गुम्बदाकार होती है वह प्रप्रसूतक के द्वारा ढकी रहती है। युग्मकोद्भिद् की वृंत जैसी संरचना के द्वारा बीजाणु-उद्भिद् उठे रहते हैं। यह संरचना पादाभ (Pseudopodium) कहलाती है।

- *फ्यूनेरिया* में पुंधानियां तथा स्त्रीधानियां एक ही पादप में अलग-अलग शाखाओं पर उगती हैं। लैंगिक अंगों के बीच में सहसूत्र पाए जाते हैं जो अंतस्थ गुच्छों में उत्पन्न होते हैं। बीजाणु-उद्भिद् पाद, लंबे स्फोटिका वृंत तथा नाशपाती के आकार के कैप्सूल में विभेदित रहता है जो थोड़ा सा मुड़ा हुआ होता है। कैप्सूल के केन्द्र में स्तंभिका होती है जो एक कोशिकीय मोटाई के प्रप्रसूतक, बड़े वायु अवकाशों तथा बहुत कोशिकीय मोटाई की कैप्सूल भित्ति से घिरी रहती है। कैप्सूल के ऊपरी भाग में परिमुख दंतों की दो वलय पाई जाती हैं जो एक प्रच्छद द्वारा ढकी रहती हैं।

- ब्रायोफाइट्स में बीजाणु-उद्भिद् के विकास के दौरान, विभवी बीजाणुजन ऊतक का प्रगामी बंध्यीकरण हुआ है यह तथ्य उपरोक्त वंशों के अध्ययन से स्पष्ट होता है।

14.6 अंत में कुछ प्रश्न

1. *रिक्सिया, एन्थोसिरोस* तथा *स्फैग्नम* के बीजाणु-उद्भिदों की अनुदैर्ध्य काट के चिन्हित आरेख बनाइए तथा उनकी संरचनाओं की तुलना कीजिए।

2. *एन्थोसिरोस* में पुंधानी के परिवर्धन का संक्षिप्त विवरण दीजिए। ये *मार्केन्शिया* से किस तरह भिन्न है।

3. ब्रायोफाइट्स में बीजाणु-उद्‌भिद् के परिवर्धन का वर्णन कीजिए।

4. *फ्यूनेरिया* के कैप्सूल की अनुदैर्ध्य काट का चिन्हित आरेख बनाइए।

5. ब्रायोफाइट्स के जीवनचक्र के प्रमुख चरणों को बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

14.7 उत्तर

बोध प्रश्न

14.1 i) स ii) अ iii) स iv) अ

v) अ vi) स vii) स viii) स

14.2 i) उभयलिंगाश्रयी, ii) मध्य खांच,

iii) सतही कोशिकाओं, iv) एकपरतीय,

v) द्विकशाभी, vi) एकल रूप से,

vii) आवश्यक, viii) अंतःस्तर

ix) अर्धसूत्री विभाजन

14.3 i) जेमी, ii) एकलिंगाश्रयी,

iii) युग्मकधर, iv) शाखा,

v) ऊपरी, vi) नीचे की,

vii) छह, viii) इलेटर्स

14.4 i) अ ii) स iii) स iv) अ

v) अ vi) स vii) स

14.5 अ) i) स ii) अ iii) स

v) स v) अ

ब) i) अधोत्वचीय, ii) नहीं निकली

iii) छतयुक्त

14.6 क) i) अ ii) स iii) स iv) स

ख) i) शीर्ष, ii) पादाभ, iii) प्रच्छद, iv) स्तंभिका

14.7 i) स ii) स iii) स iv) अ

v) अ vi) अ

अंत में कुछ प्रश्न

1) सेक्शन 14.3.1, 14.3.4, 14.3.5 देखिए

2) सेक्शन 14.3.2, 14.3.4 देखिए

3) सेक्शन 14.4 देखिए

4) चित्र 14.17 देखिए

5) सेक्शन 13.2 देखिए

इकाई 15 ब्रायोफाइट्स का महत्व एवं उपयोग

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

अध्ययन निर्देश

15.2 ब्रायोफ़ाइट्स के उपयोग

औषधि के रूप में

निर्माण के सामान के रूप में

सजावटी वस्तुओं के रूप में

पैकिंग सामग्री के रूप में

घरेलू उपयोग

व्यर्थ जल के शोधन में

जंतु खाद्य तथा आश्रय सामग्री के रूप में मॉसेस

बागवानी में ब्रायोफ़ाइट्स के उपयोग

15.3 ब्रायोफ़ाइट्स की पारिस्थितिकीय भूमिका

वनस्पति के अगुआ के रूप में

मृदा अपरदन में भूमिका

15.4 सूचक के रूप में ब्रायोफ़ाइट्स

खनिज निक्षेपों के सूचक

पी एच के सूचक

बीज-पादप समुदाय के सूचक

वायु प्रदूषण के सूचक

जल प्रदूषण के सूचक

15.5 अतीत के संरक्षक के रूप में ब्रायोफ़ाइट्स

15.6 ब्रायोफ़ाइट्स तथा शोध कार्य

15.7 सारांश

15.8 अंत में कुछ प्रश्न

15.9 उत्तर

15.1 प्रस्तावना

इकाई 13 तथा 14 में आपने पढ़ा कि ब्रायोफ़ाइट्स छोटे हरे पादप होते हैं जो सामान्यत: छायादार तथा नम स्थानों पर उगते हैं तथा वे भूमि पर एक सघन कुशन बना देते हैं। आपने इनके प्रतिनिधि वंशों की आकारिकी एवं शारीर का भी अध्ययन किया है तथा ये भी पढ़ा है कि ये कैसे अलैंगिक तथा लैंगिक तरीके से प्रजनन करते हैं।

इस इकाई में आप ब्रायोफ़ाइट्स के महत्व तथा उपयोगों के बारे में पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- ब्रायोफ़ाइट्स के उपयोगों को बता सकेंगे,
- मृदा अपरदन को रोकने में ब्रायोफ़ाइट्स की भूमिका को समझा सकेंगे,
- वनस्पति के अग्रदूत के रूप में ब्रायोफ़ाइट्स की भूमिका की चर्चा कर सकेंगे,
- ब्रायोफ़ाइट्स के बागवानी में उपयोगों को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- खनिज निक्षेप, पी एच, बीज पादप समुदाय तथा प्रदूषण के सूचक के रूप में ब्रायोफ़ाइट्स की भूमिका को समझा सकेंगे,
- अतीत को सुरक्षित रखने में ब्रायोफ़ाइट्स की भूमिका को समझा सकेंगे, तथा
- शोध कार्य में ब्रायोफ़ाइट्स के उपयोगों की चर्चा कर सकेंगे।

अध्ययन निर्देश

ब्रायोफ़ाइट्स के कुछ उपयोगी वंशों तथा जातियों के नाम इस इकाई में उल्लेख किये गये हैं। परन्तु उन्हें सिर्फ संदर्भ के लिए दिया गया है, और आपसे उन सभी नामों को याद करने की आशा नहीं की जा रही है। हम चाहते हैं कि आप में से कुछ विद्यार्थी जो हिमालयी क्षेत्रों में रहते हैं, उनके संभावित उपयोगों की पड़ताल करें। आप उन जातियों की तलाश कर सकते हैं जो बहुतायत में उगती हैं अथवा जिन्हें आसानी से उगाया जा सकता है। इस इकाई का अध्ययन उनके व्यवसायिक उपयोगों को ध्यान में रखकर करें।

15.2 ब्रायोफ़ाइट्स के उपयोग

डॉक्टराइन ऑफ सिग्नेचर (Doctrine of Signature)

मध्यकालीन युग में एक अनोखा अंधविश्वास था कि ईश्वर प्रत्येक पादप को उसका औषधीय महत्व इंगित करने के लिए किसी न किसी तरीके से चिन्हित करता है। पादप का बाहरी प्रकार इस बात का सुराग देता है कि शरीर का कौन सा अंग उसके द्वारा उपचार करने से लाभान्वित होगा। उदाहरण के लिए, यकृत के आकार से मिलते-जुलते पादप (हिपेटिसी) यकृत के लिए लाभदायक माने जाते थे।

ब्रायोफ़ाइट्स विश्व के ठंडे शीतोष्ण भागों में जिनमें हिमालय भी सम्मिलित है, वनस्पति का महत्वपूर्ण भाग बनाते हैं। इन स्थानों के मूल निवासियों के दैनिक जीवन में ब्रायोफ़ाइट्स के उपयोगों के अध्ययन से यह पता चलता है कि इन क्षेत्रों में ब्रायोफ़ाइट्स विस्तृत रूप से औषधि, निर्माण की वस्तुओं, कीट प्रतिरोधी (insect repellents), पैड (pad) तथा भराई (stuffing) के सामान, पैकिंग का सामान, दरार भरने के तत्व (chinking materials) तथा धूम्र फिल्टर्स (smoke filters) के रूप में उपयोग किए जाते हैं। इस अध्याय में आप ब्रायोफ़ाइट्स के इन उपयोगों का विस्तार से अध्ययन करेंगे।

15.2.1 औषधि के रूप में

प्राचीन काल में ब्रायोफ़ाइट्स जड़ी-बूटी (herbal) औषधियों के रूप में विश्व के विभिन्न भागों में उपयोग किए जाते थे। डाइआस्कोराइड्स (Dioscorides) ने *मार्केन्शिया पॉलीमोर्फा* (*Marchantia polymorpha*) में औषधीय गुण बताए थे। मध्य युग के दौरान, बड़े थैलसनुमा लिवरवर्ट्स की **डॉक्टराइन ऑफ सिग्नेचर** (Doctrine of signature) के अनुसार व्याख्या की गई थी। लिवरर्ट्स का काढ़ा (decoction) यकृत (liver) की गड़बड़ियों के उपचार में प्रभावी माना जाता था तथा "हेयरी केप मॉस" (hairy-cap moss) स्त्रियों के बालों के सौन्दर्य को बढ़ाने में प्रभावी माना जाता था।

उत्तरी मोन्टाना (संयुक्त राष्ट्र अमरीका) में *पोलीट्राइकम जूनीपेरीनम* (*Polytrichum juniperinum*) का आज भी विभिन्न औषधियों के निर्माण में उपयोग किया जाता है। कुँमाऊ (उत्तर-पश्चिमी हिमालय) क्षेत्र में लिवरवर्ट्स *मार्केन्शिया पॉलीमॉर्फा* (*Marchantia polymorpha*) तथा *मार्केन्शिया पामेटा* (*M. palmata*) का फोड़े फुंसियों आदि में औषधि के रूप में उपयोग किया जाता है, जबकि मॉसेस का जले, कटे तथा घाव आदि के लिए मल्हम बनाने में उपयोग किया जाता है। चीन में, ब्रायोफ़ाइट्स की 30 से भी अधिक जातियां उपचारी तत्वों के रूप में पहचानी जाती हैं।

इन औषधियों के प्रभावों की पुष्टि के लिए शोध कार्य भी किए गए हैं तथा ये पाया गया है कि मॉस *रोडोब्रायम गिगेन्टियम* (*Rhodobryum giganteum*) का सत, जो एन्जाइना (angina) (तीव्र संकीर्णन पीड़ा का दौरा) के इलाज के लिए उपयोग किया जाता है, उससे सफेद चूहे की महाधमनी (aorta) में रक्त प्रवाह की दर 30% से अधिक तक बढ़ी, जिसके कारण ऑक्सीजन प्रतिरोध की मात्रा घट गई।

आधुनिक पादप रसायन शास्त्रियों (phytochemists) तथा जैवरसायनशास्त्रियों (biochemists) ने बड़ी संख्या में जैविक रूप से सक्रिय कार्बनिक यौगिकों को ब्रायोफाइट्स से निकाला है, जिनके औषधि निर्माण उद्योग में काफी उपयोग हैं। ये प्रदर्शित किया जा चुका है कि ब्रायोफाइट्स के कुछ उत्पाद सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोक देते हैं। *रैडुला* स्पी (*Radula* spp.) की जाति से निकाले गए 3-प्रेनाइल बाईबेन्जाइल्स (3-prenyl bibenzyls) रसायन *स्टैफाइलोकॉकस ऑरेन्स* (*Staphylococcus aurens*) की वृद्धि को रोक देते हैं।

ब्रायोफ़ाइट्स की बहुत सी जातियों में ट्यूमररोधी (antitumor) गुण पाए जाते हैं। प्रथम ट्यूमररोधी सक्रिय यौगिक-डिप्लोफिलीन (diplophylline) को लिवरवर्ट्स से प्राप्त किया गया था। ये यौगिक मानव कार्सिनोमा (नासूर) के विरुद्ध प्रभावी क्रियाशीलता दिखाता है। ट्यूमररोधी सेस्क्यूटर्पीनोइड्स (sesqueterpenoids) भी बहुत से लिवरवर्ट्स से निकाले गए हैं।

निम्नलिखित ट्यूमररोधी सेस्क्यूटर्पीनॉइड्स विभिन्न ब्रायोफ़ाइट्स से निकाले गए हैं।

तालिका 15.1 : ब्रायोफ़ाइट्स से निकाले गए ट्यूमररोधी सेस्क्यूटर्पीनॉइड्स

डिप्लोफिलीन (Diplophyllin)	*डिप्लोफिलम एल्बीकन्स* (*Diplophyllum albicans*) *डिप्लोफिलम टैक्सीफोलियम* (*D. taxifolium*)
मार्केन्टिन ए (Marchantin A)	*मार्केन्शिया पॉलीमॉर्फा* (*Marchantia polymorpha*) *मार्केन्शिया टोसाना* (*M. tosana*) *मार्केन्शिया पेलेसीआ* (*M. palacea*)
रिकार्डिन (Riccardin)	*रिकार्डिया मल्टीफिडा* (*Riccardia multifida*)
पेरोटेटिन ई (Perrottetin E)	*रैडुला पेरोटेटाई* (*Radula perrottetii*)
प्लेजियोचिलिन ए (Pagiochiline A)	*प्लैजियोकाइला* स्पी (*Plagiochila* sp.)
पिंग्विनसेन (Pinguinsane)	*ट्रोकोलेजुनीआ सेन्डीविसेन्सिस* (*Trocholejeunea sandivicensis*)

स्फैग्नम सदियों से अवशोषक पट्टी (absorbent dressing) के रूप में उपयोग किया जाता रहा है। सबसे पहले मरहम पट्टी के लिए बड़े स्तर पर *स्फैग्नम* का उपयोग रूस-जापान युद्ध के दौरान, 1904-1905 में किया गया था। सूती पट्टी की तुलना में *स्फैग्नम* की पट्टी के निम्नलिखित लाभ थे।

i) वे अपने शुष्क भार की तुलना में 16-20 गुना अधिक तरल अवशोषित कर लेती थीं। जबकि सूती पट्टियां सिर्फ 4-6 गुना अवशोषित कर सकती थीं।

ii) वे ठंडी और आरामदायक थी क्योंकि मॉस छिद्रयुक्त होते हैं। (मॉसेस के शारीरीय गुणों का ध्यान कीजिए, चित्र 13.8), इसकी पट्टी आपरेशन के बाद अपेक्षाकृत 24 घंटे तक सूखी रहती थी, उन स्थितियों में भी जब घाव का खून काफी प्रवाह से बह रहा हो।

iii) पट्टी 2-3 दिन तक बंधी रह सकती थी जो सूती पट्टी की तुलना में लम्बा समय है।

iv) *स्फैग्नम* में स्वयं भी थोड़ा सा प्रतिरोधी (antiseptic) गुण होता है जो सूती पट्टी में नही होता है।

पादम रोगाणुओं के विरुद्ध प्रभावी : ब्रायोफ़ाइट्स कुछ पादप रोगाणुओं के विरुद्ध भी क्रियाशीलता दर्शाते हैं। लिवरवर्ट *हर्बर्टस एडंकस* (*Herbertus aduncus*) का सत् कुछ पादप रोगजनक

निम्नलिखित वंश सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को रोक देते हैं।

स्फैग्नम पोर्टोरिसेन्स (*Sphagnum portoricense*),
स्फैग्नम स्ट्रिक्टम (*S. strictum*),
कोनोसिफेलम कोनिकम (*Conocephalum conicum*),
रिबूलिया (*Reboulia*),
पेलावीसीनिया (*Pallavicina*),
ड्यूमोर्टिएरा हिर्सुटा (*Dumortiera hirsuta*),
एट्रीकम (*Atrichum*),
मायम (*Mnium*),
पोलीट्राइकम (*Polytrichum*),
डाइक्रेनम (*Dicranum*),
बार्बुला (*Barbula*),
टिमिएला (*Timmiella*),
रैडुला (*Radula*)

कवकों की वृद्धि को रोक देता है। मॉसेस की बहुत सी जातियों [जैसे *डाइक्रेनम स्कोपेरियम* (*Dicranum scoparium*) तथा *डाइक्रेनम जेपोनिकम* (*D. japonicum*)] में कुछ विरले वसा अम्ल (fatty acids) होते हैं जो धान प्रध्वंस (rice blast) करने वाले कवक *पाइरीकुलेरिया ओराइज़ी* (*Pyricularia oryzae*) की वृद्धि को पूरी तरह से रोक देते हैं।

तालिका 15.2 : ब्रायोफ़ाइट्स से चिकित्सीय उपयोग

जातियां	चिकित्सीय महत्व
रोडोब्रायम गिगेन्टियम और (*Rhodobryum giganteum*) *रोडोब्रायम रोसियम* (*R. roseum*)	हृदवाहिका (cardio-vascular) रोगों तथा उत्तेजना (nervousness) के उपचार में
पोलीट्राइकम कम्यून (*Polytrichum commune*)	जलन को कम करने में, ज्वररोधी (antifever) के रूप में, मूत्रवर्धक (diuretic) (मूत्र की मात्रा बढ़ाने में) औषधि के रूप में, दस्तावर (laxative) तथा रक्त स्तंभक (रक्त बहाव रोकने वाले) (hemostatic) के रूप में
हैप्लोक्लेडियम माइक्रोफिलम (*Haploeladium microphyllum*)	टाँसिल (tonsillitis), श्वसनी शोध (bronchitis), कर्णपटहशोथ (tympanitis) तथा मूत्राशय शोथ यानि (cystitis) मूत्राशय की जलन रोकने के लिए
कोनोसिफेलम कोनिकम (*Conocephalum conicum*) तथा *मार्केन्शिया पॉलीमॉर्फा* (*Marchantia polymorpha*)	(वनस्पति तेलों के साथ मिलाकर) फोड़ों, छाजन यानि एक्जीमा (eczema), कटने, काटने, घाव या जलने की मल्हम के रूप में
फिसीडेन्स (*Fissidens*)	सूजे हुए गले के लिए जीवाणुरोधी कारक के रूप में

बोध प्रश्न 15.1

अ) कॉलम 1 में दिए गए ब्रायोफाइट्स को कॉलम 2 में दिए गए उनके उपयोगों से मिलाइए।

कॉलम 1	कॉलम 2
i) *मार्केन्शिया*	क) फोड़े और फुन्सियों में
ii) *रोडोब्रायम*	ख) अवशोषक पट्टी के रूप में
iii) *स्फैग्नम*	ग) हृदवाहिका रोगों में

ब) *स्फैग्नम* की पट्टियां किसलिए सूती पट्टियों से अधिक अवशोषी होती हैं?

....

....

....

....

15.2.2 निर्माण के सामान के रूप में

उन क्षेत्रों में जहाँ काष्ठीय पादप कम होते हैं, वहाँ ब्रायोफाइट्स सामान्यत: अनेक तरीकों से उपयोग में लाए जाते हैं। उनका उपयोग घरों के निर्माण में तथा उनकी साजसज्जा में भी किया जाता है।

जलीय मॉस *फॉन्टीनेलिस एन्टीपाइरेटिका* (*Fontinalis antipyretica*) का उपयोग नोर्डिक (nordic) लोगों के द्वारा आग रोकने के लिए चिमनी तथा दीवारों के बीच के स्थानों को भरने के लिए किया जाता है। कुछ मॉसेस का उपयोग दरारें (दरार या पतली खाँच) भरने के पदार्थ के रूप में किया जाता है। इसीप्रकार अलास्का (Alaska) में लकड़ी या लट्ठे के केबिनों में दरार भरने के काम में ब्रायोफाइट्स का उपयोग किया जाता है। हिमालयी क्षेत्रों में ऊँचाई पर रहने वाले गड़रिए भी दरारें भरने के लिए ब्रायोफाइट्स का प्रयोग करते हैं। उत्तरी यूरोप में *स्फैग्नम* का प्रयोग घरों के निर्माण में प्रयोग होने वाली लकड़ी के बीच भरावन (stuffing) के रूप में होता है जिससे वे ध्वनिरोधी बन जाती हैं। एल्प्स (Alps) में चरवाहे झोंपड़ी बनाने में भी मॉसेस का उपयोग करते हैं। *नेकेरा कॉम्प्लेनेटा* (*Neckera complanata*) तथा अन्य मॉसेस का उपयोग नावों के जोड़ों तथा दरारों को भरने के लिए भी किया जाता है।

स्कॉटलैण्ड में पहाड़ों पर *स्फैग्नम* मिश्रित तारकोल का उपयोग जोड़ों को भरने के लिए किया जाता है। रूस में, दबाया हुआ (pressed) तथा उष्मित (heated) कच्चा पीट (raw peat) स्लैब (slab) बनाने में उपयोग किया जाता है जो घरों के विद्युत रोधन (insulation) तथा प्रशीतन (refrigeration) में प्रयुक्त होता है।

हाल ही में, नए निर्माण सामान जैसे "पीट क्रीट" (peat crete), "पीट वुड" (peat wood), तथा "पीट फोम" (peat foam) को कुछ योजक द्रव्यों के साथ मिलाकर ठोस बनाने तथा मजबूती के लिए *स्फैग्नम* से विकसित किया गया है।

15.2.3 सजावटी वस्तुओं के रूप में

साजसज्जा उद्योग तथ फूलों के व्यापार में मॉसेस का महत्वपूर्ण स्थान है। जापान, इंग्लैण्ड, फ्राँस, फिनलैण्ड तथा अमेरिका जैसे देशों में मॉसेस का उपयोग स्त्रियों की टोपियों की सजावट के लिए होता है। पुष्पों के व्यापार में मॉसेस "शीट मॉस" (sheet moss) या "ब्लेंकेट मॉस" (blanket moss) के तौर पर बेचे जाते हैं तथा इस व्यापार में ये सामान्य रूप से पूरे वर्ष लायें जाते हैं। मॉस शीट्स क्रिस्मस वृक्ष मैंदानो के लिए तथा प्राकृतिक दृश्यों के लिए आवरण बनाती हैं। मॉसेस के सजावटी उपयोग निम्न हैं।

i) *डाइक्रेनम स्कोपेरियम* (*Dicranum scoparium*) - दुकानों की खिड़कियों में सजाने के लिए हरियाली के किनारे बनाने में

ii) *राइटिडिएडेल्फस लोरियस* (*Rhytidiadelphus loreus*), राइटीडिएडेल्फस ट्राइक्वेट्स, (*R. triquetrus*), तथा हाइलोकोमियम स्प्लेन्डेन्स (*Hylocomium splendens*) - पुष्प प्रदर्शिनियों में हरे कालीन के रूप में

iii) *क्लाइमेशियम अमेरिकानम* (*Climacium amricanum*) - मालाओं तथा क्रासेस में सजावट के लिए

iv) *हाइलोकोमियम स्प्लेन्डेन्स* (*Hylocomium splendens*) - मॉस गुलाब बनाने के लिए

v) *क्लाइमेशियम डेन्ड्रोइड्स* (*Climacium dendroides*) - (रंगे जाते हैं) स्त्रियों की टोपी को सजाने के लिए

कुछ जलीय ब्रायोफाइट्स जल-जीव शालाओं (aquaria) में प्रयोग के किए जाते हैं। ये ब्रायोफाइट्स मछलियों के लिए भी लाभदायक होते हैं क्योंकि ये उन्हें ऑक्सीजन प्रदान करते हैं तथा अंडे देने के लिए आधार प्रदान करते हैं।

15.2.4 पैकिंग सामग्री के रूप में

मॉसेस सामान बांधने के काम के लिए उपयुक्त होते हैं क्योंकि इनकी बुनावट मृदु व लचीली होती है तथा इन पर आसानी से सूक्ष्मजीवों का हमला नहीं होता है। पश्चिमी अमेरिका में मॉसेस का प्रयोग सब्जियों की पैकिंग में होता है। उष्ण कटिबंधी प्रदेशों में, अधिक मात्रा में पाये जाने के कारण पर्णिल लिवरवर्ट्स का उपयोग पैकिंग में किया जाता हैं। हिमालयी क्षेत्रों में, सेब तथा आडू खासतौर पर मॉसेस में लपेट कर पैक किए जाते हैं। भारत में नर्सरी में लोग जीवित पौधों को सप्लाई करने के लिए तथा सब्जियों कैक्टस, फर्न तथा अन्य नाजुक पौधों के पोतप्रेषण (shipment) के लिए भी भीगे *स्फैग्नम* का प्रयोग करते हैं। नम *स्फैग्नम* का प्रयोग जीवित मेढ़कों, सांपों, छिपकलियों, कृमियों तथा कुछ कीटों के पोतप्रेषण के लिए पैकिंग में किया जाता है।

15.2.5 घरेलू उपयोग

अवशोषक के रूप में

स्फैग्नम की एक परत का प्रयोग ऊँची एड़ी के जूतों में उन्हें गद्देदार बनाने तथा नमी और बदबू को सोखने के लिए किया जाता है। शुष्क *स्फैग्नम* का प्रयोग बच्चों के नैपकिन यानि डायपर्स (diapers) के रूप में तथा बच्चों के पालनों में उन्हें साफ सुथरा तथा गर्म रखने के लिए किया जाता है।

एज़ोर्स (Azores) में मॉसेस का उपयोग मॉस के बिस्तर तथा तकिए बनाने में किया जाता है। लैपलैंड के वासी बिस्तरों के लिए *पॉलीट्राइकम कम्यून* (*Polytrichum commune*) का प्रयोग करते हैं। उत्तर पश्चिमी हिमालय के आल्पीय (alpine) प्रदेशों में भारतीय बिस्तर, गद्दे, कुशन तथा तकिए आदि को मॉसेस को मोटे बोरे के कपड़ों में भरकर बनाते हैं या उन्हें झोंपड़ी के मिट्टी के फर्श पर बिछाते हैं। मॉसेस को अपने मृदु तंतुविन्यास, कीट प्रतिरोधी गुण तथा सड़ने से प्रतिरोध के कारण पसंद किया जाता है।

कीट प्रतिरोधी

ये ज्ञात है कि सामान्यतः ब्रायोफाइट्स पर अथवा हरबेरियम प्रतिदर्शों (specimen) के रूप में भी, शायद ही कभी सूक्ष्मजीवों या कीटों द्वारा हमला किया गया हो। बहुत सी ब्रायोफाइट जातियों की अपनी खास गंध तथा स्वाद होता है। नैनीताल तथा पिथौरागढ़ के बहुत से गांवों में, मॉसेस खासतौर पर कीट प्रतिरोधी के रूप में प्रयोग किए जाते हैं। वहाँ पर पाए जाने वाले मॉसेस तथा लिवरवर्ट्स को सुखाकर उनका पाउडर बना लिया जाता है। मॉस पाउडर को उन अनाजों तथा दालों पर छिड़क दिया जाता है जिन्हें संग्रह करना होता है।

धूम्र फिल्टर्स तथा गद्दी के रूप में

कुँमाऊ हिमालयी क्षेत्र में धूम्र फिल्टर्स के रूप में ब्रायोफाइट्स को गुड़गुड़ी या 'हुक्का' में प्रयोग किया जाता है।

कुँमाऊ के गांवों में वे औरतें जो दूर जगहों से पानी भरके लाती हैं, मॉस मैट का गोल आधार बनाती हैं जो "सिरोना" कहलाता है, जो सिर पर घड़े को टिकाए रखने की गद्दी का कार्य करता है।

15.2.6 व्यर्थ जल के शोधन में

स्फैग्नम का उपयोग एक प्रभावी छलनी की तरह तथा अवशोषी पदार्थ के रूप में व्यर्थ जल के शोधन के लिए किया जाता है। अम्लीय एवं विषैले पदार्थों युक्त कारखानों के कचरे जिसमें भारी धातुएं तथा अनेक कार्बनिक पदार्थ होते हैं उनको साफ करने के लिए भी *स्फैग्नम* का उपयोग किया जाता है। पीट को तेल

मिलों में अवशोषक के रूप में काम में लाया जाता है तथा वनस्पति तेलों के कारखानों में तैलीय व्यर्थ जल को छानने के लिए भी पीट का उपयोग किया जाता है।

15.2.7 जंतु खाद्य तथा आश्रय सामग्री के रूप में मॉसेस

खाद्य

विश्व के बहुत से वनस्पति क्षेत्रों में मॉसेस की जीव मात्रा (biomass) काफी है। हालांकि, टुंड्रा ऐसा स्थान है जहाँ वे सबसे अधिक मात्रा में पाए जाते हैं। कैनाडीय (Canadian) टुण्ड्रा की मॉसेस का कैलोरी अंश लगभग 4.5 - 5.0 कि.कैलोरी/ग्राम है। ये समान आवास में उगने वाले अन्य पादपों के समान ही है।

प्रोटीन्स तथा वसा के अतिरिक्त मॉसेस में बड़ी मात्रा में लिग्निन जैसे तत्व पाए जाते हैं। ये रिपोर्ट किया गया है कि ये विटामिन्स, विशेषकर B_2 से भरपूर होते हैं।

मॉसेस बहुत से जानवरों जैसे पहाड़ी भैंसा (bison), रेनडियर (reindeer), कृन्तक (rodent), कीट तथा चिड़ियों द्वारा खाए जाते हैं।

मॉसेस का अन्य उपयोग सुअर के बच्चों के आहार के लिए किया जाता है। यदि सुअर रक्तअल्पी (aneamic) पैदा होते हैं, तो *स्फैग्नम* का आहार सुअर के बच्चों के लिए लौह और विटामिनों से पूर्ण आदर्श आहार होता है। इसमें पोषक तत्वों को सोखने और उन्हें शरीर में रखने की क्षमता होती है।

आश्रय

कुछ कीट तथा पक्षी आश्रय बनाने के लिए मॉसेस का उपयोग करते हैं। बहुत सी चिड़ियां मॉस के हरे पर्णिल युग्मकधरों को घोंसला बनाने के लिए प्रयोग करती हैं जो उनके अंडों तथा बच्चों को संरक्षण प्रदान करता है (चित्र 15.1 A व B)। कुछ चिड़ियां जैसे कि ऑस्ट्रेलिया की पिंक रोबिन (गायक पक्षी) बहुत ही जटिल घोंसला बनाती है। वे घोंसले का मुख्य ढाँचा बनाने के लिए मॉसेस का प्रयोग करती हैं तथा उसमें अवस्तर वृक्ष फर्न का लगाती हैं।

15.2.8 बागवानी में ब्रायोफ़ाइट्स के उपयोग

ब्रायोफाइट्स अपनी उच्च जल ग्राही क्षमता के कारण बागवानी में सहायक होते हैं। गमलों में आपने मनी प्लांट (money plant) या अन्य आरोही लताओं (climbers) को मॉस के डंडों के चारों ओर उगते हुए देखा होगा। पादप को नमी प्रदान करने के लिए इनका उपयोग किया जाता है।

क्योटो (जापान) में सबसे प्रसिद्ध मॉस बाग साइहोजी (Saihoji) मंदिर में है। ये मंदिर मॉस मंदिर कहलाता है। ये खूबसूरत बगीचे से घिरा है जिसमें मॉसेस की 50 विभिन्न जातियों की घनी आबादी है।

भारत में मॉस गार्डन नैनीताल में विकसित किया गया है।

माली मॉस में लिपटी हुई लटकने वाली टोकरियों तथा पात्रों का उपयोग बिगोनिया (Begonia), *फुक्सीया* (*Fuchsia*) तथा आर्किड्स (Orchids) को उगाने के लिए करते हैं। ये देखा गया है कि मॉस के बिना उगाये जाने वाले गमलों के पादपों की तुलना में मॉस की परत के साथ जिसके ऊपर तथा नीचे खाद युक्त मिट्टी होती है, जब पादप उगाये जाते हैं, तो वे अच्छी तरह से उगते हैं। उनमें कलियां और पुष्प अधिक संख्या में उगते हैं।

मॉसेस को मृदा योजकों (soil additives) के रूप में उपयोग किया जाता है। मॉस का गलीचा मिट्टी को स्थिर करने का कार्य करता है तथा उसकी नमी को बनाए रखता है। जब *स्फैग्नम* को मिट्टी के साथ मिलाया जाता है या जमीन पर छिड़का जाता है तो ये मिट्टी के मिश्रण को हल्का कर देता है, खर पतवार की वृद्धि रोकता है तथा मिट्टी की ऊपरी परतों को अधिक सूखने से बचाता है। मॉसेस का प्रयोग बोन्साई बनाने के लिए भू-परत (ground cover) के रूप में किया जाता है।

जापान में मॉसेस काफी समय से बगीचों में कीमती पौधों के रूप में लगाए जाते हैं। वे सदाबहार भूमि आवरण के रूप में लॉन में घास के समान ही लाभदायक हैं।

कुछ देशों में मॉसेस बीज क्यारियों के रूप में उपयोग किये जाते हैं। ये रिपोर्ट किया गया है कि नोवा स्कोशिया (कनाडा) में अग्रणी (सबसे पहले प्रकट होने वाला) श्वेत: स्प्रूस (फर वृक्ष) सबसे अच्छी तरह से *पोलीट्राइकम* के कार्पेट पर उगते हैं। इसी प्रकार, मॉसेस, खासतौर पर *हिप्नम इम्पोनेन्स* (*Hypnum imponens*), *सूगा* (*Tsugga*) तथा *बेटूला* (*Betula*) के नवोद्‌भिदों के लिए क्यारी प्रदान करते हैं। *स्फैग्नम* का सत शंकुवृक्ष (Jack Pine) के बीजों के अंकुरण को बढ़ावा देता है। मॉसेस जैसे कि *प्लूरोज़ियम स्क्रेबेरी* (*Pleurozium schreberi*) शंकुवृक्षों के बीजों के अंकुरण के लिए अच्छी बीज क्यारियाँ साबित हुए है।

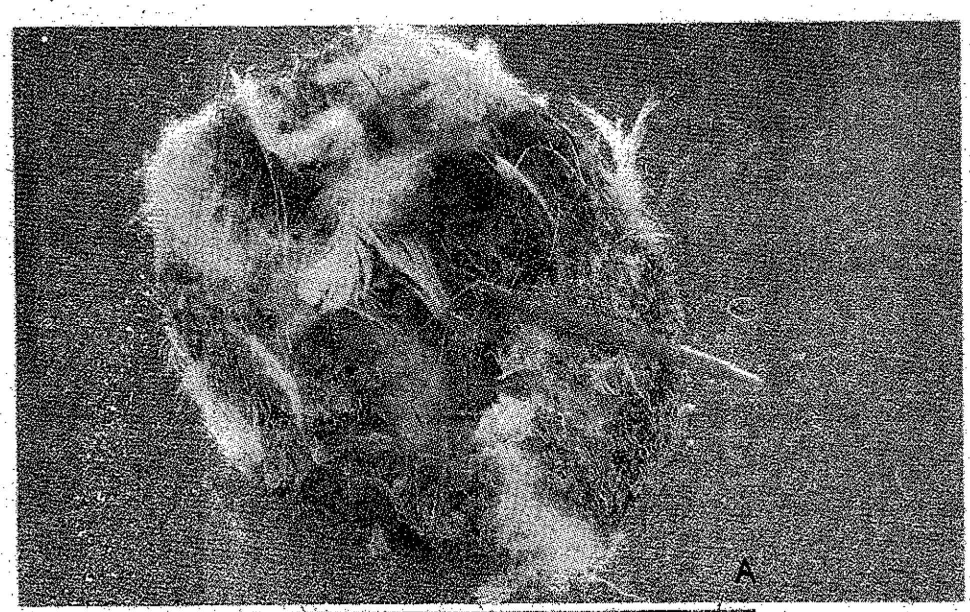

चित्र 15.1 : **A** व **B**, चिड़ियों के घोसलों के फोटोग्राफ जिनमें मॉसेस प्रयोग किए गये हैं (डा. गिरिबाला पंत के सौजन्य से)।

बोध प्रश्न 15.2

अ) i) आल्पीय क्षेत्र में, नोमेडिक गड़रिए अस्थायी झोंपड़ी के निर्माण के लिए .... का प्रयोग करते हैं।

ii) .... नावों के जोड़ों तथा दरारों के लिए भरावन प्रदान करते हैं।

iii) मॉस .... स्त्रियों के टोपों को सजाने के लिए काम में लाया जाता है।

iv) कुँमाऊ के हिमालयी क्षेत्रों में, ब्रायोफ़ाइट्स "हुक्कों" में .... के रूप में प्रयोग किए जाते हैं।

v) कुँमाऊ के गाँवों में, पानी के मटकों को ले जाने के लिए औरतें सिरोने का प्रयोग करती हैं जो .... का बना होता है।

vi) उत्तर-पश्चिमी हिमालयी क्षेत्रों में भारतीय मोटे कपड़े में .... भर कर कुशन तथा तकिए बनाते हैं।

vii) मॉसेस .... नहीं हैं इसलिए वे पैकिंग तथा भरने के पदार्थ के रूप में प्रयोग की जाती हैं।

ब) बागवानी में मॉसेस के उपयोगों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

....

15.3 ब्रायोफ़ाइट्स की पारिस्थितिकीय भूमिका

15.3.1 वनस्पति के अगुआ के रूप में

बहुत से ब्रायोफ़ाइट्स खुले हुए तथा अक्सर पोषण-विहीन स्थानों पर सबसे पहले प्रगट होते हैं जहाँ कोई अन्य पादप उगने में असमर्थ होता है। उदाहरण के लिए वे नग्न चट्टानों पर तथा ताजी जमा हुई ज्वालामुखी की राख पर भी उग सकते हैं। धीरे-धीरे ब्रायोफ़ाइट्स एक कार्बनिक परत बना लेते हैं जो सूक्ष्मजीवों द्वारा आक्रमित रहती हैं। जिसके फलस्वरूप परत के नीचे के खनिज आधार में बदलाव आ जाते हैं। इससे पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है और वह स्थान संवहनी पादपों के उगने के लिए उपयुक्त बन जाता है। इस तरीके से, ब्रायोफ़ाइट्स अग्रणी पादप समुदाय बनकर नग्न पत्थरों पर पादपों के आरोपण में सहायक होते हैं। कुछ ब्रायोफ़ाइट्स जैसे *ऐन्ड्रिया* (*Andreaea*) मुख्यत: नग्न पत्थरों की सतह तक ही सीमित होते हैं। इनमें से अधिकांश ब्रायोफ़ाइट्स लंबे समय तक सूखे की स्थितियां झेलने में सक्षम होते हैं।

जले हुए स्थानों पर भी मॉसेस अग्रणी जातियां होती हैं। प्रत्येक वर्ष घास के मैदानों के बड़े भाग में तथा शीतोष्ण एवं उष्णकटिबंधी वनों में आग लग जाती है। इसके फलस्वरूप बने भूमि के टुकड़े मॉसेस जैसे *फ्यूनेरिया* तथा *पोलीट्राइकम* के अनुक्रमण के लिए आवास प्रदान करते हैं।

मॉसेस टिब्बा यानि बालूकूट (dune) स्थानों में भी अग्रणी होते हैं। वे नमी को रोकने तथा बालू के स्थायीकरण में सहायक होते हैं जो अन्यथा हवा से उड़ जाती है उदाहरण *सिरैटोडॉन* (*Ceratodon*) व *टॉरटूला* (*Tortula*) ।

15.3.2 मृदा अपरदन में भूमिका

आपने पढ़ा है कि ब्रायोफ़ाइट्स सघन कुशन के रूप में वनों के तल पर कालीन सा बनाते हुए उगते हैं। वास्तव में, उनके मूलाभास मिट्टी के कणों को एक साथ बांध लेते हैं तथा आसपास के पादपों के मूलाभासों के साथ भी गुथ जाते हैं जिससे कि पूरा कुशन सघन हो जाता है तथा उसका भूमि से अलग होना मुश्किल हो जाता है। इसमें फंसे हुए मिट्टी के कण बाढ़ के समय में जल के साथ नहीं बह पाते हैं।

सड़क के किनारे ब्रायोफ़ाइट्स समूहों का प्रभुत्व स्थायीकरण के लिए महत्वपूर्ण है। *बार्बूला* (*Barbula*), *वीजिया* (*Weissia*) तथा *ब्रायम* (*Bryum*) की जातियां नई सड़कों के किनारे अग्रणी होती हैं।

विश्व के बहुत से समुद्र तटों के किनारे घने टिब्बा यानि बालूकूट तंत्र पाए जाते हैं। मॉसेस नमी को रोके रखने में तथा बालू के स्थायीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ऐसे मॉसेस बालू से ढक जाने पर भी जीवित रहते हैं। इस प्रकार के मॉस का एक उदाहरण *सिरैटोडॉन परप्यूरियस* (*Ceratodon purpureus*) है।

अपनी पददलन रोधी (trample-resistant) संरचना के कारण तथा अपनी उच्च पुनर्जनन क्षमता से मृदा अपरदन रोकने में मॉसेस की महत्वपूर्ण भूमिका है।

आधुनिक काल में, कुछ मॉसेस जैसे *पोलीट्राइकम*, *एट्रीकम* (*Atrichum*) तथा *सिरैटोडॉन* को फलदार वृक्षों जैसे सेब तथा नाशपाती के चारों ओर मृदा अपरदन को रोकने के लिए लगाया जाता है।

बोध प्रश्न 15.3

अ) नीचे कॉलम 1 में कुछ मॉसेस के नाम दिए गए हैं। उन्हें कॉलम 2 में दी गई अग्रणी मॉस समुदाय के रूप में उनकी उपस्थिति के स्थान से मिलाइए।

कॉलम 1	कॉलम 2
i) *सिरैटोडॉन*	क) नग्न चट्टान
ii) *ऐन्ड्रिया*	ख) जले हुए स्थान
i) *फ्यूनेरिया*	ग) टिब्बा यानि बालूकूट तंत्र

ब) समझाइए कि किस प्रकार से मॉसेस अग्रणी पादप समुदाय के रूप में अन्य वनस्पति के आरोपण में सहायक होते हैं।

....

....

स) नीचे दिए गए वाक्यों के रिक्त स्थानों में उपयुक्त शब्द भरिए।

i) ब्रायोफ़ाइट्स के मूलाभास मृदा कणों को एक साथ .... हैं। और इस प्रकार उन्हें जल के साथ बह जाने से रोकते हैं।

ii) कुछ मॉसेस सेब तथा नाशपाती के बागों में उगाये जाते हैं जिससे उस क्षेत्र में ....को कम किया जा सके।

15.4 सूचक के रूप में ब्रायोफ़ाइट्स

अपनी वृद्धि के लिए कुछ मॉसेस विशेष प्रकार के आधार को प्राथमिकता देते हैं। इसलिए, उनमें से कुछ खनिज निक्षेपों, या आधार की पी एच की स्थिति या किसी विशेष बीज पादप समुदाय के लिए अथवा प्रदूषण और उसके स्तरों के लिए सूचक का कार्य करते हैं। नीचे दिये गये सेक्शनों में उनके बारे में विस्तार से चर्चा की गई है।

15.4.1 खनिज निक्षेपों के सूचक

कुछ मॉसेस किसी विशेष धातुओं युक्त मिट्टी में ही उगते हैं। धातुएं अक्सर पादप में एकत्रित हो जाती हैं। इस प्रकार के पादपों के वितरण का अध्ययन करके तथा उनके खनिज तत्वों का विश्लेषण करके नए खनिज निक्षेपों की खोज संभव है। ये तकनीक भू-वनस्पति पूर्वेक्षण (geobotanical prospecting) कहलाती हैं। उत्तर-पश्चिमी हिमालय के कुमाऊँ क्षेत्र के अल्मोड़ा, नैनीताल तथा पिथौरागढ़ जिलों में विभिन्न खनिज-धनी आधार पाए गए हैं। प्रत्येक खनिजीकृत क्षेत्र में अपनी विशेष ब्रायोफिटिक प्रजातियां होती हैं। विभेदन इतना स्पष्ट है कि ब्रायोफिटिक वनस्पति उसके नीचे के आधार की प्रकृति का संक्षिप्त अंदाजा दे देती है। कुछ उदाहरण निम्न हैं :

क) **ग्रेनाइट तथा अभ्रक (Granite and Mica)** – गण ग्रिमिएलीज (Grimmiales) के ब्रायोफ़ाइट्स अभ्रक पत्थरों, ग्रेनाइट तथा अन्य पत्थरों की चिकनी, चमकदार सतहों पर सबसे पहले तथा एकमात्र उपनिवेशक (colonizer) होते हैं। ग्रेनाइट की कठोर सतह हमेशा *ग्रिमिया* स्पी. (*Grimmia* spp.) तथा *रेकोमिट्रियम हिमालयनम* (*Rhacomitrium himalayanum*) द्वारा उपनिवेशित होती हैं। उपनिवेशन इतना स्पष्ट रूप से होता है कि कोई भी आधार का अनुमान सिर्फ मॉस का अध्ययन करके लगा सकता है।

ख) **डोलोमाइट की चट्टानें (Dolomite rocks)** – ये पत्थर हिमालयी भूक्षेत्र की विशेषता होते हैं। इनके आधार कैल्सियम के धनी होते हैं। इन आधारों पर उगने वाले मॉसेस में आधार से कैल्सियम की विभिन्न मात्राओं को एकत्रित करने तथा अवशोषित करने की अद्भुत क्षमता होती हैं। ऐसे मॉसेस जो सदैव इन स्थानों पर उपस्थित रहते हैं वे हैं - *हायोफिला इन्वोल्यूटा* (*Hyophila involuta*) तथा *टोर्टेला टोर्टुओसा* (*Tortela tortuosa*)।

ग) **मैग्नेसाइट ($MgCO_3$)** - इस खनिज के भारत में सबसे बड़े निक्षेप कुमाऊँ क्षेत्र में हैं। सभी स्थानों पर, बड़े मैग्नेसाइट निक्षेप स्पष्ट रूप से ऊसर (barren) दृश्य उपस्थित करते हैं। इन स्थानों पर उगने वाली मॉस की एक मात्र जाति *हाइमीनोस्टाइलियम रिकर्वीरोस्ट्रम* (*Hymenostylium recurvirostrum*) है।

घ) **तांबा (Copper)** - मॉसेस की कुछ जातियां आधार में उच्च कॉपर सांद्रण की सूचक होती हैं तथा "कॉपर मॉसेस" कहलाती हैं। ऐसा समझा जाता है कि कॉपर मॉसेस द्वारा सहन कर सकने वाली कॉपर की सान्द्रता अन्य पादपों के लिए मारक होती है और इसलिए ऐसे स्थानों पर ब्रायोफ़ाइट्स का कोई प्रतियोगी नहीं होता है। महत्वपूर्ण कॉपर मॉसेस हैं- *मीलीकोफेरिया इलोंगेटा* (*Mielichhoferia elongata*) तथा *स्कोपेलोफिला कैटेरेक्टी* (*Scopelophila cataractae*) जो तांबे के सूचक की भाँति कार्य कर सकती हैं।

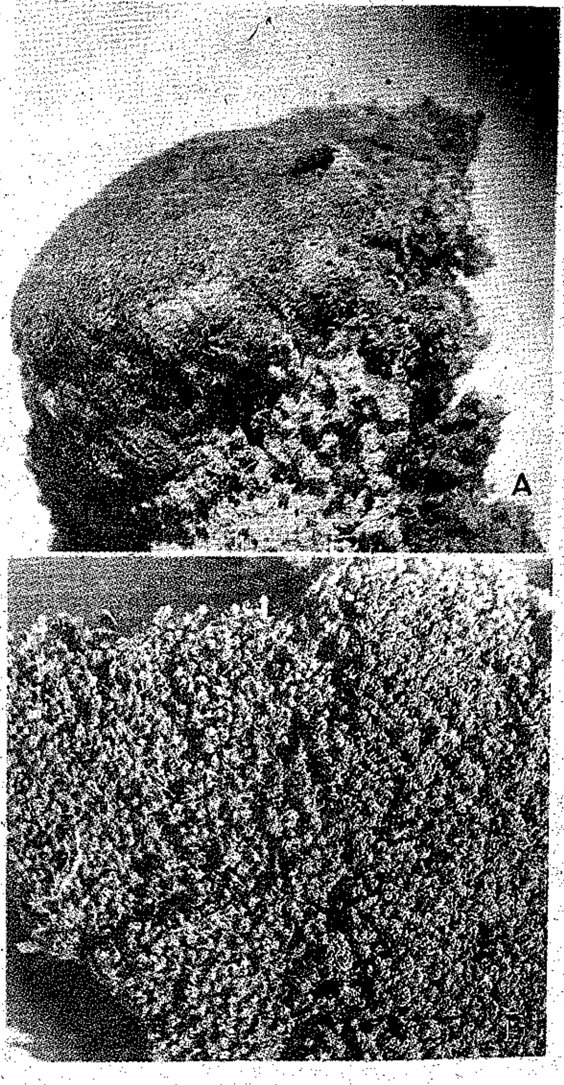

चित्र 15.2 : *हाइमीनो स्टाइलियम रिकर्वीरोस्ट्रम* मॉस जो मैग्नेसाइट निक्षेप पर उगता है। B) कॉपर मॉस *स्कोपेलोफिला कैटेरेक्टी*। (डा. गिरिबाला पंत के सौजन्य से)।

15.4.2 पी एच के सूचक

कुछ ब्रायोफाइट्स सिर्फ उसी मिट्टी में उगते हैं जिसकी एक खास pH होती है। अतः किसी खास जाति की उपस्थिति मिट्टी की अम्लीय या क्षारीय स्थिति को सूचित करती है।

अ) हीमेटाइट (लौह का अयस्क) पर भी मॉसेस उगती हैं जिसकी pH (7.3–7.6) क्षारीय होती है। यह सर्वविदित तथ्य है कि क्षारीय माध्यम में, लौह अधिकांश पादपों के लिए अनउपलब्ध रहता है।

ब) कुछ ब्रायोफाइट्स सिर्फ बहुत अधिक अम्लीय, तेजी से घुलनशील, लौह से भरपूर आधार पर ही उगते हैं। इस प्रकार के आधार पर लौह आसानी से उपलब्ध होता है। इन आधारों का पी एच 2.9–4.1 होता है।

पोलीट्राइकम अम्लीय स्थिति का भरोसेमंद सूचक है।

स) जिप्सम (Gypsum) युक्त क्षेत्र विभिन्न स्तरों तक क्षारीय होते हैं तथा उनमें अम्लीय उपखंड भी हो सकते हैं। मॉस *कैम्पाइलोपस ग्रेसीलिस* (*Campylopus gracilis*) ऐसी जाति का उदाहरण है जो अम्लीय तथा क्षारीय दोनों स्थितियों 4.9–7.8 परास तक पी एच सहन कर सकती है।

तालिका 2 : ब्रायोफ़ाइट्स जो प्रारूपी पी एच स्थिति दर्शाते हैं (टेओडा (Taoda), 1977)

ब्रायोफ़ाइट	पी एच (PH)
एट्रीकम अन्डयूलेटम (*Atrichum undulatum*)	4.5—6.0
यूर्हिन्शियम सेवेटिएरी (*Eurhynchium savatieri*)	4.7—5.4
ब्रेकीमीनियम एक्जाइल (*Brachymenium exile*)	4.0—5.4
रिक्सिया ग्लोका (*Riccia glauca*)	4.1—5.4
सिरैटोडॉन परप्यूरियस (*Ceratodon purpureus*)	5.5—6.9
मार्केन्शिया पॉलीमोर्फा (*Marchantia polymorpha*)	6.0—7.5
टारटूला राइजोफिला (*Tortula rhyzophylla*)	6.1—7.4

15.4.3 बीज-पादप समुदाय के सूचक

ब्रायोफ़ाइट की कुछ जातियां उन स्थानों पर अवश्य पाई जाती हैं जहाँ कोई विशेष बीज पादप समुदाय उग रहा हो, अत: इन जातियों को सूचक जातियों की तरह उपयोग कर सकते हैं। जबकि कुछ अन्य उन स्थानीय स्थानों पर तब भी बनी रहती हैं जबकि वास्तविक पादप वनस्पति किसी कारण से नष्ट हो जाती है। इस प्रकार, वे अतीत में वन अथवा गैर-वन वनस्पति के अस्तित्व के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए उपयोग किए जा सकते हैं कि उस स्थान पर कौन सी वनस्पति को प्रभावी रूप से पुनर्जीवित किया जा सकता है।

15.4.4 वायु प्रदूषण के सूचक

इकाई 12 में आपने पढ़ा कि लाइकेन वायु प्रदूषण के जैवसूचक होते हैं। इसी प्रकार ब्रायोफ़ाइट्स भी प्रदूषण के जैवसूचक की भाँति उपयोग किए जा सकते हैं क्योंकि वे सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2), फ्लूराइड्स तथा धातुओं के लिए संवेदनशील होते हैं। वे प्रदूषकों की थोड़ी मात्रा की उपस्थिति में भी क्षति के लक्षण दिखाते हैं। सल्फर डाइऑक्साइड की उपस्थिति में इनका हरा रंग विलुप्त हो जाता है। पर्णिल लिवरवर्ट *रैडुला कॉम्प्लेनेटा* (*Radula complanata*) दस मिनट के भीतर ही अपना रंग बदल देता है तथा 120 पी पी एम (ppm) सान्द्रता पर उसके क्लोरोप्लास्ट नष्ट हो जाते हैं। ब्रायोफ़ाइट्स हाइड्रोजन फ्लूराइड के लिए भी बहुत संवेदनशील होते हैं तथा 0.001 से 0.1 पी पी एम जितने कम सांद्रण पर भी क्षति के लक्षण दर्शाते हैं। मॉस *पाइलेसिएला पोलीएन्था* (*Pylaisiella polyantha*) की पत्तियों का रंग कम सान्द्रता पर भूरा तथा उच्च सान्द्रता पर जला हुआ लगता है।

कुछ ब्रायोफ़ाइट्स में प्रदूषकों को अवशोषित करने तथा उन्हें अपने में संचित करने की क्षमता समान आवास में उगने वाले अन्य पादपों द्वारा अवशोषित मात्रा से कहीं अधिक होती है। उन्हें वातावरण में कुछ प्रदूषकों की सान्द्रता को कम करने के लिए भी उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार ऐसे ब्रायोफ़ाइट्स के विश्लेषण से, उस क्षेत्र में प्रदूषकों की उपस्थिति के स्तर का भी अनुमान लगाया जा सकता है। भारी धातुएं प्रदूषकों का काफी महत्वपूर्ण वर्ग होती हैं। इनमें सबसे महत्वपूर्ण सीसा (lead), कैडमियम (cadmium), आर्सेनिक (arsenic) तथा क्रोमियम (chromium) हैं। सीसा सबसे विषैली धातु है। आप शायद जानते होंगे कि इसे अपस्फोटरोधी (anti-knock) यौगिक के रूप में उपयोग किया जाता है तथा ये स्वचालित वाहनों के रेचन (exhaust) से निकलता है। ऐसा पाया गया है कि अपस्फोटरोधी

निर्माण कारखाने से दो मीटर की दूरी पर उगने वाले मॉसेस में भी सीसे की मात्रा 320 पी पी एम पाई गई है। इसी प्रकार मॉस *हिप्नम क्यूप्रेसीफोर्मी* (*Hypnum cupressiforme*) में जो निर्माण कारखाने से तीन मील की दूरी पर उगते हैं उनमें जस्ते (zinc) की मात्रा 1315 पी पी एम पाई गई है।

तीन मॉसेस के हर्बेरियम प्रतिरूपों को 1860 से 1968 के दौरान अन्तरालों पर एकत्रित किया गया था उनका सीसे की मात्रा के लिए परीक्षण किया गया और परिणाम नीचे दिए गए हैं।

तालिका 3 : ब्रायोफ़ाइट्स के हर्बेरियम प्रतिरूपों में सीसे की मात्रा

समय	सीसे की मात्रा पी पी एम
1860–1875	20
1875–1900	40
1900–1950	45
1950–1960	80—90

ये परिणाम उस काल के दौरान वायुमंडल में निर्मुक्त हुई सीसे की मात्रा से मिलते हैं।

15.4.5 जल प्रदूषण के सूचक

ब्रायोफाइट्स जल प्रदूषण के सूचक के रूप में भी कार्य कर सकते हैं। उदाहरण के लिए *एम्ब्लीस्टीजियम रिपेरियम* (*Amblystegium riparium*) स्वच्छ जल वाली नदी के ऊपरी भाग में अनुपस्थित पाया गया। हालांकि, वह उस स्थान पर दिखाई दिया जहाँ नदी का जल गाँव से आकर मिलने वाली प्रदूषित सहायक नदी के कारण गुणवत्ता में कम हो गया था। यह जाति जल के प्रदूषित होने की सूचक मालूम पड़ती है। जलीय ब्रायोफाइट्स का उपयोग भारी धातुओं के प्रदूषण की जाँच करने के लिए किया जा सकता है क्योंकि वे उन्हें उच्च सान्द्रता में एकत्रित कर लेते हैं। *जंगरमैनिया* स्पी. (*Jungermania* sp.) तथा *स्कैपेनिया* स्पी. (*Scapania* sp.) पारे (mercury) को एकत्रित कर लेती हैं और इसलिए उसकी सान्द्रता की जाँच के लिए प्रयोग की जा सकती है।

बोध प्रश्न 15.4

विभिन्न प्रकार के उन स्थानों की सूची बताइए जिन्हें ब्रायोफ़ाइट्स को सूचक के रूप में इस्तेमाल करके पहचाना जा सकता है।

....

....

....

....

....

....

....

15.5 अतीत के संरक्षक के रूप में ब्रायोफ़ाइट्स

आपने पीट दलदल के बारे में सुना होगा। वे पादप अवशेषों के एकत्रित होने तथा उनके संपीडित होने के फलस्वरूप बनी थीं जिनमें मॉसेस, नरकुल (sedges), घास तथा झाड़ियां भी शामिल हैं। मॉसेस में *स्फैग्नम* तीव्रता से एकत्रित होने वाले गहरे निक्षेप के लिए जिम्मेदार प्रमुख पादप है। पीट दलदल द्वारा ढका हुआ भूमि का भाग, अधिक उपयुक्त रूप से जो मायर (mires) कहलाता है वह विशाल है खासतौर पर शीतोष्ण तथा उप-आर्कटिक क्षेत्रों में।

पीट दलदल जीवविज्ञानियों के लिए विशेष महत्व के होते हैं क्योंकि अनेकों जातियों के सुसंरक्षित जीवाश्म अथवा उनके भाग उनमें पाए जाते हैं। पीट निक्षेपों में दफ़न हुए जीवों का सूक्ष्मजीवीय अपघटन (microbial degradation) अम्लीय तथा अवायवीय (anaerobic) वातावरण के कारण बहुत ही धीमा होता है। पीट दलदल में फंसे जीव, खुदाई करने पर खूबसूरती से संरक्षित पाए जाते हैं। कुछ पादपों के पराग कण पीट दलदल से प्राप्त किए गए हैं। इससे वैज्ञानिकों को पुष्पीय पादपों के गुणों को निर्धारण करने में तथा किसी विशेष भूवैज्ञानिक काल में वनस्पति तथा जंतु समूह का निर्धारण करने में सहायता मिली है।

आपको यह जानकार आश्चर्य होगा कि लौह तथा कांस्य युग के लगभग 100 मानव शव पिंड स्केन्डिनेविया के पीट दलदल से निकाले गए हैं। उनकी त्वचा तथा कपड़े अब भी सुरक्षित हैं यहाँ तक कि उनके उदर के तत्वों का भी विश्लेषण उनके आखिरी भोजन के निर्धारण के लिए किया जा सकता है। कुछ संरक्षित मानव कायाएं अब भी अपने सिर पर टोपी को दर्शाती हैं।

बोध प्रश्न 15.5

i) .... मॉस पीट के निर्माण में प्रमुख भूमिका निभाता है।

ii) मॉस पीट निक्षेप अम्लीय तथा अवायवीय प्रकृति के होते हैं, इसलिए दबी हुई जाति का क्षय .... द्वारा नहीं हो पाता है।

iii) .... में पाये जाने वाले पराग कणों का अध्ययन किसी विशेष भूवैज्ञानिक काल में पाई जाने वाली वनस्पति के प्रकार को पहचानने में सहायक होता है।

iv) पीट दलदल द्वारा ढका क्षेत्र .... कहलाता है।

v) काँस्य युग के .... भी पीट दलदल में खूबसूरती से संरक्षित हैं।

15.6 ब्रायोफ़ाइट्स तथा शोध कार्य

ब्रायोफ़ाइट्स पादप परिवर्धन के शरीर क्रियात्मक (physiological) तथा जैव रासायनिक पहलुओं के अध्ययन के लिए बहुत अति उत्तम हैं, क्योंकि इनका संगठन सरल होता है, व यह तेजी से वृद्धि करते हैं तथा इन पर कार्य करना आसान होता है। इनका आकार छोटा तथा जीवन चक्र कम समय का होता है। बहुत सारे पादपों को एक साथ एक छोटी परखनली में ऊतक संवर्धन (tissue culture) तकनीक से उगाया जा सकता है। ब्रायोफ़ाइट्स पर शोध कार्य ने निम्नलिखित तरीकों से पादपों के बारे में ज्ञान प्राप्त करने में योगदान दिया है:

गुणसूत्रों की खोज

पादपों में सबसे पहले लिंग गुणसूत्र लिवरवर्ट *स्फेरोकार्पस डोनेली* (*Sphaerocarpos donnellii*) में सी.ई. एलन (C.E. Allen) के द्वारा 1917 में पहचाने गए थे। उन्होंने दिखाया था कि एक द्विरूपी

(dimorphic) गुणसूत्र का युग्म लिंग भेद से संबद्ध है। मादा पादप में हमेशा एक बहुत बड़ा x गुणसूत्र का युग्म व सात छोटे अलिंगसूत्र (autosome) के युग्म होते हैं तथा नर पादप में एक बहुत छोटा x गुणसूत्र तथा एक y गुणसूत्र व साथ ही सात अलिंगसूत्रों के युग्म होते हैं तथा द्विरूपी गुणसूत्र निषेचन के दौरान पास आते हैं।

पीढ़ियों का एकांतरण

विल्हेम होफमीस्टर (Wilhelm Hofmeister) ने 1851 में *स्फैग्नम* पर कार्य करते वक्त, पहली बार पीढ़ियों के एकांतरण को देखा। सुस्पष्ट हरा पर्णिल पादप जो अपने शीर्ष पर युग्मक बनाने वाले अंग धारण किए रहता है वह युग्मकोद्भिद् कहलाता है। निषेचित अंड यानि कि युग्मनज बीजाणु-उद्भिद् को उत्पन्न करता है जो बीजाणु लिए हुए कैप्सूल, पाद तथा स्फोटिका वृंत में विभेदित रहता है।

पीढ़ियों के एकांतरण का कोशिका विज्ञानी आधार

1895 में स्ट्रासबर्गर (Strasburger) ने खोज की, कि युग्मकोद्भिदी पीढ़ी अगुणित (n) होती है। इसमें बीजाणु युग्मकधर तथा लैंगिक अंग यानि कि युग्मकधानियां होती हैं। बीजाणु-उद्भिद्ी पीढ़ी निषेचित अंड से आरंभ होकर द्विगुणित (2n) बीजाणु मातृ कोशिका तक जारी रहती हैं।

बहुगुणितों का कृत्रिम उत्पादन

1911 में, ई.मार्शल (E. Marchal) तथा ई. मार्शल ने पादपों में बहुगुणितों (polyploids) के कृत्रिम उत्पादन का प्रदर्शन मॉसेस के द्विगुणित ऊतक के संवर्धन के द्वारा किया था। ऊतक प्रथम तंतु तथा अंतत: युग्मकधर बनाने के लिए विभेदित हो गए। चूंकि अंड तथा पुमणु द्विगुणित थे अत: उन्होंने चतुर्गुणित (tetraploid) भ्रूण उत्पन्न किया जो बीजाणु-उद्भिद् में विकसित हुआ। इसी प्रकार चतुर्गुणित अंड और पुमणु के संवर्धन से चतुर्गुणित युग्मकधर तथा अष्टगुणित बीजाणु-उद्भिद् बना है।

हैटरोक्रोमेटिन यानि विषमवर्णी की खोज

पादपों के केन्द्रकों में हैटेरोक्रोमेटिन की खोज ई. हीट्ज (E. Heitz) के द्वारा की गई थी। इसका प्रदर्शन मॉसेस के उपयोग के द्वारा किया गया था। हैटेरोक्रोमेटिन की खोज कोशिका विज्ञानी शोध कार्य में काफी महत्व की है, क्योंकि गुणसूत्रों के विषमवर्णी बैन्ड समूह के सेट के अंदर विभिन्न गुणसूत्रों के विभेदन के लिए महत्वपूर्ण चिन्हक (marker) होते हैं।

हार्मोन्स

यह देखा गया है कि उच्च पादपों की भाँति ही ब्रायोफाइट्स में भी हार्मोन्स पाए जाते हैं जैसे कि ऑक्सिन, साइटोकाइनिन, एथेलीन तथा एब्सीसिक अम्ल। परीक्षण अध्ययनों से पता चला है कि इनकी परस्पर क्रिया पादप के सामान्य विकास को नियंत्रित करती है।

अत: हम देखते हैं कि ब्रायोफाइट्स ने पादपों के जीवन चक्र के मूलभूत पहलुओं को समझने के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

बोध प्रश्न 15.6

i) विल्हेम हॉफमीस्टर ने .... पर कार्य करते वक्त पीढ़ियों के एकांतरण को देखा।

ii) द्विरूपी .... गुणसूत्रों के युग्म सबसे पहले ब्रायोफाइट्स में खोजे गए थे।

iii) पादपों में .... का कृत्रिम उत्पादन सबसे पहले मॉसेस में किया गया था।

iv) ई. हीट्ज ने सबसे पहले .... के केन्द्रकों में हैटेरोक्रोमेटिन का प्रदर्शन किया था।

15.7 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- विश्व के ठंडे शीतोष्ण क्षेत्रों में स्थानीय निवासी विस्तृत रूप से ब्रायोफाइट्स को औषधि, कीट प्रतिरोधी, पैड्स, भरावन, पैकिंग, दरार भरने के पदार्थ तथा धूम्र फिल्टर्स के रूप में उपयोग करते हैं।
- नग्न चट्टानों की सतहों पर, जली हुई जगहों पर जहाँ कोई अन्य पादप नहीं उग सकता, वहाँ ब्रायोफाइट्स महत्वपूर्ण वनस्पति के अगुआ होते हैं। वे संवहनी पादपों के उगने के लिए आधार को उपयुक्त बना देते हैं।
- ब्रायोफाइट्स नदी के तटों, वनों की जमीन तथा सड़कों के किनारों पर मृदा अपरदन को नियंत्रित करने में सहायता करते हैं। वे संहत कुशन बनाते हैं तथा उनके मूलाभास मिट्टी के कणों को इतनी सख्ती से बाँध लेते हैं कि वे बहते हुए पानी के साथ बह नहीं पाते हैं।
- कुछ ब्रायोफाइट्स कुछ प्रकार के खनिजों, मिट्टी की पी एच स्थिति, वायु तथा जल प्रदूषण के लिए सूचक का कार्य करते हैं। जबकि कुछ अन्य को सूचक ज़ातियों की भाँति उपयोग किया जाता है क्योंकि वे कुछ संवहनी पादपों के साथ संबद्ध रहते हैं।
- ब्रायोफाइट्स बहुत से कशेरुकी तथा अकशेरुकी जंतुओं द्वारा खाद्य तथा आश्रय के रूप में उपयोग किए जाते हैं। बहुत सी चिड़ियां उन्हें घोंसला बनाने में उपयोग करती हैं।
- उनका उपयोग बागवानी में उनकी जल ग्राही क्षमता के कारण होता है।
- ब्रायोफाइट्स को शोध तत्व के रूप में उपयोग करके कुछ नए तथ्यों जैसे लिंग निर्धारण का गुणसूत्रीय आधार, पीढ़ियों का एकांतरण, हैटेरोक्रोमेटिन तथा बहुगुणिता का पता चला है।

15.8 अन्त में कुछ प्रश्न

1. मृदा अपरदन में ब्रायोफाइट्स की भूमिका को समझाइए।

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

2. ब्रायोफाइट्स के विभिन्न उपयोगों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

3. ब्रायोफाइट्स का अध्ययन करने से जो खोजें प्रकाश में आईं उनकी चर्चा कीजिए?

....

....

....

....

....

....

4. बागवानी में किसलिए ब्रायोफाइट्स का उपयोग किया जाता है?

....

....

....

....

....

....

....

5. सूचक के रूप में ब्रायोफाइट्स की भूमिका की व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

15.9 उत्तर

बोध प्रश्न

15.1 अ) i) फोड़े और फुंसियों में

ii) हृदवाहिका रोगों में

iii) अवशोषक पट्टी के रूप में

ब) इस इकाई के सेक्शन 15.2.1, व इकाई 13 के चित्र 13.8 को देखें।

15.2 अ) i) मॉसेस ii) मॉसेस iii) *क्लाइमेशियम*

iv) धूम्र फिल्टर्स v) मॉसेस vi) मॉसेस vii) सड़ती

ब) सेक्शन 15.2.8 देखिए

15.3 अ) i) ग, ii) क, iii) ख

ब) ब्रायोफाइट्स मिट्टी में एक कार्बनिक परत बना लेते हैं। सूक्ष्मजीव इस परत पर आक्रमण करते हैं तथा इसे पोषक तत्वों से धनी बना देते हैं, जिससे वह जगह संवहनी पादपों के लिए उपयुक्त बन जाती है।

स) i) बाँधते ii) मृदा अपरदन

15.4 1) ग्रेनाइट की सतहें

2) डोलामाइट पत्थर

3) मैग्नेसाइट

4) कॉपर यानि तांबा युक्त चट्टानें

5) मिट्टी की अम्लीयता तथा क्षारीयता

6) पूर्व में उगने वाले अन्य पादप समुदायों के प्रकार

7) वायु तथा जल प्रदूषण

15.5 i) *स्फैग्नम* ii) सूक्ष्मजीवों iii) पीट दलदल

iv) मायर / कीचड़ v) मानव काया पिंड

15.6 i) *स्फैग्नम* ii) लिंग iii) बहुगुणितों

iv) मॉसेस

अंत में कुछ प्रश्न

1) सेक्शन 15.3.2 देखिए

2) संकेत : इकाई के सभी टाइट्ल्स का विस्तार कीजिए, प्रत्येक का 4-5 पंक्तियों में उल्लेख कीजिए।

3) सेक्शन 15.6 देखिए

4) संकेत : जलग्राही क्षमता - विस्तार कीजिए

5) सेक्शन 15.4 के प्रत्येक उप-टाइटल को 4-5 पंक्तियों में समझाइए।

शब्दावली

अपनतिक विभाजन : अंग की, सतह के लंब पादप कोशिका का विभाजन।

इलेटर्स : दीर्घीकृत आर्द्रताग्राही कोशिकाएं जिनमें सर्पिल भित्ति स्थूलन होते हैं जो मार्जन झाड़ी (scouring rushes जैसे कि *इक्वीसीटम*) तथा लिवरट्स में बीजाणुधानी से बीजाणुओं को मुक्त करने में सहायता करते हैं।

उभयलिंगाश्रयी : कवक तथा शैवाल में, नर तथा मादा अलग-अलग जनन प्रकार के अंगों को एक ही पादप पर धारण किए हुए। बीज पादपों में, अलग-अलग परागकण उत्पन्न करने वाले तथा अंड उत्पन्न करने वाले शंकु या पुष्प एक ही पादप पर।

एकालिंगाश्रयी : कवक तथा शैवाल में, भिन्न-भिन्न जनन प्रकार के युग्मक जब भिन्न-भिन्न पादपों पर पाए जाते हैं। बीजीय पादपों में परागकोश (anthers) तथा स्त्रीकेसर (pistils) भिन्न-भिन्न द्विजनकीय जनन पादपों पर उत्पन्न होते हैं जिससे संयुग्मन द्विजनकीय होता है।

भ्रूणीपादप : वह पादप जो भ्रूण उत्पन्न करते हैं।

कैप्सूल : ब्रायोफ़ाइट्स में, वह बीजाणुधानी जो अगुणित बीजाणु लिए होती है। पुष्पीय पादपों में सरल, शुष्क, स्फुटनशील अनेक बीजीय फल जो एक से अधिक अंडप का बना होता है।

गुलिकीय मूलाभास : कुछ ब्रायोफ़ाइट्स के मूलाभास जिनकी आंतरिक भित्ति में खूंटे जैसे स्थूलन उपस्थित होते हैं।

गोपक : स्त्रीधानी के अंडधा का दीर्घीकृत भाग, जो अधिकांश मॉसेस के बीजाणु-उद्भिद् में विकासशील भ्रूण की सुरक्षा का कार्य करता है।

जलवाही कोशिका : विशेषीकृत दीर्घीकृत, जीवित, जल-संवहनी कोशिका जो बहुत से मॉस युग्मकोद्भिदों, कुछ लिवरवर्ट्स तथा कुछ मॉस बीजाणु-उद्भिदों के स्फोटिका वृंत में पाई जाती है।

जीभिका (लिग्यूल) : क्लब मॉसेस (लाइकोपोड्स) के बीजाणुपर्णों पर एक बहि:वृद्धि (स्पाइक), मॉसेस तथा लिवरवर्ट्स (आइसोइटेलीज) के आधार पर एक झिल्लीनुमा उपांग। घास की पत्तियों की अभ्यक्ष सतह पर फलक (ब्लेड) तथा आच्छद के बीच एक उपांग।

जेमा : ब्रायोफ़ाइट्स में उत्पन्न होने वाला एक कायिक प्रवर्ध्य (propagule)।

जेमा कप : ब्रायोफ़ाइट्स में एक विशेषीकृत संरचना जिसमें कायिक प्रवर्ध्य (जेमा) उत्पन्न होते हैं। ये स्प्लैश (splash) कप भी कहलाते हैं।

परिच्छद : वास्तविक मॉस बीजाणु-उद्भिद् में कैप्सूल के शीर्ष पर एक कप या आवरण।

परिनतिक विभाजन : वह कोशिका विभाजन जो अंग की सतह के समानान्तर होता है।

परिमुख दंत	: वास्तविक मॉसेस में स्थूलीकृत, दंत जैसी संरचना कैप्सूल के घेरे के चारों ओर प्रच्छद के ठीक नीचे स्थित होती है। यह बीजाणु के परिक्षेपण में सहायता करती हैं।
पर्ण-अनुपथ	: संवहनी ऊतक का वह पूल जो तने से पत्ती में प्रवेश करता है।
प्रथम तंतु	: बहुत से ब्रायोफाइट्स, स्टोनवर्ट्स (कैरोफाइट्स) तथा फर्न व उसके सहायकों की तंतुमय या थैलसनुमा युग्मकोद्भिदी अवस्था। ये सामान्यत: तब प्रगट होता है जब अगुणित बीजाणु अंकुरित होते हैं।
पुमणु	: छोटा व गतिशील नर युग्मक, कशाभ युक्त।
पुंकोशिका	: पुमणु मातृ कोशिका। वह कोशिका जो बाद में पुमणु में विकसित होती है।
पुंधानीधर	: ब्रायोफाइट्स में वह वृंत जो पुंधानी को धारण करता है।
पुंपूर्वी	: वह अवस्था जिसमें नर प्रजनन संरचना मादा प्रजनन संरचना से पहले परिपक्व हो जाती है।
पोषवाही कोशिका	: मॉसेस की संवहनी कोशिका जो उपापचयी उत्पादों का परिवहन बहुत कुछ संवहनी पादपों के चालनी तत्वों (sieve elements) की भाँति ही करती हैं।
बीजाणु अंतःस्तर	: संवहनी पादप के बीजाणु या परागकण की कोशिका की भित्ति की भीतरी परत।
बीजाणु बाह्यचोल	: संवहनी पादप के बीजाणु या परागकण की कोशिका की भित्ति की बाहरी परत।
बीजाणु मातृ कोशिका	: द्विगुणित कोशिका जिसमें अगुणित बीजाणु उत्पन्न करने के लिए अर्धसूत्री विभाजन होता है।
मूलाभास	: एककोशिकीय या बहुकोशिकीय जड़ जैसे तंतु जो ब्रायोफाइट्स, फर्नस् व उनके सहायक तथा कुछ शैवालों में, पोषक तत्वों तथा जल को ऊपर ले जाने तथा पौधे को जमीन से जोड़े रखने का कार्य करते हैं।
समबीजाणुकता	: वह स्थिति जिसमें कोई जीव एक ही प्रकार के बीजाणु उत्पन्न करता है।
सस्पैन्सर	: भ्रूण के मुख्य भाग के नीचे उपस्थित बहुकोशिकीय तंतु जो युग्मनज के प्रथम विभाजन से उत्पन्न आधार कोशिका के बार-बार विभाजन से बनता है।
स्तंभिका	: मॉसेस में बीजाणुधानी में बंध्य बीजाणु-उद्भिदी कोशिकाओं का केन्द्रीय स्तंभ जो अगुणित बीजाणुधारी क्षेत्र या बीजाणुजन परत से घिरा रहता है।
स्त्रीधानीधर	: ब्रायोफाइट्स में वह वृंत जो स्त्रीधानी को धारण करता है।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

UGBY -01
पादप विविधता-1

खंड

4

टेरिडोफाइट्स

इकाई 16

टेरिडोफाइट्स : तुलनात्मक आकारिकी तथा शारीर 5

इकाई 17

टेरिडोफाइट्स में प्रजनन का तुलनात्मक अध्ययन 55

इकाई 18

सार : निम्न पादप 96

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

प्रो. आर. एन. चोपड़ा
प्रोफेसर (सेवा निवृत्त)
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. आलोक मोइत्रा
भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी
दिल्ली

डा. (कु.) सरला
देशबन्धु कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. सुश्री गुणवन्त सोखी
दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रो. एच. एन. वर्मा
लखनऊ विश्वविद्यालय

डा. बी. डी. वशिष्ठ
कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय

स्व. डा. सुश्री तोशा भान
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

स्व. डा. कैलाश मंधान
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री अमृता निगम
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री जसवन्त सोखी
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

खंड निर्माण समिति

प्रो. आर. एन. चोपड़ा
प्रोफेसर (सेवा निवृत्त)
दिल्ली विश्वविद्यालय

डा. बी. डी. वशिष्ठ
कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
विज्ञान विद्यापीठ
इं.गां.रा.मु.वि.

अनुवाद

डा. कुमकुम चतुर्वेदी

डा. सुश्री स्वदेश तनेजा
इं.गां.रा.मु.वि.
डा. सुश्री पुष्पलता त्रिपाठी
इं.गां.रा.मु.वि.

पाठ्यक्रम संयोजक : डा. (सुश्री) स्वदेश तनेजा

जुलाई, 2002 (पुर्नमुद्रित)

© इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2001

ISBN-81-266-0109-4

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली-68 से प्राप्त की जा सकती हैं।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से निदेशक, विज्ञान विद्यापीठ द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के अनुमति से पुनः मुद्रित। उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से डॉ0 ए0 के0 सिंह, कुलसचिव द्वारा पुनः मुद्रित एवं प्रकाशित, दिसम्बर 2011 मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

खंड 4 टेरिडोफाइट्स

अपने घर तथा आसपास में देखिए। आप पायेंगे कि पुष्पीय पादप धरती पर थलीय वनस्पति का प्रमुख भाग बनाते हैं। आपने पहले ही पढ़ा है कि पादप जीवन की जल में उत्पत्ति हुई थी। शैवाल तथा ब्रायोफाइट्स के बारे में पढ़ते वक्त (इकाई 2, 3, 13) आपने अवश्य जल आवास से थल आवास के बदलाव के साथ संरचना में क्रमशः बढ़ने वाली जटिलता पर ध्यान दिया होगा। ब्रायोफाइट्स को पादप जगत के उभयचरी माना जाता है तथा वे वास्तविक थल पादप नहीं हैं क्योंकि उन्हें अपना जीवनचक्र पूरा करने के लिए जल की आवश्यकता होती है। कहाँ, कब तथा किस पूर्वज समूह से प्रथम थलीय पादप तथा बीज-जैसी संरचना का विकास हुआ? टेरिडोफाइटा पादपों का वह समूह है जिसमें आरंभिक थल पादप सम्मिलित हैं। इनमें से कुछ पादप बीज प्रकृति के विकास की अवस्थाओं को भी दर्शाते हैं। इस ब्लॉक में हम पादपों के इस दिलचस्प समूह के बारे में पढ़ेंगे।

इस खंड में तीन इकाईयां है। इकाई 16 में आप टेरिडोफाइट्स की सामान्य विशेषताओं तथा टेरिडोफाइट्स के विभिन्न समूहों की कुछ चुनी हुई जातियों के जीवन चक्र तथा आकारिकी का अध्ययन करेंगे। आप जीवाश्मों उनके प्रकारों तथा वे किस प्रकार से निर्मित होते हैं के बारे में भी पढ़ेंगे साथ ही आप कुछ सामान्य टेरिडोफाइट्स के वितरण के बारे में भी पढ़ेंगे।

इकाई 17 में हम टेरिडोफाइट्स के कुछ चुने हुए वंशों (genera) में प्रजनन की प्रक्रिया तथा इस प्रक्रिया से संबद्ध अंगों की संरचना और विकास की चर्चा करेंगे।

इकाई 18 में हम कुछ विकासात्मक पहलुओं जैसे कि टीलोम (telome) संकल्पना, रंभ (stele) का विकास, विषमबीजाणुता (heterospory) तथा बीज प्रकृति (seed habit) की उत्पत्ति की चर्चा करेंगे। ध्रुवीकरण (polarity), पुनर्जनन (regeneration), अपयुग्मन (apogamy) तथा अपबीजाणुता (apospory) पर प्रयोगात्मक अध्ययन का संक्षिप्त विवरण भी इस इकाई में सम्मिलित किया गया है।

उद्देश्य

इस खंड के अध्ययन से आप :

- टेरिडोफाइट्स तथा अन्य पादप समूहों के बीच में अन्तर कर सकेंगे,
- जीवाश्मों को परिभाषित कर सकेंगे तथा जीवाश्मों के विभिन्न प्रकारों में परस्पर अन्तर बता सकेंगे,
- टेरिडोफाइटा के विभिन्न समूहों की प्रजनन संरचनाओं की परस्पर तुलना कर सकें,
- टीलोम संकल्पना को समझा सकेंगे,
- विभिन्न प्रकार के रंभों में अन्तर कर सकेंगे,
- विषमबीजाणुता तथा बीज प्रकृति की उत्पत्ति का वर्णन कर सकेंगे,
- ध्रुवीकरण, अपयुग्मन तथा अपबीजाणुता को समझा सकेंगे।

इकाई 16 टेरिडोफाइट्स : तुलनात्मक आकारिकी तथा शारीर

इकाई की रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

16.2 टेरिडोफाइटी जीवन चक्र

16.3 सामान्य विशेषताएं तथा अन्य समूहों के साथ संबन्ध

16.4 जीवाश्मों का निर्माण तथा उनके प्रकार

16.5 आकारिकी तथा शारीर

राइनिया (*Rhynia*)

कुकसोनिया (*Cooksonia*)

साईलोटम (*Psilotum*)

लाइकोपोडियम (*Lycopodium*)

सैलाजिनेला (*Selaginella*)

एक्वीसीटम (*Equisetum*)

टेरिस (*Pteris*)

साऐथिया (*Cyathea*)

मार्सीलिया (*Marsilea*)

16.6 भारत में टेरिडोफाइट्स का वितरण

16.7 सारांश

16.8 अंत में कुछ प्रश्न

16.9 उत्तर

16.1 प्रस्तावना

अब हम इस पाठ्यक्रम में सम्मिलित किए गए अपुष्पीय पादपों के अंतिम समूह टेरिडोफाइट्स पर आते हैं। इस समूह के सबसे परिचित पादप फर्न हैं जिन्हें हम सामान्य तौर पर गृहपादपों के रूप में, पार्कों में, तथा दृश्यभूमियों (landscapes) में अन्य सजावटी पौधों के साथ देखते हैं। फर्न के पौधे छोटे तथा आकर्षक, बहुधा कोमल संयुक्त पत्तियों वाले होते हैं। अपनी सुन्दरता तथा संचरण में कठिनता होने के कारण इन्हें बहुत ही कीमती पादप माना जाता है।

पूर्व पाठ्यक्रम में हमने जलीय फर्न *आज़ोला* (*Azolla*) के बारे में बताया था। *ऐनाबीना-आज़ोला* (*Anabaena-Azolla*) का सहवास (एल.एस.ई. - 05, खंड 4, इकाई 15, पृष्ठ 6 और 7) आर्द्र भूमि धान (चावल) की खेती के लिए नाइट्रोजन का स्रोत है। मझोले कद के वृक्ष फर्न भी होते हैं जैसे कि *साऐथिया* (*Cyathea*)। क्या आपको *लाइकोपोडियम* (*Lycopodium*), *सैलाज़िनेला* (*Selaginella*), तथा *एक्वीसीटम* (*Equisetum*) का ध्यान है? ये वंश अर्थात् जेनेरा (genera) भी टेरिडोफाइटा के ही हैं।

इस इकाई में आप टेरिडोफाइट्स की सामान्य विशेषताओं तथा जीवन चक्र और कुछ प्रतिनिधि वंशों की संरचना तथा आकारिकी के विषय में पढ़ेंगे।

वैज्ञानिकों को पूर्व समय के संवहनी भू-पादपों के बारे में पता जीवाश्मों यानि कि विलुप्त सदस्यों से ही मिला था। *राइनिया* (*Rhynia*) तथा *कुकसोनिया* (*Cooksonia*) सरल तथा सबसे आदिम टेरिडोफाइट्स हैं। इस समूह का एक सबसे सरल जीवित सदस्य *साईलोटम* (*Psilotum*) है।

आपके लिए यह जानना महत्वपूर्ण है कि जीवाश्मों का निर्माण किस प्रकार से होता है। इसलिए हमने जीवाश्मों के निर्माण तथा उनके प्रकारों की चर्चा एक भाग में की है।

आप जानते हैं, टेरिडोफाइट्स संवहनी पादप हैं तथा उनमें जड़, तना तथा पत्तियाँ पाई जाती हैं। सभी संवहनी पादपों में जल तथा भोजन को ले जाने वाली नलियाँ पाई जाती हैं जो कि क्रमश: दारु यानि जाइलम (xylem) और पोषवाह अर्थात् फ्लोएम (phloem) ऊतकों की बनी होती हैं। पादपों के विभिन्न समूहों में, जाइलम और फ्लोएम एवं अन्य संबद्ध ऊतकों की सापेक्ष स्थिति तथा विन्यास में और मज्जा (pith) की उपस्थिति एवं अनुपस्थिति में बहुत अधिक भिन्नता पाई जाती है। टेरिडोफाइट्स में सरल (आदिम) से जटिल प्रकारों की ओर संवहनी ऊतकों एक स्वाभाविक श्रेणीकरण दिखाई पड़ता है। भिन्न-भिन्न समूहों में पाये जाने वाले संवहनी तंत्र के संगठन के बारे में भी इस इकाई में चर्चा की गई है।

यहां हमने विभिन्न वंशों के तनों, जड़ों तथा पत्तियों के शारीर का भी वर्णन किया है जिससे आप यह अंदाजा लगा सके कि विभिन्न प्रकार के संवहनी संगठन किस तरह से विकसित हुए हैं।

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप :

- टेरिडोफाइट्स की विशेषताओं को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- प्रारूपिक टेरिडोफाइट के जीवन चक्र को रेखांकित कर सकेंगे,
- टेरिडोफाइटा के सामान्य लक्षणों तथा जीवन चक्र की तुलना ब्रायोफाइटा से कर सकेंगे,
- विभिन्न प्रकार के जीवाश्मों के बीच में विभेद कर सकेंगे,
- उदाहरण देकर जीवाश्म टेरिडोफाइट्स का वर्णन कर सकेंगे,
- इस इकाई में सम्मिलित किए गए वंशों की आकारिकी तथा शारीर का वर्णन कर सकेंगे,
- विभिन्न प्रकार के रंभों को पहचान सकेंगे,
- आकारिकी तथा शारीर की विशेषताओं के आधार पर टेरिडोफाइट्स के विभिन्न समूहों में परस्पर विभेद कर सकेंगे, तथा
- भारत में पाये जाने वाले कुछ प्रचलित टेरिडोफाइट्स के वितरण को उदाहरण सहित समझा सकेंगे।

अध्ययन निर्देश

इस इकाई को आसानी से समझने के लिए हमारे सुझाव निम्न हैं :

i) इस इकाई में प्रयोग किए गए नए तकनीकी शब्दों को सीखिए। यह आवश्यक है कि विषय को गहनता से भलीप्रकार समझने के लिए आप इन्हें पूरी तरह से जान लें। खंड के अंत में व्यापक शब्दकोश दिया गया है, जिन शब्दों को आप ना जानते हों अथवा जिनके बारे में आपको संदेह हो उन्हें आप इसमें देखें।

ii) जड़, तने तथा पत्तियों के शारीर को पुन: दोहरा लें।

iii) विषय को संबन्धित चित्रों के साथ पढ़ें।

iv) पाठ्यक्रम में दिए गए चित्रों को बनाने व उन्हें चिन्हित करने का प्रयास करें।

v) जब आप टेरिडोफाइट्स के विभिन्न भागों के शारीर का अध्ययन करेंगे, तब कहीं-कहीं पर आपको वर्णित किए गए लक्षणों को रेखा चित्रों में देख पाने में कठिनाई का अनुभव हो सकता है। परन्तु जब आप इन वंशों के प्रयोगात्मक परीक्षण करेंगे [प्रयोगशाला -14(L)], तब आप विभेदकारी अभिरंजन (differential staining) प्रक्रिया द्वारा विभिन्न लक्षणों को पहचान सकेंगे।

16.2 टेरिडोफाइटी जीवन चक्र

चित्र 16.1 तथा 16.2 में दिए गए टेरिडोफाइटा के कुछ चित्रों को ध्यान से देखिए। ये इन पौधों के बीजाणु-उद्भिद् अर्थात् स्पोरोफाइट (sporophyte) हैं। इनके युग्मकोद्भिद् अर्थात् गेमीटोफाइट (gametophytes) बहुत ही छोटे, मात्र कुछ मिलीमीटर के कद वाले, तथा अल्प-जीवी होते हैं।

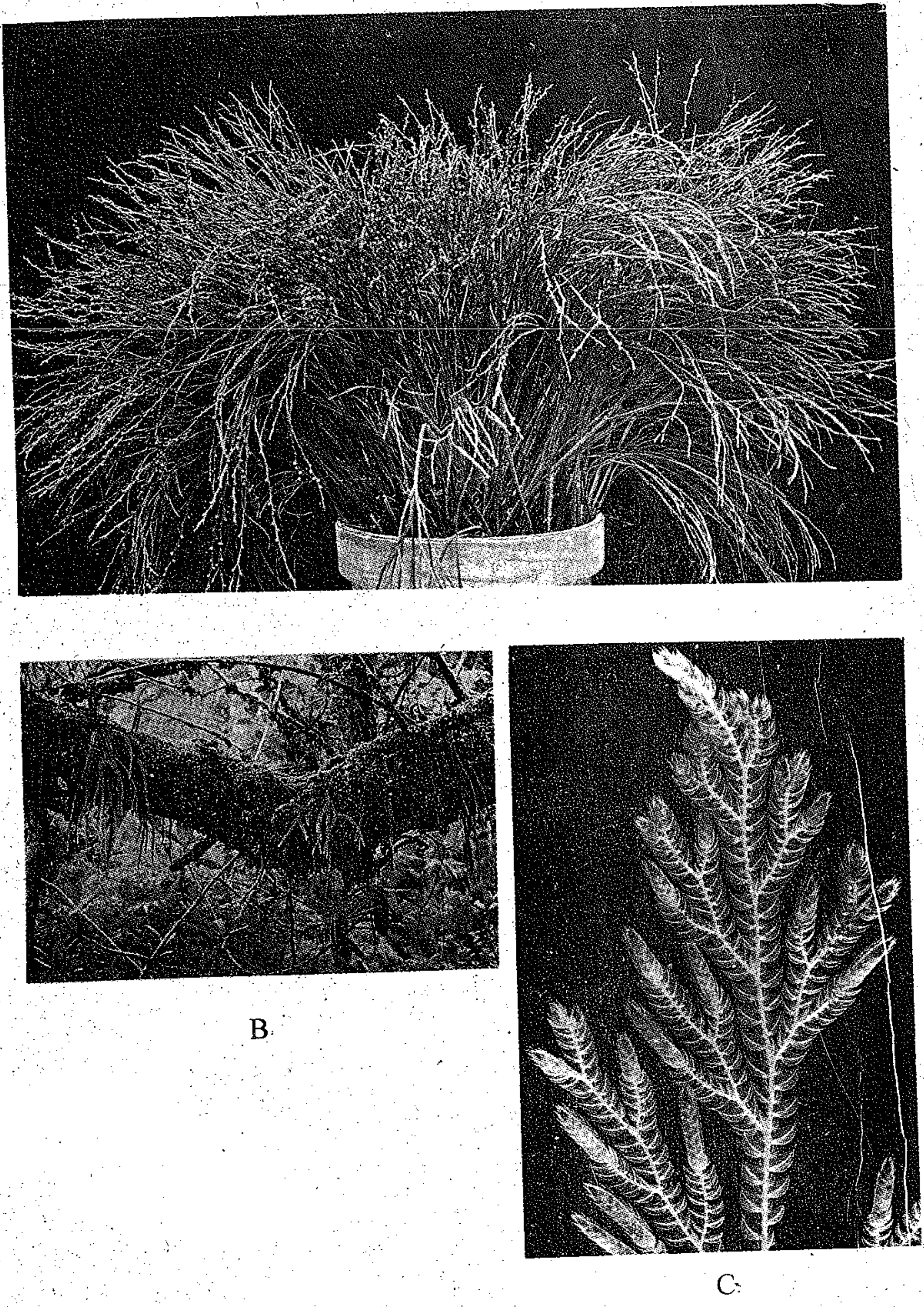

चित्र 16.1 : A) गमले में उगा हुआ *साईलोटम नूडम*, B) दक्षिण भारत के एक जंगल में 5000 फीट की ऊँचाई पर मॉस से ढके पेड़ के तने पर एपिफाइट की तरह उगी हुई *लाइकोपोडियम* जाति, C) *सैलाजिनेला* जाति जिसमें पत्तियाँ तथा शंकु (strobili) विशिष्ट रूप से व्यवस्थित है, (पी. दयानन्दन के सौजन्य से)।

अच्छा रहेगा कि पहले हम टेरिडोफाइट्स के जीवन चक्र के बारे में अध्ययन कर लें क्योंकि तब हमारे लिए उनकी विशेषताओं को सूचीबद्ध करने में ज्यादा आसानी रहेगी। ब्रायोफाइट्स की तरह से ही, टेरिडोफाइट्स के जीवन चक्र में भी दो भिन्न-भिन्न अवस्थाएं (phases) होती हैं : युग्मकोद्भिद् तथा बीजाणु-उद्भिद् (चित्र 16.3) जो नियमित अनुक्रम से एक दूसरे का अनुसरण करती हैं। चूंकि दोनों

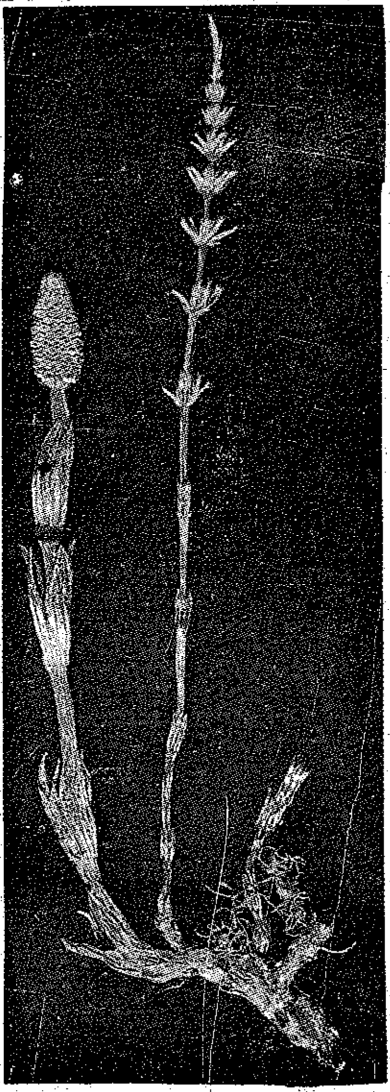

A

B

C

चित्र 16.2 : A) *एक्वीसीटम आरवेंस* (***Equisetum arvense***) के कायिक तथा उर्वर अक्ष, B) *मार्सीलिया* स्पी. (*Marsilea* sp.), C) कृष्य फर्न, (पी. दयानंदन के सौजन्य से)।

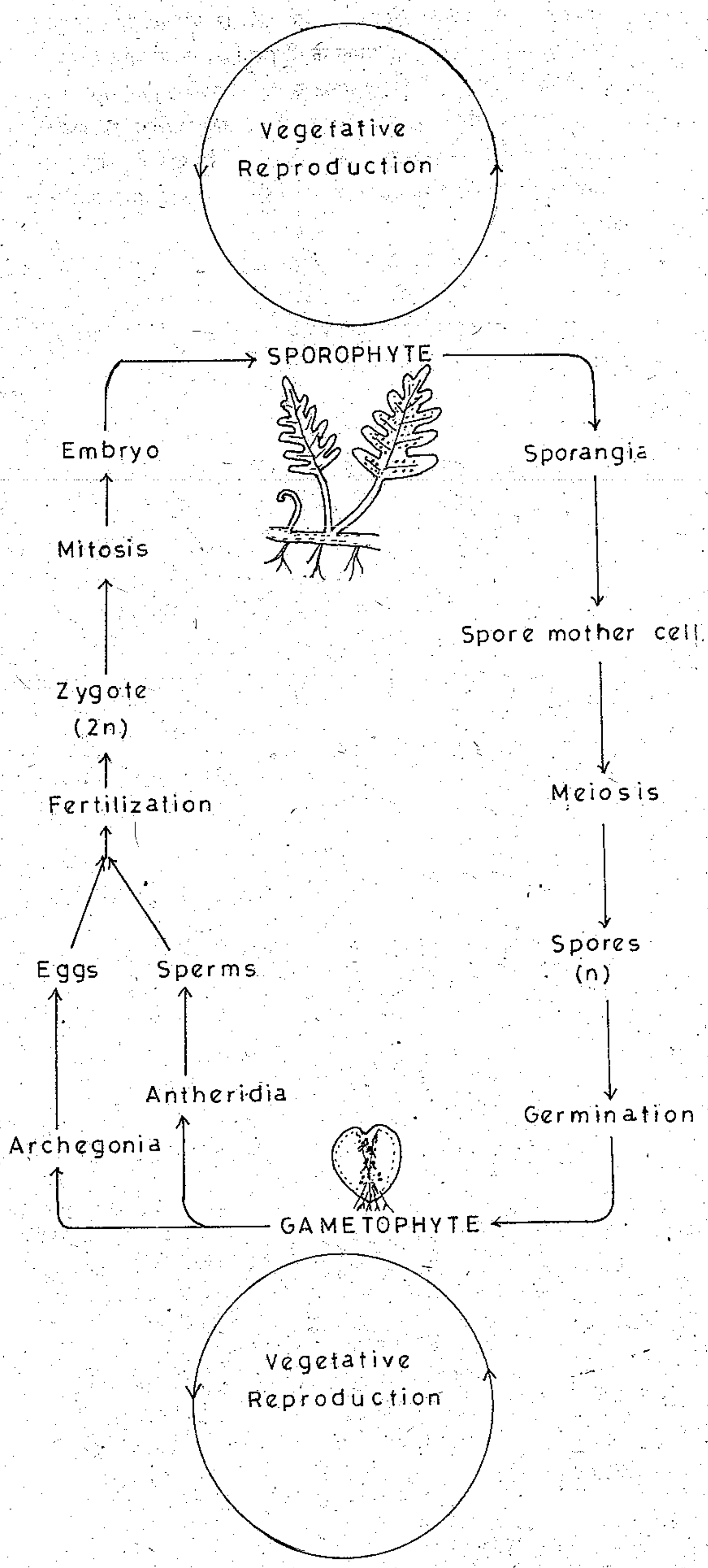

चित्र 16.3 : टेरिडोफाइट्स का प्रारूपिक जीवन चक्र।

पीढ़ियां एक दूसरे से भिन्न दिखाई देती हैं, अतः उन्हें विषमरूपी (heteromorphic) कहा जाता है। सामान्य परिस्थितियों में, बीजाणु-उद्भिद् चल नर युग्मक पुमणु तथा अचल मादा युग्मक अंड उत्पन्न करते हैं। अंड कोशिका तथा नर युग्मक के बीच संगलन के परिणाम स्वरूप युग्मनज (zygote) का निर्माण होता है जो कि द्विगुणित होता है। युग्मनज समसूत्री विभाजन (mitotic division) के द्वारा विभाजित होता है तथा बीजाणु-उद्भिद् का निर्माण करता है। बीजाणु-उद्भिद् पर अर्धसूत्री विभाजन (meiosis) के द्वारा बहुत से अगुणित (haploid), अचल बीजाणु निर्मित होते हैं। जीवन चक्र तब पूरा होता है जब एक बीजाणु अंकुरित होता है तथा समसूत्री विभाजन के द्वारा अगुणित युग्मकोद्भिद् का निर्माण करता है (चित्र 16.3)।

आपने पढ़ा है कि ब्रायोफाइट्स में, जीवन चक्र में प्रभावी अवस्था (dominant phase) युग्मकोद्भिद् होती है, तथा बीजाणु-उद्भिद् भोजन के लिए आंशिक रूप से अथवा पूर्णतः उस अवस्था पर निर्भर करता है। परन्तु टेरिडोफाइट्स में बीजाणु-उद्भिद् अवस्था बहुत जल्दी ही युग्मकोद्भिद् से स्वतंत्र हो जाती है तथा यह अवस्था प्रभावी पीढ़ी होती है।

बीजाणु-उद्भिद् के संरचनात्मक संगठन में अधिक जटिलता पाई जाती है। बहुत ही प्राचीन जीवाश्म टेरिडोफाइट्स में तथा बहुत ही आदिम जीवित सदस्यों के अतिरिक्त अन्य में ये बीजाणु-उद्भिद् तना, जड़ तथा पत्तियों में संगठित रहते हैं। संवहनी ऊतक (जाइलम तथा फ्लोएम) सिर्फ बीजाणु-उद्भिद् में ही विकसित होते हैं। इसके अतिरिक्त, वायवीय (aerial) भाग क्यूटिकल (cuticle) अर्थात् उपचर्म की परत से ढंके रहते हैं। बाह्यत्वचा (epidermis) पर गैसों के आदान-प्रदान के लिए रंध्र होते हैं। बीजाणु-उद्भिद् के शारीर की ये जटिलताएं उसे युग्मकोद्भिद् की अपेक्षा अधिक विस्तारित पर्यावरणीय परिस्थितियों में निवास करने में सहायता करती हैं।

बोध प्रश्न 16.1

अ) टेरिडोफाइट्स के बारे में निम्नलिखित वक्तव्यों में से कौन से सत्य अथवा असत्य हैं। सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) लिखें।

i) बीजाणु-उद्भिद् तना, जड़ों तथा पत्तियों में विभेदित होता है। ☐

ii) वयस्क होने पर युग्मकोद्भिद् तथा बीजाणु-उद्भिद् स्वतंत्र होते हैं। ☐

iii) नर और मादा युग्मक अचल होते हैं। ☐

iv) बीजाणु-उद्भिद् में संवहनी तंत्र का अभाव होता है। ☐

v) जीवन चक्र में प्रभावी अवस्था युग्मकोद्भिद् होती है। ☐

16.3 सामान्य विशेषताएं तथा अन्य समूहों के साथ संबन्ध

पिछले भाग में आपने पढ़ा कि टेरिडोफाइट्स में बीजाणु-उद्भिद् प्रभावी अवस्था होती है । इस अवस्था में संवहनी तंत्र पाया जाता है तथा पौधा वास्तविक जड़, तना और पत्तियों में विभेदित रहता है। विभिन्न प्रकार के टेरिडोफाइट्स के आकार, प्रकार तथा संरचना में बहुत अधिक भिन्नता पाई जाती है। अब आगे पढ़ने से पहले चित्र 16.6 से 16.14 तक देखिए तथा विभिन्न वंशों के बीजाणु-उद्भिद् तथा प्रजनन अंगों की आकारिकी का ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए।

कुछ काष्ठीय फर्न पेड़ों के अतिरिक्त अधिकांश टेरिडोफाइट्स शाकीय (herbaceous) होते हैं। ये सममिति (symmetry) में पृष्ठाधर (dorsi-ventral) अथवा अरीय (radial) हो सकते हैं तथा इनमें द्विभाजी

(dichotomously) अथवा पार्श्व (lateral) शाखित तना होता है जिनमें लघुपर्णी (microphyllous) (चित्र 16.1 A और B) अथवा गुरूपर्णी (megaphyllous) (चित्र 16.2 B और C) पत्तियाँ होती हैं। बीजाणु-उद्‌भिद् में संवहनी सिलिंडर का संगठन होता है जिसे रंभ भी कहते हैं (चित्र 16.5)। ये सरल आदिम प्रकार से लेकर अधिक जटिल प्रकार तक विभिन्न रूपों में पाया जाता है। कुछ सदस्यों में वाहिनिकाओं (tracheids) के साथ ही वाहिकाएं (vessels) भी उपस्थित रहती हैं (आप वाहिनियों तथा वाहिनिकाओं के लिए बॉक्स संख्या 2 को पढ़ सकते हैं)।

जड़ें आमतौर पर अपस्थानिक (adventitious) होती हैं, व प्राथमिक भ्रूणीय जड़ अल्प-जीवी होती हैं।

बीजाणु विशेष प्रकार की संरचनाओं में बनते हैं जिन्हें बीजाणुधानी (sporangium) कहते हैं। बीजाणुधानी पत्ती-जैसे अनुबंधों (appendages) द्वारा कक्षांतरित रहती है जिन्हें बीजाणुपर्ण (sporophyll) कहते हैं (चित्र 17.5 C, 17.7 A तथा C, इकाई 17)। बीजाणुधानियाँ समूचे कायिक अक्ष (vegetative axis) पर छितरी हुई हो सकती हैं अथवा वे विशेष क्षेत्र में सीमित हो सकती हैं। कई पादपों में वे बीजाणु निर्मित करने वाले विशिष्ट क्षेत्र को बनाने के लिए संहत (compact) हो जाती हैं। इन क्षेत्रों को शंकु (cones) अथवा स्ट्रोबिलाई (strobili) कहते हैं। (एकवचन स्ट्रोबुलस, चित्र 16.8 A तथा 16.11 A)। कुछ उदाहरणों में बीजाणुधानियाँ विशेष संरचनाओं के अंदर निर्मित होती हैं जिन्हें बीजाणु फलिका (sporocarp) कहते हैं (16.14 A)। कुछ अन्य जातियों में कायिक और प्रजनन प्ररोहों (shoots) तथा पत्तियों का स्पष्ट पृथक्करण भी पाया गया है। क्या आपने कभी फर्न की पत्ती की निचली सतह पर भूरे-काले बिन्दुओं को देखा है? प्रत्येक बिन्दु एक प्रजनन संरचना होती है जिसे बीजाणुधानी पुंज (sorus) कहते हैं (बहुवचन- सोराई (sori), 16.13 C)। यह बीजाणुधानी का गुच्छा होता है जिसमें बीजाणु होते हैं।

सामान्यतौर पर, टेरिडोफाइट्स, समबीजाणुक (homosporous) होते हैं यानि कि वे सिर्फ एक ही प्रकार के बीजाणु निर्मित करते हैं (चित्र 17.5 B तथा C)। हालांकि, कुछ जातियाँ विषमबीजाणुक (heterosporous) होती है यानि कि वे दो प्रकार के बीजाणु बनाती हैं, लघुबीजाणु (microspore) तथा गुरूबीजाणु (megaspore) (चित्र 17.7 A से D)। बीजाणु अंकुरित होने पर युग्मकोद्‌भिद् का निर्माण करता है। विषमबीजाणुक जातियाँ लघुयुग्मकोद्‌भिद् (microsporophyte) के साथ-साथ गुरूयुग्मकोद्‌भिद् (macrosporophyte) का भी निर्माण करती हैं।

सामान्य तौर पर, टेरिडोफाइट्स में हरा, पृष्ठाधर रूप से विभेदित थैलसाभ (thallose) युग्मकोद्‌भिद् होता है जिसमें प्रजनन अंग अधर (ventral) सतह पर ही सीमित रहते हैं। प्रजनन अंग धंसे हुए (अंत:स्थापित) अथवा बाहर की तरफ़ निकले हुए (प्रक्षेपीय) हो सकते हैं। ये सामान्य योजना में ब्रायोफाइट्स से मिलते जुलते होते हैं। मादा प्रजनन संरचना स्त्रीधानी (archegonium) होती हैं तथा नर प्रजनन संरचना पुंधानी (antheridium) होती है।

स्त्रीधानी में बिना किसी अपवाद के ग्रीवा कोशिकाओं की चार अनुदैर्ध्य कतारें होती हैं जिनकी लम्बाई विभिन्न वंशों में भिन्न-भिन्न होती हैं। पुंधानी पुंकोशिका (androcyte) अथवा पुमणु मातृ कोशिका (antherozoid mother cells) का पिन्ड होता है जिसे कोशिकाओं की बंध्य (sterile) जैकेट की एकल परत घेरे रहती है। प्रत्येक पुंकोशिका एक पक्ष्माभमय (ciliated) चल पुमणु को जन्म देती है। वयस्क लैंगिक अंगों का खुलना तथा उसके बाद निषेचन (fertilization) पानी की उपस्थिति पर निर्भर करता है। अत: ब्रायोफाइटस की भाँति ही, इन्हें भी वनस्पति जगत के उभयचरी (amphibians) कहा जा सकता है।

बीजाणुधानी का विकास दो प्रकार से हो सकता है : सुबीजाणुधानीय (eusporangiate) तथा तनुबीजाणुधानीय (leptosporangiate) । आप इनके बारे में अगली इकाई में पढ़ेंगें।

यहां आपने टेरिडोफाइट्स के जीवन चक्र तथा सामान्य विशेषताओं को पढ़ा है, क्या आप उनकी तुलना ब्रायोफाइट्स के साथ कर सकते हैं ?

इन दोनों समूहों में आप क्या समानताएं पाते हैं? उन्हें नीचे सूचीबद्ध करने की कोशिश कीजिए।

1. ....

2. ....

3. ....

4. ....

5. ....

6. ....

ब्रायोफाइट्स टेरिडोफाइट्स से निम्नलिखित लक्षणों में मिलते हैं:

1) थैलसाभ लिवरवर्ट्स (liverworts) तथा टेरिडोफाइट्स के युग्मकोद्भिद् की कायिक संरचना में समानता होती है।

2) उनकी मादा तथा नर प्रजनन संरचनाएं क्रमश: स्त्रीधानी तथा पुंधानी होती हैं।

3) वयस्क प्रजनन अंगों का खुलना तथा उसके बाद निषेचन तरल अवस्था में, जल की उपस्थिति पर निर्भर करता है, यानि कि दोनों को निषेचन के लिए जल की आवश्यकता होती है।

4) वे आमतौर पर भिन्न तथा स्पष्ट रूप से परिभाषित विषमरूपी पीढ़ियों का एकांतरण दर्शाते हैं तथा दोनों पीढ़ियाँ नियमित रूप से एक दूसरे का अनुसरण करती हैं।

5) बीजाणु दोनों समूहों में एक ही तरीके से उत्पन्न होते हैं। बीजाणु मातृ कोशिकाएं (spore mother cells) बीजाणुजन ऊतक (sporogenous tissue) के अंतिम विभाजन द्वारा उत्पन्न होती हैं। प्रत्येक बीजाणु मातृ कोशिका अर्धसूत्री विभाजन करती है जिसके परिणामस्वरूप बीजाणुओं के चतुष्टय (tetrad) का निर्माण होता है।

6) भ्रूण का विकास स्त्रीधानी में होता है।

7) किशोर बीजाणु-उद्भिद् अथवा भ्रूण आंशिक तौर पर युग्मकोद्भिद् पर परजीवी होता है।

अब उन विशेषताओं को सूचीबद्ध करने की कोशिश कीजिए जो टेरिडोफाइट्स को ब्रायोफाइट्स से विभेदित करती हैं।

1. ....

2. ....

3. ....

4. ....

5. ....

अपने ब्यौरे (points) की निम्नलिखित से तुलना कीजिए :

1) ब्रायोफाइट्स बीजाणु-उद्भिद्, युग्मकोद्भिद् पर भौतिक (physical) तथा शरीर क्रियात्मक रूप से (physiologically) निर्भर करता है, टेरिडोफाइट्स में बीजाणु-उद्भिद् वयस्क होने पर स्वतंत्र हो जाता है, तथा युग्मकोद्भिद् की बजाय यह जीवन चक्र की प्रभावी अवस्था होती है।

2) टेरिडोफाइट्स में बीजाणु-उद्भिद् में वास्तविक जड़, तना तथा पत्तियाँ होती है तथा भली प्रकार से विकसित संवहनी ऊतक - जाइलम और फ्लोएम होते हैं, जो ब्रायोफाइट्स में नहीं होते हैं।

3) कुछ टेरिडोफाइट्स विषमबीजाणुक होते हैं परन्तु सभी ब्रायोफाइट्स समबीजाणुक होते हैं।

जैसा कि पहले बताया गया है, टेरिडोफाइट्स ब्रायोफाइट्स तथा बीजीय पादपों (seed plants) के बीच में एक महत्वपूर्ण कड़ी बनाते हैं। यह तथ्य सुझाता है कि ये कुछ मायनो में बीजपादपों (spermatophytes) से मिलते हैं।

टेरिडोफाइट्स बीजीय पादपों से निम्नलिखित मायनों में मिलते हैं :

1) बीजाणु-उद्भिद् जीवन चक्र की प्ररूपी, प्रभावी प्रकाश संश्लेषणी अवस्था होती है।

2) यह जड़, तना और पत्तियों में संगठित रहते हैं।

3) जड़े तथा पर्णीय प्ररोहों (leafy shoots) में संवहनी तंत्र होता है जो कि विशिष्ट कोशिकाओं का बना होता है।

4) कुछ टेरिडोफाइट्स में बीज बनने लगता है तथा कुछ जीवाश्म टेरिडोफाइट्स में बीज-जैसी संरचनाएं पाई गई है।

क्रिप्टोगेम्स (Cryptogams) वे पादप जो बीज उत्पन्न नहीं करते हैं।

ब्रायोफाइट्स के साथ ही साथ उच्चतर संवहनी पादपों के साथ भी अपनी बंधुता के कारण, टेरिडोफाइट्स को संवहनी क्रिप्टोगैम्स (vascular cryptogams) भी कहते हैं।

फैनेरोगेम्स/पुष्पोद्भिद (Phanerogams) : एक प्राचीन शब्द जिसमें आवृतबीजी (एन्जियोस्पर्म) तथा अनावृत बीजी (जिम्नोस्पर्म) दोनों प्रकार के पादप सम्मिलित हैं। अब इसकी जगह पर शब्द स्पर्मेटोफाइटा (Spermatophyta) का उपयोग किया जाता है।

ऊपर दिए गए संदर्भ में आपने टेरिडोफाइट्स की विशेषताओं तथा अन्य पादप समूहों के साथ उनके संबन्धों के बारे में पढ़ा। अब हम यह बतायेंगें कि विभिन्न प्रकार के जीवाश्मों का निर्माण कैसे होता है तथा वे किस प्रकार उन जीवन प्रकारों को व्यक्त करते हैं जो लाखों वर्षों पूर्व हुए थे।

16.4 जीवाश्मों का निर्माण तथा उनके प्रकार

आप यह प्रश्न पूछ सकते हैं कि किस प्रकार से कोई जान सकता है "कब, कहाँ तथा किस पूर्वज समूह से प्रथम संवहनी थल पादप तथा बीज-जैसी संरचना का विकास हुआ था?'' इन प्रश्नों का उत्तर खोजने के लिए हमें जीवाश्मों पर निर्भर होना पड़ता है। पहले हम जीवाश्म को परिभाषित करने की तथा उन तरीकों को बताने की कोशिश करेंगे जिनके द्वारा जीवाश्म का निर्माण होता है। यह भी जानने का प्रयास करेंगें कि किस हद तक इनसे, आकारिकी विज्ञानी के लिए, उपयोगी जानकारी प्राप्त होने की उम्मीद की जा सकती है।

जीवाश्म क्या हैं?

जीवाश्म उन जीवों के अवशेष तथा छाप हैं जो अतीत में रहे थे। सही अर्थों में जीवाश्मों में जीवों अथवा उनके किसी भाग के अवशेष तथा जीव से जुड़ी हुई ऐसी कोई भी वस्तु जो उसके अस्तित्व को साबित करती हो सम्मिलित होती है, यानि कि, ऐसी कोई भी वस्तु जो यह प्रमाण देती हो कि वह जीव कभी जीवित रहा था।

जीवाश्म किस प्रकार से बनते हैं?

जीवाश्मीकरण का वास्तविक स्वरूप उन पर्यावरणीय स्थितियों पर निर्भर करता है जिनमें वह बनता है। मृत पादप अवशेष विघटित होने के लिए बाध्य होते हैं तथा ऐसा बहुत ही दुर्लभ होता है कि वे

जीवाश्मीकृत हो जाऐं। जीवाश्मीकरण की संभावना उन जीवों में बेहतर होती है जिसमें कड़े ऊतक कंकाल (skeleton) होते हैं। जीवाश्मीकरण प्रक्रिया का विस्तार से नीचे वर्णन किया गया है।

जीवाश्मीकरण की प्रक्रिया

जीवाश्मों के बनने की क्रिया तब से जारी है जबसे अवसादी शैलों (sedimentary rocks) ने निक्षेप (deposit) करना शुरू किया तथा यह प्रकृति में अब भी चल रही है।

कुछ मामलों में पौधों या उनके भाग उन स्थानों पर भी निक्षेपित हो सकते हैं जहाँ वे उगते है (स्वस्थाने), जैसे कि दलदल तथा छोटे अंत:स्थलीय तालों में। आक्सीजन की कम मात्रा तथा जल में विषाक्त पदार्थों की उपस्थिति के कारण, सूक्ष्मजीवीय वृद्धि (microbial growth) अवरुद्ध हो जाती है जिससे पौधों का क्षय नहीं होता है। इसके परिणामस्वरूप पौधे के अवशेष संरक्षित रहते हैं जब तक वे अवसाद की परतों द्वारा आच्छादित नहीं हो जाते हैं। यूरोपीय कोयले के जंगल इस प्रकार के जीवाश्मीरण का उदाहरण हैं।

कुछ अन्य उदाहरणों में पौधे के भाग बहते हुए जल के द्वारा नीचे को ले जाये जाते हैं तथा अंतत: ताल के जल के तल अथवा ज्वारनदमुखी (estuarine) में डूब जाते हैं। जहाँ सूक्ष्मजीवों द्वारा उनके क्षय की संभावना कम रहती है। भारतीय गोंडवाना (Gondwana) कोयला निक्षेप इस प्रकार के ज़ीवाश्मीकरण के उदाहरण हैं।

जीवाश्मीकरण के दौरान जीवद्रव्यी पदार्थ तथा अपेक्षाकृत मुलायम मृदूतक (parenchymatous) कोशिकाएं पहले लुप्त हो जाती हैं, जबकि अपेक्षाकृत कड़े काष्ठ तथा अन्य दृढ़ोतक (sclerenchymatous) अथवा क्यूटिनमय ऊतक अंत तक प्रतिरोध करते हैं। भारी अवसादी पत्थरों का ऊपर से लगातार पड़ता दबाव, पहले कोशिकाओं के भीतर के रिक्त स्थानों को कम करता है तथा तरल पदार्थों को बाहर कर देता है। कुछ कार्बनिक पदार्थ मार्श गैस (marsh gas) के रूप में बाहर निकल जाते हैं। स्वाभाविक रूप से, सभी जीवाश्म बहुत अधिक संपीड़ित (compressed) हो जाते हैं तथा अंतिम निष्कर्ष इस बात पर निर्भर करता है कि कहाँ तक परिस्थितियाँ अच्छे जीवाश्मीकरण के लिए अनुकूल थीं। सभी बाधाओं के बावजूद कभी-कभी ऐसे जीवाश्म बन जाते हैं, जो अपनी कोशिकीय संरचना को खूबसूरती से बनाए रखते हैं तथा कभी-कभी कुछ कोशिकीय द्रव्य भी बचे रह जाते हैं।

जीवाश्मों के प्रकार

जीवाश्मीकरण की प्रकृति अनुरूप, जीवाश्म निम्नलिखित प्रकार के हो सकते हैं।

i) अश्मीभूताश्म (Petrifaction)

यह सबसे अच्छी प्रकार का जीवाश्मीकरण होता है। इस प्रकार के जीवाश्म में दबे हुए पदार्थ का समय के साथ-साथ क्षय हो जाता है और उसके एक एक अणु की जगह खनिज घोलों का अणु ले लेता हैं।

सिलिका (silica), कैल्सियम कार्बोनेट, मैग्नीशियम कार्बोनेट, आयरन सल्फाइड का संसेचन (impregnation) ऊतकों के भीतर होता हैं। अधिकांश पादप पदार्थ का क्षय हो सकता है। परन्तु कम से कम कुछ वास्तविक कोशिका भित्तीय (cell wall) तत्व बचे रह जाते हैं। जीवाश्मीकरण के पश्चात् पूरी संरचना पत्थर जैसी हो जाती है (चित्र 16.4 A) तथा उसके बारीक सेक्शन (अनुभाग) काटे जा सकते हैं। ऊतक की संरचना के सेक्शन को सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखने पर जाना जा सकता है (चित्र 16.4 B)। प्राचीन पादपों की शारीरीय संरचनाएं इस प्रकार के अश्मीभूताश्म से खूबसूरती से प्राप्त की जा सकती हैं। काष्ठ के सिलिकाकृत तथा कैल्सीकृत टुकड़े आमतौर पर पाये जाते हैं।

ii) संचक (Cast) अथवा पर्पटाश्म (Incrustation)

इस प्रकार का जीवाश्मीकरण भी बहुत सामान्य है। पौधे का भाग बालू अथवा मिट्टी द्वारा आच्छादित हो जाता हैं। कुछ समय पश्चात् अन्दर के पादप पदार्थों का ह्रास हो जाता है। इससे एक गुहा बन जाती है

जिसे साँचा अर्थात् मोल्ड कहते हैं। यह गुहा, पुन: किसी शैल निर्मित करने वाले पदार्थ से भर जाती हैं जो समय अन्तराल के साथ पादप पदार्थ के बिल्कुल अनुरूप साँचे में ठोसीकृत हो जाता है, और उसकी सभी सतही संरचनाओं को दर्शाता है (चित्र 16.4 C)। संचक जीवाश्म में हकीकत में वास्तविक पौधे का कोई भी भाग नहीं होता है परन्तु वह बहुत ही उपयोगी होता है क्योंकि सांचा सही तौर पर पौधे के भाग की वास्तविक विशेषताओं को दर्शाता है।

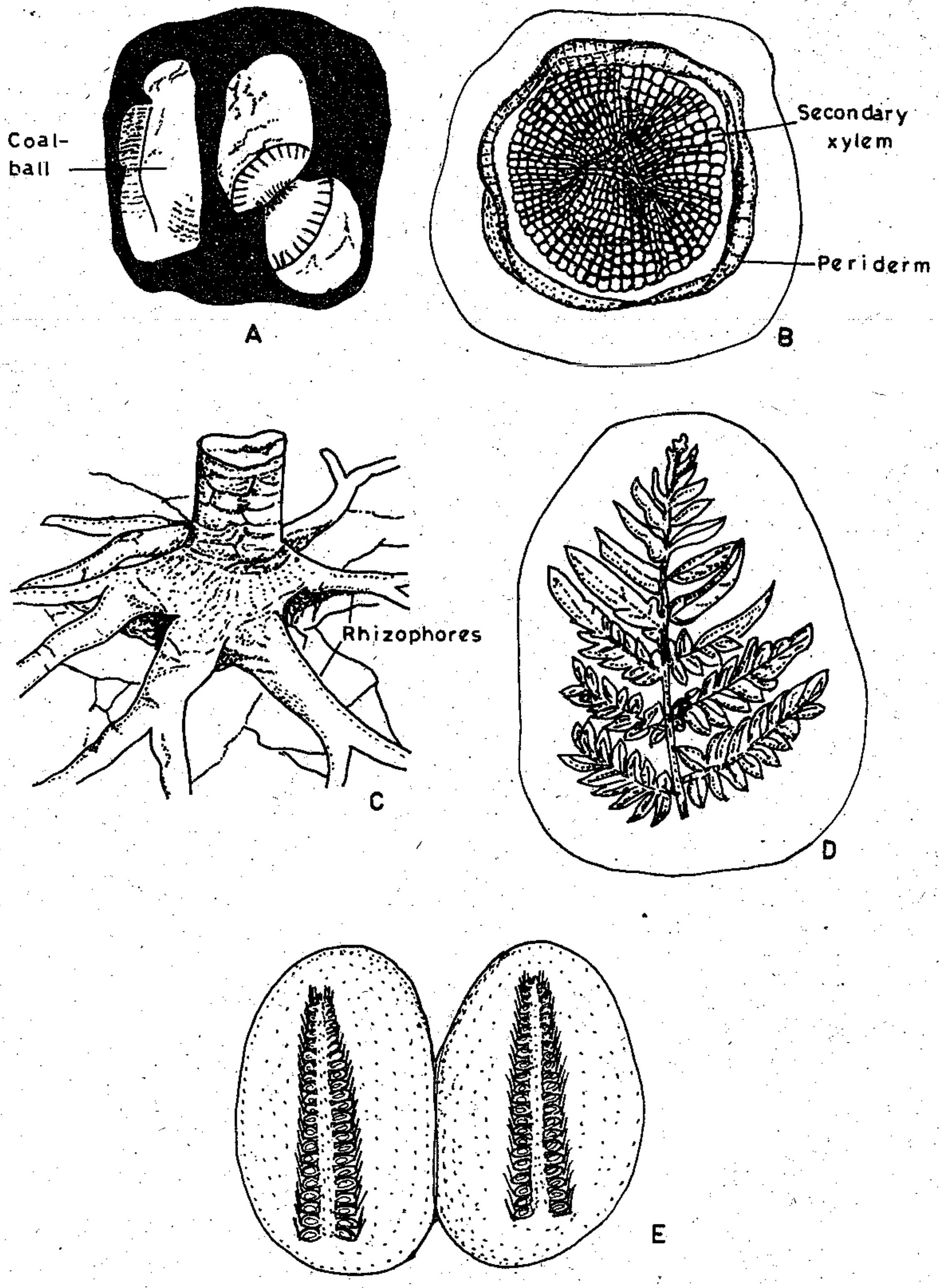

चित्र 16.4 : विभिन्न प्रकार के जीवाश्म : A) अश्मीभूत (petrified) तने को दर्शाता हुआ कोल बॉल (coal ball) का सेक्शन, B) अश्मीभूत *स्फीनोफिलम* (*Sphenophyllum*) के तने की अनुप्रस्थ काट को दर्शाता कोल बॉल का सेक्शन, C) *स्टिग्मेरिया (Stigmaria)* का संचक (cast) लेपीडोडेन्ड्रनसम (lepidodendroid) का ठूठ। D) *न्यूरोप्टेरिस (Neuropteris)* की पत्ती का मुद्राश्म (impression), E) एक खुली हुई मृदा ग्रंथिका (clay nodule) अपने अंदर लेपीडोस्ट्रोबस शंकु (Lepidostrobus cone) के संपीडाश्म (compression) को दिखाते हुए।

iii) मुद्राश्म (Impression)

ये जीवाश्म तब बनते हैं जब कोई पत्ता अथवा अन्य पादप भाग गिर जाता है तथा अर्धघन मिट्टी (semisolid clay) की सतर पर अपनी छाप छोड़ देता है। समय के अन्तराल में जब वह मिट्टी शैल में परिवर्तित हो जाती है तब यह छाप अर्थात् मुद्रा स्थाई बन जाती हैं। इस प्रकार की छाप अक्सर बहुत स्पष्ट रूप से बाह्य संरचनाओं के विस्तारों को दर्शाती हैं (चित्र 16.4 D)। अच्छे बने मुद्राश्मों में कुछ पादप संरचनाएं जैसे कि रंध्र स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं।

iv) संपीडाश्म (Compression)

संपीडाश्म में पादप भागों के कार्बनिक अवशेष वास्तविक रूप में जीवाश्म में बचे रहते हैं परन्तु वे बहुत ही संपीड़ित अवस्था में रहते हैं। जीवाश्मीकरण के दौरान ऊपर से अवसादों के बहुत अधिक दबाव के कारण पौधे के भाग सपाट हो जाते हैं। जीवाश्म में आम तौर पर एक कार्बनयुक्त फिल्म रह जाती हैं जो सतह की संरचनाओं को प्रदर्शित करती है। हालांकि, अच्छे संपीडाश्म में कुछ रसायनिक अभिक्रिया के द्वारा अंगों को फुलाना संभव होता है जिससे कि कुछ बारीकियों को देखा जा सके। एक अच्छे प्रकार का संपीडाश्म "क्ले नोड्यूल अर्थात् मृद् ग्रंथिका" है। इसमें पादप पदार्थ मिट्टी की बॉल (गेंद) के अन्दर बन्द होकर, संपीड़ित हो जाते है, तथा मिट्टी की वह बॉल पत्थर में बदल जाती है। इस नोड्यूल को खोलने पर कार्बनिक अवशेष बहुत अधिक अक्षत रूप में पाया जाता है, हालांकि उतना नहीं होता है जितना कि अश्मीभूत जीवाश्म में होता है, (चित्र 16.4 E)।

जीवाश्मों का नामकरण

अधिकाशंतः जीवाश्म पौधों के टुकड़ों के पाये जाते हैं। कभी-कभी ऐसे तने के जीवाश्म के मिलने में बहुत वर्ष लग जाते हैं जिसके लिये यह निश्चित रूप से कहा जा सके, कि यह विशेष प्रकार की पत्ती इसी तने विशेष की है। अतः ऐसे काल के दौरान जीवाश्म पादप के प्रत्येक टुकड़े को अलग वंशीय (generic) नाम से वर्णित किया जाता है तथा ऐसे वंशों (genera) को "अनंतिम वंश अर्थात् फार्म जेनेरा" (Form genera) कहा जाता है।

इस प्रकार के अनंतिम वंशों का नामकरण करने में हम लोग आमतौर पर ऐसा अनुलग्न (suffix) जोड़ देते हैं, जिससे यह पता चलता है कि वह पौधे के किस भाग से आया है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं:

पौधे का भाग		प्रयोग होने वाला अनुलग्न
अ) पत्ती	-	फिल्लम (phyllum)
ब) फर्न जैसा अथवा प्रपर्ण (frond)	-	टेरिस (pteris)
स) पेड़ का तना	-	डेन्ड्रॉन (dendron)
द) काष्ठीय भाग	-	ज़ाइलॉन (xylon)
त) बीज-जैसी संरचना	-	स्पर्मम (spermum) - कार्पोन (carpon)
	-	कार्पस (carpus) - स्टोमा (stoma)
थ) लघुबीजाणुधानी	-	थीका (theca)
ध) शंकु (cone)	-	स्ट्रोबिलस (strobilus) स्ट्रोबस (strobus)

यह पुरातनवस्पतिज्ञों (Palaeobotanists) का कार्य है कि वे ऐसे जीवाश्मों के टुकड़ों को यानि कि फार्म जेनेरा को एकत्रित करें, तथा उस पौधे के प्रकार, उसकी संरचना तथा जीवन के तरीके को पुनर्निर्मित करें जिससे वे जीवाश्म आए हैं। इस तरह से कुछ जीवाश्म पादपों को निर्मित करने में सफलता पाई जा चुकी है।

जीवाश्म की उम्र का पता भू-वैज्ञानिक समय मापक्रम से किया जाता है (चित्र 2.7, खंड I अ)।

बोध प्रश्न 16.2

अ) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) एक अच्छे प्रकार का संपीडाश्म .... है जिसमें कार्बनिक पदार्थ बहुत अधिक संपूर्ण रूप में पाए जाते हैं।

ii) मुद्राश्म में .... आकृतियाँ संपूर्ण रहती हैं।

iii) .... तब बनते हैं जब पादप पदार्थ का ह्रास हो जाता है तथा उनके स्थान पर शैल निर्मित करने वाले पदार्थ का निक्षेप हो जाता हैं।

iv) .... में ऊतकों के भीतर खनिजों का संसेचन हो जाता हैं।

ब) जीवाश्म पादप का उसके नामकरण में प्रयुक्त होने वाले अनुलग्न से मेल कीजिए।

पादप भाग		अनुलग्न
i) काष्ठीय भाग	–	टेरिस
ii) लघु बीजाणुधानी	–	कार्पोन
iii) शंकु	–	थीका
iv) फर्न - जैसा	–	स्ट्रोबिलस
v) बीज-जैसी संरचना	–	जाइलोन

16.5 आकारिकी तथा शारीर

जैसा कि आपने पहले शैवाल (algae), कवक (fungi) तथा ब्रायोफाइट्स की इकाइयों में पाया कि सभी प्रमुख पादप समूह, विभेदित किए जा सकने वाले लक्षणों के आधार पर अपेक्षाकृत छोटे समूहों में वर्गीकृत किये गये हैं। इकाई 1 तथा 2 (पृष्ठ 1 तथा 37) में आपने टेरिडोफाइट्स के वर्गीकरण के बारे में भी पढ़ा था जिसमें फर्न तथा उनके संबन्धी सम्मिलित हैं। आप विद्यमान (extant) तथा विलुप्त (extinct) टेरिडोफाइट्स की निम्नलिखित श्रेणियों (division) को दोहरा सकते हैं।

विलुप्त टेरिडोफाइट्स (सिर्फ जीवाश्म रिकार्ड से ही ज्ञात) :

राइनियोफाइटा (Rhyniophyta)
ज़ोस्टेरोफ़िलोफाइटा (Zosterophyllophyta)
ट्राईमेरोफाइटा (Trimerophyta)

जीवित टेरिडोफाइट्स

साइलोटोफाइटा (Psilotophyta)
लाइकोपोडियोफाइटा (Lycopodiophyta)
एक्वीसीटोफाइटा (Equisetophyta)
टेरोफाइटा (Pterophyta =, Polypodiophyta, Filicopsida)

आगे इस पाठ में हम इनमें से कुछ वर्गों (classes) के प्रतिनिधि प्रकारों के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे। जैसा कि आप जानते हैं कि विकास के दौरान उन्नत, जटिल प्रकारें, आदिम अपेक्षाकृत सरल प्रकारों से विकसित हुई हैं। अतः हम पहले सरल, प्राचीन, प्रकारों के बारे में तथा उसके बाद उन्नत, जटिल प्रकारों के बारे में पढ़ेगें।

इससे पहले कि आप इस भाग को पढ़ें हमारा सुझाव है कि आप नीचे दिए गए बॉक्स आइट्म-1 को पढ़ें। आपको निम्नलिखित प्रकार के रंभों के बारे में अवश्य समझ लेना चाहिए।

बॉक्स आइटम 1

रंभ (स्टील) शब्द का प्रयोग प्ररोह अथवा जड़ में जाइलम, फ्लोएम तथा अन्य संबद्ध संलग्न मृदूतक को लिए हुए संवहनी सिलिन्डर अर्थात् बेलन के लिए होता है। रंभ का संगठन पादपों के विभिन्न समूहों में भिन्न-भिन्न होता है। वनस्पतिज्ञ ठोसरंभ (protostele) को आदिम रंभ मानते हैं जिससे अन्य प्रकार के रंभों की उत्पत्ति हुई है। वास्तव में संवहनी पादपों का विकास क्रम उपस्थित रंभ के प्रकार के आधार पर माना जाता है। तने तथा जड़ की अनुप्रस्थ काट को देखकर रंभ के प्रकार को पहचाना जा सकता है। प्रमुख प्रकार के रंभ निम्नलिखित हैं।

ठोसरंभ : यह सबसे सरल प्रकार का रंभ है। यह जाइलम की केन्द्रीय ठोस क्रोड (core) का बना होता है जो फ्लोएम द्वारा चारों ओर से घिरी रहती हैं। इसमें मज्जा (pith) नहीं होती हैं। यह डिवोनी (devonian) संवहनी पादपों जैसे कि *राइनिया* में पाई जाती हैं। ठोसरंभ के विभिन्न प्रकार एकलरंभ (haplostele), अरीयरंभ (actinostele) तथा पट्टिलरंभ (plectostele) हैं।

एकलरंभ : जाइलम ठोस तथा केन्द्र में होता है तथा अनुप्रस्थ काट में गोलाकार दिखाई पड़ता है (चित्र 16.5 A)।

अरीयरंभ : केन्द्रीय जाइलम ऊतक अरीय कटकों (ridges) के रूप में मृदूतकीय ऊतक की मैट्रिक्स अर्थात् आधात्री में विस्तारित होता है (चित्र 16.5 B)।

पट्टिलरंभ : जाइलम बहुत सी पट्टियों जैसी इकाइयों में विच्छेदित रहता है (चित्र 16.5 C)। दूसरे प्रकार का रंभ नालरंभ (siphonostele) है, वह भी ठोसरंभ से ही व्युत्पन्न होता है।

नालरंभ : ठोसरंभ से भिन्न, इसमें ज़ाइलम की बजाय एक असंवहनी ऊतक जिसे मज्जा (pith) कहते हैं केन्द्र में रहता है ज़ाइलम के संदर्भ में फ्लोएम की स्थिति के आधार पर इसे निम्न प्रकार से श्रेणीबद्ध किया गया है :

बहि:फ्लोएमी नालरंभ (ectophloic siphonostele) **:** फ्लोएम सिर्फ ज़ाइलम की बाहरी सतह पर ही होता है (चित्र 16.5 D)।

उभयफ्लोएमी नालरंभ (amphiphloic siphonostele) **:** फ्लोएम ज़ाइलम की दोनों सतहों बाहरी तथा भीतरी पर उपस्थित रहता है (चित्र 16.5 E)। इस प्रकार के रंभ को नलीरंभ (solenostele) भी कहते हैं।

विच्छेदित नालरंभ अथवा जालरंभ (dissected siphonostele or dictyostele) : प्राथमिक ज़ाइलम एंव फ्लोएम अलग-अलग संवहनी बंडलों में व्यवस्थित रहते हैं (चित्र 16.5 F) । प्रत्येक संवहनी बंडल अलग-अलग या तो पूरी तरह से फ्लोएम से घिरा हो सकता है अथवा सिर्फ ज़ाइलम के बाहरी ओर फ्लोएम से घिरा रह सकता है।

अब हम सबसे प्राचीन वंशों से आरंभ करते हैं जिन्हें डिवीजन राइनियोफाइटा में सम्मिलित किया गया है। आप विस्तार में इस डिवीजन के निम्नलिखित दो सदस्यों के बारे में पढ़ेंगे: *राइनिया* तथा *कुकसोनियां*।

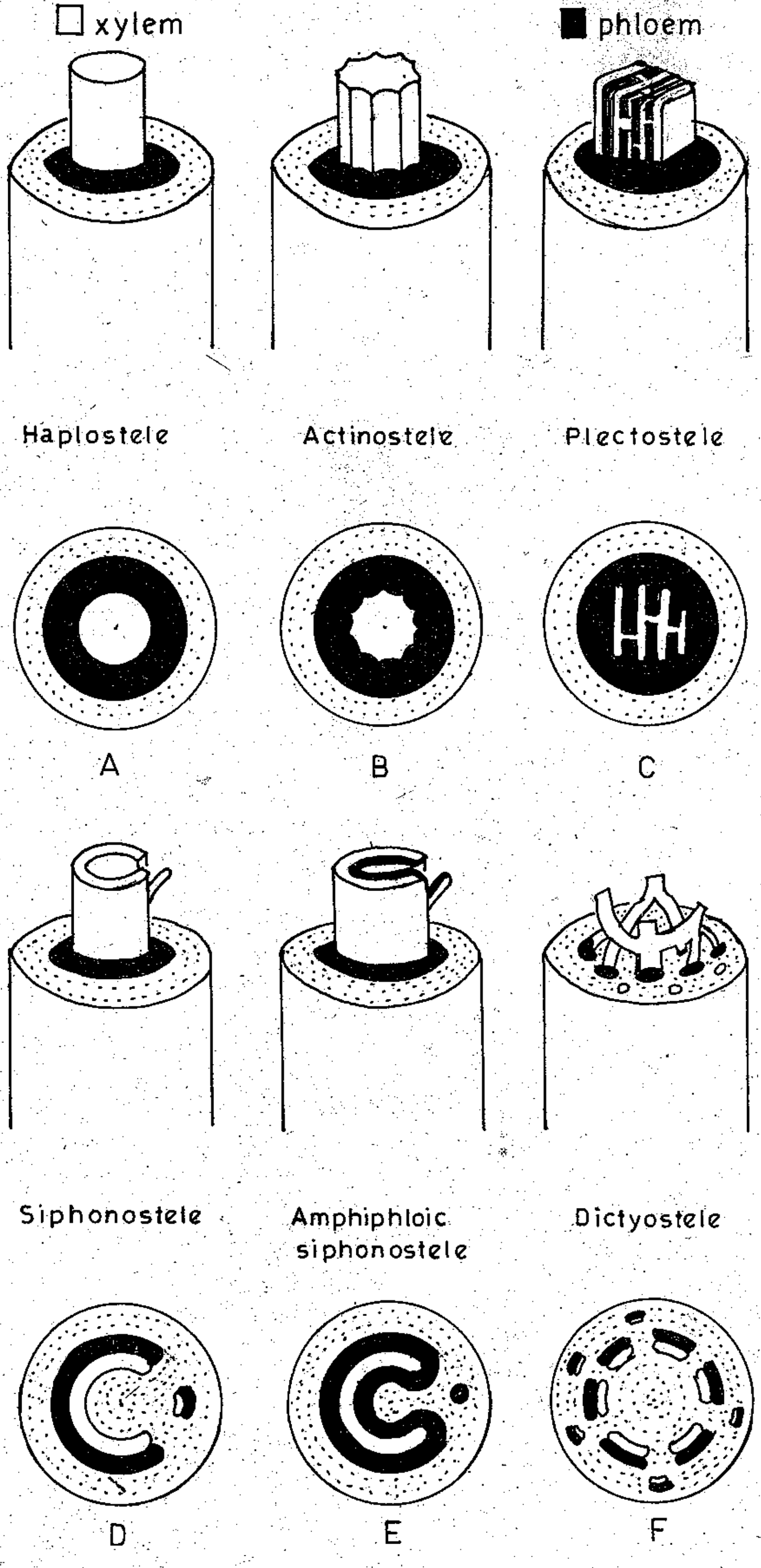

चित्र 16.5 : विभिन्न प्रकार के रंभ (stele)।

16.5.1 *राइनिया* (*Rhynia*)

राइनियोफाइट्स सबसे सरल विलुप्त संवहनी पादप थे। *राइनिया* की खोज स्कॉटलैण्ड में राइनी चर्ट संस्तर (Rhynie Chert Bed) से की गई थी। ये संस्तर जीवित ज्वालामुखी के साथ ही लगे हुए पीट दलदल (peat bog) का प्रतिनिधित्व करते हुए माने जाते हैं। ऐसा माना जाता है कि 38 करोड़ वर्ष पूर्व *राइनिया* तथा अन्य पौधे कच्छ परिवेश (marshy environment) में उगते थे। समय-समय पर ज्वालामुखी के फटते रहने से ये पौधे सिलिका से भरपूर गर्म जल से भर जाते थे जिससे वह तत्काल मर जाते थे तथा उसके बाद अंतःस्पंदित (infiltrate) हो जाते थे। इस प्रकार से ये पौधे संरक्षित हो गए, उनमें से कुछ तो बहुत ही अच्छी प्रकार से संरक्षित हैं। आगे आप सबसे सरल विलुप्त संवहनी पादप, *राइनिया* के बारे में विस्तार से पढ़ेंगें। इस वंश का नाम उस स्थान के नाम पर रखा गया जहां जीवाश्म मिले। इसकी दो जातियां मानी गई हैं। *राइनिया ग्वाइनी-वॉघनी* (*Rhynia gwynne- vaughani*) तथा *राइनिया मेजर* (*Rhynia major*) - *राइनिया मेजर* पहली जाति से बड़ी जाति है।

जीवाश्मों के अध्ययन से निम्नलिखित विशेषताओं का पता चला है।

राइनिया ग्वाइनी वॉघनी - यह लगभग 18 से. मी. लम्बाई का छोटा शाकीय पौधा था जिसके बेलनाकार वायवीय तनें तथा शाखाएं आधारीय प्रकंद (basal rhizome) जैसे भाग से निकलते थे। (चित्र 16.6 A, B)। आधारीय भाग पीट में दबा रहता था। प्रकंद तथा वायवीय तने की संरचना में बहुत अंतर नहीं दिखाई देता सिवाय इसके कि प्रकंद पर जगह-जगह भीतर की ओर मूलाभासों (rhizoids) के गुच्छे पाये गये। इनमें जड़े नहीं होती थी तथा मूलाभास दोहरे कार्य करते थे। अवचूषण (absorption) तथा स्थिरक (anchorage) यानि कि पौधे को स्थान पर स्थिर रखने का कार्य। वायवीय द्विभाजीय शाखित तना अपने शीर्ष की ओर क्रमशः शुंडाकार (tapered) होता था तथा वायवीय तनों के सिरे नुकीले होते थे अथवा उनपर अंडाकार बीजाणुधानियां लगी रहती थी। बीजाणुधानी की अनुदैर्ध्य काट में असंख्य बीजाणु देखे जा सकते हैं (चित्र 16.6 C)। वायवीय तनों की संपूर्ण सतह पर रंध्र उपस्थित रहते थे, जैसा कि तने की अनुप्रस्थ काट में देखा जा सकता है (चित्र 16.6 D)। अपस्थानिक शाखाएं भी वायवीय तनों से निकली रहती थी।

बॉक्स आइटम 2

वाहिकाएं तथा वाहिनिकाएं

पादपों में प्रमुख जल चालक तत्व वाहिकाएं तथा वाहिनिकाएं होती हैं। टेरिडोफाइट्स में अधिकांशतः वाहिनिकाएं होती हैं। वाहिनिका एक लंबी कोशिका होती है जिसकी मोटी द्वितीय भित्तियाँ तथा शुंडाकार सिरे होते हैं। जल गर्त (pit) के द्वारा जल एक वाहिनिका से दूसरी वाहिनिका में होकर जाता है। ये गर्त भित्तियों के पतले, सरंध्रयुक्त (porous) भाग हैं।

वाहिकीय तत्व दीर्घित होते हैं तथा इनमें मोटी द्वितीय भित्तियां होती हैं। गर्त के अतिरिक्त उनकी अंत्य भित्तियों (end walls) में बड़े-बड़े छिद्र होते हैं। वे अपने सिरों पर जुड़ कर मजबूत लम्बी नलिकाएं बनाते हैं जिन्हें वाहिकाएं कहते हैं।

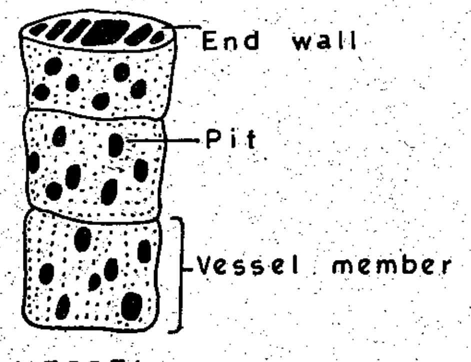

चित्र 16.6 D तथा 16.9 A में *राइनिया* के वायवीय तने की अनुप्रस्थ काट को देखिए, आपको निम्नलिखित क्षेत्र दिखाई देंगे।

i) बाह्यत्वचा (Epidermis) - यह सबसे बाहर की परत है तथा मोटी क्यूटिकल से ढकी है। बहुत सारे रंध्र भी उपस्थित हैं।

ii) वल्कुट (Cortex) - यह एकल स्तरीय बाह्य वल्कुट तथा बहुस्तरीय अंत: वल्कुट में विभेदित हैं। बाह्य वल्कुट की कोशिकाएं अंत: वल्कुट की कोशिकाओं की अपेक्षा बड़ी हैं। अंत: वल्कुट की कोशिकाओं के बीच में अंतराकोशिकीय अवकाश अर्थात् स्थान (intercellular spaces) हैं। देखिए कि अंतरा कोशिकीय अवकाश रंध्रों से जुड़े हैं। बहुत संभव है कि अंत: वल्कुट में प्रकाश संश्लेषण होता होगा।

iii) रंभ (Stele) - तने का मध्य भाग बहुत छोटे, सरल ठोसरंभ द्वारा घिरा है (बॉक्स आइटम 1 को देखिए) जिसमें पतला बेलनाकार जाइलम का स्तंभ अर्थात् कॉलम चारों ओर से फ्लोएम द्वारा घिरा हैं। जाइलम सिर्फ वाहिनिकाओं अर्थात् ट्रेकीड्स का बना पाया गया है। (बॉक्स आइटम 2 को देखिए) जिनमें वलयाकार (annular) व कभी-कभी थोड़ा बहुत सर्पिल (spiral) स्थूलन यानि मोटाइयाँ (thickenings) होती थीं। सदैव नहीं, परन्तु कभी-कभी जाइलम तंतु के केन्द्र में स्थित वाहितिकाएं बाह्य सतह की वाहिनिकाओं की अपेक्षा छोटी होती थी। फ्लोएम दीर्घित (elongated) पतली-भित्ती वाली कोशिकाओं का बना होता था जिसमें अंत्य भित्तियाँ (end walls) तिरछी होती थीं, परन्तु चालनी पट्टिकाएं (sieve plates) नहीं पाई गईं।

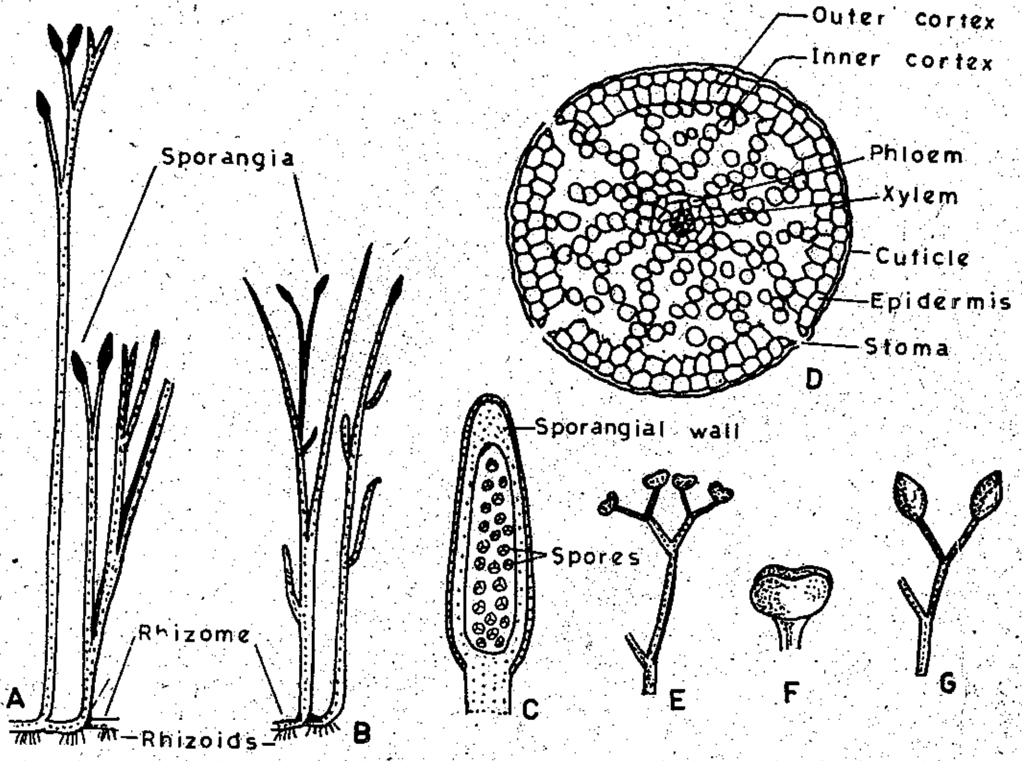

चित्र 16.6 : A) *राइनिया मेजर* (***Rhynia major***) तथा **B)** *राइनिया ग्वाइनी-वॉघनी* (***Rhynia gwynne-vaughani***) द्विभाजी शाखन तथा बीजाणुधानियों को देखिए, **C)** बीजाणुधानी की अनुदैर्घ्य काट,
D) *राइनिया* की वायवीय शाखा की अनुप्रस्थ काट का अंश आरेख,
E) *कुकसोनिया केलेडोनिका* (***Cooksonia caledonica***) के पादप का एक भाग,
F) *कुकसोनिया केलेडोनिका* की बीजाणुधानी की स्फुटन की रेखा को दिखाते हुए,
G) *कुकसोनिया पर्टोनी* (***C. pertoni***) के पादप का एक भाग।

16.5.2 कुकसोनिया (*Cooksonia*)

इस पादप का अनावृत सीधा तथा द्विभाजी शाखित तना रहा होगा (चित्र 16.5 E-G)। इसके निचले भाग अज्ञात हैं। अब तक पांच जातियां वर्णित की जा चुकी हैं। प्राप्त किए गए सबसे बड़े नमूने की लम्बाई लगभग 7 से. मी. तथा चौड़ाई 1.5 मि.मी. है। इसमें बीजाणुधानियां अंतस्थ (terminal), छोटी तथा चौड़ी होती थीं। वे आकार में वृक्काकार से लेकर गोलाकार व अंडाकार तक विविध होती थी। तने के शारीर अथवा बीजाणुधानी की आंतरिक संरचना के बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं है। वेल्स (Wales) के ऊपरी सिल्यूरियन (Upper Silurian) से प्राप्त *कुकसोनिया पर्टोनी* के कुछ नमूनों में वाहिनिकाओं के पतले संवहनी तंतु, अक्ष में दिखाई पड़ते हैं। बीजाणुधानी से निकाले गए बीजाणुओं में त्रि-अरीय (tri-radiate) चिन्ह पाए जाते हैं। ये लक्षण सुझाते हैं कि वे थल पादप थे। *कुकसोनिया* को अब तक खोजे गए संवहनी पादपों में सबसे पुराना माना जा सकता है।

अभी तक हमने आदिम विलुप्त थलीय पादपों *राइनिया* तथा *कुकसोनिया* के विषय में चर्चा की है। अब हम दूसरे आदिम परन्तु जीवित थल पादप के विषय में बताएंगे। यह क्लॉस साइलोटोप्सिडा का पादप *साईलोटम* है इसे पढ़ने से पहले आप बोध प्रश्न 16.3 करें।

बोध प्रश्न 16.3

अ) निम्नलिखित वाक्यों में कोष्ठक में दिए गए शब्दों में से सही शब्द चुनिए।

i) *राइनिया* की खोज राइनी चर्ट संस्तर से (स्काटलैण्ड/आयरलैण्ड) में की गई थी।

ii) राइनी चर्ट निक्षेप (निम्न डिबोनी/उच्च सिल्यूरियन) के समझे जाते हैं।

iii) *राइनिया* में वायवीय तना (द्विभाजी शाखित/अशाखित) होता है।

iv) *राइनिया* तने में (ठोसरंभ/नालरंभ) होता है।

v) *राइनिया* में जड़ें (उपस्थित/अनुपस्थित) होती हैं, जबकि मूलाभास (उपस्थित/अनुपस्थित) होते हैं।

ब) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) *राइनिया* में अंडाकार बीजाणुधानियाँ शाखाओं के .... पर होती थीं।

ii) *कुकसोनिया* के बीजाणु .... के चिन्ह दर्शाते हैं।

iii) *कुकसोनिया* में पौधों के निचले भाग .... हैं।

iv) *कुकसोनिया* में बीजाणुधानियां .... स्थिति में होती थीं।

स) *कुकसोनिया* के ऐसे दो लक्षण बताइये जिनसे यह पता चलता हो कि वह थल पादप है।

....

....

16.5.3 *साईलोटम* (*Psilotum*)

यह पौधा आकारिकी विज्ञानियों के लिए बहुत अधिक महत्व का है क्योंकि यह संगठन की ऐसी अवस्था को दर्शाता है जो मुश्किल से ही प्राचीनतम, विलुप्त थल पादपों से कुछ अधिक विकसित है, और यह आज भी जीवित पाया जाता है। यह पौधा लंबा, हरा, घने रूप से गुच्छित, लगभग 15-100 से.मी. लंबाई वाला झाड़ (shrub) है (चित्र 16.1 A)। यह उष्ण तथा उपोष्ण (subtropics) स्थानों में पेड़ों के तनों पर अथवा पत्थरों के ढलानों पर अधिपादप (epiphyte) के तौर पर उगता है, व इसके प्ररोह नीचे की ओर लटके रहते हैं। जब यह जमीन पर अथवा पेड़ों के तलों (bases) पर उगता है, तब यह सीधा खड़ा रहता है।

यह पौधा अंत:भूमिक (जमीन की सतह के अंदर स्थित) रंगहीन प्रकंद (rhizome), तथा द्विभाजी शाखित, हरे वायवीय अक्ष (aerial axes) का बना होता है। वास्तविक जड़ें अनुपस्थित होती हैं। अवचूषण का कार्य असंख्य, 1-3 कोशिकीय लंबे मूलाभासों (rhizoids) द्वारा संपन्न होता है। जो प्रकंद पर उपस्थित रहते हैं (चित्र 16.7 A)। प्रकंद के साथ सहवास में कवकमूली कवत तंतु (mycorrhizal fungal hyphae) रहते हैं जो वल्कुट तक पहुँच जाते हैं।

साईलोटम (Psilotum)
प्रभाग-साइलोफाइटा (Psilophyta)
वर्ग-साइलोटोप्सिडा (Psilotopsida)
गण - साइलोटेलीज (Psilotales)
कुल - साइलोटेसी (Psilotaceae)

वायवीय अक्ष बारीक शल्क जैसे (scale-like) उपांगों (appendages) को सर्पिल रूप में लिए रहती है तथा दूरस्थ शाखाएं रूपरेखा में त्रिकोणीय होती हैं। शल्क बिना किसी संवहनी ऊतक अथवा रंध्र के होते हैं। अधिक तेजी से उगने वाले प्ररोह में ऊपर के भाग में शल्कीय पत्तियाँ जननक्षम (fertile) उपांगों से प्रतिस्थापित हो जाती हैं, (चित्र 16.7 B)। इन जननक्षम उपांगों की आकारिकी बहुत अधिक विवाद का विषय रहा है। कुछ ने इन्हें द्विशाखित बीजाणुपर्ण माना है, जिसमें से प्रत्येक में एक त्रिकोष्ठीय (trilocular) बीजाणुधानी होती है, परन्तु अन्य इन्हें बहुत ही छोटी पार्श्व शाखाएं मानते हैं, जिनमें से प्रत्येक में दो पत्तियां रहती हैं तथा सिरे पर तीन संयोजित (three fused) बीजाणुधानियां रहती हैं। शीर्ष वृद्धि (apical growth) एक चतुष्फलकीय (tetrahedral) शीर्ष कोशिका की क्रिया के द्वारा होती है।

द्विशाखी बीजाणुपर्ण (Bifid Sporophyll)
एक शाखित पर्ण जो बीजाणुधानियां धारण किए रहती है।

बॉक्स आइटम 3

> *साईलोटम* की दो जातियां हैं : *साईलोटम न्यूडम* (*Psilotum nudum*) तथा *साईलोटम फ्लैसीडम* (*P. flaccidum*)।
>
> *साईलोटम न्यूडम* उष्ण तथा उपोष्ण स्थानों पर सभी जगह पाया जाता है। यह सुदूर उत्तर में फ्लोरिडा (अमरीका) तथा हवाई (अमरीका) तक फैला हुआ तथा दक्षिण में न्यूजीलैण्ड तक विस्तरित है। आमतौर पर यह भूमि पर अथवा पत्थरों की विदरिकाओं (crevices) में उगता है, परन्तु यह अन्य पादपों पर अधिपादप के रूप में भी उग सकता है। यह पौधा हरित गृहों (green houses) में भी उगाया जाने लगा है तथा आमतौर पर "व्हिस्क फर्न" (whisk fern) के नाम से जाना जाता है।
>
> *साईलोटम फ्लैसीडम* बहुत दुर्लभ पौधा है तथा जमैका, मैक्सिको में झूलती हुई शाखाओं वाले अधिपादप के रूप में पाया जाता है।

आंतरिक संरचना

प्रकंद

प्रकंद की आंतरिक संरचना उसके व्यास के अनुसार बदलती रहती है। 1 मि.मी. से कम व्यास वाला प्रकंद मुख्यत: मृदूतक का बना होता है, जबकि बड़े व्यास वाले प्रकंदों में सुविकसित रंभ पाया जाता है। बड़े व्यास वाले प्रकंद की अनुप्रस्थ काट को चित्र 16.7 C में देखिए तथा उन विभिन्न क्षेत्रों (zones) का वर्णन करने की कोशिश कीजिए जिन्हें अलग-अलग पहचाना जा सकता है।

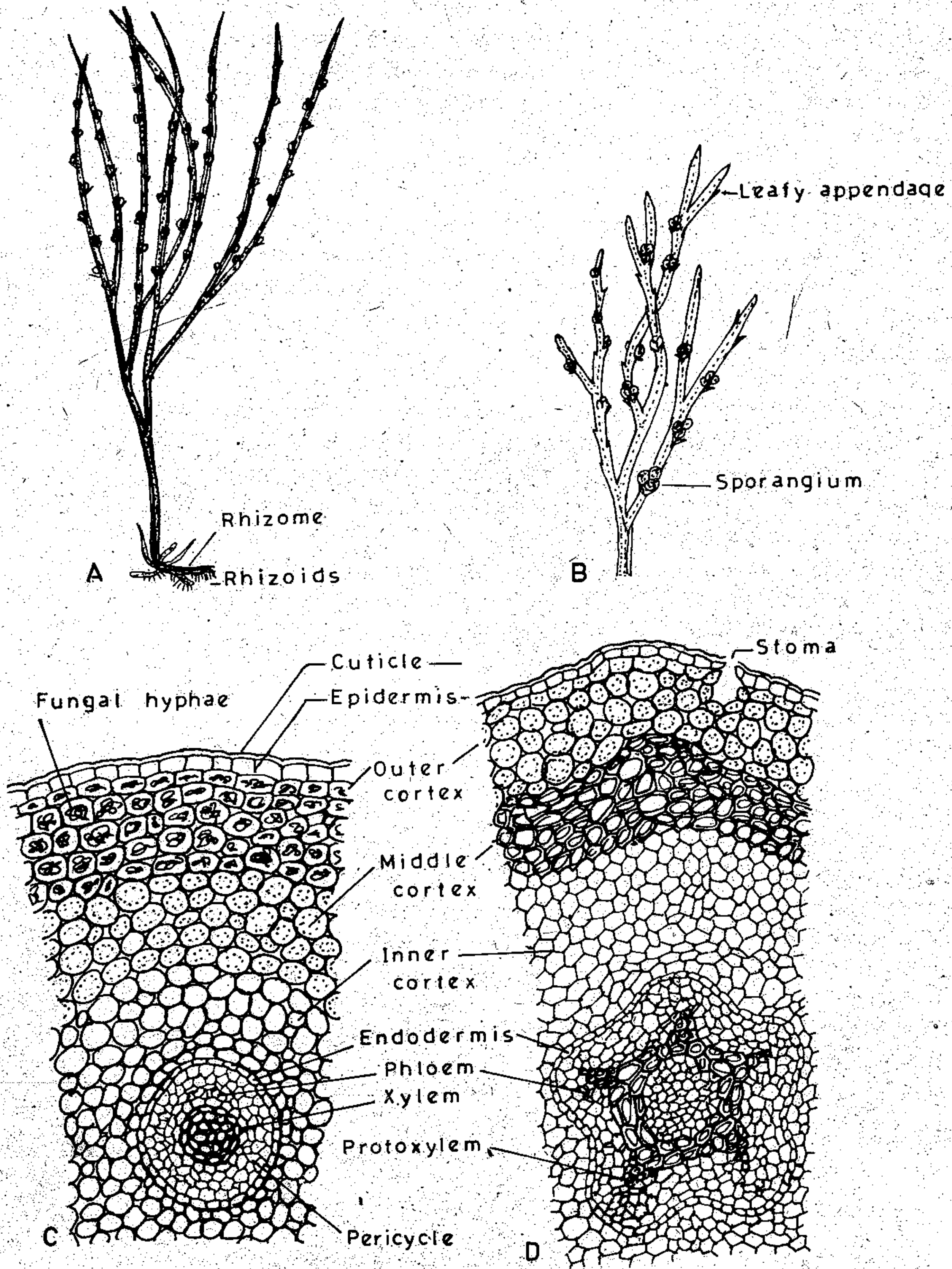

चित्र 16.7 : *साईलोटम* : A) *साईलोटम* का एक पादप, B) पादप का एक दीर्घीकृत भाग पर्णिल उपांगों (leafy appendages) तथा बीजाणुधानियों को दिखाते हुए, C) प्रकंद के एक भाग की अनुप्रस्थ काट, D) ऊपरी भाग के समीप से वायवीय तने की अनुप्रस्थ काट अरीयरंभ (actinostele) को दिखाते हुए।

आप निम्नलिखित बातें नोट करेंगे :

i) केन्द्र में जाइलम की ठोस छड़ है (यह वाहिनिकाओं की बनी होती है)।

ii) जाइलम के चारों ओर फ्लोएम हैं।

iii) फ्लोएम को घेरे हुए परिरंभ (pericycle) का क्षेत्र है जो कि मृदूतकीय कोशिकाओं का बना है।

iv) परिरंभ के ठीक बाद में अंतस्त्वचा (endodermis) है। इसकी अरीय भित्तियों में कैस्पेरी पट्टियां (casparian strips) होती हैं।

v) बाह्यत्वचा वल्कुट को घेरे हुए हैं जिसमें तीन भिन्न-भिन्न क्षेत्र यानि मंडल हैं :

क) सबसे भीतरी वल्कुट (यह फ्लोबेफीन (phlobaphene) की उपस्थिति के कारण गहरे भूरे रंग का होता है। फ्लोबेफीन एक ऐसा पदार्थ है जो टैनिनों के आक्सीकरण तथा संघनन (condensation) द्वारा बनता है)।

ख) मध्य वल्कुट मृदूतकीय कोशिकाओं का बना होता है जिसमें बहुतायत मंडकण (starch grains) होते है, तथा

ग) बाह्य वल्कुट और साथ में कवकमूलीय कवक के तंतु।

वायवीय अक्ष

पहले आप *साईलोटम* के वायवीय अक्ष की अनुप्रस्थ काट का अध्ययन करें (चित्र 16.7 D) तथा इसकी तुलना *राइनिया* के वायवीय अक्ष के साथ करें (चित्र 16.6 D) । अब बताइये कि नीचे दी गई तालिका में दोनों वंशों की सूचीबद्ध की गई विशेषताओं में से कौन सी उपस्थित (+ चिन्ह) तथा कौन सी अनुपस्थित (– चिन्ह) हैं।

	राइनिया	*साईलोटम*
क्यूटिकल		
बाह्यत्वचा		
वल्कुट		
बाह्य वल्कुट		
मध्य वल्कुट		
अंतःवल्कुट		
परिरंभ		
अंतस्त्वचा		
फ्लोएम		
आदिदारु (protoxylem)		
अनुदारु (metaxylem)		
मज्जा		

वायवीय अक्ष में संवहनी सिलिन्डर की आंतरिक संरचना लम्बाई के साथ-साथ बदलती जाती है। आधारीय भाग में ठोसरंभ दिखाई पड़ता है। ऊपरी भाग में दृढ़ोतकी मज्जा की उपस्थिति के कारण रंभ का संगठन नालरंभी हो जाता है। जाइलम बाह्यआदिदारुक (exarch) तथा ताराकार (stellate) होता है (चित्र 16.7 D)। यह मुख्य अक्ष में पंच आदिदारुक (pentarch) से अष्ट आदिदारुक (octarch) तक तथा दूरस्थ क्षेत्र में त्रि-आदिदारुक (triarch) से द्वि-आदिदारुक (diarch) तक हो सकता है (आप आगे पढ़ने से पहले बॉक्स आइटम 4 को देख सकते हैं)।

अनुदारु अर्थात् मेटाज़ाइलम के सापेक्षय आदिदारु अर्थात् प्रोटोज़ाइलम की स्थिति के अनुसार रंभ में विभिन्न संगठन दिखाई पड़ते हैं। ज़ाइलम अल्प रूप से विकसित फ्लोएम से घिरा हुआ है जो सब तरफ से परिरंभ से घिरा हुआ है। हमेशा की तरह परिरंभ के बाहर की ओर अंतस्त्वचा उपस्थित है तथा अंतस्त्वचा की कोशिकाओं की अरीय भित्तियों में कैस्पेरी पट्टियां हैं।

वल्कुट- बाह्य, मध्य तथा अंत: वल्कुट में विभेदित हो सकता है (चित्र 16.7 D)। सबसे भीतरी वल्कुट की कोशिकाओं में फ्लोबेफीन पाया जाता है। यह मृदूतकीय क्षेत्र द्वारा घिरा रहता है जो अंतराकोशिकीय स्थानों रहित होता है। इस क्षेत्र के बाद वाला क्षेत्र दृढ़ोतकीय कोशिकाओं का बना होता है। सबसे बाहरी वल्कुट ऊर्ध्वाधर रूप में लम्बी पर्णहरित धारी (chlorophyllous) कोशिकाओं का बना होता है। इस क्षेत्र में छोटे- छोटे अंतराकोशिकीय स्थान होते हैं जो कि क्यूटिन युक्त बाह्यत्वचा में उपस्थित रंध्रों के द्वारा वातावरण से जुड़े रहते हैं। रंध्र थोड़े से धंसे हुए होते हैं और सिर्फ खाँचों तक ही सीमित रहते हैं। इन रंध्रों में छोटे-छोटे उपरंध्री कोष्ठ होते हैं क्योंकि इन पादपों में सामान्य पत्तियां नहीं पाई जाती है, वल्कुट का यह क्षेत्र प्रकाश संश्लेषण का कार्य करता है।

बोध प्रश्न 16.4

अ) *साईलोटम* के आदिम लक्षणों को सूचीबद्ध कीजिए जो *राइनिया* तथा *कुकसोनिया* से उसकी निकट बंधुता को दर्शाते हैं।

....

....

....

....

ब) निम्नलिखित में से कौन सी विशेषताएं *साईलोटम* के लिए सत्य हैं ?

i) यह एक जीवाश्म पादप है। ☐

ii) यह घने रूप से गुच्छित झाड़ी है। ☐

iii) पत्तियाँ प्रकाश संश्लेषण करती है। ☐

iv) इसमें वास्तविक जड़ें होती हैं। ☐

v) प्रकंद से जुड़े हुए कवकमूली तंतु जल तथा पोषक तत्वों के अवचूषण में सहायता करते हैं। ☐

vi) वायवीय अक्ष के ऊपरी भाग के रंभ में मज्जा होती है। ☐

vii) यह सबसे पुराना थल पादप है। ☐

अब आप टेरिडोफाइट्स के दूसरे समूह के बारे में पढ़ेगें जिन्हें सामान्य तौर पर "क्लब मॉसेस" (club mosses) कहते हैं। वनस्पतिक रूप से, वे वंश *लाइकोपोडियम* के सदस्य हैं जो डिवीजन लाइकोपोडियोफाइटा में है।

एकआदिदारुक (Monarch) : वह रंभ जिसमें सिर्फ एक दारु यानि जाइलम समूह होता है तथा आदिदारु (प्राथमिक दारु का सबसे पहले बनने वाला तत्व) यानि प्रोटोजाइलम परिधि की ओर स्थित होता है।

द्विआदिदारुक (Diarch) : जिसमें दो आदिदारु के समूह होते हैं।

चतुरादिदारुक (Tetrarch) : इस अवस्था में बड़ा अक्षीय अनुदारु यानि मेटाजाइलम (बाद में बना हुआ दारु) होता है जिसमें चार आदिदारु समान दूरी पर इसके चारों ओर व्यवस्थित रहते हैं।

अंतःआदिदारुक (Endarch) : इस अवस्था में आदिदारु अक्ष के केन्द्र की ओर होता है, अतः अनुदारु केन्द्र से दूर विकसित होता है (अपकेन्द्री दारु)।

मध्यादिदारुक (Mesarch) : इस अवस्था में अभिकेन्द्री तथा अपकेन्द्री दोनों प्रकार के दारु बनते हैं तथा प्रोटोजाइलम केन्द्र में स्थित रहता है।

बाह्यआदिदारुक (Exarch) : इस प्रकार के दारू में आदिदारु केन्द्र के अक्ष से दूर स्थित होता है। अतः बाद में बना हुआ दारु केन्द्र की ओर विकसित होता है यानि कि अभिकेन्द्री दारु निर्मित हो जाता है।

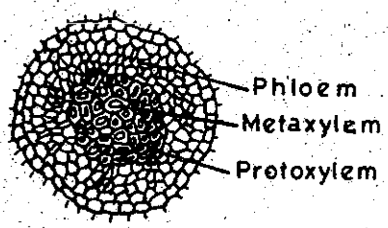

Monarch

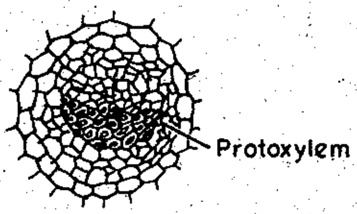

Diarch

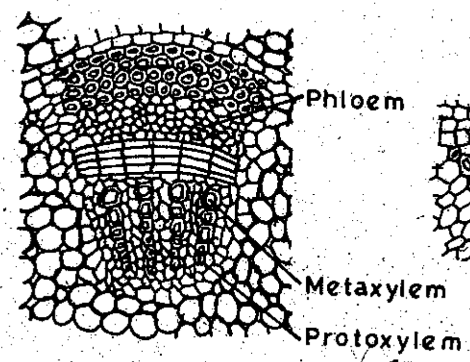

Endarch

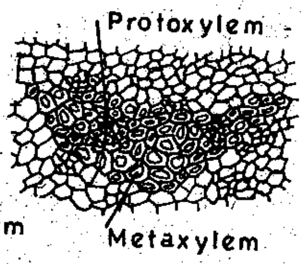

Mesarch

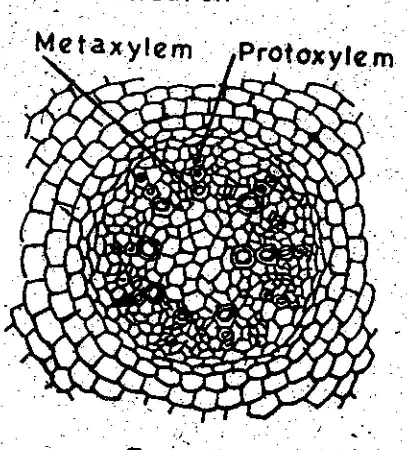

Exarch

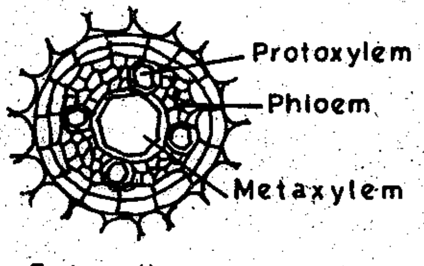

Tetrarch

16.5.4 *लाइकोपोडियम* (*Lycopodium*)

लाइकोपोडियम (Lycopodium)

प्रभाग - लाइकोपोडियोफाइटा (Lycopodiophyta)
वर्ग - लाइकोप्सिडा (Lycopsida)
गण - लाइकोपोडिएलीज (Lycopodiales)

क्रासित (decussate) - x (क्रॉस) के आकार का जिसमें सम्मुख (opposite) पत्तियों का जोड़ा नीचे स्थित जोड़े के समकोण पर होता है।

लाइकोपोडियम जो प्रचलित तौर पर **क्लब मॉस** के नाम से जाना जाता है, एक विशाल वंश है जिसमें लगभग 180 जातियां है और इनमें से लगभग 33 भारत में पाई जाती हैं। ये विश्व भर में उष्ण, उपोष्ण, वनों तथा शीतोष्ण भागों में वितरित हैं। कुछ जातियां पहाड़ियों पर अपेक्षाकृत काफी ऊँचाई पर बहुतायत में पाई जाती हैं। ये ठंडी जलवायु और नम तथा ह्यूमस से समृद्ध (humus-rich) मिट्टी में उगते हैं।

वयस्क बीजाणु-उद्भिद् शाकीय होता है तथा बहुत भिन्न प्रकृतियों में भी पाया जा सकता है। आमतौर पर उष्ण क्षेत्रों में ये लटकने वाले अधिपादप होते हैं, जबकि शीतोष्ण क्षेत्रों में वे भूशायी अर्थात् जमीन पर पड़े हुए (prostrate) अथवा सतर अर्थात् सीधे खड़े हुए होते हैं (चित्र 16.8 A, B तथा C) । ये आमतौर पर 30 से 60 से.मी. तक की लम्बाई के होते हैं। तना अशाखित अथवा द्विभाजी शाखित होता है जो बाद में एकलाक्षी (monopodial) बन जाता है। यह लघुपर्णों से आच्छादित यानि ढका रहता है। जोकि अधिकांश जातियों में सर्पिलाकार रूप में व्यवस्थित रहते हैं। हालांकि कुछ जातियों में पत्तियाँ गोलाकार अथवा क्रासित यानि चतुष्क (decussate) तरीके से व्यवस्थित रहती हैं (चित्र 16.8 D-G)।

शीर्ष वृद्धि, शीर्ष विभज्योतक अर्थात् मेरिस्टेम के द्वारा होती है यानि कि, कोशिकाओं के एक समूह में परिनतिक (periclinal) तथा अपनतिक (anticlinal) विभाजन होते रहते हैं।

आंतरिक संरचना

वायव अक्ष

आप *लाइकोपोडियम* के रंभ की अनुप्रस्थ काट को दिखाने वाले चित्रों 16.8 I से K का अध्ययन करने की कोशिश कीजिए। क्या आप रंभ के प्रकारों को पहचानने में समर्थ हैं ?

I. ....

J. ....

K. ....

लाइकोपोडियम की स्थलीय जातियां
लाइकोपोडियम सर्नुअम (*L. cernuum*)
लाइकोपोडियम क्लेवेटम (*L. clavatum*)

झूलती हुई शाखाओं वाले अधिपादप
लाइकोपोडियम स्क्वारोसम (*L. squarrosum*)
लाइकोपोडियम फ्लेग्मेरिया (*L. phlegmaria*)
ये सभी जातियां उत्तर-पूर्वी भारत में सामान्य रूप से पाई जाती हैं।

सभी जातियों में बीजाणु अंकुरण अवस्था (sporeling) के दौरान रंभ, जाइलम की एक छड़ का बना होता है। इस ज़ाइलम की भुजाएं अरीय होती हैं तथा भुजाओं की संख्या सामान्यतः चार होती है। हालांकि, वयस्क होने पर रंभीय संगठन भिन्न-भिन्न जातियों में बदल जाता है क्योंकि ज़ाइलम अलग-अलग पट्टिकाओं में अथवा अनियमित तंतुओं में विभक्त हो जाता है। जबकि, कुछ जातियों जैसे कि *लाइकोपोडियम सिरेटम* (*Lycopodium serratum*) में ज़ाइलम सरल ताराकार तथा चार से छह अरीय भुजाओं वाला ही रहता है (चित्र 16.8 I)। ज़ाइलम की भुजाओं के साथ एकांतरण में फ्लोएम के क्षेत्र होते हैं मृदूतक ज़ाइलम को फ्लोएम से अलग रखते हैं। यह संपूर्ण संरचना मृदूतकीय परिरंभ से घिरी रहती है, जिसके बाद अंतस्त्वचा होती है। *लाइकोपोडियम क्लेवेटम* में बहुत सारी क्षैतिज (horizontal) ज़ाइलम की पट्टियाँ होती हैं, जो फ्लोएम की पट्टिकाओं के साथ एकांतरण में होती हैं (चित्र 16.8 J तथा 16.9 B, C)। विस्तारण की यह प्रक्रिया *लाइकोपोडियम सर्नुअम* में और भी जटिल है, यहाँ ज़ाइलम स्पंजी हो गया है तथा रिक्त स्थान फ्लोएम और मृदूतक से भरे हुए हैं (चित्र 16.8 K)। पूरी जाति में, रंभ बाह्य-आदिदारुक हैं। अंतस्त्वचा स्पष्ट रूप से सिर्फ तरुण तने से पहचानी जा सकती है।

पत्तियाँ

चित्र 16.8 H को देखिए। प्रत्येक पत्ती में एक ही पर्ण (leaf) अनुपथ (trace) होता है, जो पत्ती में एक एकल अशाखित शिरा के रूप में जाता है और वह पूरी तरह से सर्पिलाकार रूप में मोटी वाहिनिकाओं का बना होता है। बाह्यत्वचा क्यूटिकल की परत से ढकी रहती है। पत्ती का अधिकांश

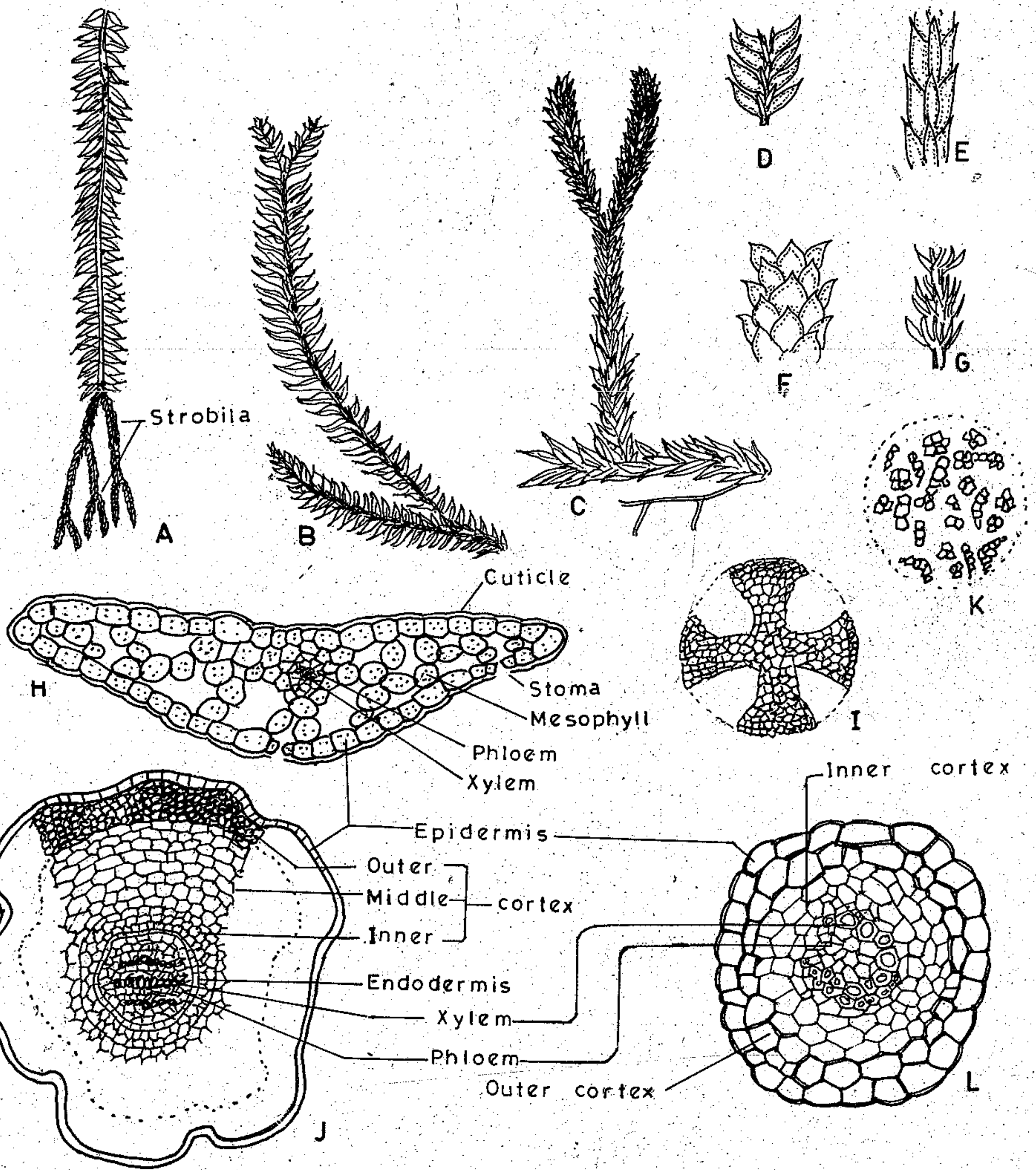

चित्र 16.8 : लाइकोपोडियम : A-C क्रमश: लाइकोपोडियम फलेग्मेरिया, लाइकोपोडियम वोल्यूबाइल (*L. volubile*) तथा लाइकोपोडियम क्लेवेटम (*L. clavatum*) के पादपों के भाग, D-G) विभिन्न जातियों में पत्तियों के प्रकार तथा उनकी व्यवस्था, H) पत्ती की अनुप्रस्थ काट, (I-K) तीन जातियों के तने की अनुप्रस्थ काट, I) लाइकोपोडियम सिरेटम (*L. serratum*), J) लाइकोपोडियम क्लेवेटम, K) लाइकोपोडियम सर्नुअम, L) जड़ों की अनुप्रस्थ काट।

हिस्सा पर्णमध्योतक (mesophyll) कोशिकाओं द्वारा घिरा रहता है। तने तथा पत्तियों की बाह्यत्वचा में रंध्र उपस्थित रहते हैं, जबकि कुछ जातियों में वे दोनों सतहों पर होते हैं (उभयरंध्री) तथा अन्य में सिर्फ निचली सतह पर होते हैं (अधोरंध्री)।

जड़

जड़े अपस्थानिक होती हैं तथा तने से अलग-अलग श्रेणी तक की समानता दिखलाती हैं। वे परिरंभ से निकलती हैं तथा द्विभाजी शाखित होती हैं। उनमें मूल गोप (root cap) होता है तथा युग्मित रोम (एक बहुत ही विशिष्ट व्यवस्था) होते हैं। चित्र 16.8 L में ज़ाइलम को देखिए। अधिकांश पौधों में ज़ाइलम अर्धचंद्राकार व द्विआदिदारुक होता है परन्तु कुछ जातियों में जैसे कि *लाइकोपोडियम क्लेवेटम* की जड़ों का रंभ तने के रंभ से बहुत कुछ मिलता-जुलता हुआ होता है।

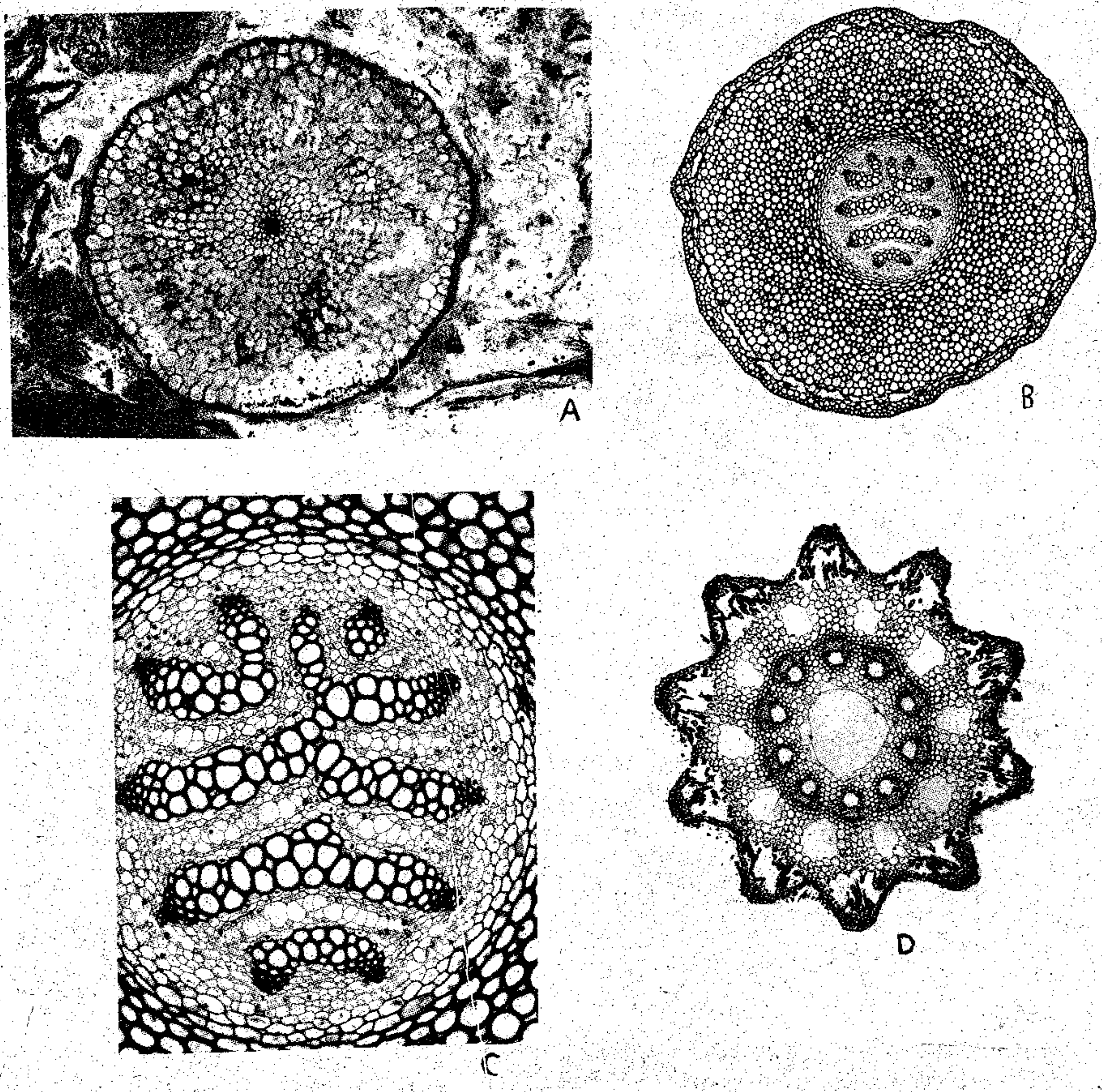

चित्र 16.9: तनों की अनुप्रस्थ काट: A) *राइनिया*, B) *लाइकोपोडियम*, C) B दीर्घीकृत, D) *इक्वीसीटम*, (पी.दयानंदन के सौजन्य से)।

बोध प्रश्न 16.5

अ) *लाइकोपोडियम* के बारे में निम्नलिखित में से कौन सी विशेषताएं सत्य हैं व कौन सी असत्य हैं?

i) पादप सतर अर्थात् सीधा खड़ा, आधा झुका हुआ अथवा अधिपादप हो सकता है। ☐

ii) इसमें शल्क होते हैं, वास्तविक पत्तियाँ अनुपस्थित होती हैं। ☐

iii) जड़ों में ज़ाइलम चतुरादिदारुक होता है। ☐

iv) इसमें लघुपर्ण होते हैं। ☐

v) जड़ों में रोम-युग्मित होते हैं। ☐

vi) वयस्क तने में ज़ाइलम पट्टिकाओं जैसी संरचनाओं में विभक्त हो सकता है। ☐

16.5.5 *सैलाजिनेला* (*Selaginella*)

सैलाजिनेला
प्रभाग - लाइकोपोडियोफाइटा
वर्ग - आइसोइटेटी (Isoetatae)
गण - सिलेजिनेललीज (Selaginellales)

सैलाजिनेला की अधिकांश जातियां विश्व के उष्ण तथा उपोष्ण स्थानों के आर्द्र क्षेत्रों में सीमित हैं। कुछ जातियां खासतौर पर मरूद्भिदी हैं तथा रेगिस्तानों में पाई जाती हैं। बहुत अधिक समय तक सूखा पड़ने के बावजूद पुन: उग आने की अपनी अद्भुत क्षमता के कारण इन्हें "पुन: प्रकटित (resurrection) पादप" भी कहा जाता है। पादप शयान अर्थात् भूमिशायी, सीधे अथवा आधे गिरे हुए होते हैं। सिर्फ थोड़े से ही अधिपादपी होते हैं। कुछ नर्म, हरे मॉस जैसा कुशन बनाते हैं, अन्य द्राक्ष लता (अंगूर लता) जैसे (vine-like) होते हैं जिसमें तना कुछ मीटर की ऊँचाई तक का होता है, जबकि बहुतों में विसर्पी अक्ष होता है, जिनसे पर्णी शाख तंत्र निकलता है जो सतही तौर पर बहुत अधिक फर्न के प्रपर्ण (frond) से मिलता जुलता हुआ होता है।

सैलाजिनेला में शाखन विशेष प्रकार का होता है, अंतस्थ (terminal) तथा असमान, जो कमजोर तथा मजबूत शाखाएं बनाता है। प्रत्येक द्विभाजन पर दोनों ओर एक अथवा दो विभज्योतक (meristems) होते हैं। इन कोर्ण-विभज्योतक (angle-meristems) का विकास बेलनाकार बर्हिवृद्धि (outgrowth) के रूप में हो जाता है। जिन्हे "राइज़ोफ़ोर" (rhizophore) कहते हैं। (चित्र 16.10 A)। अधिकांश ज़ातियों में सिर्फ अधर कोण-विभज्योतक (ventral angle-meristem) का विकास राइज़ोफोर के रूप में होता है, जबकि अन्य प्रसुप्त यानि पैपिला (papilla) अंकुरक के रूप में रहते हैं। राइज़ोफ़ोर नीचे जमीन की ओर उगते हैं तथा उनके सिरों पर अपस्थानिक जड़ों का छोटा गुच्छा उगा रहता है।

राइज़ोफ़ोर की आकारिकी प्रकृति विवादास्पद हैं ये अ) जड़, ब) तने की शाखा तथा स) एक संरचना *सुई जेनेरिस* (sui generis) (जो दोनों में से किसी श्रेणी में नहीं आती है) सुझाई गई है। पहले के अन्वेषकों ने राइज़ोफ़ोर की विशेषताओं का अनूठा संयोजन रिपोर्ट किया है :

i) शाखन के समय तने से बहिर्जात (exogenous) उत्पत्ति,

ii) मूल गोप का अभाव,

iii) सिरे के पीछे अंतर्जातीय रूप से (endogenously) जड़ों का बनना,

iv) कुछ उद्धरणों में, पर्णीय प्ररोह में बदल जाने की क्षमता।

चूंकि ये विशेषताएं सामान्यत: जड़ों की नहीं होती हैं, अत: इन बहिर्वृद्धियों (outgrowths) को राइज़ोफ़ोर कहा गया हैं।

लक्षण जो उनकी मूल यानि जड़ की प्रकृति को सुझाते हैं वे हैं :

i) धनात्मक गुरूत्वानुवर्तन (positive geotropism),

ii) शारीरी संगठन (चित्र 16.10 H) एक-आदिदारुक ज़ाइलम, और

iii) कुछ जातियों में जब ये संरचनाएं 1 मि.मी. से कम की होती हैं तब मूल गोप विकसित हो जाता है। *सैलाजिनेला मार्टेन्सी* (S.martensii) में मूलगोप तब विभेदित होता है जब मूल मिट्टी के नजदीक पहुंचती हैं।

गुरूत्वानुवर्तन (geotropism)
गुरूत्वाकर्षण के प्रभाव के कारण पादप के किसी भाग में होने वाली वृद्धि।

चिह्नित अर्थात् लेबल की गई ऑक्सिन (C^{14} IAA) का प्रयोग करके यह दिखाया जा चुका है कि *सैलाजिनेला* के राइज़ोफोर में ऑक्सिन का वहन अग्राभिसारी (acropetalous) होता है जैसा कि आवृतबीजी पौधों की जड़ों में होता है, जबकि तनों में यह तलाभिसारी (basipetalous) होता है। इसलिए, अब शब्द "राइजोफोर" व साथ ही साथ उसकी प्रकृति को लेकर होने वाले विवादों का सिर्फ ऐतिहासिक महत्व रह गया है।

सैलाजिनेला में पत्तियाँ अवृंती (sessile) होती हैं व उनमें एक ही अशाखित शिरा होती है (चित्र 16.10 A) *सैलाजिनैला* की पत्तियाँ **जीभिकाकार** (ligulate) होती है। जिभ्या यानि लिग्यूल प्रत्येक पत्ती के कक्ष के भीतर अथवा उसके निकट एक पटलित (laminate) बहिर्वृद्धि के रूप में उपस्थित रहता है (चित्र 16.10 B)। पत्ती की व्यक्तिवृत (ontogeny) में यह लिग्यूल बहुत जल्दी विभेदित तथा वयस्क हो जाता है। वयस्क लिग्यूल जीभिकाकार से पंखाकार तक हो सकता है। इसका आधारीय भाग नलिकाकार, काचाभ (hyaline) कोशिकाओं का बना होता है जो आच्छद (sheath) बनाती है। आच्छद के नीचे पतली तथा बहुत अधिक धानीयुक्त कोशिकाओं का अर्धगोलाकार क्षेत्र होता है जिसे **ग्लोसोपोडियम** (glossopodium) कहा जाता है। बची हुई कोशिकाएं समव्यासीय (isodiametric) होती हैं, शीर्ष भाग एक कोशिकीय मोटा होता है तथा दीर्घित अर्थात् लम्बी कोशिकाओं का बना होता है जिनमें अंतवस्तु (contents) कम होती हैं।

लिग्यूल के निम्नलिखित कार्य हैं :

i) जल का संरक्षण तथा इस प्रकार प्ररोह को सूखने से बचाना।

ii) अकार्बनिक लवणों की ऊपर की ओर गति, छोटे तथा कम प्रभावी पर्ण आद्यकों (leaf primordia) की प्रतिपूर्ति करके।

यह वंश दो सेक्शन में विभाजित किया जाता है।

i) **समपर्णी (Homophyllum) सेक्शन**- इस सेक्शन में सम्मिलित की गई जातियाँ समपर्णी होती हैं तथा इनमें पत्तियाँ सर्पिलाकार रूप में व्यवस्थित होती हैं। उदाहरण, *सैलैजिनेला रूपेस्ट्रिस* (*Selaginella rupestris*)।

ii) **विषमपर्णी (Heterophyllum) सेक्शन** - इस सेक्शन में सम्मिलित की गई जातियां खासतौर पर पृष्ठाधर सममिति (dorsi-ventral symmetry) तथा असमपर्णता (anisophylly) दर्शाती है। पत्तियाँ अक्ष पर चार कतारों में व्यवस्थित रहती हैं। जिनमें छोटी पत्तियों की दो कतारें ऊपर जुड़ी रहती हैं तथा दो बड़ी पत्ती वाली कतारें पार्श्व में जुड़ी रहती हैं। जननक्षम क्षेत्र हालांकि, समपर्णी (isophyllous) होते हैं और शंकु चतुष्कोणीय होते हैं जो उन्हें कायिक क्षेत्रों से बहुत स्पष्ट रूप से अलग करते हैं।

सैलाजिनेला में शीर्ष वृद्धि एक कोशिका तथा उसके व्युत्पन्नों से होती है या शीर्ष विभज्योतक से होती है जो कोशिकाओं के एक समूह का बना होता है।

प्राथमिक जड़ अल्पजीवी होती हैं तथा जड़ें अपस्थानिक होती हैं। अधिकांश जातियों में, नाजुक तथा अल्पशाखित संरचनाएं जो "राइजोफ़ोर" के दूरस्थ सिरों पर विकसित होती हैं उन्हें जड़ों के रूप में वर्णित किया जाता है।

आंतरिक संरचना

पत्ती

पत्ती की अनुप्रस्थ काट को देखिए (चित्र 16.10 B) तथा इसके विभिन्न हिस्सों अर्थात् क्षेत्रों का वर्णन करने का प्रयास कीजिए।

....

....

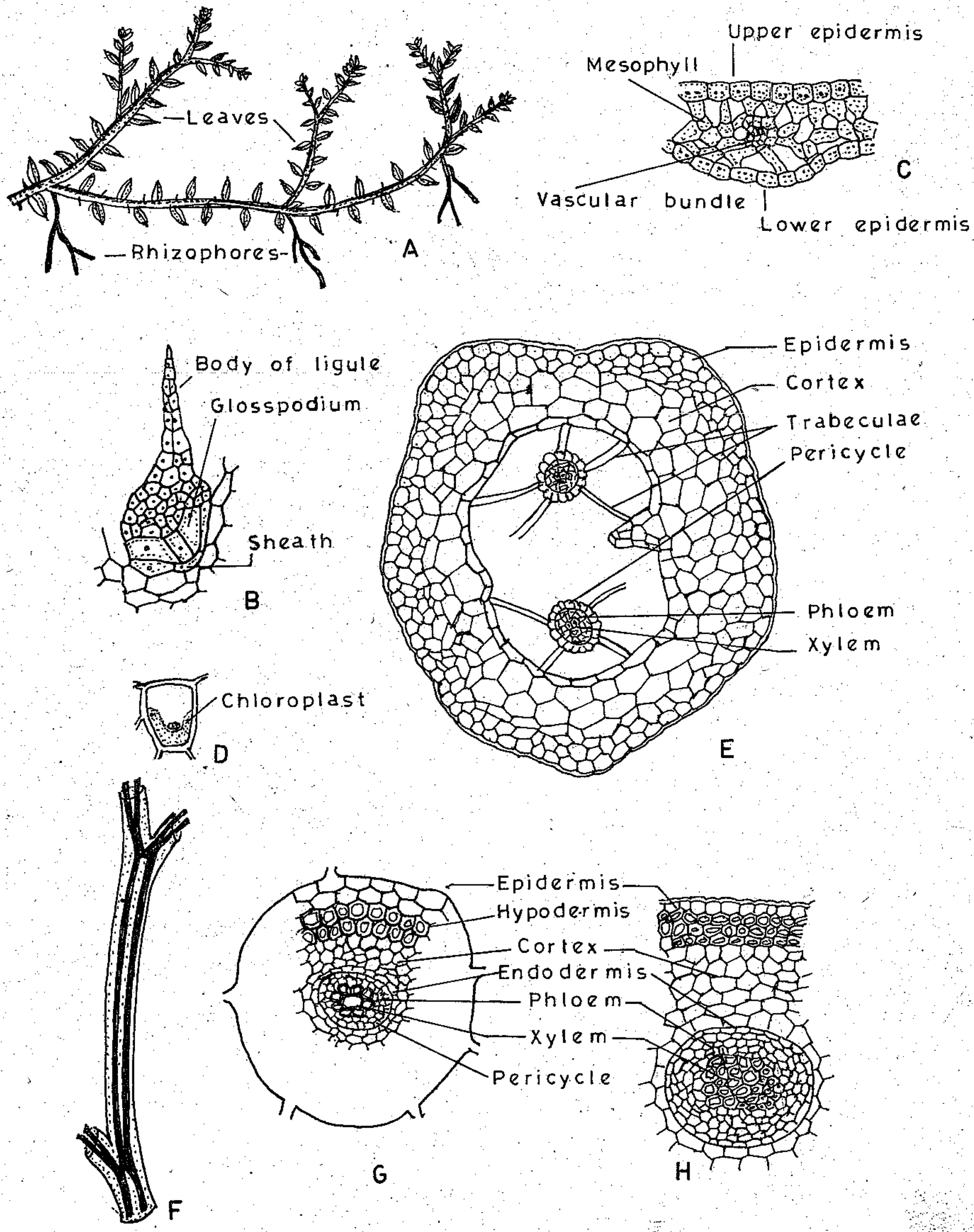

चित्र 16.10: *सैलाजिनेला* : **A)** पादप का एक भाग, **B)** पत्ती के एक भाग की अनुप्रस्थ काट, **C)** परिपक्व जीभिका (**ligule**) की अनुदैर्ध्य काट, **D)** एकल क्लोरोप्लास्ट तथा केन्द्रक को दर्शाते हुए पर्णमध्योतक की एक कोशिका, **E)** तने की अनुप्रस्थ काट, **F)** तने का एक भाग साफ किया हुआ संवहनी ऊतक का दर्शाते हुए, **G)** जड़ की अनुप्रस्थ काट, **H)** राइजोफोर की अनुप्रस्थ काट।

आपको निम्नलिखित विस्तार दिखाई देंगे :

i) ऊपरी बाह्यत्वचा एक कोशिकीय मोटाई की है। कुछ जातियों में ऊपरी बाह्यत्वचा शंकु के आकार वाली कोशिकाओं की बनी होती है, जिसमें बहुत बड़े आकार के क्लोरोप्लास्ट होते हैं, परन्तु रंध्र नहीं होते है।

ii) निचली बाह्यत्वचा भी चौड़ाई में एक कोशिकीय ही होती है। रंध्र आमतौर पर इस सतह पर सीमित रहते हैं।

iii) ऊपरी तथा निचली बाह्यत्वचा के बीच की पर्णमध्योतक कोशिकाएं (mesophyll cells) सामान्यत: एक जैसी कोशिकाओं दी बनी होती हैं, जो कमोबेश दीर्घित अर्थात लम्बी होती हैं और उनमें अन्तराकोशिकीय अवकाश होते हैं। पर्णमध्योतक की सभी कोशिकाओं में क्लोरोप्लास्ट पाया जाता है (चित्र 16.10 D)।

क्लोरोप्लास्ट संख्या तथा आकार में विभिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न होते हैं। प्रत्येक क्लोरोप्लास्ट के केन्द्र में बहुत सी तुर्कुरूपी (spindle shaped), पाइरीनॉइड जैसी संरचनाएं होती हैं, जिनमें से प्रत्येक अल्पवर्धित (rudimentary) मंड कण में परिवर्तित हो सकती हैं।

iv) मध्य में एकल मध्य संवहन बंडल को देखिए। ये संकेन्द्री (concentric) होते हैं तथा पर्ण अनुपथ तने के रंभ से जुड़े रहते हैं। ज़ाइलम चार से पाँच वाहिनिकाओं का बना होता है, जिनमें से एक वलयाकार तथा तीन या चार सर्पिल होती हैं ज़ाइलम को घेरे हुए फ्लोएम की परत होती है। जो मुख्य रूप से दीर्घित पतली मृदूतकीय कोशिकाओं तथा चालनी कोशिकाओं की बनी होती है। फ्लोएम के बाहर की ओर एक परत की पूलाच्छद (bundle-sheath) होती है।

तना

चित्र 16.10 E को देखिए। तने की अनुप्रस्थ काट में आप किन मंडलों (zones) को विभेदित कर सकते हैं? उन्हें नीचे लिखिए :

....

....

....

....

....

....

आपको निम्नलिखित मंडल दिखाई देंगे :

i) **बाह्यत्वचा** – मोटी भित्तियों वाली जो क्यूटिकल से ढकी रहती है।

ii) **वल्कुट** – अंतराकोशिकी स्थान रहित, कोणीय कोशिकाओं का बना होता है। बड़े तनों में बाहरी क्षेत्र की कोशिकाऐं दृढ़ोतकी होती हैं।

iii) **रंभ**- यह वल्कुट से कुछ अरीय रूप में दीर्घित अंतस्त्वचीय कोशिकाओं द्वारा अलग रहता है जिनमें कैस्पेरी पट्टियां होती है। इन्हें संबधक यानि ट्रैबीक्यूला (trabeculae) कहते हैं।

किशोर पौधों में हमेशा एक ही रंभ होता है (एकलरंभी)। वयस्क पौधों में रंभों की संख्या दो से सोलह तक हो सकती है। रंभ रूपरेखा में गोलाकार अथवा फीताकार होता है, यह जाति के अनुसार ठोसरंभी अथवा नालरंभी हो सकता है जिसमें बाह्यआदिदारुक होता है। यह एक कोशिकीय मोटाई के परिरंभ द्वारा परिबद्ध रहता है। ज़ाइलम मृदूतक की दो अथवा तीन परतों से घिरा रहता है तथा इसके बाहर की ओर आदिदारुक के अरीय ओर के क्षेत्र को छोड़ कर बाकी सब तरफ चालनी नलिकाओं की एक परत होती है। कुछ समपर्णी जातियों में वास्तविक वाहिनियाँ पाई जाती हैं। *सैलाजिनेला* के तने में उपस्थित बड़े बंडलों में मध्यआदिदारुक तथा बाह्यआदिदारुक, दोनों अवस्थाएं मिलती हैं। यह तने के अपने स्तर तथा खास परिपक्व स्थिति विशेष पर निर्भर करता है।

जड़ तथा राइजोफ़ोर

अब आप *सैलाजिनेला* की जड़ तथा राइजोफोर की अनुप्रस्थ काट का अध्ययन कीजिए (चित्र 16.10 G-H)

आप निम्नलिखित क्षेत्रों को विभेदित कर पायेंगे।

i) **बाह्यत्वचा-**बड़ी कोशिकाओं की बनी होती है जिनसे मूलरोम निकलते हैं।

ii) **वल्कुट-** यह या तो पूरी तरह से पतली-भित्तियों वाले मृदूतक का बना होता है अथवा उसमें तीन से पाँच परतों वाली दृढ़ोतकी कोशिकाओं की अधस्त्वक् (hypodermis) हो सकती है तथा बाकी का वल्कुट पतली-भित्ति वाला हो सकता है।

iii) **अंतस्त्वचा-** अधिकांश जातियों में यह परत स्पष्ट नहीं होती है।

iv) **परिरंभ-** यह दो से तीन परतों का बना होता है।

v) **रंभ-** यह एकआदिदारुक (monarch) व बाह्यआदिदारुक (exarch) होता है, यानि कि इसमें सिर्फ एक ही फ्लोएम का तथा एक ज़ाइलम का समूह होता है और आदिदारुक परिधि की ओर स्थित रहता है। फ्लोएम कमोवेश रूप से ज़ाइलम को घेरे रहता है।

बोध प्रश्न 16.6

(अ) निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए :

i) *सैलाजिनेला* .... पादप कहलाता है क्योंकि यह बहुत अधिक लंबे समय तक सूखा पड़ने के बाद भी पुन: उग जाता है।

ii) लिग्यूल का कार्य जल को .... करना तथा .... को ऊपर की ओर चलने में सहायता करना है।

iii) अपस्थानिक जड़ों के गुच्छे .... से विकसित होते हैं।

iii) वल्कुट तथा तने के केन्द्रीय ऊतक दीर्घित अंतस्त्वचीय कोशिकाओं से जुड़े रहते हैं जिन्हें .... कहते हैं।

(ब) निम्न की व्याख्या कीजिए :

लघुबीजाणुपर्ण, दीर्घबीजाणुपर्ण, लिग्यूल, राइजोफोर, ट्रैबीक्यूला।

(स) निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य हैं व कौन से असत्य हैं। सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) लिखिए।

i) *सैलाजिनेला* के तने में ट्रैबीक्यूला परिरंभ द्वारा निर्मित होता हैं। ☐

ii) *सैलाजिनेला* के तने में शाखन द्विभाजी होता है। ☐

iii) *सैलाजिनेला* में जड़ें अपस्थानिक होती हैं। ☐

iv) *लाइकोपोडियम* में राइजोफोर पाये जाते हैं। ☐

v) *सैलाजिनेला* में पत्तियाँ लिग्यूलेट अर्थात् जीभिकाकार होती हैं। ☐

vi) *सैलाजिनेला* के राइजोफोर में आक्सिन का परिवहन अग्राभिसारी होता है। ☐

16.5.6 *एक्वीसीटम*

एक्वीसीटम (Equisetum)

प्रभाग - एक्वीसीटोफाइटा (Equisetophyta)
वर्ग - एक्वीसिटेटी (Equisetatae)
गण - एक्वीसीटेलीज (Equisetales)

वंश *एक्वीसीटम* आमतौर पर होर्सटेल्स (horsetails) के नाम से जाना जाता है। यह इस वर्ग का एकमात्र प्रतिनिधि वंश है जो आज जीवित है। यह आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्ड के अतिरिक्त संपूर्ण विश्व में वितरित हैं। सभी जातियाँ शाकीय तथा बहुवर्षी होती हैं। सभी जातियों में क्षैतिज, भूमिगत प्रकंद पाया जाता है जिससे सीधे अर्थात् सतर, वायवीय अक्ष निकलते हैं जो कुछ जातियों में घने रूप से शाखित होते हैं, अथवा अन्य में लगभग अशाखित रहते हैं (चित्र 16.11 A)। वायवीय प्ररोह आमतौर पर वार्षिक होते हैं परन्तु बहुवर्षी भी हो सकते हैं। वे लम्बाई में मात्र कुछ सेन्टीमीटर (15 से.मी.) से कुछ मीटर तक के हो सकते हैं, परन्तु अधिकांश जातियाँ एक मीटर से अधिक लंबाई की नहीं होती हैं। उष्ण अमरीका में उगने वाली, *एक्वीसीटम जाइजेन्टियम* (*E.giganateum*) में वायवीय शाखाएं अधिकतम लगभग 13 मीटर लम्बाई तक की हो सकती हैं, परन्तु व्यास में अपेक्षाकृत पतली, 2.5 से. मी. से भी कम होती हैं।

एक्वीसीटम में पत्तियां बहुत छोटी, सरल, एक शिरीय, पतली तथा शल्क-जैसी होती हैं। इनमें आमतौर पर क्लोरोफिल नही होता है। प्रकाश संश्लेषण पूर्णत: हरे तनों के द्वारा संपन्न होता है। वे चक्करदार रूप में व्यवस्थित रहती हैं तथा अपने आधारों पर पार्श्व दिशा में आच्छद के रूप में जुड़ी रहती हैं, और पर्व (internode) के आधार को लंबे अथवा छोटे दंत-जैसे मुक्त सिरों से ढके रहती हैं (चित्र 16.11)

तना पर्वसंधि (node) तथा पर्व में विभेदित रहता है (चित्र 16.11 A) व कटकित (ridged) होता है, प्रत्येक कटक ऊपर के पर्व में पत्ती के तदनुरूप होता है तथा उत्तरोत्तर (successive) पर्वो में कटक एक दूसरे से एकांतर में होते हैं। प्रत्येक पर्वसंधि पर शाखा आद्य (branch primordia) पत्तियों के समान संख्या में होते हैं, तथा उनसे एकांतर में होते हैं। कुछ जातियों में सभी शाखाएं आद्य शाखाओं में विकसित हो जाती हैं जिसके परिणामस्वरूप पर्वसधियों पर शाखाओं का नियमित घेरा बन जाता है।

आंतरिक संरचना

तना

एक्वीसीटम के तने के शारीर को दिखाते हुए चित्र 16.11 B को देखिए तथा इसकी चित्र 16.10 E में दिए गए *सैलाजिनेला* के तने के शारीर से तुलना कीजिए। दोनों पादपों के विशेष लक्षणों को नीचे सूचीबद्ध करने का प्रयास कीजिए।

एक्वीसीटम	*सैलाजिनेला*
....	....
....	....

वायवीय शाखा के पर्व से होकर गुजरने वाली अनुप्रस्थ काट में निम्नलिखित क्षेत्रों को विभेदित किया जा सकता है (चित्र 16.9 D तथा 16.11 B, C) :

i) **बाह्यत्वचा-** यह एकल परत दीर्घित कोशिकाओं की बनी होती है जिनमें मोटी तथा तरंगित (undulated) भित्तियाँ होती हैं। ये कोशिकाएं सिलिका की अधिक मात्रा से पर्पटित (incrusted) रहती हैं जो सतह को खुरदरा बना देती हैं। रंध्र, कटकों के बीच में खाँचों में सीमित रहते हैं तथा गर्त में गहरे धँसे रहते हैं जिनके मुख आंशिक रूप से क्यूटिकल की परत से आच्छादित रहते हैं (चित्र 16.11 E, F) सहायक तथा द्वार कोशिकाओं के बीच में विशिष्ट शिरा-रूपी (rib-shaped) सिलिका युक्त मोटाइयाँ उपस्थित रहती हैं।

ii) **वल्कुट** – चित्र 16.11 B में आप देख सकते हैं कि वल्कुट को बाह्य तथा भीतरी वल्कुट में विभाजित किया जा सकता है। बाह्य वल्कुट दो प्रकार की कोशिकाओं में विभेदित रहता है।

दृढ़ोतकी कोशिकाएं – ये कटकों के नीचे उपस्थित रहती हैं। ये बड़े तथा भारी समूहों में पायी जाती हैं। इतनी ही संख्या में दृढ़ोतकों के छोटे समूह खाँचों की बाह्यत्वचा के नीचे पाये जाते हैं परन्तु रंध्रों के नीचे ये अनुपस्थित होते हैं, (चित्र 16.11 C)।

हरितऊतकीय कोशिकाएं – ये दृढ़ोतक के नीचे तथा पार्श्व में एक वक्र पट्टिका (curved band) के रूप में स्थित रहती हैं तथा तने का स्वांगीकारक (assimilatory) क्षेत्र बनाती हैं (चित्र 16.11 C)।

आंतरिक वल्कुट अपेक्षाकृत बड़े मृदूतकों की कुछ परतों का बना होता है। इस क्षेत्र में बहुत बड़े-बड़े वायु अवकाश उपस्थित रहते है तथा इन अवकाशों को वैलैकुली कैनाल (vallecular canals) कहते हैं (चित्र 16.11 B, C)। इनमें से प्रत्येक बाहरी सतह के खाँचों के नीचे स्थित रहती है और इस प्रकार प्रकाश संश्लेषी ऊतक के नीचे नजदीक में ही रहती हैं।

iii) **संवहनी बंडल** – ये तने के कटकों के नीचे स्थित रहते हैं तथा दिखने में विशिष्ट होते हैं, (चित्र 16.11 C)। ज़ाइलम अंतःआदिदारुक होता है पर आदिदारुक के स्थान पर कूटकी नलिका (carinal canal) पाई जाती है, जो आदिदारुक तत्वों के विलयन के द्वारा बनती है। फ्लोएम प्रत्येक कूटकी नलिका के बाहरी तरफ तथा उसकी त्रिज्या (radius) पर स्थित रहता है। दोनों तरफ से फ्लोएम अनुदारु (metaxylem) से घिरा रहता है। कुछ जातियों में प्रत्येक पर्वी बंडल (internodal bundle) अपनी अलग अंतस्त्वचा से घिरा रहता है, अन्य में एक ही अंतस्त्वचा पूरे तने में सभी बंडलों के ऊपर से जाती है, जबकि कुछ और अन्य जातियों में दो अंतस्त्वचा होती है। एक सभी बंडलों के बाहर की ओर तथा दूसरी भीतर की ओर स्थित होती है।

iv) केन्द्र में एक बड़ी मज्जा गुहिका (pith cavity) उपस्थित रहती है।

पर्वसंधियों पर ज़ाइलम एक सतत बेलन बनाता है जिससे पर्ण अनुपथ तथा शाख अनुपथ निकलते हैं। वैलैकुली कैनाल इस क्षेत्र में पाई जाती है परन्तु कूटकी नलिका अनुपस्थित होतीं हैं।

वायु चैनलों की इस प्रकार की व्यवस्था और बहुत ही लघुकृत संवहनी ऊतक, ऐसे लक्षण हैं जो सामान्य तौर पर जलीय पादपों में पाये जाते हैं। इसके विपरीत, मोटी क्यूटिकल, धँसे हुए रंध्र तथा लघुकृत पत्तियाँ मरूस्थलीय पादपों की विशेषताएं हैं।

इस प्रकार से आप देख सकते हैं कि *एक्वीसीटम* के तने का शारीर (आंतरिक संरचना) शुष्कतानुकूलित (xeromorphic) तथा जलानुकूलित (hydromorphic) विशेषताओं का दिलचस्प संयोजन प्रस्तुत करता है। इसका संवहनी तंत्र पादप जगत में अनूठा है, तथा उसकी सही आकृतिक व्याख्या लंबे समय से विवाद का विषय रही है।

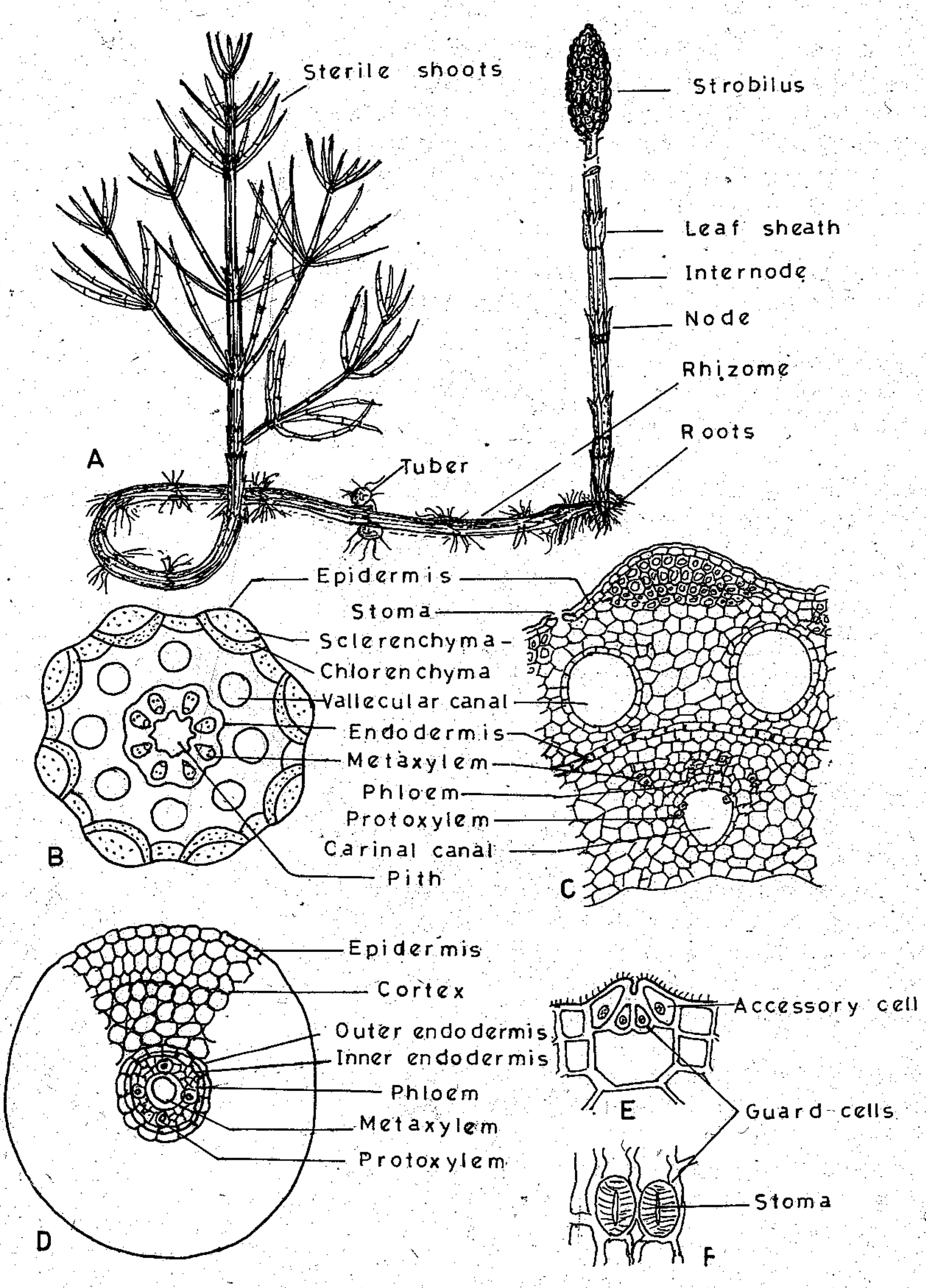

चित्र 16.11: *एक्वीसीटम* : A) पादप का एक भाग, B) वायवीय बंध्य शाखा के पर्व से गुजरती हुई अनुप्रस्थ काट का अंशआरेखण (semidiagrammatic), C) B का दीर्घीकृत भाग, D) जड़ की अनुप्रस्थ काट, E) रंध्र की ऊर्ध्वाधर काट (V.S.), F) बाह्यत्वचा रंध्र तथा स्थूलनों को दर्शाते हुए पत्ती का ऊपरी दृश्य।

जड़

जड़ें जो कि उद्भासी रूप से क्षैतिज प्रकंद पर उगती हैं, वास्तव में अक्षीय कलिका से उगती हैं जो अपने पर्ण आच्छद के नीचे छिपी रहती हैं। जड़ की अनुप्रस्थ काट का अध्ययन कीजिए (चित्र 16.11 D), तथा विभिन्न मंडलों के बारे में लिखिए, जिन्हें आप पहचान पाते हैं।

1 ....

2 ....

3 ....

4 ....

बाह्यत्वचा - यह कोशिकाओं की एकल परत की बनी होती है।

वल्कुट - यह मृदूतकी कोशिकाओं की कुछ परतों का बना होता है। बाह्यत्वचा के नीचे की वल्कुटी कोशिकाएं मोटी भित्ति वाली तथा लिग्निन युक्त हो सकती हैं। कुछ जातियों में अपेक्षाकृत बड़ी जड़ों की भीतरी वल्कुट में वायु अवकाश पायें जाते हैं।

अंतस्त्वचा - यह एक कोशिकीय मोटाई की होती है तथा कोशिकाओं में कैस्पेरी पट्टियाँ पाई जाती हैं।

रंभ - यह द्विआदिदारुक, त्रि-आदिदारुक अथवा चतु-आदिदारुक होता है तथा ज़ाइलम बाह्यआदिदारुक होता है।

बोध प्रश्न 16.7

अ) निम्नलिखित वक्तव्यों में से कौन से सत्य हैं तथा कौन से असत्य हैं? सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) लिखिए ।

i) *एक्वीसीटम* के पौधे वार्षिक होते हैं। ☐

ii) पत्तियाँ एकान्तर रूप से व्यवस्थित होती हैं। ☐

iii) *एक्वीसीटम* में वायवीय तंत्र पर्वसंधि तथ पर्वों में विभेदित रहता है। ☐

iv) तने में कटक तथा खाँचे दिखाई पड़ते हैं। ☐

v) *एक्वीसीटम* में रंध्र धँसे हुए नहीं होते हैं। ☐

vi) वैलैकुली कैनाल कटक के नीचे उपस्थित रहती हैं। ☐

ब) *एक्वीसीटम* के तने की अनुप्रस्थ काट का चित्र बनाइये एवं उसे लेबल यानि चिन्हित कीजिए तथा उसके विशेष लक्षणों को सूचीबद्ध कीजिए।

स) निम्नलिखित शब्दों की व्याख्या कीजिए :

वैलैकुली कैनाल, कूटकी नलिका, अंत:आदिदारुक, शुष्कतानुकूलित, जलानूकूलित।

अभी तक आपने जितने पादपों का अध्ययन किया है वे फर्न-संबन्धी के रूप में जाने जाते हैं। अब आप "वास्तविक फर्नों" के बारे में जानेगें। उन्हें प्रभाग या डिवीज़न टेरोफाइटा अथवा फिलिकोफाइटा में सम्मिलित किया गया है। फर्न, बीज उत्पन्न न करने वाले संवहनी पादपों का सबसे बड़ा समूह है। फर्नों की लगभग 9,700 जातियाँ हैं। अधिकांश फर्न दरअसल छोटे पौधे होते हैं तथा उनमें से कुछ घर बगीचों तथा दृश्यभूमि पर उगाये जाते हैं। कुछ फर्न मध्यम-आकार के वृक्ष होते हैं।

फर्न विविध प्रकार के आवास स्थानों के लिए अनुकूलित होते हैं। वे उत्तर ध्रुवीय प्रदेश में व साथ ही साथ सूखे प्रदेशों में भी पाए जाते हैं। उनमें से अधिकांश स्थलीय हैं परन्तु कुछ अधिपादपों के रूप में नम पेड़ के तनों पर उगते हैं। आप जलीय फर्न *एज़ोला* (*Azolla*) से तो परिचित हैं। इस पाठ्यक्रम में आप विस्तार से फर्न के तीन वंशों के बारे में पढ़ेंगे :

टेरिस - एक छोटी फर्न, *साऐथिया*- एक वृक्ष फर्न तथा *मार्सीलिया* - एक जलीय फर्न।

16.5.7 *टेरिस* (*Pteris*)

टेरिस (*Pteris*)
प्रभाग - टेरोफाइटा (Pterophyta)
वर्ग - पॉलीपोडियटी (Polypodiatae)
गण - फिलिकेलीज (Filicales)

टेरिस लगभग 250 जातियों वाला विस्तृत रूप से वितरित वंश है। यह विश्व के उष्ण तथा उपोष्ण क्षेत्रों में ठंडे, आर्द्र तथा छायादार स्थानों में बहुतायत में उगते हैं। कुल मिलाकर 19 जातियाँ भारत से रिकार्ड की गई हैं। *टेरिस विटाटा* (*Pteris vittata*) एक निम्न स्तर का फर्न हैं जिसमें पूरे साल नई पत्तियाँ आती रहती हैं। यह पहाड़ियों की दीवारों पर बहुत ही आम तौर पर पाया जाता है तथा समुद्र तल से 1200 मीटर की ऊँचाई तक पर उगता है। *टेरिस क्वाड्रीऑरिएटा* (*Pteris quadriauriata*) पूरे उत्तर-पश्चिमी हिमालय में सड़कों के किनारे तथा घाटी में बहुतायत में उगता है। एक और जाति, *टेरिस क्रिटिका* (*Pteris cretica*) समुद्र जल के 1200 से 2400 मीटर ऊपर भली प्रकार से उगती है।

टेरिस की सभी जातियाँ स्थलीय, बहुवर्षी शाक है जिनमें प्रकंद या तो विसर्पी (creeping) अथवा आधा-सतर (semi-erect) होता है जो शल्कों से ढका रहता है। जड़ें या तो प्रकंद की निचली सतह से अथवा पूरी प्रकंद के चारों ओर उगती हैं। आपने संभवत: ध्यान दिया होगा कि फर्न के पौधे का सबसे सुस्पष्ट भाग उसकी पत्तियाँ हैं। इन्हें प्रपर्ण (frond) कहते हैं। अधिकांश जातियों में पत्तियां संयुक्त होती हैं परन्तु कुछ में सरल पत्तियाँ होती हैं, उदाहरण के लिए *टेरिस क्रिटिका*। चित्र 16.12 A को देखिए पत्ती का वृंत प्राक्ष यानि रेकिस (rachis) के रूप में आगे तक जारी रहता है तथा उसमें पर्णक (leaflets) लगे रहते हैं जिन्हें पिच्छक (pinnae) कहते हैं।

टेरिस-विटाटा में आधारीय तथा शीर्ष भाग में उपस्थित पिच्छक मध्य भाग के पिच्छकों से छोटे होते हैं। (चित्र 16.12 A)। पर्ण शीर्ष (leaf apex) पर एक भिन्न प्रकार का पिच्छक उपस्थित रहता है। प्रत्येक पिच्छक में एक केन्द्रीय मध्य शिरा होती है जिससे पार्श्व शिराएं निकलती हैं जो द्विशाखित हो जाती हैं। पिच्छक अवृंती होते हैं और आधार पर चौड़े तथा शीर्ष की ओर क्रमश: चौड़ाई में कम होते जाते हैं। (चित्र 16.12 B) *टेरिस बाइऑरिएटा* (*Pteris biauriata*) में पत्तियाँ द्विपिच्छकी (bipinnate) होती हैं। पिच्छिकाएं (pinnules) बुनावट में खुरदुरी होती हैं। तरुण पत्तियों में विशेष प्रकार की अंतर्वक्रता (incurving) दिखाई पड़ती है जिसे कुंडलित किसलय-विन्यास (circinate vernation) कहते हैं। पत्तियों के पर्णकों की निचली सतह पर प्रजनन संरचनाएं होती हैं। ये भूरे रंग की बिन्दुओं (बीजाणुधानी पुंज) की कतारों जैसी दिखाई पड़ती हैं। यह बिन्दु बीजाणुधानियों के गुच्छे होते हैं।

आंतरिक संरचना

प्रकंद

टेरिस के प्रकंद का रंभीय संगठन जाति पर निर्भर करता है तथा ठोसरंभ से लेकर जालरंभ तक भिन्न हो सकता है। कभी-कभी एक ही जाति में दोनों भी हो सकते हैं। प्रकंद के निचले भाग की तरुण शाखाओं में रंभ मिश्रित ठोसरंभ होता है। कुछ ऊपर जाकर यह नालरंभीय बन जाता है तथा अंतत: शीर्ष के पास यह नलीरंभीय बन जाता है। मुख्य प्रकंद में जालरंभीय अवस्था भी पाई जाती है (चित्र 16.12 C, D)। *टेरिस विटाटा* में प्रकंद के शीर्ष भाग में रंभ द्विचक्रीय जालरंभ बन जाता है।

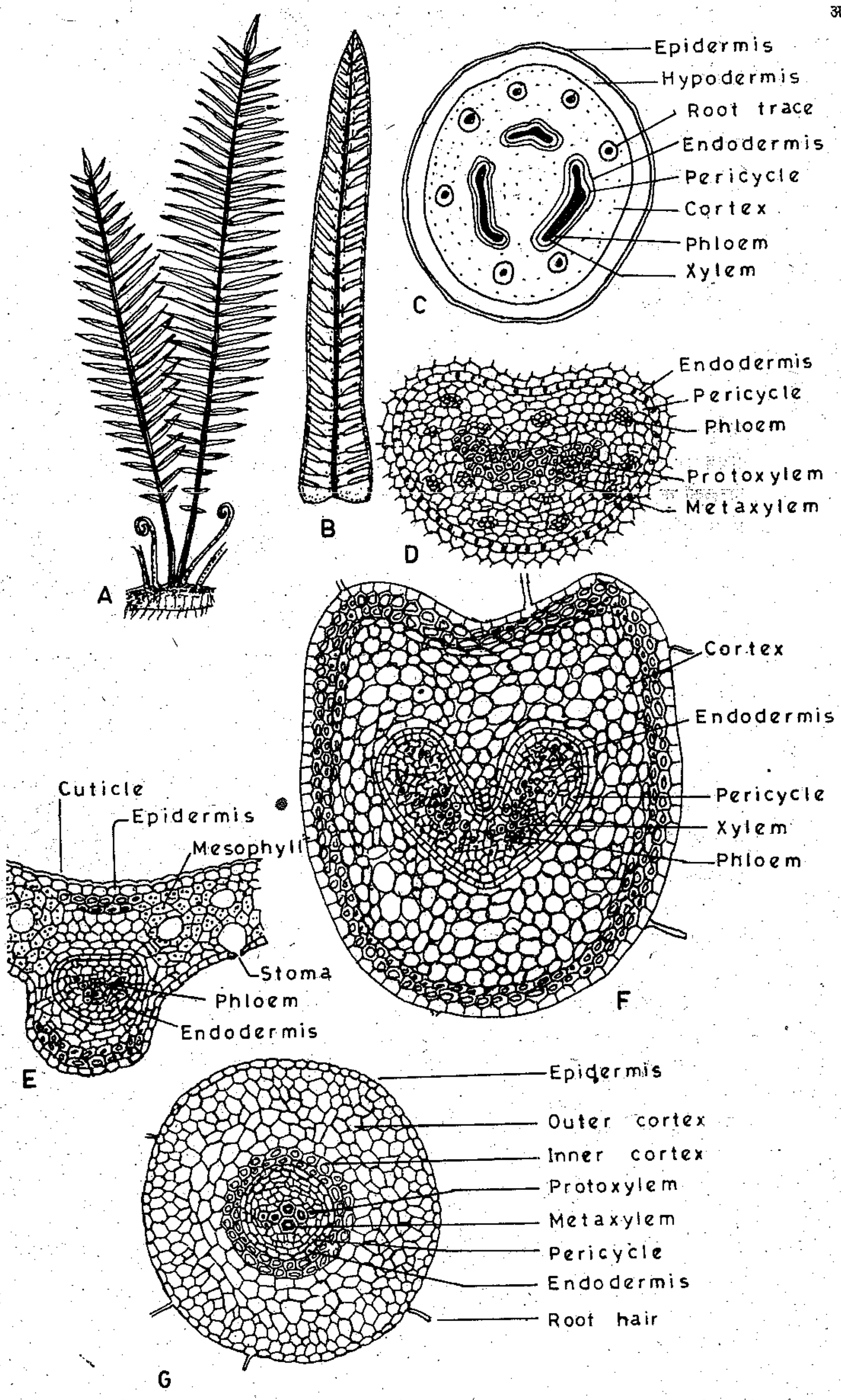

चित्र 16.12: *टेरिस* : A) *टेरिस विटाटा* (***Pteris vittata***) का एक पादप, B) मध्यशिरा तथा द्विभाजी शिरा को दिखाते हुए एक पर्णक, C) मेरीस्टील (meristele) को दिखाते हुए प्रकंद की अनुप्रस्थ काट, D) विस्तृत आंतरिक संरचना को दर्शाते हुए प्रकंद में मेरीस्टील, E) पर्णक का एक भाग अनुप्रस्थ काट में, F) पर्णवृंत की अनुप्रस्थ काट, G) जड़ की अनुप्रस्थ काट।

पर्ण

पिच्छिका की अनुप्रस्थ काट को देखिए (चित्र 16.12 E), आप निम्नलिखित मंडलों को विभेदित कर सकते हैं।

i) पिच्छिका में ऊपरी तथा निचली बाह्यत्वचा पाई जाती है। *टेरिस क्रिटिका* में ऊपरी बाह्यत्वचा की कोशिकाएं बड़ी होती हैं तथा उनमें कम लहरदार (sinuous) भित्तियाँ होती हैं। इस जाति में रंध्र निचली बाह्यत्वचा पर सीमित रहते हैं, जिसमें अपेक्षाकृत छोटी तथा अधिक लहरदार भित्तियों वाली कोशिकाएं होती हैं।

ii) पर्णमध्योतक हरी मृदूतकीय कोशिकाओं का बना होता है।

iii) मध्य शिरीय क्षेत्र में एकल संवहनी तंतु होता है जिसमें पृथक अंतस्त्वचा होती है।

पर्णवृंत (petiole) में एकल यू (U) आकार अथवा वी (V) आकार का पर्ण-अनुपथ होता है (चित्र 16.12 F), परन्तु कुछ जातियों में यह सी (C) के आकार का होता है। रैकिस से पर्णवृंत अनुपथ पिच्छकों को जाते हैं। रैकिस अनुपथ की उत्पत्ति उपांत (marginal) में होती हैं तथा ये आमतौर पर सपाट यू (U) के आकार के अथवा छिछले चापाकार (arc shaped) होते हैं।

जड़

जड़ की अनुप्रस्थ काट को देखिए (चित्र 16.12 G) तथा निम्नलिखित क्षेत्रों पर ध्यान दीजिए :

i) बाह्यत्वचा में असंख्य मूल रोम होते हैं जो इसी परत से उगते हैं।

ii) वल्कुट बाहरी मृदूतकीय क्षेत्र तथा मोटी-भित्तियों वाली कोशिकाओं के भीतरी क्षेत्र में विभेदित होता है।

iii) अंतस्त्वचा वल्कुट के भीतर एक परत की होती है। अंतस्त्वचा की कोशिकाओं की अरीय भित्तियों में कैस्पेरी पट्टियां होती हैं।

iv) परिरंभ अंतस्त्वचा के बाद होता है तथा वह पतली भित्तियों वाली कोशिकाओं का बना होता है।

v) रंभ द्विआदिदारुक तथा बाह्यआदिदारुक होता है।

बोध प्रश्न 16.8

निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) *टेरिस* में प्रकंद .... अथवा .... होता है।

ii) फर्न की अधिकांश जातियों में पत्तियाँ .... होती हैं तथा पौधों का सबसे .... भाग होती हैं।

iii) प्रकंद में .... रंभ अथवा .... रंभ हो सकता है।

iv) फर्न की तरुण पत्तियों में अंतर्वक्रता होती है जिसे .... कहते हैं।

v) फर्न का प्रकंद .... से ढका रहता है।

16.5.8 साऐथिया

वंश *साऐथिया* में वे जातियाँ सम्मिलित हैं जो अपनी वृक्ष जैसी प्रकृति के कारण आमतौर पर वृक्ष फर्न कहलाती हैं। ये ज्यादातर उष्ण आर्द्र पर्वतीय जंगलो में मैक्सिको से लेकर चाइल, मलेशिया व ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड व अफ्रीका तक सीमित हैं। भारत में सामान्य तौर पर वृक्ष फर्न पूर्वी हिमालय क्षेत्र में पाए जाते हैं।

साऐथिया (*Cyathea*)
प्रभाग - टेरोफाइटा
वर्ग - पॉलीपोडियटी
गण - फिलिकेलीज

साऐथिया की विभिन्न जातियों के पौधे ऊँचाई में भिन्न-भिन्न होते हैं। सबसे लंबे 25 मीटर तक की ऊंचाई तक पहुँच जाते हैं। कुछ जातियाँ अपेक्षाकृत छोटे आकार की होती हैं। तना वायवीय, सीधा तथा अरीय होता है। यह आमतौर पर अशाखित होता है, परन्तु कभी-कभी पार्श्व शाखाएं निकलती हैं। कुछ जातियों में जहाँ तना छोटा तथा ठूंठ जैसा (stumpy) होता है, वहाँ द्विभाजन शीर्ष के निकट होता है तथा दोनों शाखाएं समान होती हैं। तने के ऊपर शल्क तथा रोम घना आच्छद बनाते हैं। तने का अधिकतर व्यास चिरस्थायी (persistent) पर्ण आधारों तथा अभासित यानि ग्रथित (matted) अपस्थानिक जड़ों का बना होता है। इसके अंदर वास्तविक तना अपेक्षाकृत कम व्यास का होता है। गिरी हुई पत्तियों के विशिष्ट षट्कोणीय निशान तने के ऊपरी भाग में काफी सुस्पष्ट होते हैं (चित्र 16.13 A, B)।

अपाक्ष (abaxial)
अक्ष की ओर अभिमुख सतह

पत्तियां अक्ष के निकट मुकुट के रूप में उपस्थित रहती हैं। तरुण पत्तियां कुंडलित रूप से मुड़ी रहती हैं। कुछ जातियों में पत्तियां काफी बड़ी होती हैं तथा लगभग चार मीटर तक की लंबाई की होती हैं। पत्तियां सामान्यतः 3 से 4 बार पिच्छकी (pinnate) होती हैं तथा तने पर सर्पिल रूप से व्यवस्थित रहती हैं। हालांकि, कुछ जातियों में वे सामान्य होती हैं। पत्तियों का विन्यास मुक्त द्विभाजी (dichotomous) प्रकार का होता है। वयस्क पादपों में पत्ती की अपाक्ष (abaxial) सतह पर बीजाणुधानी पुंज (sori) पाये जाते हैं। चित्र (16.13 C) पर्णवृंत की सतह भूसे जैसे शल्कों से ढकी रहती है जैसे कि तने पर उपस्थित रहते हैं। पर्णवृंत में अनेकों पर्ण अनुपथ (leaf trace) होते हैं जो अधिकांशतः जटिल होते हैं तथा अनेकों रज्जुकों (strands) में विखंडित रहते हैं।

आंतरिक संरचना

तना

तने की आन्तरिक संरचना बहुत अधिक जटिल होती है (चित्र 16.13 D)। वयस्क तने में बहुचक्रीय जालरंभ (polycyclic dictyostele) पाया जाता है जो गोला बनाते हुए बहुत सारे अंशरंभों (meristele) का बना होता है। ध्यान दीजिए कि प्रत्येक अंशरंभ दृढ़ोतक की पट्टिका द्वारा घिरा रहता है तथा इसके सिरे बाहर की ओर मुड़े रहते हैं। असंख्य पर्ण अनुपथ पर्ण अवकाशों के निचले किनारों से उत्पन्न होते हैं तथा तिर्यक रूप से (obliquely) वल्कुट में से गुजरते हैं। बहुत सारे सहायक संवहनी तंतु (accessory vascular strands) भी मज्जा में उपस्थित रहते हैं। ये **सहायक मज्जा तंतु** (accessory medullary strands) कहलाते हैं। संरचनात्मक रूप से, मज्जा तंतु अंशरंभो के समान होते हैं। मज्जा तंतुओं का आपस में तथा साथ ही साथ अंशरंभों के साथ शाख मिलन (anastomosis) भी पाया जाता है। *साऐथिया* की कुछ जातियों में वल्कुट में भी छोटे अंशरंभ पाए जाते हैं। ये **सहायक वल्कुट तंतु (accessory cortical strands)** कहलाते हैं। सहायक मज्जा तंतुओं तथा सहायक वल्कुट तंतुओं की उपस्थिति के कारण *साऐथिया* के तने में बहुचक्रीय जालरंभीय अवस्था पाई जाती है।

बोध प्रश्न 16.9

निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए:

i) *साऐथिया* वंश में .... फर्न सम्मिलित हैं।

ii) *साऐथिया* की पत्तियाँ .... होती हैं।

iii) पत्तियाँ आमतौर पर .... पिच्छक होती हैं तथा कुछ जातियों में यह .... मीटर की ऊँचाई तक पहुँचती हैं।

iv) पत्तियों में विन्यास आमतौर पर .... प्रकार का होता है।

v) तना .... तथा .... से आच्छादित रहता है।

vi) *साऐथिया* के तने में रंभ .... प्रकार का होता है।

vii) *साऐथिया* की बहुचक्रीय जालरंभ स्थिति बहुत सारे अंशरंभों की बनी होती है जो .... ऊतक की पट्टिका से ढके रहते हैं।

viii) मज्जा में उपस्थित संवहनी तंतु .... तंतु कहलाते हैं तथा वल्कुट में उपस्थित तंतु .... तंतु कहलाते हैं।

ix) चिरस्थायी .... तने की परिधि प्रदान करते हैं।

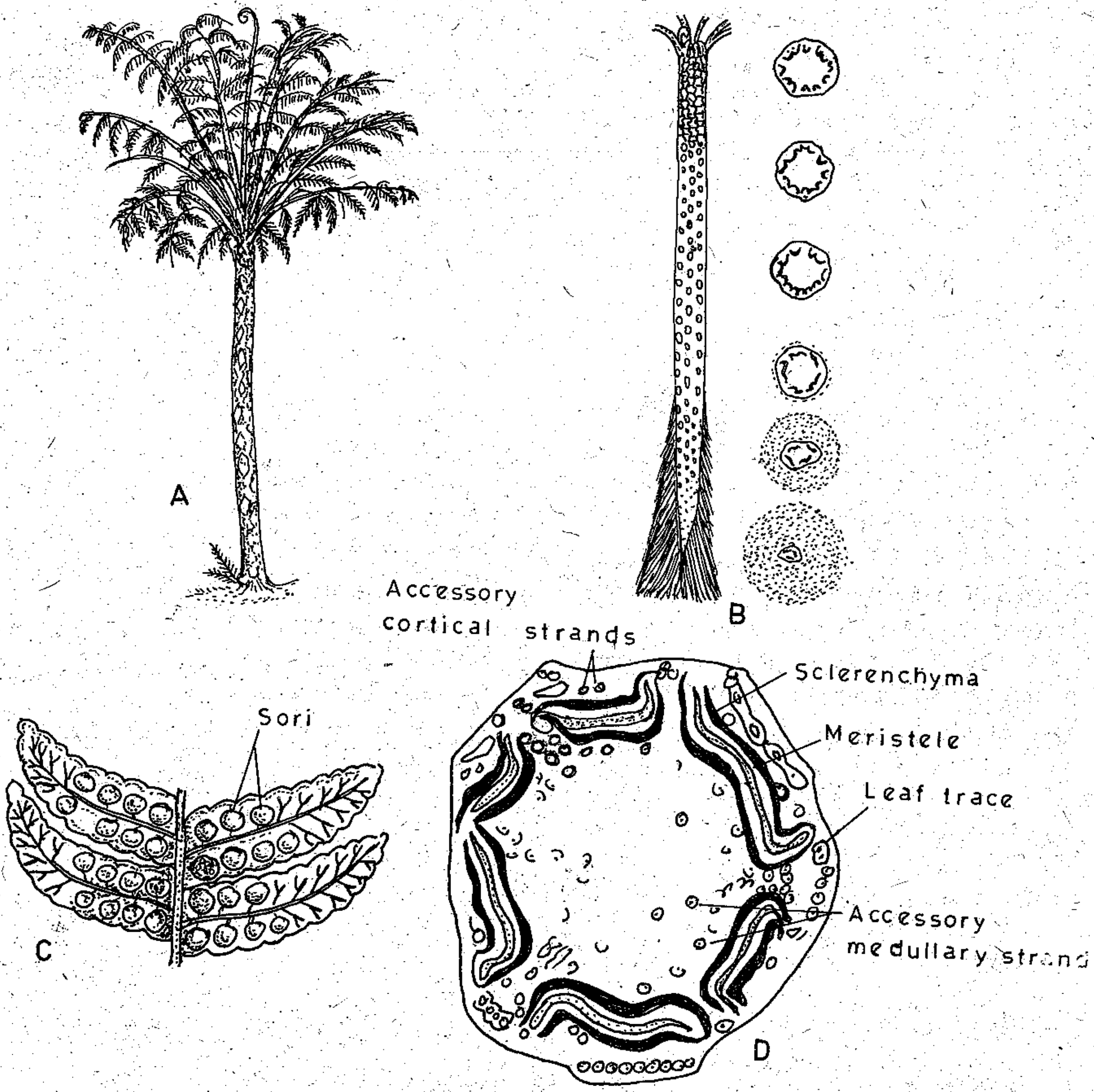

चित्र 16.13 : A) *साऐथिया* का पादप, B) स्थायी पर्ण आधारों तथा उत्तरोत्तर सतहों पर संवहनी संगठन को दर्शाते हुए तने की अनुप्रस्थ काट का आरेख, C) बीजाणुधानी पुंजों को दर्शाते हुए पत्ती का एक भाग, D) तने की अनुप्रस्थ काट।

16.5.9 *मार्सीलिया*

फर्नों में *मार्सीलिया* बहुत ही दिलचस्प वंश है क्योंकि यह विषमबीजाणुता तथा जलरागी (जलप्रिय) प्रकृति दर्शाते हैं। यह वंश विश्वभर के शीतोष्ण तथा उष्ण भागों में वितरित है। वे या तो जलीय अथवा जलस्थलीय प्रकृति के होते हैं तथा जब वे थल पर उगते हैं तब उनकी जड़े पंकिल मिट्टी (muddy soil) में धँसी रहती हैं।

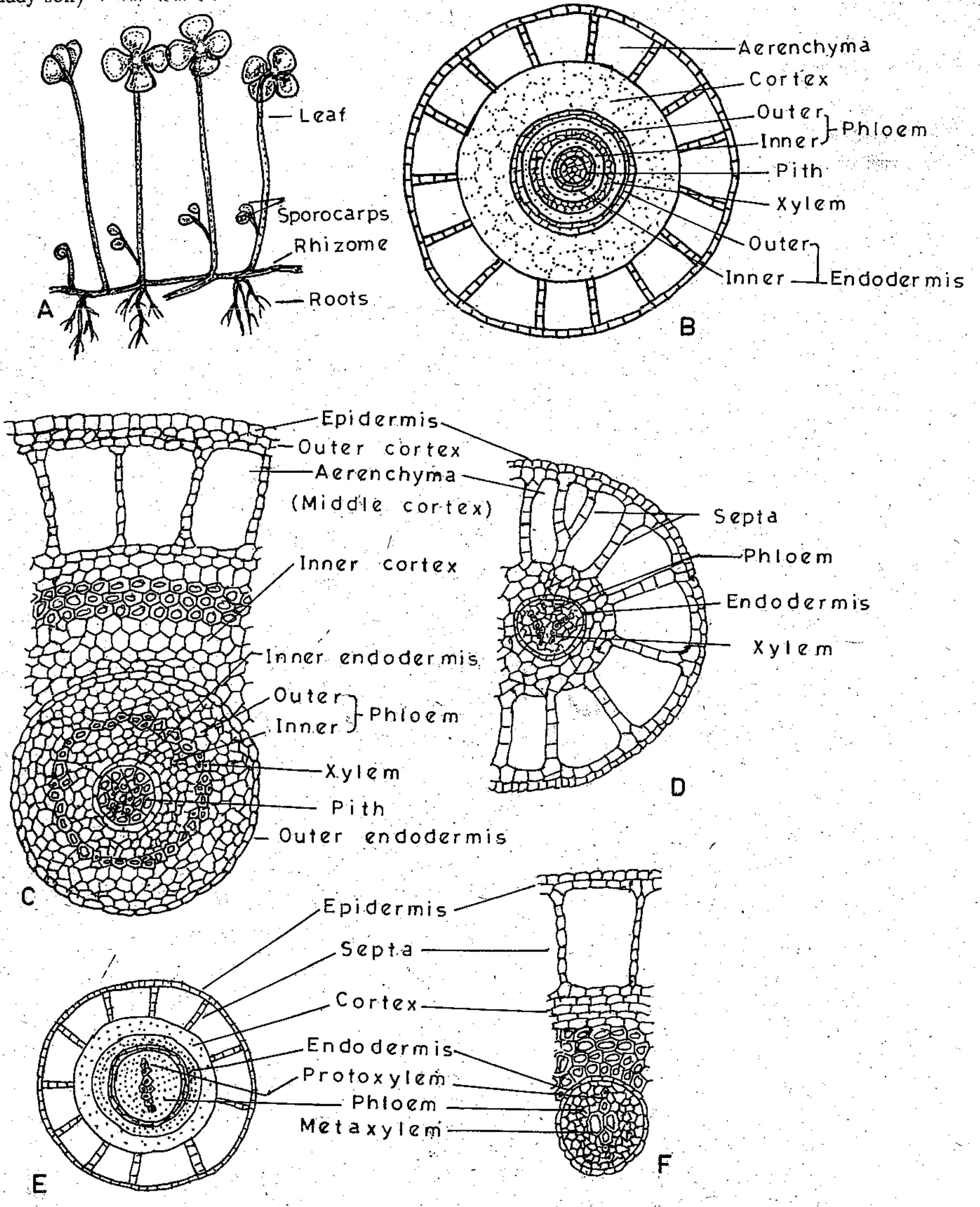

चित्र 16.14 : *मार्सीलिया* (*Marsilea*) : **A)** बीजाणु-फलिकाओं (**sporocarps**) को दर्शाते हुए *मार्सीलिया* का एक पादप, **B)** प्रकंद की अनुप्रस्थ काट का आरेख, **C) B** का एक दीर्घाकृत भाग, **D)** पर्णवृंत की अनुप्रस्थ काट का एक भाग, **E)** जड़ की अनुप्रस्थ काट का आरेख, **F) E** का एक दीर्घीकृत भाग।

मार्सीलिया (*Marsilea*)

प्रभाग - टेरोफाइटा
वर्ग - पॉलीपोडिएटी
गण - मार्सीलिएलीज (Marsileales)

मार्सीलिया में पतला, विसर्पी प्रकंद होता है जो द्विभाजी शाखित होता है तथा अनिश्चित वृद्धि दर्शाता है। इसमें स्पष्ट पर्वसंधि होते हैं। प्रत्येक पर्वसंधि पर पत्तियाँ पतले, लचीले पर्णवृंत के साथ विकसित होती हैं तथा एकांतर रूप से प्रकंद के ऊपरी भाग पर दो कतारों में व्यवस्थित रहती हैं। पटल (lamina) चार पर्णकों में विभाजित होता है। पत्ती जब तरुण होती है तब कुंडलित होती है, तथा पर्णक लगभग परिपक्व होने तक एक साथ ऊपर की ओर मुड़े हुए रहते हैं। रात में भी पर्णक ऊपर की ओर एक साथ मुड़े हुए रहते हैं जो "निद्रावस्था" का आभास कराते हैं। प्रत्येक पर्वसंधि पर नीचे की ओर एक या दो अपस्थानिक जड़ें उत्पन्न होती हैं (चित्र 16.14 A)। प्रजनन संरचनाएं बीजाणु-फलिकाएं (sporocarps) होती हैं जो लघु तथा दीर्घबीजाणुधानियाँ लिए रहती हैं। बीजाणु-फलिकाएं, जैसा कि आप (चित्र 16.14 A) में देख सकते हैं या तो एकल रूप में अथवा गुच्छों में पर्णवृंत की छोटी पार्श्व शाखाओं पर उत्पन्न होती हैं। पौधे छिछले जल में अथवा नम स्थानों पर उगने के लिए अनुकूलित होते हैं। कुछ जातियाँ स्थलीय हैं। *मार्सीलिया हिर्सुटा* (*Marsilea hirsuta*), *मार्सीलिया माइन्यूटा* (*M. minuta*), तथा *मार्सीलिया एग्विप्टिका* (*M. aegyptica*) मरूस्थलीय जातियाँ हैं तथा सूखे के दीर्घ कालों में उत्तरजीविता के लिए समर्थ होती हैं।

कुछ जातियों में थल के साथ ही साथ जलीय प्रकारें भी ज्ञात हैं। ये दोनो प्रकारें एक दूसरे से संरचनात्मक रूप से विभेदित की जा सकती हैं। थलीय प्रकारों में छोटे पर्व, शाखित जड़ें, थोड़े वायु अवकाश तथा कायिक अंगो में अधिक दृढ़ोतक पाया जाता है। पत्तियों में पर्णवृंत लंबे होते हैं तथा रंध्र पर्णकों की दोनों सतहों पर वितरित रहते हैं। इसके विपरीत, जलीय प्रकारों में लंबे पर्णवृंत, अशाखित जड़ें तथा लचीले पर्णवृंत होते हैं। कायिक अंगों में दृढ़ोतक लगभग अनुपस्थित होता है परन्तु उनमें बहुत अधिक वायु अवकाश होते हैं। रंध्र ज्यादातर पर्णकों की ऊपरी सतह पर सीमित होते हैं।

आंतरिक संरचना

प्रकंद

वयस्क तने अथवा प्रकंद की अनुप्रस्थ काट को देखिए (चित्र 16.14 B, C) तथा उन विशेष लक्षणों को नीचे लिखिए जो आपको दिखाई पड़ते हैं।

1. ....

2. ....

3. ....

4. ....

आपको निम्नलिखित क्षेत्र दिखाई पड़ेगें:

i) **बाह्यत्वचा** - यह मोटी-भित्ति वाली पास-पास व्यवस्थित कोशिकाओं की एकल परत की बनी होती है

ii) **वल्कुट** - वल्कुट में तीन क्षेत्र विभेदित किए जा सकते हैं:

अ) बाह्य वल्कुट, ब) मध्य वल्कुट तथा स) आंतरवल्कुट बाह्य वल्कुट (चित्र 16.14 B)। संहत रूप से (पास-पास) व्यवस्थित मृदूतकी कोशिकाओं का बना होता है। कुछ टैनिन लिए हुए कोशिकाएं भी इस क्षेत्र में उपस्थित रहती हैं। मध्य वल्कुट वायु कोष्ठों की एकल परत का बना होता है जो एक वलय यानि गोले के रूप में व्यवस्थित रहती हैं। ये कोष्ठ एक दूसरे से एक कोशिकीय मोटे विभाजकों द्वारा अलग रहते हैं। आंतरवल्कुट कुछ कोशिकीय मोटा होता है। आंतरवल्कुट की बाह्य कोशिकीय परतें मोटी-भित्तियों वाली होती हैं जबकि अन्य कोशिकाएं मृदूतकीय तथा संहत रूप से व्यवस्थित होती हैं।

iii) **रंभ** - यह उभयफ्लोएमी नालरंभी होता है। इस प्रकार में ज़ाइलम एक वलय के रूप में होता है तथा फ्लोएम जाइलम के दोनो ओर स्थित होता है।

पर्णवृंत

पर्णवृंत में रंभ कुछ-कुछ त्रिकोणीय होता है तथा अंतस्त्वचा की एकल परत से घिरा रहता है। ज़ाइलम की दो भुजाएं होती है जो एक दूसरे की विपरीत दिशा में मुड़ी हुई रहती हैं (चित्र 16.14 D)। प्रत्येक ज़ाइलम भुजा के केन्द्र में एक अथवा दो अनुदारु तत्व तथा दोनो ओर कुछ आदिदारु तत्व होते हैं। इसका वल्कुट, तने के वल्कुट के समान होता है तथा थल तथा जलीय प्रकारों में भिन्न-भिन्न होता है।

जड़

मार्सीलिया की जड़ की अनुप्रस्थ काट में निम्नलिखित क्षेत्रों को देखा जा सकता है (चित्र 16.14 E, F) :

i) **बाह्यत्वचा** - यह संहत रूप से व्यवस्थित उभयोत्तल (biconvex) कोशिकाओं की बनी होती है जिसकी बाहरी भित्तियाँ मोटी होती हैं।

ii) **वल्कुट** - इसके बाह्य तथा आंतर वल्कुट में भिन्नता होती है। तने की तरह बाह्य वल्कुट बड़े वायु कोष्ठों का बना होता हैं जो वलय के रूप में व्यवस्थित रहते हैं तथा एक दूसरे से अनुदैर्ध्य विभाजिकाओं द्वारा अलग रहते हैं। आंतर वल्कुट संहत रूप से व्यवस्थित गोल कोशिकाओं का बना होता हैं जिनमें मांड (starch) होता है।

iii) **अंतस्त्वचा** - एक सुस्पष्ट अंतस्त्वचा कोशिकाओं की एकल परत से बनती है।

iv) **रंभ**- यह आमतौर पर द्विआदिदारुक तथा बाह्यआदिदारुक होता है।

बोध प्रश्न 16.10

निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए :

i) *मार्सीलिया* एक .... फर्न हैं। परन्तु कुछ जातियाँ .... होती हैं।

ii) कुछ जातियाँ .... के लंबे काल को झेल लेती हैं।

iii) इसमें .... प्रकंद होता है, जो .... शाखित होता है।

iv) रंभ के .... में वायु कोष्ठ उपस्थित रहते हैं।

v) जलीय फर्न में दृढ़ोतक अधिकांशत: कायिक अंगों में .... होते हैं।

16.6 भारत में टेरिडोफाइट्स का वितरण

आइए अब संक्षेप में अपने देश में टेरिडोफाइट्स के वितरण के विषय में पढ़ें। भारत में, 191 वंश, 10 फर्न संबन्धी तथा 181 फर्न के वंश जो 67 कुलों (families) के हैं, पाये जाते हैं। निम्नलिखित फर्नों के प्रभावी कुल हैं। इनके वंशो की संख्या कोष्ठक में दी गई है:

(i)	पोलीपोडिएसी	(Polypodiaceae)	(27)
(ii)	थेलिप्टिरीडेसी	(Thelypteridaceae)	(21)
(iii)	ऐथिरिएसी	(Athyriaceae)	(14)
(iv)	हाइमीनोफाइलेसी	(Hymenophyllaceae)	(10)
(v)	हेमीऑनीटिडेसी	(Hemionitidaceae)	(6)

भारत में पाई जाने वाली *टेरिस* की जातियां हैं *टेरिस विटाटा* *टेरिस क्रिटिका* (*P. cretica*), *टेरिस बाइऑरिएटा* (*P. biauriata*), *टेरिस क्वाड्रीऑरिएटा* (*P. quadriauriata*) तथा *टेरिस वैलिशिआना* (*P. wallichiana*) । *टेरिस विटाटा* निम्न सतह पर पाए या जाने वाला फर्न हैं। तथा इसमें वर्ष भर नई पत्तियां आती रहती हैं। यह पहाड़ों की भित्तियों पर काफी पाया जाता है तथा समुद्र तल से 1200 मी. की ऊँचाई तक उगता है। *टेरिस क्वाड्रीऑरिएटा* पूरे उत्तर पश्चिमी हिमालय में सड़कों के किनारे तथा घाटी में बहुतायत में पाया जाता है। *टेरिस क्रिटिका* समुद्र तल के ऊपर 1200 से 2400 मीटर की ऊँचाई पर बेहतर उगता है।

निम्नलिखित कुछ प्रचलित वंश है तथा उनके निवास स्थान हैं जहां वे बहुत अधिक संख्या में पाये जाते हैं :

साईलोटम : यह उष्ण तथा उपोष्ण क्षेत्रों में विस्तृत रूप से पाया जाता हैं। यह या तो ह्यूमस (humous) पर सीधा उगता है अथवा अधिपादपी हो सकता है। यह पंचमढ़ी (म.प्र.) में बहुत पाया जाता है।

लाइकोपोडियम : यह पूरे भारत में उष्ण तथा शीतोष्ण प्रदेशों में पाया जाता है, परन्तु पहाड़ों पर यह अधिक पाया जाता है।

सैलाजिनेला: *लाइकोपोडियम* की ही तरह, यह उष्ण तथा शीतोष्ण क्षेत्रों में पाया जाता है परन्तु यह उष्ण वर्षा प्रचुर वनों में अधिक पाया जाता है जहाँ रोशनी कम होती है। यह भारत के अपेक्षाकृत गर्म मैदानों में भी पाया जाता है।

आइसोइटीज : यह भारतीय तटों पर सभी जगह तथा अन्दरूनी प्रदेशों में भी पाया जाता है। *आइसोइटीज कोरोमेन्डेलिआना* (*I. coromandeliana*) सबसे अधिक प्रचलित जाति है। यह दक्षिण भारत, बंगाल, उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश में उगती हैं।

एक्वीसीटम: *एक्वीसीटम डिबाइल* (*E. debile*) बालुई तथा दलदली मिट्टी में नदियों के किनारों पर उगता है तथा गंगा के मैदानों में भी पाया जाता है।

टेरीडियम : यह भारत में समूचे हिमालयी पथ में वितरित है तथा 1000 से 3000 मीटर की ऊंचाई के बीच भलीप्रकार से उगता है।

टेरिस : यह उष्ण तथा उपोष्ण भागों में 2400 मीटर तक की ऊंचाई पर उगता है। यह उत्तर-पश्चिमी हिमालय में काफी अधिक है।

मार्सीलिया : यह जलीय फर्न भारत में सभी जगह उगता है। *मार्सीलिया माइन्यूटा* (*M. minuta*) सबसे अधिक प्रचलित जाति है।

साऐथिया : यह पूर्वी भारत में, दार्जिलिंग तथा सिक्किम में पहाड़ी रास्तों पर पाया जाता है।

पौधे के आवास स्थान, प्रकृति तथा वास्तविक माप के बारे में बेहतर अंदाजा लगाने के लिए इन पौधों को प्रकृति में देखिए। भाग्यवश, टेरिडोफाइट्स हमारे देश के कुछ भागों में बहुतायत में पाये जाते हैं।

बोध प्रश्न 16.11

कॉलम अ में दिए गए टेरिडोफाइट्स के नामों को कॉलम ब में दिए गए उन स्थानों से मिलाइये जहां वे उगते हैं।

कॉलम अ	कॉलम ब
i) *साऐथिया*	अ) उष्ण तथा उपोष्ण क्षेत्र, अधिपादप भी हो सकते हैं।
ii) *एक्वीसीटम*	ब) उष्ण से शीतोष्ण प्रदेश, परन्तु पहाड़ों में अधिक पाये जाते हैं।
iii) *आइसोइटीज*	स) उष्ण से शीतोष्ण क्षेत्र, परन्तु उष्ण वर्षा-प्रचुर वनों में अधिक पाये जाते हैं।
iv) *लाइकोपोडियम*	द) भारतीय सभी तटीय क्षेत्रों में।
v) *सैलाजिनेला*	त) बालुई तथा दलदली मिट्टी में नदियों के किनारें पर।
vi) *साईलोटम*	थ) पूर्वी भारत में बहुतायत में, दार्जिलिंग, सिक्किम।

बॉक्स आइटम 5

फर्नों को निम्नलिखित प्रकार से प्रवर्धित (propagate) किया जा सकता है :

(i) बीजाणुओं से
(ii) अनुशिखर (crown) के विभाजन से
(iii) प्रकंदों (rhizomes) के कर्तन से
(iv) उपरिभूस्तारियों (runners) से
(v) अपस्थानिक अंत भूस्तारियों (suckers) से
(vi) पत्र प्रकलिकाओं (bulbils) से

बीजाणुओं द्वारा फर्नों को उगाने के लिए, बीजाणुधानी पुंजों युक्त उर्वर प्रपर्णों (fertile fronds) को टुकड़ों में काट दिया जाता है। इन्हें गर्म कक्षों में कागज के थैलों में परिपक्व होने के लिए रख दिया जाता है। बीजाणुधानी के स्फुटन के पश्चात् बीजाणुओं को एकत्रित कर लिया जाता है और उन्हें तसलों में बहुत ही नम, बंध्य पीट (sterile peat) अथवा ह्यूमस मिट्टी (humus soil) पर बोया जाता है। बोने के बाद उनमें सीधे पानी नहीं डाला जाता है बल्कि उन्हें काँच के तसले से 2 से 3 सप्ताह के लिए ढक दिया जाता है जब तक की संवर्ध (cultures) हरे नहीं हो जाते हैं। तापमान 21° से 30°C के मध्य रखा जाता है। अधिक उच्च तापमान प्रोथैलसों (prothalli) पर प्रजनन अंगों के विकास को रोक देता है। निषेचन के लिए प्रोथैलस तथा आधार के मध्य जल की एक पतली सतह का होना आवश्यक होता है। तीन सप्ताह के पश्चात् थोड़ी सी हवा उसमें प्रवेश कराई जाती है। ये ध्यान रखा जाता है कि संवर्धों को निरन्तर नम रखा जाए, परन्तु कभी भी ज्यादा पानी नहीं होना चाहिए। नर तथा मादा प्रजनन अंगों के निर्माण के बाद व तत्पश्चात् प्रथम वास्तविक पर्णों युक्त विशिष्ट पादप (बीजाणु-उद्भिद्) के विकसित हो जाने पर सतह पर पानी डाला जाता है। जब पत्तियां पर्याप्त बड़ी हो जाती है। तब आपसी आधार प्रदान करने के लिए समूहों में प्रतिरोपण (transplanting) किया जाता है।

16.7 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा :

- टेरिडोफाइट्स आदिम, संवहनी, अ-पुष्पीय थल पादप हैं।
- ब्रायोफाइट्स की भाँति ही वे स्पष्ट रूप से पीढ़ियों का एकान्तरण दिखाते हैं परन्तु युग्मकोद्भिद् की जगह, बीजाणु-उद्भिद् जीवन चक्र की प्रभावी अवस्था है।
- जीवाश्म, विलुप्त पादपों के लिए प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। ये जीवाश्म चार प्रकार के होते हैं: अश्मीभूताश्म, कास्ट (पर्पटाश्म), मुद्राश्म तथा संपीडाश्म।
- सबसे प्राचीन थल पादप जैसे *राइनिया* तथा *कुकसोनिया* जड़ विहीन थे। उनके द्विभाजी शाखित वायवीय तनों पर अंतस्थ बीजाणुधानियाँ होती थीं। भूमिगत प्रकंद में मूलाभास के गुच्छे होते थे जो पौधे को स्थान पर स्थिर रखने का तथा अवचूषण का कार्य करते थे।
- सबसे प्राचीन जीवित थल पादपों में एक ही वंश *साईलोटम* है, जो आदिम लक्षण दर्शाता है इसका बीजाणु-उद्भिद् द्विभाजी शाखित, जड़ विहीन, शल्क जैसी पत्तियों वाला तथा अंतस्थ त्रि-कोष्ठकी बीजाणुधानियों वाला होता है। रंभ ठोसरंभी होता है।
- *लाइकोपोडियम* घने रूप से लघुपर्णों से आच्छादित रहता है। यह भी ठोसरंभी होता है। जड़ें राइजोफ़ोर से निकलती हैं तथा द्वि-आदिदारुक होती हैं।

- *सैलाजिनेला* में मुख्य तना शयान, अर्ध-स्तर अथवा सीधा तथा शखित अथवा अशाखित हो सकता है। इस पर लघुपर्ण होते हैं जो तने पर सर्पिल रूप से व्यवस्थित होते हैं तथा जीभिकाकार यानि लिग्युलेट होते हैं। तने में रंभ ठोसरंभी अथवा नालरंभी व बाह्यआदिदारुक होता है जो वल्कुट से ट्रैबीक्यूला संबन्धक की सहायता से जुड़ा रहता है। जड़ें एकआदिदारुक होती हैं।

- *एक्वीसीटम* सीधा, शाकीय, बहुवर्षी पौधा है। तने में पर्वसंधि तथा पर्व होते हैं। पर्वसधियों पर पत्तियाँ आच्छद बनाने के लिए पार्श्व में जुड़ी रहती हैं तथा चक्रों में व्यवस्थित रहती हैं। अपस्थानिक जड़ें तने के आधार से विकसित होती हैं। रंभ बर्हिफ्लोएमी नालरंभ होता है। जिसमें पर्वसंधीय छल्ले होते हैं। तने का शारीर शुष्कतानुकूलित तथा जलानुकूलित लक्षणों का संयोजन दर्शाता है। संवहनी बंडल संपार्श्विक (collateral) होते हैं तथा प्रत्येक में कूटकी कैनाल होती हैं। वल्कुट में वैलैकुली गुहाएं उपस्थित रहती हैं, प्रत्येक खाँचे के साथ संगत होती है। शंकु अथवा स्ट्रोबिलाइ एकल रूप से उर्वक प्ररोह के सिरों पर स्थित रहते हैं।

- *टेरिस* में विसर्पी प्रकंद होता है जिसपर शल्क अथवा शाखित रोम होते हैं। पादप प्रमुख रूप से पिच्छाकारी संयुक्त अथवा अंगुल्याकार पत्तियों द्वारा पहचाना जाता है। रंभीय संगठन जाति पर निर्भर हुए ठोसरंभ से लेकर जालरंभ तक भिन्न हो सकता है। जड़ द्वि-आदिदारुक होती है। बीजाणुधनियाँ आमतौर पर बीजाणुधानी पुंज में समूहित रहती है।

- *साऐथिया* एक वृक्षफर्न है। तना मजबूत स्तंभ होता है जिस पर सर्पिल रूप में व्यवस्थित बड़ी पिच्छक पत्तियों का मुकुट होता है। तने में बहुचक्रीय जालरंभ पाया जाता है।

- *मार्सीलिया* एक जलीय फर्न है। तना प्रकंदीय भूस्तारी होता है जिसमें सुस्पष्ट पर्वसंधियाँ तथा पर्व होते हैं। पर्वसंधियों पर उत्पन्न होने वाली पत्तियाँ लंबी, वृंतीय होती हैं तथा उनमें चार पर्णक होते हैं। अपस्थानिक जड़ें पर्वसंधियों पर प्रकंद की निचली सतह पर उगती हैं। रंभ उभयफ्लोएमी नालरंभ होता है। वल्कुट में सुस्पष्ट वायु अवकाश होते हैं। बीजाणु विशिष्ट संरचनाओं में उत्पन्न होते हैं। जिन्हें बीजाणु फलिका कहते हैं।

- हमारे देश में टेरिडोफाइट्स बहुलता में पाए जाते हैं और पहाड़ी इलाकों पर ये ज्यादा आम होते हैं।

16.8 अंत में कुछ प्रश्न

1. टेरिडोफाइट्स के प्रारूपिक जीवन चक्र का वर्णन कीजिए तथा उसकी ब्रायोफाइट्स के जीवन चक्र से तुलना कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

2. टेरिडोफाइट्स के विशिष्ट लक्षणों को सूचीबद्ध कीजिए।

....

....

....

....

....

....

3. कॉलम 1 में दी गई तने की विशेषताओं को कॉलम 2 में दिए गए वंशों से मिलाइए।

कालम 1	कॉलम 2
i) ठोसरंभ	अ) *टेरिस*
ii) बहुचक्रीय जालरंभ	ब) *मार्सीलिया*
iii) वैलैकुली कैनाल	स) *सैलाजिनेला*
iv) वल्कुट में वायु गुहाएं	द) *एक्वीसीटम*
v) ट्रैबीक्यूला संबन्धक	त) *साईलोटम*

4. *साईलोटम, सैलाजिनेला* तथा *टेरिस* की संरचनात्मक विशेषताओं की तुलना कीजिए।

साईलोटम	*सैलाजिनेला*	*टेरिस*

16.9 उत्तर

बोध प्रश्न

16.1 i) स

ii) स

iii) अ (सिर्फ मादा युग्मद अचल होता है)

iv) अ (संवहनी पादप)

v) अ (बीजाणु-उद्भिद् प्रभावी अवस्था है)

16.2 अ) i) मृद् ग्रंथिका (clay nodule)

ii) बाह्य

iii) पर्पटाश्म

iv) अश्मीभूताश्म

ब) i) काष्ठीय भाग-जाइलोन (xylon)

ii) लघुबीजाणुधानी – प्रावरक, (थीका theca)

iii) शंकु - स्ट्रोबिलस (strobilus)

iv) फर्न जैसा - टेरिस (pteris)

v) बीज जैसी संरचना - कार्पोन (carpon)

16.3 अ) i) स्कॉटलैण्ड

ii) निम्न डिवोनी

iii) द्विभाजी शाखित

iv) ठोसरंभ

v) अनुपस्थित, उपस्थित।

ब) i) शीर्ष

ii) त्रि-अरीय

iii) अज्ञात

iv) अंतस्थ

स) i) वाहिनिकाओं के संवहनी तंतु।

ii) सीधा द्विभाजी शाखित तना।

16.4 अ) i) वास्तविक जड़ें अनुपस्थित होती हैं।

ii) मूलाभास स्थान पर स्थिर रखने तथा अवचूषण का कार्य करते हैं।

iii) वायवीय अक्ष, शल्क जैसे अनुबंधों से ढका रहता है। पत्तियाँ अनुपस्थित होती हैं।

iv) ठोसरंभ उपस्थित होता है।

v) जननक्षम उपांग होते हैं।

ब) i) अ ii) स iii) अ iv) अ v) स vi) स vii) स

16.5 i) स ii) अ iii) अ iv) स v) स vi) स

16.6 अ) i) पुनःप्रकटन ii) संरक्षित, अकार्बनिक लवणों

iii) राइजोफोर iv) ट्रैबीक्यूला (संबन्धक)

ब) मूलपाठ में देखिए

स) i) अ (अंतस्त्वचा), ii) स iii) स vi) अ v) स vi) स

16.7 अ) i) अ (बहुवर्षी)

ii) अ (पर्व संधियों के ऊपर आच्छद बना होता है)

iii) स

iv) स

v) अ

vi) अ (खाँचे के नीचे)

ब) संकेत : वैलैकुली कैनाल

कूटकी नाल

संवहनी बंडल।

स) मूलपाठ तथा शब्दावली में देखिए।

16.8 अ) i) विसर्पी, अर्ध-स्तर

ii) पिच्छाकारी संयुक्त, उत्कृष्ट सुस्पष्ट.

iii) ठोसरंभ, जालरंभ

iv) कुंडलित किसलय-विन्यास

v) शल्कों

16.9 i) वृक्ष

ii) पिच्छाकारी

iii) 3 से 4 बार, 25

iv) मुक्त द्विभाजी

v) शल्क तथा रोम

vi) बहुचक्रीय जालरंभ

vii) दृढ़ोतकी

viii) सहायक मज्जीय, सहायक वल्कुट

ix) पर्ण आधार

16.10 i) जल, स्थलीय

ii) सूखे

iii) विसर्पी, द्विभाजी रूप से

iv) अंतःवल्कुट

v) अनुपस्थित।

16.11 i) थ, ii) त, iii) द, iv) ब, v) स, vi) अ

अंत में कुछ प्रश्न

1. भाग 16.2 देखिए

2. भाग 16.3 देखिए

3. i) त, ii) अ, iii) द, iv) ब, v) स

4. मूल पाठ देखें।

इकाई 17 टेरिडोफाइट्स में प्रजनन का तुलनात्मक अध्ययन

इकाई की रूपरेखा

17.1 प्रस्तावना
उद्देश्य
17.2 टेरिडोफाइट्स में प्रजनन
राइनिया तथा साईलोटम (*Rhynia and Psilotum*)
लाइकोपोडियम (*Lycopodium*)
सैलाजिनेला (*Selaginella*)
एक्वीसीटम (*Equisetum*)
टेरिस (*Pteris*)
साएथिया (*Cyathea*)
मार्सीलिया (*Marsilea*)
17.3 कायिक प्रजनन
17.4 सारांश
17.5 अंत में कुछ प्रश्न
17.6 उत्तर

17.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आपने टेरिडोफाइट्स के विभिन्न वंशों की आकारिकी का अध्ययन किया था। इस इकाई में आप उनमें प्रजनन के तरीकों के बारे में पढ़ेंगे। जैसा कि आप जानते हैं, पादपों में प्रजनन के दो प्रमुख तरीके होते हैं : अलैंगिक तथा लैंगिक। सरल निम्न पादपों में, प्रत्येक कोशिका प्रजनन कोशिका की तरह कार्य करती है। जबकि, उच्च पादपों में प्रजनन कोशिकाएं बहुत ही जटिल विशिष्ट संरचनाओं में उत्पन्न होती हैं जो कि विशेष तौर पर प्रजनन के लिए अलग से निश्चित रहती हैं। इन संरचनाओं की आकारिकी, स्थिति तथा विकास पादपों के विभिन्न समूहों में भिन्न होता है तथा ये वर्गीकरण के लिए आधार का कार्य करते हैं।

इस इकाई में आप बीजाणु उत्पन्न करने वाली संरचनाओं, युग्मकोद्भिद, लैंगिक अंगों, नर तथा मादा युग्मकों व साथ ही साथ टेरिडोफाइट्स के कुछ चुने हुए वंशों में बीजाणु-उद्भिद् के विकास के बारे में पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- टेरिडोफाइट्स के प्रजनन अंगों की सामान्य विशेषताओं को सूचीबद्ध कर सकेंगे,
- टेरिडोफाइट्स के विभिन्न समूहों में बीजाणु उत्पन्न करने वाले अंगों की संरचना तथा विकास का वर्णन कर सकेंगे,
- टेरिडोफाइट्स के विभिन्न समूहों में लैंगिक अंगों की संरचना तथा विकास की तुलना कर सकेंगे,
- विभिन्न टैक्सा (texa) में कायिक प्रजनन के तरीकों को बता सकेंगे।

17.2 टेरिडोफाइट्स में प्रजनन

इस पाठ में आप टेरिडोफाइट्स के कुछ प्रतिनिधि समूहों में प्रजनन अंगों की संरचना तथा प्रजनन की प्रक्रिया के बारे में विस्तार से पढ़ेंगें। पाठ को पढ़ते समय विभिन्न समूहों में समानताओं तथा भिन्नताओं पर ध्यान देने का प्रयास कीजिएगा।

17.2.1 *राइनिया तथा साईलोटम*

पिछली इकाई में आपने जीवाश्म टेरिडोफाइट *राइनिया* की आकारिकी के बारे में पढ़ा है। आपने यह भी पढ़ा है कि कुछ जीवाश्मों के नमूने इंगित करते हैं कि वायवीय शाखाओं के सिरे अंडाकार अथवा हल्की सी बेलनाकार संरचनाओं के रूप में विकसित हुए जिनका व्यास कक्षांतरकारी (sudtending) शाखा के सिरे से कुछ ज्यादा है। चूंकि इन संरचनाओं में बीजाणु हैं इन्हें बीजाणुधानी कहते हैं। (चित्र 17.1 A)। बीजाणुधानी दूरस्थ क्षेत्र में कुछ नुकीली होती हैं परंतु आधार पर कुछ चौड़ाई में शाखा के सिरे से जुड़ी रहती हैं। इसकी भित्ति मोटी होती है (चित्र 17.1 B, 17.2 A) तथा यह तीन सुस्पष्ट परतों की बनी होती है : (क) एक मजबूत सबसे बाहर की परत, जो क्यूटिकल युक्त कोशिकाओं की बनी होती है; (ख) मध्य परत लगभग तीन कोशिकीय मोटाई की होती है और इनकी कोशिकाओं की भित्ति पतली होती है; तथा (ग) सबसे भीतरी परत छोटी कोशिकाओं की बनी होती है जो विकासशील बीजाणुओं को पोषण प्रदान करती है। यह परत टेपीटम (tapetum) कहलाती है। बीजाणुधानी की गुहा के अंदर बीजाणु उपस्थित रहते हैं। सभी बीजाणु संरचना में समान होते हैं। वे मोटी-भित्ति वाले होते हैं तथा उनमें विशिष्ट त्रि-अरीय निशान होते हैं। कुछ नमूनों में बीजाणु चतुष्टकों (चार बीजाणुओं का समूह) में संयुक्त होते हैं जो यह सुझाते हैं कि ये अर्धसूत्री विभाजन के द्वारा निर्मित हुए थे तथा वे पौधे जिन पर वे लगे पाये गये, वो बीजाणु-उद्भिद् पीढ़ी को प्रदर्शित करते हैं। बीजाणुधानी में स्फुटन तथा बीजाणुओं के परिक्षेपण(dispersal) के लिए कोई विशेष युक्ति नहीं पाई गई।

जैसा कि आप जानते हैं कि बीजाणु अगुणित होते हैं तथा अंकुरित होने पर वे युग्मकोद्भिदों को उत्पन्न करते हैं। चूंकि हमारे पास *राइनिया* के युग्मकोद्भिद् के जीवाश्म नहीं हैं अतः उसकी संरचना के बारे में सही तौर पर कोई भी अनुमान नहीं लगाया जा सकता। हालांकि अंकुरित होते बीजाणु भी राइनी चर्ट (Rhynie Chert) में पाये गए जो *राइनिया* के बीजाणुओं से बहुत कुछ मिलते जुलते प्रतीत होते हैं। यह भी रिपोर्ट किया गया है कि उनमें से कुछ में जनन नलिका (germtube) के सिरे पर एक बहुकोशिकीय संरचना निर्मित हुई प्रतीत होती है।

साईलोटम में जोकि साइलोटोप्सिडा का जीवित सदस्य है, बीजाणुधानियाँ पत्तियों जैसे उपांगों पर उगती हैं (चित्र 17.1 C, D, 17.2 B)। ये जननक्षम-पत्तियाँ अधिक तेजी से उगने वाले वायवीय प्ररोह के दूरस्थ भाग पर उगती हैं। जननक्षम उपांग द्विशाखित होते हैं। प्रत्येक फलन (fructification) में तीन कोष्ठ होते हैं तथा तीन संगलित बीजाणुधानियों के समूह को प्रदर्शित करते हैं इस समूह को संबीजाणुधानी (synangium) कहते हैं (चित्र 17.1 C, D) जो सुस्पष्ट विभाजक भित्तियाँ दर्शाते हैं। संबीजाणुधानियाँ माप में काफी बड़ी होती हैं तथा 2 से 3 मि.मी. व्यास की होती हैं। संबीजाणुधानी की अनुप्रस्थ काट को देखिए (चित्र 17.1 E)। संबीजाणुधानी में बीजाणुधानियों के विभाजक अथवा पटल (septum) दीर्घित कोशिकाओं के बने होते हैं।

पर्णिल (foliar), कायिक पर्णी उपांगों के विपरीत, संबीजाणुधानी लिए हुए उपांगों में संवहनी तंतु होते हैं। वायवीय तने के रंभ से एक एकल संवहनी अनुपथ जननक्षम उपांग (संबीजाणुधानी - लिए हुए पत्ती) में दाखिल होता है तथा यह तीन भागों में विभक्त हो जाता है और प्रत्येक बीजाणुधानी की ओर बढ़ जाता है।

बीजाणुधानी का विकास सुबीजाणुधानीय (eusporangiate) अथवा तनुबीजाणुधानीय (leptosporangiate) हो सकता है। सभी टेरिडोफाइट्स में बीजाणुधानी का निर्माण एक सतही

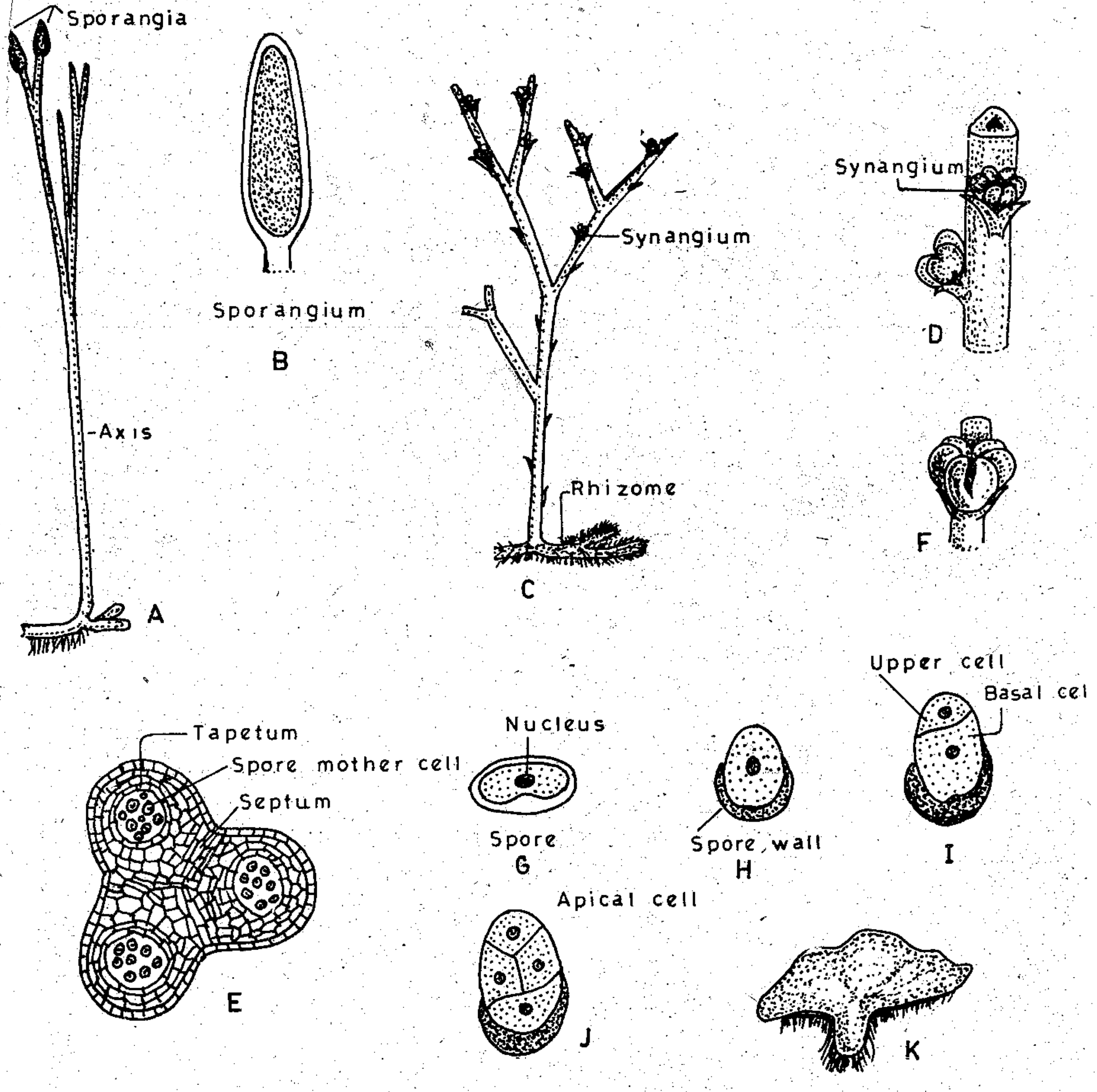

चित्र 17.1: A) अंतस्थ बीजाणुधानियों को दिखाता हुआ *राइनिया* का पादप, B) *राइनिया* की एकल बीजाणुधानी C-K) | *साईलोटम* : C) संबीजाणुधानी धारण किए हुए पादप, D) C का एक दीर्घीकृत भाग, E) 3 पालियों (lobes) को दर्शाती हुई संबीजाणुधानी की अनुप्रस्थ काट, F) बीजाणुधानी का स्फुटन, H से K) प्रोथैलस के विकास की अवस्थाएं।

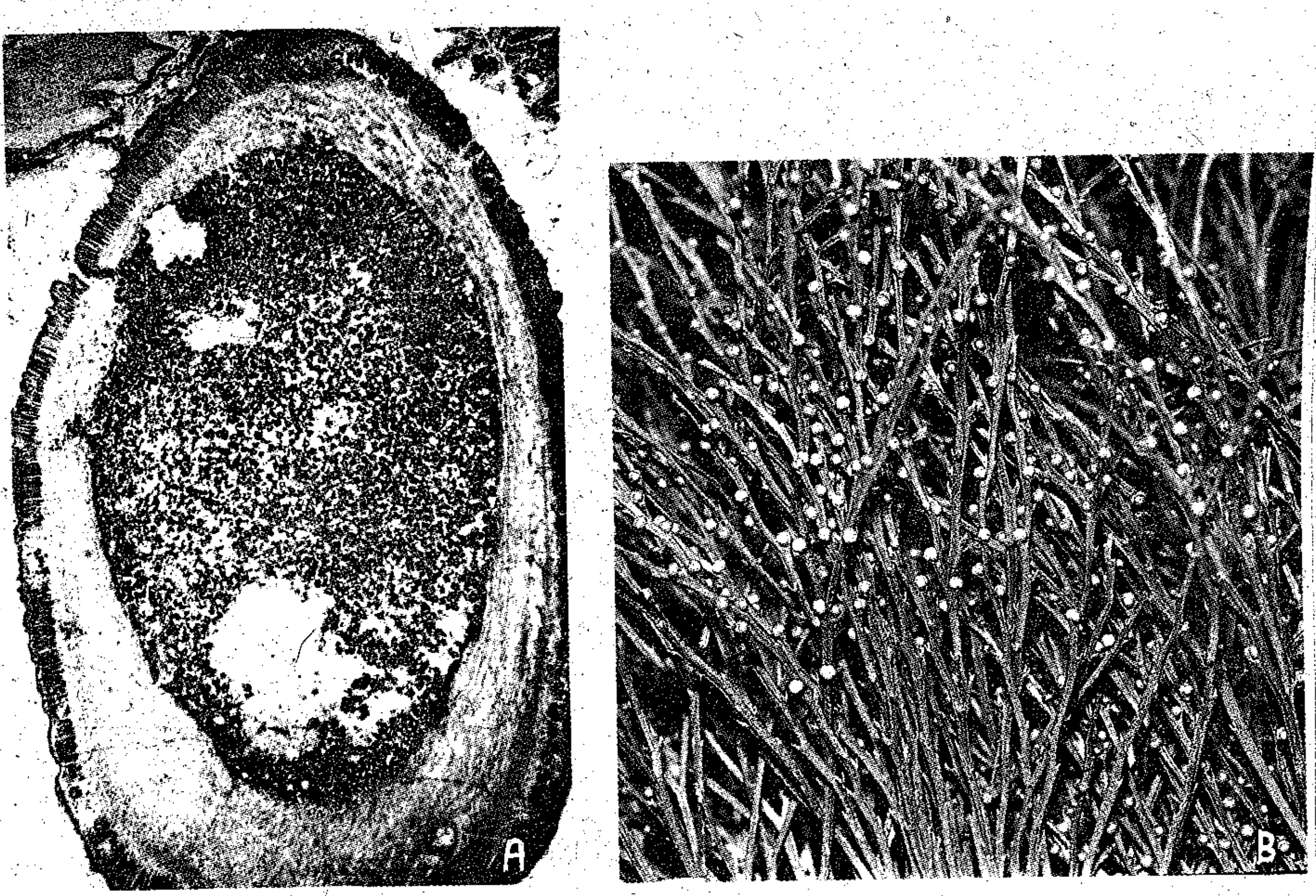

चित्र 17.2 : A) अनुप्रस्थ काट में *राइनिया* की बीजाणुधानी का चित्र, B) *साईलोटम न्यूडम (P. nudum)* बीजाणुधानियों के साथ, (पी. दयानंदन के सौजन्य से)।

बॉक्स आइटम 1

विभिन्न जातियों में बीजाणुधानी का विकास भिन्न-भिन्न प्रकार से होता है। यह सुबीजाणुधानीय प्रकार अथवा तनुबीजाणुधानीय प्रकार का हो सकता है।

इन दोनों प्रकारों के बीच में निम्नलिखित अंतर हैं:

सुबीजाणुधानीय प्रकार	तनुबीजाणुधानीय प्रकार
(क) बीजाणुजन ऊतक भीतरी संतति कोशिका से उत्पन्न होता है	(क) बीजाणुजन ऊतक बाहरी कोशिका से उत्पन्न होता है।
(ख) बीजाणुधानीय भित्ति तथा वृंत के निर्माण में निकटवर्ती कोशिकाएं सम्मिलित होती हैं	(ख) बीजाणुधानीय भित्ति, वृंत तथा बीजाणु बाहरी संतति कोशिका से उत्पन्न होते हैं।
(ग) बड़ी तथा स्थूल बीजाणुधानी	(ग) छोटी बीजाणुधानी
(घ) बहुपरतीय बीजाणुधानीय भित्ति	(घ) एक कोशिकीय मोटाई की बीजाणुधानीय भित्ति
(च) प्रति बीजाणुधानी में बहुत सारे बीजाणु	(च) प्रति बीजाणुधानी में कम संख्या में उत्पन्न बीजाणु

कोशिका अथवा कोशिकाओं के समूह में परिनतिक (periclinal) विभाजन के साथ आरंभ होता है। इसके परिणामस्वरूप एक बाहरी तथा एक भीतरी संतति कोशिका (daughter cell) का निर्माण होता है।

साईलोटम में बीजाणुधानी का विकास सुबीजाणुधानीय प्रकार का होता है। इस प्रकार में बीजाणुजन ऊतक भीतरी संतति कोशिका से उत्पन्न होता है, जबकि बीजाणुधानीय भित्ति तथा वृंत निकटवर्ती कोशिकाओं से बनते हैं। बीजाणु वृक्काकार होते हैं। वे सभी संरचना में समान होते हैं। जैकेट की बाह्यत्वचीय परत में कोशिका भित्तियाँ मोटी होती हैं सिवाय एक छोटी ऊर्ध्वाधर (vertical) कतार के जो कि परिपक्व बीजाणुधानी की भावी स्फुटन की रेखा होती है। आपको ध्यान होगा कि *राइनिया* में बीजाणुओं के परिक्षेपण के लिए बीजाणुधानी के स्फुटन की कोई युक्ति नहीं थी। *साईलोटम* में बीजाणुधानी का स्फुटन संबीजाणुधानी के केन्द्र से आरंभ होता है तथा निष्क्रिय एन्यूलस (annulus) की ओर बढ़ता है,जो स्फुटन की रेखा के सिरे पर मोटी-भित्तियों वाली कोशिकाओं के एक टुकड़े का बना होता है (चित्र 17.1 F)। बीजाणु चार महीने के पश्चात् अंकुरित होता है तथा प्रोथैलस बनाता है (चित्र 17.1 G-K)। जैसा कि आप पहले ही पढ़ चुके हैं कि टेरिडोफाइट्स में बीजाणु अंकुरित होने पर कोशिकाओं की एक पट्टिका बनाते हैं जो पृष्ठाधर (dorsi-ventral) होती है तथा जिस पर लैंगिक अंग लगे रहते हैं।

प्रोथैलस अंत:पादपी (endophytic) कवक के द्वारा वेधित रहता है। परिपक्व प्रोथैलस हल्के पीले से लेकर गहरे भूरे रंग का होता है। यह 0.5 से 2 मि.मी व्यास की तथा 1 से 18 मि.मी. लंबाई की तथा कुछ-कुछ बेलनाकार (cylindrical), भूमिगत (subterranean) तथा अरीय सममिति (radially symmetrical) की संरचना लिए है (चित्र 17.3 A)। प्राकृतिक रूप में, प्रोथैलस पत्थरों की दरारों में अथवा पेड़ों के तनों पर उगे हुए पाए जाते हैं। प्रोथैलस तीन काट मुखी पिरैमिडी शीर्ष कोशिका (apical cell with three cutting faces) के द्वारा उगता है तथा घने रूप से असंख्य गहरे भूरे कड़े रोम-जैसे मूलाभासों से ढका रहता है। अधिकांशत: प्रोथैलस रंगहीन तथा षट्कोणीय कोशिकाओं का बना होता है जिनमें बाहरी तथा अरीय भित्तियाँ बहुत अधिक क्यूटिनयुक्त होती हैं।

चतुर्गुणित (tetraploid) *साईलोटम न्यूडम* के प्रोथैलसों में केन्द्रीय संवहनी बेलन (central vascular cylinder) पाये जाते हैं (चित्र 17.3 B)। कभी-कभी, यह 1-3 वाहिनिकाओं वाला संपूर्ण रंभ होता है जो सब तरफ से फ्लोएम तथा अंतस्त्वचा द्वारा घिरा रहता है अथवा यह मात्र कुछ दीर्घित मोटी-भित्ति वाली कोशिकाओं द्वारा प्रतिरूपित होता है।

युग्मकोद्भिद् (प्रोथैलस) उभयलिंगाश्रयी (monoecious) होते हैं यानि दोनों तरह के लैंगिक अंग एक ही प्रोथैलस पर होते हैं। युग्मकधानियां (gametangia), — स्त्रीधानियां (archegonia) तथा पुंधानियां (antheridia) सतह पर बिखरे रहते हैं तथा परस्पर मिश्रित पाए जाते हैं (चित्र 17.3 A, B)। ये प्रोथैलस के शीर्ष भाग के किनारों से प्रकट होना आरंभ करते हैं। स्त्रीधानियों के अंडधा (venters) युग्मकोद्भिद् में धँसे रहते हैं तथा ग्रीवाएं प्रोथैलस की सतह के ऊपर निकली रहती हैं। परिपक्व स्त्रीधानी, ग्रीवा कोशिकाओं की चार अनुदैर्ध्य कतारों की बनी होती हैं और प्रत्येक कतार 4 से 6 कोशिकाओं की ऊंचाई की होती है (चित्र 17.3 C)। ग्रीवा में ग्रीवा नाल (neck canal) रहती हैं, जिसमें दो ग्रीवा नाल कोशिकाएं (neck canal cells) होती हैं। इसमें एक अंडधा नाल कोशिका (venter canal cell) तथा एक अंड कोशिका (egg cell) होती है। पुंधानी एक बड़ी सतही संरचना होती है जिसमें एक कोशिकीय मोटाई की जैकेट होती है। पुंधानी के विकास की अवस्थाओं को चित्र 17.3 D से J में देखा जा सकता है। प्रत्येक पुंधानी में सर्पिल रूप में कुंडलित असंख्य बहुकशाभी पुमणु यानि स्पर्मेटोजोइड्स (spermatozoids) रहते हैं (चित्र 17.3 K और L)।

जब स्त्रीधानी परिपक्व होती है तब ग्रीवा कोशिकाओं के ऊपरी घेरे (tier) के बीच की कोशिका की भित्तियाँ क्यूटिनीकृत हो जाती हैं तथा ग्रीवा का ऊपरी भाग टूट जाता है। इसके परिणामस्वरूप एक पथ बन जाता है जिससे होकर पुमणु स्त्रीधानी की ग्रीवा में प्रवेश करके अंडे तक पहुंचते हैं तथा उसे निषेचित करते हैं। जल्दी ही युग्मनज अनुप्रस्थ भित्ति द्वारा पहले एक ऊपरी कोशिका तथा एक निचली कोशिका में विभाजित हो जाता है। ऊपरी कोशिका प्ररोह तंत्र को जन्म देती है (प्रकंद तथा वायवीय

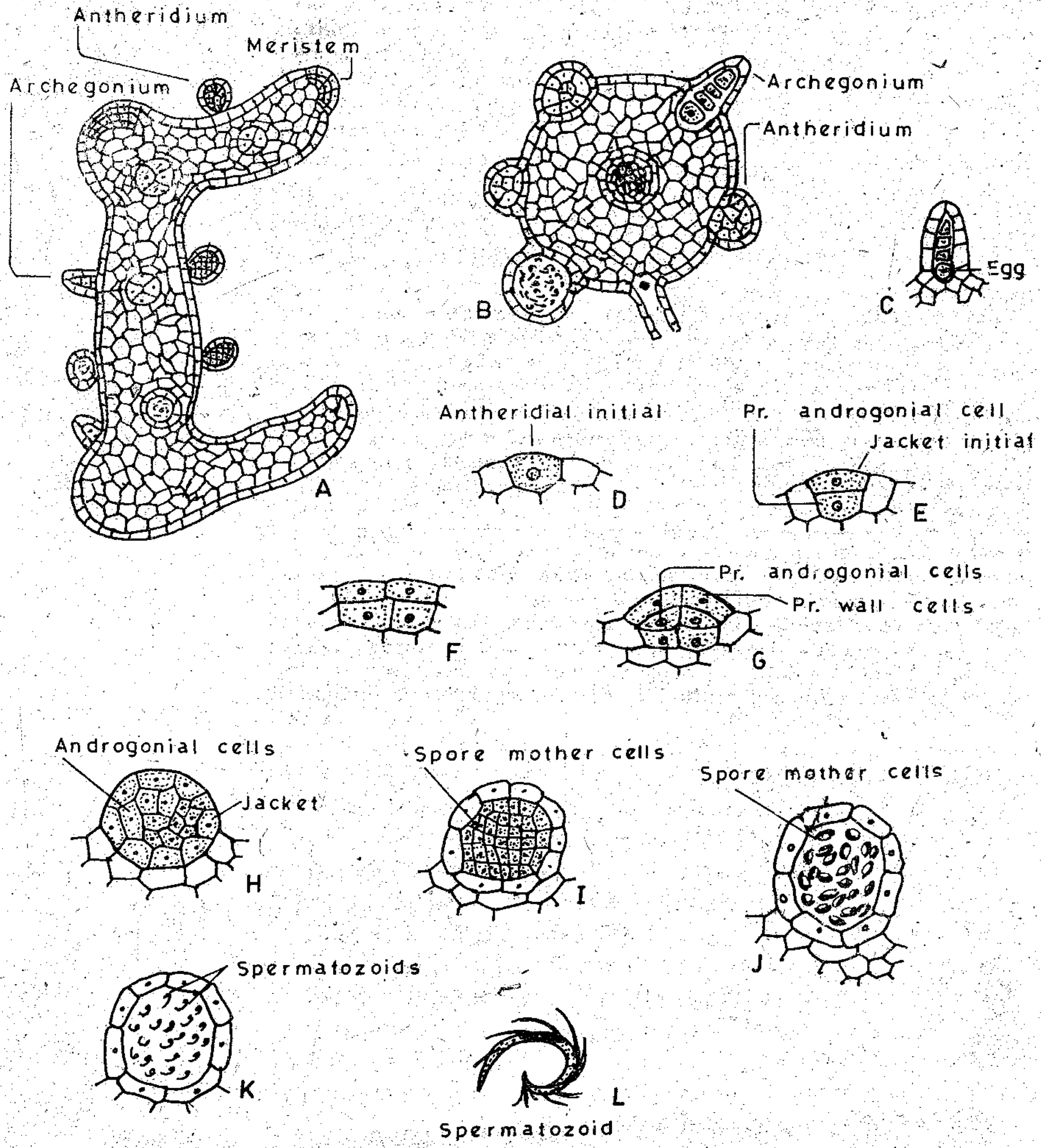

चित्र 17.3 : A) पुधानियों तथा स्त्रीधानियों के साथ *साईलोटम* का वयस्क युग्मकोद्भिद्, B) लैंगिक अंगों तथा केन्द्रीय संवहनी रज्जुक को दर्शाते हुए वयस्क युग्मकोद्भिद् की अनुप्रस्थ काट, C) वयस्क स्त्रीधानी, D-K) पुधानी के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, L) एक पुमणु।

शाखाओं दोनों को), जबकि निचली कोशिका के बार-बार विभाजनों के द्वारा कंदीय पाद का निर्माण होता है जो कि चूषकांगी होता है। यह बीजाणु-उद्भिद् को युग्मकोद्भिद् से बांधे रखता है तथा उससे तब तक पोषण तत्वों का चूषण करता है जब तक बीजाणु-उद्भिद् स्वतंत्र नहीं हो जाता। तरुण बीजाणु-उद्भिद् ऊर्ध्वाधर रूप से तीन-पक्षीय शीर्ष कोशिका की क्रिया द्वारा उगता है। तरुण प्ररोह में शीघ्र ही संवहनी ऊतक विकसित हो जाते हैं तथा यह भावी प्रकंद की भांति कार्य करता है। प्रकंद लंबाई में लगातार बढ़ता रहता है तथा उसका द्विभाजी शाखाओं में विभाजन होता रहता है। अंतस्थ शाखाओं के सिरे ऊपर की ओर मुड़ जाते हैं तथा वायवीय शाखाओं में विकसित हो जाते हैं ये शाखाएं ह्यूमस के बाहर आ जाती हैं तथा सतर रूप से बढ़ती हैं।

बोध प्रश्न 17.1

(अ) *राइनिया* के बारे में निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य हैं तथा कौन से असत्य हैं। सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) दिए गये कोष्ठकों में लिखिए।

i) *राइनिया* में बीजाणुधानियां पार्श्व में होती हैं। ☐

ii) बीजाणुधानीय भित्ति तीन परतों की होती है। ☐

iii) बीजाणुधानी में स्फुटन के लिए विशेष युक्ति पाई जाती हैं। ☐

iv) *राइनिया* में बीजाणुधानियां तीन के समूहों में पाई जाती है। ☐

(ब) *साईलोटम* के बारे में निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य हैं तथा कौन से असत्य हैं। सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) लिखिए।

i) *साईलोटम* में बीजाणुधानियाँ एकल तथा अंतस्थ स्थित होती हैं। ☐

ii) बीजाणुधानियाँ 4 कोष्ठीय होती हैं तथा संबीजाणुधानी कहलाती हैं। ☐

iii) बीजाणुधानी का विकास सुबीजाणुधानी प्रकार का होता है। ☐

iv) *साईलोटम* के प्रोथैलस के साथ एक अंत:पादपी कवक संयोजित रहता है। ☐

v) पुमणु सर्पिल रूप में कुंडलित तथा बहुकशाभीय होते हैं। ☐

(स) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) *साईलोटम* में तीन बीजाणुधानियों का समूह .... कहलाता है।

ii) *साईलोटम न्यूड्म* के प्रोथैलस में .... होती है जो फ्लोएम द्वारा घिरी रहती है।

iii) *साईलोटम* का युग्मकोद्भिद् .... होता है क्योंकि इसमें पुंधानी तथा स्त्रीधानी दोनों पाये जाते हैं।

iv) बीजाणुधानी की भित्ति की सबसे भीतरी परत, जो विकसित हो रहे बीजाणुओं को पोषण प्रदान करती है वह .... कहलाती है।

v) *राइनिया* के बीजाणुओं में .... निशान होते हैं।

17.2.2 *लाइकोपोडियम*

आइए अब यह अध्ययन करें कि *लाइकोपोडियम* में प्रजनन कैसे होता है।

प्रजनन अंगों का निर्माण

अभ्यक्ष सतह (Adaxial surface) पार्श्व प्ररोह अंग की वह सतह जो अंग को ऊर्ध्वाधर रखने पर अक्ष की ओर होती है (अक्ष के समानान्तर) यानि कि एक प्रारूपी पत्ती की ऊपरी सतह।

लाइकोपोडियम की अधिकांश जातियों में कायिक पत्तियों का क्रमिक परिवर्तन बीजाणुधानी लिए हुए पत्तियों में होता है जिन्हें बीजाणुपर्ण (sporophyll) कहते हैं। चित्र 17.4 A तथा 17.5 A को देखिए, बीजाणुपर्ण मुख्य अक्ष अथवा शाखाओं के दूरस्थ सिरों पर बनते हैं तथा शंकु अथवा स्ट्रोबिलाइ लिए रहते हैं।

प्रत्येक बीजाणुपर्ण की ऊपरी (अभ्यक्ष) सतह पर एक बीजाणुधानी निर्मित होती हैं (17.4 B, 17.5 B)। सभी बीजाणुधानियां समबीजाणुक होती हैं यानि कि वे सिर्फ एक ही प्रकार के बीजाणु निर्मित करती

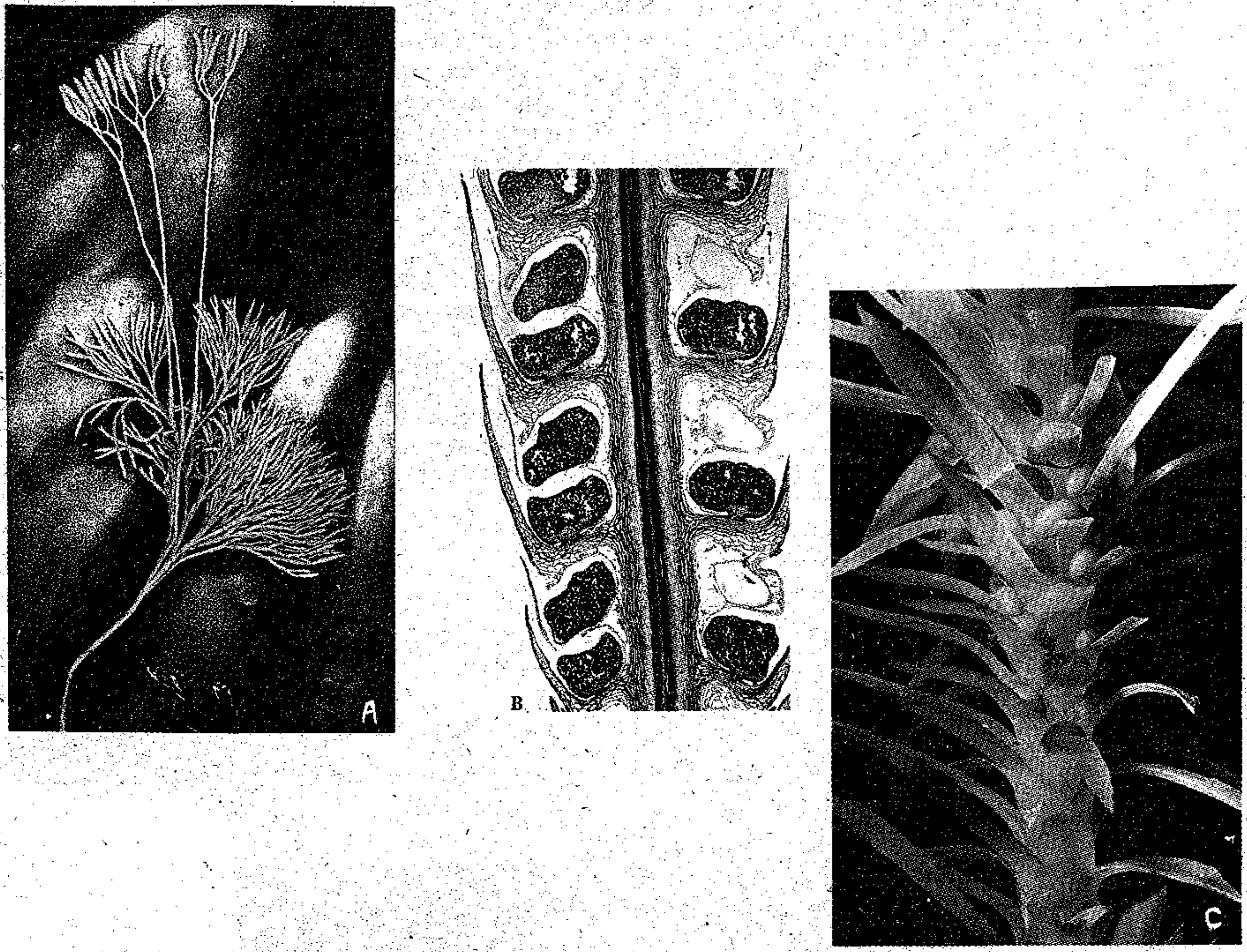

चित्र 17.4 : *लाइकोपोडियम* : A) शंकुओं के साथ पादप, B) शंकु की अनुदैर्ध्य काट, C) पर्ण अक्षों में बीजाणुधानियां (पी. दयानंदन के सौजन्य से)।

हैं। परिपक्व बीजाणुधानियां पीले से रंग की होती हैं तथा 1-2.5 मि.मी. व्यास की होती हैं। ये वृक्काकार से उपगोलाभ (subspherical) होती हैं तथा इनमें एक छोटा वृंत अथवा गद्दी जैसा (pad-like) आधार होता है (चित्र 17.5 C)। बीजाणु बीजाणुधानी की भित्ति में बनी हुई एक अनुप्रस्थ झिरी (slit) के जरिए निकलते हैं। यह झिरी बीजाणुपर्ण से अनुप्रस्थ दिशा में पतली-भित्तियों वाली कोशिकाओं की बनी होती है।

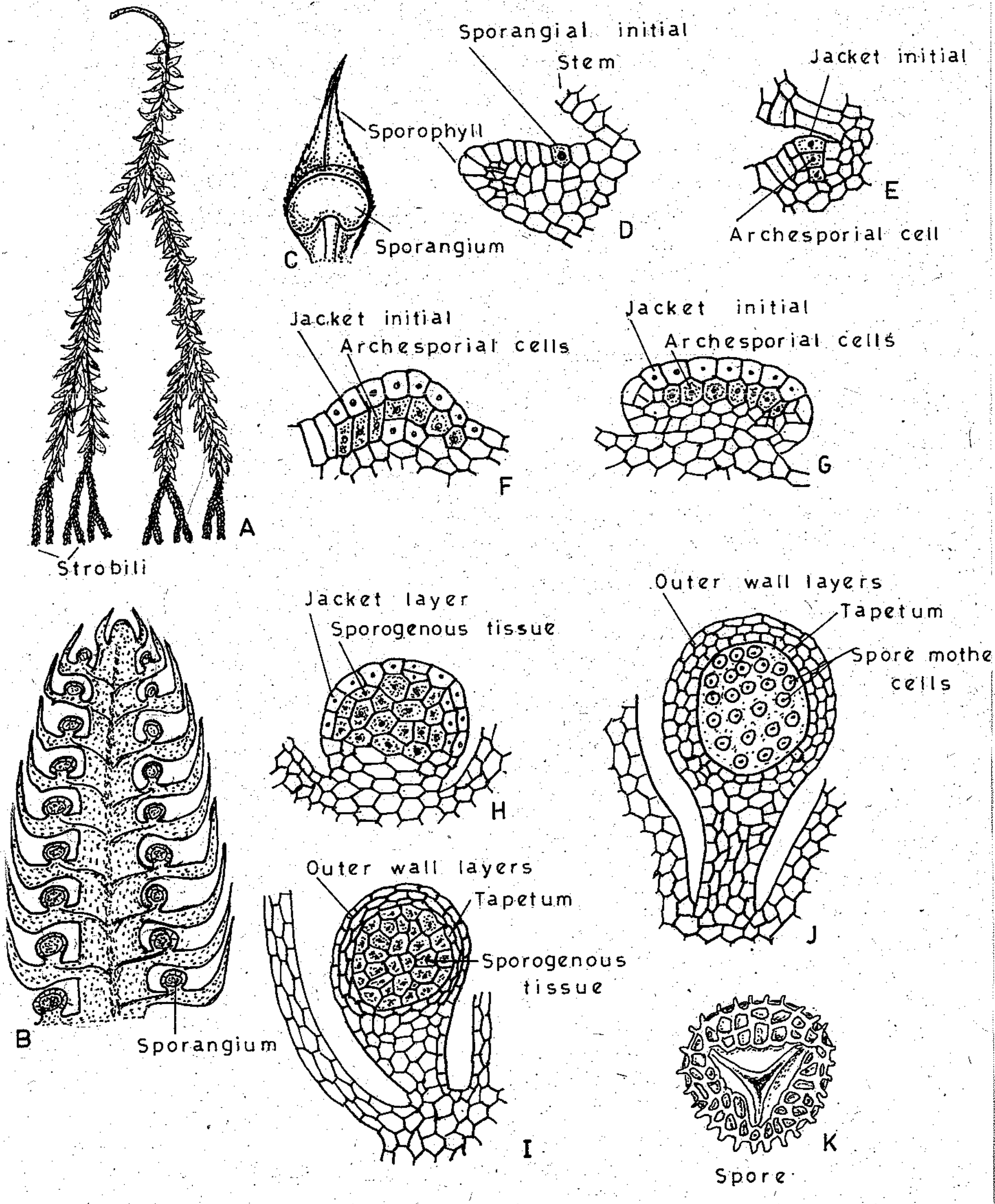

चित्र 17.5 : *लाइकोपोडियम* : A) शंकु को दिखाता हुआ पादप, B) शंकु की अनुदैर्ध्य काट, C) एक बीजाणुपर्ण, D से J) बीजाणुधानी के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, K) एक एकल बीजाणु।

बीजाणुधानी का विकास सुबीजाणुधानी प्रकार का होता है जैसे कि *साईलोटम* में। इसकी शुरुआत तरुण बीजाणुपर्ण की आमतौर पर ऊपरी सतह पर बहुत से बीजाणुधानी आरंभकों (sporangial initials) के प्रकट होने के साथ होती है। विकास की सभी अवस्थाओं को स्ट्रोबिलस की अनुदैर्ध्य काट में देखा जा सकता है (चित्र 17.5 B)। बीजाणुधानी आरंभकों का परिनतिक विभाजनों (periclinal divisions) के द्वारा कोशिकाओं की भीतरी तथा बाहरी परत में विभाजन होता है (चित्र 17.5 D-G)। भीतरी परत बीजाणुजन कोशिकाओं (sporogenous cells) को बनाती है तथा बाहरी परत बीजाणुधानी के वृंत को तथा उसकी भित्तियों को जन्म देती है (चित्र 17.5 H)। बीजाणुजन ऊतक (sporogenous tissue) में सक्रिय विभाजनों के होने के कारण बीजाणुधानी फूल जाती है तथा अंततः वृक्काकार आकृति में परिवर्तित हो जाती है। इसके बाद, सतही परत में परिनतिक विभाजनों के परिणामस्वरूप बहुत कोशिकीय मोटाई की बाहरी परत का निर्माण होता है (चित्र 17.5 I, J)। आप जानते हैं कि बीजाणुजन कोशिकाओं को घेरे हुए सबसे भीतरी परत टेपीटम कहलाती है। यह विकासशील बीजाणुओं को पोषण प्रदान करती है। इस परत का बीजाणुओं के परिपक्व होने के दौरान अपकर्षण (degenerate) हो जाता है। प्रत्येक बीजाणुधानी बहुत सारे बीजाणुओं को उत्पन्न करती है जो संरचनात्मक रूप से समान होते हैं। बीजाणु छोटे एवं हल्के होते हैं तथा उनकी भित्ति चिकनी अथवा अलंकृत होती है। उनमें त्रि-अरीय निशान पाये जाते हैं (चित्र 17.5 K)।

युग्मकोद्भिद् का विकास

युग्मकोद्भिद् का विकास वर्हिबीजाणु बहिश्चोल (exospore) के फटने के पहले ही अंकुरित हो रहे बीजाणु में अनुप्रस्थ विभाजन के साथ आरंभ होता है। जैसा कि चित्र 17.6 A में दिखाया गया है, इसके परिणामस्वरूप दो कोशिकाएं निर्मित होती हैं: आधार के निकट उभयोत्तल (biconvex) लैन्स के आकार की एक छोटी मूलाभासी कोशिका (rhizoidal cell) तथा एक बड़ी कोशिका। इस अवस्था के बाद बीजाणु व्यास में बढ़ता है तथा बीजाणु बहिश्चोल त्रि-अरीय निशान (triradiate mark) पर से फट जाती है। बड़ी कोशिका में एक ऊर्ध्वाधर अथवा तिरछा विभाजन होता है जिससे दो कोशिकाएं निर्मित होती हैं (चित्र 17.6 B)। मूलाभासी कोशिका की निकटवर्ती कोशिका आधारीय कोशिका (basal cell) बनाती है तथा उसमें आगे विभाजन नहीं होता है, जबकि दूसरी कोशिका दो उत्तरोत्तर विभाजन के द्वारा दो कर्तन मुखी (cutting faces) शीर्ष कोशिका बनाती है। आरंभिक विकास के दौरान परिपक्व बीजाणु में उपस्थित संचित खाद्य पदार्थ के द्वारा प्रोथैलस की वृद्धि होती है। आगे के विकास के लिए कवकमूली कवक का संयोजन आवश्यक होता है। कवक आधारी कोशिका में प्रवेश करता है तथा अंतःपादपी कवक मूल (endophytic mycorrhiza) का निर्माण करता है।

दो प्रकार के प्रोथैलस पाये जाते हैं: (i) सतह जीवी, हरे प्रोथैलस, तथा (ii) भूमिगत क्लोरोप्लास्ट रहित प्रोथैलस। पहले प्रकार के उष्ण क्षेत्रों की जातियों में अधिक पाये जाते हैं, जबकि दूसरे प्रकार के शीतोष्ण क्षेत्रों में अधिक संख्या में पाये जाते हैं। भूमिगत, रंगहीन प्रोथैलस वाली जातियों में, 5-कोशिकीय अवस्था तथा परिपक्व प्रोथैलस के बीच लगभग एक वर्ष का एक लंबा विश्रांति काल रहता है। चित्र 17.6 C में एक परिपक्व प्रोथैलस की संरचना को देखिए।

प्रोथैलस उभयलिंगाश्रयी होते हैं (चित्र 17.6 D)। प्रत्येक लैंगिक अंग शीर्ष विभज्योतक के ठीक पीछे उपस्थित एक सतही कोशिका (superficial cell) से विकसित होता है। पुंधानी तथा स्त्रीधानी के सुस्पष्ट क्षेत्र भूमिगत् प्रोथैलस के कोष्ठों में शीर्ष पर अथवा आधार में निर्मित होते हैं। दीर्घित प्रकार के प्रोथैलस में दोनों लैंगिक अंग परस्पर मिश्रित रहते हैं तथा केंद्रीय कुशन पर पाये जाते हैं। परिपक्व पुंधानी बहुत बड़ी संख्या में नाशपाती के आकार के द्विकशाभी पुमणु उत्पन्न करती है (चित्र 17.6 E, F) जो स्त्रीधानी के रिसाव द्वारा रसायन अनुचलनी रूप से (chemotactically) आकर्षित होते हैं। स्त्रीधानी के अंडधा प्रोथैलस में धंसे रहते हैं तथा सिर्फ उनकी ग्रीवाएं बाहर निकली रहती हैं। भूमिगत प्रोथैलसों में स्त्रीधानी में लंबी ग्रीवाएं होती हैं जबकि सतह पर रहने वाले प्रोथैलसों में ग्रीवाएं छोटी होती हैं। स्त्रीधानी के विकास की अवस्थाएं चित्र 17.6 G, H में दिखाई गई हैं।

निषेचन जल की उपस्थिति में होता है जो चल नर युग्मकों की गति के लिए आवश्यक होता है। निषेचन के पश्चात् निषेचित अंडे के ऊपर एक भित्ति विकसित हो जाती है। युग्मनज का प्रथम विभाजन स्त्रीधानी

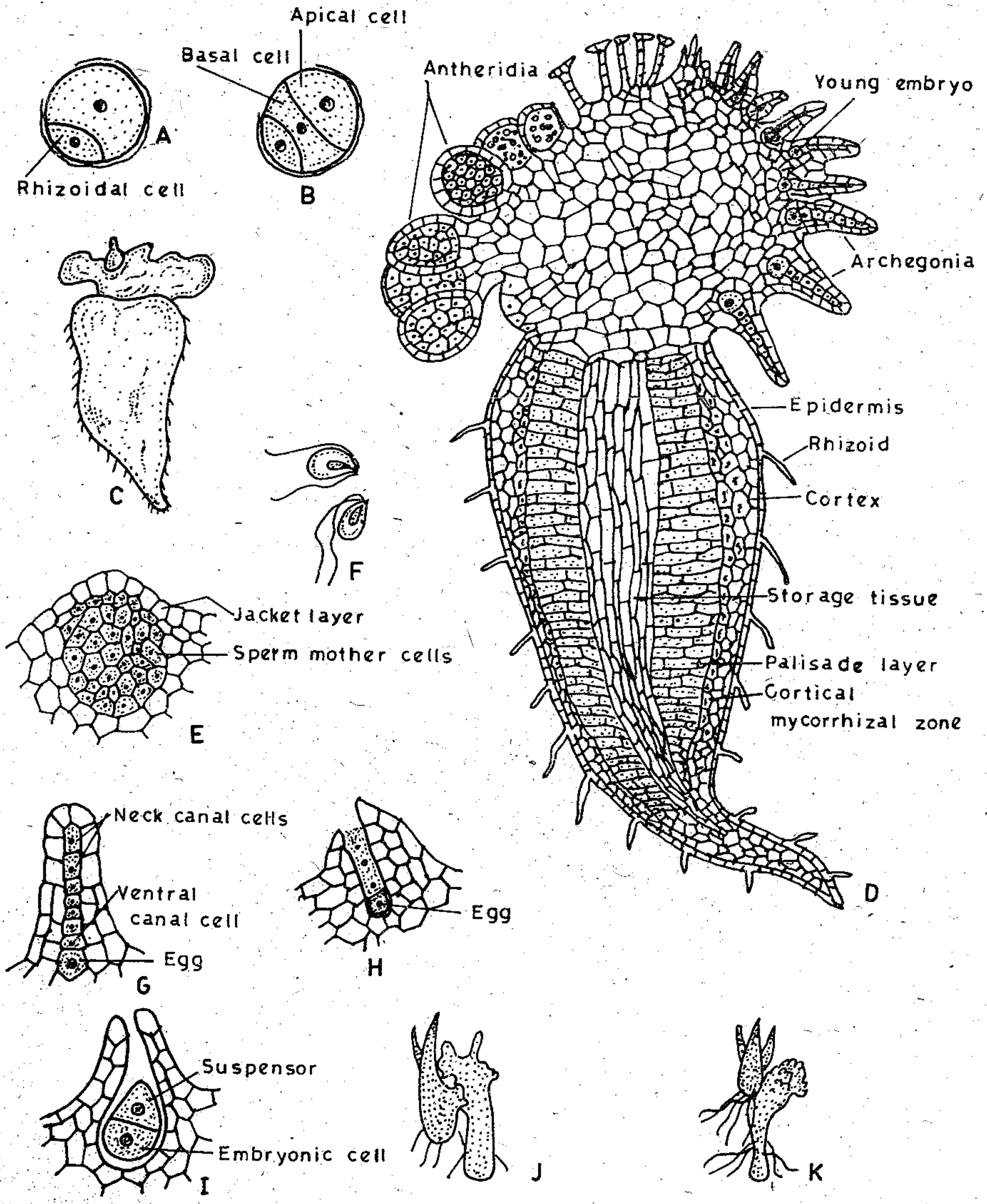

चित्र 17.6 : *लाइकोपोडियम* के विकास की अवस्थाएं : A) तथा B) बीजाणु में आरंभिक विभाजन, C) एक वयस्क प्रोथैलस, D) पुंधानी तथा स्त्रीधानी को दिखाती हुई वयस्क प्रोथैलस की अनुदैर्ध्य काट, E) मातृ कोशिकाओं से पुमणुओं का बनना, E) पुमणु, G) एक स्त्रीधानी, H) अंड को लिए हुए वयस्क स्त्रीधानी, I) युग्मनज का प्रथम विभाजन, J-K) पत्ती जैसी संरचनाओं को दिखाते हुऐ आदिघनकंद **(protocorm)**

के लंब अक्ष के अनुप्रस्थ होता है (चित्र 17.6 I)। ऊपरी कोशिका आमतौर पर विभाजित नहीं होती है तथा निलंबक (suspensor) बनाती है। निचली कोशिका आगे विभाजित होकर एक स्थूल गोलाभ संरचना बनाती है जिसे प्रोटोकॉर्म (आदिघनकंद) कहते हैं। यह युग्मकोद्भिद् से होकर अपनी राह बनाता है। प्रोटोकॉर्म में मूलाभास लगे रहते हैं (चित्र 17.6 J-K)। इसकी ऊपरी सतह से बहुत सारी पत्ती जैसी संवहनी संरचनाएं विभेदित होती हैं। इन संरचनाओं को प्रोटोफिल आदिपर्ण कहते हैं। इसके बाद प्रोटोकॉर्म में एक प्ररोह विभज्योतक का संगठन होता है। पहली जड़ तने के आधार से निकलती है।

आपने *लाइकोपोडियम* के लैंगिक अंगों तथा युग्मकोद्भिद् एवं बीजाणु-उद्भिद् के विकास के बारे में पढ़ लिया है, अब हम इसकी मुख्य विशेषताओं को सार रूप में प्रस्तुत करते हैं।

1. *लाइकोपोडियम* में प्रजनन संरचनाएं शंकु यानि कि स्ट्रोबिलस हैं।
2. प्रत्येक शंकु पास-पास व्यवस्थित बीजाणुपर्णों का बना होता है।
3. प्रत्येक बीजाणुपर्ण अभ्यक्ष में एक बड़ी वृक्काकार बीजाणुधानी लिए रहता है जिसमें वृंत होता है।
4. बीजाणुधानी का विकास सुबीजाणुधानी प्रकार का होता है।
5. बीजाणुधानी में बाहरी तीन अथवा अधिक परतें, भित्ति की होती हैं जो जैकेट निर्मित करती हैं। सबसे भीतर की परत टेपीटम, बीजाणुजन ऊतक को पोषण प्रदान करती है। बीजाणु ऊतक बीजाणु मातृ कोशिकाओं (spore mother cells) में विभेदित हो जाता है।
6. सभी बीजाणु एक जैसे होते हैं चतुष्क तथा उनमें त्रि-अरीय निशान होते हैं।
7. बीजाणु अंकुरित होने पर प्रोथैलस यानि कि युग्मकोद्भिद् बनाते हैं।
8. दोनों लैंगिक अंग एक ही युग्मकोद्भिद् पर विकसित होते हैं।
9. पुमणु द्विकशाभी होते हैं।
10. निषेचन के पश्चात् युग्मनज बनता है जो बीजाणुउद्भिद् में विकसित होता है।

बोध प्रश्न 17.2

निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए:

i. बीजाणुधानी धारण किए हुए पत्तियाँ .... कहलाती हैं।

ii. *लाइकोपोडियम* में बीजाणुपर्ण पुंजित होकर.................................... बनाते हैं।

iii. *लाइकोपोडियम* के प्रोथैलस ....तथा .... धारण किए रहते हैं।

iv. लैंगिक अंग प्रोथैलस की ....कोशिकाओं से विकसित होते हैं।

17.2.3 *सैलाजिनेला*

आपने ध्यान दिया होगा कि अब तक वर्णित किए गए टेरिडोफाइट्स में बीजाणुधानी में सिर्फ एक ही प्रकार के बीजाणु उत्पन्न होते हैं यानि कि, ये प्रकारें समबीजाणुक (homosporous) होती हैं। कुछ टेरिडोफाइट्स ऐसे हैं जिनमें दो भिन्न प्रकारों के बीजाणु उत्पन्न होते हैं। ये प्रकारें विषमबीजाणुक (heterosporous) कहलाती हैं। *सैलाजिनेला* इसी प्रकार का उदाहरण हैं। यह विषमबीजाणुकता (heterospory) दर्शाता है। इस भाग में आप इस वंश के बारे में पढ़ेगें । इकाई 18 में हम विषमबीजाणुकता के महत्व तथा बीज प्रकृति (seed habit) के विकास की चर्चा करेंगें।

सैलाजिनेला दो प्रकार की बीजाणुधानियाँ उत्पन्न करता है। बड़ी वाली गुरूबीजाणुधानी (megasporangium) कहलाती है तथा उसमें बड़े बीजाणु होते हैं जिन्हें गुरूबीजाणु (megaspore) (चित्र 17.7 A तथा B) कहते हैं। छोटी वाली लघुबीजाणुधानी (microsporangium) कहलाती हैं तथा वे छोटे बीजाणु उत्पन्न करती हैं, जिन्हें लघुबीजाणु (megaspore) कहते हैं (चित्र 17.7 C तथा D) बीजाणुधानी के प्रकार के अनुसार ही बीजाणुपर्ण गुरूबीजाणुपर्ण (megasporophyll) अथवा लघुबीजाणुपर्ण (microsporophyll) कहलाते हैं। *लाइकोपोडियम* की भांति ही बीजाणुपर्ण शंकु अथवा स्ट्रोबिलाइ बनाते हैं (चित्र 17.7 E तथा 17.8 A)। ये या तो मुख्य तने पर अथवा शाखाओं पर अंतस्थ स्थित होते हैं। स्ट्रोबिलस बहुत सुस्पष्ट नहीं होते हैं तथा बीजाणुपर्ण कायिक पत्तियों जैसे ही होते हैं। कुछ प्रकारों में लगातार विभज्योतकी क्रिया के कारण स्ट्रोबिलस के ऊपर कायिक पत्तियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। बीजाणुपर्ण हमेशा स्ट्रोबिलस के अक्ष पर सर्पिल रूप से व्यवस्थित रहते हैं, परंतु सर्पिल आमतौर पर इतने घने होते हैं कि बीजाणुपर्ण एक दूसरे के विपरीत युग्मों में तथा चार सुस्पष्ट उध्वार्धर कतारों में स्थित प्रतीत होते हैं। सामान्यतः गुरूबीजाणुपर्ण तथा लघुबीजाणुपर्ण एक ही स्ट्रोबिलस पर उगते हैं, गुरूबीजाणुपर्ण आधार पर तथा लघुबीजाणुपर्ण ऊपरी भाग में। कभी-कभी, दोनों प्रकार के बीजाणुपर्णों की दो-दो ऊर्ध्वाधर कतारें हो सकती हैं। कुछ जातियों में स्ट्रोबिलस या तो गुरूबीजाणुधानी अथवा लघुबीजाणुधानी उत्पन्न करते हैं परंतु दोनों प्रकारें एक ही पौधे पर पाई जाती हैं। *सैलाजिनेला सैलाजिनोइड्स (Selaginella selaginoides)* में आधारीय बीजाणुधानियां निष्क्रिय होती हैं।

सैलाजिनेला में बीजाणुधानियां वृक्काकार से लेकर अण्डाभ (ovoid) आकार की होती हैं तथा उनमें छोटे वृंत होते हैं। वे लिंग्यूल तथा बीजाणुपर्ण के आधार के बीच अभ्यक्ष (axial) सतह पर उगती हैं (चित्र 17.7 E)। परिपक्व होने पर बीजाणुधानियाँ लगभग अक्षीय (axillary) अवस्था में होती है। सामान्यतः गुरूबीजाणुधानियाँ लघुबीजाणुधानियों से बहुत बड़ी होती हैं। हालांकि कुछ जातियों में ये दोनों एक ही आमाप की होती हैं। लघुबीजाणुधानियाँ हल्की सी दीर्घित होती हैं। स्ट्रोबिलस की वृद्धि शीर्षस्थ होती है।

बीजाणुधानी का विकास सुबीजाणुधानीय प्रकार का होता है। बीजाणुधानी के विकास की विभिन्न अवस्थाओं को अनुदैर्ध्य काट में देखा जा सकता है (चित्र 17.7 E)।

बीजाणुधानी का विकास तने की उपत्वचीय कोशिकाओं के एक छोटे समूह से आरंभ होता है जो बीजाणुधानीय आरंभकों की तरह व्यवहार करती है (चित्र 17.7 F) तथा परिनतिक विभाजनों के द्वारा विभाजित होती हैं (चित्र 17.7 G)। बाहरी कोशिकाएं, भित्ति की परतें तथा टेपीटम बनाती हैं तथा भीतरी कोशिकाएं, पुनर्वर्ती विभाजनों के द्वारा बीजाणुजन ऊतक निर्मित करती हैं (चित्र 17.7 H-K)। बीजाणुजन ऊतक में अंतिम पीढ़ी की सभी बीजाणुजन कोशिकाएं सम्भाव्य (potential) बीजाणु कोशिकाएं (sporocytes) होती हैं। लघुबीजाणुधानी में अधिकांश बीजाणु कोशिकाएं लघुबीजाणु बनाती हैं तथा लगभग 10-20% बीजाणु कोशिकाओं का अपकर्षण जाता है तथा ये विकासशील बीजाणुओं को पोषण प्रदान करती हैं। इसके विपरीत, गुरूबीजाणुधानी में एक के अतिरिक्त सभी बीजाणु कोशिकाएं नष्ट हो जाती हैं। जीवित अथवा क्रियाशील बीजाणुकोशिका अर्धसूत्री विभाजन द्वारा विभाजित होती हैं तथा चार गुरूबीजाणु बनाती हैं। अपनी उत्तरजीविता के आधार पर, विभिन्न जातियों में गुरूबीजाणुधानी में भिन्न-भिन्न संख्या में (1-4) गुरूबीजाणु निर्मित होते हैं। *सैलाजिनेला सल्काटा* (*Selaginella sulcata*) में प्रति गुरूबीजाणुधानी में सिर्फ एक गुरूबीजाणु का निर्माण होता है। *सैलाजिनेला रूपेस्ट्रिस* (*Selaginella rupestris*) में प्रत्येक गुरूबीजाणुधानी में आमतौर पर दो गुरूबीजाणु होते हैं। कुछ जातियों में एक से अधिक क्रियाशील बीजाणु कोशिकाएं होती हैं जिसके परिणामस्वरूप बारह अथवा कभी कभी अधिक गुरूबीजाणु बन जाते हैं। हालांकि, दोनों प्रकार की बीजाणुधानियाँ एक ही पौधे पर पाई जाती है, परंतु किसी भी स्थिति में एक ही बीजाणुधानी दोनों प्रकार के बीजाणु उत्पन्न नहीं करती है। परिपक्व होने पर, लघुबीजाणुधानी तथा गुरूबीजाणुधानी दोनों ही वृत्तीय संरचनाएं होती हैं।

परिपक्व बीजाणुधानी में भित्ति त्रि-स्तरीय मोटाई की होती है। बाहरी परत आमतौर पर स्तंभाकार (columnar) कोशिकाओं की बनी होती है जिसमें क्लोरोफिल तब तक पाया जाता है जबतक कि बीजाणु

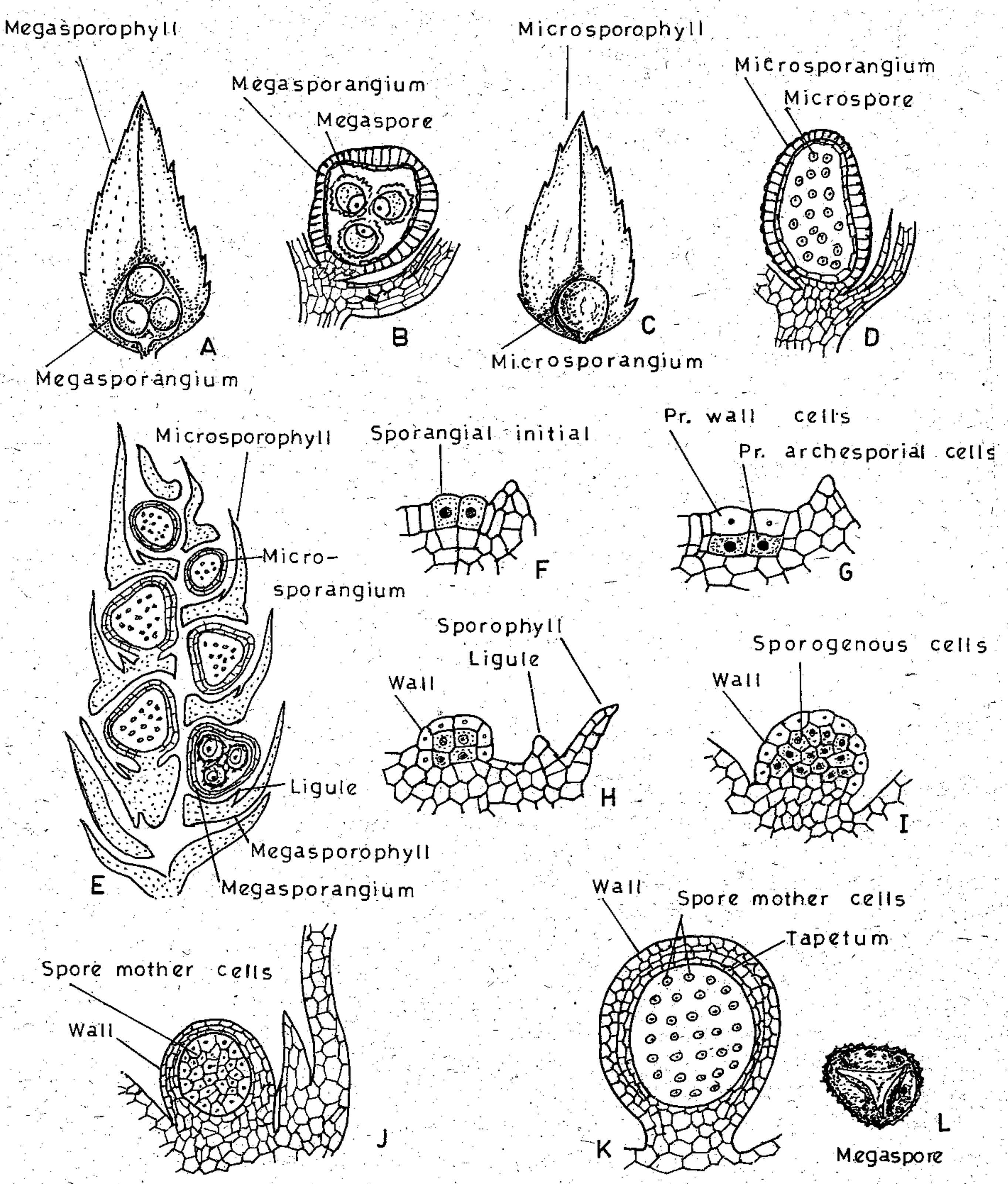

चित्र 17.7 : *सैलाजिनेला* : A) एक गुरुबीजाणुपर्ण, B) A की ऊर्ध्वाधर काट, C) लघुबीजाणुपर्ण, D) लघुबीजाणु की ऊर्ध्वाधर काट, E) बीजाणुधानी के विकास की विभिन्न अवस्थाओं को दिखाते हुए शंकु की ऊर्ध्वाधर काट, F) से K) बीजाणुधानी के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, L) एक गुरुबीजाणु।

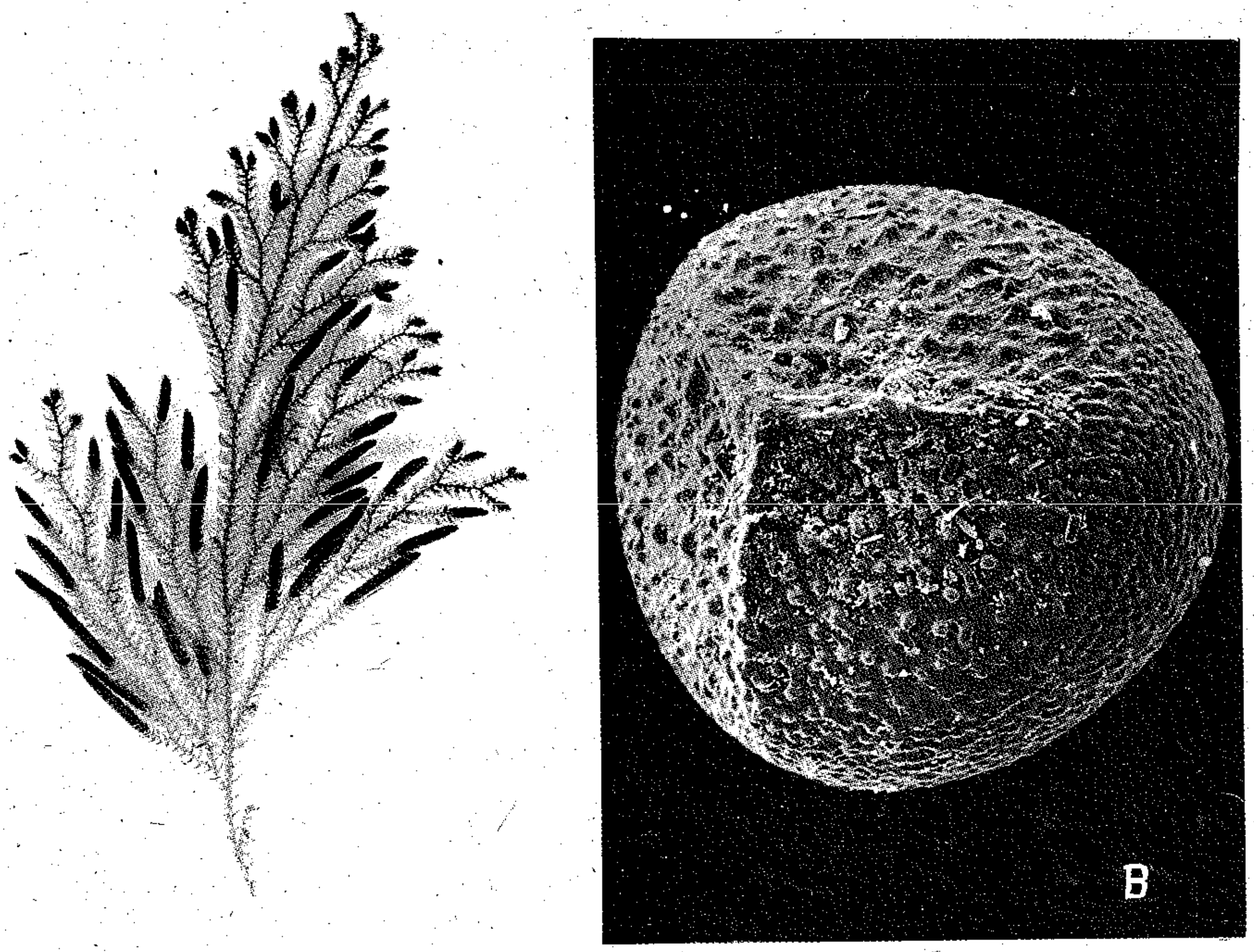

चित्र 17.8 : सैलाजिनेला : A) एक चित्र सुस्पष्ट शंकुओं को दिखाते हुए, B) दीर्घबीजाणु का एस. ई. एम. (SEM) (पी. दयानंदन के सौजन्य से)।

गिर नहीं जाते हैं। भीतरी परत चपटी कोशिकाओं की बनी होती है। टेपीटम सबसे भीतरी परत होती है। परिपक्व बीजाणुधानी में, सिर्फ सबसे बाहर की परत बची रहती है तथा बाकी की सारी प्रस्फुटन के पहले अपघटित हो जाती हैं। बीजाणुओं का परिक्षेपण बीजाणुधानी के शीर्ष भाग में स्फुटन के कारण संपन्न होता है। यह कोशिकाओं में आर्द्रताग्राही (hygroscopic) बदलावों के कारण होता है। *सैलाजिनेला रूपेस्ट्रिस* में हालांकि गुरूबीजाणुधानी का स्फुटन होता है, परंतु गुरूबीजाणु नहीं गिरते हैं। बीजाणु (लघु तथा गुरूबीजाणु) चतुष्फलकीय (tetrahedral) होते हैं एवं उनमें स्पष्ट त्रि-अरीय निशान तथा विशिष्ट अलंकरण पाया जाता है (चित्र 17.7 L)।

युग्मकोद्भिद् का विकास

सैलाजिनेला में बीजाणुओं के आमाप में अंतर उनके कार्य में अन्तर के साथ जुड़ा हुआ है। अंकुरण होने पर ये दोनों प्रकार के बीजाणु दो भिन्न प्रकार के प्रोथैलस उत्पन्न करते हैं। लघुबीजाणु (चित्र 17.9 A) लघुबीजाणु-उद्भिद् (microgametophyte) बनाते हैं तथा गुरूबीजाणु गुरूबीजाणुउद्भिद् (microgametophyte) बनाते हैं। विषमबीजाणुकता से युग्मकोद्भिद् के विकास का एक नया तरीका

जीवन चक्र में समाविष्ट होता है। युग्मकोद्भिद् बीजाणु भित्ति के भीतर बनते हैं यानि कि विकास अन्तर्मुखी अर्थात् अंत: बीजाणु (endosporic) होता है। बीजाणुओं में उनके परिक्षेपण से पहले ही केन्द्रकीय विभाजन आरंभ हो जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप बीजाणुओं के परिक्षेपण के समय युग्मकोद्भिद् विकास की विभिन्न अवस्थाओं में रहते हैं। मुक्त होते समय नर युग्मकोद्भिद् सामान्यत: 13 कोशिकाएं लिए रहता है जिसमें एक छोटी प्रोथैलियल कोशिका, आठ जैकेट कोशिकाएं तथा चार पुंजनक (androgonial) कोशिकाएं होती है। नर युग्मकोद्भिद् के विकास की विभिन्न अवस्थाओं को चित्र 17.9 B-H में दिखाया गया है।

आगे विभाजनों से पुमणुजन कोशिकाएं 128 से 256 पुमणु निर्मित करती हैं। प्रत्येक पुमणु में दो अंतस्थ कशाभ होते हैं (चित्र 17.9 I)। आपने इकाई 13 में पढ़ा था कि ब्रायोफाइट्स भी ऐसे द्विकशाभी पुमणु निर्मित करते हैं। इस लिहाज से *सैलाजिनेला* अन्य टेरिडोफाइट्स जैसे कि *एक्वीसीटम* तथा *मार्सीलिया* से भिन्न होता है जिनमें बहुकशाभी पुमणु होते हैं। संवहनी पादपों में सबसे छोटे पुमणु *सैलाजिनेला* में होते हैं। क्या आपको याद है कि *लाइकोपोडियम* में किस प्रकार के पुमणु बनते हैं?

सामान्यत: गुरूयुग्मकोद्भिद् का विकास अधिकांश जातियों में स्वस्थाने (*in situ*) होता है, यानि कि गुरूयुग्मकोद्भिद् तभी विकसित होना आरंभ कर देता है जबकि गुरूबीजाणु बीजाणुधानी के भीतर ही होता है। चित्र 17.9 J-L में दिखाई गई गुरूबीजाणु के विकास की अवस्थाओं को देखिए। गुरूयुग्मकोद्भिद् का विकास गुरूबीजाणु के आमाप में काफी वृद्धि होने के साथ आरंभ होता है। जल्दी ही गुरूबीजाणु का केन्द्रक बार बार विभाजित होता है, परंतु कोशिका भित्तियां नहीं बनती हैं। गुरूबीजाणु के केन्द्र में एक उत्कृष्ट, धानी विकसित हो जाती है (चित्र 17.9 J)। बहुकेन्द्रकी कोशिकाद्रव्य बीजाणु भित्ति के बाद ही एक पतली परत के रूप में सीमित रहता है। केन्द्रकों की संख्या में वृद्धि के साथ ही यह कोशिकाद्रव्यी परत मोटी होनी आरंभ हो जाती है तथा केन्द्रक आमाप में बढ़ने लगते हैं। कुछ समय पश्चात् बहुकेन्द्रकी युग्मकोद्भिद् का बढ़ना धीमा हो जाता हैं तथा कोशिकाद्रव्यी परत लगातार मोटी होती जाती है, और अंतत: केन्द्रीय धानी को विलुप्त कर देती है। कोशिकाद्रव्यी परत शीर्ष यानि कि गुरूयुग्मकोद्भिद् के शीर्ष पिरैमिडी छोर पर अधिक मोटी होती है। इस क्षेत्र में केन्द्रक एकल परत में व्यवस्थित होते हैं तथा कोशिका भित्ति साथ-साथ ही विकसित हो जाती है (चित्र 17.9 K)। केन्द्र के भाग में निर्मित हुई कोशिकाएं नियमित रूप से षट्कोणीय तथा एककेन्द्रकी होती हैं, जबकि किनारों की ओर तथा नीचे स्थित कोशिकाएं दो अथवा अधिक केन्द्रकों वाली हो सकती हैं। कुछ समय के लिए कोशिका निर्माण सिर्फ शीर्ष भाग में ही होता है तथा ऊतकों का एक लैंस के आकार का कुशन बन जाता है जो मध्य में तीन कोशिकीय मोटाई का तथा किनारों पर सिर्फ एक कोशिका की मोटाई का होता है (चित्र 17.9 K)। एक बहुत ही सुस्पष्ट मध्यपट यानि डायाफ्राम सबसे निचली परत की निचली भित्तियों के मोटे हो जाने के कारण बन जाता है जो शीर्षस्थ कोशिकीय ऊतक को (पहले) अ-कोशिकीय बीजाणु गुहा से अलग करता है (चित्र 17.9 L)। बीजाणु गुहा की बहुकेन्द्रकी परत जो डायाफ्राम के नीचे होती है तेजी से मोटी तथा कोशिकीय होने लगती है। यह विभिन्न आकारों वाली बड़ी बहुकेन्द्रकी कोशिकाओं की बनी होती है जो संचित खाद्य पदार्थों जैसे एल्यूमिनी कणों, तेल अथवा स्टार्च से भरे रहते हैं। ये कोशिकाएं विकासशील भ्रूण को तब तक पोषण प्रदान करती हैं जब तक कि वह स्वतंत्र नहीं बन जाता।

अंतत: बहिश्चोल (exospore) त्रि-अरीय कटक की भुजाओं से फट जाता है। त्रि-भागीय विदर (cleft) के ऊपर शीर्ष से शीर्षस्थ ऊतक बाहर निकल आता है (चित्र 17.9 M)। इस ऊतक की अधिकांश सतही कोशिकाएं संभावित स्त्रीधानीय आरंभक होती हैं, तथा इनमें से बहुत सी स्त्रीधानी में विकसित हो जाती हैं (चित्र 17.9 N)। स्त्रीधानी के विकास की अवस्थाओं को चित्र 17.9 O-S में दिखाया गया है।

परिपक्व होने पर स्त्रीधानी की ग्रीवा कोशिकाएं अलग छिटक जाती हैं तथा पुमणु के प्रवेश के लिए राह बन जाती है।

निषेचन तब हो सकता है जब गुरूयुग्मकोद्भिद् बीजाणुधानी के भीतर ही होता या फिर जब वह भूमि पर गिर जाता है। लघुयुग्मकोद्भिद् जो लघुबीजाणु की भित्तियों द्वारा ढका रहता है, गुरूबीजाणु तक हवा अथवा गुरूत्वाकर्षण बल से आ जाता है। लघुबीजाणु गुरूबीजाणुओं के बीच गुरूयुग्मकोद्भिद् को धारण

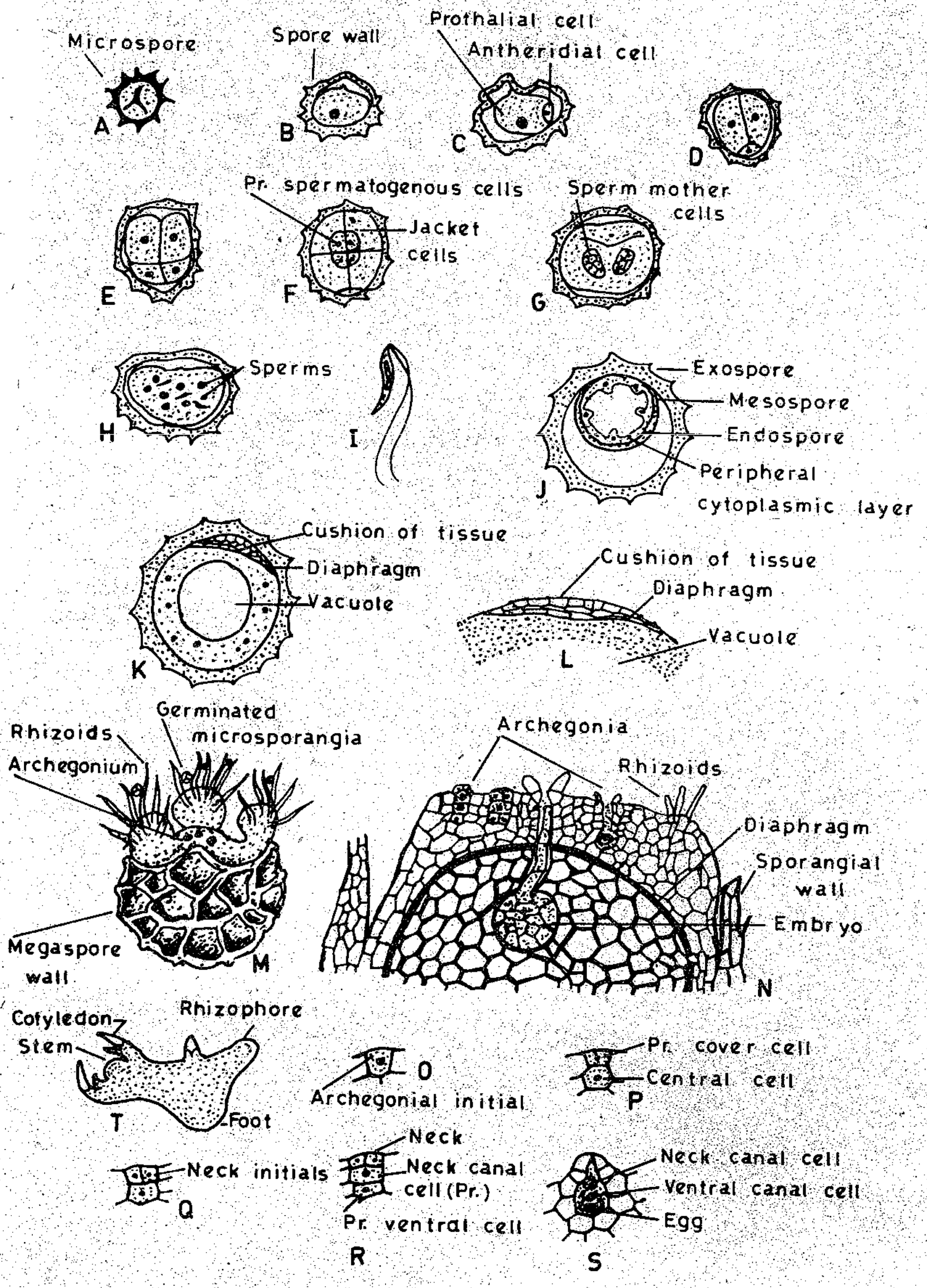

चित्र 17.9 : *सैलाजिनेला* : A) एक लघुबीजाणु, B) से H) लघुयुग्मकोद्भिद् के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, I) एक पुमणु, J) से L) गुरुयुग्मकोद्भिद् के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, M) एक वयस्क गुरुयुग्मकोद्भिद्, N) गुरुयुग्मकोद्भिद् का एक भाग कुशन में स्त्रीधानी के विकास को दिखाते हुए, O) से S) स्त्रीधानी के विकास की अवस्थाएं।

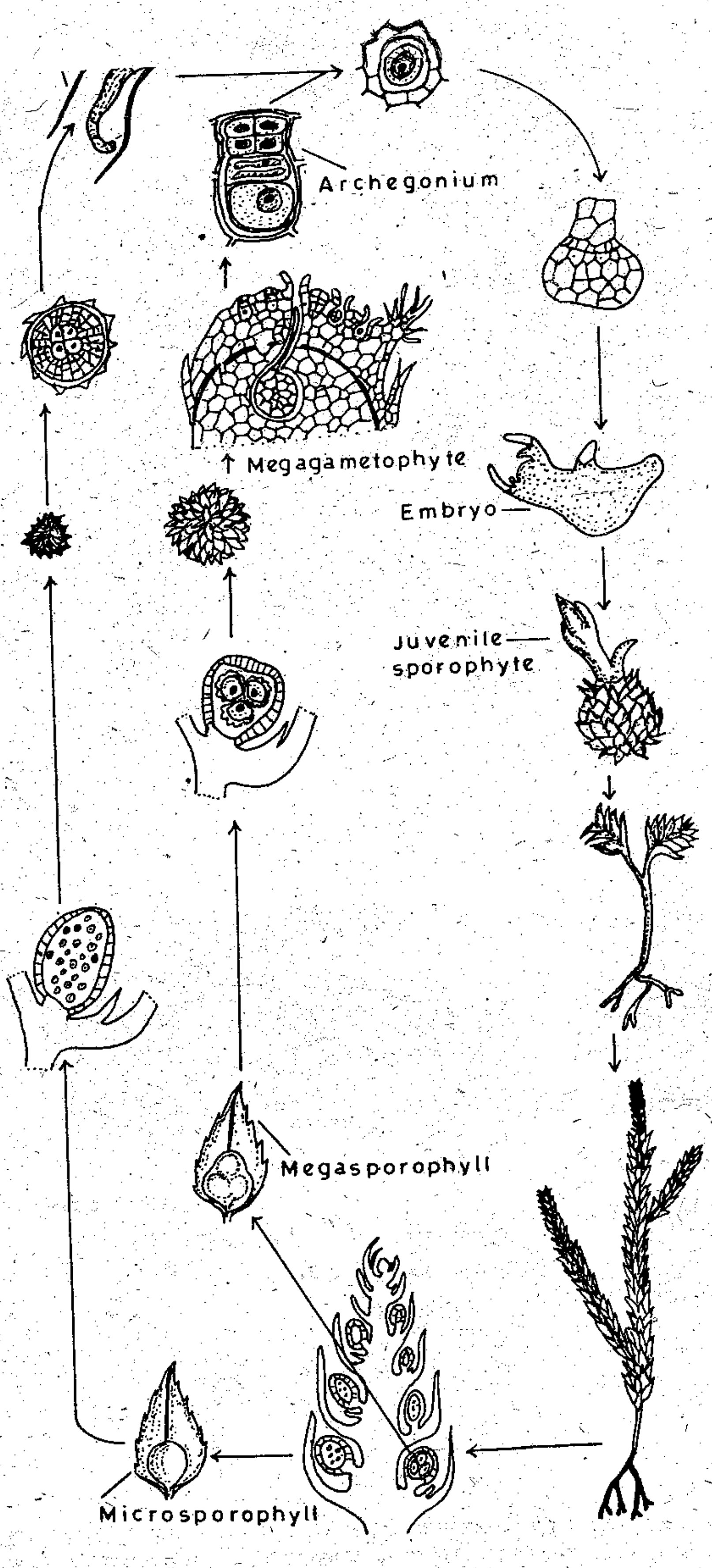

चित्र 17.10 : *सैलाजिनेला* के जीवनचक्र का आरेखीय प्रदर्शन।

किए हुए स्त्रीधानी के साथ अपवाहित होते हैं। पुमणु स्वतंत्र हो जाते हैं और ओस अथवा वर्षा के जल की पतली परत के साथ बह कर वे स्त्रीधानी में जाते हैं।

निषेचन के पश्चात् युग्मनज एक संरक्षक भित्ति स्रावित करता है तथा भ्रूण में विकसित हो जाता है। भ्रूण में आगे और विभाजनों के फलस्वरूप तने के शीर्ष, बीजपत्रों (cotyledons) तथा एक जड़ जैसी संरचना-राइजोफोर, का विभेदन होता है (चित्र 17.9 T)। विकासशील भ्रूण अपने आसपास के युग्मकोद्भिद् ऊतक में से बढ़ता है तथा तना एवं उपांग ऊपर की ओर बढ़ते हैं और राइजोफोर नीचे की ओर बढ़ता है। यह किशोर बीजाणु-उद्भिद् अन्य टेरिडोफाइट्स के बीजाणु-उद्भिदों से इस बात में भिन्न होता है कि इसमें बीजपत्र सीधे तने पर उगते हैं तथा सुस्पष्ट अधोबीजपत्रीय (hypocotyledonary) तने का भाग बीजपत्रों के स्तर के नीचे होता है। *सैलाजिनेला* के जीवन-चक्र का आरेखी प्रदर्शन चित्र 17.10 में दिया गया है।

चलिए अब मुख्य बातों का पुनर्अवलोकन करें।

1. पौधे विषमबीजाणुक होते हैं।
2. दो प्रकार के बीजाणुपर्ण होते हैं – लघुबीजाणुपर्ण तथा गुरूबीजाणुपर्ण।
3. दोनों प्रकार के पर्ण सर्पिल रूप में अथवा 4 श्रेणीय क्रम में शंकु अक्ष पर स्थित रहते हैं।

   दोनों लिग्यूलेट (जीभिकाकार) होते हैं।
4. एक एकल बड़ी वृक्काकार, वृंतीय, गुरूबीजाणुधानी अभ्यक्ष सतह पर आधार के निकट अथवा गुरूबीजाणुपर्ण के अक्ष में उपस्थित रहती है।
5. इसी प्रकार से, लघुबीजाणुधानियाँ लघुबीजाणुपर्णों पर उपस्थित रहती हैं।
6. बीजाणुधानी का विकास सुबीजाणुधानीय प्रकार का होता है।
7. बीजाणु दो प्रकार के होते है - बड़े गुरूबीजाणु अंकुरण पर गुरूयुग्मकोद्भिद् निर्मित करते हैं, व छोटे लघुबीजाणु अंकुरित होने पर लघुयुग्मकोद्भिद् को जन्म देते हैं। इस प्रकार से, युग्मकोद्भिद् एकलिंगाश्रयी होते हैं।
8. *सैलाजिनेला* में गुरूयुग्मकोद्भिद् बहुत अधिक लघुकृत होता है। इसका विकास बीजाणुधानी के भीतर ही आरंभ हो जाता है जबकि वह गुरूबीजाणु की भित्ति के अंदर ही होता है। कुछ से लेकर अनेक तक स्त्रीधानियां केन्द्र में विकसित होती है जबकि यह बीजाणुधानी के भीतर ही होता है।
9. निषेचन तब भी हो सकता है जबकि गुरूयुग्मकोद्भिद् गुरूबीजाणु के भीतर ही स्थित हो।

बोध प्रश्न 17.3

अ) निम्नलिखित में से कौन-कौन से वक्तव्य सत्य हैं व कौन से असत्य हैं। सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) दिये गये कोष्ठकों में लिखिए।

i) *सैलाजिनेला* में बीजाणुधानियां दो प्रकार की होती है। ☐

ii) *सैलाजिनेला* में शंकु पार्श्व होते हैं। ☐

iii) मादा गुरूयुग्मकोद्भिद् का विकास तथा निषेचन तभी हो जाता है जबकि गुरूबीजाणु बीजाणुधानी के अंदर ही होता है। ☐

iv) कुछ बीजाणुकोशिकाएं का भ्रूण को पोषण प्रदान करने के लिए अपकर्षण हो जाता है। ☐

ब) *सैलाजिनेला* सम्बन्धित निम्नलिखित वक्तव्यों में कोष्ठकों में दिए गए शब्दों में से सही शब्द चुनिए।

i) बीजाणुधानी का विकास (तनुबीजाणुधानीय/सुबीजाणुधानीय) प्रकार का होता है।

ii) गुरूबीजाणुधानियाँ लघुबीजाणुधानियों से (छोटी/बड़ी) होती हैं।

iii) पुमणु (बहुकशाभी/द्विकशाभी) होते हैं।

iv) मादा युग्मकोद्भिद् गुरूबीजाणुधानी के (भीतर/बाहर) विकसित होता है।

स) *सैलाजिनेला* के बीजाणु की संरचना तथा युग्मकोद्भिद् के विकास की तुलना *लाइकोपोडियम* से कीजिए।

....

....

....

17.2.4 *एक्वीसीटम*

विकास में *सैलाजिनेला* के बाद में *एक्वीसीटम* आता है। आपने पिछली इकाई में इस वंश के कायिक भागों की संरचनात्मक विशेषताओं के बारे में पढ़ा है। अब आगे आप प्रजनन संरचनाओं के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे तथा उन वंशों से तुलना करेंगे जिनके बारे में आपने अब तक पढ़ा है।

प्रजनन संरचनाएं

सैलाजिनेला के विपरीत, *एक्वीसीटम* समबीजाणुक है। बीजाणु *सैलाजिनेला* तथा *लाइकोपोडियम* की भांति ही बीजाणुधानी के भीतर निर्मित होते हैं, परंतु *एक्वीसीटम* में बीजाणुधानियां वृंतीय संरचनाओं पर उगती हैं जिन्हें बीजाणुधानीधर (sporangiophores) कहते हैं। ये बीजाणुधानीधर सामान्य पत्तियों से काफी भिन्न होते हैं तथा एक साथ समूहित होकर स्ट्रोबिलस बनाते हैं (चित्र 17.11)। स्ट्रोबिलस अंतस्थ स्थित होते हैं तथा एकल होते हैं। *एक्वीसीटम* की अधिकांश जातियों में जननक्षम तथा बंध्य प्ररोहों के बीच कोई विभेद नहीं होता है। अतः इन जातियों में वायवीय प्ररोह प्रकाश संश्लेषण तथा प्रजनन का दुहरा कार्य संपन्न करते हैं। सामान्यतः वायवीय प्ररोह की चक्करदार शाखाएं (whorled branches) स्ट्रोबिलस नहीं धारण करती हैं।

कायिक संरचना की भांति ही *एक्वीसीटम* का स्ट्रोबिलस भी काफी विशिष्ट होता है। इसमें केन्द्रीय मोटा अक्ष होता है (चित्र 17.12 A)। इस अक्ष पर बहुत सारे T के आकार के छत्रिकाकार (peltate) बीजाणुधानीधर घने रूप से उत्तरोत्तर चक्करों (successive whorls) में एक दूसरे से एकांतर पर लगे रहते हैं। प्रत्येक चक्र में बीजाणुधानीधरों की संख्या कुछ से बहुत तक भिन्न हो सकती है। स्ट्रोबिलस के आधार के निकट एक वलयाकार बहिर्वृद्धि भी होती है जो वलयिका (annulus) कहलाती है। कुछ वनस्पति विज्ञानी इसे एक संरक्षक संरचना के रूप में मानते हैं।

बीजाणुधानीधरों को दो भागों में बांटा जा सकता है (i) छोटा निकटस्थ बेलनाकार वृंत जैसा भाग जो स्ट्रोबिलस के अक्ष के समकोण पर जुड़ा रहता है (चित्र 17.12 B, C) तथा (ii) एक ढ़ाल जैसी छत्राकार डिस्क जो वृंत के दूरस्थ अथवा बाहरी सिरे से जुड़ी रहती है। निचली सतह पर बहुत सारी बीजाणुधानियाँ (आमतौर पर 5-10) इस डिस्क के किनारों के निकट व वलय के रूप में बनती हैं। (चित्र 17.12 B)। बीजाणुधानीधरों के छत्रिकाकार शीर्ष इस तरह से पैक रहते हैं कि बीजाणुधानियां छिपी रहती हैं। डिस्क आपसी दबाव के कारण षटकोणीय आकार ले लेती है।

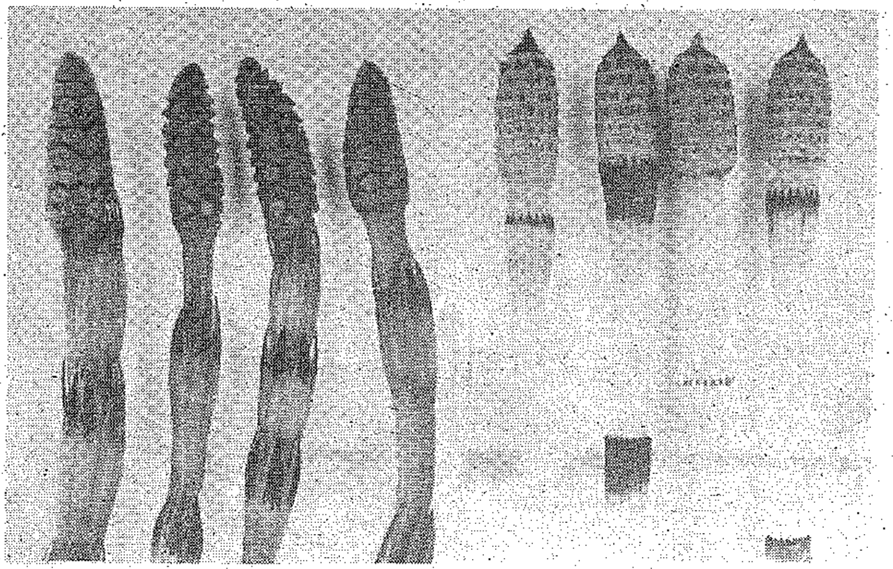

चित्र 17.11 : शंकुओं को दिखाता हुआ *एक्वीसीटम आरवेंस* तथा *एक्वीसीटम नाईमेल (E.nyemale)* का चित्र, (पी. दयानंदन के सौजन्य से)।

परिपक्व होने पर स्ट्रोबिलस का अक्ष हल्का सा दीर्घित हो जाता है जिसके परिणामस्वरूप बीजाणुधानीधर एक दूसरे से अलग हो जाते हैं। बाद में पानी की कमी के कारण बीजाणुधानीधर सिकुड़ जाते हैं तथा अलग-अलग हो जाते हैं जिससे बीजाणुधानियां दिखाई पड़ने लगती हैं। बीजाणुधानियां किनारों से नीचे की ओर, बीजाणुधानीधर वृंत के आगे तक, अनुदैर्ध्य झिरी द्वारा स्फुटित होती हैं तथा बीजाणु परिक्षेपित हो जाते हैं।

बीजाणुभित्ति चार परतों की बनी होती है: सबसे बाहर की बीजाणुबाह्यचोल (epispore), मध्य की बीजाणुमध्यचोल (perispore) उसके बाद की बीजाणु बहिश्चोल (exospore) तथा सबसे भीतरी बीजाणुअंतश्चोल (endospore)। बीजाणुबाह्यचोल कुछ सर्पिल रेखाओं के साथ-साथ दो लंबे पट्टों में

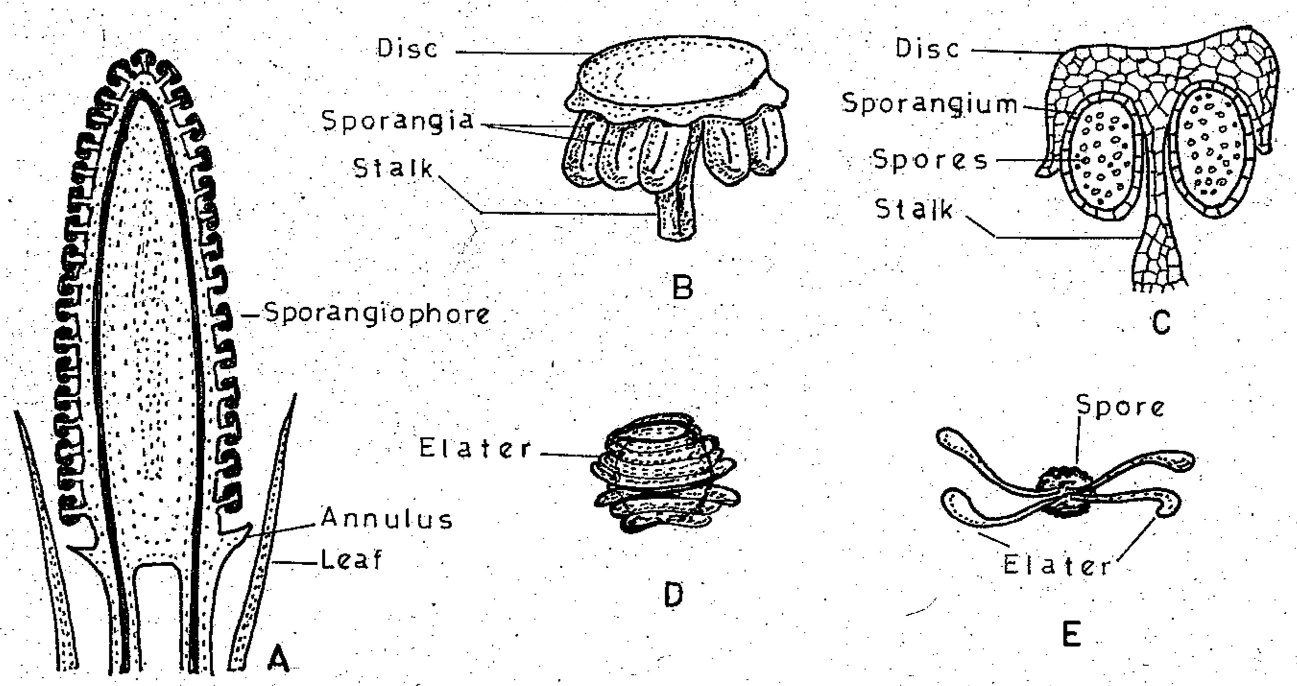

चित्र 17.12 : *एक्वीसीटम :* A) शंकु की ऊर्ध्वाधर काट, B) छत्रिकाकार बीजाणुधानीधर , C) बीजाणुधानीधर की ऊर्ध्वाधर काट, D) तथा E) इलेटर्स को दिखाते हुए बीजाणु।

विभाजित रहता है जो परिपक्व होने तक बीजाणु के चारों ओर लिपटे रहते हैं (चित्र 17.12 D)। ये पट्टे एक बिन्दु को छोड़कर बाकी सब जगह पर एक दूसरे से अलग होते हैं। पट्टों के सिरे हल्के से विस्तारित अथवा चम्मच जैसे होते हैं (चित्र 17.12 E)। ये इलेटर (elater) कहलाते हैं तथा बीजाणु के चारों ओर सर्पिल रूप में लिपटे रहते हैं। ये आर्द्रताग्राही होते हैं तथा नम वायु में बीजाणुओं के चारों ओर कुंडलित रहते हैं। शुष्क अवस्थाओं में इलेटर अपने आपको इस तरह से क्रॉसरूप में बाहर तान लेते हैं, कि ये अपनी लंबाई के मध्य पर सिर्फ एक ही बिन्दु पर जुड़े रह जाते हैं, इससे ये चार उपांगों जैसे लगते हैं। पिछली इकाइयों में आपने ब्रायोफाइट्स में इलेटर्स के बारे में पढ़ा था। हम *एक्वीसीटम* के इलेटर्स की तुलना लिवरवर्टस के इलेटर्स से करते हैं। आप देखेंगे कि ब्रायोफाइट्स में इलेटर्स पूर्ण कोशिकाओं से बनते हैं, बीजाणुओं की भित्ति से नहीं । वे द्विगुणित होते हैं तथा उनमें सर्पिल मोटाइयाँ पाई जाती हैं। परंतु *एक्वीसीटम* में वे अगुणित होते हैं तथा उनमें सर्पिल मोटाइयाँ नहीं होती हैं।

इलेटर्स बीजाणुधानी के स्फुटन में तथा बीजाणुओं के परिक्षेपण में सहायता करते हैं। परिपक्व होने पर जब बीजाणुधानी से जल निकल जाता है तब इलेटर्स खुल जाते हैं तथा बीजाणुधानी की भित्ति पर दबाव डालते हैं। इसके परिणामस्वरूप बीजाणुधानी अनुदैर्ध्य झिरी पर से खुल जाती है तथा बीजाणु बड़ी तादाद में बिखर जाते हैं।

एक्वीसीटम के बीजाणुओं में त्रि-अरीय निशान नहीं होते हैं।

युग्मकोद्भिद् का विकास

एक्वीसीटम के बीजाणु 5-20 दिनों तक जीवनक्षम (viable) रहते हैं। बीजाणु किसी युग्मकोद्भिद् की प्रथम कोशिका है। यह अनुकूल परिस्थितियों जैसे पर्याप्त ऑक्सीजन तथा नमी में अंकुरित होता है। बीजाणु 2-3 दिनों में अंकुरित हो जाता है। बीजाणु का अंकुरण आरंभ होने से पहले, बीजाणु के अंदर कुछ बदलाव आ जाते हैं। बड़ी धानी की जगह बहुत सारी छोटी-छोटी धानियां ले लेती हैं तथा हरितलवक यानि क्लोरोप्लास्ट केंद्रक को घेर लेता है। बीजाणु का व्यास जल अवशोषित करने के कारण बढ़ जाता है तथा उसकी भित्ति फट जाती है। इलेटर्स अलग हो जाते हैं। इसके बाद बीजाणु का एक छोटी मसूराकार (lenticular) मूलाभासी कोशिका तथा बड़ी प्रोथैलसी कोशिका में असमान विभाजन होता है। युग्मकोद्भिद् के विकास की अवस्थाओं को चित्र 17.13 A-E में दिखाया गया है। प्रोथैलसी कोशिका क्लोरोप्लास्ट तथा तेल की बूंदों से भरपूर होती है। मूलाभासी कोशिका प्राथमिक मूलाभास में दीर्घित हो जाती है। प्रोथैलसी कोशिका आरंभ में अनुप्रस्थ भित्ति से विभाजित होती है तथा हरी कोशिकाओं का तंतु बनाती है (चित्र 17.13 F)। इस तंतु की कोशिकाएं एक चपटे, हरे तथा पत्ती जैसे विस्तृत ऊतक या एक दीर्घित तथा शाखित थैलस बनाने के लिए सभी दिशाओं में विभाजित होती हैं। इस अवस्था में थैलस की कोई भी सतही कोशिका असमान रूप से एक छोटी द्वितीयक मूलाभासी कोशिका तथा एक बड़ी कोशिका में विभाजित हो सकती है। छोटी कोशिका द्वितीयक (secondary) मूलाभासी कोशिका की तरह से कार्य करती है। आगे के अपनतिक तथा परिनतिक विभाजनों के द्वारा प्रोथैलस मोटाई में बढ़ता है। अंततः एक कुछ कोशिकीय मोटाई का, कुशन के आकार का अर्थात् गद्दाकार स्थूल थैलस निर्मित होता है जो अपनी निचली सतह पर असंख्य मूलाभासों को धारण किए रहता है।

आगे विकास के फलस्वरूप प्रोथैलस का निर्माण होता है जिसमें तीन सुस्पष्ट क्षेत्रों को पहचाना जा सकता है:

i) ऊपरी सीधा यानि सतर का हरा प्रकाश संश्लेषणी भाग, स्पंजी/अनियमित आकार के कोष्ठों के रूप में।

ii) मध्य आधारीय भूमि पर शयान का क्षेत्र हल्के-पीले रंग का।

iii) सबसे निचला रंगहीन कोशिकाओं का क्षेत्र जो मूलाभासों को जन्म देता है।

परिपक्व प्रोथैलस आमाप में 1-10 मि.मी. व्यास का होता है। सामान्यतः प्रोथैलस के कोष्ठों (lobes) की ऊपरी कोशिकाओं में कवक का आक्रमण होता है। आंतरिक रूप से प्रोथैलस दो मंडलों में विभेदित रहता है: (1) निचला संहत गोलाकार मृदूतकीय भाग जो डिस्क बनाता है, तथा (2) ऊपरी स्पंजी भाग। डिस्क पर्णहरित-रहित बड़ी कोशिकाओं की बनी होती है जो संहत रूप में व्यवस्थित रहती हैं तथा मंडकणों (starch) से भरी रहती है।

डिस्क में बाहरी विभज्योतकी घेरा होता है जो डिस्क के व्यास को बढ़ाता है तथा नए सीधे कोष्ठ एवं मूलाभास बनाता है। ऊपर का स्पंजी भाग बहुत अधिक संख्या में उपस्थित हरे ऊर्ध्वाधर कोष्ठों का बना होता है जो पूरी तरह से नीचे की डिस्क को ढक लेते हैं। कोष्ठ अनियमित, पर्णहरित ऊतकों के पट्टिका-जैसे विस्तार होते हैं जो आधार पर कई कोशिकीय मोटाई के होते हैं परंतु ऊपर क्रमश: पतले होते जाते हैं और अंतिम भाग सिर्फ एक कोशिका की मोटाई का होता है। ये या तो गोलाकार अथवा कमोवेश कोष्ठीय होते हैं। कभी-कभी कोष्ठ संहत रूप में व्यवस्थित रहते हैं जिससे उनके बीच के अवकाश कम होते हैं तथा प्रोथैलस स्पंजी दिखाई पड़ते हैं।

तीन प्रकार के प्रोथैलस विकसित हो सकते हैं:

i) गहरे हरे मादा प्रोथैलस,

ii) हल्के हरे नर प्रोथैलस, तथा

iii) उभयलिंगी प्रोथैलस जिनमें पतली नर शाखाएं तथा मोटी एवं गूदादार मादा शाखाएं होती हैं।

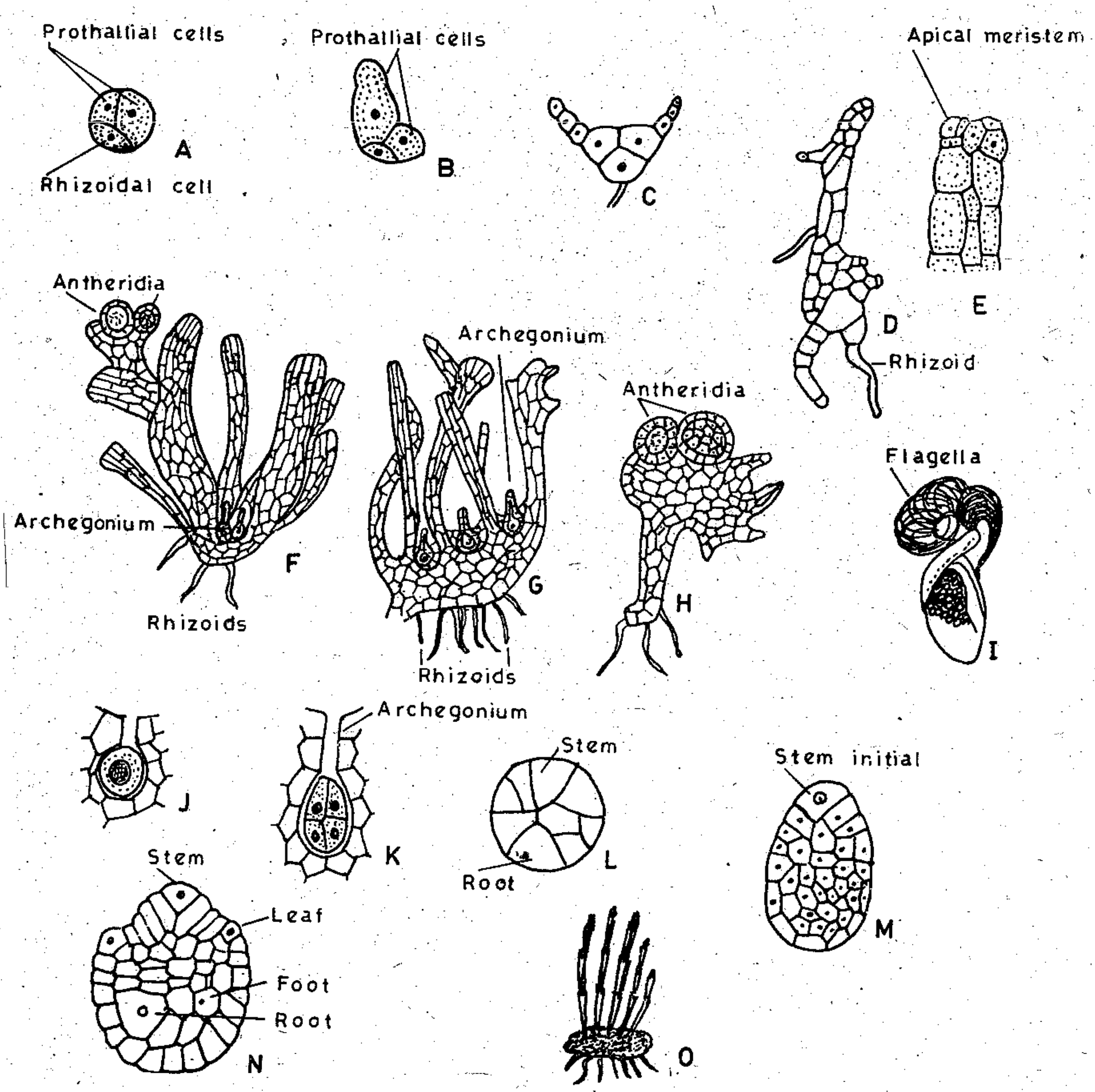

चित्र 17.13 : *एक्वीसीटम*; A-E) प्रोथैलस के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, F से H) एकलिंगाश्रयी और उभयलिंगाश्रयी युग्मकोद्भिद् I) एक बहुकशाभी पुमणु, J-O) बीजाणु-उद्भिद् के विकास की विभिन्न अवस्थाएं।

एक्वीसीटम में परिपक्व प्रोथैलस अथवा युग्मकोद्भिद् पृष्ठाधर, भूमि पर श्यान, हल्के भूरे से हरी थैलस नुमा संरचनाएं होती हैं जो आमतौर पर नालों तथा नदियों के किनारों पर, छायादार स्थानों पर चिकनी मिट्टी की सतह पर बहुतायत में पाई जाती हैं।

अधिकांश जातियों में प्रोथैलस उभयलिंगाश्रयी होते हैं यानि कि दोनों लैंगिक अंग एक ही प्रोथैलस पर उगते हैं। परिपक्व लैंगिक अंग पट्टियों अथवा कोष्ठों के बीच में होते हैं (चित्र 17.13 F)। यह देखा गया है कि जो प्रोथैलस बहुत अधिक मात्रा में एक साथ होते हैं तथा भूखे यानि बुभुक्षित प्रोथैलस, सामान्यत: नर लैंगिक अंग उत्पन्न करते हैं और वे जिन्हें पर्याप्त भोजन मिल जाता है, मादा लैंगिक अंग उत्पादित करते हैं। इस प्रकार से, *एक्वीसीटम* के प्रोथैलस आमतौर पर उभयलिंगाश्रयी होते हैं परंतु एकलिंगाश्रयता की प्रवृत्ति प्रदर्शित करते हैं।

स्त्रीधानियाँ आधार के निकट तथा कोष्ठों के बीच में पाई जाती हैं। सबसे पहले बनी स्त्रीधानी के निषेचन के पश्चात् प्रोथैलस का बढ़ना रुक जाता है। परिपक्व स्त्रीधानी का आधार प्रोथैलस ऊतक में धंसा हुआ होता है, सिर्फ इसकी ग्रीवा बाहर निकली रहती है। ग्रीवा छोटी होती है तथा चार कतारों की बनी होती है जिनमें से प्रत्येक कतार में आमतौर पर 3 या 4 कोशिकाएं होती हैं। सबसे ऊपर की कतार की ग्रीवा कोशिकाएं परिपक्व होने पर विशाखित हो (पीछे की ओर मुड़ी हुई) जाती है और इसप्रकार से पुमणुओं के प्रवेश के लिए चौड़ा मुख बना देती है। अक्षीय कतार अंड कोशिका, अंडधा नाल कोशिका तथा एक अथवा दो ग्रीवा नाल कोशिकाओं की बनी होती है। परिपक्व होने पर अंडे के अतिरिक्त सभी अक्षीय कोशिकाओं का जिलेटिनन (gelatinisation) हो जाता है।

जब प्रोथैलस कुछ महीनों का हो जाता है तब बाद में पुंधानिया विकसित होती हैं। ये बहुत अधिक संख्या में पर्णहरित-रहित भाग से निर्मित होती हैं। ये अग्राभिसारी क्रम में विकसित होती हैं तथा दो प्रकार की होती हैं- धँसी हुई (embedded) तथा ऊपर निकली हुई प्रक्षेपी (projecting) प्रकार की। धँसी हुई प्रकार की पुंधानियां प्रोथैलस के निचले स्थूल तथा कुशननुमा भाग में विकसित होती हैं। प्रक्षेपी प्रकार की आमतौर पर बुभुक्षित प्रोथैलस में विकसित होती हैं तथा सतर कोष्ठों के किनारों पर पाई जाती हैं। परिपक्व पुंधानी लगभग गोलाभ अवृंतीय संरचना होती है। पुंधानियों की जैकेट एकल परती होती है (चित्र 17.13 H)। जैकेट में बहुत बड़ी संख्या में बहुकशाभी पुमणु (चित्र 17.13 I) बंद रहते हैं। पुंधानी जल अवशोषित करके स्फुटित होती हैं। इसकी भित्ति झिरीनुमा छिद्र बनाती है जिसमें से पुमणु बाहर निकल जाते हैं।

निषेचन के लिए जल भी आवश्यक होता है। पुमणु स्त्रीधानी की खुली ग्रीवा के चारों ओर उपस्थित मैलिक एसिड के द्वारा आकर्षित होते हैं। बड़ी संख्या में पुमणु ग्रीवा में प्रवेश करते हैं तथा अंडधा तक पहुंचते हैं, परंतु सिर्फ एक ही पुमणु निषेचन करने में समर्थ होता है। नर युग्मक तथा मादा युग्मक के संयुग्म के फलस्वरूप युग्मनज अथवा निषिक्तांड (oospore) निर्मित होता है। एक प्रोथैलस की काफी स्त्रीधानियां निषेचित हो जाती हैं।

बीजाणु-उद्भिद् का विकास

युग्मनज एक अनुप्रस्थ भित्ति के द्वारा एक ऊपरी अध्याधार (epibasal) कोशिका तथा निचली अधराधार (hypobasal) कोशिका में विभाजित होता हैं। निलंबक (suspensor) नहीं पाया जाता हैं। अगला विभाजन अनुदैर्ध्य होता है जो इन कोशिकाओं को चार कोशिकाओं में विभाजित कर देता हैं जो चतुष्टक बनाती हैं। ऊपरी कोशिकाएं निचली कोशिकाओं से बड़ी होती है। इस चतुष्टक में पहले अनुदैर्ध्य विभाजन के समकोण पर एक अन्य अनुदैर्ध्य विभाजन होता है जिससे अष्टाशक निर्मित होता है (आठ कोशिकाएं)। अध्याधार अष्टांशक में से सबसे बड़ी कोशिका प्ररोह शीर्ष कोशिका की भांति व्यवहार करती है। बीजाणु-उद्भिद् के विकास की विभिन्न अवस्थाओं को चित्र 17.13 J-O में दर्शाया गया है।

बोध प्रश्न 17.4

(अ) निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य है तथा कौन से असत्य है। सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) दिये गये कोष्ठकों में लिखिए।

i) *एक्वीसीटम* के बीजाणुओं में त्रि-अरीय निशान नहीं होते हैं। ☐

ii) *एक्वीसीटम* विषमबीजाणुक है। ☐

iii) *एक्वीसीटम* के प्रोथैलस सामान्यतः एकलिंगाश्रयी होते हैं। ☐

iv) *एक्वीसीटम* के भ्रूण में निलंबक नहीं होता है। ☐

(ब) निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए।

i) *एक्वीसीटम* की बीजाणुधानियाँ वृंतीय संरचनाओं पर उगती हैं जिन्हें .... कहते हैं।

ii) *एक्वीसीटम* में बीजाणुधानीधर .... होते हैं।

iii) बीजाणुभित्ति .... परतों की बनी होती है।

iv) चम्मचाकार .... बीजाणुओं पर उपस्थित रहते हैं।

v) बीजाणुधानी .... झिरी से स्फुटित होती हैं।

vi) *एक्वीसीटम* के प्रोथैलस की वृद्धि .... विभज्योतकों की गतिविधि के द्वारा होती है।

17.2.5 *टेरिस*

पिछले अध्यायों में आपने फर्न-संबंधियों में प्रजनन से सबंद्ध संरचनाओं तथा प्रजनन के विषय में पढ़ा है। अब आप वास्तविक फर्नों में प्रजनन के बारे में पढ़ेंगे।

प्रजनन संरचनाएं

जैसा कि आपने पढ़ा है फर्न संबंधियों में बीजाणु बीजाणुधानियों के भीतर ही बनते है, जो शंकु अथवा स्ट्रोबिलस के रूप में व्यवस्थित रहती हैं। वास्तविक फर्नों में बीजाणुधानियाँ शंकु अथवा स्ट्रोबिलस नहीं बनाती हैं बल्कि वे छोटे अथवा बड़े समूहों में पाई जाती हैं जिन्हें बीजाणुधानी पुंज यानि सोराइ sori (sing, sorus) कहते हैं (चित्र 17.14 A)। बीजाणुधानी पुंज कोरकुंचित (revolute) किनारों द्वारा अथवा एक विशेष बहिर्वृद्धि द्वारा रक्षित होते हैं जिन्हें **सोरसछद** यानि इन्डूशियम (indusium) कहते हैं (चित्र 17.14 B तथा C) अथवा वे अरक्षित या नग्न हो सकते हैं। बीजाणुधानियों के अतिरिक्त, सोरस में रिसेप्टिकल (receptacle) अथवा बीजांडासन (placenta) भी होते हैं जिन पर बीजाणुधानियां उगती हैं। सोरसछद यदि उपस्थित होता है तो वह भी सोरस का ही एक भाग माना जा सकता है। सोरस में दो या अधिक बीजाणुधानियां हो सकती हैं। सोरस पत्तियों या पर्वकों (leaflets) के किनारों अथवा अधर सतहों पर विविध प्रकारों से व्यवस्थित हो सकते हैं। सामान्य पत्तियाँ बीजाणुधानी धारी हो जाती हैं तथा ऐसी जननक्षम पत्तियाँ बीजाणुपर्ण कहलाती हैं।

टेरिस में किसी भी पत्ती अथवा पर्णक में सोरस उसकी निचली सतह पर स्थित हो सकते हैं तथा इनको जननक्षम एवं बंध्य पत्तियों में कोई अंतर नहीं होता है। सोरस संगामी (confluent) बन जाते हैं तथा

एक एकल सतत रेखीय सोरस जैसे प्रतीत होते हैं जिसे **संसोरस (coenosorus)** कहते हैं (चित्र 17.14 A)। ये संसोरस पर्णकों के भीतर की ओर मुड़े हुए सिरों द्वारा रक्षित होते हैं। इस प्रकार की रक्षक युक्ति कूट सोरसछद (**false indusium**) कहलाती है (चित्र 17.14 B)। *टेरिस* में पुरानी तथा किशोर बीजाणुधानियाँ एक साथ पाई जाती हैं तथा सोरस में कोई नियमित व्यवस्था नहीं दिखाई पड़ती है। प्रत्येक बीजाणुधानी 48 बीजाणु निर्मित करती है। बीजाणुधानी के दो भाग होते हैं : i) वृंत (**stalk**) अथवा वृंतक (**pedicle**) तथा ii) संपुट (**capsule**) अथवा बीजाणुपुटक (**spore sac**) (चित्र 17.14 C)। वृंत दीर्घित कोशिकाओं की तीन कतारों का बना होता है। संपुट कैप्सूल लगभग अंडाकार होता है तथा उभयोत्तल लैंस (**biconvex lens**) जैसा लगता है। परिपक्व बीजाणुधानी में एक परत की संपुट भित्ति, बीजाणुओं को घेरे हुए पाई जाती है (चित्र 17.14 D)। संपुट भित्ति पतली, चपटी, बहुतलीय (**polyhedral**) तथा पारदर्शी कोशिकाओं की बनी होती है। बीजाणुधानी के दोनों चपटी तरफ की कोशिकाओं में लहरदार कोशिका भित्तियाँ होती हैं। संपुट के कोर को घेरे हुए लगभग 16 कोशिकाओं की ऊर्ध्वाधर कतार होती है जो **वलयिका (annulus)** बनाती है।

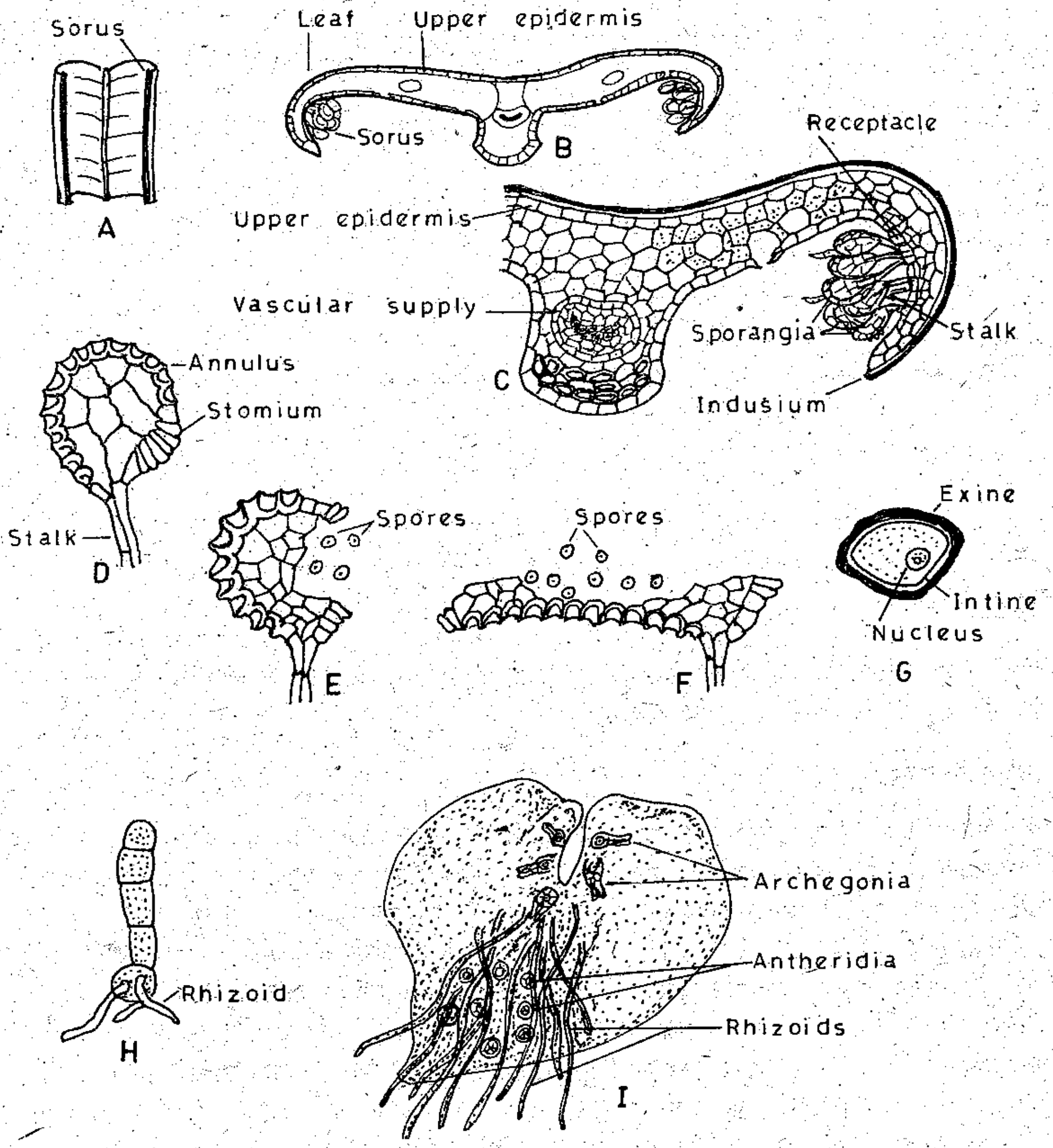

चित्र 17.14 : *टेरिस* : A) बीजाणु पुंजों (**sori**) को दिखाते हुए *टेरिस* की पत्ती का एक भाग, **B, C)** कोरकुंचित (**revolute**) किनारों वाली पत्तियों से सुरक्षित हुई बीजाणुधानियां, **D)** एक वयस्क बीजाणुधानी, **E** तथा **F)** बीजाणुधानी से बीजाणुओं का परिक्षेपण, **G)** एक बीजाणु, **H)** प्रोथैलस के विकास की आरंभिक अवस्था, **I)** लैंगिक अंगों को धारण किए हुए एक वयस्क प्रोथैलस।

इसमें विशेषतौर पर मोटी अरीय (radial) तथा भीतरी स्पर्शरेखीय (tangential) भित्तियाँ होती हैं। यह संपुट के किनारों को जोड़ते हुए परिधि के लगभग दो-तिहाई हिस्से तक फैल जाती है तथा एक अपूर्ण वलय बनाती है। बचे हुए एक-तिहाई हिस्से में लंबी, सपाट तथा पतली भित्ति की कोशिकाओं का छोटा सा समूह होता है। यह रंध्रक (stomium) कहलाता है। रंध्रक में दो कोशिकाएं पतली और अरीय रूप से दीर्घित होती हैं। ये ओष्ठ कोशिकाएं (lip cells) बनाती हैं। वलयिका तथा रंध्रक स्फुटन तथा बीजाणुओं के परिक्षेपण से संबंधित रचनाएं हैं (चित्र 17.14 E-F)। बीजाणुधानी का विकास तनुबीजाणुधानीय प्रकार का होता है।

बीजाणु कुछ-कुछ तिकोने होते हैं व सुस्पष्ट त्रि-अरीय निशान लिए होते हैं। बीजाणु का आमाप भी विभिन्न जातियों में भिन्न भिन्न होता है। बीजाणु भित्ति मोटी होती है तथा बाहरी बाह्यचोल (exine) तथा भीतरी अंतश्चोल (intine) की बनी होती है (चित्र 17.14 G)। विभिन्न जातियों में बाह्यचोल की संरचना विविध प्रकार से अलंकृत होती है।

युग्मकोद्भिद् का विकास

अनुकूल परिस्थितियों में बीजाणु का अंकुरण हो जाता है। बाह्यचोल फट जाता है तथा एककेन्द्रकी कोशिकाद्रव्य एक छोटी बेलनाकार, संरचना (चित्र 17.14 H) के रूप में बाहर आ जाता है। जो अंततः थैलस बनाता है।

परिपक्व प्रोथैलस पतला, हरे रंग का, हृदयाकार व एक शीर्षस्थ खांच लिए हुए होता है (चित्र 17.14 I तथा 17.15A)। कोशिका विभाजन मुख्यतः खांच के पीछे के हिस्से तथा पार्श्व पंखों में ही सीमित रहता है। प्रोथैलस लगभग 0.3 से 0.5 मि.मी. व्यास का होता है। इसमें एक मोटा केन्द्रीय कुशन भी होता है जो शीर्षस्थ खांच के पीछे की कोशिकाओं में विभाजन के फलस्वरूप बनता है। प्रोथैलस के पीछे के भाग से असंख्य द्वितीयक मूलाभास उगते हैं।

टेरिस में लैंगिक अंग तथा मूलाभास परिपक्व प्रोथैलस की अधर सतह पर विकसित होते हैं (चित्र 17.14 I)। सामान्यतः ये प्रोथैलस उभयलिंगाश्रयी होते हैं। पुंधानियां मूलाभासों के साथ में पाई जाती हैं जबकि स्त्रीधानियां शीर्षस्थ खांच के पीछे के कुशन पर सीमित रहती हैं।

पुंधानी प्रोथैलस की सतह पर स्थित एक फूली हुई कोशिका से विकसित होती है जो अनुप्रस्थ विभाजन से एक आधारीय कोशिका तथा एक पुंधानी आरंभक में विभाजित होती है (चित्र 17.16 A)। पुंधानीय कोशिका में एक वक्र (curved) कोशिका भित्ति प्रकट होती है जो आधारीय कोशिका को स्पर्श

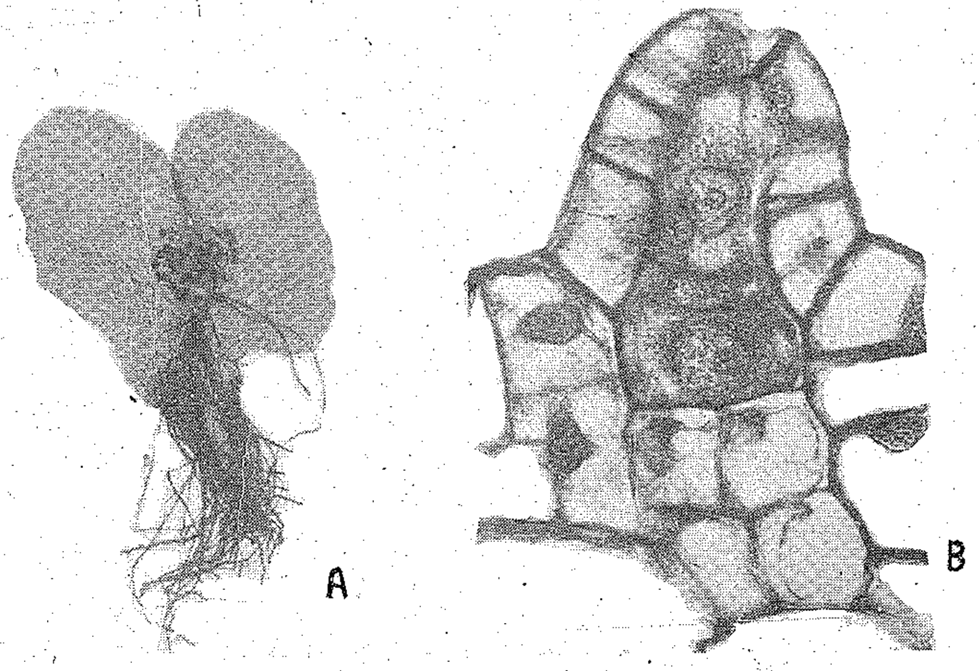

चित्र 17.15 : A) स्त्रीधानी को दिखाते हुए फर्न के प्रोथैलस का चित्र, B) अंड, अंडधा नाल कोशिका (ventral canal cell) तथा ग्रीवा नाल कोशिका को दिखाते हुए स्त्रीधानी का सेक्शन (प्रो. पी. दयानंदन के सौजन्य से)।

करती है (चित्र 17.16 B)। इसके परिणामस्वरूप एक ऊपरी गुम्बद (dome) कोशिका अथवा केन्द्रीय कोशिका तथा निचली वलय (rin) कोशिका बनती है। केन्द्रीय कोशिका में एक और वक्र भित्ति एक बाहरी जैकेट कोशिका तथा एक केन्द्रीय प्राथमिक पुंधानीय कोशिका (primary androgonial cell) बनाती है (चित्र 17.16 C)। जैकेट कोशिका में परिनतिक विभाजनों से एक ऊपरी गोपक कोशिका (cap cell) तथा द्वितीय वलय कोशिका बनती है । केन्द्रीय प्राथमिक पुंधानीय कोशिका पुनर्वर्ती विभाजनों के द्वारा 32 स्पर्मेटिड पुमणुपूर्व (spermatids) बनाती है (चित्र 17.16 D-E) जिनका कोशिकाद्रव्य बहुकशाभी पुमणुओं में कायांतरित हो जाता है (चित्र 17.16 F)। परिपक्व होने पर पुंधानी की बाहरी भित्ति तीन कोशिकाओं की बनी होती है। (i) आधारीय कोशिका (प्रथम वलय कोशिका) जो कीपाकार (funnel-shaped) हो सकती है (ii) वलयिका अथवा द्वितीय वलय कोशिका तथा (iii) शीर्षस्थ गोपक कोशिका अथवा आवरण कोशिका। स्फुटन के दौरान गोपक कोशिका गिर जाती है। यह अक्सर प्रक्रिया के दौरान निपातित (collapse) हो जाती है।

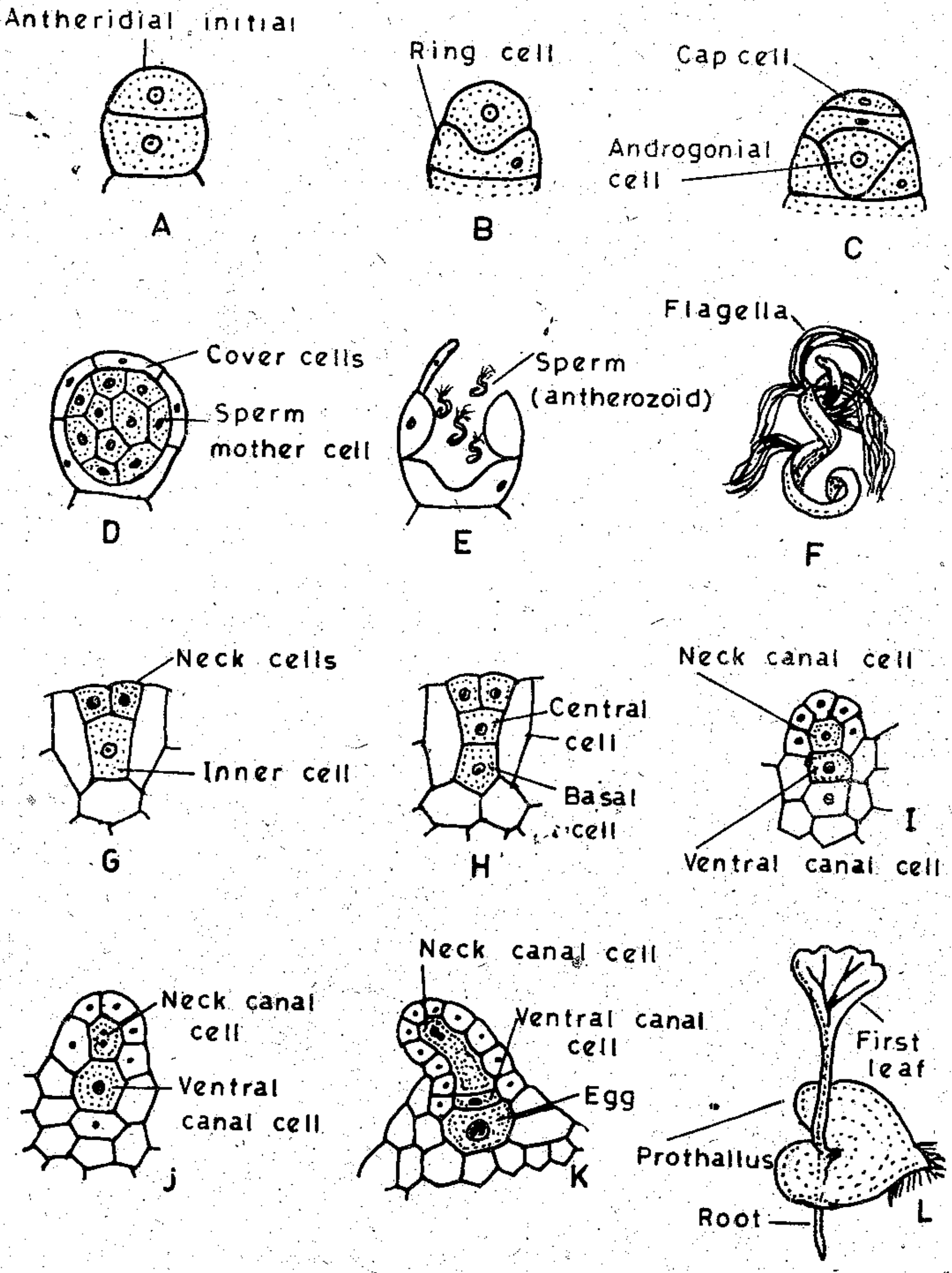

चित्र 17.16 : *टेरिस* : A-E) पुंधानी के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, F) एक पुमणु, G-K) स्त्रीधानी के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, L) बीजाणु-उद्भिदी पादप के साथ प्रोथैलस।

पुंधानी की ही भाँति, स्त्रीधानी भी सतही कोशिका (superficial cell) से विकसित होती है जो अनुप्रस्थ विभाजन से एक ऊपरी प्राथमिक आवरण कोशिका (cover cell) तथा एक निचली भीतरी कोशिका में विभाजित हो जाती है। निचली कोशिका के अनुप्रस्थ विभाजनों से एक ऊपरी प्राथमिक आवरण कोशिका एक मध्य केन्द्रीय कोशिका (middle central cell) तथा नीचे की एक आधारीय कोशिका (basal cell) का निर्माण होता है। आवरण कोशिका में दो ऊर्ध्वाधर विभाजनों से जो एक दूसरे के समकोण होते हैं चार प्राथमिक ग्रीवा कोशिकाएं बनती हैं (चित्र 17.16 G and H)। केन्द्रीय कोशिका के विभाजनों के फलस्वरूप एक ऊपरी प्राथमिक ग्रीवा नाल कोशिका तथा एक आधारीय प्राथमिक अंडधा कोशिका बनती है (चित्र 17.16 I and J)। प्राथमिक ग्रीवा कोशिका अनुप्रस्थ रूप से विभाजित होकर 3-7 कोशिकाओं की ऊंचाई की ग्रीवा बनाती है। सिर्फ एक ग्रीवा नाल कोशिका, जो द्विकेन्द्रकी होती है, उपस्थित रहती है। प्राथमिक अंडधा कोशिका एक ऊपरी छोटी अंडधा नाल कोशिका (ventral canal cell) तथा एक निचली बड़ी अंड कोशिका (egg cell) बनाती है (चित्र 17.16 K)। परिपक्व होने पर स्त्रीधानी में दो सुस्पष्ट भाग होते हैं : ग्रीवा तथा अंडधा। ग्रीवा, कोशिकाओं की चार अनुदैर्ध्य कतारों की बनी होती है जिनके शीर्ष पर चार आवरण कोशिकाएं होती हैं। ग्रीवा के भीतर ग्रीवा नाल कोशिका (neck canal cell) (कोशिकाएं) उपस्थित होती हैं। नीचे के फूले हुए अंडधा क्षेत्र में एक अंड तथा एक अंडधा नाल कोशिका होती है।

निषेचन के लिए जल की आवश्यकता होती है क्योंकि युग्मक कशाभयुक्त होते हैं। जल प्रोथैलस की अधर सतह तथा मिट्टी के बीच की जगह में उपलब्ध रहता है। दोनों प्रकार के लैंगिक अंग नम अवस्तर (substratum) के संपर्क में रहते हैं तथा प्रोथैलस की निचली सतह पर खुलते हैं। पुमणु मैलिक अम्ल द्वारा आकर्षित होते हैं। यह अम्ल स्त्रीधानियों की खुली ग्रीवाओं से जल में स्रावित होने वाले श्लेष्म में से विसरित होता है। जब ये पुमणु अंत: ग्रीवा में प्रवेश करते हैं तो उनमें से एक पुमणु अंड के साथ मिल जाता है। निषेचित अंडा अपने चारों ओर एक भित्ति स्रावित कर लेता है। प्रत्येक प्रोथैलस में सिर्फ एक स्त्रीधानी के अंड का निषेचन होता है। निषेचन के पश्चात् प्रोथैलस की वृद्धि रुक जाती है।

युग्मनज का प्रथम विभाजन स्त्रीधानी की लंब अक्ष (long axes) के समानान्तर होता है तथा असमान होता है। प्रोथैलस के शीर्ष की ओर की छोटी कोशिका अध्याधार कोशिका (epibasal cell) तथा बड़ी अधराधार कोशिका (hypobasal cell) होती है। आगे के विभाजनों के फलस्वरूप बहुकोशिकीय भ्रूण बनता है तथा 32-कोशिकीय अवस्था में विभिन्न अंगों का विभेदन होता है। अग्रवर्ती ऊर्ध्व अष्टांशक (anterior superior octant) प्ररोह को निर्मित करता है। प्रथम पर्ण अग्रवर्ती अधरवर्ती अष्टांशक (anterior inferior octant) से उगती है जबकि जड़ पश्चवर्ती अधावर्ती अष्टांशक (posterior superior octant) से विकसित होती है तथा पाद (foot) पश्चवर्ती ऊर्ध्व अष्टांशक (posterior superior octant) से निर्मित होता है। आगे विकास के दौरान जड़ तेजी से बढ़ती है तथा मिट्टी से संपर्क स्थापित कर लेती है प्रथम पर्ण प्रोथैलस से बाहर निकल आता है तथा अंतत: नए पादप का निर्माण होता है (चित्र 17.16 L)।

बोध प्रश्न 17.5

टेरिस के बारे में दिए निम्नलिखित वक्तव्यों के लिए कोष्ठक में दिए गए विकल्पों में से सही शब्द चुनिए।

i) *टेरिस* में बीजाणुधानियाँ पत्ती की (पृष्ठ/अधर) सतह पर उत्पन्न होती हैं।

ii) एक (वास्तविक/कूट) सोरसछद सोरस को ढंके रहता है।

iii) वलयिका (आठ/सोलह) कोशिकाओं की बनी होती है।

iv) बीजाणुधानी का विकास (तनुबीजाणुधानीय/सुबीजाणुधानीय) प्रकार का होता है।

v) प्रोथैलस (उभयलिंगाश्रयी/एकलिंगाश्रयी) होते हैं।

vi) लैंगिक अंग प्रोथैलस की (पृष्ठ/अधर) सतह पर उपस्थित रहते हैं।

17.2.6 साएथिया

टेरिस की ही भांति, *साएथिया* वास्तविक फर्न है। इस अध्याय में आप *साएथिया* की प्रजनन संरचनाओं के बारे में पढ़ेंगे तथा फिलिकोफाइटा के इन दोनों वंशों के बीच विभेदों को भी जानेंगे।

प्रजनन संरचनाएं

साएथिया में बीजाणु निर्मित करने वाले अंग यानि की बीजाणुधानियां पिच्छिकाओं की अधर सतह पर

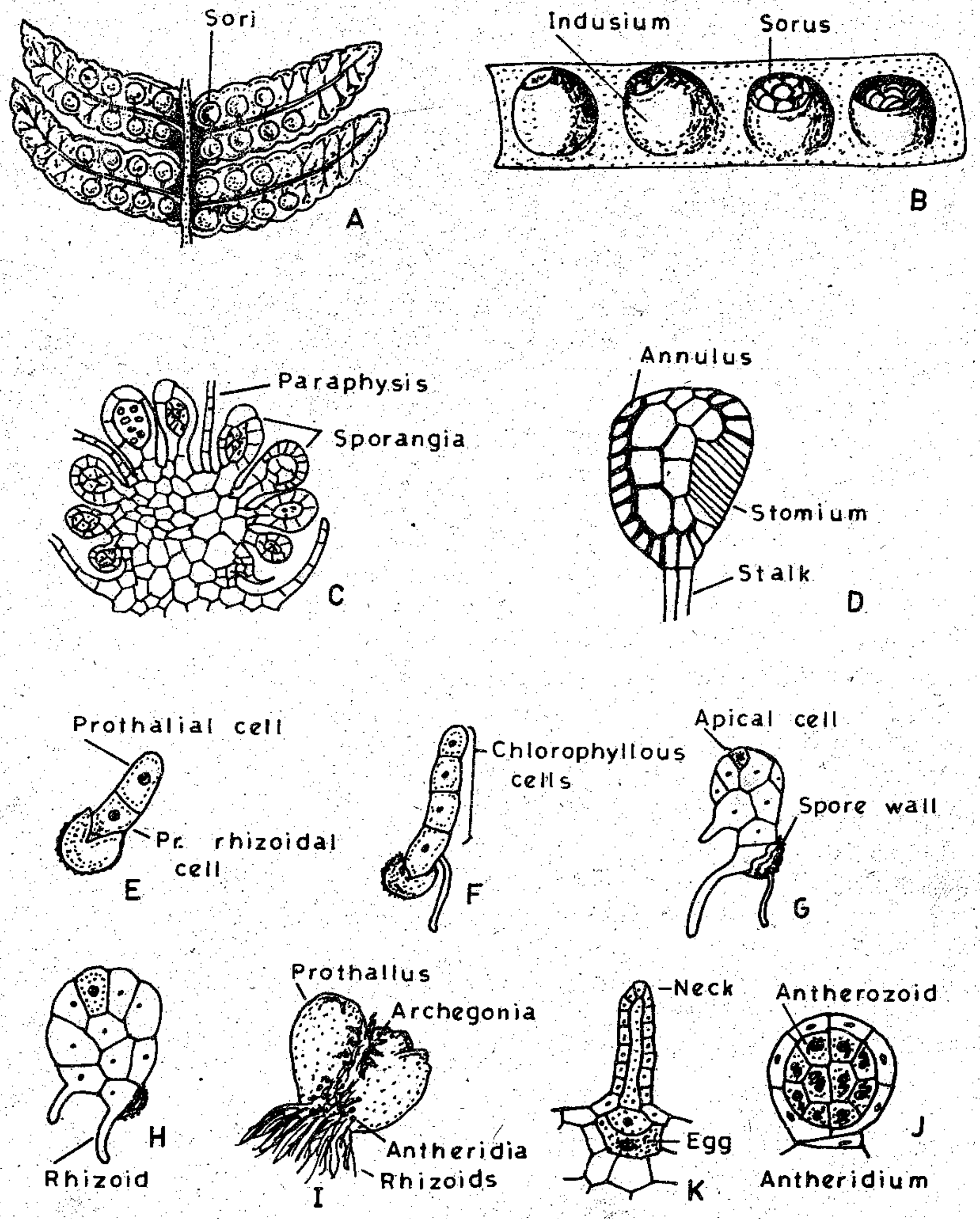

चित्र 17.17 : *साऐथिया :* A) अधर सतह पर बीजाणुधानी पुंजों को दिखाते हुए पत्ती का एक भाग, B) A का एक दीर्घीकृत भाग, C) बीजाणु के विकास की विभिन्न अवस्थाओं को दिखाते हुए बीजाणु पुंज की ऊर्ध्वाधर काट, D) एक एकल बीजाणुधानी, E-H) अंकुरित होते बीजाणु से प्रोथैलस के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, I) एक वयस्क प्रोथैलस, J) एक पुंधानी, K) एक स्त्रीधानी।

पाई जाती हैं। ये बीजाणुधानियाँ स्पष्ट सोराई के रूप में एक साथ गुच्छित रहती हैं। सोरस पिच्छिकाओं की मध्यशिरा के दोनों ओर एकल श्रेणी में व्यवस्थित रहते हैं (चित्र 17.17 A)। प्रत्येक सोरस एक पार्श्व शिरा पर उपस्थित रहता है तथा शिरा पर इनकी स्थिति भिन्न-भिन्न जातियों में विभिन्न होती है। सोरस को धारण करने वाली रिसेप्टिकल गोलाभ (globose) अथवा दीर्घित (elongated) होती है तथा पर्याप्त रूप से पिच्छिका की सतह के ऊपर निकली रहती है।

साएथिया में सोरसछद (indusium) सुविकसित होते हैं। यह धानी के आधार से एक कप जैसी संरचना के रूप में निकलते है तथा जब यह तरुण होते है तब संपूर्ण सोरस को आच्छादित कर लेते है। परिपक्व होने पर सोरसछदों के शीर्ष भाग अनियमित रूप से विभक्त हो जाते है तथा सिर्फ इनके आधार बचे रहते हैं (चित्र 17.17 B, C)। कुछ जातियों में सोरसछदों का विकास बहुत धीमा होता है तथा विकासशील बीजाणुधानियां रोमों (hairs) द्वारा रक्षित रहती है, जबकि अन्य में सोरसछद बहुत ही तेज गति से वृद्धि करते है तथा शीघ्र ही विकासशील बीजाणुधानी को ढक लेते हैं।

बीजाणुधानी का विकास रिसेप्टिकल(receptacle) पर बीजाणुधानीय आरंभकों (sporangial initial) के प्रकट होने के साथ ही आरंभ होना है। ये आरंभक तलाभिसारी क्रम (basipetalous) में उगते हैं। बीजाणुधानी का विकास तनुबीजाणुधानीय प्रकार का होता है जैसा कि *टेरिस* में पाया जाता है। तरुण बीजाणुधानी में एक-परत की बाह्य भित्ति तथा दो परत का टेपीटम होता है। इसमें चार से सोलह बीजाणु मातृ कोशिकाएं (spore mother cells) होती है। परिपक्व बीजाणुधानी में सुस्पष्ट वृंत तथा एक छोटा संपुट यानि कैप्सूल होता है। वृंत में कोशिकाओं की चार ऊर्ध्वाधर कतारें होती हैं। संपुट में तिरछे रूप में ऊर्ध्वाधर वलयिका होती है जो बीजाणुधानी के संपुट को अपूर्ण रूप से घेरे रहती है। एक सुस्पष्ट रंध्रक (stomium) भी उपस्थित रहता है (चित्र 17.17 D)। परिपक्व होने पर एक अनुप्रस्थ स्फुटन झिरी इस क्षेत्र में दिखाई पड़ती है जिससे बीजाणु प्रक्षेपित हो जाते हैं।

युग्मकोद्भिद् का विकास

बीजाणु अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित होते हैं। पहला विभाजन अनुप्रस्थ होता है (चित्र 17.17 E)। यह बीजाणु को निचली प्राथमिक मूलाभासी कोशिका में तथा ऊपरी प्रोथैलसी कोशिका में विभाजित करता है। पहली कोशिका से प्राथमिक मूलाभास का विकास होता है तथा दूसरी पर्णहरित युक्त कोशिकाओं के छोटे तंतु में विकसित होती है (चित्र 17.17 F)। अनुदैर्ध्य विभाजन के फलस्वरूप कोशिकाओं की एक चपटी पट्टिका निर्मित होती है (चित्र 17.17 G)। आगे विभाजन के द्वारा इसका पट्टिका जैसे युग्मकोद्भिद् में विभेदन होता है जिसमें एक शीर्ष कोशिका होती है (चित्र 17.17 H), परंतु बाद में शीर्ष कोशिका की जगह विभज्योतकी कोशिकाओं का समूह ले लेता है। परिपक्व होने पर प्रोथैलस हृदयाकार होता है। शीर्ष खांच के पीछे एक कुशन होता है जो कुछ कोशिकाओं की मोटाई का होता है। *साऐथिया* में प्रोथैलस की अधर सतह पर शल्क-नुमा रोम पाये जाते हैं (चित्र 17.17 I)।

सामान्यत: लैंगिक अंग प्रोथैलस की अधर सतह पर निकलते हैं। वे आमतौर पर पश्च सिरे पर विकसित होते हैं। स्त्रीधानियों की शुरुवात शीर्ष खांच के ठीक पीछे कुशन पर होती है। पुंधानियों तथा स्त्रीधानियों का विकास *टेरिस* के समान अथवा अन्य तनुबीजाणुधानीय फर्नों जैसा ही होता है। हालांकि *साऐथिया* में पुंधानी में एक वृंत कोशिका तथा दो प्रच्छदी यानि (opercular) (गोपक) कोशिकाएं पाई जाती हैं। दो प्रच्छदी कोशिकाएं प्राथमिक प्रच्छदी कोशिका के विभाजन द्वारा बनती हैं। परिपक्व स्त्रीधानी में ग्रीवा पाई जाती हैं जो चार अनुदैर्ध्य कतारों की बनी होती है तथा प्रत्येक कतार लगभग 9 कोशिकाओं की ऊंचाई की होती है (चित्र 17.17 K)। ग्रीवा के अंदर ग्रीवा नाल कोशिका उपस्थित रहती है तथा यह द्विकेन्द्रकी अथवा चतुकेन्द्रकी हो सकती है। अंडधा क्षेत्र में एक अंडधा नाल कोशिका तथा अंड उपस्थित रहता है। निषेचन जल की उपस्थिति में होता है तथा अंड के पुमणु के साथ संलयन के फलस्वरूप युग्मनज का निर्माण होता है। युग्मनज का प्रथम विभाजन ऊर्ध्वाधर होता है तथा इसके बाद विभिन्न तलों में दो अन्य विभाजनों के द्वारा अष्टांशक अवस्था का निर्माण होता है। इस अवस्था में, बीजाणु-उद्भिद् के प्राथमिक अंगों की शीर्ष कोशिकाएं विभेदित हो जाती हैं। प्राथमिक पर्ण अथवा बीजपत्र प्रोथैलस में से बाहर उग आते हैं तथा प्राथमिक जड़ पहले उगती है तथा तरुण बीजाणु-उद्भिद् को स्थापित करती है।

बोध प्रश्न 17.6

i) *साऐथिया* में बीजाणुधानियां सुस्पष्ट ·········· बनाती हैं।

ii) सोरस, पिच्छिका की ·········· के दोनों ओर व्यवस्थित रहते हैं।

iii) एक कप के आकार का ·········· सोरसछद *साऐथिया* में प्रत्येक सोरस को घेरे हुए उपस्थित रहता है।

iv) बीजाणुधानी का विकास ·········· प्रकार का होता है।

v) *साऐथिया* का प्रोथैलस ·········· के आकार का होता है।

17.2.7 *मार्सीलिया*

पिछली इकाई में आपने पढ़ा था कि संरचनात्मक रूप से *मार्सीलिया* अन्य टेरिडोफाइट्स से काफी भिन्न होता है। इस अध्याय में आप *मार्सीलिया* के प्रजनन जीवविज्ञान के विशिष्ट लक्षणों के बारे में पढ़ेंगे।

प्रजनन संरचनाएं

मार्सीलिया विषमबीजाणुक होता है। लघुबीजाणु तथा गुरूबीजाणु क्रमशः लघुबीजाणुधानी तथा गुरूबीजाणुधानी के भीतर विकसित होते हैं जो कि बहुत अधिक विशिष्ट संरचनाओं में उत्पन्न होते हैं इन संरचनाओं को बीजाणु-फलिका (sporocarp) कहते हैं। ये चपटी, गोलाकार से अंडाभ आकार तक की होती हैं तथा वृंत लिए होती हैं। ये पर्णवृंत के आधार के थोड़ा सा ऊपर की ओर लगी रहती हैं (चित्र 17.18 A)।

मार्सीलिया पोलीकार्पा (*Marsilea polycarpa*) में बहुत सारी बीजाणु-फलिका वृंत के एक तरफ होती हैं, परंतु अन्य जातियों में सामान्यतः एक पर्णवृंत पर एक बीजाणु-फलिका लगी रहती है। *मार्सीलिया क्वाड्रीफोलिया* (*Marsilea quadrifolia*) में बीजाणु-फलिका के वृंत के शाखन के फलस्वरूप प्रत्येक पर्णवृंत पर 2-3 बीजाणु-फलिका निर्मित हो सकती हैं। कुछ जातियों में बीजाणु-फलिका में सुस्पष्ट बाहरी कटक (ridge), संधिरेखा (raphe) तथा दो उभार (bumps) होते हैं। संधिरेखा वृंत के संलग्न (attachment) होने वाले अंत को प्रदर्शित करती है (चित्र 17.18 B)।

बीजाणु-फलिका की भित्ति मोटी होती है तथा चोट अथवा सूखे के लिए प्रतिरोधी होती है। बीजाणु-फलिका की गुहा के भीतर जिलेटिनी ऊतक की एक वलय (gelatinous ring) होती है। दोनों तरफ दीर्घित सोराइ की दो कतारें होती हैं जो बीजाणु-फलिका की लंब अक्ष की अनुप्रस्थ दिशा में विस्तारित रहती हैं (चित्र 17.18 C)। प्रत्येक सोरस, रिसेप्टिकल (receptacle) पर एक कटक जैसे बीजांडासन (placenta) पर उगता है जो जिलेटिनी वलय से तथा बीजाणुफलिका की भित्ति के एक तरफ से भी जुड़ा रहता है। सोराइ दो-परत की झिल्लीनुमा सोरसछद से ढके रहते हैं। विभिन्न जातियों में प्रत्येक बीजाणु-फलिका में सोरसों की संख्या 2 से 20 तक भिन्न हो सकती है। गुरूबीजाणुधानियां ऊपर उठी हुई रिसेप्टिकल्स (receptacles) पर उगती हैं। प्रत्येक गुरूबीजाणुधानी में एक बड़ा गुरूबीजाणु होता है (चित्र 17.18 D)। गुरूबीजाणुधानियों के किनारों पर लघुबीजाणुधानियां उगती है जिनमें असंख्य लघुबीजाणु होते हैं (चित्र 17.18 D-E)।

परिपक्व होने पर बीजाणु-फलिका दो कपाटों (valves) के रूप में खुल जाती है। यह इसलिए होता है क्योंकि जिलेटिनी वलय जल अवशोषित करके विस्तारित हो जाती है। रिसेप्टिकल (receptacle) के चारों ओर की विलग परत के द्वारा सोरस बीजाणु-फलिका की भित्ति से अलग हो जाता है। इसके बाद वलय एक ओर से टूट जाती है तथा सोरस लिए हुए एक दीर्घित कृमि-जैसी संरचना बाहर निकलती है (चित्र 17.18 F)। अपनी मोटी भित्तियों के कारण बीजाणु-फलिकाएं बहुत लंबे काल तक सूखे की

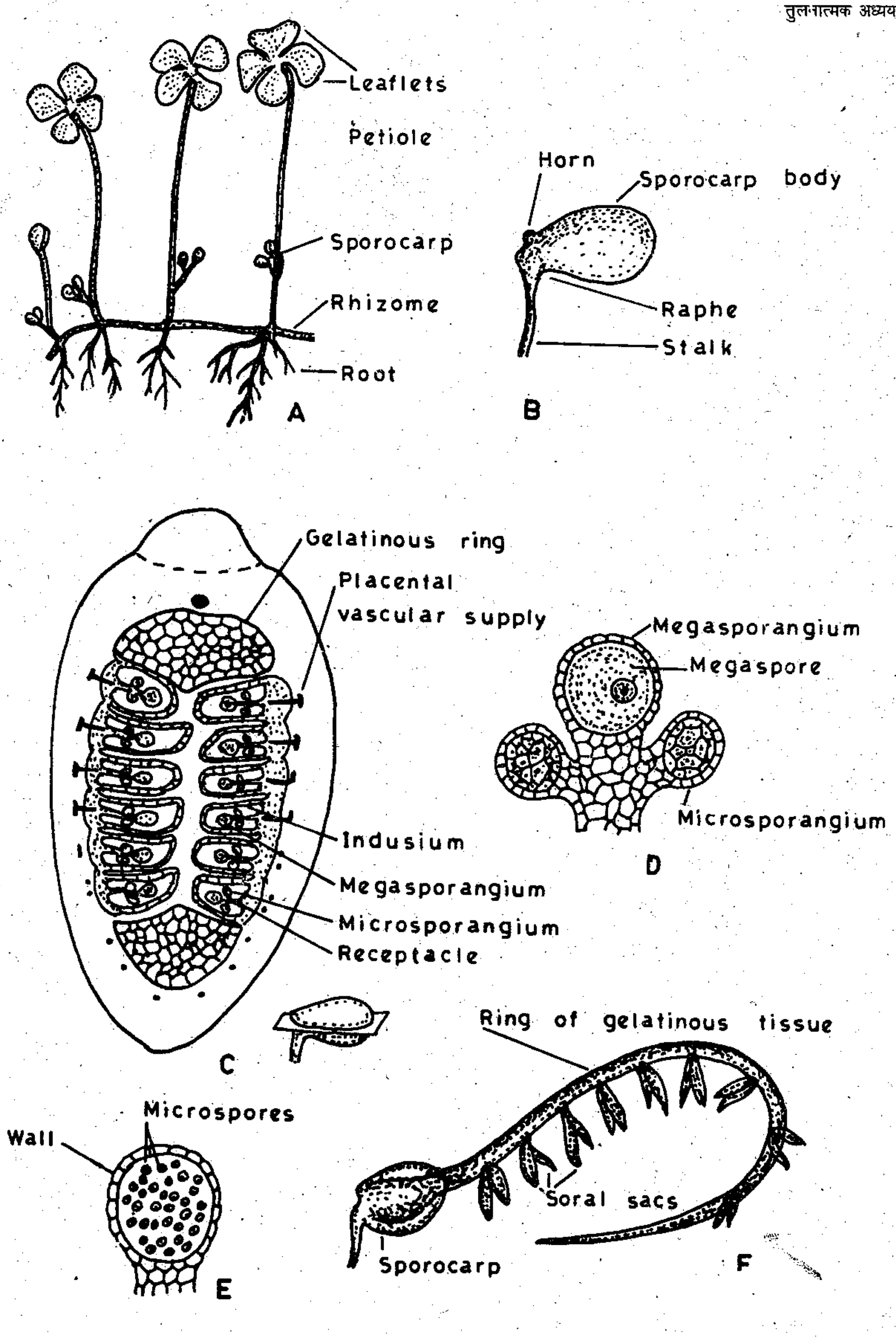

चित्र 17.18 : *मार्सीलिया;* A) बीजाणु-फलिकाओं के साथ पादप, B) बीजाणु-फलिका की विस्तृत संरचना, C) बीजाणु-फलिका से होती हुई क्षैतिज काट, D) अंतस्थ दीर्घबीजाणुधानी तथा पार्श्व लघुबीजाणु के साथ तरुण बीजाणुधानी पुंज, E) एक एकल लघुबीजाणुधानी, F) एक स्फुटित बीजाणु-फलिका बीजाणुधानी पुंज कोषों (soral sacs) को लिए हुए श्लेष्मीय संरचना को दिखाते हुए।

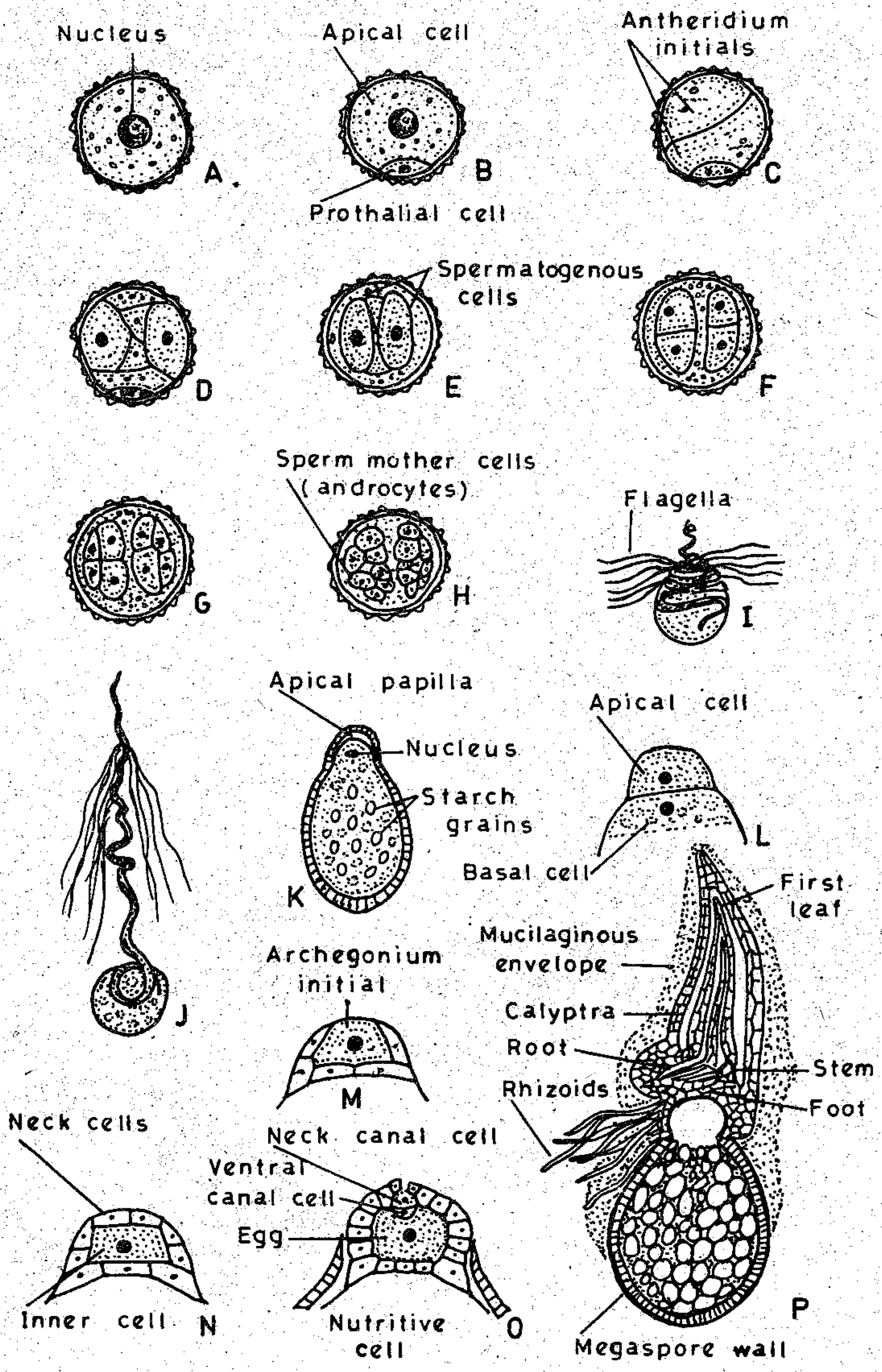

चित्र 17.19 : *मार्सीलिया;* **A)** एक लघुबीजाणु, **B)** दो-कोशिकीय लघु युग्मकोद्भिद्, **C-H)** नर युग्मकोद्भिद् के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, **I-J)** बहुकशाभी शुक्राणु (पुंमणु), **K)** वयस्क दीर्घबीजाणु, **L-O)** मादा युग्मकोद्भिद् में स्त्रीधानी के विकास की विभिन्न अवस्थाएं, **P)** बीजाणु-उद्भिद् की अनुदैर्ध्य काट जबकि वह गोपक (**calyptra**) के अंदर ही रहता है।

स्थितियों को झेल लेती है तथा 35-40 वर्षों तक जीवनक्षम रहती हैं। बीजाणु अपने आस पास के ऊतक के अपघटन के द्वारा मुक्त होते हैं। लघुबीजाणु में छोटी तथा गोलाभ कोशिकाएं होती हैं जिनके केन्द्र में स्थित सुव्यक्त केन्द्रक होता है (चित्र 17.19 A)। उनमें कुछ मंड कण भित्ति के निकट स्थित रहते हैं। लघुबीजाणु परिक्षेपण के बाद जल्दी ही अंकुरित हो जाते हैं। केन्द्रक एक ओर को खिसक जाता है तथा पहला विभाजन असमान होता है जिससे एक छोटी लैन्स के आकार की कोशिका तथा एक बड़ी कोशिका बनती है। बड़ी कोशिका विभाजनों की एक श्रृंखला के द्वारा दो पुमणुजन कोशिकाओं में विभक्त हो जाती है जो 32 पुमणु उत्पन्न करती हैं (चित्र 17.19 B-H)। *मार्सीलिया* में पुमणु बहुकशाभी तथा पेंचाकार होते हैं जिनमें उन्नत धानी होती है (चित्र 17.19 I तथा J)। गुरूबीजाणु बड़ी, सफेद, अंकुरक (papillate) संरचना होती है। यह एक जिलेटिनी परत द्वारा आच्छादित रहती है तथा इसका केन्द्रक अंकुरक (papilla) के निकट स्थित रहता है (17.19 K)। पहला विभाजन एक छोटी कोशिका बनाता है जो अंकुरक में रहती है (चित्र 17.19 L)। बड़ी आधारीय कोशिका बीजाणु के बाकी के हिस्से में होती है तथा इसमें काफी मात्रा में संचित खाद्य पदार्थ होता है। *मार्सीलिया* में मादा युग्मकोद्भिद् सिर्फ एक स्त्रीधानी निर्मित करता है। स्त्रीधानी के विकास की अवस्थाओं को चित्र 17.19 (M-O) में देखा जा सकता है। गुरूबीजाणु के चारों ओर जिलेटिनी आच्छद के शीर्ष पर एक मुख यानि द्वार होता है। पुमणु आच्छद से संलग्न हो जाते हैं तथा आच्छद के द्वार से होकर नीचे स्त्रीधानी में चले जाते हैं। भ्रूण अंकुरक क्षेत्र में सीमित रहता है। पहला विभाजन अनुदैर्ध्य तथा दूसरा अनुप्रस्थ होता है जिससे चतुष्क का निर्माण होता है। इस चतुष्क के दो बाहरी खंड पत्ती तथा जड़ को निर्मित करते हैं तथा भीतर के दोनों खंड तने तथा पाद को निर्मित करते हैं (चित्र 17.19 P)।

बोध प्रश्न 17.7

निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य हैं तथा कौन से असत्य हैं सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) लिखिए।

i) *मार्सीलिया* में बीजाणुधानियां विशिष्ट संरचनाओं के अंदर उत्पन्न होती हैं जिन्हें बीजाणु-फलिका कहते हैं। ☐

ii) प्रत्येक गुरूबीजाणुधानी में चार गुरूबीजाणु होते हैं। ☐

iii) *मार्सीलिया* के पुमणु द्विकशाभी होते हैं। ☐

iv) गुरूबीजाणु की अंकुरक संरचना होती है। ☐

v) प्रत्येक मादा युग्मकोद्भिद् द्वारा एक से अधिक स्त्रीधानियां उत्पन्न होती हैं। ☐

vi) प्रत्येक नर युग्मकोद्भिद् 32 पुमणु निर्मित करता है। ☐

17.3 कायिक प्रजनन

ऊपर वर्णित किए गए लैंगिक प्रजनन के तरीकों के अतिरिक्त टेरिडोफाइट्स कायिक विधियों से भी पुनरुत्पादन कर सकते हैं। इस अध्याय में आप कायिक प्रवर्धन के कुछ तरीकों के बारे में पढ़ेंगे। *साईलोटम* तथा *लाइकोपोडियम* में कायिक प्रवर्धन जेमी (gemmae) अथवा शाव यानि अंड कोशिकाओं (brood cells) के माध्यम से होता है। *साईलोटम* में जेमा छोटे, अंडाभ तथा बहुकोशिकीय उद्वर्ध के रूप में मूलाभासों के बीच में अथवा शाखाओं के कक्ष पर होते हैं। ये जेमा दो-तरफी शीर्ष कोशिका के (2-sided apical cell) द्वारा उगते हैं। जनक पादप से अलग होने के बाद ये नए पादप के रूप में विकसित हो जाते हैं। *लाइकोपोडियम* में जेमा पत्रप्रकलिका (bulbils) भी कहलाते हैं। ये छोटे लघुकृत अक्ष होते हैं जो मोटी तथा गूदेदार पत्तियों से घिरे रहते हैं।

सैलाजिनेला, लाइकोपोडियम, एक्वीसीटम तथा *टेरिस* में खंडन (fragmentation) के द्वारा कायिक प्रवर्धन भी प्रचलित है। इस विधि में, पुराने हिस्सों की मृत्यु तथा क्षय हो जाता है जिससे तरुण शाखाएं अलग हो जाती है तथा उनमें से प्रत्येक शाखा एक नए पादप में विकसित हो जाती है।

लाइकोपोडियम तथा *सैलाजिनेला* में विपरीत परिस्थितियों में शीर्ष कलिकाओं के सिरे संचित खाद्य पदार्थ जमा कर लेते हैं तथा इन्हें संहत रूप से व्यवस्थित पत्तियाँ घेर लेती हैं। अनुकूल परिस्थितियों के वापिस आने पर ये सुप्त कलिकाएं पुनः वृद्धि करने लगती हैं तथा नया पौधा निर्मित करती हैं।

लाइकोपोडियम, सैलाजिनेला तथा *एक्वीसीटम* में कायिक प्रजनन मूल गुलिका (root tubercle) के निर्मित होने से भी होता है। ये गुलिकाएं बहुकोशिकीय संरचनाएं होती है तथा जड़ के वल्कुट क्षेत्र से उत्पन्न होती हैं। ये मोटी भित्ति वा‌ी कोशिकाओं से रक्षित रहती हैं तथा इनमें काफी मात्रा में संचित खाद्य पदार्थ रहता है। *मार्सीलिया* में तने कायिक प्रजनन के लिए कंद (tuber) निर्मित करते हैं।

17.4 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा :

- सामान्यतः टेरिडोफाइट्स में बीजाणुधानियाँ बीजाणुओं को धारण करती हैं जो अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित होते हैं तथा प्रोथैलस उत्पन्न करते हैं। प्रोथैलस पर जैकेट युक्त लैंगिक अंग उगते हैं। नर युग्मक कशाभयुक्त होते हैं तथा कशाभों की संख्या विभिन्न समूहों में भिन्न-भिन्न होती है।

- *राइनिया* में बीजाणुधानियाँ अंतस्थ तथा नुकीली होती हैं। वे एकल रूप में पाई जाती हैं तथा सिर्फ एक प्रकार के बीजाणु बनाती हैं। जीवाश्मों के अभावों के कारण युग्मकोद्भिद् के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है।

- *साईलोटम* में 3-कोष्ठीय बीजाणुधानियाँ जिन्हें संबीजाणुधानी कहते हैं, छोटी पार्श्व शाखाओं पर पाई जाती हैं। वे समबीजाणुक होते हैं। बीजाणु वृक्काकार होते हैं।

- *लाइकोपोडियम* तथा *सैलाजिनेला* में बीजाणुधानियाँ पत्तियों पर उगती हैं जिन्हें बीजाणुपर्ण कहते हैं। ये शीर्ष पर स्ट्रोबिलस बनाती हैं। *लाइकोपोडियम* में सिर्फ एक प्रकार के बीजाणु उत्पन्न होते हैं, जबकि *सैलाजिनेला* में लघुबीजाणु तथा गुरूबीजाणु क्रमशः लघुबीजाणुधानी तथा गुरूबीजाणुधानी के अंदर उत्पन्न होते हैं।

- *एक्वीसीटम* में बीजाणुधानियाँ वृंतीय, छत्रिकाकार बीजाणुधानीधरों पर निर्मित होती हैं। *एक्वीसीटम* के बीजाणुओं में कूटइलेटर्स होते हैं।

- *टेरिस* में बीजाणुधानियाँ जननक्षम पत्तियों के किनारों पर उत्पन्न होती हैं तथा वे कूट सोरसछद द्वारा रक्षित रहती हैं कूट सोरसछद बीजाणुधानियों में सुस्पष्ट वलयिका तथा मुख होता है जो बीजाणुओं के परिक्षेपण में सहायता करता हैं। लैंगिक अंग बहुत अधिक लघुकृत होते हैं।

- *साऐथिया* में बीजाणुधानियाँ विशिष्ट समूह बनाती हैं जिन्हें सोरस कहते हैं तथा वे पत्तियों की अधर सतह पर उपस्थित रहते हैं। सोरस वास्तविक कप-नुमा सोरसछद द्वारा रक्षित रहते हैं।

- *मार्सीलिया* में बीजाणुधानियाँ बहुत अधिक विशिष्ट संरचनाओं में निर्मित होती है जिन्हें बीजाणु-फलिका कहते हैं। यह विषमबीजाणुक है। गुरूबीजाणुधानियाँ शीर्ष में तथा लघुबीजाणुधानियाँ पार्श्व में स्थित होती हैं। गुरूबीजाणुधानी में सिर्फ एक ही गुरूबीजाणु निर्मित होता है।

17.5 अंत में कुछ प्रश्न

1. टेरिडोफाइट्स के प्रजनन अंगों की विशिष्ट विशेषताओं का संक्षिप्त रूप से वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2. *साईलोटम* में युग्मकोद्भिद् के विकास का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

3. *सैलाजिनेला* के स्ट्रोबिलस की ऊर्ध्वाधर काट का आरेख बनाइए।

4. *लाइकोपोडियम* में पाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के युग्मकोद्भिदों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

5. लेबल किए हुए आरेखों की सहायता से *एक्वीसीटम* के स्ट्रोबिलस की संरचना का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

6. *मार्सीलिया* की बीजाणु-फलिका की संरचना का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

7. *टेरिस* में बीजाणु से लेकर प्रोथैलस तक के निर्माण में सम्मिलित विभिन्न चरणों को बताइए।

....

....

....

....

....

....

....

17.6 उत्तर

बोध प्रश्न

17.1. अ) i) अ ii) स iii) अ iv) अ

ब) i) अ ii) अ iii) स iv) स

v) स

स) i) संबीजाणुधानी

ii) 1-3 वाहिनिकाएं

iii) उभयलिंगाश्रयी

iv) टेपीटम

v) त्रि-अरीय

17.2 i) बीजाणुपर्ण

ii) स्ट्रोबिलस/शंकु

iii) पुंधानियां, स्त्रीधानियां

iv) सतही

17.3 अ) i) स ii) अ iii) स iv) स

ब) i) सुबीजाणुधानीय

ii) बड़ी

iii) द्विकशाभी

iv) भीतर

स) इकाई में भाग 17.2.2 तथा 17.2.3 को देखिए

17.4 अ) i) स ii) अ iii) अ iv) स

ब) i) बीजाणुधानीधर

ii) छत्रिकाकार

iii) चार

iv) इलेटर्स

v) अनुदैर्ध्य

vi) किनारे वाले

17.5 i) अधर

ii) कूट

iii) सोलह

iv) तनुबीजाणुधानीय

v) उभयलिंगाश्रयी

vi) अधर

17.6 i) सोरस या बीजाणुधानी पुंज

ii) मध्यशिरा

iii) वास्तविक

iv) तनुबीजाणुधानीय

v) हृदय

17.7 i) स ii) अ iii) अ iv) स v) अ vi) स

अंत में कुछ प्रश्न

1. देखिए भाग 17.2
2. देखिए भाग 17.2.1
3. देखिए चित्र 17.7
4. देखिए भाग 17.2.2
5. देखिए भाग 17.2.4
6. देखिए भाग 17.2.7
7. देखिए भाग 17.2.5

इकाई 18 सार : निम्न पादप

इकाई की रूपरेखा

18.1 प्रस्तावना

उद्देश्य

18.2 टीलोम धारणा

18.3 रंभीय संरचना तथा विकास

18.4 विषमबीजाणुता तथा बीज प्रकृति

18.5 प्रयोगात्मक अध्ययन के लिए एक प्रणाली के रूप में फर्न

ध्रुवीयता

पुनर्जनन

अपयुग्मन तथा अपबीजाणुता

18.6 सारांश

18.7 अंत में कुछ प्रश्न

18.8 उत्तर

18.1 प्रस्तावना

पूर्व इकाइयों (16, 17) में आपने आदिम थल पादपों के विभिन्न समूहों के कुछ चुने हुए वंशों की संरचना तथा प्रजनन के बारे में पढ़ा था। आपने ध्यान दिया होगा कि संरचना तथा प्रजनन की प्रक्रिया में कुछ मूलभूत समानताओं के बावजूद, आदि प्रकारों जैसे *राइनिया* तथा *साईलोटम* से आरंभ करके सबसे अधिक उन्नत वास्तविक फर्न जैसे कि वृक्ष फर्न *साऐथिया* तक में बहुत से लक्षणों में एक क्रमिक उन्नति पाई जाती है। यह उन्नति पत्ती, रंभ व प्रजनन अंगों की संरचना में देखी जा सकती है। इस अध्याय में आप इन में से कुछ प्रवृत्तियों के बारे में पढ़ेंगे।

संवहनी पादपों के विकासात्मक पैटर्नों को समझने के लिए, टेरिडोफाइट्स प्रायोगिक अध्ययन के लिए भी उपयुक्त है। इनका विकासात्मक जीवविज्ञान में अनुसंधान के लिए काफी उपयोग किया जाता है। आप इनमें से कुछ पहलूओं जैसे कि पुनर्जनन, ध्रुवीयता, अपयुग्मन तथा अपबीजाणुता के बारे में पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- टीलोम धारणा तथा समतलन (planation), उच्चातिक्रमी (overtopping), सहजनन (syngenesis), लघुकरण (reduction) तथा प्रतिवक्रण (recurving) को परिभाषित कर सकेंगे,
- विभिन्न प्रकार के रंभों के बीच विभेद कर सकेंगे,
- विषमबीजाणुता तथा बीज प्रकृति की उत्पत्ति का वर्णन कर सकेंगे तथा
- ध्रुवीयता, पुनर्जनन, अपयुग्मन तथा अपबीजाणुता की व्याख्या कर सकेंगे।

18.2 टीलोम धारणा

निम्नलिखित जीवाश्म डिवोनी कल्प के हैं।

सोडोनिया (*Sawdonia*)
ऐस्टेरोक्सिलॉन (*Asteroxylon*)
बाराग्वान्थिया (*Baragwanthia*)

संवहनी पादपों में पत्तियाँ बीजाणु-उद्भिदी पौधे का एक प्रमुख भाग होती हैं। प्राचीन संवहनी पादपों में जैसे *कुकसोनिया* तथा *राइनिया* में पत्तियाँ अनुपस्थित थीं। कुछ जीवित टेरिडोफाइट्स जैसे *साईलोटम* तथा *लाइकोपोडियम* में सरल पर्ण पाए जाते हैं। वास्तविक फर्न जैसे कि *लाइगोडियम* (*Lygodium*) तथा *ग्लाइकीनिया* (*Gleichenia*) में अनिश्चित वृद्धि वाली पत्तियाँ होती हैं तथा वे 30 मीटर तक की ऊँचाई प्राप्त कर लेती हैं। जैसा कि आप पहले से ही जानते हैं कि टेरिडोफाइट्स में दो प्रकार की पत्तियां हो सकती हैं (1) लघुपर्ण तथा (2) गुरूपर्ण। लघुपर्णी पत्तियों में एक एकल अशाखित शिरा होती है जो प्ररोह के मुख्य संवहनी बेलन से नहीं जुड़ी होती है। जबकि गुरूपर्ण शाखन का जटिल पैटर्न प्रदर्शित करते हैं जिसके परिणामस्वरूप संवहनी बेलन कई छोटी इकाइयों में विखंडित हो जाता है। आप याद कर सकते हैं कि संवहनी पादप डिवोनी कल्प के दौरान विकसित हुए थे। डिवोनी जीवाश्म यह सुझाते हैं कि लघुपर्णों की उत्पत्ति साधारण बहिर्वृद्धि के रूप में हुई थी। पर्णों यानि पत्तियों की उत्पत्ति तथा विकास के संदर्भ में विभिन्न मत हैं। दो सिद्धांत जो बहुत अधिक मान्य हैं वे हैं:

(1) उद्धवर्धन (Enation) सिद्धांत

(2) टीलोम (Telome) सिद्धांत

उद्धवर्धन सिद्धांत

बॉवर (Bower) ने 1935 में उद्धवर्धन सिद्धांत दिया था। इस सिद्धांत के अनुसार लघुपर्णी पत्तियाँ तने की सतह के उभारों के रूप में आरंभ हुईं और फिर बड़े प्रक्षेपों के रूप में विकसित हुईं। आरंभ में इन उभारों में संवहनी आपूर्ति नहीं थी। परंतु बाद में एक शिरा जिसका तने के संवहनी बेलन से सबंध नहीं था, प्रकट हुई, तथा विकास के अंतिम चरणों में इस शिरा ने तने के संवहनी बेलन से सबंध स्थापित कर लिया।

टीलोम सिद्धांत

टीलोम सिद्धांत को त्सिमरमान (Zimmermann) ने 1930 में संवहनी पादपों में गुरूपर्ण तथा प्रजनन शाखाओं की उत्पत्ति को समझाने के लिए दिया था। त्सिमरमान के अनुसार सभी संवहनी पादप बहुत ही सरल पर्णरहित पूर्वज जैसे *राइनिया* से विकसित हुए, जिसमें बंध्य तथा जननक्षम अक्ष थे।

पहले हम शब्द टीलोम को समझ लें। चित्र 18.1 को देखिए तथा उस हिस्से पर ध्यान दीजिए जिसे टीलोम चिन्हित किया गया है। बीजाणुधानियों को धारण किए हुए अंतस्थ अक्ष जननक्षम (fertile) टीलोम कहलाते हैं तथा जो बिना बीजाणुधानियों के होते हैं वह बंध्य (sterile) टीलोम कहलाते हैं। टीलोम पादप काया के शीर्ष से लेकर शाखन हुए अगले स्थल तक एकल-शिरीय अंतस्थ भाग को (आधार पर अथवा शीर्ष पर) कहते हैं अथवा टीलोम द्विभाजी शाखित पादप अक्ष का सरल तथा अंतिम शीर्ष भाग होता है। एक टीलोम वहां समाप्त होता है जहां नीचे की ओर दूसरे टीलोम के साथ संधि स्थल होता है, यानि कि, पहले उपनिकटवर्ती शाखन पर। टीलोमों को जोड़ने वाले पादप काया के भाग (यानि कि, प्रत्येक दो द्विशाखों के बीच के पर्व) मेसोम (mesome) कहलाते हैं (चित्र 18.1 A)। व्यक्तिव्रत (ontogeny) क्रम के दौरान प्रत्येक मेसोम पहले टीलोम था, जो वृद्धि होने के साथ-साथ मेसोम स्थिति में स्थानांतरित हो गया। टीलोम बीजाणुधानी धारण किए जननक्षम हो सकते हैं अथवा बंध्य (कायिक) होते हैं, जो पर्णाभ (phylloid) भी कहलाते हैं। विकासात्मक प्रगति का अनुसरण करते हुए, टीलोम विभिन्न तरीकों से एक साथ समूहित होकर अधिक जटिल रचनाएं निर्मित कर सकते हैं जिन्हें सिनटीलोम (syntelome) कहते है। सिनटीलोम में या तो बंध्य अथवा जननक्षम टीलोम होते हैं अथवा ये दोनों का मिश्रण होते हैं। जननक्षम टीलोम जननक्षम टीलोम गट्ठरों (trusses) अथवा बीजाणुधानीय गट्ठरों में समूहित रहते हैं। संयुक्त पर्णाभ जिनसे बंध्य पत्तियाँ तथा अक्ष विभेदित होते हैं ''पर्णाभ गट्ठर'' कहलाते हैं। प्राचीन थल पादपों के सिनटीलोमों अथवा टीलोम गट्ठरों से, पूरे भूवैज्ञानिक काल के दौरान उच्च

पादपों के बीजाणु-उद्‌भिद् तीन प्रमुख स्वतंत्र धाराओं में विकसित हुए। ये **लाइकोप्सिड (Lycopsid)**, **स्फीनोप्सिड (Sphenopsid)** तथा **टेरोप्सिड (Pteropsid)** विकास की धाराएं थी।

अब प्रश्न यह हैं कि किस प्रकार से उच्च संवहनी पादपों के प्ररोह अक्ष (shoot axis) तथा पत्तियां, प्राचीनतम थल पादपों से विकसित हुए? त्सिमरमान ने सुझाया कि यह निम्नलिखित प्रारंभिक प्रक्रियाओं के जरिए हुआ।

(1) उच्चातिक्रमी (overtopping)

(2) समतलन (planation)

(3) सहजनन या संगलन (fusion) या जालन (webbing)

(4) लघुकरण (reduction)

(5) प्रतिवक्रण (recurving)

हमने ऊपर बताया है कि आदिम बीजाणु-उद्‌भिद् की कल्पना एक दूसरे के उत्तरोत्तर (successive) समकोण तलों में द्विभाजनों के तंत्र के रूप में की जाती है। ये आरंभिक प्रक्रियाएं या तो अलग अलग संपन्न हुई अथवा एक दूसरे के साथ संयोजन में हुई।

आइए अब हम इन प्रारंभिक प्रक्रियाओं को समझने का प्रयास करें और देखें कि किस प्रकार इन्होंने विभिन्न प्रकार की पत्तियों, बीजाणुपर्णों तथा रंभों को निर्मित किया।

उच्चातिक्रमी : यह द्विभाजी शाखा की दोनों सहशाखाओं की असमान वृद्धि का उल्लेख करता है (चित्र 18.1 B)। अधिकांश प्राचीन प्रकारों में शाखाएं समान होती थीं। उच्चातिक्रमी अथवा असमान वृद्धि के कारण, अपेक्षाकृत मजबूत शाखा ऊर्ध्वाधर बन गई तथा उसने अक्ष निर्मित कर लिया तथा कम विकसित शाखा अलग एक ओर को ढकेल दी गई। अतः पार्श्व उपांगों जैसे कि पत्तियों वाले एक अक्ष का निर्माण हो गया। इसके परिणामस्वरूप शाखा का पैटर्न द्विभाजी से बदलकर एकलाक्षी (monopodial) हो गया।

समतलन : जैसा कि पहले बताया गया है आदिम बीजाणु-उद्‌भिदों में उत्तरोत्तर द्विभाजनों की शाखाएं एक दूसरे से समकोण पर होती थीं यानि कि सभी शाखाएं एक ही तल में नहीं होती थीं। समतलन के दौरान एक से अधिक तलों में शाखन की बजाय एक ही तल में द्विभाजी शाखन होने लगा। इसके कारण टीलोमों तथा मेसोमों ने अपने आपको एक ही तल में व्यवस्थित कर लिया (चित्र 18.1 C)। इस प्रक्रिया के द्वारा एक अरीय सममिति (radially symmetrical) का अंग द्विपार्श्विक सममिति (bilaterally symmetrical) का बन गया। समतलन ने पत्ती के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

सहजनन (संगलन अथवा जालन) : इस प्रक्रिया के दौरान टीलोमों तथा मेसोमों के बीच में संयोजन का विकास हुआ (चित्र 18.2 A)। ये संयोजन मृदूतकीय जालन के द्वारा निर्मित हुए। इसके साथ-साथ इनके रंभों का भी संगलन हुआ (चित्र 18.2 B)। सहजनन एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रक्रिया है क्योंकि यह पत्ती तथा तने के रंभ दोनों की उत्पत्ति और विकास को समझा सकता है।

लघुकरण : इस प्रक्रिया में टीलोम के गट्ठरों का सरलीकरण हो गया जिसके फलस्वरूप एक सुई-जैसी लघुपर्णी पत्ती का निर्माण हुआ (चित्र 18.2 C) जो लाइकोपोड्स जैसे कि *लाइकोपोडियम, सैलाजिनेला* तथा *आइसोइटीज* में पाई जाती है।

प्रतिवक्रण: ऐसा माना जाता था कि इस प्रक्रिया के दौरान जननक्षम टीलोम वलित (reflexed) हो गए थे जिसके परिणामस्वरूप बीजाणुधानियों ने प्रतिलोमित यानि उलटी (inverted) अवस्था ग्रहण कर ली। यह प्रक्रिया अंतर्वक्रण (incurvation) भी कहलाती है (चित्र 18.2 D)।

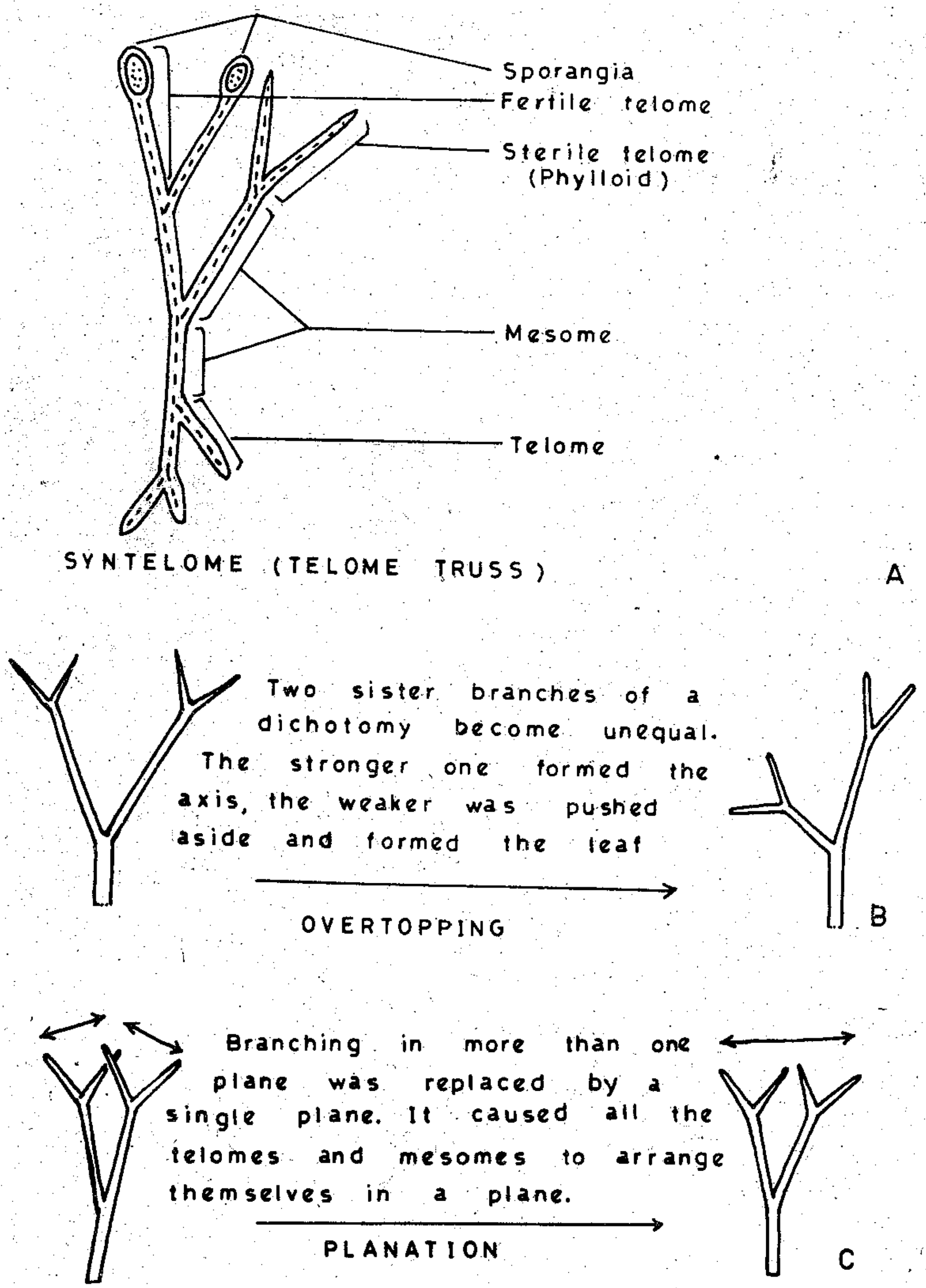

चित्र 18.1: टीलोम अवधारणा : A) टीलोमों तथा मेसोमों को दर्शाता हुआ एक प्राचीन थल पादप का आरेखीय चित्र, B) उच्चातिक्रमी की प्रक्रिया, C) समतलन की प्रक्रिया।

बोध प्रश्न 18.1

निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य हैं तथा कौन से असत्य हैं। सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) दिये गए कोष्ठों में लिखिए।

i) टीलोम धारण ज़िमरमान द्वारा प्रस्तुत की गयी थी। ☐

ii) टीलोम द्विभाजी शाखित अक्ष का अंतिम, उपांत भाग होता है। ☐

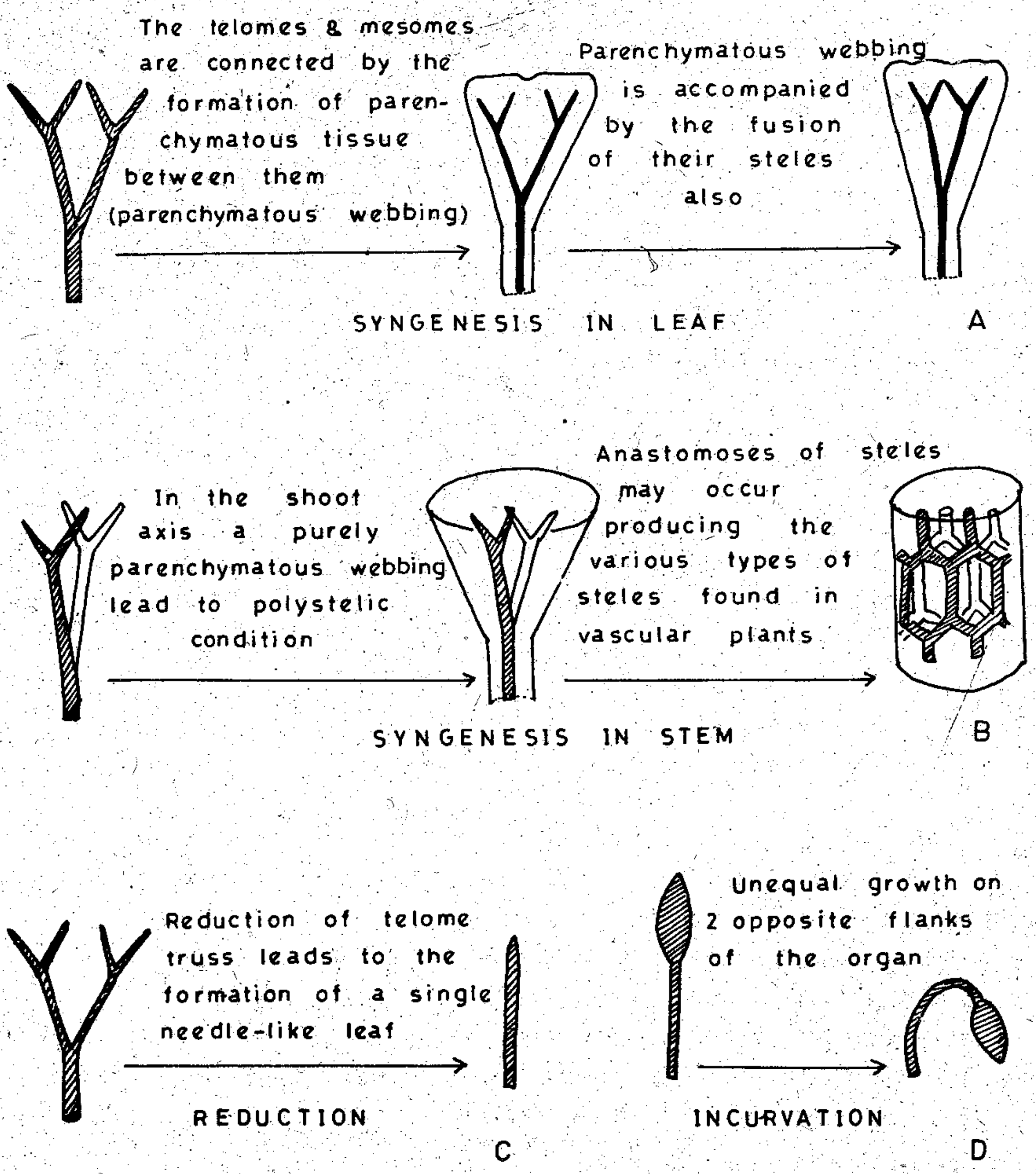

चित्र 18.2 : टीलोम अवधारणा में मूलभूत प्रक्रियाएं : A) पत्ती का सहजनन, B) तने का सहजनन, C) लघुकरण, D) प्रतिवक्रण।

iii) उच्चातिक्रमी, द्विभाजन की दो सहशाखाओं की समान वृद्धि से संबंधित है। ☐

iv) समतलन में किसी अंग की सममिति में द्विपार्श्विक से अरीय की ओर बदलाव आता है। ☐

v) सहजनन के दौरान टीलोमों तथा मेसोमों के बीच संयोजन विकसित हो जाता है। ☐

vi) लघुकरण के दौरान जननक्षम टीलोम वलित हो जाते हैं। ☐

18.3 रंभीय संरचना तथा विकास

जैसा कि आपने पहले पढ़ा है कि टेरिडोफाइट्स प्रथम थल पादप हैं। उनमें संवहनी ऊतक पाये जाते हैं। संवहनी ऊतकों के इस विकास ने उनके सफलतापूर्वक थल पर अधिकार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जाइलम तथा फ्लोएम क्रमश: जल तथा भोजन के संवहन के लिए प्रमुख संवहनी ऊतक हैं। इस अध्याय में आप पढ़ेंगें कि किस प्रकार से विभिन्न सदस्यों में ये दो संवहनी तत्व संगठित होकर विभिन्न प्रकार के रंभों को निर्मित करते हैं। जो एक विकासात्मक प्रवृत्ति को भी दर्शाता है।

जैसा कि आप जानते हैं 'रंभ' संवहनी पादपों में बीजाणु-उद्भिदीय पादप काया के अक्ष में स्थित केन्द्रीय क्रोड (core) को कहते हैं। यह जाइलम तथा फ्लोएम का बना होता है तथा इसके बाहर अंतस्त्वचा होती है। जाइलम और फ्लोएम की व्यवस्था पादपों के विभिन्न समूहों में भिन्न-भिन्न होती हैं। विभिन्न समूहों में रंभीय संगठन के आधार पर, कुछ वनस्पति वैज्ञानिकों ने संवहनी पादपों में एक विकासात्मक क्रम को मान्यता दी है। वह रंभ जिसमें जाइलम की केन्द्रीय ठोस क्रोड फ्लोएम की परिधीय परत से घिरी रहती है, ठोसरंभ कहलाता है। जैसा कि आप पढ़ चुके हैं इस प्रकार का रंभ, कुछ आदिम संवहनी पादपों जैसे कि *राइनिया* में पाया जाता है। इस प्रकार का रंभ सामान्य तौर पर संवहनी पादपों के लिए तथा विशेष तौर पर टेरिडोफाइट्स के लिए एक आधारभूत रंभीय प्रकार है। अन्य सभी प्रकार के रंभ, विकासात्मक विशिष्टीकरण के दौरान इसी से उत्पन्न हुए हैं। लगभग सभी टेरिडोफाइट्स में बीजाणु अंकुरण अवस्था में ठोसरंभीय तना पाया जाता है। यह स्थायी रूप से बहुत से जीवित टेरिडोफाइट्स के व्यस्क तनों में स्थित रहता है उदाहरण के लिए, *सैलाजिनेला, लाइकोपोडियम* तथा *लाइगोडियम*। जाइलम की आकृति के आधार पर, ठोसरंभ को एकलरंभ या हेप्लोस्टील, अरीयरंभ या एक्टीनोस्टील अथवा पट्टिलरंभ या प्लेक्टोस्टील में वर्गीकृत किया जा सकता है। जैसा कि आपने पहले पढ़ा है कि एकलरंभ में जाइलम की ठोस क्रोड़ होती है जोकि अनुप्रस्थ काट में गोलाकार दिखती है (चित्र 16.5 A)। अरीयरंभ में जाइलम तारांकार दिखाई पड़ता है (चित्र 16.5 B)। पट्टिलरंभ में जाइलम प्लेटों की तरह से एक दूसरे के समानान्तर स्थित रहता है (चित्र 16.5 C)। जाइलम तथा फ्लोएम एकांतर अनुप्रस्थ बैंड अथवा पट्टियों में व्यवस्थित रहते हैं। आपने इस प्रकार का रंभ *लाइकोपोडियम वोल्यूबाइल* (*Lycopodium volubile*) के तने में देखा है। मिश्रित ठोसरंभ में जाइलम अनियमित रूप से बिखरे हुए समूहों के रूप में फ्लोएम की आधात्रिका (ground mass) में धंसे रहते हैं जैसे की *लाइकोपोडियम सर्नम* की अनुप्रस्थ काट में देखा जाता है (चित्र 16.8 K)। विकासात्मक श्रृंखला में अगले प्रकार का रंभ नालरंभ है। आपको याद होगा कि इस प्रकार के रंभ में, रंभ का केन्द्र मज्जा द्वारा अधिगृहीत रहता है और मज्जा जाइलम और फ्लोएम द्वारा घिरी रहती है। नालरंभ दो प्रकार का हो सकता है : बहि:फ्लोएमी तथा उभयफ्लोएमी। बहि:फ्लोएमी नालरंभ में जाइलम मज्जा के ठीक बाद में स्थित होता है तथा फ्लोएम सिर्फ बाहर की ओर होता है (चित्र 16.5 D)। उभयफ्लोएमी नालरंभ में फ्लोएम जाइलम के दोनों ओर उपस्थित रहता है (चित्र 16.5 E)। उभयफ्लोएमी नालरंभ *मार्सीलिया* में पाया जाता है (चित्र 16.14 C)।

उच्चतर संवहनी पादपों में मुख्य संवहनी बेलन से एक छोटी संवहनी आपूर्ति, पत्ती अथवा शाखा में अपसारित हो जाती है। इन्हें क्रमश: पर्ण ट्रेस (leaf trace) अथवा शाखा ट्रेस (branch trace) कहते हैं (चित्र 17.3)। पर्ण ट्रेस के निकलने के स्थल के ठीक ऊपर, तने के संवहनी बेलन में छोटे मृदूतकीय क्षेत्र दिखाई पड़ते हैं। ये मृदूतकीय क्षेत्र सिर्फ सीमित दूरी तक बने रहते हैं और ऊपर संवहनी ऊतक एक सीधी रेखा में अपसारित पर्ण (diverged leaf) अथवा शाखा ट्रेस के ऊपर उपस्थित रहता है। तने के संवहनी तंत्र में पर्ण ट्रेस अथवा शाखा ट्रेस के निकलने के स्थल के ऊपर स्थित इस प्रकार के मृदूतकीय क्षेत्र क्रमश: "पर्ण अवकाश" (leaf gaps) और "शाखा अवकाश" (branch gaps) कहलाते हैं।

अपने सरलतम प्रकारों में नालरंभ में कोई पर्ण अवकाश नहीं होते हैं, उदाहरण के लिए *सैलाजिनेला* की कुछ जातियों में। परंतु कुछ वास्तविक फर्नों में जिनमें पत्तियाँ पास-पास स्थित नहीं होती हैं उनमें

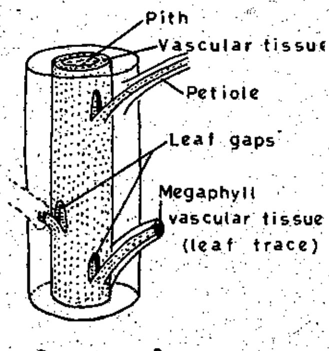

चित्र 18:3 पर्ण-अनुपथ तथा पर्ण अंतरालों (leaf gaps) का आरेखी प्रदर्शन।

पर्ण अवकाश अपेक्षाकृत छोटे होते हैं जिससे कि उनमें उत्तरोत्तर पर्ण अवकाशों का अतिव्यापन (overlapping) नहीं होता है तथा जाइलम घोड़े की नाल के आकार का दिखाई पड़ता है। इस प्रकार का रंभ नलीरंभ (solenostele) कहलाता है। फर्न की बहुत सी जातियों में प्ररोह अक्ष छोटी होती है तथा पत्तियाँ इस पर पास-पास अनुक्रम में लगी रहती है। इन प्रकारों में उत्तरोत्तर बड़े अवकाश अतिव्यापित हो जाते हैं जिससे कि तने का संवहनी बेलन एक दूसरे से जुड़ी हुई अनुदैर्ध्य पट्टियों के नलिकाकार तंत्र में विच्छेदित जैसा दिखाई पड़ता है। ये पट्टियाँ एक दूसरे से मृदूतकीय ऊतक को खड़ी पट्टियों यानि कि पर्ण अवकाशों द्वारा अलग रहती हैं। प्रत्येक पट्टी मेरीस्टील (meristele) कहलाती है (चित्र 16.12 C, D)। अनुप्रस्थ काट में ये मेरीस्टील एक वलय के रूप में व्यवस्थित दिखाई पड़ता है (चित्र 16.5 F)। प्रत्येक मेरीस्टील अपने दोनों ओर के निकटवर्तियों से पर्ण अवकाशों द्वारा अलग रहता है। इस प्रकार का नालरंभ विच्छेदित नालरंभ अथवा जालरंभ कहलाता है। जालरंभ में प्रत्येक मेरीस्टील की सामान्य संरचना ठोसरंभ जैसी होती है।

बोध प्रश्न 18.2

निम्नलिखित में से कौन से वक्तव्य सत्य हैं तथा कौन से असत्य हैं। सत्य के लिए (स) तथा असत्य के लिए (अ) दिये गये कोष्ठकों में लिखिए।

i) रंभ का अर्थ बीजाणु-उद्भिदीय पादप काया के अक्ष में स्थित केन्द्रीय संवहनी तंतु से है। ☐

ii) पट्टिलरंभ में जाइलम ताराकार होता है। ☐

iii) अरीयरंभ में जाइलम समानान्तर पट्टियों के रूप में होता है। ☐

iv) ठोसरंभ में जाइलम की ठोस क्रोड फ्लोएम द्वारा घिरी रहती है। ☐

v) नालरंभ में जाइलम की क्रोड़ के कैन्द्र में मज्जा नहीं होती है। ☐

vi) जब जाइलम फ्लोएम बेलन के दोनों ओर उपस्थित रहता है तब वह रंभ उभयफ्लोएमी नालरंभ कहलाता है। ☐

vii) नलीरंभ में जाइलम घोड़े की नाल के आकार का होता है। ☐

viii) ठोसरंभी संगठन नालरंभी से अधिक प्राचीन है। ☐

18.4 विषमबीजाणुता तथा बीज प्रकृति

आप पहले ही इकाई 15 में पढ़ चुके हैं कि *सैलाजिनेला* दो प्रकार के बीजाणु उत्पन्न करता है जो आमाप में तथा संख्या में भिन्न होते हैं। ये दो प्रकार के बीजाणु व्यवहार भी भिन्न तरीके से करते हैं। अंकुरित होने पर छोटे बीजाणु अथवा लघुबीजाणु नर युग्मकोद्भिद् को तथा बड़े अथवा गुरूबीजाणु मादा युग्मकोद्भिद् को उत्पन्न करते हैं दो प्रकार के यानि आकृतिकी तथा साथ शरीरक्रियात्मक रूप से भिन्न भिन्न बीजाणु उत्पन्न होना, विषमबीजाणुता कहलाती है। यह अब आमतौर पर माना जाने लगा है कि विषमबीजाणु अवस्था कुछ बीजाणुधानियों में बीजाणुओं की संख्या में कमी के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई है तथा बचे हुए बीजाणुओं के आमाप में वृद्धि से संबंधित है। ऐसा माना जाता है कि इन बचे हुए गुरूबीजाणुओं को बहुत से छोटे बीजाणुओं अथवा लघुबीजाणुओं की अपेक्षा अधिक पोषण मिला। गुरूबीजाणुओं की संख्या में कमी या तो बीजाणु मातृ कोशिकाओं में कमी के द्वारा आई, जैसे कि *सैलाजिनेला* में अथवा विकासशील बीजाणुओं के विघटन के द्वारा आई जैसे कि *मार्सीलिया* में।

प्रारंभी विषमबीजाणुता

एक्वीसीटम में सभी बीजाणु आकारिकी में समान होते हैं परंतु अंकुरित होने पर वे दो प्रकार के युग्मकोद्भिद् उत्पन्न करते हैं; छोटे नर युग्मकोद्भिद् तथा बड़े मादा युग्मकोद्भिद्। यदि निषेचन किसी कारणवश देर से होता है तो पुंधानियां मादा प्रोथैलस में ही विकसित होना आरंभ कर देती हैं। किसी जीवसंख्या (population) में यदि नर तथा मादा युग्मकोद्भिद् का अनुपात वातावरणीय परिस्थितियों द्वारा प्रभावित होता है तो वह प्रारंभी **विषमबीजाणुता (incipient heterospory)** कहलाती है।

एक अन्य समबीजाणु फर्न *सेरैटोटेरिस* (*Ceratopteris*) अलग-अलग नर तथा मादा युग्मकोद्भिद् उत्पन्न करता है। परंतु उनका अनुपात वातावरणीय परिस्थितियों से प्रभावित नही होता है। इनमें भी यदि निषेचन देर से होता है तो मादा युग्मकोद्भिद् पुंधानी को विकसित कर देता है। *प्लेटीजोमा* (*Platyzoma*) प्रारंभी विषमबीजाणुता तथा पूर्ण विषमबीजाणुता के बीच का प्रकार है। हालांकि सभी बीजाणुधानियां आमाप में समान होती हैं परंतु प्रत्येक बीजाणुधानी में बीजाणु का आमाप तथा उनकी संख्या भिन्न भिन्न होती है। गुरूबीजाणुधानी में 16 गुरूबीजाणु होते हैं जबकि लघुबीजाणुधानी में 32 लघुबीजाणु होते हैं। अंकुरित होने पर लघुबीजाणु तंतुमय नर युग्मकोद्भिद् बनाते हैं, जबकि गुरूबीजाणु मादा युग्मकोद्भिद् को बनाते हैं जो पुंधानी विकसित कर सकते हैं यदि निषेचन में देरी हो जाए तो। इसलिए, यह एक विषमबीजाणु प्रकार है जिसमें प्रसुप्त विषमबीजाणुता विकास की स्थिति में होती है। ये प्रेक्षण सुझाते हैं कि विकास में विषमथैलसता संभवत: विषमबीजाणुता के पूर्ववर्ती रही होगी।

जीवाश्म रिकॉर्ड तथा विषमबीजाणुता

जीवाश्मों के रिकॉर्ड यह सुझाते हैं कि प्राचीनतम संवहनी थल पादप समबीजाणु थे। हालांकि विलग (isolated) पर्याप्त रूप से बड़े बीजाणु जो गुरूबीजाणुओं का प्रतिनिधित्व कर सके (200 µm. से बड़े) लगभग 37 करोड़ वर्ष पूर्व प्रकट हुए थे तथा मध्य डिवोनी काल में 37 से 35.9 करोड़ वर्ष पूर्व अधिक सामान्य थे। बाद के अंतिम डिवोनी अथवा आरंभिक कार्बनी कल्प तक विषमबीजाणुता प्राचीन संवहनी पादपों में प्रत्यक्ष रूप से पाई गई। हाशिए में सूचीबद्ध किए गए कुछ पादपों में उन्नत स्तर की विषमबीजाणुकता थी तथा वे बीज प्रकृति के निकट थे।

निम्नलिखित कुछ वंश है जिनमें विषमबीजाणुता अंतिम डिवोनी अथवा आरंभिक कार्बनी कल्प में प्रत्यक्ष थी

लाइकोपोडियोफाइटा
लेपीडोस्ट्रोबस, (*Lepidostrobus*)
सैजिलारियोस्ट्रोबस,
(*Sigillariostrobus*)
प्लूरोमिया (*Pleuromeia*)
लेपीडोकार्पन (*Lepidocarpon*)
माजोकार्पन (*Mazocarpon*)

एक्वीसीटोफाइटा
पैलियोस्टैकिया (*Palaeostachya*)
कैलेमॉस्टैकिया (*Calamostachya*)
तथा *कैलेमॉकार्पन*(*Calamocarpon*)

प्रोजिम्नोस्पर्मस
आरकिओप्टेरिस (*Archaeopteris*)
तथा
आरकिओस्पर्मा (*Archaeosperma*)

विषमबीजाणुता के विकास में आरंभिक चरण अनुमानत: *कैलेमॉस्टैकिस* (*Calamostachys*) की दो जातियों द्वारा इंगित किए गए हैं। *कैलेमॉस्टैकिस* की कुछ जातियाँ समबीजाणु थीं, जो चतुष्कों (tetrads) में असंख्य बीजाणु उत्पन्न करती थीं, परंतु अक्सर चतुष्क के सभी चारों बीजाणु समान नहीं होते थे तथा उनमें से एक या अधिक सदस्य अन्य से बड़े हो जाते थे। *कैलेमॉस्टैकिस* की अन्य जातियों में कुछ बीजाणुधानियों में असंख्य छोटे बीजाणु रहते थे तथा कुछ बीजाणुधानियों में कुछ तीन या चार गुना बड़े बीजाणु होते थे। ये बड़े बीजाणु वाली बीजाणुधानियाँ छोटे तथा प्रकट रूप से अवरुद्ध वृद्धि वाले बीजाणु भी लिए रहती थीं।

बीजाणु की संख्या में कमी लाने वाला अधिक सघन बीजाणु विफलन यानि वृद्धिरुद्ध, निम्न कार्बनी कल्प के एक अन्य जीवाश्म प्रकार *स्टैरोप्टेरिस* (*Stauropteris*) में प्रत्यक्ष था। *स्टैरोप्टेरिस* में गुरूबीजाणुधानी में गुरूबीजाणुओं की संख्या अपघटित होकर दो हो गई थी। *लेपीडोकार्पन* तथा *कैलमॉकार्पोन* में सिर्फ एक गुरूबीजाणु चतुष्क प्रत्येक गुरूबीजाणुधानी में विकसित होता था, तथा अधिकांश उदाहरणों में चतुष्क के तीन बीजाणु निष्फल हो जाते थे तथा एक ही गुरूबीजाणु परिपक्व होता था। कुछ बीजाणुओं की वृद्धिरुद्ध और अन्य बीजाणुओं के बड़े हो जाने के पैटर्न की आरंभिक अवस्थाओं को *बोमैनाइट्स डॉसोनी* (*Bowmanites dawsoni*) तथा *लेपिडोस्ट्रोबस ब्रेड्वुडेन्सिस* (*Lepidostrobus braidwoodensis*) में देखा जा सकता है जिनमें प्रत्येक गुरूबीजाणुधानी में एक बड़ा गुरूबीजाणु होता है जो लगभग 2 मि.मी. व्यास का होता है तथा मूल चतुष्क के 3 वामन (dwarfed) सदस्य होते हैं।

उपर्युक्त अवलोकनों को निम्न प्रकार से सार रूप दिया जा सकता है।

		अवस्थाएं दर्शाने वाले जीवाश्म
1.	**अवस्था 1** **समबीजाणु** - असंख्य बीजाणु चतुष्कों में, एक अथवा अधिक बीजाणु अन्य बीजाणुओं से बड़े।	*कैलेमॉस्टैकिस बाइनीयाना* (*Calamostachys binneyana*)
2.	**अवस्था 2** **विषमबीजाणु** - लघुबीजाणुधानियां (छोटे बीजाणु), गुरूबीजाणुधानियां (संख्या में कम, बीजाणु 3 से 4 गुना बडे, साथ ही छोटे, जो प्रकट रूप में अपूर्ण वर्धित तथा निष्फल)	*कैलेमोस्टैकिस कैशियाना* (*C. casheana*)
3.	**अवस्था 3** **विषमबीजाणु** - अधिक सघन निष्फल बीजाणु जिससे बीजाणुओं की संख्या में और अधिक कमी (प्रत्येक चतुष्क में दो बड़े गुरूबीजाणु तथा दो निष्फल बीजाणु)	*स्टैरोप्टेरिस बर्नटिसलैण्डिका* (*Stauropteris burntislandica*)
4.	**अवस्था** **विषमबीजाणु** - सिर्फ एक गुरूबीजाणु चतुष्क विकसित, तथा अधिकांश में चतुष्क के 3 बीजाणु निष्फल एवं एक ही गुरूबीजाणु परिपक्व	*लैपीडोकार्पोन* (*Lepidocarpon*)

विषमबीजाणुता का जैविक महत्व

विषमबीजाणुता बहुत लाभप्रद है क्योंकि बड़ा मादा युग्मकोद्भिद् अपना पोषण बीजाणु-उद्भिद् द्वारा बनाये गए भोजन से प्राप्त करता है तथा वह अपनी उत्तरजीविता के लिए वातावरणीय परिस्थितियों पर निर्भर नहीं होता है। यह स्थिति एक स्वतंत्र हरे प्रोथैलस, जिसे अपना भोजन स्वयं निर्मित करना पड़ता है, किशोर भ्रूण के लिए एक बेहतर शुरुआत है। विकास के क्रम के दौरान विषमबीजाणुता ही बीज प्रकृति के विकास के लिए जिम्मेदार थी।

विषमबीजाणुता के निम्नलिखित परिणाम है :

i) इसके परिणामस्वरूप युग्मकोद्भिदी ऊतक के आमाप में महत्वपूर्ण कमी आई है।

ii) बीजाणुओं का अस्वाभाविक रूप से जल्दी अंकुरण होता है।

iii) इसमें आंशिक तौर पर अंततः पूर्ण रूप से गुरूबीजाणुधानी और मादा युग्मकोद्भिद्, बीजाणु-उद्भिद् पर आश्रित रहते हैं।

iv) गुरूबीजाणुधानी में गुरूबीजाणुओं की संख्या घट कर एक रह जाती है।

v) नर युग्मकों की भी संख्या कम हो जाती है।

vi) गुरूबीजाणु तथा गुरूबीजाणुधानी के बीच में जैविक संयोजन (organic union) होता है।

vii) इसके साथ ही परागण (pollination) की प्रक्रिया की भी शुरुआत हुई है।

ये सभी नए विकास बीज प्रकृति के लिए अत्यावश्यक थे। ये बदलाव धीरे धीरे संवहनी पादपों में विकसित हो गए तथा इन्हें बीज प्रकृति की ओर ले गए।

बीज प्रकृति

ऐसा माना जाता है कि बीज ना धारण करने वाले पौधों से बीज प्रकृति के विकास में संभवत: निम्नलिखित विकासात्मक चरण सम्मिलित रहे :

i) विषमबीजाणुता का विकास,

ii) गुरूबीजाणु की संख्या में कमी व गुरूबीजाणुधानी में सिर्फ एक क्रियाशील बीजाणु,

iii) गुरूबीजाणु के भीतर ही गुरूयुग्मकोद्भिद् का विकास,

iv) गुरूबीजाणुधानी के भीतर उपस्थित गुरूबीजाणु के अंदर ही गुरूयुग्मकोद्भिद् का होना, बीजाणु स्वस्थाने (*in situ*) में ही अंड का निषेचन तथा भ्रूण निर्माण,

v) गुरुबीजाणुधानी बीजांडकाय का शीर्ष, पराग ग्रहण करने के स्थान के रूप में रूपांतरित,

vi) शीर्ष को छोड़कर गुरूबीजाणुधानी (बीजांडकाय) पर एक अध्यावरण (integument) का आवरण होना जिससे बीजांडद्वार (micropyle) बना।

आइए अब हम देखें कि क्या जीवाश्म, ऊपर बताई गई विकासात्मक अवस्थाओं जिससे बीज प्रकृति विकसित हुई, के लिए कोई प्रमाण देते हैं।

जीवाश्मों के प्रमाण सुझाते हैं कि विषमबीजाणुता डिवोनी कल्प में प्रत्यक्ष थी। गुरूबीजाणुओं की संख्या घट कर सिर्फ एक बीजाणु रह जाने का सबसे प्राचीन संकेत *सिस्टोस्पोराइट्स डिवोनिकस* (*Cystosporites devonicus*) में पाया गया जिसमें चतुष्फलकीय चतुष्कों (tetrahedral tetrads) में एक बड़ा, अनुमानत: जननक्षम बीजाणु, व उसके साथ ही तीन छोटे, निष्फल बीजाणु, शीर्ष पर व्यवस्थित थे। ये प्रेक्षण सुझाते हैं कि बीज प्रकृति पहले ही ऊपरी डिवोनी कल्प के दौरान विकसित हो चुकी थी। बीजों में पालियुक्त (lobed) अध्यावरण पाये जाते थे जैसे कि कुछ कार्बनी कल्प के बीजों में होते थे।

सबसे पहले बीज जैसी संरचना जीवाश्म *जीनोमोस्पर्मा किड्सटोनी* (*Genomosperma kidstonii*) में देखी गई है। यह संरचना एक शीर्ष से उत्पन्न दीर्घित बीजांडकाय (गुरूबीजाणुधानी) की बनी थी, जिसमें शीर्ष पर पराग ग्राही के लिए रूपांतरण हुआ था। यह 6-8 अंगुल्याकार तथा सीधे प्रतानों (projections) से निर्मित हुई जो सिर्फ अपने आधारों पर ही संगलित रहते थे। अन्य *जीनोमोस्पर्मा लेटैन्स* (*G. latens*) के जीवाश्म प्रकार में ये उँगलियों जैसे प्रतान बीजांडकाय के शीर्ष की ओर मुड़े थे तथा एक आद्यावशेषी (rudimentary) बीजांडद्वार निर्मित करते थे। *जीनोमोस्पर्मा* की ये दो जातियाँ गुरूबीजाणुधानी से अध्यावरणी बीजांड के विकास की दो आरंभिक अवस्थाओं की ओर इंगित करती हैं। एक अन्य बीज, जिसे *सैल्पिंगोस्टीमा दासू* (*Salpingostema dasu*) कहते हैं में अध्यावरण 5 से 6 पालियों का बना होता था जो अपनी लंबाई की लगभग आधी दूरी तक संगलित हुए रहते थे। अध्यावरणी पालियों के लंबाई में संगलित होने की मात्रा क्रमिक रूप से *फाइसोस्टोमा* (*Physostoma*) तथा *यूरीस्टोमा* (*Eurystoma*) में बढ़ती गई। *यूरिस्टोमा* में मूल घटक सिर्फ पालियों के रूप में बीज जैसी संरचना के शीर्ष पर दिखाई पड़ते थे। *स्टैम्नोस्टोमा हैटोनैन्स* (*Stamnostoma hattonense*) में संगलन संपूर्ण था तथा उंगलियों जैसे प्रतानों के कोई अवशेष नहीं थे।

इस प्रकार से ऊपर बताये गये कार्बनी कल्प के बीजांडों को अध्यावरणी पालियों के संगलन की सापेक्ष मात्रा के आधार पर एक क्रम में व्यवस्थित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, अध्यावरण को बीजांडकाय (nucellus) के आधार पर तथा उसके ऊपर विस्तारित बहुत सारी पतली शाखाओं के संगलन के उत्पाद के रूप भी माना जा सकता है।

आपने *सैलाजिनेला* में प्रजनन की प्रक्रिया तथा प्रजनन अंगों के बारे में पढ़ा है। चलिए देखते हैं कि किन आधारों पर यह बीज प्रकृति तक पहुंचता है। आपको ध्यान होगा कि *सैलाजिनेला* में गुरूबीजाणु गुरूबीजाणुधानी के भीतर ही अंकुरित होना आरंभ कर देता है। इस वंश की कुछ जातियों में गुरूबीजाणुओं की संख्या कम होकर एक ही रह जाती है तथा गुरूबीजाणु कभी भी गुरूबीजाणुधानी से अलग नहीं होता है।

निषेचन के बाद भ्रूण का विकास राइजोफोर, तना और बीजपत्रों में तभी हो जाता है जबकि गुरूबीजाणु गुरूबीजाणुधानी के भीतर ही बंद रहता है, जो इसका संबंध जनक पादप से बनाए रखता है।

हालांकि, विषमबीजाणुक संवहनी क्रिप्टोगैम्स जैसे *सैलाजिनेला* बीज प्रकृति तक पहुंचे हैं पर वास्तविक बीजों को विकसित करने में ये असफल रहे हैं क्योंकि इनमें संरक्षणी संरचनाएं जैसे गुरूबीजाणुधानी के चारों ओर अध्यावरण का अभाव रहा। गुरूबीजाणु गुरूबीजाणुधानी के भीतर स्थायी रूप से नहीं बना रहता है। गुरूबीजाणु तथा गुरूबीजाणुधानी के बीच में कोई जैविक संयोजन यानि ऊतकीय जुड़ाव नहीं होता है। इसके अतिरिक्त, भ्रूण अपने विकास में कोई सुप्त अवस्था (resting stage) नहीं दर्शाता है।

यहाँ *सैलाज़िनेला* के प्रजनन अंगों की समजातिता बीजपत्री पादपों (spermatophytes) के साथ देखना प्रासंगिक होगा, जैसा कि नीचे दिया गया है:

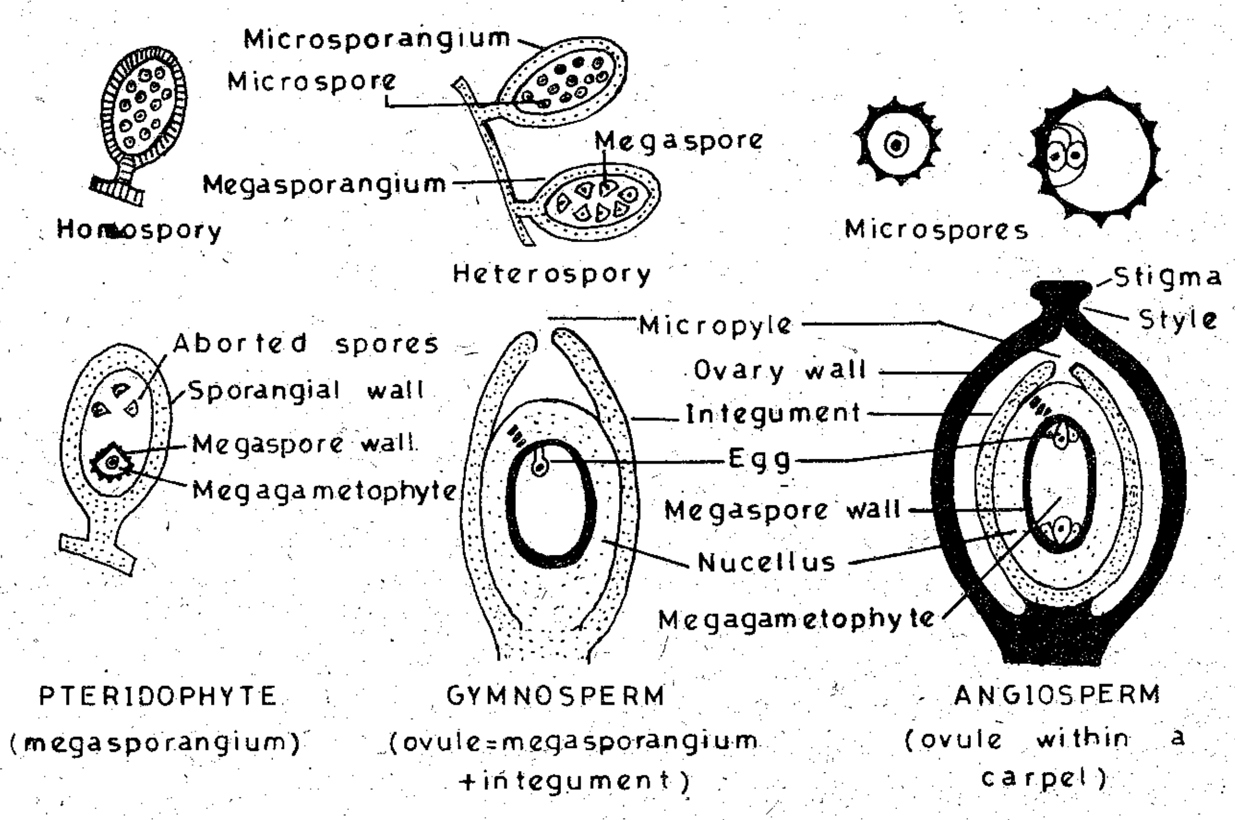

चित्र 18.4 : अनावृतबीजी तथा आवृतबीजी पादपों की प्रजनन संरचनाएं।

सैलाजिनेला	**निम्न स्परमैटोफाइट्स**
गुरूबीजाणुधानी	बीजांड का बीजांडकाय
गुरूबीजाणु	गुरूबीजाणु
मादा गुरूयुग्मकोद्भिद्	भ्रूणपोष
स्त्रीधानी	स्त्रीधानी
अंड	अंड
लघु बीजाणुधानी	परागकोश
लघुबीजाणु	पराग
लघु युग्मकोद्भिद्	अंकुरण करता हुआ पराग
पुमणु	शुक्राणु

अब जिम्नोस्पर्मस (अनावृतबीजियों) तथा एन्जियोस्पर्मस (आवृतबीजियों) की प्रजनन संरचनाओं को चित्र 18.4 में अच्छी तरह से देखिए। आप संभवतः उनकी टेरिडोफाइट्स के साथ तुलना करना चाहेंगे।

बोध प्रश्न 18.3

निम्नलिखित वक्तव्यों में रिक्त स्थानों को उचित शब्दों में भरिए।

i) आकृतिकी तथा शरीरक्रियात्मक रूप से भिन्न दो प्रकार के बीजाणुओं के उत्पादन की प्रक्रिया .... कहलाती है।

ii) वह परिघटना जिसमें पौधे आकारिकी में समान बीजाणु उत्पन्न करते हैं परंतु वे व्यवहार भिन्न प्रकार से करते हैं .... कहलाती है।

iii) .... की जाति प्रारंभी विषमबीजाणुता दिखाती है।

iv) विषमबीजाणुता, गुरूबीजाणुओं की संख्या कम होकर एक तक हो जाना, तथा क्रियाशील गुरूबीजाणु का गुरूबीजाणुधानी में ही रहना, अंततः .... के विकास की ओर ले जाता है।

v) *सैलाजिनेला* हालांकि बीज प्रकृति तक पहुंचता है, परंतु वास्तविक बीज उत्पन्न करने में असफल रहता है क्योंकि इसमें गुरूबीजाणुधानी के चारों ओर .... नहीं होता है।

18.5 प्रयोगात्मक अध्ययन के लिए एक प्रणाली के रूप में फर्न

पूर्व इकाई में हमने विकासात्मक प्रक्रियाओं का वर्णन करते समय विभाजन के तल को विशेष रूप से बताया था। आपको आश्चर्य हो सकता है कि विभाजन का तल प्रजनन अंगों के निर्माण तथा जीवों की आकारिकी के लिए क्यों महत्वपूर्ण है? वास्तव में, यह विभाजन का तल ही है जो किसी जीव या उसके अंग की आकृति का निर्धारण करता है। यदि हम कोशिका विभाजन के तल का नियंत्रण करने वाले कारकों को समझ लें तो किसी जीव की आकारिकी को बदलना संभव हो सकेगा। फर्न युग्मकोद्भिद् अपनी सरल संरचना के कारण इन कारकों को समझने के लिए उपयुक्त है क्योंकि इसके तंतुमय प्रकार

से हृदयाकार बन जाने पर, कोशिका विभाजन के तल में बदलाव होता है। इस भाग में आप फर्नों पर किए गए कुछ प्रयोगात्मक कार्यों के बारे में पढ़ेंगे जिससे आप संरचनाविकास (morphogenesis) की कुछ मूल परिघटनाओं को समझ सकेंगे। ये है ध्रुवीयता/ध्रुवीकरण, पुनर्जनन, अपयुग्मन तथा अपबीजाणुता।

18.5.1 ध्रुवीयता

ध्रुवीयता (polarity) सामान्यतः जीवित तंत्र के अंदर किसी भी प्रकार की असममिति अवस्था से संबंधित है जो दो किनारों अथवा दो सतहों के बीच, तथा किनारों अथवा सतहों एवं केन्द्रीय क्षेत्रों के बीच में भी अंतर के रूप में अभिव्यक्त होती है। संरचनाओं के विभेदन से पहले कोशिका अथवा भ्रूण के क्षेत्र में ध्रुवीयता स्थापित हो जाती है। इस कारण से ध्रुवीयता पौधों के संरचना विकास में एक आधारभूत घटना मानी जाती है।

ध्रुवीयता टेरिडोफाइट के जीवन में अपने आपको बहुत आरंभिक अवस्था में ही अभिव्यक्त कर देती है। बीजाणु-उद्भिद् अवस्था में यह युग्मनज से भ्रूण के द्विध्रुवीय विकास के रूप में अभिव्यक्त होती है। युग्मकोद्भिद् अवस्था में, ध्रुवीयता अंकुरित होते बीजाणु में प्रथम विभाजन के दौरान स्पष्ट होती है, जो असमान होता है। इस विभाजन के परिणामस्वरूप एक मूलाभासी कोशिका तथा एक प्रोथैलसी कोशिका निर्मित होती है। ध्रुवीयता के निर्धारण पर अधिकांश प्रयोगात्मक कार्य *एक्वीसीटम* की जाति तथा फर्नों जैसे कि *ड्रायोप्टेरिस* (*Dryopteris*), तथा अन्य फर्नों पर किया गया है। *एक्वीसीटम* के बीजाणु प्रगट रूप में कोई बाह्य अथवा आंतरिक ध्रुवीयता नहीं दिखाते हैं क्योंकि असंख्य क्लोरोप्लास्ट केन्द्र में स्थित केन्द्रक के चारों ओर समान रूप से बिखरे रहते हैं। हालांकि, जब बीजाणुओं को एकपार्श्विक प्रदीप्ति (unilateral illumination) से उद्भासित (expose) किया जाता है तब ध्रुवीयता दिखाई पड़ने लगती है। यह कोशिकीय अंग के असममित वितरण के रूप में अभिव्यक्त होती है। क्लोरोप्लास्ट बीजाणु की प्रदीपन वाली तरफ एकत्रित हो जाते हैं, जबकि केन्द्रक बीजाणु के अंधकार वाले हिस्से में चला जाता है। ध्रुवीयता बीजाणु के केन्द्रक के पहले विभाजन द्वारा अपरिवर्तनीय रूप से निश्चित हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप एक बड़ी प्रोथैलसी कोशिका तथा छोटी मूलाभासी कोशिका का निर्माण होता है। एक असममित कोशिका भित्ति प्रकाश अवशोषण की प्रवणता के समकोण पर बन जाती है। यह पहला असमान विभाजन दो संतति कोशिकाओं में से प्रत्येक का भाग्य निर्धारित करता है। प्रदीपन की ओर बनी प्रोथैलसी कोशिका में बहुत सारे क्लोरोप्लास्ट होते हैं तथा वह प्रोथैलस बनाने के लिए बारंबार विभाजित होते हैं। अंधकार की ओर बनी छोटी मूलाभासी कोशिका में थोड़े से ही क्लोरोप्लास्ट होते हैं तथा वह विभाजित नहीं होती है। इस प्रकार का एकपार्श्विक प्रकाश द्वारा ध्रुवीयता का प्रेरण बहुत से फर्नों के बीजाणुओं में देखा गया है।

ऐसा सुझाया गया है कि बीजाणुओं में अंतर्निहित ध्रुवीयता होती है, परंतु इसका कारण अज्ञात है, तथा पर्यावरणीय कारक सिर्फ वर्तमान ध्रुवीयता का पुनर्अभिविन्यास कर देते हैं। *ड्रायोप्टेरिस* तथा *एक्वीसीटम* के बीजाणुओं की ध्रुवीयता को अभिरंजन द्वारा देखा जा सकता है। प्रोथैलसी कोशिका तथा मूलाभासी कोशिका में अभिरंजन प्रक्रिया भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। यह कोशिका रसायन विभेद अनअंकुरित बीजाणुओं में भी देखा जा सकता है। जब बीजाणुओं को सान्द्रित KOH विलयन में डुबोया जाता है, बाह्यचोल तथा पास के कोशिकाद्रव्य के सघन भागों में लाल रंग विकसित हो जाता है। यह उन हिस्सों को चिन्हित करता है जहाँ से मूलाभास उत्पन्न होते हैं।

18.5.2 पुनर्जनन

टेरिडोफाइट्स के युग्मकोद्भिद् में गजब की पुनर्जनन (regeneration) क्षमता पाई जाती है। युग्मकोद्भिद् की प्रत्येक कोशिका अनुकूल परिस्थितियों में पूरा पौधा निर्मित करने में समर्थ होती है। यह गुण पूर्णशक्तता (totipotency) कहलाता है। प्राकृतिक परिस्थितियों में अपेक्षाकृत पुराने प्रोथैलस नया प्रोथैलस बनाने के लिए पुनर्जनन करते हैं। प्रयोगशालीय परिस्थितियों में प्रोथैलस पुनरावृत पुनर्जनन के द्वारा कॉलोनियां बनाते हैं। उनका पुनर्जनन प्रकाश की कम तीव्रता तथा लाल प्रकाश के द्वारा बढ़ जाता है। वृद्धि के लिए प्रतिकूल परिस्थितियों में जैसे कि प्रोथैलसों की एक जगह अधिकता हो जाने अथवा निमग्न (submerge) हो जाने पर भी पुनर्जनन को प्रेरित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए यह

देखा गया है कि द्रव्यकुंचित (plasmolysed) प्रोथैलस को जब प्राकृतिक मीडियम पर उगाया जाता है, तब उसमें से अनेकों तंतुमय उद्वर्धवृद्धि पुनर्जनित हो जाती हैं। हालांकि तरुण, सक्रिय रूप से उगने वाले, अक्षतिग्रस्त अथवा संपूर्ण (अक्षत) प्रोथैलस प्रकाश, तापमान, तथा आर्द्रता की अनुकूलतम परिस्थितियों में पुनर्जनन नहीं प्रदर्शित करते हैं। जब तक शीर्ष विभज्योतक अक्षत रहता है, प्रोथैलस का पुनर्जनन नहीं होता है, परंतु जब शीर्ष भाग निकाल दिया जाता है तब पुनर्जनन शीघ्रता से होने लगता है। यह प्रदर्शित किया गया है कि ऑक्सिन अक्षत शीर्ष विभज्योतक वाले प्रोथैलस में दमन (suppression) अथवा पुनर्जनन के लिए उत्तरदायी होता है। प्रायोगिक परीक्षण में ऑक्सिन को जब कटे हुए शीर्ष भाग पर लगाया गया तो प्रोथैलस का पुनर्जनन रुक गया। *टेरिस* में प्रोथैलस के विभिन्न भागों से अलग की गई कोशिकाएं पुनर्जनित हो गईं तथा तंतुमय प्रथम तंतु (protonema) में विकसित हो गई। कोशिकाएं चयनात्मक रूप से निकटवर्ती कोशिकाओं को मारकर अलग की गई थी। जो कोशिकाएं प्रोथैलस के आध ार पर उपस्थित थीं उन्होंने तंतु लगभग चार दिनों के पश्चात् निर्मित किए, जबकि शीर्ष भाग की दो कोशिकाओं ने पुनर्जनित तंतु 18 दिनों के पश्चात बनाए। इन प्रेक्षणों के आधार पर यह प्रस्तावित किया गया कि विभज्योतक, फर्न के युग्मकोद्भिद् के पुनर्जनन में नियंत्रक की भूमिका निभाता है। यह भी देखा गया है कि आधार के निकट से निकलने वाले तंतुओं में, विभज्योतक के निकट उपस्थित तंतुओं की अपेक्षा अधिक बड़ी कोशिकाएं पाई जाती हैं।

18.5.3 अपयुग्मन तथा अपबीजाणुता

आप जानते हैं कि टेरिडोफाइट्स में बीजाणु-उद्भिद् तथा युग्मकोद्भिद् के बीच में पीढ़ियों का एकांतरण पाया जाता है। यह एकांतरण दो महत्वपूर्ण घटनाओं के द्वारा लाया जाता है: निषेचन तथा अर्धसूत्री विभाजन। यह पीढ़ियों का एकातरण कभी-कभी दो सामान्य परिघटनाओं के होने से बिगड़ जाता है जिन्हें अपयुग्मन तथा अपबीजाणुता कहते हैं। इन्हें नीचे समझाया गया है।

अपयुग्मन

अपयुग्मन (apogamy) को युग्मकोद्भिद् की कायिक कोशिकाओं से, बिना लैंगिक अंगों के हस्तक्षेप तथा युग्मकों के संगलन के, बीजाणु-उद्भिद् के सीधे निर्मित होने के रूप में परिभाषित किया जाता है। इस प्रकार से बने बीजाणु-उद्भिद् में गुणसूत्र संख्या युग्मकोद्भिद् के समान ही रहती है। फर्नों में सबसे पहले प्राकृतिक स्थितियों में अपयुग्मन *टेरिस* में देखा गया था। प्राकृतिक अपयुग्मन फर्नों की 50 से अधिक जातियों में रिपोर्ट किया जा चुका है जिनमें *ड्रायोप्टेरिस* (*Dryopteris*), *पेलिया* (*Pellaea*), *एडीएन्टम* (*Adiantum*), *ओस्मुंडा* (*Osmunda*), *टोडिया* (*Todea*) तथा *ऐथिरियम* (*Athyrium*), सम्मिलित हैं। इनमें से कुछ फर्नों में यह नियमित रूप से पाई जाती है। अपयुग्मन को भी कृत्रिम रूप से प्रेरित किया जा सकता है।

अपयुग्मन को प्रेरित करने वाले कारक

लाइकोपोडियम में निषेचन के लिए अपर्याप्त जल होने पर अपयुग्मक बीजाणु-उद्भिदों की उत्पत्ति होती है। अपयुग्मक बीजाणु-उद्भिदों का बनना तब भी देखा गया है जब पोषण मीडियम में उचित सांद्रण का नारियल पानी तथा/अथवा सुक्रोस मिला दिया जाता है। अपयुग्मन के प्रेरण में, शर्कराओं की भूमिका अ-परासरणी होती है, उपलब्ध शर्करा की उच्च सांद्रता प्रोथैलस के कार्बोहाइड्रेट उपापचयन को रूपांतरित कर सकती है जिसके कारण मध्यशिरीय कुशन से उगने वाली कोशिकाओं की एक सघन गद्दी का निर्माण होता है। इस गद्दी में या तो तीन तरफी शीर्ष कोशिका अथवा स्पष्ट रूप से पहचानी जानी वाली भ्रूणीय कोशिकाओं के समूह का विभेदन होता है जिससे अंततः पत्तियों सहित प्ररोह का जन्म होता है।

कुछ अन्य कारक जो अपयुग्मक बीजाणुउद्भिद् के प्रेरण को बढ़ावा देते हैं, निम्नलिखित है:

i) तीव्र प्रकाश में प्रोथैलस को संवर्धित करना,

ii) उच्च तापमान

iii) कवकीय अथवा शैवालीय आक्रमण द्वारा प्रोथैलस की जीवनक्षमता को कम करना,

iv) विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों के कारण क्रियाशील लैंगिक अंगों का ना बन पाना,

v) प्रोथैलस की उम्र अधिक हो जाना

ओस्मुंडा, एडिएन्टम तथा *टेरीडियम* में प्रोथैलस को अधिक ग्लूकोस वाले ऐगार संवर्धन मीडियम (agar culture medium) पर उगा कर अपुयग्मन को प्रेरित किया जा सकता है। *यूनोक्लीय* (*Onoclea*) *ऑस्मुंडा* तथा *टोडी* (*Todea*) के प्रोथैलस पर अपयुग्मक बीजाणु-उद्भिद् विकसित हो जाते हैं जब उन्हें सत्तर अवस्था में, एक प्रतिशत सुक्रोस लिए हुए मीडियम पर प्रतिरोपित किया जाता है।

अपबीजाणुता

बीजाणु-उद्भिद् की कायिक कोशिकाओं से, बिना अर्धसूत्री विभाजन तथा बिना बीजाणु के निर्माण के, युग्मदकोद्भिद् के सीधे विकसित होने की प्रक्रिया को अपबीजाणुता (apospory) कहते हैं। इस प्रकार से बने प्रोथैलस द्विगुणित होते हैं। अपबीजाणुता सबसे पहले *ऐथिरियम* (*Athyrium*) में रिपोर्ट की गई थी। इस वंश में प्रोथैलस बीजाणुधानी के वृंत से विकसित हो गए थे। इसके बाद एक अन्य फर्न *ट्राइकोमेनस* (*Trichomanes*) में पत्तियों के सोरस वाले क्षेत्रों से तथा पर्ण शीर्ष से अपबीजाणुक युग्मकोद्भिद् का बनना देखा गया। बाद में, अपबीजाणुता फर्नों की बहुत सी जातियों में रिपोर्ट की गई।

यह देखा गया है कि फर्नों में बीजाणु-उद्भिद् अंगों का शेष पादप काया से अलग हो जाना अपबीजाणुता को प्रेरित करता है। यह चोट लगने और अक्षत अंग के बुभुक्षण (starvation) के परिणामस्वरूप होता है। उपापचयन की घटी हुई दर, मीडियम में शर्करा की कम सांद्रता अथवा शर्करा ना होने के कारण निम्न ऊर्जा आपूर्ति अपबीजाणुता के लिए प्रेरक है। *टेरीडियम* में अपबीजाणुक युग्मकोद्भिद् जीर्णमान (senescent) जड़ों पर विकसित होते हैं। युग्मकोद्भिदों का अपबीजाणुक रूप से उत्पादन *टेरीडियम* में सिर्फ तरुण पत्तियों पर पाया जाता है जबकि वयस्क पत्तियाँ हमेशा बीजाणु-उद्भिद् का पुनर्जनन करती हैं। परिपक्व पत्तियों से पुनर्जनन उद्यान कृषि (horticulture) तथा आनुवंशिक रूप से अपसामान्य किस्मों (genetically abnormal varieties) तक ही सीमित है। *एम्पेलोटेरिस* (*Ampelopteris*) के प्रकंद खंडों से युग्मकोद्भिद् अथवा बीजाणु-उद्भिद् का पुनर्जनन खंडों की लंबाई तथा मीडियम में शर्करा के स्तर पर निर्भर करता है। 0.5% अथवा अधिक शर्करा होने पर, बड़े आमाप के खंड (1 से.मी. मोटाई के) बीजाणु-उद्भिद् बनाते हैं। मीडिया में सुक्रोस की मात्रा कम होने अथवा ना होने पर, सिर्फ युग्मकोद्भिद् विकसित होते हैं। 2% सुक्रोस वाले मीडियम में भी अपेक्षाकृत छोटे खंड (3-4 मि.मी. के) सिर्फ युग्मकोद्भिद् ही निर्मित करते हैं।

एक ही पौधे से, समरूप संवर्धन परिस्थितियों में, प्रोथैलसी तथा बीजाणु-उद्भिदी प्रकारों का समकालिक पुनर्जनन सबसे अधिक दिलचस्प परंतु कौतूहल उत्पन्न करने वाला है। *फ्लेबोडियम* (*Phlebodium*) में प्रकंद के खंड, कटे सिरों से अथवा पार्श्व भागों से आमतौर पर लगभग 50% युग्मकोद्भिदी तथा 50% बीजाणु-उद्भिदी उत्पन्न हुए। दोनों प्रकार के पुनरुत्पादक साथ साथ ही विकसित हुए। युग्मकोद्भिद् में तंतुमय अवस्था से पूर्व उद्वर्धवृद्धियाँ विकसित हुई तथा बीजाणु-उद्भिद् से पूर्व, कोशिकाओं के समुच्चय विकसित हुए। इन बीजाणु-उद्भिदों में द्वितीयक बीजाणु-उद्भिद् निर्मित करने की खास प्रवृति थी। समरूप परिस्थितियों में युग्मकोद्भिद् के साथ साथ बीजाणु-उद्भिद् का प्रकंद के खंड पर निर्मित होना, दोनों पीढ़ियों की समजातीयता सुझाता है।

अपयुग्मक बीजाणु-उद्भिदों का निर्माण *टेरिस, पॉलीपोडियम, सिबोशियम* (*Cibotium*) की किशोर पत्तियों पर देखा गया है। मीडियम में सुक्रोस की सान्द्रता, बीजाणुउद्भिद् की उम्र तथा प्रकाश की निम्न तीव्रता द्वारा अपबीजाणुता प्रभावित होती है।

बोध प्रश्न 18.4

निम्नलिखित वक्तव्यों के रिक्त स्थानों को उचित शब्दों से भरिए

i) जीवित जीव के भीतर कोई भी असममित अवस्था .... कहलाती है।

ii) कोशिका में अथवा भ्रूणीय ऊतक में ध्रुवीयता .... के पूर्वगामी होती है।

iii) बीजाणु-उद्‌भिदी विकास की आरंभिक अवस्थाओं में ध्रुवीयता युग्मनज से भ्रूण के .... विकास के रूप में अभिव्यक्त होती है।

iv) एक कोशिका से पूर्ण पादप का पुनर्जनन .... कहलाता है।

v) यदि प्रोथैलस से शीर्ष विभज्योतक .... हो जाता है तो पुनर्जनन अनुकूल होता है।

vi) युग्मकोद्‌भिद् की कायिक कोशिकाओं से निषेचन के बिना बीजाणु-उद्‌भिद् के सीधे बनने की प्रक्रिया .... कहलाती है।

vii) जब युग्मकोद्‌भिद् का निर्माण सीधे बीजाणु-उद्‌भिद् की कायिक कोशिकाओं से होता है तो यह प्रक्रिया .... कहलाती है।

18.6 सारांश

इस इकाई में आपने पढ़ा कि :

- बॉवर ने लघुपर्णी पत्तियों के विकास को समझाने के लिए उद्धर्धन (enation) सिद्धांत प्रतिपादित किया तथा त्सिमरमान ने दीर्घपर्णी पत्तियों के विकास को तथा साथ ही संवहनी पादपों में प्रजनन शाखाओं के विकास को समझाने के लिए टीलोम (telome) सिद्धांत को प्रतिपादित किया।

- टीलोम आदि थल पादपों जैसे कि *राइनिया* के पादप की काया का शीर्षस्थ एक शिरीय भाग होता है। टीलोम कुछ प्रारंभिक प्रक्रियाओं जैसे उच्चातिक्रमण, समतलन, सहजनन, अपघटन तथा प्रतिवक्रण के द्वारा संवहनी पादपों के प्ररोह अक्ष तथा पत्तियों को जन्म देते हैं।

- आदि टेरिडोफाइट्स जैसे कि *राइनिया* में सरलतम प्रकार का रंभ-ठोसरंभ पाया जाता था जो सभी जीवित टेरिडोफाइट्स में भी नवोद्‌भिद अवस्था में पाया जाता है तथा कुछ भागों में वयस्क हो जाने पर भी रहता है। बाद में विकास के क्रम में नालरंभ प्रकट हुआ जिससे संवहनी बेलन के पत्ती या शाखा में मुड़ जाने से संभवतः विभिन्न प्रकार के रंभ विकसित हुए। इसी के फलस्वरूप उन्नत टेरिडोफाइट्स में नलीरंभ तथा जालरंभ पाए जाते हैं।

- विषमबीजाणुता दो प्रकार के बीजाणुओं का उत्पादन है। छोटे बीजाणु नर युग्मकोद्‌भिद बनाते हैं तथा बड़े वाले मादा युग्मकोद्‌भिद् में विकसित होते हैं। *सैलाजिनेला, आइसोइटीज* तथा *आजोला* और कुछ अन्य टेरिडोफाइट्स विषमबीजाणुक हैं।

- विषमबीजाणुता लगभग 370 करोड़ वर्ष पूर्व प्रकट हुई थी। विषमबीजाणुता से अंततः बीज प्रकृति विकसित हुई। विषमबीजाणुता के अतिरिक्त दीर्घबीजाणु की संख्या घट कर एक हो जाने से, दीर्घबीजाणु-उद्भिद् का दीर्घबीजाणु के अंदर ही रहना जो दीर्घबीजाणुधानी के अंदर उपस्थित था तथा अध्यावरण से दीर्घ-बीजाणुधानी का ढका होना ये सभी परिवर्तन बीज प्रकृति के लिए उत्तरदायी हैं।

- ध्रुवीयता जीवित तंत्र के अंदर कोई भी असममित अवस्था को कहते हैं तथा यह विभेदन की पूर्वगामी अवस्था है। बिना लैंगिक अंगों के युग्मकोद्भिद् की कायिक कोशिकाओं से बीजाणु-उद्भिद् का बनना अपयुग्मन है तथा अपबीजाणुता बीजाणु-उद्भिद् से बिना अर्द्धसूत्री विभाजन तथा बिना बीजाणु के निर्माण के युग्मकोद्भिद् का विकसित होना है।

18.7 अंत में कुछ प्रश्न

1. निम्नलिखित शब्दों को परिभाषित कीजिए :

   (i) टीलोम (ii) उच्चातिक्रमी (iii) समतलन (iv) सहजनन

   (v) लघुकरण (vi) प्रतिवक्रण

....
....
....
....
....
....
....
....

2. ठोसरंभ क्या है? आप किसप्रकार इसे नालरंभ से विभेदित कर सकते हैं।

....
....
....
....
....
....

3. विषमबीजाणुता क्या है? तथा उसका क्या जैविक महत्व है?

....
....

4. निम्नलिखित शब्दों को परिभाषित कीजिए :

(1) ध्रुवीयता (2) अपयुग्मन (3) अपबीजाणुता

5. फर्न के प्रोथैलस में पुनर्जनन पर शीर्ष विभज्योतक का क्या प्रभाव होता है?

18.8 उत्तर

बोध प्रश्न

18.1 i) स

ii) स

iii) अ (शाखाओं की असमान वृद्धि)

iv) अ (एकतल में द्विभाजन)

v) स

vi) अ (टीलोम गट्ठर का सरलीकरण - एक सुई-नुमा पर्ण का निर्माण)

18.2 i) स

ii) अ (प्लेट-नुमा)

iii) अ (तारे के-आकार का)

iv) स

v) अ (मज्जा होती है)

vi) अ (फ्लोएम जाइलम के दोनों तरफ)

vii) स

viii) स

18.3 i) विषमबीजाणुता

ii) प्रारंभी विषमबीजाणुता

(iii) *एक्वीसीटम*

(iv) बीज प्रकृति

(v) संरक्षी अध्यावरण

18.4 (i) ध्रुवीयता

(ii) विभेदन

(iii) द्विध्रुवीय

(iv) पूर्णशक्तता

(v) विलग

(vi) अपयुग्मन

(vii) अपबीजाणुता

अंत में कुछ प्रश्न

1. (1) यह द्विभाजी रूप से शाखित पादप अक्ष का सरल तथा अंतिम अग्र भाग है।

   (2) यह द्विभाजन की दो सह-शाखाओं की असमान वृद्धि को कहते हैं।

   (3) समतलन एक प्रक्रिया है जिसमें एक से अधिक तलों में शाखन की बजाय एक ही तल में द्विभाजी शाखन हो जाता है।

   (4) यह टीलोमों एवं मोसोमों के बीच संबंधकों के विकसित होने की प्रक्रिया है।

   (5) यह टीलोम गट्ठरों के सरलीकरण की प्रक्रिया है जिसके फलस्वरूप सुई-जैसी लघुपर्णी पत्तियाँ निर्मित होती हैं।

   (6) इस प्रक्रिया के दौरान जननक्षम टीलोम प्रतिवर्ती बन जाते हैं जिसके फलस्वरूप बीजाणुधानी की स्थिति उलटी हो जाती है।

2. ठोसरंभ सबसे सरल प्रकार का रंभ है जिसमें जाइलम की केन्द्रीय ठोस क्रोड फ्लोएम द्वारा घिरी रहती है। नालरंभ में जाइलम की केन्द्रीय क्रोड ठोस नहीं होती है, तथा केन्द्र में मृदूतकीय मज्जा उपस्थित रहती है।

3. विषमबीजाणुता एक परिघटना है जिसमें कोई जाति दो प्रकार के बीजाणु उत्पन्न करती है। छोटे वाले बीजाणु नर युग्मकोद्भिद् को बनाते हैं जबकि बड़े बीजाणु मादा युग्मकोद्भिद् में विकसित होते हैं। विषमबीजाणुता अंततः बीज प्रकृति के विकास में परिणत होती है।

4. (1) ध्रुवीयता जीवित जीव के अंदर कोई भी असममित अवस्था होती है तथा दो सिरों अथवा दो सतहों के बीच में अंतर के रूप में अभिव्यक्त होती है।

   (2) अपयुग्मन एक परिघटना है जिसमें युग्मकोद्भिद् की कोई कायिक कोशिका बिना युग्मकों के संलग्न के ही बीजाणु-उद्भिद् उत्पन्न करती है?

   (3) अपबीजाणुता युग्मकोद्भिद् के सीधे ही बीजाणु-उद्भिद् की कायिक कोशिका से बिना अर्धसूत्री विभाजन के बनने की प्रक्रिया है।

5. पुनर्जनन उन प्रोथैलसों में रुक जाता है जिनमें शीर्ष विभज्योतक अक्षत रहता है परंतु जब शीर्ष विभज्योतक अलग कर दिया जाता है तो यह स्थिति प्रोथैलस के पुनर्जनन में सहायक होती है।

शब्दावली

अपाक्ष (abaxial) : एक प्रारूपिक पत्ती की निचली सतह।

अभ्यक्ष (adaxial) : एक प्रारूपिक पत्ती की ऊपरी सतह।

अश्मीभूताश्म (petrifaction) : वह पादप अथवा जंतु जीवाश्म जिसमें मूल कार्बनिक पदार्थ खनिजों द्वारा विस्थापित हो जाते हैं (अधिकांशतः कार्बोनेट्स (carbonates), सिलिकेट्स (silicates), सल्फेट्स (sulphates), फॉस्फेट्स (phosphates) तथा लोह या आयरन ऑक्साइड्स।

आदिदारु (protoxylem) : सबसे पहले निर्मित होने वाला प्राथमिक दारु जो परिपक्व हो जाता है जबकि आसपास के ऊतक दीर्घीकृत हो रहे होते हैं।

उद्धवर्धन (enation) : किसी अंग की सतह पर से उद्धर्ध, विशेष रूप से, तने पर से उद्धर्ध जो वाहिकायित (vascularised) अथवा पर्ण अवकाश (leaf gap) से संबद्ध नहीं होता है।

उच्चातिक्रमी (overtopping) : वह प्रक्रिया जिसमें अंतस्थ शाखा, यानि खंडों (टीलोमों) की एक शाखा दूसरी से विकास के दौरान अधिक बड़ी हो गई।

कुंडलित किसलय विन्यास (circinate vernation) : वह तरीका जिसमें फिलिकेलीज (filicales) के तरुण प्रपर्ण (fronds) वल्लित (rolled up) रहते हैं।

कूटकी नलिका (carinal canal) : *एक्वीसीटम* के तने में आदिदारु बिन्दुओं के निकट पाई जाने वाली छोटी वायुगुहिकाएं जो तनें में गैसों के विसरण (diffusion) को संभव बनाती हैं।

काग अस्तर (phelloderm) : कागजन (phellogen) की गतिविधि द्वारा उत्पन्न होने वाली छाल की भीतरी परत।

गुरूपर्ण (megaphyll) : एक बड़ी चौड़ी, चपटी पत्ती जिसमें शाखित संवहनी संपूल (vascular strand) अथवा पर्ण-अनुपथ (leaf trace) होते हैं जो अनेकों संवहन पूलों के बने होते हैं।

गुरूबीजाणुधानी (megasporangium) : गुरूबीजाणु-निर्मित करने वाली बहुकोशिकीय संरचना जो संवहनी पादपों में पाई जाती है।

गुरूबीजाणुपर्ण (megasporophyll) : एक पत्ती जैसा उपांग जो गुरूबीजाणुधानियों को धारण किए रहता है।

टीलोम (telome) : शाखन करने वाली अक्ष का एक एकल अंतस्थ भाग जो बंध्य अथवा उर्वर हो सकता है।

ट्रैबीक्युला (trabecula) : कोशिकाओं की एक कतार जो अन्तर कोशिकी अवकाश से होकर गुजरती है।

ठोसरंभ (protostele) : एक सामान्य प्रकार का संवहनी बेलन, जिसमें प्राथमिक दारु या जाइलम की केन्द्रीय क्रोड (core) प्राथमिक पोषवाह या फ्लोएम से घिरी रहती है।

नालरंभ **(siphonostele)** : एक प्रकार का संवहनी बेलन जिसमें मज्जा ऊतक की केन्द्रीय क्रोड को घेरे रहता है।

द्विभाजी शाखन **(dichotomous branching)** : शाखन का वह तरीका जिसमें शाखा की दोनों भुजाएं लगभग समान लम्बाई की होती हैं।

पर्ण अवकाश **(leaf gap)** : संवहन तंत्र में असांतत्य (discontinuity)।

प्रकंद **(rhizome)** : एक क्षैतिज, भूमिगत तना जिसमें जड़ें, प्ररोह तथा पत्तियां उग सकती हैं।

पिच्छाकार **(pinnate)** : संयुक्त पर्ण की एक प्रकार जिसमें पत्रक (पिच्छक) सामान्य अक्ष पर रेखीय रूप से व्यवस्थित रहते हैं।

प्रपर्ण **(frond)** फर्न की पत्ती।

प्रोथैलस **(prothallus)** : एक हृदयकार युग्मकोद्भिद, जैसा कि फर्नस में दिखाई पड़ता है।

बीजाणुपर्ण **(sporophyll)** : बीजाणु धारण करने वाले पर्ण।

रंभ **(stele)** : पादप की जड़ अथवा प्ररोह का संवहनी बेलन तथा उससे संबद्ध कोई भी निकटवर्ती मृदूतकी ऊतक सहित।

रैकिस **(rachis)** : पत्ती की मुख्य अक्ष।

लघुपर्ण **(microphyll)** : वह संरचना जो अगुणित लघुबीजाणुओं को धारण करती है।

लघुबीजाणु **(microspore)** : एक अगुणित मायोबीजाणु (meiospore) जो नर युग्मकोद्भिद् में विकसित हो जाता है।

लघुबीजाणु मातृ कोशिका **(microspore mother cell)** : एक द्विगुणित कोशिका जो भ्रूणपादपों में अर्धसूत्री विभाजन के द्वारा चार अगुणित लघुबीजाणुओं अथवा परागकणों को जन्म देती है।

समतलन **(planation)** : एक विकासात्मक प्रक्रिया जिसमें दो या अधिक तलों के द्विभाजन चपटे होकर एक ही तल में हो जाते हैं जैसा कि माना जाता है कि पत्तियों के विकास में हुआ।

सुरंभ **(eustele)** : एक बेलनाकार संवहन तंत्र जो परस्पर संबद्ध संवहनी पूलों का बना होता है।

हस्ताकार **(palmate)** : संयुक्त पर्ण का एक प्रकार जिसमें सभी पत्रक (leaflets) (अथवा पिच्छक) पर्णवृंत के शीर्ष से जुड़े रहते हैं।

NOTES

NOTES

NOTES